

विविध प्रसंग

३



३

हरि प्रकाशन
इ ल्य ला ला इ



● अमृतपत्र

प्रकाशक

ईश प्रकाशन इलाहाबाद

मुद्रक

पियरलेस प्रिंटेर्स इलाहाबाद

माखरस-सज्जा

कृष्ण चंद्र श्रीवास्तव

प्रथम संस्करण

प्रेमचंद स्मृति दिवस १९६२

मूल्य—₹ १२ ५०

भूमिका

सब जानते हैं, प्रेमचंद ने अपने साहित्यिक जीवन का धारम उर्ध्व से किया था। बरसों केवल उर्ध्व में लिखते रहने के बाद वह हिन्दी की तरफ घाये। उपन्यास और कहानियाँ तो सिन्धी ही साहित्य, संस्कृति, समाज राजनीति से संबन्ध रखनेवाले विविध प्रसवों पर डेरों लेख भी लिखे। इस प्रकार के लेखन का उनका क्रम प्राचीन जमा और सुंशीजी के पूर्ण साहित्यिक व्यक्तित्व और बेन को समझने के लिए उनका महत्व सुंशीजी के कथा-साहित्य से अत्युत्तम कम नहीं है।

इस खदाने की तरफ अब तक किसी का ध्यान नहीं गया था, और शायद इन रचनाओं के लेखक का भी न जाता अगर सुंशीजी की प्रामाणिक जीवनी लिखने के लक्ष्य ने उसे मजबूर न किया होता कि वह उन सब चीजों की खान-खान करे जो-जो सुंशीजी ने जब-जब और जहाँ-जहाँ लिखीं। पुरातत्व विभाग की इसी सुंशीजी में यह खोजी जा हाय लय गया।

यह लयमय खोज ही पृष्ठों को सामग्री है जो 'विविध प्रसव' के तीन खण्डों में भी जा रही है।

पहले खण्ड में १९३३ से लेकर १९२० तक के लेख और समीक्षाएँ हैं, काल-अनुक्रम से। 'तुर्की में वैज्ञानिक राज्य' शीर्षक लेख भूल से प्रस्तुत अग्रह पर लय गया है।

दूसरे और तीसरे खण्ड में १९२१ से लेकर १९३६ तक के लेख, टिप्पणियाँ और समीक्षाएँ हैं जिनको 'राष्ट्रीय राजनीति' 'अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति' 'हिन्दू मुक्तमान' 'छूत-आपूत' 'किसान-मजूर साहित्य-वर्धन' 'धर्म-समाज' 'महिला, अपत' 'समीक्षाएँ' 'संज्ञा-लिपियाँ' आदि शीर्षकों के अन्तर्गत विषय-क्रम से प्रस्तुत करना अधिक सार्थक जान पड़ा।

छोटी टिप्पणियों को भी हमने बड़ी स्याम दिया है जो बड़े लेखों की, सिर्फ इसलिए नहीं कि सुंशीजी ने उन्हें लिखा है बल्कि इसलिए कि वह लिखने में आगे जितनी छोटी हों पर बाब यहूत करती हैं। अपने उस छोटे-से कलेवर में भी उनका अतथ्य स्पष्ट है, महत्वपूर्ण है और उनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती।

समीक्षार्थ कुछ छोड़ दी गयी है। बी बी का रूही हैं, उनमें दो प्रकार की समीक्षार्थ हैं। कुछ तो बहुत जागी-जागी पुस्तकों की समीक्षार्थ हैं। उनके संबंध में कुछ कहने की जरूरत नहीं है। कुछ महत्त्व-ही पुस्तकों की समीक्षार्थ हैं। उनको देना इसलिए जरूरी समझा गया कि उन पुस्तकों को निमित्त बनाकर मुंशीजी ने अपनी कोई बात कहनी चाही है।

‘बिबिध प्रबंध’ के पहले अंक में अखिलीय लेखक बंधु के प्रसिद्ध पत्र ‘जमाना’ से लिखे गये हैं जिससे मुंशीजी का आलोचना बहुत आत्मीय संबंध रहा। ‘जमाना’ की पूरी प्रशंसा किसी एक जगह नहीं मिल सकती—‘जमाना’ के अपने घर में भी नहीं। इस कमी को लक्ष्य रखिबिद्यालय और अमीरुद्विद्यालय के संबंधों से काफ़ी हद तक पूरा कर लिया गया है, तो भी कुछ टुकड़े बचे जो ध्यान देने योग्य नहीं हैं। इस बीच में बंधु के प्रसिद्ध पालीक प्रोफ़ेसर एडवोकेट गुरुदेव, जो अखिलीय प्रयाग बिबिद्यालय में उच्च विद्या के अध्यक्ष हैं और अखिलीय अखिलीय हैं, जिन्होंने प्रबंध के उपपत्रों पर काम करके डाक्टरेट जी है और जो इन दिनों बिबिद्यालय में उच्च के अध्यक्ष हैं, बहुत मरवा मिली है और मैं हृदय से उनका आभारी हूँ।

इस अर्थ में मुंशीजी ने ‘जमाना’ के अलावा और भी अनेक उच्च पत्रों में जैसे मीलाना सुल्तान अली के ‘हमबंद’ और ‘इस्लाम अली तान के ‘कृष्णा’ ‘जमाना’ आदि से जो निकलनेवाले साप्ताहिक ‘आबाद’ और अखिलीय के मासिक पत्र ‘सुबह अमीर’ में काफ़ी नियमित रूप से लिखा। दुर्भाग्यवश अब तक उनकी और दूसरे अनेक उच्च पत्रों की प्रशंसा नहीं मिल सकी है जिसको देखना अत्यंत जरूरी है क्योंकि उनमें अखिलीयों के साथ-साथ अनेक-अनेक सुख लेख होने की भी पूरी संभावना है। अखिलीय उच्च पत्रों को लक्ष्य और अखिलीय का यह काम सबा है और काफ़ी दिनों तक चलते रहना होगा।

‘रजतारे जमाना’ के नाम से एक स्वामी स्तंभ मुंशीजी ने ‘जमाना’ में बहुत अर्थ तक लिखा लेकिन अखिलीयों से घात पर मुंशीजी का नाम नहीं आता था और अब से अब तक यह स्तंभ उनके हाथ में रहा इसका भी कहीं कहीं संकेत नहीं मिलता। १९३० में जब ‘जमाना’ का प्रबंध-स्थिति टंक निकला था तभी जमाना-संपादक मुंशी अखिलीय विभाग के लिए यह अखिलीय अर्थमय हो गया था कि प्रबंध के लिखे हुए ‘रजतारे जमाना’ के कालम कीम से हैं अब तो इसकी पड़ताल का कोई लक्ष्य ही नहीं पड़ता। अखिलीय के दिनों में, मोफ़ीय अखिलीय के ठीक पहले, मुंशीजी ने अखिलीय नाम-अध्यापक पर एक लेख लिखा था पर वह अब तक कहीं नहीं मिलता।

उर्दू के इन सब लेखों को क्यों का क्यों छाप देना हिन्दी पाठकों के लिए बहुत कठिनाई उपस्थित करता इसलिए उनका हिन्दी क्वाण्टर चकरी ही गया।

ही क्वाण्टर करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखा गया है कि सुशीली की भाषा और शैली की पूरी तरह रखा हो और केवल ऐसे ही शब्द और वाक्यांश बरसे जायें जिनको बदले बिना काम न चलता ही।

त्रिविध प्रसंग के दूसरे और तीसरे खण्डों में मूल हिन्दी सामग्री है। कुछ छुटकर लेख और टिप्पणियाँ और समीक्षाएँ मासुरी और मर्यादा, स्वदेश धारि पत्री से ली गयी हैं (त्रितका संकेत जो लेख के अंत में दे दिया गया है) लेकिन धार्पकांस सामग्री 'हंस' और 'बागएण' से संकलित है। मासिक पत्र होने के नाते, 'हंस' से ली गयी सामग्री के अंत में केवल महीना और सग मिलेया 'बागएण' साप्ताहिक या उसमें तारीख जो मौजूद है।

'हंस' और 'बागएण' की इस सामग्री के लिए मैं वंदित चिनोद शंकर ध्यास का अनन्य आभारी हूँ जिन्होंने अपनी जतन से रची हुई आइलें सुने चीपकर इस कार्य को संभव बनाया। जहाँ तक मैं जानता हूँ 'हंस' और बागएण की पूरी आइल, निधेयत बागएण की और कहीं भी उपलब्ध नहीं है। उनके सौहार्द और सहयोग से ही प्रेमचंद का यह लेखनी पत्रकार का कम हिन्दी सप्ताह के सामने प्रस्तुत करना संभव हो रहा है।

इन लंबे शोध-काम में त्रितका मूत्रपात बीचनी लेखन से हुषा माई मह-देव साहा की निरंतर प्रेरणा का मैं कितना आणो हूँ इसकी स्वीकृति धर्मों से नहीं मोन से ही की जा सकती है।

माई भीमाय पाएडेय ने कुछ लेख कलकत्ते से बुँडकर भेजे। मैं उनका आभारी हूँ।

दूसरे भी कई जिनों का सुखत सहयोग मुझे इस कार्य में मिला है। उन सबके प्रति मैं अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

असूत राय

उपन्यास-रचना ११ प्राचीन मिस्र काति के धर्म-तत्व २१ उपन्यास ३३ पम्पाक का प्रस्ताव ३१ साहित्य की प्रगति ४८ बीजक और साहित्य में बुद्धा का स्थान ३६, साहित्य और कला में बुद्धा की उपभोगिता ३७ राशिद-उल-खैरी की सामाजिक कहानियाँ ३१ हल्बी की गौठनाला पताही ६६ प्रेमचंद की प्रेम-सीमा का उत्तर ७० सम्पादकों के पुरस्कार ७२ शांति-निवेदन में ७३ मेरी रसीसी पुस्तकें ७६ सम्पादन-कला की शिक्षा ७८ साहित्य का उत्थान या पतन ७८ क्या यह लेखिकाओं के साथ पक्षपात है? ७९ वं अनाहरामास बी की निराशा ८ खोबि मट कस में प्रकाशन ८१ लेखकों को बर्नाइसा का उपदेश ८३ साहित्यिक संधिपात ८३ दुली बीजक ८४ समिपत्वन सत्य और सामारख जनता १ सम्पादन कला-विद्यालय की आवश्यकता ११ हिन्दी में पुस्तकों का प्रकाशन ११ साहित्य सम्मेलन का एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव १३ बिहार-राष्ट्रीय-साहित्य-सम्मेलन पुष्पिका १४ इन्दीर हिन्दी साहित्य सम्मेलन १६ तुमसी जयन्ती का तुमसी बुधपतिपि ११, तुमसी-स्मृति-तिथि कैसे मनानी जाय १० साहित्यिक मुद्रापन १ २ इंटरन्यू क्या है १ ३ मयर मर्ही क्या हुआ १ ३ मार तीय साहित्य और वं अनाहरामास नेहक १०३ राष्ट्रमाया कैसे समझ हो १०८ निबेदी से हमारा नम्र निवेदन ११० साहित्यिक कलकों की आवश्यकता ११३ पटना का हिन्दी साहित्य परिषद् ११४ हिन्दी-साहित्य के विद्यालय ११६ भारतीय साहित्य परिषद् ११७ प्रगतिशील लेखक-संघ ११८ हिन्दी लेखक संघ का एक रूप ११९ पुस्तकालय मान्दी लन १२० बरिठोप १२१ पत्रों के छाहकों का भावतिजनक व्यवहार १२८ बापान में पत्रों का प्रचार १२९, एक सांकेतिक साहित्य-संस्था की आवश्यकता १३ हिन्दी लेखक संघ १३१ पटना का हिन्दी-साहित्य परिषद् १३४ संकलन में भारतीय साहित्यकारों की एक नवी संस्था १३६ साहित्य सम्मेलन के विषय में १३८ अखिल भारतवर्षीय पुस्तकालय-संघ १३९, श्री कम्प्य और माची जयत् १४ ।

धर्म-समाज

तस्वीर के दो रूप १४७ समिपत्वन १४८ राष्ट्र के शिक्षार १४९ धर्ममेर में भाववानन्द-निर्वाण धर्मशास्त्री १५ महारामा बी का शीघ्र मिशनरी को जबाब १५ स्मरतीय रामकम्प्य संधिपात १५१ बिरेरा यात्रा और आयत्तिव १५२ धर्मो और बुरी धार्मिकविषय १५२ अर्धित मेह मिटाने की एक साम्योजना १५३ कस में धर्म विरोधी मान्दीलन १५४ हिन्दू समाज के बीमत्त बुरय १ १५४ हिन्दू समाज के बीमत्त बुरय-२ १५७ हिन्दू समाज के बीमत्त बुरय ३ १६ ।

स्वदेशी

१६३ से १७८

स्वदेशी की भाङ में झूट १६५ प्रयाग की स्वदेशी प्रदर्शनी १६३ स्वदेशी पर मानवीय भी १६६ भारतीय भीगी के कारखानों का प्रयाग १६७ अरुमी धीर लक्ष्मी स्वदेशी भीजे १६८ लखनऊ मिर्जा की भूम १६८ स्वदेशी १६९ भारतीय कपड़ा धीर भारतीय बई १७१ शकर पर एक्सट्रैक्ट झूटी १७२ सरखण नवी रजा बाग १७२ प्रार्थकों का समिधान मिल-जाजिका के लिए १७३ मि मोदी की उदारता १७४ संद जयों की भूम १७५ धाम इंडिया स्वदेशी नव १७५ कोड़ पर खान १७६ ।

शिक्षा-संस्कृति

१७९-२४६

कुच्छुल हांगड़ी में तीन दिन १८१ बच्चों की स्वाधीन बनाओ १८५ मानसिक पठनीयता १८८ राष्ट्रीय कवियों में गुलामी १९८ अंग्रेजी माया का रोग १९४ श्रीजी कालेज की धारोजना १९५ नवीन धीर प्राचीन १९६ संयुक्त प्रान्त के बी कम्पोजिटन १९८ स्वामी अज्ञानम् और भारतीय शिक्षा प्रवर्धनी २ १ सवाक किर्मा के दिन गिने हुए हैं २ ३ भाषा २ ४ भाषा-२ २०६ बैजूनी के नामेया विस्मिता की रिपोर्ट २ ३ सर पी सी राम का मुबकोंको धारैत २१ इलाहाबाद युनिवर्सिटी के नये बाइल बांतलर २११ स्कूलों में स्वास्थ्य-परीक्षा २११ गोरखपुर में शिक्षा सम्मेलन २१२ सम्मेलन सम्मेलन २१३ संयुक्त प्रान्त में शिक्षा का प्रचार २१३ बच्चों का शान्ति-निकेतन २१३ फेन होनेवाले लड़के २१६ काशी में शिक्षा मन्त्री का सुनामन २१६ लखनऊ विरविद्यालय २१७ भाग्य में लाल साहित्य २१७ सिम्प संसार में एक नयी योजना २१८ डाइकास्टिंग बैजूनी में २१९ प्रयाग में रामलीला २१९ एक उचित पठमर्त २२ शिक्षा का नया धारण २२१ भारत में प्रथ २२२ प्रयाग की रामलीला बंद २२३ अस्तित्व संय के बीरे २२४ हिन्दी साहित्य में ईश्वर की धीरानेवर २२४ कारमाइलन साइलरी की हीरक जयन्ती २२७ सिनेमा धीर मुबक २२८ सर पी सी राम का धीरान्त भावण २२७ सर लेक बहादुर खडू का धारण २३ डाक्टर टीनेर बन्दई में २३१ साम्प्रदायिकता धीर संस्कृति २३२ हुआ का लल २३३, बर्मनी में नाच पर बरिस २३६ स्वामी-सत्यदेव पाठशाळा २३६ भारतीय कमा की धारणा २३७ नवकरों के लिए संतीय की बाह २३८ लोहारों में बने २३९ भारत में धुर प्रया २३९ स्वास्थ्य धीर शिक्षा २४१ महात्मा पी को जयन्ती २४३ प्रयाग महिला-विद्यापीठ की साहित्यिक प्रगति २४४ प्रयाग महिला विद्यापीठ की नयी योजनाएँ २४५ ।

मिस्टर हरमिनाथ शारदा का नया कानून २४६ नारि-जाति के अधिकार २४६
 लताओं की संख्या क्यों बढ़ती जाती है ? २४ सिनेमा स्त्रियों के धर्ममन्त्र किन् २४१
 पानीपुर के की-वापरेटिव सम्मेलन में संछान निग्रह २४१ महिला-समाजों में संछान-निग्रह
 का प्रस्ताव २४२ मित्र मेयो की धारणा एक पारसी महिला के रूप में २४२ भारतीय
 महिलाओं में नवीन जाति २४१ बालिकाओं का सुकार्य २४४ इंग्लैंड का नैतिक पठन
 २४४ कायस्थ काण्डर्ज २४५ एक उपयोगी प्रस्ताव २४६ सर हर्षिचंद्र मौड़ का समाज
 किन् २४७ लखनऊ की बेरयाओं में नयी जाति २४६ एक कुली वान २६ धारतों
 का रूप-विज्ञान २६१ बेरयाकुति २६२ धनापिनी विद्या २६३ विद्याओं के गुजारे का
 बिहारी संसद २६२ प्रयाग में महिला-व्यायाम अधि २६३ विद्याओं के गुजारे का
 किन् २६४ महिला सम्मेलन में संछान-निग्रह २६३ कुमारी शिक्षा का धारणा २६६
 महिलाओं की शिक्षा पर पं जवाहरलाल नेहरू २६६ क्ल का नैतिक उत्थान २६७
 वैवाहिक सेन-सेन और कानून २६८ नया स्त्रियों का पाठ्या पठनमा जुम है ? २६८
 संछान निग्रह और प्राइवेट नियम २६६ नारियों के साथ धर्ममन्त्र क्यों २७ ।

राष्ट्रमाया

भारत की राष्ट्रमाया २७१ बड़ीया राज्य में हिन्दी २७४ हिन्दू-विरवविद्यालय
 में हिन्दी बाद-विचार २७४ हिन्दी द्वारा उच्च शिक्षा २७५ पुत्नी जर्न २७६ बच्चों में
 हिन्दी प्रचार २७७ वृत्तीय बच्चों भारत हिन्दी-प्रचारक सम्मेलन २७६ हिन्दी ज्ञान
 दानी मवडल की हिन्दी भाषियों से अपील २८ हिन्दुस्तानी एकादमी २८२ तिमाही या
 वीमासिक २८३ एक हिन्दी-साहित्य विद्यालय की बकरत २८३ लेडी धर्मल कारिण का
 राष्ट्रमाया प्रेम २८४ कारवीर की एसेम्बली में जर्न २८४ लेडीस में हिन्दी-साहित्य सम्मे-
 लन पर एक बुद्धिपाठ २८५ प्रथम विगत २८६ टयरा किन् २८६ तीसरा किन् २८७
 चौथा किन् २८७ वे राष्ट्रमाया का राष्ट्र २८८ हिन्दी का नामा २८९ उपमायाओं का
 उदार २८९ हिन्दी जर्न और हिन्दुस्तानी २८२ बच्चों भारत में हमारी हिन्दी प्रचार
 याया २८९ सरकारी सूच में हिन्दी और मुम्बली का बहिष्कार ३१ हिन्दुस्तान की
 कीनी बचान ३१४ हिन्दुस्तानी एकादमी का सामाना जमना ३१४ राष्ट्रमिति ३१५,
 हिन्दुस्तानी एकादमी का वार्षिक सम्मेलन ३१६ दिल्ली में हिन्दुस्तानी समा ३१८ ।

नीर-क्षीर

३२१—३६३

अज्ञाजसियाँ

३६७-४४४

मुंठी पोरख प्रसाव 'द्वयण' ३१३ हेंगामए हसण ४० स्वर्गीय पंडित ममन
 दिवेरी ४ ३ शैशवन्तु बिठरंजन दास ४ ४ मीनागा हसण मोहानी ४११ मुंठी विन्तु-
 नाउयण मागव ४१४ कर्मवीर विद्याधी की ४१७ वं पयसिह की कर्मा का स्वर्गबास
 ४१३ डाक्टर एनी बेसेंट की शिपासवीं जयन्ती ४२ कृष का धाम्य-विधाता ४२१ सर
 धलीइमाम की स्वर्ग-यात्रा ४२२ मि बामस बाटा ४२२ श्रीयुक्त सङ्गल का पद-त्याग
 ४२३ बबाईसाँ ४२४ धर्मिलाल ४२३ द्विव की को बबाई ४२८ की राहुन साङ्करमा-
 यन की ४२८ अज्ञाजलि ४२९ राजा राममोहन राय ४३१ मिसेज एनी बेसेंट का स्वर्ग
 बास ४३२ मृत्यु पर विजय ४३२ श्री रंजवामी झाईगर की लोकजनक मृत्यु ४३४ राजा
 सर मोतीचंद का स्वर्गबास ४३३ स्व पंडित बरदीनाथ मट्ट ४३३ स्वर्गीय वं०
 बन्नेदेवर सासनी ४३७ स्वर्गीया मैरम क्यूरी ४३८ डाक्टर हीराबाल का स्वर्गबास
 ४३८ कामा-कांकर नरेश का स्वर्गबास ४३९ अज्ञाजलि ४४ स्वर्गीय सुबंनान ठकुर
 ४४१ स्वर्गीय मीनागा हाली की शताब्दी-जयंती ४४१ मि किष्कि का स्वर्गबास
 ४४२ सम्राट बार्ज पंचम का स्वर्गरोहण ४४३ हसण राशिब खैरी का स्वर्गबास
 ४४३ श्रीमती कमला मेहुक का स्वर्गबास ४४४ श्री मैक्ली सरण स्वर्ण-जयन्ती
 ४४४ डाक्टर ए० ए घंसाठी का स्वर्गबास ४४५ ।

फुटकर घुटकुसे

४४७-४६४

व्याप का धरम ४४९ बनारस की खैरी कचहरियाँ ४५० व्याप में मिलम्ब
 धाम्य है ४५१ घिरेकी व्याप-गरम्यण ४५२ अज्ञानों में खोती ४५२ समुक्त प्राण में
 फलों की कारण ४५३ कारनिवर्तों में बुधा ४५४ बुध का युग ४५४ बुध का युग
 ४५५ मारों में बुधनाएँ ४५६ मूव फल बाधो ४५७ परिचयी व्यापान का पागसपन
 ४५७ मोटर व्यवसाय ४५८ टैहरी और बहीनाय का मन्दिर ४५९ ह्माठी संस्थाओं में
 व्यक्तिपठ है ४६ मार्टट एबरेस्ट की बड़ाई ४६ श्री प्राणनाथ विद्यालंकार की
 मद्भुत बीब ४६१ बंगा सम्मेलन ४६२ भारत के कीरी ४६२ कारी में पोस्टमैनों की
 कार्डिस ४६२ श्री एन जय्यु रैजवे ४६३ जिरेसी कपड़े पर कारिब की मुहर ४६४
 ताबुन की बेस-रेख ४६४ खण्ड के लिए खैर की सजा ४६४ फलों की खैरी बीजे

बढ़ती जाय ४६३, विज्ञापन-कला ४६३, बेकारी का स्वास्थ्य पर प्रभाव ४६३ भीषण
 रूटमा ४६६ पञ्चदश दिनों में मकड़ों की फसल ४६७ अंग्रेजी समाचारपत्रों का प्रचार
 ४६७ एक्सेट की विजय ४६७ बास का बरतण्ड ४६८ रिश्तों की गम बाजारी ४६८
 हवाई सर्जिकली टायर्स ४६९ भीषण नाम बुर्जटमा ४७१ नया रेनवे बोर्ड ४७२ मध्य
 प्रदेश में धामकाटी से आगवनी ४७२ काशी में विजली ४७३ उम्माकू पीने पर सजा
 ४७३ कस्पवा की सजा ४७६ काशी में कविदलों की बोड़ी ४७६ यात्रीपुर का बंगम
 ४७६ इस साल की कैद ४७७ प्रयाग में मारुटवा की बट्टि ४७७ आठिशाबादियों का
 बन्धक परिवार ४७८ बेकारी के करिरे ४७८ सामाजिक नियंत्रण की जरूरत है या
 नहीं ४७९ पेरिस में भीषण बुर्जटमा ४८० एम सी० सी० की भूमि ४८० एम सी
 सी की बय ४८१ सी० पी सरकार की सतकता ४८१ बैंकों की करियाद ४८२
 डाक्टर की संरक्षण चाहते हैं ४८२ कोर्ट-रिप ४८३ डाकों की भूमि ४८३ अंग्रेजी
 दीपनियों का बल-पूर्वक प्रचार ४८४ पत्रों में धमकी सबरें ४८५ बातबीठ करने की
 कला ४८५, बहीकण्ड का नया रूप ४८ ।

हुस कया

४९१—४०४

कुछ धपने विषय में ४९३ भारतीय साहित्य का संगठन ४९४ 'हुस नये रूप में
 ४९७ 'हुस का कया रूप ४९९ भारतीय साहित्य के संगठन की एक आलोचना ५०
 की मुंठी बुनावण एम० ए० का पत्र ५०३ प्रोफेसर सिकसन लेवी का सच्यवाच ५ ४ ।

A 4x4 grid with handwritten text in some cells. The text is written in a stylized, possibly Devanagari script. The grid is tilted slightly to the right.

१०			
	१०.२६		
	२.१		
		२६.२१	

साहित्य-दर्शन

उपन्यास-रचना

भारत-निवासियों ने यूरोपियन साहित्य के किसी ग्रंथ की इतना पढ़ा नहीं किया जितना उपन्यास को। यहाँ तक कि उपन्यास ग्रंथ हमारे साहित्य का एक अनिच्छेय घन हो गया है। उपन्यास का जन्म चौदहवीं-पन्द्रहवीं शताब्दी के अग्रिम हुआ। शेक्सपियर ने अपने कई नाटकों की रचना इटालियन उपन्यासों के ही आधार पर की है। यह हीनी इतनी प्रिय हुई कि प्रायः समस्त जगत् ने साहित्य पर उपन्यास ही का प्राथम्य है। यह पचास वर्षों में भारत की साहित्यिक सभ्यता का जितना उपभोग उपन्यास-रचना में हुआ उतना शायद साहित्य के और किसी भाग में नहीं हुआ। संवत्सा ने बंकिम वैद्य क्रिया सुबटापी ने मोविन्धवास मराठी ने घापटे उद्ग ने रतननाथ धीर शरर जो संसार के किसी उपन्यासकार से बढकर नहीं है। हिन्दी ने पहले धनुष रस के उपन्यासकार पद्म किने पर धन बीरे-बीरे उसके चरित्र-चित्रण मनोमाल धीर बामुची के उपन्यास किने पर धन बीरे-बीरे उसके चरित्र-चित्रण मनोमाल धीर बामुची के उपन्यास प्रकटित होने लगे हैं, और धारा है कि वह जोड़े ही किनों में इस विषय में किसी प्राम्ति यथा से दबकर नहीं रहेगी। वास्तव में उपन्यास-रचना को सरल साहित्य (Light Literature) कहा जाता है, इसलिए कि इसके पाठकों का मनोरंजन होता है। प उपन्यासकार को उपन्यास लिखने में उतना ही शिमाग सगाना पड़ता है, जितना किं बालकिक को रत्न-रत्न के ग्रन्थ लिखने में। उसे सबसे पहले उपन्यास का विषय चोजना पड़ता है। क्या लिखे? नैतिक बीमब की बखारता दिवाणे या मनोमालों का पारस्परिक संबंध? कोई युद्ध रहस्य बुने या किसी ऐतिहासिक बटना का चित्रण करे? लेखक अपनी रचि धीर प्रकटि के अनुकूल ही इनमें से कोई विषय पसन्द कर लेता है। विषय निर्धारित हो जाने के परचात् उसे प्लाट की विन्दा होती है। वह सोचा हो या आसता बतता या बँटा इसी विन्दा में बुना रहता है। कभी-कभी उसे लोक-विचार में मझेनो बरसों लय बडे है। इस विन्दा में लेखक जितना ही व्यस्त होया उतनी ही जलम उतनी रचना होगी—

उपन्यास की बुनियाद पड़ गयी। अब हम अपना मनन चढ़ा करने के लिए मसाने की आवश्यकता होती है। उसके मुख्य साधन ये हैं

- १—अनुभव २—अनुमान ३—स्वाध्याय ४—अनुपमिति ५—जिज्ञासा

बहुते हैं,। अमरीकन के सुविख्यात साहित्यकार माक ट्वेन ने इस बात का अनुभव प्राप्त करने के लिए कि बिना टिकट रत्न-ड्राम में सफर करनेवालों के चित्त की क्या दशा होती है कई बार बिना टिकट सत्रर किया। ऐसे ही एक और अग्रिम ने ऐति

के बचनों की उसीर खींचने के लिए महीनों शोहरों घोर गुस्सों की संगति की। एक तीसरे महाराज ने जोर के रूप के मार्गों को जानने के लिए स्वयं संभ तक मारी। इसका अरुण यह जान पड़ता है कि पारशास्य देश के लेखक कल्पना-शून्य होते हैं। उपन्यासकार को ऐसी कथाओं और मनोभावों के बखन करने में अपनी कल्पना-शक्ति ही सबसे बड़ी मददगार है। ऐसा बिरला ही कीर्ति प्राप्ति होपा जिसने बचपन में पसे या मिठाई न चुरायी हो या जोरी से मेला या बंगल देखने न गया हो अपना पाठशाळा में अध्यापक से बहाने न किये हों। यदि कल्पना-शक्ति तीव्र हो तो इतने अनुभव को जोरो घोर डकैतों के मनोभाव चित्रित करने में कुतकाय कर सकती है। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि कृत्रिम व्यवस्थाओं में जो अनुभव प्राप्त होते हैं वे स्वाभाविक नहीं हो सकते। फिर भी उपन्यास की सफलता के लिए अनुभव अवप्रधान मन्त्र है। उपन्यास-लेखक को महासाध्य मने-मने कुर्यों को देखने और मने-मने अनुभवों को प्राप्त करने का कोई व्यवसर हाथ से न जाने देना चाहिए।

प्रासिद्धों के मनोभावों को व्यक्त करने के लिए दूसरा साधन अपने भावों की टटोलना है। सर किसिप सिङ्गानी का कहना था कि 'धरती मियाह अपने हृदय में बालों और जो कुछ हसो लसो। लेखक अपने को कल्पना के द्वारा जिसनी ही मिस-मिस परिस्थितियों में रक्त सकता है, उसता ही सङ्घ-मनोरथ होता है। तुलसीदास ने पुन-लोक कितनी सफलता से रिलामा है। निश्चित ही है कि उन्हें इस लोक का प्रत्यक्ष अनुभव न था। अपने को शोकातुर, बियोगी पिठा के स्थान में रक्तकर ही उन्होंने उन मार्गों का अनुभव किया होमा।

स्वाध्याय से भी उपन्यासकार को बड़ी मदद मिलती है। एक श्रुति का बचन है कि स्वाध्याय मनुष्य को सम्पूज बना देता है। कुछ लोगों का कहना है कि उपन्यास लेखक को पढ़ना न चाहिए, इससे उसकी मौलिकता मारी जाती है। पर स्वर्गीय डी एन राय ने कहा है—'बिना लेखक की मौलिकता पुस्तकबन्धोक्त से मारी जाती है उसमें मौलिकता है ही नहीं। स्वाध्याय का सहैदक यह न होना चाहिए कि किसी कुशल लेखक के भाव और विचार सङ्घम बायें बलिष्ठ अपने भावों और विचारों की धन्य लेखकों से तुलना की जाय और उसमें बखली रचना करने के लिए अपने को प्रोत्साहित किया जाय। अगर हमें किसी लेखक को रचना में ऐसा कोई स्थान दिखायी है जहाँ उसकी कल्पना शिबिल पड़ गयी है तो हम प्रयत्न करें कि उसी के अनुभव स्थान पर उससे बखला मिल सकें। लेखक का—धीरे धियेप कर उपन्यास-लेखक को—बिबिध साहित्य का समीक्षाति अध्ययन किये बिना कलम न उठाना चाहिए। यह बात नहीं है कि बिना बहुत फेरे कोई बखला उपन्यास नहीं लिख सकता। जिन्हें देखर ने प्रतिभा दी है, उनके लिए बहुत पढ़ना धनिवार्य नहीं है। किन्ति मिस प्रकार बिना व्याकरण पड़े हुए बाहें हम कुछ लिखें पर मनुष्यों से बचने के लिए हमारे पास कोई साधन नहीं रहता उसी प्रकार

तुलना और स्वाध्याय से हमें अपनी गूटियों का बोध होता है हमारे बुद्धि विकसित होती है और उन भावनों की समझ मिल जाती है जिनके द्वारा किसी बड़े सेवक से सम्प्रदा प्राप्त हो।

कुछ लोगों को भ्रम है कि अपने रचनाओं के विषय में किसी से कुछ पूछना या प्य सेने से उम्हका अपमान होता है। पर वास्तव में सेवक को विज्ञाना की उतनी ही बकरता है दिल्ली कि किसी विद्यार्थी को। फ्रान्सिस बेकन के विषय में कहा गया है कि वह सबक ऐसे पुगवों से विज्ञाना करता रहता था जो किनी विषय में अपने अधिक ज्ञान रखते थे। कोई बावसी चाहे वह दिल्ली ही प्रतिभाशाली क्या न हो सब विद्याओं का ज्ञान नहीं हो सकता। उसे अगर किसी से कुछ पूछना पड़े तो मकोष क्यों करे ? ही एम० एम० महोदय जब कोई ज्ञाना लिखते थे तो उस अपने रसिक मित्रा को मुनाते थे उनकी धामोचना का उत्तर देते थे और जहाँ करी कायल हा ज्ञान के अपनी रचना में काट-घाट कर देते थे। कभी उन्हें अध्याय के अध्याय और सीम के सीम बरसने पड़ जाने थे। सेवक को सर्वत्र अपना धामोष ऊचा रखना चाहिए। उसके मन में यह धारणा होनी चाहिए कि या तो कुछ लिखूया ही नहीं या लिखूया तो कोई बावसी बीज जिनमें बडकर उसी विषय पर फिर ज्ञान कोई न मिल सके।

कनो-कनी ऐसा होता है कि उस्ता बचपे-बसते कोई नयी बाल मूढ जाती है अपना कोई नया दुर्य धाँका के सामने से गुजर जाता है। सेवक में ऐसा पुख होना चाहिए कि वह उसे माको और दुखों को स्मृति-पट पर धरिष्ठ कर ले और धारणपकता पढ़ने पर उनका व्यवहार करे। कुछ सेवकों की धारणा होती है कि वे अपने साथ मोट बुक रखते हैं और ऐसी बातें उछम तुल्य टाँक लेते हैं। जिस सेवक को अपनी स्मर-धरिष्ठ पर निरवास न हो उसे अपने साथ मोटबुक धारण रखनी चाहिए। डायरी लिखना भी अपने विचारों को लेख-बद्ध करने की धारत धारता है।

प्लाट उन घटनाओं को कहते हैं जो उपन्यास के चरित्रों पर घटित हा। लेकिन केवल घटनाओं का बखान करने ही से कहानी में मनोरंजकता का मुख नहीं पैदा हो सकता। उन घटनाओं को बखाना द्वारा ऐसा सजीव बनाना चाहिए कि उनमें वास्तविकता झलकन लये। एक उपन्यासकार ने लिखा है कि उरुनेरिसा की बालि हम लोगों को अपनी क्या सामने रख देगी चाहिए और तब उसके हृदय करने में प्रस्तुत हो जाता चाहिए। उरुनेरिसा की विचार मूलाभा में कोई ऐसी युक्ति प्रविष्ट नहीं हो सकती जिसके लिए वहाँ धर्मिधर्म रूप से स्थान न हो। हम भी उसी का अनुसरण करके उच्च कोटि के उपन्यासों की रचना कर सकते हैं। साधारणतः प्लाट वह कथा है जो उपन्यास पढ़ने के बाद साधारण पाठक के हृदय-पट पर धरिष्ठ हो जाती है। पूछने इस की कथाओं में बस प्लाट ही प्लाट होता था। उनमें रंभ और रायन की माना न रहनी थी इसलिए

पूनावी व्यावितिकार युक्ति (Euclid)—सं

वह बिना इतना महत्त्वपूर्ण न होता था। धारकण पाँच सौ पृष्ठों के उपन्यास की कथा दस-पाँच पंक्तियों में ही समाप्त हो जाती है। लेकिन इन्हीं दस-पाँच पंक्तियों के सोचने में उपन्यासकार को चिन्ता मनन और चिंतन करना पड़ता है, चतना द्वारा उपन्यास लिखने में भी नहीं करना पड़ता। वास्तव में प्लाट सोच लेने के बाद फिर लिखना बहुत आसान हो जाता है। लेकिन प्लाट सोचने के साथ ही चरित्रों की कल्पना भी करनी पड़ती है, जिसके द्वारा यह प्लाट प्रदर्शित किया जाय। जार्ज किंकेन्स के विषय में लिखा है कि जब वह किसी नये उपन्यास की कल्पना करते थे तो महीनों तक अपने कमरे को बन्द कर विचार-मग्न पड़े रहते थे न किसी से मिलते थे न कहीं धर करने ही जाते थे। जब बो-लींग महीने के बाद उनके मित्राह बुलते थे तो उनकी दशा किसी रोगी से बराबरी न होती थी मुझ पीसा ग्रोसो भीतर को बँसी हुई लपेट चुकन। वैक्रे के विषय में लिखा हुआ है कि वह सन्ध्या समय किसी गरीब के लट पर बैठकर अपने प्लाट सोचा करता था। पर प्लाट को जल्द या देर में कल्पित कर लेना लेखक की बुद्धि-सामर्थ्य पर निर्भर है। जार्ज एडव फ्रांस की सुविख्यात लेखिका है। उसने चौ से कम उपन्यास नहीं लिखे। पर उसे प्लाट सोचने में बुद्धि नहीं बढ़नी पड़ती थी। वह क्लेम हाम में लेकर बैठ जाती थी और लिखने के साथ ही प्लाट भी बनता चला जाता था। सर वास्टर स्कॉट के बारे में यही मस्तूर है कि वह प्लाट सोचने में मस्तिष्क नहीं सँभलते थे। कुछ कहानियाँ ऐसी भी होती हैं जिनमें कोई प्लाट ही नहीं होता। मार्क ट्वेन का Innocent Abroad इसी श्रेण का उपन्यास है।

प्लाटों की कल्पना निम्न-निम्न प्रकार की होती है। साधारणतः उनके छः भेद माने गये हैं—

- १—कोई अद्भुत घटना।
- २—कोई गुप्त रहस्य।
- ३—मनोभाव-विषय।
- ४—चरित्रों का विश्लेषण और तुलना।
- ५—जीवन के अनुभवों को प्रकट करना।
- ६—कोई सामाजिक या राजनीतिक मुद्दा।

(१) अद्भुत—कहानी नहीं अद्भुत होती है जो प्रकृति के नियमों के विरुद्ध हो। प्राचीन कथाएँ बहुधा इसी श्रेणी की होती थीं। ऐसी कहानी का उद्देश्य केवल पाठकों का मनोरंजन है। पहले ही कल्पना की बुद्धि होने के कारण बहुधा बालकोपयोगी कहानियों में यह प्रचलित उपयुक्त समझी जाती है। प्रीयन्सवा में ऐसी कहानियों में भी नहीं ममता। बहुधा नैतिक और साधारण-सम्बन्धी उपदेश भी एनी कहानियों द्वारा दिये जाते हैं। इन्हीं के विख्यात लेखक मिचल मे 'कुसीयर की यात्रा नाम की प्रसिद्ध पुस्तक में समाज पर व्यंग किया है। वह भी अद्भुत घटनाओं का ही सहारा लेता

है। बहुधा दृष्टान्तों या 'ऐमीबरी' में अद्भुत घटनाओं द्वारा जीवन के मूळ तत्त्व हल किये जाते हैं। इंग्लैंड में जॉन बर्नियस का 'पिपिथिस प्रोसेस' अद्वितीय ऐमीबरी है। हमारे यहाँ प्राचीन ऋषियों ने बहुधा दृष्टान्तों द्वारा ही जन-साधारण को उपदेश दिये हैं। महाभारत पुरुष उपाधिपर्यन्त यात्रि में ऐसे दृष्टान्त भरे पड़े हैं। वर्तमान समय में टालस्टाय और हॉर्नर ने बहुत ही शिक्षाप्रद और घनूठे दृष्टान्त रचे हैं। अस्पष्ट असांख्यिक घटना-अवाम समस्याओं की रचना यदि बहुत धरम है तो उसके साथ ही अत्यन्त कठिन भी है।

(२) गुप्त रहस्य—जासूसी के उपन्यास सब इसी श्रेणी में आते हैं। इस प्रकार के उपन्यास लिखने में लेखक को दो बड़े संकष्टों का सामना करना पड़ता है। सम्भव है रहस्य धारण से ही कुछ जाप अथवा लेखक का रहस्योद्घाटना पाठक को संतोषप्रद न हो। भारतवर्ष में पहले ऐसे कहानियों की प्रथा न थी। योरोप में ऐसी कहानियों को लोग बड़े शौक से पढ़ते हैं। इधर कुछ दिनों से पत्राधिक बटवाएँ भी रहस्योद्घाटन द्वारा प्रकट की जाय जाती हैं। इंग्लैंड में कॉमन डायम इस श्रेणी के उपन्यासकारों में बहुत सिद्ध हस्त है, ज्ञान में मार्स लेखक और अमरीका में पो। कॉमन डायम धनी जीवित है और अनेक प्रापराधिक विषयों की ओर उनकी धार्मिक शक्ति है। जासूसी उपन्यासों में लेखक कोई घटना सोचकर एक कल्पित पासुस को उसके अनुसन्धान में मग्न देता है। ऐसी घटनाओं में सम्येष्ट गुण यह है कि उस घटना या रहस्य का अन्तना बाह्य अन्तर्गत प्रतीत हो पर लेखक जब उसे लोभ दे तो पाठक को आश्चर्य हो कि मुझे यह बात क्यों न सूची यह तो विन्मूढ साधारण बात थी। इसके साथ पाठक उम रहस्य को किसी दूररी टैलि से खोजने में असमर्थ हो। लेखक का कौशल इस बात में है कि जिस शक्ति को पाठक और लेखक स्वयं वापी समझते हों वह अंत में निरपराध सिद्ध हो जाने। ऐसे उपन्यास बहुत ही रोचक होते हैं और उनके पढ़ने से बुद्धि तीव्र होती है, कठिन समस्याओं में विभाग खोजने की शक्ति पैदा होती है। मगर उनका मित्रना इतना कठिन है कि जब तक हिन्दी में सिवा कॉमन डायम या अन्य लेखकों की कहानियों के अनुवाद के सिवा किसी ने स्वतन्त्र रचना नहीं की।

(३) मनोमग्न का निरवध—ऐसे उपन्यासों में लेखकों का ध्यान घटना-वैचित्र्य की ओर बहुत कम रहता है। वह ऐसी ही घटनाओं की आलोचना करता है जिनमें उसके चरित्रों को अपने मनोमग्नों के प्रकट करने का अवसर मिले। घटनाएँ कम होती हैं पार्श्व के विचार अधिक। टालस्टाय के उपन्यासों में यही गुण प्रबल है। ऐसे उपन्यासों को रचने के लिए आवश्यक है कि लेखक अपने को विविध अवस्थाओं पर रख सके। इस प्रकार की कहानियों में लेखक को पाठकों के सामने अनिश्चय रूप से अधिकतर धन्य हो हृदय खोलकर रचना पड़ता है। घटनाओं के मनोमग्न भावों को जानने का उनके पास और क्या साधन ही रहता है? कोई घटने मन का भाव किसी से नहीं कहता बल्कि

धीर बिनाया है। अगर किसी को किसी मिन के मनोभावों का ज्ञान हो भी सकता है, तो बहुत कम। इसलिए ऐसे उपन्यास लिखना जोड़े के बने बनाना है। उपन्यासकार को निरय अपने धंठर की धीर ध्यान रखना पड़ता है। आज इमिक्ट के उपन्यास अधिकांश इसी श्रेणी के हैं।

(४) चरित्रों का विरलेपण और (५) जीवन के अनुभवों को प्रकट करना—इन दोनों प्रकारों के उपन्यास लिखने के लिए जरूरी है कि लेखक में दिव्य कल्पना-शक्ति के साथ धनसोकन धीर निरीक्षण भी प्रचुर मात्रा हो। इसीलिए कहा गया है कि उपन्यासकार को सभी श्रेणी के मनुष्यों से मिलना-जुलना आवश्यक है। उसे अपनी भाँसें धीर कान उदक खुले रखने चाहिए। एक ही परिस्थिति में दो भिन्न-भिन्न बिचारों के व्यक्ति क्या करते हैं, एक ही बटना दोनों को किस प्रकार प्रभावित करती है, इसका निष्पत्त सहज नहीं है। अनुभव बाह्य जगत्-सम्बन्धी भी होते हैं और धंठर-जगत्-सम्बन्धी भी। लेखक को प्राकृतिक दूरियों का विभिन्न बटनाओं का बड़े ध्यान से धनसोकन करना चाहिए। प्रातःकाल समीर के धँकों में नती को ठरगों की कैसी छटा होती है, माकरठ कौन-कौन से रूप धारण करता है, ऐसे अनिश्चित ब्रह्म सफ़लता के साथ बही लिख सकता है जिसने स्वयं उनको गौर से देखा हो। केवल कल्पना यहाँ काम नहीं ले सकती। जाजिन है कि लेखक बही दूरय रिखावे उन्हीं चरित्रों की तुलना करे, जिनका उसने स्वयं अनुभव किया हो। जिधने समुद्र नहीं देखा वह किसी बंधन का ब्रह्म क्योंकर लिखेगा? जिधने धामीश्यों की संवृति नहीं की वह धामीश्व जीवन का चित्र क्योंकर खींच सकता है? यही सफ़लता प्राप्त करने के लिए योरोप के कई विख्यात उपन्यासकारों ने धैर्य बरतकर उन स्थितियों का अध्ययन किया है जिनके धाधार पर वे अपना उपन्यास लिखना चाहते थे।

(६) कोई सामाजिक या राजनीतिक सुधार—किसी उद्देश्य विरोध से लिखे गये उपन्यासों की संख्या धनसोकन सभी भाषाओं में बहुत अधिका है। उन्में भी ऐसे जिनमें ही उपन्यास है, मुख्य भाषाओं का तो कहना ही क्या? धनसोकन 'सुधार-सुधार' के धीर नाद से साध धामुर्मंडल निर्माबित हो रहा है। कहीं पुलिस के सुधार की चर्चा है, कहीं काठगारों की कहीं म्यायासनों की कहीं सामाजिक प्रथाओं की कहीं रिवाज-व्यक्ति की। यह बिनाशास्त्र विषय है कि उपन्यास किसी उद्देश्य से लिखना चाहिए या नहीं। प्रवीण समालोचकगण की राय में साहित्य का उद्देश्य केवल माध-विषय ही होना चाहिए। उद्देश्य से लिखी हुई कहानियों में बहुधा लेखक को विवश होकर धरंधर बातें धरुसानी पड़ती हैं, धनावरमक बटनाओं की धायोजना करनी पड़ती है, धीर सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि उसे उपदेशक का स्थान ग्रहण करना पड़ता है। अगर उचित समाज किसी से उपदेश लेना नहीं चाहता उसे उपदेशों में धार्मिक है धीर उपदेशकों में बूझा। वह केवल मनोरंजन धीर मनोपशन चाहता है। पर इसका माध ही यह भी मानना पड़ेगा कि कठ

रक्षाधी में पारभास्य कैशों में जितने सुधार हुए हैं उनमें अधिकतर का बीजारोपण उप
 न्यासों के ही द्वारा किया गया था। जिनके के प्रायः सभी उपन्यास टास्टराय के कई
 उत्तम उपन्यास मैक्सिम गोर्की तुयनेव वासन्तक हगो मेरी करेसी बोसा आदि
 प्रधान उपन्यासकारों ने सुधारों ही के उद्देश्य से अपने ग्रन्थ रचे हैं। ही कुशल सेरक
 का यह कृत्य होना चाहिए कि वह सुधार के बोध में कथा की रोचकता को कम न
 होने दे। वह उपन्यास और अपने चरित्रों को उन्हीं परिस्थितियों में रखे जिनको वह
 सुधारना चाहता है। यह भी परमावश्यक है कि वह सुधार के विषय को सूत्र बोध में
 और व्युत्पत्ति से काम न ले नहीं तो उसका प्रभाव कभी सफल न हो सकता। सेरक
 बन्द प्रायः अपने काल के विधाता होते हैं। उनमें अपने देश को अपने समाज को कुछ
 न्याय तथा मिथ्याचार से मुक्त करने की प्रवृत्ति आकाशा होती है। ऐसी दशा में प्रसम्भव
 है कि वह समाज को अपने मनमाने माप पर बसने दे और स्वयं कड़ा हाथ पर हाथ रखे
 देकता रहे। वह अगर और कुछ नहीं कर सकता तो कमम तो बसा ही सकता है।
 रोचकपियर और क्रमिवास के समय में सुधार की आवश्यकता धाव से कम न थी लेकिन
 उस समय राजनीतिक ज्ञान का इतना प्रसार न था। रूस लोग भोग-विनास करते थे
 कि और सेरक उनकी विनास-वृत्तियों को और उच्चरित करते थे। प्रजा पर क्या गुन-
 रती है, इतर किसी का ध्यान न था। यह समय जीवन-सुधाम का है। धाव हम को
 विवश कहलाते हैं, उदस्य होकर अग्याय होते नहीं देक सकते।

प्लाट का महत्व जानने के बाद अब हम यह जानना चाहें कि अच्छे प्लाट में
 कौन-कौन सी बातें होनी चाहिए। समालोचकों के मतानुसार वे ये हैं—उत्तमता मौलिक
 कथा रोचकता।

प्लाट सरल होना चाहिए। बहुत उलझा हुआ पेशीय शैतान की घाँट पड़-
 पड़ते ही उलझा जाय ऐसे उपन्यास को पाठक उलझकर छोड़ देता है। एक प्रसंग अपनी
 पूरा नहीं होने पाया कि दूसरा आ गया वह अपनी अचूक ही था कि तीसरा प्रसंग आ
 गया इससे पाठक का चित्त अन्धरा जाता है। पेशीय प्लाट की कल्पना इतनी मुश्किल
 नहीं है, जितनी किठी सरल प्लाट की। सरल प्लाट में बहुत-से चरित्रों की कल्पना नहीं
 करनी पड़ती इसीलिए सेरक की प्रत्यसंक्षेप चरित्रों के धाव-विचार, गुण-दोष धावार
 व्यवहार को सूक्ष्म रूप से दिखाने का अवसर मिल जाता है, इससे उसके चरित्रों में सजीवता
 आ जाती है और वह पाठक के हृदय पर अपना अन्धका या कुछ अन्धर छोड़ पाते हैं। यह
 बात बहुतसंक्षेप चरित्रों के साथ नहीं प्राप्त हो सकती। प्लाट में मौलिकता का होना भी
 पन्ती है। जिस बात का विषय को धन्य सेरकों ने लिख डाला हो उसे कुछ हेर-फेर
 करके अपना प्लाट बनाने की चेष्टा करना अनुपयुक्त है। प्रेम बियोग आदि विषय इतनी
 बार लिखे जा चुके हैं कि उनमें कोई नवीनता नहीं बाकी रही। धाव तो पाठक कहानियों
 में नये भावों का नये विचार का नये चरित्रों का विन्दर्शन चाहते हैं। धाव 'सुन्दरहटरो

से पाठकों को तस्कीन नहीं होती। प्लाट में कुछ न कुछ ताज़गी कुछ न कुछ धनोत्थान प्रसरण होना चाहिए। रही रोचकता वह मौसिकता की सहगामिनी है। मौसिक प्लाट है तो वह रोचक भी जरूर ही होता। लेकिन कहानी की रोचकता किसी एक बात पर निर्भर नहीं है। प्लाट की सुन्दरता चरित्रों का विशिष्ट बटना का वैशिष्ट्य सभी सम्मिश्रित हो जाते हैं तो रोचकता व्याप ही व्याप या जाती है। हाँ उपन्यासकार यह कभी नहीं भूल सकता कि उसका प्रधान कथ्य पाठकों का यम प्रकृत करना उनका मनोरंजन करना है। और सभी बातें इसके आधीन हैं। अब पाठक का भी ही कहानी में न क्या तो वह क्या सेकक के आधों को समझेगा? क्या उसके अनुभवों से लाभ उठानेगा? वह बच्चा के साथ पितामह को पटक देया और सदा के लिए उपन्यासों का निरुद्ध हो जावेगा। आब भी कितने ही ऐसे व्यक्ति मिलते हैं जिन्हें उपन्यासों से शिक है। उन्हें प्रसन्न कर लिया है कि उपन्यास कदापि न पढ़ेंगे। कारण यही है कि हिन्दी के वर्तमान उपन्यासों ने उन्हें निरास कर दिया है। नये उपन्यास-लेखकों का कर्तव्य है कि वे उपन्यास-साहित्य के मुद्दों को उन्मूलन करे इस बदनामी के दान को मिटा दें।

माधुरी २३ अक्टूबर १९२२

प्राचीन मिस्र जाति के धर्म-तत्त्व

प्राचीन मिस्र जाति के लोग बड़े अमनित्य होते थे और उनके धर्म-सिद्धान्त उनके जीवन के प्रत्येक क्षण में सम्मिश्रित रहते थे। वह मूर्ति-पूजक थे और जीवन-उपयोगी वस्तुओं की प्रतिमाएँ बनाकर उनकी पूजा करते थे। बस मूर्ति धर्म नील नदी घाटों पर मात्रमा भूय गन्धर्व और मृतात्माओं का आराधन करते थे। लेकिन समस्त जाति सब देवताओं की अनुयायी न होती थी। मिश्र-मिश्र प्राणियों के देवता भी पृथक् होते थे और उन प्राणियों के लोग अपने ही देवताओं को सबभ्रष्ट समझते थे। यद्यपि उनके मुख्य-मुख्य देवताओं के स्वल्प में धन्तर वा लेकिन वास्तव में वह सब एक ही थे। उदाहरणार्थ हेमियोपॉलिस नगर में 'रा' नाम से सूर्य की पूजा होती थी लेकिन तब नगर में उसी को 'आमन' के नाम से पूजते थे। इन दोनों स्थानों में भूय की प्रतिमा मिश्र-मिश्र थी।

वह लोग अपने देवताओं को मनुष्य की मूर्ति जोरकारी समझते थे ही बुद्धिमान बस और पराक्रम में उन्हें मनुष्यों से ऊँचा मानते थे। मनुष्यों की तरह उनमें भी दृष्टांत और भावनाएँ मौजूद थीं। यह देवतागण परिवार थे उनका स्त्री कामक और धर्म सम्बन्धी भी थे। उनकी पत्नी और पुत्र भी देवताओं की तरह पूज्य माने जाते थे। बाह्य नगरों में देवताओं की जगह देवियों की ही पूजा होती थी। पर विद्वानों के मतानुसार मिस्र में उच्च शक्ती के लोग एक्केरग्वारी थे।

मिस्र के देवताओं में सबसे प्रतिभाशाली सूर्य था। उसका स्वरूप धीरे धीरे धानुपख आकारों के सदृश था। उसके सिर पर धान का बंधन धीरे धीरे एक सौंप बना होता था जो तेज की प्रकृति का सूचक था। लोगों की कल्पना थी कि वह वायुमंडल में एक मान पर बैठा हुआ है और कई मस्माह उम्र यात्रा को सींचते हैं। जब वह सूर्य के ऊपर आता है तो उसके मोचनों की तेजस्वी शिखारें ममस्त मूमिर्मंडल को धानोक्ति कर देती हैं और प्राणियों को बल और तेज प्रदान करती हैं। वह नित्य अपने मान पर बड़ा होकर अपने शत्रुओं में लड़ता और उन्हें परास्त करता है। यंध्या हो जाने पर वह पताल में जाकर शयन करता है। सूर्य के प्रकाश का एक धमक देवता का त्रिभुजा नाम 'होबम' था। वह प्रतिदिन प्रातःकाल एक सुन्दर भवबुधक के रूप में प्रकट होकर प्राकृत-मंडल में विचरता है और भयानक के देवता के त्रिभुजा नाम 'नित' है नित्य लड़ता रहता है।

धाकास के देवताओं के बाद मिस्रों लोग धर धीरे धीरे के देवताओं धीरे देवियों को मानते थे त्रिभुजा नाम मूमि को उपमाऊ बनाया है।

यह निश्चय था कि मिस्र के पुषक-पुषक स्थानों में त्रिभुजा-नित देवता मान्य मानने लगे थे। लेकिन कालान्तर में जब मिस्र में एक सर्वशक्तिमान राज्य स्थापित हो गया तो यह वाचस्पयि नित गया। समस्त देवबन्ध सावनीय हो गये।

इन सब देवताओं-में 'आइमिस्र' धीरे 'उजेरिस' भवप्रधान थे। यह 'उजेरिस' प्रकाश का देवता था और अपने भाई 'नित' का जो त्रिभुजा-नित ममस्त आता था दुःखमन था। उसके विषय में यह निश्चयनी थी कि वह प्रजापति को धाकास-नागर से निकलकर दिन भर अपना प्रकाश फैलाता रहता है। रात को उमरु भाई 'नित' इवचर उसे धार कर टुकड़े-टुकड़े कर शानता है। उसकी पत्नी 'आइमिस्र' उसके शयन पर बैठकर विलाप करती है। 'नित' का उका बजने लगता है और संसार में धंधकार छा जाता है। लेकिन 'उजेरिस' स्व पुन 'होबम' सूर्य से निकलकर अपने सित को हृष्य का बदला लेता है और 'नित' को मारकर फिर संसार में ज्योति फैलाता है। यह धर्मनय नित्य होता रहता है।

मिस्र देश के बहुत से नगरों का नाम था कि 'उजेरिस' के शरीर के टुकड़े इनके मन्दिरों में भूमिष्ठ हैं। 'उजेरिस' का मातम मनाने के लिए वर्ष में एक दिन नियत कर दिया गया था। इस दिन ममस्त देश में धाकास भुजापी देता था और महिमाएँ 'उजेरिस' के नामों के शोक में अपने केश मोच शानतो थीं।

'माई' नगर के पुराणी एक ज्योति के तट पर उजेरिस के जीवन-मरुत और पुनर्जीवन की घटनाओं को ताजिमा बनाकर दिखाते थे। प्रसिद्ध इतिहासकार हिरोडोटस ने त्रिभुजाओं का यह दृश्य देखा था लेकिन उसे ताजिमा कर ही गयी थी कि वह इनका कहीं जल्लेस न करे।

मिस्री देवताओं की प्रतिमाएँ अपनी विचित्रता में भारतीय प्रतिमाओं से कम नहीं। मिस्री का बड़ मनुष्य का था तो सिर पशु का और किसी का बड़ पशु का था तो सिर मनुष्य का था। होहस का सिर चिड़िया के सिर के सदृश है। धाइसिक का पाप के सिर के सदृश। 'मानोबीस नामक देवता का सिर गीबक का है और 'अठाह का सिर बैल के समान है।

मिस्र देश-निवासी बहुधा पशुओं को पवित्र समझते और उनकी पूजा करते थे। उनमें से सिंह, बाघ गाय तियाह, बिस्ती मेढा और लबा धादि विशेष धारणीय थे। इन पशुओं को मारना या किसी प्रकार का अपट देना बर्जित था। रोमवासियों ने जिन समय समस्त रुशार पर धाधिपत्य बना लिया था उस समय एक रोम-निवासी ने एक बिस्ती को मार डाला था। जनता ने उससे बिस्ती के खून का बदला लेना चाहा। मिस्र के राजा ने जो रोम का करव था चाहा कि उसे लोगों के हाथ से बचा ले लेकिन उसका कुछ बरा न बना। बिस्ती के जाटक को लोगों ने मार ही जता। प्रत्येक मन्दिर में इन पशुओं में से एक न एक सबरय ही पाला जाता था और भक्त-जन जाकर उसकी पूजा करते थे। एक ईसाई पादरी ने इस प्रथा का इन शब्दों में मजाक उड़ाया है—'जब कोई धारमी मन्दिर में जाता है तो पुजारी महात्म्य समीरता और औरक के साथ कुछ गहरे और परदा उठा बैठे हैं कि उठे देवता के दर्शन कराये। तब वह धारमी क्या देवता है कि एक बिस्ती या एक मगर या एक साँप या कोई दूसरा जानवर प्रकट होता है जो एक सुसज्जित फटा पर बैठा या सेटा हुआ रहता है।

तिब नगर के व्यापारियों ने एक बड़ियाल को हिमाचल उमक कानों में सोने की बानियाँ और हाथों में कगन पहनाये थे।

यूनान देश के एक यात्री ने जो ईसा मसीह का समकालीन था सही नगर क बड़ियाल का वर्णन किया था। वह उसका यों बखान करता है—

'पुजारी कुछ मीठी रोटियाँ कुछ लमी मधसियाँ और कुछ शहद लेकर घर बाह भीस पर गया। बड़ियाल भीस के चिनार सेटा हुआ था। जो धारणियों ने उसका मुँह फकड़कर खोला एक धारमी ने पहले रोटियाँ उसके मुँह में डाल दीं फिर मधसियाँ और कुछ शहद धाधि भी डाले गये। तब बड़ियाल भीस में बूर गया और बूसरे चिनारे पर जाकर सेट रहा। उसी समय एक और यात्री वह बस्तुएँ लाया। पुजारी उसे भी लेकर भीस पर गया और बड़ियाल को वह चीजें फिर निला दीं।

अरुधम नगर के लोग एक बड़ियाँ की पूजा करते थे और हजियेपोलिथ नगर का देवता एक पत्नी का जिसे यूनान के लोग 'थीमिका धर्मान् उम्हा करते थे। मिस्रवाले उसके विषय में बड़ी विचित्र कथाएँ बयान करते थे। उनका विश्वास था कि हर पाँच ही बयों में एक बार उन पत्नियों में से एक 'रा' नगर के मन्दिर में जाता है। वह अपने बाह धरने बाग की लाता भी लाता है। उमका मूर में जा एक प्रकार का गुणगिष मोह

है मरोटकर वहाँ रक्त होता है। वह पहले मूर का घड़े के धामर का बाता है फिर उसमें द्रव्य करके मास को उसमें रखकर घैर को बन्द कर देता है। यह पक्षी कई जवाबियों तक सीमित रहता है और जब मरने के दिन निकल घाटे है तो बहु मुगन्धित अर्कियों का एक छोटा-सा पित्ररा बनाकर उस पर चढ़ता है और अस्म हो जाता है। उसको राख से एक बखान बाहर निकलकर उड़ने भवता है। धराब और धरती पक्षों म भी इन्हीं कमाओं का मयमन किया गया है।

मंजोर मगर में एक ऐसा माय को पूजा करने को प्रथा थी जिसका रंज काना माने पर उबसा और विकीरु बान और पूज पर चने बान हो। उसे धामोस कहते थे। मिस्र के लोगों का कवन था कि ऐसी माय प्राकार में बनकरनेबानो बिबत् से पैदा होती है। जब ऐसी माय कहीं बिब आती थी तो बुझारी भोव उनके चिन्हों को भरोमार्ति देख कर उसे धामोस का स्वाग देते थे। किन्तु इस पुग्पव पर कोई वाय पक्षीम बयों से अधिक न रहने पत्नी थी। मगर कोई इस धवन्ना को पहुँच जाता तो बुझारीवख उसे एक पवित्र बल-सोत में मग्न कर देते थे और उसकी अपह कोई दूसरी माय उभाठ कर लते थे। यदि धामोस पक्षीम बयों के पहले मर जायो थोतो उसको मास में मसाना मपाकर कब से नाइ देते थे। जिस समय विश्व मगर मिस्र देश का साम्राज्य-स्वान हो गया तो उस मगर का देवता 'धामने' धम्य सब देवतायो से अद्भ्य माना जाने मया। वह धनारि धतन्ध और सबसक्तिमान समभ्य जाता था। वह उमार का मृष्टि करने-बाना सब बानों का बान और सब मन्तार्थों को माता सपान किया जाता था। भोव इन शक्तों में उसकी स्तुति करते थे—

‘तू पाम धो प्राकार को घोगां सीमाओं के माबिक धो बनकरने-मनकरनेबाता देव तू प्राकारों में धमख करनेबाना है, तेरे शत्रुओं का सवनाय हो। तू पापियों को निर्वामित कर देता है। तूने नास्तिकों की मोरता और पराक्रम को बून में मिसा दिया है। तू सम्य है, नास्तिक निवत है, तू ऊँचा है और नास्तिक मोचा है, तू सत्कथ और सेव शत्रु बतक्य है। जो जोषों के धामर, तू हमारे वारसाइ को चिरेबोवी बना चरकी मत्र धोर बम से परिपूरित कर उसके बालों के मिए, मुगन्धि प्रदान कर। संघार तेरे प्रकास से उभोतिमन है। तू बह है जिसके परों से बिजली पैदा होती है, तू बह विह बौव है जिसकी परज शत्रुओं को मयभीत कर देती है तू बह पुत्र है जो दिव्य जन्म नेता है तू बह बुध है जो धमर है। तू उत स्वाग का स्वामी है जहाँ तक कोई नही पहुँच सकता।

समस्त मिस्र-निवासियों का मित्रवास था कि जब कोई प्राणी मर जाता है तो उनमें भीई धंरु बोजित रहता है। इन मंस को बहु धात्वा कहते थे। धरना का धामर शरीर के समान और धन्त स्वकन बिभार के समान है। वह मद्दूय है उसे स्वत करना समभव है। इनका यह धनुकाम था कि लते समय धीव मुँह से निकलता है। उनके

मतानुसार यह जीव अपने शरीर पर अक्षय्यवृद्धि रखता है। अगर काना सुरक्षित न रही तब तो जीव इधर-उधर मारा-भारा फिरता है। मुठक की सबसे बड़ी सेवा और उसके जीव के साथ सबसे बड़ा उपकार यह है कि शव सड़न-गमने से बचाया जाय। इसीलिए मसाने मराने की प्रथा पड़ गयी थी। हिरोडोटस ने मसाने मराने की प्रथा का सविस्तार बखन किया है। वह सिखाता है कि मिस्र के प्रत्येक नगर में कुछ लोग ऐसे रहते हैं जो मसाने लगाने का व्यवसाय करते हैं। जब मुठक का बारिस शव को मसाने लगानेवाले के पास ले जाता है तो वह उसे मकड़ी के ममूय ढिंघाता है। यह ममूय तीन प्रकार के होते हैं उत्तम मध्यम और निम्न। हर ममूय का मूल्य उसकी हिसमत के अनुसार होता है। जब मजूरी तय हो जाती है तो बारिस शव को मसाने लगानेवाले को सौंपकर चर जाता जाता है।

उत्तम मजूरी का मसाने मराने के लिए पहले शव के सिर का जेजा निकालते थे इस तरह कि कोई थक सिर में पहुँचाकर उसमें मेजे को हल करते थे फिर एक धाँकड़ा माक के मकलों में डालकर मेजे को बाहर निकालते थे। तब शव की पसमी-पीटकर धाँके बाहर निकाल लेते थे और शराब से बोकर धँतड़ी में सुगन्धित धाँपबिर्वा भर देते थे। इसके पश्चात् शव को सत्तर दिन खारे नमक में रखते थे फिर उसको बोते थे और पौध लगाने हुए कपड़ की पट्टियाँ उस पर सपेटते थे। मसाने लगा चुकने के बाद शरा बारिस को दे भी जाती थी। वह शरा के धाँकर का एक लाना बनवाकर शव को उसमें रख देता था और वह बीवार के सहारे से खड़ा कर दिया जाता था।

मध्यम मजूरी के मसाने की विधि यह थी कि एक प्रकार का गोंब मली द्वारा मुँह के पेट में पहुँचाते थे और पेट को फाँके और धाँप को निकाले बिना ही धैर को बन्द कर देते थे जिससे गोंब बाहर न निकल सके। फिर शव को सत्तर दिन एक खारे नमक में रखते थे। तब नमक में से उसे निकालकर पौध का पानी बाहर निकाल देते थे। उस पानी के साथ शराब का मस भी निकल जाता था। खार न रहने के कारण मांस पस जाता था और शव में हल्की और जमड़ के सिवाय और कुछ बाकी न बचता था।

निम्न मजूरी के मसाने की विधि इससे भी सरल थी। शव के शराब पौध पहुँचाकर उसे खारे नमक में रख देते थे। गरीब लोग प्राय इसी तरह के मसाने मराने करते थे।

मिस्र के कश्मिरालो में ऐसी जगहें बहुत-सी मिलती हैं और यूरोप के लोग ऐसी जगहों जगहों लौट ले गये हैं। वहाँ के प्रसिद्ध प्रजापक्षियों में मसाने मराने हुई जगहें मौजूद हैं।

प्राचीन मिस्र-निवासियों का विश्वास था कि जीव को भी प्राणियों की भाँति मोहन-बराबर की आवश्यकता होती है। गरीब लोग तो मसाने-मराने जगहों को बामू में बाँड़ देते थे लेकिन धनीयों में उसके लिए घसब मकान बनवाने की प्रथा थी। यह मकान

एक बिसूय गृह या कम से कम एक कमरे के बराबर होता था। धार्मिकता के बादशाहों के समय में यह शव-शाला मीनार के मूरत की बनवायी जाती थी। मंफ्रीस नगर के समीप एक शहर के बराबर भूमि तब शालाघो से ही भरती हुई है। कोई-कोई मीनार पश्चिम में बनाये गये हैं जैसे महुमी में रहने के घर बने होते हैं। बहुत ऊँचे मीनारों में बायशाहों को धीरे-ऊँचे छोटे मीनारों में धमीरों को बफन करते थे क्योंकि मीनारों के बनाने में समय बहुत पड़ती थी। कम के लिए रत के नीचे या पत्थर में उड़वाना और उनके सामने एक छोटा-सा नमाजखाना जो बाहर की तरफ मुस्ता था बनाते थे। नमाजखाने में प्रवेश करने पर पिछली दीवार में एक बड़ी शिजा दिखायी देती थी। उसके नीचे एक छोटी देव होती थी जिस पर पूजा की सामग्री रखते थे। केवल यह नमाजखाना ही कम का वह मय था जहाँ धारमी था सफटा था। लेप भय मूतक के लिए ही होता था और किसी को धन्दर बाकर मूतस्या की शान्ति में बिज डालने का अधिकार न था। इसीलिए मत्र का दरवाजा न बनाते थे। नमाजखाने के पीछे एक बालान होता था। वहाँ मूतक की मूर्तियाँ रखी जाती थी। कभी-कभी एक मूर्त के लिए बीस से अधिक मूर्तियाँ बनायी जाती थीं। इसका अर्थिभाव यह था कि अगर मसालेशर शव नष्ट हो जाय तो उसकी जगह मूर्ति रख दी जाय। नमाजखाने के एक कोने में एक कुँधा पत्थर की बुनार से बनाया जाता था। कुँध के नीचे एक छोटा-सा एस्ता बना होता था वहाँ पत्थरों की कन्दरा बनायी जाती थी। यह मूतक का शयनगार था। उसने मय में मुँदर का कले पत्थर की वेदी पर पड़ा हुआ मूर्त अलग मित्र में मय रहता था। उसके निकट बड़े-बड़े बदन पानी से अरकर धीरे-धीरे उठा माँघ रख देते थे। इसके बाद उस एस्ते को म्द करके कुँध की पत्थरों से पाटकर बन्द कर देते थे। फिर कोई मनुष्य अन्दर न जा सकता था। वह कुँध भय भी जैसे ही है जैसे बार-बार हजार वष पहले थे। ज्यों भी ही सुपचित रखा में भी। वहाँ तक कि जालों वहाँ धीरे-धीरे की बीजें पड़ना नहीं हुआ था। मूतक के बरबाने जब उसके लिए फिर जाने-बीने की बीजें पड़ना पाटों में ठी धन्दर न था सकने के कारण खाद्य पदार्थों को नमाजखाने में रख देते थे। कभी-कभी मुर धारि भी बनाते थे ताकि उनकी सुगन्धि मूतक की नाक में पहुँच जाय।

कुछ काम के बाप लोगों का यह विचार हो गया कि मूतक के लिए भीतिक पदार्थों की आवश्यकता नहीं है, बरन् ईश्वर से विनय करनी चाहिए कि वह उन्हें लुधा की पीड़ा से बचावे। इसलिये नमाजखाने की शिजा पर यह प्रार्थना लिख देते थे—हम उबेरिय को सिखा करते हैं धीरे-उससे विनय करते हैं कि वह उन समान बीजों को जिनका सेवन वह भोग करता है—अर्थात् रोटी माँघ कुछ तराब नख सुगन्धि—मूतक को भी प्रदान करे।

कुछ समय के बाद मिस्र-निवासियों को यह विस्वास हो गया कि जीव को केवल

४ प्राचीन मित्र जाति के धम-राज

‘मोक्ष पदार्थ के चिन्हों हो वे संतोष हो जाता है। उनके लिए रोटी का चित्र बना देना फाड़ो है। अतएव कालान्तर में नमाजखाने को बीबारों चित्रांकित हो गयी। सोच बिच बीब को मृतक तक पहुँचाना चाहते थे उसका चित्र बीबारों पर धँकित कर देते थे। जो चित्र वहाँ बने हुए है उनमें किसानों के चित्र भी है जो जमीन को बोत धीर वो रहे है। कोई खलिहान से धनात्म उठा रहा है। वहाँ कपड़ा धीर भोबी कूत सी रहे है। इसी भाँति बदर्, राम नाचने-गानेवाले धीर बाजीगरों की तस्वीरें भी है। इसके अतिरिक्त मृतक की मित्र-मित्र भीमित अन्वयार्थें भी धँकित की गयी है। कहीं-कहीं वह अपनी स्त्री के साथ बैठे हुए मोक्षण कर रहा है, या खंजस में शिकार खेल रहा है, या भीनों के छट पर मछलियों का शिकार खेलन में व्यस्त है।

बहुत काम तक मिसबाओं की यह धारणा थी कि जीब उसी कब्र में रहता है, वहाँ उसकी देह धोत्र भी जाती है। लेकिन कुछ समय बाद उनका यह मत परिवर्तित हो गया धीर यह कल्पना की जाने लगी कि समयस धीब भूमि के नीचे उस स्थान पर एकत्र होते है वहाँ सूर्य अस्त होता है। वहाँ उबेरियस राज्य करता है। वह बीबा की कर्मानुसार परीक्षा करने के उपरान्त उन्हें वहाँ निवास करने की आज्ञा देता है। लोगों का कल्प था कि जब जीब शरीर से निकलता है तो एक नीला में बैठकर भूमि के नीचे जल-सागर में अमल करता है। वहाँ उसे बड़े मयंक देव विवायी देत है जो उसे मच्छ करना चाहते है लेकिन जीबों के रक्षक देववण उसकी सहायता करते है धीर उसे स्वाभाविक तक पहुँचा देते है। वहाँ उबेरियस स्वायत्त पर विराजमान होता है। उसके ब्याजीस सहायक मंत्री होते है जो इस बात का अनुसंधान करते है कि जीब ने ब्याजीस कुकर्मों में से किसी का आचरण तो नहीं किया है। जीबों का उनके कर्मानुसार ही बंद या फल मिलता है। पापी जीबों को कौड़े मनाये जाते है वे साँप-बिच्छू आदि से कबलये जाते है। पुण्यारमार्थ देवताओं का सहवास करती हुई नृतर के वृक्षों की छाँह में ध्यानपूर्वक अमल काम ठठ विधाम करती है। वह उबेरियस के माण रस्तरखाल पर बठती धीर उन पदार्थों का मोक्षण करती है जो एक देवी उनक लिए बनाती है धीर उत्तम प्रकार के इत्र मँसती है।

मिसबाओं का यह धनीष्ट था कि जब जीब उबेरियस के स्वाय-सहासन के सम्मुख आता हो तो वह अपने को निरपराध सिद्ध कर सके। इसलिये एक छोटी-सी पुस्तक टाबूत के अन्दर रस देते थे। उस पुस्तक में वह उत्तर लिखे होते थे जो उबेरियस धीर उसके सहायकों को देने चाहिए। उदाहरणतः अपनी निर्दोषता सिद्ध करनी चाहिए—

‘मैंने कभी अपट-व्यवहार नहीं किया किसी को बोया नहीं दिया। मैंने किसी धनात्म विषया को नहीं सताया किसी विधाम में भूठ नहीं बोला। धरने कठम्य-याजन में कभी ध्याप्त्य नहीं किया। किसी एमी वस्तु को नहीं घुसा जिने देवताओं ने निषिद्ध

छूटाया हो किसी की हत्या नहीं की मन्दिरों की बनमूर्ति और देवताओं के भोग-प्रसाद की धोर से कमी दाखिल नहीं रहा मृतकों को भोजन और जल पहुँचाता रहा मनाज लम्बने में कभी कभी नहीं की किसी की ज़मीन बर्हमानी से नहीं ली ठीक धीरे मात्र से कम नहीं बेचा देव-समर्पित पशुओं को नहीं मारा पुत्र पत्नियों का काम में नहीं पकड़ा पवित्र मद्यमियों का शिकार नहीं किया किसी महर को मर नहीं किया और न उसे काटा ; मैं निर्दोष हूँ । बल्कि मैंने मूर्तों को भोजन दिया है प्यासा को पानी दिया है, गेयों को कपड़े पहनाये हैं माचियों को लीला से सहायता दी है देवताओं की बेटी पर भेंट चढ़ायी है और मुर्तों की मोजनारि से सेवा की है । ऐ इन्द्रियो ! मझे मुक्त करो और कुश के सामने मेरी कुलाई मल करो क्योंकि मेरा मुख और दोनो हाथ पवित्र है ।

यह उत्तर वहुधा कम की बीमारों पर यहाँ तक कि मुठक क मुँह पर भी लिख लिये जाते थे ।

माधुरी : मार्गशीर्ष १६७८

उपन्यास

उपन्यास की परिभाषा विद्वाना ने कई प्रकार से की है, लेकिन यह कायश है कि जो भी शीघ्र जितनी ही सरल होती है उसकी परिभाषा उतनी ही मुश्किल होती है । कविता की परिभाषा आज तक नहीं हो सकी । जितने विद्वान हैं उतनी ही परिभाषायें हैं । किन्हीं दो विद्वानों की परिभाषायें नहीं मिलती । उपन्यास के विषय में भी कई बात कही जा सकती है । इनकी कोई ऐसी परिभाषा नहीं है जिस पर सभी मत्प सहमत हों । मैं उपन्यास को मानव चरित्र का जिव मान समझता हूँ । मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों का खोलना ही उपन्यास का मूल उद्देश्य है । किन्हीं भी दो पात्रमियों की सुरतें नहीं मिलती उसी भाँति पात्रमियों के चरित्र भी नहीं मिलते । जैसे सब पात्रमियों के हाथ पाँव और कान नाक मुँह हलने हैं पर इतनी समानता पर भी इनमें बिभ्रता मौजूद रहती है उसी भाँति सब पात्रमियों के चरित्रों में बहुत कुछ समानता होते हुए भी कुछ विभिन्नताएँ होती हैं । इसी चरित्र-समानता और विभिन्नता विभिन्नता और मिश्रण और मिश्रण में विभिन्नता रिक्तता उपन्यास का मुख्य कर्मण्य है । सन्तान प्रेम मानव चरित्र का एक अत्यन्त गुण है । ऐसा हीन प्राणी होना जिसे अपनी सन्तान प्यारी न हो । लेकिन इस सन्तान-प्रेम की मानाएँ हैं उसके भेद हैं । कोई तो सन्तान पर मर बिटसा है, उनके लिए कुछ छोड़ जाने के लिए धार

गता प्रकार के कष्ट भेसता है लेकिन बर्न-बीस्ता से अनुचित रूप से धन संग्रह नहीं करता। उसे शंका होती है कि कहीं इसका परिणाम हमारी सतान के लिए बुरा हो। कोई धीबिस्व का लेशमान भी बिचार नहीं करता जिस तरह भी हो कुछ धन संभय करना अपना ध्येय समझता है, चाहे इसके लिए उसे दूसरो का गमा ही क्यों न काटना पड़े। वह संतान-भ्रम पर अपनी आत्मा को भी बलिदान कर देता है। एक तीसरा सन्तान-भ्रम यह है जहाँ मरता की सम्भरिषता प्रबल कारण होती है जब कि पिता सन्तान का कुचरिष देखकर उससे उपाधीन ॥ जाता है, उसमें लिए कुछ छोड़ जाना या कर जाना ब्यब समझता है। अगर आप बिचार करेंगे तो इसी सन्तान-भ्रम के अग्रलिखित भेद आपको मिलेंगे। इसी भाँति धर्म्य मानवीय यणों की भी मात्राएँ धीर भेद हैं। हमारा चरिषाभ्ययन जितना ही सूच्य जितना ही विस्तृत होगा उतनी ही सफलता से हम चरिषों का बिचरष कर सकेंगे। सतान-भ्रम की एक दशा यह भी है कि जब पुत्र को कुमान पर चलते देखकर पिता उसका जातक शानु हो जाता है वह भी संतान भ्रम ही है जब पिता के लिए पुत्र की का मरुदू होता है, जिसका टेढ़ापन उसके स्वाभ में बाधक नहीं होता। वह सतान-भ्रम भी देखने में आता है जहाँ सरज्जो बुभाठी पिता पुत्र-भ्रम के बशीभूत होकर यह सारी बुरी भावतें छोड़ देता है। अब यहाँ प्ररन होता है कि उपन्यासकार को इन चरिषो का अध्ययन करके उनको पाठक के सामन रख देना चाहिए, उसमें अपनी तरफ से नाट-श्रीट कमी-जेशी कुछ न करनी चाहिए या किसी उद्दरय की पूर्ति के लिए चरिषों में कुछ परिवर्तन भी कर देना चाहिए जहाँ से उपन्यासकारों के दो विरोह हो गये हैं, एक Idealist या आरशावाशी बुसरा Realist या यथायवाची। Realist चरिषो को पाठक के सामन उनके यथाय यन्न रूप में रख देता है, उसे इससे कुछ मतमब नहीं कि सम्भरिषता का परिणाम बुरा होता है या कुचरिषता का परिणाम अच्छा उसके चरिष अपनी कमबारिमा या बूबियाँ बिखाले हुए अपनी बीबन-बीला ममाप्त करते हैं, धीर चूँकि संसार में सबैब नेकी का फल नेक धीर बरी का फल बब नहीं होता बल्कि इसके बिपरीत हुषा करता है नेक धारनी बबके लाते हैं यातनाएँ सहत हैं मुसीबतें भेलसे हैं अपमानित होते हैं, उनकी नेकी का फल उनटा मिमता है बुरे धारणी बैन करते हैं नामबर होत है बरास्वी बनते हैं, उनकी बरी का फल उनटा मिमता है। प्रकृति का नियम बिचिन है। calist धनुभब की बड़ियों में अकड़ा होता है धीर चूँकि संसार में बुरे चरिषों की प्रबानता है, यहाँ तरु कि उज्जबल से उज्जबल चरिषो में भी कुछ न कुछ शानु-भयम् रहते हैं इसलिये Realism हमारी बुबसताओं हमारी बिपमताओं धीर हमारी कृताभा का गन्न बिन्न जाता है। बास्तब में Realism हमको Possibilist बना देता है, मानब चरिषा पर से हमारा बिचराय उठ जाता है, हमको अपने चारो तरफ बुरा ही बुरा नजर धाने समती है। हममें सम्बद नहीं कि गमाज की बुप्रपा की धीर ध्यान िताने के लिए Realism

पर्याप्त उपयुक्त है, क्योंकि इसके बिना बहुत समझ है कि हम जम बुराई को दिवाने में प्रयुक्ति से काम ले और बिना को हमने कहीं काया रिपाईं कितना वह मानव म है। लेकिन जब Idealism दुबलतायो का चित्रण करण से शिष्टता की सीमाया म घ्राये बढ़ जाता है तो वह प्रातिजनक हो जाता है। फिर मानव स्वभाव को एक विशेषता बह भी है कि वह जिस घम और लक्षता और कपट से घिरा हुआ है उसी की पुनरावृत्ति उसके चित्त को प्रभाव नहीं कर सकती। वह होने बेर क लिए हम संसार म उठकर पहुँच जाना चाहता है जहाँ उसके चित्त को ऐसे कुम्भित भावों से मजात मिले वह मूल बात कि चिन्ताओं के बन्धन म पडा हुआ है जहाँ उसे मनीष मङ्गल्य उपाय प्राणिया के दान हो जहाँ धर्म और कपट विरोध और बेधनस्य का एसा प्राबल्य न हो। उसके चित्त में क्याम होता है कि जब हम किन्हे-कहानिया म भी उन्ही भोगा से छात्रा है चित्तके छाया धाटा पहर व्यवहार करना पडता है तो फिर ऐसी फुटक पड ही क्यों। संवेदी कोठरी में काम करते-करते जब हम यह जते हैं तो इच्छा होती है कि किमी बात में निकलकर निमल स्वच्छ वायु का प्राबल्य उठाय। इन कमी को Idealist बूध करता है। Idealism हम ऐसे चरित्रा से परिचित कराता है, जिनके हृदय पवित्र होते हैं जो स्वान और वागवा से रहित होते हैं जो साधु-वृत्ति होते हैं। यद्यपि एने चरित्र व्यवहार-कुशल नहीं होते उनको मरुता उन्हे व्यावहारिक विषयो में बोला देती है लेकिन कौटुम्बिक से उन्हे हुए प्राणियों को ऐसे सगल एने व्यावहारिक ज्ञान विहीन चरित्रों के दान स एक विशेष ध्यान होता है। Realism यदि हमारी धीले लोग देता है, तो Idealism हम उठाकर किमी मनोरम स्थान म पहुँचा देता है। लेकिन जहाँ Idealism में यह युद्ध है वहाँ हम बात की धी शका है कि हम ऐसे चरित्रा को न चित्रित कर बैठें जो निद्राया की वृत्ति मान हों। किन्ही देवता की कामना करना मुश्किल नहीं लेकिन उक्त देवता म प्राप्त-प्रतिष्ठा करना मुश्किल है।

इसलिए हम वही उपन्यास उच्च कोटि के समझते हैं जहाँ Idealism और Idealism का समन्वय हो गया हो। उने धार Idealistic Realism कह सकते हैं। Ideal को मनीष बनाने के लिए Realism का उपयोग होना चाहिए और अर्थात् उपन्यास को बड़ी विशेषता है। उपन्यासकार की मकस बड़ी विभूति एने चरित्रों की सृष्टि करता है जो अपने मध्यव्यवहार और मनुष्यव्यवहार से पाठक को मोहित कर ले। जिस उपन्यास के चरित्रों में यह गुण नहीं है वह दो कौड़ी के है। चरित्रा को उत्कृष्ट और नाराज बनाने के लिए यह जरूरी नहीं कि वह निर्दोष हों। महान स महान पुण्यो म भी दुष्ट न पुष्ट ममजोरियाँ होती हैं। चरित्र को मनीष बनाने के लिए हमकी ममजोरियाँ का निगरान कठिन म कौई हाजि नहीं होती। यही ममजोरियाँ उम चरित्र को मनुष्य बना देगा है। निर्दोष चरित्र तो देवता का जायग और हम उसे ममक ही न करेंगे। हम चरित्र का हमारे ऊपर कौन प्रभाव नहीं पड सकता। हम Idealist हैं। हमारे प्राचीन

साहित्य पर Idealism की छाप लगी हुई है। हमारा प्राचीन साहित्य केवल मनोरंजन के लिए न था। उसका मुख्य उद्देश्य मनोरंजन के साथ धार्मिक-परिष्कार भी था। साहित्यकार का काम केवल पाठकों का मन बहसाना नहीं है। यह तो भाटों और मशरियों जिदूयकों और मसखरों का काम है। साहित्यकार का यह हमसे कहीं ऊँचा है। वह हमारा पथ-प्रदर्शक होता है, वह हमारे मनुष्यत्व को जगाता है हमसे सम्मानों का उचार करता है हमारी बुद्धि को फैलाता है। कम से कम उसका यहो उद्देश्य होना चाहिए। इस मनोरंजन को सिद्ध करने के लिए जरूरत है कि उसके चरित्र Positive हों जो प्रलोभना के धामे तिर न झुकें बल्कि उनको परास्त करें जो कामनाओं के पंजे में न फँसे बल्कि उनका दमन करें जो किसी विषयी सेनापति की त्रिंति शत्रुघा का संहार करके विजय-गाव करते हुए निकले। ऐसे ही चरित्रों का हमारे ऊपर सबसे अधिक प्रभाव पड़ता है।

उपन्यास-साहित्य पर थोड़ी-सी विवेचना करने के बाद अब हम अपने हिन्दी उपन्यासों पर बुद्धिपाठ करना चाहते हैं। पाठक यह यह तो जानते ही हैं कि उपन्यास एक पश्चिमी वीणा है जो भारतवर्ष में लगाया गया है। हमारे यहाँ उपन्यास-काल से पहले ऐसे क्रिस्ते-कहानियों का बहुत प्रचार था जिनमें प्रेम और विरह के बदन ही प्रधान होते थे। प्रमी एक निगाहे मारुका का 'कुरतए नाव हो जाता था। मारुका अपनी सहेलियों से अपनी विपत्ति कहानी सुनाती थी धार्मिक साहस बाहें भरते थे निर मुन्ते से घर-दर-द्वार होती थी यात्र समझने के लिए क्या हो जाते थे हृषीम दबा करने जाते थे पर इरक के बीमार पर किसी दबा या समझने-बुझने का धरर न होता था। दोनों महीनों बरनों बुदाई की तकलीफें भेजने के बाद किसी द्विस्मृत से मिल जाते थे। प्रमसर क्रिस्ते में तिमिरम और ऐवारी के विचित्र दय होते थे जिससे पुनूहल बढ़ता था। उरू में 'तिमिरम होतएबा' बड़े-बड़े पूठा के सत्ताइन क्रिस्ते में उत्प होता था और 'बोस्ताने लबाल' सत्त क्रिस्ते में। उस बक्त तक हिन्दी में उपन्यास का मेरान प्रायः खामी था। जो एक धनुबाय धवरय निकल गये थे पर कोई उपन्यास-लेखक न पैदा हुआ था। उरू में तो उनके पहले 'इसताना आम्ना' के रचयिता पंडित रतनभाय दर 'चरखार मीन्वी इशुम हसीम शरर, मीलाना मुहम्मद अपनी सारि कई शब्दे उपन्यासकार हो गये थे। बँपला में भी बँकिम बाबू के उपन्यास निकल चुके थे लेकिन हिन्दी में मैराल खामी था। उस समय स्वर्णम बाबू बेबडीतन्वन लकी के 'बन्धकान्ता' और 'बन्धकान्ता सतति' की रचना हुई और यह हिन्दी में धनोकी एकदम गयी थीज थी। हिन्दी पाठक टूट पड़े और 'बन्धकान्ता की मूय भूम ही गयी। यद्यपि 'बन्धकान्ता सतति' 'तिमिरम होतएबा' का धनुकरएव मात्र है, मकिंन हिन्दी में धार्मिक-मारुका की जो कबारें छपती थी जिनमें न कोई भाव होता था न कोई प्रभाव उन पाठकों के लिए बन्धकान्ता ही गनीमत थी।

तमस में नहीं जाता कि जब अन्य भाषाओं में ऐसे-ऐसे उपन्यासकार पंग हुए जिनका जोड़ अब तक पैदा नहीं हुआ तो हिन्दी में क्यों यह वैशाल लाम्बी रहा ।

'बनरकान्ता' के बा-देबकीलग्न ने कई सामाजिक उपन्यास लिखे जिनमें उपन्यास के संस्कार मौजूद थे । ऐयारी की एसी हवा खँपी कि उनके बार भी बहुत दिनों तक ऐयारी के किस्से लिखते रहे । उसके बार बामुनी उपन्यास निकलने शुरू हुए जो अभिकांश *European detective stories* के अनुबाद होते थे । कुछ दिनों तक बामुनी उपन्यासों की खूब बूम रही और बहुत समय था कि उसके बा- मौलिक उपन्यासों की बाटी जाती लेकिन इसी बीच में बंगला उपन्यासों का रेंसा शुरू हुआ और वह धमी तक जारी है । बँगला में प्रचलित-बुरे किस्से उपन्यास मिल सकते हैं उनका बिना कुछ सोच-समझे अनुबाद कर लिया जाता है । किसी अन्य भाषा के रत्नों से अपना भंडार भरना प्राप्ति की बात नहीं । सम्पन्नतम भाषाओं में अन्य भाषाओं के अनुबाद होते रहते हैं लेकिन वह भाषा ही क्या जहाँ सब कुछ अनुबाद ही हो और अपना कुछ न हो । इस पढ़ने से देखिए तो 'बनरकान्ता सतर्त' का महत्त्व बहुत कुछ बढ़ जाता है । कम से कम अपनी वस्तु तो है । हमारा ध्येय है कि हिन्दी भाषा को राष्ट्रभाषा बनायें । क्या अनुबाद से राष्ट्रभाषा का पर प्राप्त किया जा सकता है ? एक मित्र से इस विषय पर बातचीत होने तथा तो उन्होंने कहा हम यह मानते हैं कि अनुबाद से भाषा का महत्त्व नहीं बढ़ता लेकिन जिन लोगों के लिए अनुबाद जीविका का प्रबल है उन्हें धाय क्या कह सकते हैं । इसका धारान वह हुआ कि जो लोग और किसी उपाय से जीविका का प्रबल नहीं कर सकते वे ही अनुबाद किया करते हैं । मगर इसी तरहके से तो किसी त्याग्य विषय की रक्षा की जा सकती है । जोर के लिए जोरी भी तो जीविका ही का प्रबल है फिर जोर को सजा क्यों ही जाती है ? फिर अब हम देखते हैं कि हिन्दी जाननेवाला धारमी एक महीने में बंगला का इतना ज्ञान प्राप्त कर सकता है कि बँगला की साधारण पुस्तकें समझने सगे तो बंगला से अनुबाद करने के लिए और भी कोई उर्र नहीं रह जाता । अगर अनुबाद ही करना है तो उन भाषाओं से किया जाने जो बंगला से कहीं सम्पन्न है । हमने धमी तक जिन गिने-गिनाये *French* या *Russian* पुस्तकों का हिन्दी में अनुबाद किया है संघर्षी अनुबादों से किया है । हमारे मुक्कों को जिनका बिचार साहित्य-सेवा करने का हो उनको उचित है कि वे योरोपियन भाषाएँ सीखें और उनके रत्नों से हिन्दी का भंडार भरें । वह हम कोई ऐसी चीज द मर्केने जिन्हें प्राप्त करने के हमारे यहाँ बहुत कम साधन हैं ।

साहित्य का सबसे ठँका धाण्ड वह है जबकि उसकी रचना केवल कला की पूर्ति के लिए की जाय । *Art for Art's Sake* के सिद्धान्त पर किसी को प्राप्ति नहीं हो सकती । वह साहित्य चिरायु हो सकता है जो मनुष्य की मौलिक प्रवृत्तियों पर धरतम्बित

हो। ईर्ष्या और प्रेम क्रोध और भोग धनुराग और विराम दुःख और लज्जा—यह सभी हमारी मौलिक प्रवृत्तियाँ हैं। इन्हीं की छटा दिखाना साहित्य का परम उद्देश्य है। बिना उद्देश्य के तो कोई रचना हो ही नहीं सकती। जब साहित्य की रचना क्लिष्ट सामाजिक राजनैतिक और धार्मिक मत के प्रचार के लिए की जाती है, तो वह अपने ऊँचे पथ से विर जाती है, इसमें कोई सन्देह नहीं। लेकिन धार्मिक परिस्थितियाँ इतनी तीव्रवृत्ति से बदल रही हैं इतने नये-नये विचार पैदा हो रहे हैं कि शायद अब कोई लेखक साहित्य के धारण को ध्यान में रख ही नहीं सकता। यह बहुत मुखर है कि Author पर इन परिस्थितियों का असर न पड़े यह उनसे आशंका नहीं है। यही कारण है कि धार्मिक भारत ही न नहीं योरोप के बहुत बड़े विद्वान भी अपनी रचनाओं द्वारा किसी न किसी धार का प्रचार कर रहे हैं। वे इसकी परवा नहीं करते कि इससे हमारी रचना बीजित रहेगी या नहीं। अपने मत की पुष्टि करना ही उनका ध्येय है, इनके विचार उन्हें कोई इच्छा नहीं। मगर यह क्याकर मान लिया जाय कि जो उपन्यास क्लिष्ट विचार के प्रचार के लिए लिखा जाता है उसका Interest अधिक होता है। इस मौ का ना मिचरेबुल टास्स्टाव के अनेक ग्रन्थ डिफेन्स की किन्ती ही रचनाएँ विचार-प्रधान होती हुए साहित्य की उच्च कोटि की हैं और अब तक उनका Interest कम नहीं हुआ। धार भी शाँ बन्स आदि बड़े-बड़े लेखकों के ग्रन्थ प्रचार ही के उद्देश्य से लिखे जा रहे हैं। हमारा क्या है कि कुशल कसाकार कोई विचार प्रधान रचना भी इतनी सुन्दरता से करता है कि उनसे मनुष्य की मौलिक प्रवृत्तियों का संघर्ष निभाया रहे। Art for Art Sake का समय यह होता है जब बेरा सम्पन्न और सुखी हो। जब हम देखते हैं कि हम सौख्य-सौख्य के राजनैतिक और सामाजिक बन्धना न बंधे हुए हैं विचार निवाह छठी है दुःख और दरिद्रता के योग्य दूर्य दिखायो देते। विपत्ति का कष्ट-अनन्द मुनामी देता है तो हमें सम्मत् है कि किन्ती विचारहीन प्राणी का रिक्त न रहने उठे। हाँ उपन्यास कार को इसका प्रयत्न अवश्य करना चाहिए कि उसके विचार परोक्ष रूप से व्यक्त हों उपन्यास की स्वाभाविकता में उस विचार के समावेश से कोई विघ्न न पड़ने पावे करना उपन्यास नीरस हो जायगा।

धर्म में हम अपने सहृदय महीन लेखकों ने धनुरोप करते हैं कि यदि धार उपन्यास निम्ना चाहते हैं तो पहले तैयारी कीजिए। बिना मानव शास्त्र का उचित ज्ञान प्राप्त किये कभी न कसम उठाइयें। यों तो किन्हीं रचना की स्वरूपत शक्ति प्राप्त है वह धार ही धार मिलेंगे लेकिन मन में धीरमत्त हान पर भी तो शास्त्र का कुछ ज्ञान इला परमावश्यक है। सबसे प्रधान मनोवृत्ति है। एक बार किन्ती प्रसिद्ध विचारकार से एक शरीक ने पूछा कि एसे सुन्दर रंग प्राप्त कहीं से लाते हैं? विचारकार ने मुस्कराकर उत्तर दिया 'जमाव अपने रिमाण में।

समालोचक जनवरी १९२५

गल्यांक का प्रस्ताव

विरोधार्थों के निकालने में कदाचित् मजसत हिन्दी पत्रिकाओं में 'बाँव' ही को प्रथम स्थान प्राप्त है। अपने जगत् से लेकर जब तक 'बाँव' के भी विरोधात् निकल चुके हैं। इस रूप में उनमें चार विरोधात् निकालने का निश्चय कर लिया है। उनका रूप मजसत से शक होता है और गत मास 'बाँव' का प्रस्ताव विफल हुआ है। उनके चार ही यह गल्यांक प्रकाशित करने का प्रस्ताव उनके गल्यांक और व्यवस्थापक के धर्म्य उत्साह का धोतक है। हिन्दी में पत्र-पत्रिकाओं की जो दशा है वह सुदृग्जनो से छिपी नहीं है। इन कठिनाइयों से बच भी धारास्थित न होकर बराबर धाये करम बढ़ते जाना धर्म्य धारावाचिता के सिवा और क्या कहा जा सकता है। किन्ती कवि ने कहा है—

किन्ती कविवाचिनी का नाम है
सुरासिन्धु क्या छाक दिया करते हैं।

यही उत्साहसौलता यही धारावाचिता जीवन है और जीवन में धारावाचिता का होता स्वामाधिक है। यही कारण है कि जो 'बाँव' धारा से चार-पाँच रूप पहले एक हजार छपता था धारा समस्त भारतवर्ष की मासिक पत्रिकाओं में सर्वोच्च स्थान पर धार्य होने का एक कर सकता है। 'बाँव' धारावाचिता का धारा भी तो है। धारा में एक महीना पहले जब 'बाँव' के सुवास्य गल्यांक में मुझे गल्यांक प्रकाशित करने का प्रस्ताव किया तो मैं विस्मित रह गया। प्रस्ताव किन्तुम तब ही प्रस्तापारख था। मुझे मय हुआ कि कहीं गल्यांक का मजसत न उठाना जाय। नये विचार बनाने के लिये मैंने यह क्या सुचिन्तित है। मजसत कोई एक भी तो हो गया म एनी कौन-सी विचार किया तो मुझे इन प्रस्ताव का सहय स्वागत करने और इन धर्म का गल्यांक मार लेने में कोई बाधा न दिखती थी। गल्यांक तबमात्र साहित्य में एक नया जोर है। लेकिन इसके साथ ही उनका धर्मिक धर्म है। कोई पत्रिका गल्यांक के बिना रोषक नहीं हो सकती और हिन्दी में न नहीं अन्य समुदाय भाषाओं में तो एनी कठिनी ही पत्रिकाएँ हैं जिनमें गल्यांक के सिवा और किन्ती प्रकार के लेखों में यह गुण नहीं है कि वह धर्मिक धर्म्य और अनधिकृत रूप में मजसत में नवीन भावों निष्ठाओं और तर्कों का प्रचार कर सके। हमारे देश में पराधीनता के कारण जीवन-अध्याय इतना भीषण है कि हमारे माटी मजसत और शारीरिक शक्ति उनमें समाप्त हो जाती है। शुष्क और सुखाय विषयों का धर्म्ययन करने की हममें क्षमता ही नहीं रह जाती। हम नये विचार

ग्रहण तो करना चाहते हैं पर इस तरह कि हमें परिष्कृत या शोधयन न करना पड़े। यह विमूर्ति गल्प ही में है कि वह मनोरंजन करते हुए हमें विज्ञान प्रचारात्मक राजनीति इतिहास भूगोल मखिल शिल्प स्वास्थ्य बाणिज्य आदि की शिक्षा दे सकती है, यहाँ तक कि घात्र शोधियों की बिक्री का भी काम इसके सिमा जाता है। इसे घात्र शोधशासक की धमककारा समझिये जो कुनाम से लेकर उपेक्षित तक में समान रूप से प्रपना चमत्कार दिखाती है। बाबकल सिनेमा का प्रचार विनोदिन डाकगाड़ी की नाम की तरह बढ रहा है। इसने साहित्य के एक प्रधान शंग नाटक का नामा धोट दिया। घमी सिनेमा में स्वर की कमी है। संसार के विज्ञान इस समस्या को हल करने में वक्षचित है। और घमा है कि बहुत बड़े काल में सिनेमा व विषय वार्ते भी करेगे गीठ भी गावेंगे। उच दिन ज्ञाना का प्राखान्त ही समझिये।

कविता केवल भावों से सम्बन्ध रखनवासी वस्तु है। वह हमारे उत्कृष्ट कामल भावों ही को कम्पित कर सकती है। किन्तु कविता-देवी को कस-कारवातों घनी स्तिमा ऊँची-नीची प्रकृतिभावों और बाणिज्य तथा व्यापार की कचन-मरी कोटिजों बुझा है। उसे तो हरे-जरे जल-तट मधुर स्वर से गानेवासी गणियों निज्जन पवित्र भावों ही से कुछ विशेष प्रम है। वर्तमान परिस्थिति उनके लिए अनुकूल नहीं। उसे प्रम सबय और इन्द्र से विष है। अब और साहित्य में क्या रह गया? निबन्ध। निस्सन्देह, सकिन् यह शिक्षा को मगल करने की वस्तु है मनोरंजन की नहीं।

अब उपन्यास ही बाकी बच रहता है। लेकिन जिस सिनेमा ने नाटक की हत्या कर डाली वही उपन्यासों का भी बून कर रहा है। अपने घाठ घाने लक्ष करके केवल ५-६वीं बने में जब हम विकर ह्यगो टान्चटान करे तथा हाथों जैसे बुरम्बर बडानों की मर्बोत्कृष्ट रचनाओं का नमुषित घानम् उठा सकते हैं तो पुस्तक सकर अपनी कोटरी में कर्-कई गिनों तक पढ़ने का कर्ण क्यों उठाने सगे? माना कि सिनेमा में भाषा के सारस्व उल्लिखों की सुन्दरता विचारों की भवीनता और मौलिकता बाबकों ५ मनोहर विम्यास शर्मों की मनोहारिणी मजाबट मीठी-मीठी चुम्कियों हृदय में चुन गनेवाले ब्यंभ्यों का रसास्वादन हम नहीं कर सकते लेकिन घपिकरंश प्राणी मनोरंजन चाहते हैं और गिनेमगाने रचना के मर्मस्पर्शी स्वभावों को विधित करने में नहीं चूनते। इस साहित्य का स्वाध सरगरी तीर से पढ़ने से नहीं मिलता। हमारे मुसेगक-बुन्द शर्मों को शर्मों में ऐसा विपारी है कि जब तक एक भाष्य की बार-बार में पढ़िये उसका [रा घानम् नहीं मिलता। धोग यहाँ हममा धक्काश नहीं। बस बम्ने बस्तर या लखहरी में गिर मारने क बाद जब मस्तिष्क में इतनी ताकत बही कि साहित्य से सर मारें।

ऐसी परिस्थिति में गल्प ही एक ऐगी वस्तु है या उपयोगिता मनोरंजनता और प्रम से कम समय देने में सिनेमा ने टक्कर से मचता है। उपन्यास पढ़ने को कर् दिव

बाहिए धीर वह भी एकान्त । यहाँ दो म एक भी प्राप्त नहीं । मिनेमा दाने क विग
 भी ठीपारी की बहुरत है । शाम ही को मोजन घाँि मे छुट्टी कर सो तीन बटाँ के
 लिए कर से वापस रहो वहीं से भी बजे बाह-वापे वायम-वृषी मे पर सौते मिलमा
 हाल में भी तीन घन् भोड-माइ म आगम जमाये तपस्या करते रहां । क्या इनम कुछ
 कम कष्ट है ? नहीं हमारी धनुपस्विति म कोई घाँि का घाँि घोर गोंड का पूरा
 मुश्किलन या पका तो शिकार श्राप से गिहल जाने की सम्भावना ही है । मन्व इन मत्र
 भंयों बखेड़ा से पाक है । बस्तर कचहरो विद्यालय टुकान बायुमेवन कै-मकन क्की
 बाते हों 'बाँि' का मर्याद उठा सीजिए धीर मन्व सीजिए । मन्व म तो मन्व घानक
 लिए घनिकाय है । उनके बिना घापका समय किमी तरह कर ही नहीं सकता । घान
 घान्को लम्बा छठर करना है मन्वई स विल्ली या कलकना जाता है धीर बह या कम
 से कम सेकण्ड क्कान में तब तो घान कायाकल्प कन्वकान्ता गृहबाह दगिवात काँ नी
 तपस्यात कर पड़ सकते है ।

मन्विय धपर छठर छोटा है, बमारस म मखमऊ या प्रयाग जाता है धीर बह
 भी हटर या तीवरे दरजे म तब घापक मिंग मन्वका के मिकार धीर काड उताम
 नहीं । उन विपत्ति में इसी के हाको घाप का निम्नार होया उस पीक पर घापका पकी
 दुकना-पतसा छोटा-भोट मिन ही काम घापका । तीर धीर मरतीन-पन बडा मडाई के
 लिए है धीर कुर्मियकश बड़ी लडाइयाँ नी दो सी बय म क्की एक वार होना है ।
 सिस्तीन धीर तन्व्ने की पकरत तो घापको घाटे पकर रहती है । कम म कम हाय म
 एक मत्रकूठ बड़ी तो होनी ही बाहिए । धीर न मही कोई कुण माहक ही घान म
 सामस्वाइ उतम पड़ तो ? मन्व घापकी घाँि है मिन घाप मकन म किमी तरह नहीं
 छोड़ सकते ।

टुकान पर बैठे बाहकों की बाट देखते-देकने जब घान की घानि दुमने पग बट
 मन्वका उठा सीजिए ठिर बाड़े बाहक घाय या न घाये घापकी वया मे घानका
 बाहका की परबा न रहेवी । घान संघ्या समय बिना एक मिने का मान बच प्रठम-बिल
 बर सौ मकते है । किमी दफ्तर क इकमान मे परकी करके भीटन के बाँ हुमेरे
 इनमान मे जाते है पहले यदि द्य-बीम मिनट का भी घबठर मिन यया तो मन्वका
 घापके साथ है । यह समय बड़े मजे स बट जायगा । घानको घरली की घावात्र ही
 धीर कल न लमाये रहना पड़ेगा । घरली की पुकार लुद-बलुद घानके कल म पहुँचनी
 धीर इकी जल्द पहुँचनी कि घानको घारबय होगा । यदि घानमे मन्व ममाप्त कर मिया
 है तो 'बाँि' को मेक पर रज दीजिए धीर तेनी मे लपके हुए जाइए—इतनी तेनी से
 नहीं कि जल्दी के दान धीर बिसम्भ ही धीर जोट घाटे म मिये । यदि घाँि मन्व
 बमाप्त नहीं हुआ तो पकिका को हाप मे मिये देखने जाइए, इकमान तक जाते जाते
 उनके बचे हुए दो-एक पूरा समाप्त हा जायेंगे । घम्पारक महोदयों को तो हृष मन्व

॥ मन्वका का प्रस्ताव ॥

पढ़ने की समाप्त न होने। उनके पास न समय की कमी है, न धनकाश की। वह उन्हें तो तिम्बिस्ते होशब्दा की घटाइय जिन्से बोस्ताने खबान के सात भाग चन्द्रकान्ता सन्तति के चौबीस हिस्से या धमिष्ठ सेना की हजारों रातों धानधूपबक समाप्त कर सकते हैं।

भक्ति विद्यावियों के गस्याध्ययन के ह्य कट्टर पक्षपाती हैं। उपन्यास तो वे बेचारे पढ़ ही नहीं सकते इतना धनकाश कहीं पोट की पोट पुस्तकें पढ़नी हैं और परीक्षा का भूत सिर पर सवार हैं। ही परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाने के बाद वे चाह तो उपन्यास पढ़ सकते हैं क्योंकि तब बरसों सिवा उपन्यास पढ़ने के और कोई काम न रहेगा। ही जीवन की मौलिक धामशयकताओं से निरिचल रहने को रत हैं। लेकिन अध्ययन-काल में तो यन्त्र ही उनका उधार कर सकता है। वही ईन्किसे से जो ऊँचे षट गस्याक उठाएँ और पन्द्रह-बीस मिनट में आपका रिमाय ठावा हो जायगा सिर का बन्दक भाग सड़ा होगा और धाय मयी स्फूर्ति से माया-विज्ञान पर बाधा करेंगे। जिस विद्यार्थी के पास यह अमृतपाश है उसे फिर किसी दूसरी मनोरञ्जनीपथि की जरूरत ही नहीं। एक बंद जल या शककर न मिलाकर उत्तर बीजिए लबीयत हरी हो जायगी सारी विपत्ति-बाधा पलायन कर जायेगी। धवी ह्य तो कहते हैं, लेखक हीन न भी यदि आपकी नीच धान ससे तो चुपके से यस्याक निदान बीजिए और बेबड़क डेस्क पर रख बीजिए। आपकी निहा काफूर हो जायगी। गिरफ्तार होने की जरा भी शंका नहीं। अध्यापक महोप्य की मारी केतना और उपकेतना-सक्ति तत्त्वविवेचना में संलग्न ही रही है।

महिमाभा का तो गल्प न बिना जीवन ही दुस्तर समझिए। उनके लिए न सिनेमा है न उपन्यास न चहुलकरमी। इन स्वर्गीय पदाओं से विधि-धाम में उन्हें किसी पूर कुसंस्कार न प्रायश्चित्त रूप में बन्धित कर दिया है। मध्या समय सिनेमा देखने जायें तो बताइए भोजन कौन बनाये? अगर कोई मिलान्नी लपी हुई है तो भोजन की चिन्ता नहीं। लेकिन नन्हें-नन्हें बाककों की हटीमी चंचल कमाह मिय सेना तो साथ न छोड़ेगी। एक दजन न गठी मकर धामे दजन बच्चों को माय में जाता क्या मुँह का दौर है या लामा पी का चर? अगर पुण्या को एक दिन यह म्मीगत पड़ जाय तो घटी का पूर माय भा जाव। और ती क्या न्हें पलास सिकडे पुण्य तो उसी दिन बैराय्य धारय कर सें। अगर संगार-भोग्यता बहुत बडी हुई है तो क्शाक्ति इतनी जरूर से बैराय्य न सेंगे लेकिन मन्तान-निशह की पुस्तकों के लिए तो और कार्यालय को तुरन्त ही काह धाम रिषा जायगा। र्गर बनाव गुन न करे कि पुण्या के गिर यह बला धारे नहीं तो सृष्टि का धन्त ही गमभिए धम्माइ गिया को अपने ष्टीहा-बैराय्य के लिए दूधरे हो प्रकार की दुनिया रचनी पड़ेगी। धीरो की बात तो नहीं चलने ह्य तो उसी दिन जहर लारर गो रहने। धव बताइये यह धामे दजन बछड़े बाँबे किये जायें? मव न सब तो पोर में धा ही नहीं मानें। धिवरा होकर एक बग्गी करनी पड़ी। चलिए, दो रुपये की चान पड़

गयी। उससे मैं बच्चा की मूक का क्या ठिकाना ? हलवाई की पूछान देखी या मोमबे
 बामे की धाराब सुनी धीर मूक सगी। पाँच बजे के बच्चे-बच्चे कहीं मात बने निनमा
 मदन के पाव पहुँचे। मगर इगकी शावर ही कमी जीवत धाता है। धविक्कर ता यही
 सुना है धीर दो एक बार बेसन म भी धाना है कि महिमाधा का धम्म बीच भी हाव
 से जाता रहता है धीर उन्हें धामे गम्ने से बर सौत्ता पत्ता है। धमर किमी तरत गेने
 बोते निनेमा पहुँच भी गयी धीर हाव में भी जा पहुँची ता यह न सममिष्ट कि धमात्रत
 का बाल्मा हो गया। धसनी विपत्ति तो धव शक होता है। कोई कुरमी को उतरता है
 कोई किमी के चुटकी काटता है, कोई रो-रोकर दुनिया मिर पर उटता है माता बेचागे
 किस-किस को सममाये। छोटे तो बसबाने न मान भा जाने है बड़े दिन मे धारा पी
 कि शान्ति से बटोते उन्हें मो बहाँ धाकर नग्वटी मुम्हो है। उनके प्रग्नी का उतर
 देना स्वयं एक बसा है। बनाव बह विस्म-या मचता ह कि मारा हाँव बबग उटता
 है। सोय रीव पीम-पीमकर धीर मुट्टियाँ बाँव-बाँवकर रह जाते है। कम्पनी का जमला
 है। वहीं मबाबो होटी तो सुन ही कइ इम्ने। उबर बच्चे है कि धरनी शगरत मे वान
 ही धाते। धमागिनी माता को तमारो वा नशाभाव भी धानव मही मिनता। माग
 गन धीर मनोयोग बच्चों के शानम को घँट हो जाता है। कम पकडती है कि धव कमी
 पिती है तो मातो उते निर्बाण प्राप्त हो जाता है। धम पकडती है कि धव कमी
 स्तनेमा का नाम न संगे। दस बच्चे दरइ पग गय माता जुरमाता वे धाप। यह तो
 सिनेमा का हाल हुआ। बही धियेटर हुआ तब तो मरगु ही ममग्ने। लडका का कोना-
 हल माँले गरी बर कर मचता पर काम तो धम सकता है। उबर स्त्र मे मा रे गा मा
 की धानि उटी इबर मुम्ह मे पंचम स्त्र मे धनापता शुक कर दिया। कि बनाइए बटाक
 सोम क्यों न बात पीम धीर क्यों न धपता माया पीटें धानी बूटें। धागवप में रपने
 दो बच्चे मरकारी कम्पारियों के लिए विशेषतः पुलीम धीर रजिस्ट्री विभागवानों के लिए
 तो कोई बड़ी बात नहीं लकिन हुमा-शुमा के लिए ता बनाव एक बस्या एक मात के
 बटाबर है। दिन भर बीडे-बीडे कमर टा गयी धामे फूँ गयी मेत्रा छ गया पमीने की
 नरी बह ययो तब बाक मुद्रा देवी के बशन प्राप्त हुए, तब यह कने मम्यब है कि उवी
 मर-बट प्राप्त मुद्रा में मरीदे हुए धानव म बाबा पडने देखकर हम मीन रह जाँय ?
 बूवों की बला हम नहीं बनाने। मग्नव है एम लोग भी हों जा लुन वा घूँट पीकर रह
 जाते। लकिन मरे लिए ता यह धमग्ने है। यहाँ ता धपन ही बच्चा क शाग्नुत मे बामे
 मे बहू हो जाता है। जब तक बर पर रहता है मारा ममय चपतबामी में ही ध्यतीव
 कराता है। यही तक इम काम में धम्पम्य हा गया है कि यदि बमी देवी जी धपनी सेना
 लेकर गया-मान को बनी जानी है तो बार-बार हायों में लज्जा होगी है धीर कोई
 नहीं मिनता ता बुरे लीकर ही पर बो-बार हाव साड कर बना है।
 निनमा धीर धियेटर का तो यह हाव हुआ उन्पाम कोई महिला बीसे एड

॥ गणपति का प्रस्ताव ॥

सकती है ? यह तो उसके लिए बर्बित फन आकाश-कुसुम है । प्रातः से लेकर धायो रात तक तो हम मारने का प्रयत्न नहीं मिसता । धरम सबेरें वर्षों को नास्ता न मिसने तो वह भीता ही मोक्ष बालें उनसे भी निरसी तरह प्राण बच जायें तो स्वामी भी बाल्य में एक मिगट की दर हान पर मेकबत् गरण उठते हैं । उनकी यह गगलभेदी ध्वनि सुम्कर स्त्री के तो प्राण ही निकल जाते हैं । मामुम होठा है घर की बीबारें हिंस रही है घरती काँप रही है । घोर बयो न गरबें । उगुहै इसका सोमहो घाने धबिक्कर है । स्त्री घोर है ही किस मरतन की दबा । टैर, मारते से तो घभी फुरसत मिसने नहीं पायी की कि मोक्षन की बारी या पहुँची । निनी तरह यह बसा भी टभी स्वामी अपने काम पर बने घोट लड़के स्कूल सिघान् ठो छोटे दग्धा के दुबदमे पेश होन कम । मयर न्यायाधीश को धबिक्कर को बरए बैकर जो फुरसत मिन जाती है उनका यहाँ नाम भी नहीं । दबड दिया तो कान के परबे फड़बाने के लिए भी तैपार रहना पकता है । बो-बार मुकरने पेश होते-होठ निर तीन बजे घोर लडक स्कूल स या बहूँये । धबिक्कर तो ऐमा होठा है कि एक या दो बजने के पहलं हो या पहुँचते हैं घोर ऐमा तो शायब ही कभी होठा है कि घर घाने पर हीन न बजते हों । न जाने स्कूलबाने घडी तेज कर घेते हैं या लडके छुट्टी हीन के पहलं ही माय लड होठ है । घाव विल एक न एक त्योहार ब्यब की छुट्टी । घाव क्या है ? घ्यास पुजा की छुट्टी है । घाव क्या है ? मीनी बमाबस्था की छुट्टी है । घाव क्या है ? निर्बसा एकदनी है । इन त्योहारो न घोर ता कुछ नहीं होठा ही मुदिनी का उत्तरबामित्त भदकर माता में बड जाता है । घोर विल तो निर न पीडा ही होकर रह जाती है छुट्टिका में तो मोठ का मामना होठा है । विल ता लैर किसी भक्ति क् पया पर रात को कासी बसा ही नमघ्ये कभी किसी बध्ध को दस्त या रहे है कभी कोई प्यर न पका है कभी वंठ मिछन रहे है कभी ठंड बग लयी है । निर-कुपया के क्क माठा के निबा घोर कीन भेस गकता है ? रातें बीठ-बीठ बट जाती है । परि महालय पास ही पसोम पर पड़ नाक की यहमाई बना रहे है । ऐमी बरबनी घानाब निरन रही है मारों काई मुसा मुरी रहा हा । बेचारी धबमा मुन-मुन मारे भय क मुसी का रही है, पर वंठ को बगान की हिम्मत नहीं पकती । सम्भव है पति बैबठा की निडा भंम हो जाती है पर घानि नहीं गोमते । उठना तो बुर रहा शायब घाने विल में सोकठे है मैं घपसा नाम परा कर बुका मैं क्यों घपन घाराय में घमन बालें । तुम्हार निर वर जो पडे बह तुम घाव भुगयो । इमी भय चिन्ता घोर म्यानि में बहुबा घबरायों का जीवन ब्यटीठ हो जाता है । उच्च गार्ह्य एमे विपद्-घसत प्राणियो का नाक नहीं देता बह चिन्ता से मुक्ति देनकाली बस्तु नहीं चिन्ता का निमगल बैनेबानी बस्तु है । बह बरठा है वर के तारें काम-नाम छोड़कर मेरो उतापना करो तब मैं बरवान पूगा एक तुम्हें मुम्मे माघाल् होगा इन तार-मुक नील-गुमार, मार-बाइ हाव-तीबा में मैं नहीं घाता इग घान का मने गारन ही नहीं होना । भावन बगाना है कोई चिन्ता नहीं ।

नन्का रोता है, रोने दो। स्वामी के धाने का समय हुआ धाने दो। कुछ परवा नहीं
 कर के काम-धन्धे को त्रिपात्रिणि दे दो धीर मेरो हो जाओ। अतएव मस्त्रिभार्ण उरग्यातो
 से मन मगते मयभीत होती है। उनक दुख रद का मापी ता बेकारा गम्य हो है। बाप
 का पानी बूझे पर बडा हुआ है। इन इन मियटा के महुगयोग का मन्ने उतम उराम
 यही है कि मत्पाक सोसकर बठ जायए। जब तक पानी गम होगा धान किनी मानम
 प्रदश की संर करके सोट धाउंगी। बच्चे का पाकिडा देकर मुपाने-मुबाने मा इन मन्तो-
 धान म एक बार प्रमण कर सकतो है। यहाँ समय नष्ट होम का मय नहीं। यह माधु
 का प्रासोर्बाद है जो धान राठ बनते प्रास कर सकतो है यह धान ममन का
 Bye-Product (धानसू र्वाकार) है।

यहाँ हम उस बखी के मजना का विस्तृत नून तय जिनका ममन किनी
 सख् कटे गही कटवा मानो किनी रंड का चरवा हा। मम बखी क तीन
 नेर है, बैरा हड्डोम धीर डाक्टर। यहाँ डाक्टर का धाराय बह डाक्टर नहीं
 को डाक्टर र्बोन्डगाय मा डाक्टर समू का है। मन्प धानियं य मजजन एक
 काटा भी नहीं निकाल सकते। यहाँ डाक्टर का धाराय बह मनुष्य है मा जावन का
 रबा क लिए निप खिलाता है, जिसको उतरोत्तर बृद्धि क माव प्राउतासक कीटा
 को भी बद्धि हो रही है, जिसन मानव जोवन को कीटा का कीडस्यम बना दिया है।
 इसम सन्नेह नहीं कि कस्मियुप वास्तव मे कस्मियुप है। धीर का वाजार गम ह। मेकिन
 फिर भी कस्मियुप डाक्टर मन्की भारते ही देखे जाते हैं। बच्चे धार दिन धवन कमरे
 में बैठे प्रायस का धारस्यकृष्ण स पत्थर मुडकाया करते हैं कि किनां मति कोई शिकार
 खे। कुछ मेत्र मौला धम की रट मगाया करत है। कोई मिर दम का रोमी नी धा
 खेवा तो समझ सौ उस गरीब की जान की कुसाम नहीं। कोई धरकर रोम मेकर
 बड़े विडतापुप नाक से यह ठत्व निवालकर रक दिया कि जनाध धारका galloping
 phasis (यलपिय धारमिय) हो रहा ह। इतना मुनते ही बेचारे रोमी क प्राण पबेक
 उड़ जात है फिर इन मन्का को बह हृदय मे नहीं निकाल सकता। मान-बापते यही
 एवा उनके मिर पर मबार रहती है यहाँ एर नि धन्त को galloping phasis के
 एर दुस्तिगोबर होने लगते हैं धीर डाक्टर माह्व की मन्विष्यबाओ पुणे हा जातो है।
 सब रोमी बाप की शरध धा धया धापक चरणा पर धरने धापका ममनय कर दिया।
 इन बा-बडकर हाव मारिय धानकी बहार है। धीपधियां के बिम न पुषा मके तं उमका
 बा-बार कुछ करा सीजिए, मयर जाने न सीजिए, क्याकि ऐसे शम धवनर रोज नहीं
 मितते बीना धापको स्वयं धनुमभ है। इन महालघाओं से इयाय निबदन है कि इन
 धारामय प्रतीक्षा के समय का धान मनीमोणि मनुष्याय कर मकने है। क्या उरग्याम
 पडकर ? कर्गार नहीं। उनका धानय उठान के लिए जिन मकासता की बनरत है वह

घापको कहीं नहीं ? घापकी घाँसें तो सबक पर धाने-धानेवालों की धोर सपी हुई हैं ? इस मानसिक व्यवस्था की वशा में गल्प ही बहु यत्न है जो घापको शान्ति प्रदान कर सकता है । उदा मीरजिए गल्पोंक । इसमें घापका दोहना प्रयत्न है । अभी पच्छि घापको हाथ पर हाथ बने बढा देखता है तो समझता है घाप गरबमग्न है । घाप को पढ़ते देखेना तो समझेगा घाप बडे अध्वयमशील है । गित्य शास्त्र-सम्बन्धी पुस्तकें पढ़ करते हैं । इससे घापकी परिधि बढनी धोर कहीं किमो राजा-रईम की निगाह पड गयी-तो घापका देहा पार है । घाप उसके पारिवारिक चिकित्सक नियुक्त हो जायेंगे पाँचो ची म होंगी । यह भी याद रहिए कि यदि घापकी स्मृति म मनोरंजक गल्पों कर काफ़ी खजला हो तो घाप अपने रोगियों का समझे कहीं अधिक उपकार कर सकते हैं । किटना अपनी कड़वी जहरीली दवायें पिचकए । हाँ यह ध्याम रहे कि बहानियाँ बरा हस्त्यपूछ हों ।

इस जीवन-संघाम में साहित्य पर जो सबसे बुरा धरर पडा है बहु यह है कि बहु मसिमा बना जाता है । कोई पत्र-पत्रिका या पुस्तक उदा सीरिण, धारि से धन्त ठक रमानेवासी बाठा से भरा पाइएया । यहाँ ठक कि हमारी नखन-बैनी भी इतनी पवीर हो ययी है कि उसे शोक-बीबी कह सकते हैं । यह हम म मानेंगे कि बतमान परिस्थितियों में हमें शाकवादी बना दिया है । धामित्र हम धारास में बँटकर हँसते-बोसते तो है ही हँसना भूल तो नहीं गये । हाँ धरर कुछ दिन यही हस रहू तो सम्भव है कि अनुपयोद के कारण बहु शक्ति हमसे छीन नी जाय विकास न पाने के कारण उसका जोप हो जाय । रोने का टेका साहित्य-सेवी ही क्या नें ? मजा यह है कि हमारे नवयुवक सेवक जब कलम हाथ में लेते हैं तो तुम्ह पक्षपक्ष-सामा साम्भीर्य वाग्य कर मते हैं । कदाचित् बहु समझते हैं कि किशोर हमारी शान व सिमाक है छिछोरापन है । धरर बहु ऐसा समझते हैं तो यह उनकी बड़ी भारी—महत्त्वा वाची के शर्त्तों में हिमासियन—भूल है । हास्य साहित्य-रसों म धरर प्रचल मही तो एक प्रचल रस धररय है । हम तो बही कहेंगे कि यह प्रचल रस बसिक उससे भी बार धंयुन ऊँचा है । न जाने शृंवार को क्यों प्रचल रस माना जाता है । गिग रस का धारम्भ सवरह बर्ष से पहले नहीं होता धोर कदाचित् जातीय काय के पहले ही समाप्त हो जाता है उये प्रचल क्यों माना जाय ? हास्य क्या न प्रचल रस माना जाय जिसका विकास गिग्य के धररें मान से ही होने मकता है धोर जीवन-यत्न राता है यहाँ तरु कि सरल-सौया पर पडा हुया रोगी भी मृग्यु से को-बार गिगट पहले तक हँसता देगा गया है । घाप बहुय गात्रक बिपति म होंगी नहीं धाती । घाँसें तो कायें-कुर्यें कर रहते हैं घाप नहीं है हँसिय । मजा इन रसा में नहीं हँसी धानी है ? हँसी तो पैट जगन पर ही धाती है । म नये गरी मानता । गाँवों की वला मिठमी बयबीय है, इगज निगज को जकरत मही । बचारे किमान पहर एत रहे म काम करने मगते हैं धोर पहर रात तक बराबर काम करने रहन है । टन बीब म कदाचित् एक बार भी उन्हें के भग भाजम नहीं मिलता । न बरन पर कणा है न

पेट में धान न बँह पर मौस जमींदार की बौस धमस मगान की चिन्ता उगार से। एक
 मगान ही क्यों यो कहिए कि बेकारे चिन्ता के एम्भासिटिव सागर में बुकियाँ ला रहे
 हैं। लेकिन यहाँ भी हँसी का धमाक नहीं। ये भी हँसते देखे जाते हैं। ये भी कमी-कमी
 बुझम धीरे विमोह में मग्न हो जाते हैं। पर हमारे साहित्य-ममात्र पर स्वानि धीरे दम्
 का ऐसा घाटी बोझ लगा हुआ है कि उसको कसम के मोर्कों पर हसी घाने का नाम नहीं
 मेली। क्या वे कसम खा सकते हैं कि मित्र-समाज में वे कमी हँसना ही नहीं घदानती
 कसम नहीं। सच्ची बँपावनी उग सकते हैं? हम कह सकते हैं हँसना मनुष्य-मात्र के
 लिए अनिवार्य है। धाय हँसते हैं और सुब सिमसिलाकर। धायक कहकह शीबान को
 हिमा देते हैं। मगर न जाने क्यों कसम हाथ में लेते ही धाय गम्भीरता का नाम न
 बुनने-उठाने मसते हैं। कस से कम नवयुवको के भेद में तो बिनाब की प्रधातता होनी
 चाहिए। गम्भीरता उनके लिए धस्त्रामाविष है। हम सुब कुसट रोम के लिए क्या बोझ
 है जो हमारे नवयुवक भी इस काम में हमारा हाथ बटावे। नहीं चाहक हम धाय की
 सहायता की धावरयकता नहीं। हम अपने-इतना रो सकते हैं कि कहिए घाँघा घ गया
 बड़ा बँ कहिए महासागर सँवित कर दे। हमारी धाँघे महवि धयस्त्य के चिन्मू से जो
 मर भी कम नहीं है। धाय हमारे शेष में धाकर हमारे ताप ज्वदस्ती करते हैं। हम
 इस धाक का उटना ही स्वर्णित रसना बाढ़ते हैं जिठना हमारे मोरोपीय साम्राज्यवादी
 नुमबदन को। जिस तरह उन्हें यह धसहा है कि कोई धयक जाति एक धंयुन जमीन पर
 धपना कम्मा जमा से उठी तरह हमें भी धसहा है कि नवयुवक महाशय धाकर हमारे
 धय में हस्तक्षेप करें। हम धायको समझते देते हैं मगर धाय मात्र नये तो खैर नहीं
 तो जनस हमने भी पुनीठ का दरबाजा देखा है। जान पर खेतकर एक रोषम-मुद्रा
 निकालते और दापोडा की की नजर देकर बढ-भट रपट कर देंगे तब धायको घाट-दास
 का नाव मानुम होना। कुछ धपनी जायदाद के किठने भीमी होते हैं यह शायद धायको
 का नाव नहीं हम धायको इतना प्रमाथ दे लेंगे। धाय में नया जोश है, नया रक्त है
 नया जीवन है, नयी स्फूर्ति है धाय मगर रोम पर उठाक होय तो प्रलम ही कर डाबेंगे।
 फिर हम मरीचों के लिए नहीं प्रयह रहे जायनी सिवस्य परलोक क। इसलिए हम पर
 बया कीजिए और बैराय्य नैराय्य बिपाय के विषय हमारे लिए रिक्क रखकर धपने
 लिए, विमोह दरिद्रस और शीय रख लीजिए। इस तरह हमारे और धायके बीच ये
 समझौता ही जाने से कम्ह कम माथ बग्न हो जायया।

हम यह मानते हैं कि बतमाग चलवायु हाम्य के विकास के अनुकूल नहीं।
 गरिम हमें धपनी प्रकत धासावाधिवा से इस नैराय्य-सिमिर को हटाना होगा। रोने के
 लिए हमारा घर ही क्या बोझा है कि हम धपने साहित्य-रुज में धाकर भी नहीं रोना-
 भोना शुरू कर। साहित्यकार को जिन्दारिम होना ही नहीं बकरत है। हमसे कई बुरे
 धायमियों ने कहा है कि देखी कौँ बीज मिलिय जिसमें हँसी धाय। धाय सोय तो येनी

ही चीजें निकलते हैं जिसे पककर रोना हो जाता है और मन और भी दुखी हो जाता है । दुखी हृदय जिस चीज का अपने पास-पास समाव पाता है उसे वह साहित्य में जोड़ता है । लेकिन उसे जब यहाँ भी निराशा होती है तो वह साहित्य से भी उदासीन हो जाता है । धाव हमारी बनता चार्मी सैपलिन की मकर्स बेलकर क्यों घाट-घोट हो जाती है ? किस दिन उसका समाशा होता है उस दिन क्यों हम ठसठस भर जाता है ? इसीलिए कि वहाँ हम जोड़ी दर के लिए अपनी दुखमय परिस्थितियों को विस्मृत कर देने की प्रार्था होती है । मिट्टी माया को भीविए, उसके हाम्य-वरिष ही उसकी जान होते हैं । ही हस्त्य सीकम्पपुय होना चाहिए, यह नहीं कि वहाँ भी अपने रिक्त के फ्लोन फोड़ कार्ये । हम इस सम्म निपत्ति के रोय मे प्रसिध है हम ऐसी धीपधि की बकल है जो यह दुख हरे, हमारे सन्तान को मिटावे हम संमाने । और ऐसे साहित्य का उत्थान नवयुवका हाप ही हो सकता है । निपत्ति रोग से नहीं कटती । रोने से तो वह और भी प्राधुवाक हो जाती है । उसे हम हंसकर ही काट सकते हैं । कम से कम निपत्ति का मार कुछ तो हमका हो जाता है । एत को बन में मटका हुआ पम्कि धीपक की प्योति देखकर जिस प्रति उसकी धोर लपकता है, उसी तरह हम जाह्य है कि निपत्ति के मारे हुए प्रमी पाटक साहित्य की धोर लपके । उन्हें निरवास हो कि यहाँ हमारे दुःख का जोक कुछ हमका होमा हमें सुख का अनुभव होगा हमारा एत प्रगत होया । हस्त्यमय बन्नों द्वारा यह उद्देश्य कुछ न कुछ प्रबन्ध पूरा हो सकता है । ही हस्त्य धरमीनता-उहित निर्मल उधार होना चाहिए । साहित्यिक हस्त्य और सामाजिक हस्त्य में बड़ा अन्तर होता है । वही बात जिससे मित्र-गोष्ठी में पेटों में बस पड़ जाते हैं साहित्य में निम्न ही जाती है । सुखरो और बीरबल की कबाएँ यों बहुत ही हस्त्यपूय है लेकिन अनमं अधिकारी ऐसी है जिन्हें साहित्य न जाना साहित्य का अपमान करना होया ।

शब्द : विसम्बर, १९२६

साहित्य की प्रगति

साहित्य की संकड़ी परिभाषाएँ की गयी हैं और उनमें से हम अपना मतलब निरूपण के लिए एक से जेमें । परिभाषा है तो पीठियों की बस्तु, मगर जब बर बनाना है तो नीब गमनी ही पड़ेगी । हवा न मकान बना सकते तो क्या बात की लेकिन धमी विज्ञान वह सिधा नहीं जान पाया है । साहित्य जीवन की धालीबना है, इस उद्देश्य से कि सत्य को जोड़ की जाय । सत्य क्या है और प्रकृत्य क्या है, इसका निखय हम धाव तक नहीं कर सके । एत के लिए जो सत्य है वह दूसरे के लिए प्रकृत्य । एक मशानु हिन्दू के लिए धीरविता अयतार महान सत्य है—संतार की कोई भी बस्तु बन जाती

पुत्र पत्नी उसकी नजरों में इतनी सत्य नहीं है। उस सत्य की रक्षा के लिए वह अपनी ही नहीं अपने पुत्रों की प्राणति भी दे देगा। इसी प्रकार क्या एक के लिए सत्य है पर दूसरा उसे संसार के सब दुःखों का मूल समझता है और इसलिए असत्य कहता है। इसी सत्य और असत्य का संघाम साहित्य है। पतन और विमान का उद्धार भी यही है लेकिन वह बुद्धि के रास्ते से नहीं पहुँचा जा सकता है। बेचारा साहित्य भी यही यात्रा कर रहा है लेकिन गंभीर विचार से मौन न रहकर केवल बकन गिटाने के लिए अपनी कब्र खोदकर पाठा भी जाता है। यह रास्ता तो काटमा ही पड़ेगा तो क्यों न हँस खेसकर काटो। इसी 'दया सत्य पर बड़े-बड़े बर्षों की बुभियार पड़ी यह मानो मानव जाति की ओर से इन्द्र को ललकार भी उनका सिंहासन छीनने के लिए सक्रिय प्राण उसका मजाक उड़ाया था रहा है।

यह सत्य और असत्य की यात्रा उसी बल से मनुष्य में धारणा का विकास हुआ। इसके पहले तो उसकी सारी कृतितियाँ प्रकृति से अपने भोजन के लिए सड़ने में ही खप हो जाती थीं। जब यह चिन्ता लगी हो कि प्राण बच्चे लायेंगे क्या या प्राण रक्त की सर्पों काटने के लिए प्राण कैसे बने तो सत्य और असत्य के रम कौन जाता। उस बल सबसे बड़ा सत्य वह भूख और ठंड थी। साहित्य और कर्तव्य सत्य जीवन के लक्ष्य है जब हममें इतना सम्पर्क था थाप कि पेट के सिवा कुछ और भी सोच सकें। रोटी-वाल से निश्चिन्त होने के बाद ही खीर और पकीड़ी की सूझती है। प्रादि में मनुष्य में पशु-प्रकृति की ही प्रधानता थी। केवल पशुवत् ही सबसे बड़ा अधिकार था। मगर जब मनुष्य प्रायेणिक के कलह और रुधिर से तग था गया तो तरह-तरह के नियम बने और मर्तों की सृष्टि हुई। नये-नये सत्यों का आविष्कार हुआ जो प्रकृत सत्य न थे बल्कि मानव सत्य थे। मनुष्य ने अपने को नीति के बन्धनों से बंधना शुरू कर दिया। जातिवादी बनी उपजातिवादी बनी और भाषाशास्त्र के आधार पर समाज का संगठन हो गया। पहले दस-पाँच मेड़-बकरियाँ और बोल-सा नाम ही सम्पत्ति थी। फिर स्थावर सम्पत्ति का आविर्भाव हुआ और चूँकि मनुष्य ने इस सम्पत्ति के लिए बड़ी-बड़ी कुर्बानियाँ की थी बड़े-बड़े कष्ट उठये थे वह उसकी नजरों में सबसे बहुमूल्य वस्तु थी। उसकी रक्षा के लिए वह अपनी और अपने पुत्रों के प्राणों की बाजी लगा सकता था। विवाह प्रथा को ऐसा रूप दिया गया कि सम्पत्ति पर से बाहर न जाये पाये। और उस प्रकृति से धर्म का मानव-इतिहास केवल सम्पत्ति-रक्षा का इतिहास है। सब समाज में दो बड़े-बड़े क्षेत्र हो गये। जो संसार के इस संघाम में परास्त हो गये उन्होंने ईश्वर धर्म का धारण लिया और संसार को माया कहकर उससे विरक्त हो गये और नये-नये बन्धन बनने लगे यहाँ तक कि हमारा लोभ संकुचित होते-होते कठियों का एक कारागार सा बन गया। धर्म के नाम पर हजारों तरह के पालंड समाज में चुस घासे बिनमें इतना-कर मानव-समाज की गति रुक गयी। धर्म सब चीज को कुलकर होती है। यह प्रकृति

का नियम है। वही सच्चाई जिसका निर्माणा समाज के कल्याण के निमित्त किया गया था अन्त में समाज के पाँव की बेड़ियाँ बन गयीं। वही क्रम जो एक मात्र म धर्म है उस मात्रा से बढ़कर विघ्न हो जाता है। मानव-समाज में शांति का स्थापन करने के लिए जो-जो साधनाएँ सोच निकाली गयीं वह सभी क्रमान्तर में या तो बीख हो जाने के कारण अपना काम न कर सकीं या कठोर हो जाने के कारण कष्ट देने लगीं। जो पहले कुशलपति या बहु राजा बना। फिर वह इतना शक्तिशाली बन बैठा कि अपने को सम्राज्य का कारकून समझने लगा जिससे वाकपुर्ण करने का किसी मनुष्य को अधिकार न था। उसकी अधिकार-तुच्छता बढ़ने लगी। उसकी इस तुच्छता पर समाज का रक्त बहुते सरा। अन्त में अन्त अन्ति में इन इलाकों के प्रति विद्रोह का माह उत्पन्न हो गया। मनुष्य की धर्मता इन निरपेक्ष ही नहीं। पातक बन्धनों को मक्की के वास्ते की भाँति छोड़-छोड़ करके निरपेक्ष स्वच्छ मुक्त धर्मज्ञान और वायु में विचरने करने के लिए धर्मुर हो उठी। बीच-बीच में किन्तनी हो बार ऐसे विद्रोह छटे। हमारे जितने मत हैं वह सब इसी विद्रोह के स्मारक हैं किन्तु उन विद्रोहों में कबहूँ की जो मुख्य वस्तु की वह व्यो की र्यों बनी रही। सम्पत्ति में हाथ मथाने का किसी को या तो साहस ही न हुआ या किसी को सुनौ ही नहीं। जो इन सारे दुष्प्रवृत्तियों का मूल या वह इतना हीन वेत में बर्न और विघ्न और नीति के आवरण में महान बना हुआ बैठा था कि किसी को उसकी ओर सन्देह करने की भी प्रेरणा न हुई। हार्निक ली के इतारे और सहयोग से समाज पर निरपेक्ष-बन्धन समाने का रहे हैं। यह बड़े-बड़े व्यापारक और यह साम्राज्यवाद और वे बड़े बड़े व्यापार के केन्द्र ली के रहे हुए मिलीने हैं। ये विघ्न-निघ्न अन्त उनके खिलाफों के सिवा और क्या है। यह पात-पात यह ठीक-नीच का धेव ली की छोड़ी हुई धर्मभङ्गिणी है। यह कहने जो मानव-समाज के कोष हैं उनके कर विमोच है। व हुनाएँ धर्मक्य विषयों से हमारे लालों मजूर जो पशुओं की भाँति जीवन काट रहे हैं उसी धर्ममयी के धूमन्तर की विभूतियाँ हैं। उसने Puritanism का कुछ ऐसा निवेधात्मक रूप बहस कर लिया है, कि जो उससे बहुत मात्र भी विमुख हो जाय उसकी खेरिफत लीं। उसका कानून मात्म-मा से वही कठोर, वही बाल-नेषा है। उसकी लपीम के लिए कहीं कोई Tribunal नहीं है। सारना यह कि उसने जीवन को इतना संकीच इतना उममन्तर, इतना धर्ममयूख इतना स्वार्थमय इतना दुषिम बना दिया है कि मानवता उससे भयभीत ही उठी है और उसको पन्नाइ टेंकने के लिए, उसके पजों से निकल जाने के लिए वह धर्मता पूरा और समा रही है। इन रङ्गियों में इन बंधनों में इन धर्मय भाषाओं में ब्रह्मचर की ध्यानक वेतना में जो बर्न-ने बना लिये हैं जिनमें बन् होकर वह धर्मवी स्वच्छमृता हो बैठे हैं मात्र हुनाएँ धर्मता उन र्यों की लीकर उध व्यापक वेतना से सामन्तस्य प्राप्त करने के लिए उतार हा गयी है। संभव है, रसी को और से लीकर इसक टूटने के साथ ही वह

तबान-बवान

धरने ही बार में फिर पड़े। संभव है पित्रों से बन्धन की भाँति पित्रों से निष्पन्न
 वह हिंकारी विद्वियों का प्रायः बन्धन पर उसे विरना मंजूर है। प्रायः बन्धन मंजूर
 है, उन दलों में रहना मंजूर नहीं। संसार को भी भर कर भोगने की धारणा सातसा जिसे
 सखियों की *Partisanship* ने खूबवार बना दिया है। सन्धन-बन्धन बन्धन बना पाइती है।
 नियमों की उसे बिलगुम परवाह नहीं है। वह पाप को पुण्य असत्य को सत्य और धनुष
 को पुण्य बना देता टान बैठती है। उसने *Partisanship* का सखियों तक व्यवहार करके
 देख लिया है और धन बिना उसे अमीन में वफा किये उसे बंधन नहीं। भूठ बोसना पाप
 है। क्यों पाप है? अगर उस भूठ से समाज का ग्रहित होता है तो वह बेशक पाप है।
 अगर उससे समाज का फायदा होता है तो वह पुण्य है। निरपेक्ष सत्य के प्रतिष्ठा को
 ही वह स्वीकार नहीं करती। बोरी को तुम पाप कहते हो? तुम बाटते हो कि संसार
 को सारी सम्पत्ति बढ़ोकर उस पर एकाधिपत्य बनाओ। कोई उसे छे तो उसके लिए
 बेल है, फौजी है। हमने और तुममें इनके सिवा और क्या धरते हैं कि तुम सफल हो
 हो और हम बोर-कला में तुम्हारी बराबरी नहीं कर सकते। इस *Partisanship* ने हमारी
 भासा को कितना शुष्क काठ का-सा कठोर बना दिया है कि उसमें रस का लोप हो
 गया। कविता कितनी ही सुन्दर और भावमयी हो वह उसका धान्य नहीं उठ सकती।
 इससे वासनाओं का उदीपन होता है। चित्रकला से तो उसे दुरस्ती है। अन्ध मनुष्य की
 क्या मजान है कि वह परमात्मा के काम में एतन्म है। सृष्टि परमात्मा का काम है।
 मनुष्य अपर उत्तरी मजान करता है तो उसे सूची पर चढ़ा दो छाँची पर लटका दो।
 इतिहास में ऐसे धर्मन्यायों की कमी नहीं है जिन्होंने पुस्तकालय बना दिने विद्यालयों
 को भूमिस्व कर दिया मंगीत के उपासकों को निर्वासित कर लिया। तीर्थ स्वार्थों में जो
 पिशाच-नीतारें होती हैं वह इसी *Partisanship* का प्रसार है। धार्मिक भारत में जो पाँच
 करोड़ धरत भी कराइ मुसलमान और सायब एक करोड़ ईसाई हैं और जिस धर्मके के
 कारण राष्ट्र के विकास में बाधाएँ बढ़ी हो गयी हैं उसका जिम्मेदार इस *Partisanship*
 के सिवा और कौन है? और बयहों में तो प्युटिनिज्म से क्या हानि नहीं होती। मत
 शासक पियो म्ठ माँग आयो। इनके बयैर समाज की को हानि नहीं। इतिहास में ऐसे
 का दुष्प्रभाव कितनी तरह भी कम नहीं। लेकिन इससे पैदा होनेवाली धरुणरम्यता तो और
 भी बरम्य है। त्याग और समय स्तुत्य है, उनी हानत में जब वह धरुकार को म धरुकरित
 होने के सेविन दुर्भाग्य से इन दोनों में कारण और भाव का-सा सम्बन्ध पाया जाता है।
 जो कितना ही नीतिबान है वह उतना ही धरुकारी भी है। इनलिए समाज धाधारवाजों
 को सम्बेह की धाँसो में बेचता है। एक शराबी या प्यास भारमी अगर उशर हो सहाय
 भूति रखता हो सनानीत हो सेवा-भाव रखता हो तो समाज के लिए वह एक पक्के धाधार
 बारी निम्न अनुदार, धर्मकी लकीर-दूरव पुण्य से कहीं ज्यादा उपयोगी है। प्युटिनिज्म
 म्ठोर्तित जैसे इस हाक में रहती है कि कितना पाँच किमने और वह वासिनी बनाय।

प्युरिटेनिज्म धीर धनुवारता को पर्यन्त-से ही यमे है धीर जहाँ सेवक का प्रेम या भावना है वहाँ तो वह नंगी ललवार बाहर का डेर है । यहाँ वह किसी तरह की नमी नहीं कर सकता । उसे अपने निबनों की रक्षा के लिए किसी का जीवन मर्यु कर देने में एक प्रकार का वीरक-मुक्त धान्य प्राप्त होता है । भीम उसकी दृष्टि में सबसे बड़ा पाप है । बोरी करके हम समाज में रह सकते हैं बोसा देकर झूठी गवाही देकर निबनों को कुचलकर, मित्रों से विश्वासघात करके अपनी स्त्री को बंधों से पीटकर हम समाज में रह सकते हैं उसी मान धीर प्रकृति के धाम लेकिन भोग प्रकृत्य धराम है । उसके लिए कोई प्रायश्चित्त नहीं । पुरुषा के लिए तो बाड़े किसी तरह समा सुख भी हो पाय किन्तु स्त्रियों के लिए समा के डार बन्द है धीर उन पर धनीकृपाता बाण मीमर का ताता पड़ा हुआ है । धनी का यह प्रसार है कि हमारी बहने धीर बटिवाँ धाम विम तीर्क-स्वानों में ललार खीर ही जाती है धीर इत तरह उन्हें कुलित जीवन बिताने के लिए मजबूर किया जाता है । हम केशवो धराराही को बंध देकर समुष्ट नहीं होते उनके कुटुम्ब का उसकी सन्तान का धीर सन्तानों की भी सन्तान का बहिष्कार कर देते हैं । इस स्त्री या पुरुष पिछी के लिए भी ध्यनिधार के समकक नहीं लेकिन यह कहीं का ध्याय है कि किस धराराव के लिए पुरुष को बंध देने में हम असमर्थ हों उसी धराराव के लिए कुमागियो मा निबदाधों को कर्तव्य किया जाय ? धीराम्यवधियों को हमने इसलिए धीर दिया है कि परिस्थितियाँ उनके अनुकूल है धीर समाज उन्हें बंध देने में असमर्थ है । का पुरुष स्वयं बड़े बड़ाने से ध्यनिधार करता है, वह भी अपनी स्त्री को पिछरे में बन्द रखता जाइता है धीर यदि वह मानव स्वभाव से प्ररित हलार पिछरे से निकलने की इच्छा करे तो उसकी मरकम पर धुरी खेले से भी नहीं हिचकता । यह सामाजिक विपत्ता धमदा ही पढी है धीर वह बड़ी ऐसी से विरोह का रूप धारण कर रही है ।

इन सामाजिक कताधों का हमने इसलिए परिचित बलम किया है कि जैसा हमने धारम में कहा है—साहित्य जीवन की धानीकृपा है उन उदरय में कि जससे सत्य धीर सुन्दर की लोभ की धाय । बाध धमत हमारे मन के धमर प्रवेश करके एक कूलरा बसत बन जाता है, विम पर हमारे मुक्त-मुक्त मय-विस्मय रजि या धरति का सहारा नब बड़ा होता है । एक ही लल विम-विम हुरबो में विम धाम सत्यप्र करता है । एक धारमी धरने सङ्के की इसलिए पीट रखा है कि लङ्का सेभाड़ी है मन लया कर नहीं पड़ता । हम पर तरह-तरह की धानीकृपाएँ होती हैं । धार का धम है कि मङ्क को धुराव धमते देते तो उधे ठाड़ना है । यह सगलत रीति है । धूरता बहता है— नहीं सङ्का सेवक इसलिए सेभाड़ी हो गया है कि उन प्रम न पड़ाया नहीं जाता । यह धार का धीर है । लीमरा धानीकृपा एक मरम धीर धमै जाता है धीर कइता है—ललना मङ्कों का स्वाभाविक धम है यही उसकी रिधा है । धार को कोई धचिकर नहीं है कि वह सङ्के के प्रादुतिक विधान में बाधक हो । एक धीर धारमी धार की धम

ताड़ना में पुत्र-सन्ध का नहीं—स्वाध भाव बन्ध का रंग मग्नकता हुआ देखता है। बाह्य जपत और मनुष्य जगत में यही अन्तर है। साहित्य की रचना करनेवाले तो वही हाने हैं जो जपत-मति से वितोषरूप से प्रभावित होते हैं। जिनके मन में ससार को कुछ अधिक सुन्दर, कुछ अधिक उत्कृष्ट देखने की महत्वाकांक्षा होती है। वे अमुन्दर को देखकर जितने दुखी होते हैं, उतना ही सुन्दर को देखकर प्रसन्न होते हैं। और वे अपने हृष या शोक को अपने मन में ही रखकर सतुष्ट नहीं होते। वे ससार को भी अपने हृष या शोक का एक भाग देना चाहते हैं। भाव को अपने बनाकर सब का बना देना यही साहित्य है। डा रबीन्द्रनाथ ने अपने 'नीग्रय और साहित्य नामक निबन्ध में लिखा है—

'सौन्दर्य-भाव जितना विकसित होता जाना है, उतना स्वतन्त्रता के स्थान पर सुममति आशा के स्थान पर आक्षेपण आधिपत्य के स्थान पर मानस्य हम आनन्द देता है।

हम हमसे इतना और निभा बने—अनुशरता को जगह उशरता भेद की जगह मेव घृणा की जगह प्रम।

नवीन साहित्य की शक्ति म जिनकुल यही विकास गहर आ रहा है। वह अथ धारश चरित्रों की कल्पना नहीं करता। उसके चरित्र अथ उस अर्थी से मिले जाते हैं जिन्हें कोई प्युरिटन धृता भी पसन्द न करेवा। मेक्सिम गोर्की अनातोम फ्रान रोमा रोमा एष की बेन्म आदि मोरोन के स्वर्गीय रतननाथ मरसाट, शरवृषाध धारि भारत क—म ममी हमारे आनन्द के भेद को फेला रहे हैं। उमे मानसरोवर और कैनाथ की चोटियों से उतारकर हमारे गली-कूचों म खडा कर रहे हैं। वह किन्नी शरामी की किन्नी जुधाटी को किन्नी विपसी को देखकर बूछा से भुह नहीं फेर लेते। उनकी मानवता पतितों में वह बूबियाँ उससे नहीं बडी भाश में देखती हैं। वा कम ध्वजाधारियों में और पवित्रता के पुकारियों में नहीं मिलती। बुने आमी को भन्ना समझकर, उनसे प्रम और धारर का व्यवहार करने उनका अज्ञता बना देने की जितनी मम्माबना है उतनी उससे बूछा करके उनका बहिष्कार करक नहीं। मनुष्य म जो कुछ सुन्दर है, बिसाल है धाररणीय है, आनन्दप्रद है, साहित्य उमी की मूर्ति है। उसकी मो" में उन्हें आभय मिलना चाहिए, वा निराभय है जो पतित है वा अनादृत है। माता उस बालक से अधिक से अधिक ध्नेह करती है, वा दुःख है बुझिहीन है, मरत है। मरुत देने पर वह मर करती है। उनका हृषय दुखी होता है, कनूर्ती ही के लिए। कनूत ही में वह अपने मानु-आमस्य को टिका पाती है। बीस अश्वोस साध पहले बेस्वा साहित्य से बहिष्कृत थी। अरर कभी वह साहित्य म लायी जाती थी तो केवल अनामिक चिये आन के लिए। रचयिता की प्युरिटन-मनावृत्ति बिना उसे मनमाना न दिव विधाय न लेती थी। अब वह साहित्य में अयमान की वस्तु नहीं धारर और प्रम की वस्तु बन

गयी है। गऊ को हत्या के लिए बेचनेवाला अगर बोपी है तो खरीदनेवाला कम बोपी नहीं है। खरीदनेवाले का अगर समाज में धार है तो बेचनेवाले का क्यों अभाव हो ? बेस्या में बेटीपन है, मातापन है, पत्नीपन है। उसमें भी भविष्य और भद्र है, सहृदयता है। उसका तो जीवन ही पर-मुक्त के लिए अर्पित हो गया है। वह समाज के गद्य की सुक्ति है। उसकी शोभा इसी में है कि वह गद्य में सुम-मिलकर सम्पूर्ण गद्य को सजीव और चमत्कृत कर दे। सुक्तियों को चुनकर धन्य कर देने से उनका सुक्तिपन क्यों का र्वों रहता है, समाज शुष्क हो जाता है। अगर कोई ईश्वर है, तो ये बेवशासिताँ हिंस्र के दिन उससे पुछेंगी—हमने सदा पर-मुक्त चेष्टा की सबैव बूझों के बन्ध पर मरहम रक्खा बन्धो भी किया लेकिन प्राण देने के लिए नहीं बन्धि अपना प्रम Injunct करने के लिए। क्या उसका यही पुरस्कार था ?—और हमें विश्वास है ईश्वर उन्हें कोई अज्ञान न दे सकेगा। प्राचीनकाल की अन्धकारों तो बेवशासिताँ और अज्ञानियों की मजूरे-गजार थीं। हम उनकी कमबुगी बेटियों का किस मुँह से अज्ञान कर सकते हैं।

ईश्वर का बिना बड़े मीके से ध्या गया। साहित्य की नवीन प्रगति उनसे विमुक्त हो रही है। ईश्वर के नाम पर उनके उपासकों ने भू-भण्ड पर जो धन्य किये हैं, और कर रहे हैं उनके देखते इस विरोध को बहुत पहले उठ सका होना चाहिए था। धार्मिकता के रहने के लिए शहरों में स्थान नहीं है, मगर ईश्वर और उनके मित्रों और कमचारियों के लिए बड़े-बड़े मन्दिर चाहिए। धारणी भूषा मर रहे हैं मगर ईश्वर अन्धे से अन्धा सायाग अन्धे से अन्धा पहनेया और कुल बिहार करेगा। अपनी सुक्ति की टावर सेना समने छोड़ दिया तो साहित्य भी जो ईश्वर के दरबार में प्रजा का बकील है, साफ-साफ कह देना—आपकी यह स्वाभ्यपता धारकी शान के विनाश है। लेकिन ईश्वर की भीला कुछ एसी विनित्र है, कि हम मुँह से बितने ही धनीरवरवादी बनते हैं धारमा से उठने ही ईश्वरवादी बन जाते हैं। अब तक मुँह से ईश्वरवादी के आत्मा से पक्के नास्तिक ; अब परिस्थिति बदल रही है और गन्धा ईश्वरवाद उबा की सात्त्विका से उदित हो रहा है। भूषा जो ईश्वरवाद से क्या प्रवोजन। जहाँ मेन है, सान्त्वन्य है, नमन्वय है, वही ईश्वर है। नकनी ईश्वरवाद से धारमवाद प्रस्तुत हो रहा है।

लेकिन इसके साथ मुक्तों का जीवन और मुक्तियों का चित्तनीपन भी नवीन प्रगति का एक लक्षण है, जिसके हम नमन्वय नहीं। प्रथम वेगम ममोबिनोर की बस्तु मड़ी। वह इससे कभी पवित्र और महान है। वह धारम-नमपण है, स्वी के लिए प्री और पुत्र के लिए भी। बहुमान बोरोपोय साहित्य बड़े वेग से धारम प्रम की ओर जा रहा है। वैवाहिक मैत्री और वैवाहिक परीक्षा की समस्याएँ साहित्य में हम को जा रही हैं। यह पेट्रोग की स्वा-सिप्या है। ससार का मारा बन चौककर ब धव निरिचन्त हो गये हैं और निरिचन्त धारमी कामरता की ओर न जाय तो क्या करे। वैवाहिक

विकास के लिए रसिकता परमावश्यक है। रग की उपेक्षा केवल दुबल और रक्तहीन प्राणी ही कर सकता है। जो स्वस्थ है, समबल है, उसका रसिक होना अनिवार्य है, लेकिन रसिकता और कामुकता में जो अन्तर है, उसे योरोप का साहित्य मूलतः बाँटा रहा है। सदियों के बन्धन और निग्रह के बाद अब जो उसे यह बस्तु मिली है तो वह स्वतन्त्री हो जाना चाहता है। इस लुचामुरता की वशा में उसे साध और यत्नाय कुछ नहीं सूझता। स्त्री और पुण्य दोनों ही वैवाहिक जीवन की विमोक्षरिणों से भाग रहे हैं। अगर वह प्यूरिटनिज्म सीमा का अतिक्रमण कर गया था तो यह रसिकता भी सीमा के बाहर निकली जा रही है। अब तक पुरुष इन क्षेत्र में विजय-कामना किमा करता था। अब स्त्री भी योरोपीय साहित्य में जमी मनोवृत्ति का प्रश्न कर रही है। उस शीत-प्रवाह देश के लिए सबसे उत्तमना की जरूरत है। वहाँ जमे हुए जो जो पिघलाने के लिए बोझ-सी गर्मी चाहिए ही। यहाँ तो भी यों ही पिघला रहता है। उसके लिए प्राण विज्ञान की जरूरत नहीं। रसिकता भोजन-रूपी जीवन के लिए बटनी के समान है, जो उसके स्वाद और रसि को बढ़ा देती है। केवल बटनी जाकर तो कोई जीवित नहीं रह सकता।

विषय बहुत बढ़ा है। एक छोटे-से मापख में उसकी काफी व्याख्या नहीं की जा सकती। समाज का वर्तमान संकटन द्रुपित है। कुछ दरिद्रता धन्याय ईर्ष्या द्वेष आदि मनाधिकार, जिनके कारण ससार नरक के समान हो रहा है। इनका कारण द्रुपित समाज-संघटन है। सोशियलोगी के साथ साहित्य भी इसी प्रश्न को हल करने में समा हुआ है।

मार्च, १९३३

जीवन और साहित्य में घृणा का स्थान

जीवन में घृणा का स्थान

निम्ना क्रोध और मूढ़ता यह सभी दुर्गुण हैं। लेकिन मानव जीवन में से अगर इन दुर्गुणों को निकाल बीजिए, तो संसार नरक हो जायगा। यह निम्ना हो का भय है, जो दुष्टचारियों पर संकृत का काम करता है, यह क्रोध ही है जो न्याय और सत्य की रक्षा करता है और यह मूढ़ता ही है जो पालंज और मृतता का समय करती है। निम्ना का भय न हो क्रोध का धार्तक न हो घृणा की धारक न हो तो जीवन बिगड़लन हो जाय और समाज नष्ट हो जाय। इनका जब हम दुरूपयोग करते हैं तभी ये दुर्गुण हो जाते हैं लेकिन दुरूपयोग तो अगर दया करुणा धर्तसा और शक्ति का भी किया जाय

हिन्दू विरविद्यालय के विहारी ऐमीगिएशन के वार्षिकोत्सव पर पढ़ा गया।

तो वह दुर्गुण हो जायेंगे। धन्वी क्या अपने पाप को पुण्यायुक्तीन बना देती है, धन्वी कदवा काकर धन्वी प्रशंसा बर्माही धीर धन्वी भक्ति भूत। प्रकृति जो कुछ करती है, जीवन की रक्षा ही के लिए करती है। धात्म-रक्षा प्राणी का सबसे बड़ा धर्म है और हमारी सभी माननाएँ धीर मनोवृत्तियाँ इसी उद्देश्य की पूर्ति करती हैं। कौन नहीं जानता कि बही विष या प्राणों का नाश कर सकता है, प्राणों का संकट भी दूर कर सकता है। अक्सर धीर धर्मका का मेव है। मनुष्य को मन्वी से दुग्न्व से अक्षय्य वस्तुओं से क्यों स्वाभाविक बूणा होती है? केवल इसीलिए कि मन्वी धीर दुग्न्व से बचे रहना उसकी धात्म-रक्षा के लिए आवश्यक है। बिना प्राणियों में ब्रह्मा का भाव विकसित नहीं हुआ उसकी रक्षा के लिए प्रकृति ने उनमें दबकने धर्म साध धेने या विष जाने की शक्ति बाल ही है। मनुष्य विक्रम-क्षेत्र में उत्पत्ति करते-करते इस पद को पहुँच गया है कि उसे हानिकर वस्तुओं से धाव हो धाव बूणा हो जाती है। बूणा का ही उद्घ रूप भय है धीर परिष्कृत रूप विवेक। ये तीनों एक ही वस्तु का नाम है उनमें केवल भावा का अन्तर है।

तो बूणा स्वाभाविक मनोवृत्ति है धीर प्रकृति द्वारा धात्म-रक्षा के लिए सिरबी गयी है। या मैं कहो कि वह धात्म-रक्षा का ही एक रूप है। धरर हम उससे बंचित हो जावें तो हमारा अस्तित्व बहुत लिन न रहे। जिस वस्तु का जीवन में इतना मूल्य है, उसे सिधित होने देना अपने पाप में कुन्हाही मारना है। हममें धरर भय न हो तो साइस का उदय कहीं से हो। कल्पित जिस तरह बूणा का उद्घ रूप भय है, उनी तरह भय का प्रबंध रूप ही माइस है। अकरत केवल इस बात की है कि ब्रह्मा का परित्याग करके उस विवेक बना दें। हमका धर्म यही है कि हम व्यक्तियों से बूणा न करके उनके बुरे धाकरण से बूणा करें। यत स हमें क्यों बूणा होतो है? इसीलिए कि उनमें कृता है। अयर धाव वह कूर्तता का परित्याग कर दें तो हमारी बूणा भी जाती रहेगी। एक शायबी क मूँह से शराव की दुग्न्व जाने के कारण हमें उसमें बूणा होती है, लेकिन बोड़ी बेर के बाद जब उसका मशा उतर जाता है धीर उसके मूँह से दुग्न्व धाला धन्व हो जाती है तो हमारी बूणा भी धायव हो जाती है। एक पान्डी पुजायी को मरत धामीसा को टगत देखकर हम उसमें बूणा होती है लेकिन जब उनी पुजायी को हम धामीसों को मेवा करते देखें तो हमें उससे भक्ति होयी। बूणा का उद्घय ही यह है कि उसमें दुग्न्वा का परिष्कार हो। पान्डी भूणता धग्वाय बसात्कार धीर ऐसी ही धग्व दुग्न्ववृत्तियों क प्रति हमारे अन्तर जितनी ही प्रबंध बूला हो उतनी ही कग्पाउधारी होगी। बूणा क सिधित होने से ही हम बहुधा स्वयं उन्ही बुराइयों क पड़ अपने हैं धीर स्वयं मैमा ही धग्गत व्यवहार करने लगते हैं। जिसमें प्रबंध बूणा है वह जान पर नेसकर भी अपने धनना रक्षा करेगा धीर उनी उन्ही जब तोरकन फेंक देने में वह धनन प्राणों

नये बाजी मचा देया। महात्मा गांधी इतीतिष्ठे धरतुतपन को मिटाने के लिए धरने जीवन का बहिराज कर रहे हैं कि उन्हें धरतुतपन से प्रबलब पूछा है।

साहित्य और कला में घृणा की उपयोगिता

जीवन में जब शृंखला का इतना महत्व है तो साहित्य उसे उसकी उपेक्षा कर सकता है, जो जीवन का ही प्रतिबिम्ब है। मालव-हृदय धारि ने ही तु और तु का रंय-स्वप्न रखा है और साहित्य की सृष्टि ही इतीतिष्ठे हुई कि सत्तार न जो तु या सुन्दर है और इसलिए कन्याणकर है उसके प्रति मनुष्य न प्रम उत्पन्न हा और तु या असुन्दर और इसलिए धरतुतप कन्याण से शृंखला। साहित्य और कला का यही मुख्य उद्देश्य है। तु और तु न सप्राम ही साहित्य का इतिहास है। प्राचीन साहित्य धम और ईश्वर इतिहासों के प्रति बला और उनके अनुयायियों के प्रति बला और मक्ति के भावा की सृष्टि करता रहा। नवीन साहित्य समाज का कून कूननबासों रंग सिधारो हृष्यइंडबाबा और जनता के धरतुतप से धरतुतप स्वाय सिद्ध करनेवालों के बिच्छ उतने ही और से पाबाज उठा रहा है और हीनों इतिहास कन्याण क ह्राप सताये हृषों के प्रति उतने ही और से सहनुमृति उत्पन्न करने का प्रयत्न कर रहा है। समर ह बहु भावुकता की तरल में और कठोर मत्त की और से धरतुतप करके सत्तार न इतिहास मचा इन का स्वप्न देख रहा हो सम्मर है जिन्ह बहु बरिछता के कारण सहनुमृति का पात्र ममरु रहा है उनकी मारी बुराइयों का दुःखस्वा और बरिछता के सिर मरु रहा है। वे इतने भोले-भाले प्राची न हों पर बहु मन्वय का स्वाग-स्वप्न दखने न इतना मरु है कि इन समय उसे निम्नी बाबा-विन की और ध्यान देने का अवकाश नहीं है। लेकिन उन कलाकारों का उद्देश्य क्या यह था कि वे किसी व्यक्ति या समाज के प्रति शृंखला फैलाये ? वे व्यक्तियों के शत्रु नहीं हैं, न न हय या ईर्ष्या के कारण साहित्य की रचना करते हैं। वे उन परिस्थितियों और प्रबलियों के शत्रु हैं जिनके हाथों ऐसे व्यक्ति उत्पन्न होते हैं। व्यक्तिवा से उन्हे उतना ही प्रम है, जितना धरतुतप किसी भाई से हा सकता है। जिन मूरजोग महाजनों या मन्वयों क पसीन की कमायी पर मीने होनेवासे मिस-भालिकों के प्रति बहु धरतुतप कृतियों में बृहर उगसता है, उन्हीं को मरुट में इतरर बहु उन्ही मचा करना धरतुतप महोभास्य समझेगा। बहु जानता है कि यह गरीब कुर धरतुतप स्वाधरिभता के हाथों दुली है और धरतुतप जनमिष्या के सिद्धर होकर गरीबों का सत्तार रहे है। उने उतने सहनुमृति होती है पर उन परिस्थितियों क पात्र न बिसकुम समझेता नहीं कर मरुटो हो सकता है उनमें कुछ ऐसे भी हों जिन्ह मूरजोरों के हाथों कट उतने पडे हों मन्वय है उन्ही के हाथों उनका मचना हो गया हो लेकिन धरतुतप बहु कलाकार है ता उनमें

तो वह दुर्गुण हो जायेंगे। धर्मों का अपने पाप को पुण्यावहिन बना देती है। धर्मों का रक्षा कावर, धर्मों प्रशंसा बमझी और धर्मों भक्ति धूर्त। प्रकृति को कुछ करती है, जीवन की रक्षा ही के लिए करती है। धर्म-रक्षा प्राणी का सबसे बड़ा धर्म है और हमारी सभी भावनाएँ और मनोवृत्तियाँ इसी उद्देश्य की पूर्ति करती हैं। कौन नहीं जानता कि वही विष जो प्राणियों का नाश कर सकता है, प्राणियों का सफट भी दूर कर सकता है। धर्म और धर्म-रक्षा का भेद है। मनुष्य को धर्मों से दुर्गुण से जन्म वस्तुओं से क्या स्वाभाविक पूछा जाती है? केवल इनीलिए कि धर्मों और दुर्गुण से बचे रहना उसकी धर्म-रक्षा के लिए आवश्यक है। जिन प्राणियों में बुद्धि का मूल विकसित नहीं हुआ उनकी रक्षा के लिए प्रकृति में उनमें बचने का धर्म नाम देने या दिए जाने की शक्ति बल की है। मनुष्य विज्ञान-राज में उत्पत्ति करते-करते इस पद को पहुँच गया है कि उसे हानिकर वस्तुओं से धर्म ही धर्म बुद्धि ही जाती है। बुद्धि का ही उच्च रूप धर्म है और परिष्कृत रूप विज्ञान। ये तीनों एक ही वस्तु के नाम हैं। उनमें केवल मात्रा का अंतर है।

तो बुद्धि स्वाभाविक मनोवृत्ति है और प्रकृति द्वारा धर्म-रक्षा के लिए सिखी गयी है। या मैं कहूँ कि वह धर्म-रक्षा का ही एक रूप है। अगर हम उससे अलग हो जायें तो हमारा अस्तित्व बहुत दिन न रहे। जिस वस्तु का जीवन में इतना मूल्य है, उसे शिथिल होना अपने पाप में कुल्हाड़ी मारना है। हमें अगर धर्म न हो तो साहस का उद्योग कहाँ से हो। बल्कि जिस तरह बुद्धि का उच्च रूप धर्म है, उसी तरह धर्म का प्रबल रूप ही साहस है। अतएव केवल इस बात की है कि बुद्धि का परिष्कार करने उसे विवेक बना दें। इसका अर्थ यही है कि हम व्यक्तियों से बुद्धि न करके उनके बुरे आचरण से बुद्धि करें। धर्म से हमें क्यों बुद्धि होती है? इनीलिए कि उसमें धूर्तता है। अगर धर्म वह धूर्तता का परिष्कार कर दें तो हमारी बुद्धि भी जाती रहेगी। एक शराबी के मुँह से शराब की दुर्गुण बाने के कारण हम उससे बुद्धि होती है, लेकिन बोड़ी देर के बाद जब उसका मत्ता उतर जाता है और उसके मुँह से दुर्गुण धाना बन्द हो जाती है तो हमारी बुद्धि भी गायब हो जाती है। एक पाखंडी पुजारी को उरल धामीयों की उरल देकर हमें उससे बुद्धि होती है लेकिन कल उसी पुजारी को हम धामीयों की सेवा करते दखें ता हम उससे भक्ति होगी। बुद्धि का उद्देश्य ही यह है कि उससे बुराईयों का परिष्कार हो। पाखंड धूर्तता धर्म-रक्षा बसात्कार और ऐसी ही अन्य दुष्प्रवृत्तियों के प्रति हमारे अन्तर जितनी ही प्रबल बुद्धि हो उतनी ही कल्याणकारी होगी। बुद्धि के शिथिल होने से ही हम बहुधा धर्म-रक्षा उन्हीं बुराईयों में पड़ जाते हैं और स्वयं बुरा ही बुद्धि व्यवहार करने लगते हैं। जिसमें प्रबल बुद्धि है, वह जान पर सेमकर भी उनमें धर्म-रक्षा करणा और उन्हीं उनकी बड़ खोचकर रोक देने में वह अपने प्राणों

की बाजी मया होगा। महात्मा गाँधी इसीलिए अश्रुतपन को मिटाने के लिए अपने जीवन का समिदान कर रहे हैं कि उन्हें अश्रुतपन से प्रथम घृणा है।

साहित्य और कला में घृणा की उपमोगिता

जीवन में जब कदा का इतना महत्व है तो साहित्य कसे उसकी उपेक्षा कर सकता है, जो जीवन का ही प्रतिबिम्ब है। मनब-हृदय धारि में ही सुधीर कु का रम-स्वन रहा है और साहित्य की सृष्टि ही इसीलिए हुई कि ममार म जा सु या मुडर है और इसलिए कस्याणकर है उसके प्रति मनुष्य म प्रम उत्पन्न हो और कु या असुन्दर और इसलिए अमत्य वस्तुधा से बूछा। साहित्य और कला का मही मुख्य उद्देश्य है। कुधीर सु का सपना ही साहित्य का इतिहास है। प्राचीन साहित्य अम और ईरवर इोहिया के प्रति मला और उनके अनुयायियों के प्रति अझा और अरि के नावा की सृष्टि करता रहा। महीन साहित्य समाज का सुन चुपनवाला रम विमारा ह्यकस-बाझा और अतता के अज्ञान से अपना स्वाथ मित्र करनेवालों के विरुद्ध उतने ही जोर स अनाज उठा रहा है और हीनों अमिता अन्धाय के हाथ सताये हुमो के प्रति उतन ही जोर से महाभूमि उन्नत करने का प्रयत्न कर रहा है। मंभव है वह मानुषता की तरंग में और कठोर सत्य का धार से अर्थों अर करने समार म अरि मचा देने का स्वन बैच रहा हो सम्भव है जिन्हें वह अरिता के कारण महाभूमि का पाष ममक रहा है उनकी माटी मुण्डलों को दुःखस्वा और अरिता के विर मड रहा है। व इतन मोल-माले प्राणी न हों पर अट मधुग का म्बय-म्बय देखने म इतना मम है कि इन समय उसे किसी बाधा-विघ्न को और अ्यान देन का अयकास नहीं है। मरिण उन कला कपरा का उद्देश्य क्या म्हा या कि वे किसी अ्यक्ति या ममार के प्रति बला केमार्गे ? वे अ्यक्तियों के अन्तु नहीं है न वे अ्य या दीर्घा के अरका साहित्य का रचना करने है। वे उन परिस्थितियों और प्रवर्तियों क अन्तु है जिनके हाथों ऐसे अ्यक्ति उत्पन्न होते हैं। अ्यक्ति या वे उन्हें उतना ही प्रम है, विरता अपन किमी मरि से हो सकता है। जिन मूरकोर महाजनों या अन्नदूरी के पमीने की कमायी पर मो- होलवाले मित-मामिका के प्रति वह अपनी इत्तियों में अहर उमलता है, उन्हीं की मरुट में देखकर वह उनकी सेवा करना अपना महोमाथ ममभेया। वह जानता है कि यह मरीब अुड अपनी स्वाअरिधता के हाथों हुभी है और अपनी अनलिप्या क शिकर होकर मराओं को मता रहे है। उसे उन्नत महाभूमि होयी है पर उन परिस्थितियों क साथ न जिनकुन समझीता नहीं कर मकन हो सकता है उनमें कुछ ऐसे मा हों जिन्हें मूरकोरों क हावा कट्ट उठाने पर हा म्बय है उन्हीं के हाथों उनका मवनाश हो गया हो लेकिन अयर वह कलाकर है तो उमम

साहित्य में प्रसर कराने की शक्ति मुमकिन नहीं। साम्यवादी का सौम्य स्वभाव ही का एक रूप हो शक्ति इस दुस्तल सिद्धांतवादी भी देखे गये हैं जिनकी बहन-सौमी म सांगी कृतियाँ मौजूद हैं मगर न्य नहीं। ऐसे साहित्यकारों की शीर्षकी गठन और वाक्य-विन्यास की प्रसंगा तो भी जा सकती हैं मगर पढ़नेवाले के दिल पर उसका प्रसर नहीं होता।

स्वर्गीय मोसाला राशिद-उल-लेली ॥ यह तीनों गुण मौजूद वे और यही उनकी साहित्यिक सफलता का रहस्य है। उन्होंने बहुत ही यत्नवश विम पाया था और उनके साथ ही सच्चाई का पक्ष लेनेवाला भी। वह मध्यम वय में पेश हुए और उस वय के रहन-सहन के हर पहलू से परिचित थे। उनकी कृतियाँ और कुराह्याँ दोनों ॥ ननकी कुराह्याँ के सामने थीं। इन्हीं मोसाइटी म साहिहा जैसी लाजबन्दी और स्वानिमाजिनी कृतियाँ भी देखी थी और काजिम जैसे नेक और सदाचारी बुजुर्ग भी। उनके दिल पर उन पात्रों का गहरा प्रभाव था मगर उन्होंने यह भी देखा कि सामुहिक समाज में कुछ ऐसी कुराह्याँ बुरस गयी हैं जिनके विपाकत वातावरण में कृतियाँ विनोदित मिट्टी जा रही हैं और कुराह्याँ रोक ब रोक पाँव फेलाती जाती हैं। उन्होंने व्यक्तिवादी प्रकृति न पायी थी। उनकी प्रकृति का रंग सामाजिक था।

साहिहा और काजिम की ईशियत व्यक्तियों की हैं मजिल से अपने वय के प्रति निधि हैं। इन्हीं के करिये मोसाला राशिद समाज का सुधार करना चाहते हैं। सोसाइटी कर्मियों की बंधीरो में बकरी हुई है। संघविश्वासों ने वय का रूप धारण कर लिया है। फिजूस कर्षों की वा बजाज वग गयी है और अशेबी सम्पत्ता अपने धाइम्बरों और प्रभावों के साथ समाज के अंतर्गत तत्त्वों को तोड़ती-खेड़ती जा रही है। उबारता बल होती जाती है। अपने परिवार को पालने का अयाम घटता जा रहा है, स्वार्थी भता बढ़ती जा रही है, ईशियत-मोद का रंग जाया हुआ है, साम्यात्मिकता मुप्त हो रही है, मारी पीड़ित है, उसे उसके अधिकारों से वंचित कर दिया गया है। उस पर शारीरिक और धारिभक्त बलबल इतने व्याधा गया विवे गये हैं कि वह असाह्य हो गयी है। वह अपने पति की औबत-संगिनी न रह कर केवल उसके मनोरथन की वस्तु बन गयी है। उसके अमान्त और अथ पक्ष के उदाहरण अने विम उनके अमुभव में आये होंगे और धारभय नहीं कि उनका सर्वत्र विम उसकी बेकसी पर रो उठता था और उसके सुधार के लिए बैचन हो जाता था। उनकी कृतियाँ और उपन्यास थोट आये हुए विम की पुकारें हैं जिनमें विम पर प्रसर करने का गुण कूट-कूट कर मरा हुआ है।

हमारा कवि और साहित्यकार धाम तीर पर शिवा शक्ति से शून्य होता है। संसार उनकी मनोरथाओं को प्रेरित करने का साधन है। उस अपनी मनोरथाएँ संसार से अचिन्त मिय हैं। वह संसार की घटनाओं से बही तक प्रभावित होता है कि उसके अपने मन की करवटें बाग उठें। इससे व्यारा उसे बुनिया से विमचस्वी नहीं।

मीताना राशि केवल साहित्यकार न थे वह चिन्तक भी थे और सुधारक भी ।
 जो उन्हीं में और भी उपस्थासकार हुए हैं जिन्होंने सांस्कृतिक समस्याओं पर कहानियाँ
 लिखी हैं मगर उनकी कृतियों में शोच नहीं है । एसा मामूज होता है कि उन्होने विषया-
 विवाह या परवा या तमाक धारि समस्याओं को केवल इनलिए अपना विषय बनाया कि
 यह सरलता से इस पर अपनी कहानियाँ गढ़ सकते थे या इनलिए कि पत्रिका को इन
 मसलों से विमचस्वी भी और ऐसी सामयिक कृतियाँ लोकप्रिय हो सकती थीं । एसा नहीं
 मामूज होता कि सामाजिक समस्याओं से उन्हें धार्मिक कष्ट होता है और जो कुछ वह
 लिख रहे हैं वह सुधार के एक स्वायी भाव्ये की वशा में लिख रहे हैं । मीताना राशि
 उम-बेटी की कहानियों में सम्पाई है, दर है, युस्वा है, बेचारमी है, भूममाहट है जैसे वह
 समाज की बढ़ता और बेचरी से दुखी है और मज्जाल से प्राण्णा करते हैं कि उनके
 जम्ने में धसर पैदा हो भोग उनकी बातें सुने और उन पर शोच-विचार और
 धनन करें ।

उनके जितने सामाजिक उपस्थास और कहानियाँ हैं वे सभी सुधार के भाव्ये से
 भर हुए हैं । वह हसीन से भी काम लेते हैं गधीहत्तों से भी शक्ती के सीन्दर्य से भी
 और इस्लाम के इतिहास और रबायतों और शरीयत के हुक्मों से भी । जाहते हैं कासा
 उनकी धामाज में सारे इमराज्जिन की-सी तास्त और धनन होता । इस भाव्ये में कमी
 कमी उनकी कृतियों में कासा की दृष्टि से बृटियाँ भी उत्पन्न हो गयी हैं । कमी-कमी ऐसा
 ज्जाल होन समता है कि यह किसी उपवेशक को प्रपीत है कोई साहित्यक मटि नई ।
 धस्तर सुधारक और चिन्तक साहित्यकार पर हाबी हो गया है लेकिन मीताना राशि
 सम्पाइयों से इवने करेन वे और उनसे इतना धसर लेते थे कि उनका मन कमा के
 मिद्धान्तों को धाँच से धोक्कन कर बेमे के लिए विचरत हो जाता था । बेरक हुनिया
 धाटिस्त के सीमित चिन्तन से कही ज्जादा बढ़े है । जुबा की हुनिया और इम्मान की
 हुनिया में कोई मुकाबला नहीं । जुबा की हुनिया ने धाये रिज ऐसी सूरतें पैदा धाटी
 र्हुटी हैं जिन्हे इम्मान की हुनिया गभारा नहीं कर सकता वो मनुष्य की बुद्धि से
 परे है ।

वास्तविकता जाहलो है कि धाटिस्त हुनिया को जसी तरह चिन्तये जैसे वह उठ
 देखता है । मगर इससे उसकी मालन धनुधृतियों को धावात पहुँचता है तो पहुँचे धगर
 धमस उसकी ज्जादा-बुद्धि का शीट मगती है तो मग पर उस वास्तविकता से इमर-उमर
 हलन की इजाजत नहीं । मगर साहित्यकार सब कुछ समझने पर भी धाटिस्तियलिस्त बनने
 पर मजबूर है । जब तक उसकी मजर में समाज का कोई धधिक धुनर रूप नहीं है
 वर्तमान समाज के वैपम्य जैसे उमे उज्जिल करेगे ? हमने धगर चिन्की नहीं देखी है तो
 हम धपन इन्हे की धादवी और सहाँध मे क्योकर मजार होंगे । धसन्तोप के लिए किनी
 जैसे धाटिस्त का दिमाग में होगा बुरूरो है । ध भोजना नहीं कर सकता है वो टीक बात

तो हमें तो इसमें हानि के बचने का ही गंभीर ध्यान है। चीने या माठमें दरजे तक एक ही भाषा रहने से मुमकिन नहीं है। सस्कृत के धीरे धीरे हिन्दू भाषाओं को फारसी के शब्दों का प्रयोग बढ़ने से भाषा ही भाषा ही बनने लगी है। जिसे साहित्य पढ़ने का शौक है वह चीना या मित्रिम पात्र करके साहित्य की बोली-कियावें चार महीनों में पढ़कर इस कमी को पूरा कर सगा। अब हम धर्मशास्त्र के हठधारी शत्रुओं को अपनी भाषा में धर्म से किनी तरह नती रोक सकते (धीरे धीरे) तो भी-बो-नी धार्मिक शत्रुओं के मिल जाने में हिन्दू का हानि न होपा।

इस सम्बन्धन के साथ एक कवि सम्बन्धन भी हुआ था जिसके मनापति श्री प्रो. एम. ए. ए. थे। श्री प्रोफेसर सायब स्वयं धर्म के कवि हैं और जीवन में कविता का स्थान क्या है, यह बताने जाते हैं। आपने बहुत ठीक कहा कि कविता केवल मनोरंजन को बस्तु नहीं और न गाना कर सुनाने की चीज है। वह तो हमारे हृदय में प्रख्यापित की जासनेवासी हमारे धर्मशास्त्र-धर्म में ध्यानव्यय स्फूर्ति का संचार करनेवाली (श्रेष्ठ माननाथों की नहीं) बस्तु है। कविता में धर्म जागृत करना करना की शक्ति नहीं है, तो वह बला है। आप हमारा धर्म या धर्म के लाल या बुलबुल और इच्छा अपने जीवन को उपपात्रवासी शक्ति होगी चाहिए। प्रेरिकाया के नामने बैठकर धर्म बहाने का वह उपाय नहीं है। उस व्यापार में हमने कई संधियाँ तो ही निरह का रोना रोते-रोते हम कहीं के न रहे। अब हम ऐसे कवि चाहिए जो हठधारी इच्छा की तरह हमारे मति हुई हठधारी में जान डाले। इतना इस कवि ने मनन को नुरा न नामने न जाकार का प्रवियन करायी है और उसका मुरा पर इतना धर्म होता है कि वह अपने धर्मियों को हुकम देता है—

उठो मेरी दुनिया के धर्मियों को जपा दो
 कर्म उमर के बटोरीवार हिमा दो।
 धर्मशास्त्रों मुसामों का लहू लोह बकी से
 कृत्रिमक^१ प्रतोमाया^२ को शाही^३ से मड़ा दो।
 मुसलमानिये^४ जमहूर^५ का धारा है जमाना
 जो मझो कीहन मुमकी गंभीर धर्म मिटा दो।
 जिस लाल से दण्डा को ममस्तर नहीं रोकी
 उस लाल के हूर सोराण^६ पनुम को जसा दो।
 क्यों धर्मिका^७ मजपूक^८ में हायल रह परदे
 पीरान^९ कमीमा को कमीमा^{१०} से उठा दो।

मार्च १९१६

१—महम २—चिक्का ३—गुच्छ ४—सिद्ध ५—प्रजा ६—गुलना
 ७—निमान ८—वेहू की नाम ९—मट्टा ११—मट्टि १२—मठवाले १३—मिरजे।

॥ विद्वान्-धार्मिक-साहित्य सम्बन्धन पत्रिका ॥

इन्दौर हिन्दी साहित्य-सम्मेलन

श्री बनेन्द्रभुमार ने इन्दौर साहित्य-सम्मेलन की चर्चा करते हुए अपने पत्र में लिखा है—

'मेरे ज्ञान में सम्मेलन ठीक-ठीक रूप में अब की पहली बार अपने राष्ट्रभाषा सम्मेलन के रूप को अनुभव कर सका है। बस और प्रांतीय भाषाएँ हैं हिन्दी को अब बसा ही नहीं रहना है, हिन्दी अन्तिम राष्ट्र की होगी। इस तरह सम्मेलन को भी उसके अनुबन्ध होना होना।

यह काम चौकी की के सभापतित्व के तले न हो तो और कैसे हा? हिन्दी के सब हिन्दुस्तानी शब्द जोड़कर उनके रूप के सम्बन्ध में सम्मेलन में अपना मन्तव्य स्पष्ट किया है। निरि के लिए विद्वानों की समूह्य कमेटी बैठायी यही है। निरि के प्रश्न के सम्बन्ध में सम्मेलन अन्तिम निर्णय देने से बचा है। यह ठीक भी है। विद्वानों की समिति बस से इस प्रश्न के सब पहलुओं पर विचार करके कुछ स्वर करेगी। अब प्रांतीय भाषाओं के लिए सुगम और निवृत्त होने की दृष्टि से हिन्दी में जो सुधार व क्लृप्तार आवश्यक होने उक्त प्रश्न को भी सम्मेलन ने धाया नहीं है। एक और भी महत्वपूर्ण बात इस सम्मेलन में हुई है। निघ-निघ भाषाओं के माध्यम से जो साहित्यकार अन्तर प्रांतीय और भारतवर्षीय होने योग्य साहित्य प्रस्तुत कर रहे हैं। उन सब में परस्पर परिचय विचार-विनिमय भी बढ़ती है। अथवा राष्ट्र के जीवन में और साहित्य में ऐक्य कसे जावे।

प्रायः की भाषाओं की विविधता और विशिष्टता सुरक्षित रहे, फिर भी वे सब क्या न मिलकर एक संयुक्त बलिष्ठ राष्ट्र-वारण के विकास में सहस्रक हा। यह काम प्रांतीय के माध्यम से तो नहीं हो सकता। होगा तो अपूरा हो सकता है। हिन्दी के माध्यम और केन्द्र के द्वारा सब भाषाएँ एक दूसरे के स्पष्ट और परिचय में जावें—इस प्रकार को भी सम्मेलन ने पहचाना और इस आशय का प्रस्ताव स्वीकृत किया।

बम्बई के श्री मुंशी के संयोजकत्व में एक समिति बनी है। श्री मुंशी से इस सम्बन्ध में मेरी कतिपय बातचीत हो गयी। यह इस बारे में उत्तर और उद्यमशील हैं और मुझे निश्चिन्त है, निकट भविष्य में ही कुछ निश्चित फल सामने आयेगा। एक प्रस्ताव-द्वारा साहित्यकारों की अन्तराष्ट्रीय संस्था भी इस एन में सम्मिलित होने का अनुरोप हिन्दी-साहित्यकारों से किया गया है। यह सब सम्मेलन के पक्ष में दृष्टिकोण के विस्तार के प्रमाण हैं और मैं उनका स्वागत करता हूँ।

रहा यह प्रश्न हिन्दी का वर्तमान साहित्य राष्ट्रभाषा होने के योग्य है या नहीं इस विषय में तो मैं यह कह सकता हूँ कि हिन्दी के राष्ट्रभाषा होने का आचार उसके एतद् कालीन साहित्य की व्यष्टता है ही नहीं। असाक रजोन्मत्त ठाकुर हिन्दी में नहीं

है, मकिन हिन्दी को उस पर सभ्याधिक्य में पस्त हो जाना चाहिए। हिन्दी में सम्यक्स्थिति यदि कम है, तो धीरे-धीरे यह नहीं है तो सब उठे। हिन्दी के पक्ष में इसे जैसे कोई भोग हीनता ही समझे, मैं तो इसे सौमन्य समझता हूँ कि वह उतनी सम्पन्न की भाषा नहीं जितनी कृपक धीरे मजबूर की है। उतनी तहजीब की भाषा नहीं जितनी नित्य जीवन की है। यदि हिन्दी की मर्यादा है, तो यही हिन्दी का बल भी है। आज हिन्दी का सेलक इस बात को देखने से बच नहीं सकता कि उसको बाँधने की उद्देश्यता पाठक उसके धाम-वास का ही नहीं है, वह तो पूरे कोने-कोने तक फैला है। ऐसी हानत में द्वितीय-सेलक के लिए यह सुभीता नहीं खोया कि वह अपना भाषा प्रकृति नाम में यत्किन्तु प्रान्तीय प्रतिशय साम्प्रदायिक प्रपचा सही रख सके। राष्ट्र-भाषा की कड़ीयें सब जब रोड ब रोड गड़ कर साठ होती जाती है, तब हिन्दी के सेलक को बरकस उँचा होना पड़ेगा ही नहीं तो वह नहीं पूछा जायेगा। साहित्य में उन्नतिशील बारा को प्रोत्साहन देने और अल्प प्राण स्थूलता को व्यथ करने का प्रयोग साधन प्रणाल्या ही हिन्दी को मिल गया है। मैं दूसरी भाषा के बाधत पाठक से निवेदन करूँगा कि वह हिन्दी के वर्तमान साहित्य में सुविधा न पाकर एक दम बिगुल न हो तनिक धीरे धीरे धीरे धीरे जैसे प्रबुद्ध पाठकों की सख्या काटि हो जाने तो वे देखेंगे कि हिन्दी में उनकी रुचि के योग्य सामग्री प्रस्तुत करनवाले सेलकों क भी होत में देर नहीं सगरी। आज तो मैं स्वीकार करता हूँ कि हिन्दी में स्वामी कम है बसता शोध ही जगता है। मच्छ बोझा है, अतिरेक साधारण का ही है पर क्या अन्य भाषा भाषी मौका नहीं देने कि किसान धीरे मजबूर के बल पर जो भाषा परिपाचित है, वह नज़ासत सीख में ?

यह निश्चिन्त है कि इन्दौर सम्मेलन ने निधि भाषा और साहित्य को कौमी रूप देने के लिए ताठिठ के मापक उद्योग किया है। अन्तर-प्रान्तीय साहित्य-सभ का आयोजन करके उसमें सब कमी को पूरा कर दिया है, जो बरसों से लोगों को घटक रही थी और यदि हमारा यह उद्योग सफल हुआ तो एक दिन हमारा साहित्य अपने मार्गों में राष्ट्र की सम्पत्ति होगा। इस कमेटी की धीरे से भी कन्हैयावास मुन्गी न प्रान्तीय साहित्य महारजियों से पत्र-व्यवहार शुरू कर दिया है और हाम में ही एक परती चिट्ठी नेकी है। जिसमें सब के कायकम का रूप स्थिर करने की चेष्टा की गयी है। सम्मेलन क इस प्रस्ताव कर हवाला देने के बाद कहा गया है—

‘इसके पहले कि कमेटी विभिन्न-भिन्न प्रान्तीय भाषाओं के प्रतिनिधियों का चुनाव करके काम शुरू करे, यह जरूरत है कि मूल विचार पर प्रान्तीय भाषाओं में अन्वी उरह विचार किया जाय। इसलिए मेरा ध्यान से यह निवेदन है कि अल्प अल्प प्रान्तीय भाषा में किसी एक पत्र-पत्राज जिसे हम आयोजन से महानुभूति ही इसकी बरकत पर विचार करें। मुझे पुरो धारा है कि हमारी प्रान्तीय भाषाओं के प्रायः सभी पत्र-पत्राज पत्र हम

धायोजना का स्थापन करेंगे। उक्तबीच यह है कि इस काम के लिए या तो मौजूदा मासिक पत्रों में किसी का उपयोग किया जाय या कोई नया पत्र निकाला जाय और उसमें हर एक भाषा के लिए एक-एक खंड नियत कर दिया जाय और प्रांतीय भाषाओं के साहित्यकार प्रतिमास उसके लिए नल मिलें जो हिन्दी में तरजुमा होकर उसमें हों। लेख यथासाध्य छोटे हों और उम विषय के सर्वप्रथम विद्वानों द्वारा लिखे जाय। उनके विषय यह हों—

(१) उस भाषा के मूल साहित्य के किसी एक खंड पर एक लेख जैसे उपन्यास का नामा इतिहास या निबन्ध।

(२) उस प्रांतीय भाषा की मासिक प्रवृत्ति पर एक लेख।

(३) (क) किसी उपन्यास या काव्या का छोटा-सा कृतांश (ख) उस भाषा के पत्रों में छपी हुई एक या दो कविताएँ।

(४) उस महीने में छपी हुई किसी सुन्दर रचना की धायोजना।

अगर आप इन लेखों को हिन्दी में अनुकूलित करने का प्रयत्न न कर सकें तो बम्बई में इसका कोई इन्तजाम किया जायगा जहाँ यह सुचलकर है कि प्रायः सभी भाषाओं के जानकर मौजूद हैं। इस तरह हमारे हाथ में अन्तर-प्रांतीय साहित्य का एक पत्र हो जायगा।

अतएव मैं आप से अनुरोध करता हूँ कि आप ऐसे साहित्यकारों का सहयोग प्राप्त करें जो आपकी भाषा में इस धायोजना को कार्यरूप में लाने के इच्छुक हों और मुझे सूचना दें कि (१) आप इस विचार को अमल में लाने और (२) हर महीने मेरे पास लेख भेजेंगे।

उत्तर यथासाध्य जल्द से जिसमें मैं महारमा भी को शीघ्र ही इसकी रिपोर्ट दे सकूँ।

इस पत्र में जो कार्यक्रम रखा गया है, अगर वह व्यवहार में लाया गया तो यह राष्ट्र की एक बड़ी सेवा होगी। भारत के प्रांतों में प्राचीन सांस्कृतिक एकता तो किसी न किसी रूप में मौजूद है लेकिन धारण है कि इस युग में जब कि एकीकरण के अनेक साधन मौजूद हैं, हम संस्कृति के एक मुख्य विभाग में एक दूसरे से परिचित भी नहीं हैं। इस और प्रगति का स्वेडेन और पीसैड का आयात और स्पेन का साहित्य हमें अंग्रेजी-द्वारा सुलभ है। हम उसकी रचनाएँ पढ़ते हैं, उन पर बहस करते हैं और उनसे अपनी साहित्य-भाषा की तुलना करते हैं। स्वभावतः हम अपने साहित्य में भी वही उत्कृष्ट बही धीरे धीरे प्रतिभा देखने की कामना करने लगते हैं, और तुलना में जब हम अपने प्रांतीय साहित्य को इलका करते हैं तो उसकी ओर से हमारे मन में स्थानि और अपनी हीमता का भाव पैदा हो जाता है मगर वास्तव में हम अपने राष्ट्र के साहित्य से परिचित भी नहीं हैं। प्राप्त तो राष्ट्र नहीं है, राष्ट्र तो प्रांतों का समूह है।

जब तक हम इस प्रांतीय भाषा में का तोड़ न मुकामे राष्ट्र माहित्य अपने सम्पूर्ण रूप में हमारे सामने कैसे आयेगा। अभी जो रंग अलग-अलग सात हरे, नीले पीले नजर पार रहे हैं जब ये सब मिल आयेगे तभी उनमें उज्ज्वल प्रकाश आयेगा। क्या जब मोतामों का समझना हुआ समूह अपने सामने बैलता है, तो उसकी जिह्वा पर जैसे सरसवती बँट जाती है। मोतामों की संख्या कम हुई, तो उसी अनुपात से उसका उत्साह पीछे हो जाता है। उसी तरह सेसक की प्रतिभा भी जब एक विशाल राष्ट्र की भाषणा से सिद्धाती है, तो उनमें कुछ भोग बाध पदा हो जाती है। जय बलि से पूषिए, जो किसी प्रांत इण्डिया-कवि सम्मेलन के लिए एक कविता लिख रहा है। उसकी इच्छा यही होती कि अपनी भाषा का सारा वैभव इस कविता पर गटा दे। धरम मानन बुरखर कवियों को बँडे देवत की कल्पना ही माना उसकी प्रतिभा को कोड़ लया-लयाकर बढ़ाती रहनी। डिम्बेरारियों के अनुपात से ही हमारे शक्तिपों का विकास होता है। जब हमारे साहित्यकारों के सामने वैभव अपना प्रांत नहीं बरन् सम्पूर्ण राष्ट्र होगा तब वह पूछ मनोयोग और पूरी तैयारी और उच्छट साधन के साथ माहित्य की रचना करेगा। यह बात नहीं कि वह इन सब कुछ उठा रखता है, बल्कि खेब का विस्तार अदुरत रूप से समझी बुद्धि को बमका देगा। वह बिडान् भी जो प्रांतीय भाषाओं से काशी प्रोत्साहन न पाकर ना तो कुछ लिखने को चेष्टा ही नहीं करता या अंधबो में लिखने है सम्भव है तब राष्ट्र भाषा में लिखना अपनी शान के विनाश न समझे। इमें विरवान है हिन्दी का माहित्य-संसार इस नया प्रवृत्ति का अभिवादन करेगा और हमारे माध्य सम्पान्त्र्यल हम सामोत्रन को अपनी आलोचना और परामरा और लयकामना से जीवन प्रदान करेगे।

जून १९३५

तुलसी-जयन्ती या तुलसी-पुरयतिथि ?

जन्म-दिन को जो उत्सव मनाया जाता है उसको 'जयन्ती' कहते हैं। उसी को 'वर्षमी' या 'सातमिच्छ' भी कहते हैं। आचार्य शुक्ला मत्स्यी तो गोस्वामी तुलसीदास को निपन-तिथि है इसलिए उस दिन 'जयन्ती' नहीं पुण्य-स्मृति-तिथि मनायी जानी चाहिए। 'तुलसी-जयन्ती' की अपेक्ष 'तुलसी-पुरयतिथि' का ही प्रयोग और प्रचार होना अच्छा है। जब गोस्वामी जी के जन्म मसत् का ही टीक-नीक लिखन नहीं हो सका है, तब उनके जन्म-दिन का टीक पता मपाना कैसे सम्भव हो सकता है ? बूकि व स्वयं एक दोहे में अपनी निपन-तिथि घोषित कर गये हैं इसलिए उनमें शक करन की कोई गुंजाइश नहीं है। एसी दशा में 'तुलसी-तिथि' राष्ट्र ही मसमा उपयुक्त मामुम होना है। हिन्दी

साहित्य-सम्मेलन और काशी-गायत्री-प्रचारिणी सभा को चाहिए कि 'तुलसी-जयन्ती' शब्द का प्रयोग और प्रचार रोकने की कोशिश करें। हिन्दी-पत्र सम्पादकों को इस नियन्त्रण में अधिक सफलता मिल सकती है। हिन्दी प्रेमियों को यह भूल खुझाने का यही उपयुक्त व्यवहार है।

तुलसी-स्मृति-तिथि कैसे मनायी जाय ?

इस महीन (जुलाई आखण्ड) में बगह-बगह तुलसी-तिथि मनायी जायगी। २१ जुलाई (शनिवार) को इस देश के अनेक पारों और घातों में विशेष रूप से तुलसीदास सम्बन्धी उत्सव मनाया जायगा। यों ही अन्य ही अनेक स्थानों में तुलसीदास जी का गुणवान हुमा करता है पर उस दिन उनके निमित्त कुछ महत्वपूर्ण कार्य होना चाहिए।

हिन्दी-पाठकों को स्मरण होगा कि महात्मना मानवीय जी ने काशी के तुलसी-बाट का बीछोछार करने के लिए पत्रों में एक असीम प्रयत्न की है। उस पर बहि साह-भर में इसी एक दिन ध्यान दिया जाय तो कुछ ही बरसों में—धीरे धीरे सुयोग मिल गया तो एक ही घात में—तुलसी-बाट का बीछोछार हो जा सकता है।

तुलसीदास जी से सम्बन्ध रखनेवाले अनेक स्थान काशी में हैं और उनकी वंश शोचनीय है। भाषा मन्दिर के अग्रतल में एक कोठरी है जिस लोग गोस्वामी जी का निवास स्थान बतलाते हैं वह घात-भर में एक बार सिर्फ आखण्ड-शुक्ला सप्तमी को खुलती है। क्या उस कोठरी (III) कोठरी का इतना ही सम्मान पर्याप्त है ? जिस स्थान में गद्दीनों और बरसों रहकर गोस्वामी जी ने 'विनय पत्रिका' के समान अनुब विनय-ग्रन्थ लिखा उस स्थान की दुवशा हिन्दीवालों के लिए बोर सम्बन्ध है।

यही हास अस्वी बाटवाले तुलसी-मन्दिर का है। जिस भाषा के हिमायती करोड़ों हों उस भाषा के सम्बन्ध कवि के प्रति ऐसी उपासीनता। अमत्य तुलसीदास का जो हिन्दुस्तान में हिन्दी के कवि हुए।

हर साल लोग बगह-बगह तुलसी-जयन्ती के नाम से तुलसी-तिथि मनाते हैं। क्यूँ क्या है ? गाँववाले दो-चार सेर भी धान में अनेक बेते हैं। इनके साथ-साथ अन्न-शोषण तो चाहिए ही ? वह भी थोड़ा-बहुत ही ही जाता है। इसके बाद शोषण-भार लेकर लोग तुलसी-द्वय रामायण गाते लगते हैं। बार-बार अनेक लोग घना फाड़कर बिस्काते हैं। बस ही गये तुलसीदास से सम्बन्ध ! रहनेवाले एक मोटिल अक्षर-भर बँटवा देते हैं। लोग निश्चित स्थान पर जुटते हैं। भाषण होते हैं लेख पडे जाते हैं कविगण मुनायी जाती है, सब में बही कहा जाता है कि गोस्वामी जी की कविता ऐसी है, बेसी है, उनके उपचारों का हम बरसा नहीं दे सकते—इत्यादि। बस एक ही तरह की

बार्ते हर साल। मया कोई कहेया कहाँ से? कोई रिमच तो करता नही धीर जो करता है वह -उ उत्सव में जाता नहीं। इस तरह एक रस्म-सी पुरी कर था जाती है। वह तो एक तरह से बना टालना है, इससे कुछ ठोस काम नहीं हो सकता।

इस समय धारणयकता इस बात को है कि जहाँ-जहाँ तुमसी-तिथि मनायी जाय वहाँ तुमसी-तिथि के लिए बोज़-बना भी भिन्न सके धर-सघर किया जाय और वह दम्प्य महामना मामनीय भी को इस निवेदन के साथ प्रेष दिया जाय कि वे इते तुमसीदान से सम्बन्ध रखनेवाले स्मार्तों के बीछोंडार य मयावे। इस तरह धगर कुछ साल भी तर वगह काम हो तो तुमसी-तिथि य धरोष्ट बन एचन हो सकता है। उससे राजापुर कासी धीर धरोष्ट्या में तुमसीदास भी के जितने स्मृति-बिन्दु है मयकी रखा धीर पूजा-प्रतिष्ठा का प्रबन्ध किया जा सकता है।

तुमसीदास भी ने हिन्दुबाति धीर हिन्दुधर का जो उपकार किया है उसका बखन करने का यहाँ स्वान नहीं है। उन्होंने हिन्दु-धर्मता धीर हिन्दु-मस्कृति की बड़ी रखा की है। हिन्दु-धरमाय धीर हिन्दु-साहित्य उनके उपकार-धर स कमी मुक्त नहीं हो सकता। इसलिये हिन्दु-बाति का प्रतिनिधित्व करनेवाली हिन्दुमहासभा का भी कठम्य है कि वह इस विरा में अपनी कुछ शक्ति लगाने। गोस्वामी भी की रचनाएँ सनात्मबर्न को बाल है पर सनात्मधर समार्यों को देख-दित के माग म रोहे धटकाने स पुनत ही नहीं है मिसठी कि वे धरने धरम्य मररक की धीर कुछ भी ध्यान दे। धीरधर-महात्म्यमेवन भी केवल बामिद धर्मों में ही रंसा रहता है—वह सम्पन्न होकर भी तुमसीदान जैसे धरम्य के लिए धरम तक कुछ न कर सका। किन्तु इन निर्बीच संस्थाओं से धरपे भी धरोष्ट धरता नहीं है। धरतएव हिन्दी-साहित्य से प्रेष रखनेवाले लोग ही इन काम को करे। किन्तु इस धरमोजन का धीयरोश इसी २६ जुलाई को हो जाना चाहिए।

कासी में धरम्य एक तुमसीदास भी का मन्दिर जो है, जिसके विषय म कहा जाता है कि वह कासी-नरेश को सहायता से बना है। उसमें गोस्वामी जी को एक शुभ धरतरमूर्ति स्थापित है, जो उनके धरसती चित्र के धारार पर रँवार की गयी है। मुन्ते है, सही धरनभी चित्र को कासी-नागरी-शुचारिणी मया ने प्रकाशित किया है। मकिन हमने धरम तक उन मन्दिर की तीर्थ का रूप नहीं दिया। राजापुर की धीययाना के लिए हम कमी उल्लाहित नहीं हुए। धरसो-बाट के तुमसी-मन्दिर म जो खड़ाई गोस्वामी जी की रस्ती है उसकी धीर हमारा ध्यान कमी नहीं गया। जसो तुमसी-मन्दिर के धरन एक तुमसी-पुस्तकालय है, जिसमें तुमसीदास-सम्बन्धी नमस्त साहित्य का मयह करने की हमारी प्रवृत्ति कमी नहीं हुई। फिर हम तुमसी-तिथि क्यों मनाते हैं? लोकधरिधर को धरम्यमूर्ति को धररोजों में स्वयं बना वाला है धीर हमारी मागा के शोफनधरिधर भी जो बता है, वह धररके सामने है।

॥ तुमसी-स्मृति-तिथि कैसे मनायी जाय ? ॥

तुलसीदास के ग्रन्थों से कितने ही लोग झलपटी हो गये बहूतों ने करोड़ों रुपये कमा कर घर में बाम लिये धीरे न जाने कब तक यह काम जारी रहेगा। किन्तु ऐसे लोग में कोई ऐसा माई का नाम धामतक धाने-धाता नहीं बिसाया गया जो तुलसीदास के नाम पर एक परसेंट रॉयल्टी की रकम भी लुत्ती से निकालकर देता। सब तो यह है कि हमसे धमी धपनी माया के रत्नों की परख करने की योग्यता ही नहीं है हम सिर्फ लकीर पीटने में ही बहानुतु हैं। किन्तु सिर्फ पुरानी लकीर पीटकर तुलसीदास जैसे महात्मि को अज्ञात करने से कोई लाभ नहीं।

जुलाई १९३३

साहित्यिक गुडापन

इस होठ-युग में धर्म व्यवसाय की भाँति पत्र पत्रिकाओं को भी अपने स्वामिना या संचालकों को मजदूरी देने या अपनी अस्तित्व बनाये रखने के लिए उख-उख की चालें चलनी पड़ती है। योरोपवाने तो शब्द-बाम या पत्रिकाओं या साठरियों का सटका निकालते हैं और अपने आहकों को अपनी तकरीर आहमाने का मौका देकर अपनी मरतब निकालते हैं। हिन्दी में वन के धयाध से और डप की चालें चली जाती हैं। पत्र में किसी उख का बिचार देड़ दिया जाता है, या कला के नाम पर धम नम बिच लिये जाते हैं। धवालठी मोटिछों के लिए आहमकारों की लुत्तापयों की जाती है, उनके धामने तक रगड़ी जाती है, मडाओड़ की लमकी देकर रकने सीधी की जाती है और इसे सत्योव्वाटन का महान् नाम दिया जाता है। या कोई लीकानेवानी बीज धापी जाती है, जिसे पड़कर भागो में उस पत्र की क्वाइमल्वाह चर्चा हो। जहाँ से धाडिरम के प्रेमी बमा हों वही उमी समझनी मरे हुए लेख पर बाठें होने लगे। इनका सिद्धांत है—बदनाम धगर होंगे तो क्या नाम न होगा उन्हें तो पत्रिका के आहक बदनाम चाहिए क्योंकि उनका स्वामी नका आहूता है और नख न हुषा तो बेचारे सम्पादक की बाम की धुरात नहीं बर-बडा सम्मान कर अपने घर की राइ लेनी पड़ेनी। रोटी का सवाल तो बड़ा टंका है। गरीब सम्पादक अपनी धामा की हस्या करके समझनी पडा करने के लिए या तो मास्तिकता के ममधक लेखों को माला निकालन लगता है, या किसी भले धारमी की पगड़ी उखानता है। जान पड़ता है, प्रयाग की मास्तिक पत्रिका 'सरस्वती' धात्र-कल इन्हीं गंदी चालों से धपना कोप भरने के लिए मडबूर है। उसके लुभाई के धक में धं बनारसीदास लुत्तुर्वेदी पर जो आओपपूर्व लेख संस्मरण के रूप में निकला है, उनके लिए इसरा कोई उत्र नहीं हो सकता। धारमी कोई महित काम उमी बल्ल करता है अब उगका जीवन संकट में पड़ जाता है और इन धृष्टि से

यह क्या का पात्र है लेकिन यदि वह केवल अपनी बुद्धि मनोबल को मजबूत करने के लिए किसी को लांछित करता है, तो वह क्या का नहीं बिककार का पात्र है। हम यहाँ समझते हैं इस संस्मरण के लेखक सरस्वती-सम्पादक अक्षर श्रीनामसिंह जी क्या के पात्र हैं, या बिककार के।

अगस्त १९३३

इंटरव्यू क्या है ?

भारत ने योरोप से बर्हि धीर बहुत-सी आन्धी-बुटे बातें सीसी है बर्हि पत्र प्रकाशन भी है धीर पत्र-प्रकाशन में बर्हि भी बर्हि नीति मान्य है जो योरोप में है। बर्हि प्रथा है कि पत्रों के सम्पादक या प्रतिनिधि विशिष्ट व्यक्तियों से घंट करके किसी सामाजिक धार्मिक राजनैतिक या अन्य महत्त्वपूर्ण समस्या पर उनकी सम्मति जनता के सामने रखते हैं। इंटरव्यू का जरेय महत्त्वपूर्ण विषयों पर अनुभवों महान्मात्रों को रूप वृष्टि-बोध या निखय प्रकाशित करके जनता में जागृति फैलाना या किसी विरोध पक्ष का समर्थन करना होता है। इसके लिए पहले ही में घाब्रा ले ली जाती है। बहुधा इंटरव्यू करनेवाले पहले ही से कुछ प्रश्न बना लेते हैं। उन प्रश्नों का जबाब न बचकरा मोट करके जाते हैं। इंटरव्यू समाप्त हो जाने पर पूरा कथन सुना दिया जाता है धीर इंटरव्यू देनेवाले का उम पर हस्ताक्षर ले लिया जाता है। जब इंटरव्यू करने वाले को सम कथन या संस्मरण को धानने का अधिकार होता है। वह हमकी पूरी एह्तियसत करता है कि कथन में एक शब्द या वाक्य भी ऐसा न धाले पावे जिससे उस विशिष्ट पुरय के विषय में किसी प्रकार का भ्रम उत्पन्न हो सके। अगर ऐसा कोई वाक्य धालनेवाली के कारण रह भी जाता है, तो इंटरव्यू देनेवाला उसी वक्त उचक संशोधन कर देता है।

अगर यहाँ क्या हुआ ?

यहाँ सरस्वती-सम्पादक ने एक नये ढंग का इंटरव्यू लिया। धार कथनगत गये अनुबेसीजी से मिले उनसे अपनी मर्लि धीर धलिष्टता विलासी धीर उसी धार्मीयता की शैक में जिसे सामय इन मर्लि-प्रशान ने धीर महहोरा कर दिया हो अनुबेसी जी से जो कुछ बातें हुईं उन्हें भर धाकर स्मृति से लिया जो कुछ न था धाना वह अपनी सरक से मिला दिया शायों का हेर-हेर तो कोई बात ही न थी न कोई कथम पकड़नेवाला था। अनुबेसी जी के मुँह ने जो कुछ कहना था धालने धालने में निक गया। इतनी बातें धार देने रहती केवल उनका धार धार रह नवता या धीर भाषों

॥ अगर यहाँ क्या हुआ ? ॥

को धरने शर्मों में सिद्धकर बहुत बड़ा धर्म किया जा सकता है। एक धारणी कल्याण
 है—'राम की कविताएँ साधारण होती हैं। इस भाष को इस तरह सिद्धकर—'राम
 के बाप ने भी कभी कविता की थी वह कविता करनी क्या जाने' उसका रूप कितना
 विकृत किया जा सकता है। ऐसा मानना होता है कि श्रीमद्भागवत भी वह संसृष्टा बाँध
 दर ही नये ने कि इन्टरभ्यू के बहाने इनके मुँह में ऐसी-ऐसी बातें रख हैं कि सभी पर
 सम्पादकों और लेखकों से अनुबेरी भी की सजाई हो जाय और वे सब श्रीमद्भागवत की जो
 धरना उधारक और हिमायती समझ कर उनकी पीठ ठोकने लयें। मगर हिस्ती के
 सम्पादक इतनी धारणी से बचने में धानेवाले नहीं हैं। बात के इन स बात करनेवाले
 क जगिन का पर्याप्त गुण पाता है। मगर कोई धारणी धारण हम से कई कि पं देवीवत
 भी सुकन बहने से कि धर की प्रेमबंद प्रयाग धारणे तो उनकी वह सुकन की धारणी
 कि कल्याणी सिद्धने का नाम न लये तो ये विचार कल्याण कि कल्याणमा किष्ठ हय का
 धारणी है पुरंत सुकनजी से बहने के लिए तैयार न हो जायेंगे। जिस प्राणी का मन
 कुल्ला में बसता है उसका विरवास ही कीम करता है? बुराई की निष्ठा करनेवाला
 पपकी उद्योगनवाला सजाई सगानेवाला धारणी धरन समझे कि मोक्ष उद्योग धारन
 करने तो उसकी मुल है। ऐसे धारणी को पूछा के सिवा और किसी बात की धारणा
 न रखनी चाहिए। माला अनुबेरी की ने कहा कि धरुक्त व्यक्ति को लिफने की समीक
 नहीं या उन्होंने धरुक्त व्यक्ति को साहित्य-मन में धारने न बसाया होगा तो वह धर तक
 गुननाम पडा होता या यह कि नि ऐंङ्गुम धर महापा राणी उनसे पिन मान रखते
 हैं तो क्या यह बातें सिद्धन की है। धारणी भाठसिप में साधारणतः कुछ लटक नहीं
 रखा शर्मों को तोम कर मुँह से नहीं निकालता बकि ऐसी ही बातें करता है जिन्हें
 वह समझता है कि धरने बीटे हुए व्यक्ति को धरणी लयेंगी। वह मितनवाने की उधि
 और सुकनव बँधकर उसी इन की बातें करता है। मगर मुझ से कोई सोहवा मितने
 धारने तो मैं उससे कल्याण की बातें न कहूँगा। धरने वर जो धारणी धरता है, उसका
 कुछ न कुछ सत्कार करना नाबिध हो जाता है। श्रीमद्भागवत की जो कथा धरन दि०
 ऐंङ्गुम अनुबेरी की से मितने नये होते तो वह प्रवासी भारतीयों का प्रथम ज्योते।
 श्रीमद्भागवत की वह धरने गपाने किठकर लुप धरने ही छोदे हुए धरने म धीने मुँह पिर
 पड़े हैं क्योंकि अनुबेरी की ने ऐसी ही बातों का पान समझा। धरन श्रीमद्भागवत की वर
 और जोर मगाने तो अनुबेरी की धरने धरतरय का गुण मान भी जोख देते। ऐसा कीम
 है जिधने कभी ठाक मीक न की हो कभी मनबसेपन के स्टेज पर जो धार धरितय न
 क्रिये हों। फिर अनुबेरी की तो युवा के क्रुद्धन से धरणी मुकाने से बहुत दूर है और युवा के
 इहर से रंघु मी है। श्रीमद्भागवत की धरन बोडी-सी और जालवाडी से कपन सेते तो
 अनुबेरी की के रसिक कीमन का मंडाफोड भी कर सकते ने पर क्या यह साटी बहुरपी
 एक प्रतिष्ठित पत्रिका के प्रतिष्ठित सम्पादक के योग्य है, और क्या धरस्वती के पाठक

इसीलिए सरस्वती खींचते हैं कि उन्हें हम उन्हें क सेक पढ़ाने जायें ? किन्तु की प्राइवेट
 बाइपोल को जो उसने हमें अपना मित्र समझकर हमारे ऊपर विश्वास करने की भा
 पन्निक में माने था हम कोई अधिकार नहीं हैं । अगर हम ऐसा करते हैं तो विज्ञान
 बाध करते हैं । धार्मिक हम इटर्नल से किस समस्या किस प्रश्न किस बात पर प्रकाश
 पड़ा ? क्या स ध्याना पढ़नेवाला यही समझेगा कि बभागमीशान बडा नीच धारमी है
 बिलकुल बना हुआ बडा धमी बडा शंखीबाज । अगर किमी धारमी के प्रति बनता म
 यही भाव फैलने में हम सफल हुए तो यह क्या कोई बड डेब दरब का काम है
 किसी की इच्छा विवाह बना क्या कोई बडा धार्मिक उदरय है ? धारम म ईमानदारी पडा
 करा देना क्या बड़ी सराहना का काम है धीनाबामिह जी मुख्य मित्र बने है धीर बिलने
 ही मनुष्यों के बारे में ऐसा बात का बुक है कि यदि मैं मित्र ता वह प्रयाग म बहुत
 हमक हो जायेंगे लेकिन ऐसी बात करना जितनी बड़ी नीचता है उमका त्रिकर करना
 उतन ही बड़ी नीचता है । हम उन्हें के प्रोपगंड सं धीनाबामिह जी न नाशिय का
 उपचार कर रहे हैं, न 'सरस्वती का न अपना बरम् मभाग क नामने जिन्ही के मन्गलको
 की भइ कर रहे हैं उन्हें कमोकिन कर रहे हैं । धारकी यह दुर्गि वनकर इनक मित्र
 धीर क्या होगा कि दुनिया बहूयी—जब 'सरस्वती' जैसी प्रतिष्ठित पत्रिका का सम्पादक
 ऐसा सम्पादन कर सकता है, तो कि साय" यह धावा ही बिगडा हुआ है ।

अगस्त १६३३

भारतीय साहित्य और पं० जवाहरलाल नेहरू

जिन दिनों 'हम' के पढे म भारतीय साहित्य के मगजन धीर हम "हरय की
 पूर्ति क लिए भारतीय साहित्य-मत्र स्थापित करन की उन्नत पर विचार किया जा रहा
 था उसी दिनों परिष्ठित जवाहरलाल की सम्मोक्षा जेन म बैठे हुए स्वार्थ रूप स इसी
 विषय पर धीर इसी विज्ञान कर रहे थ । उन्हें हमारे धामोवन की बिलकुल
 खबर न थी फिर भी धारके उन सक से जो हान में सहयोगी प्रचार में प्रकाशित
 हुआ है उनके धीर हमारे धामोवनों में धरमम मासुरय है । इनके यह मित्र होता है कि
 राष्ट्र की विचार-बाध सांस्कृतिक एकता की धार मिशन के धीर कितनी एकमता के
 साथ बौध रही है । नेहरू जी राष्ट्र के प्राण है धीर उनका हृदय राष्ट्र का हृदय है
 जिनमें राष्ट्र की सम्पूर्ण धामोबाएँ धीर भावनाएँ प्रतिबिम्बित होती है । साहित्यिक धीर
 सांस्कृतिक एकता राष्ट्र के विकास का मन् धय है धीर यह बलिष्क का गुन लच्छ है
 कि वह भावना राष्ट्र के मन में प्रबल हो उठी है ।

नेहरू जी ने नेन के प्रारंभ में हिन्दी के मधीन साहित्य की दृष्टिता के विषय में
 बधा ही कहा है कि ऐतिहासिक धीर मौपौलिक कारणों से पहले बंधन धीर इनके

चाय महाराष्ट्र और गुजरात में पश्चिम से आयी हुई जाति को ग्रहण किया और कुछ आगे निकल गये। द्वितीय-प्रान्तों में राजनीतिक जाति देर में हुई और भाषा-मेघ के कारण हम दूसरे प्रान्तों की जाति से जल्द छायवा नहीं उठा सके लेकिन अगर हम उलटी नहीं कर रहे हैं, तो भारत की जो भाषाएँ उन्नत समझी जाती हैं वह भी उत्तर की उत्पन्न भाषाओं की तुलना में नगदय हैं। इसका मुख्य कारण धनर यह है कि देश की सारी प्रतिभा अंग्रेजी का अध्ययन करने में लगी होती रही और जिनके कर्णों पर उन्नत को आगे बढ़ाने का भार था वे अपनी भाषाओं को ही समझकर उसकी ओर से उदासीन हो गये और आज भी अंग्रेजी के प्रति हमारा मोह अत्यन्त ही कम नहीं है, तो दूसरा कारण यह भी था कि प्रांतीय भाषाओं में आदान-प्रदान का काम बंद-सा हो गया और उन्नत का साहित्य मात्रा अल्प-अल्प कोठरियों में बंद होकर मुक्त वायु और प्रकाश न पाने के कारण दुर्बल और निर्जीव और निस्तेज होता चला गया। अतएव—

‘हम इस अनुभव से लाभ उठाना चाहिए और देश की सब भाषाओं में किसी तरह का संबंध बना करना चाहिए। उनके साहित्यकारों की एक संस्था बने जिसकी बैठक कभी-कभी हुआ करे। इससे बचाव मुकामसे और ड्रेप के आस का मेस बनना और हमारा साहित्य एक दूसरे की तरफकी में गहर कर सकेगा। विचार-आदान देना नर में तेजी से फैलेगी और हमारी एकता बनेगी। मैंने सुना है कि इसके धारन करने का कुछ प्रयत्न हो रहा है लेकिन उसके बारे में मुझे कुछ ब्यापार मानुम नहीं है। मैं आशा करता हूँ ऐसा भारतीय साहित्य-संघ भारत की सब भाषाओं की बाबत करेगा। हिन्दी और उर्दू तो बहनें नहीं हैं, एक ही तरीर पर दो खेदरे हैं। उनका तो हमें करीब से करीब संबंध करना है। बंगला मराठी और गुजराती हिन्दी की छोटी बहनें हैं बल्कि की भाषाएँ हमारे देश में सबसे पुरानी हैं। इनके अभाव और भी भारत की छोटी और बड़ी भाषाओं को उस संस्था में लेना चाहिए। मैं तो यह भी सिफारिस करूँगा कि अंग्रेजी की भी उस में जगह हो। हमारी भाषा वह नहीं है लेकिन फिर भी देश के जीवन में उसका बड़ा हिस्सा है। वह एक तरह की सौतेली भाषा हो गयी है।

हमारा अभाव है कि अंग्रेजी भाषा वर्तमान परिस्थिति में इतनी जाबिमी हो गयी है कि उसे किसी सब या संस्था की मरब की जरूरत नहीं रही। वह सौतेली भाषा नहीं बल्कि प्यारी भाषा है, और भारत की अन्य सभी भाषाएँ उसकी बया की मिथारिखी बनी हुई हैं। हमारे सिद्धित बम की यह हासत हो गयी है कि उनमें से अधिकांश अपनी मातृ-भाषा में एक साक्षर भी शुद्ध नहीं मिल सकते। कुल तो यह है कि जो हमारा नेता कहलाते हैं उनमें से अधिकांश अपनी मातृ-भाषा से अनभिज्ञ हैं और जिन समाज के नेता जनता से इतनी दूर हट गये हों कि उनमें भाषा का संबंध भी न हो उस समाज की बसा जो हो रही है, वह हम अपनी आँकों देख रहे हैं। और तो और, हम अपनी इस अयोग्यता और अनभिज्ञता पर लज्जित भी नहीं होते कि आगे के लिए कुछ धारा बंधे।

हम स्पष्टबार्दिता के अभिमान में बेजटके कहते हैं—हमें तो अंग्रेजी सिखने और बोलने में क्याया सुविधा होती है ।

आगे चलकर मेहरू जी ने हिन्दी के राष्ट्रभाषा होने और मराठी बंगमा पुजराठी युष्मुखी आदि के हिन्दी-लिपि में लिखे जाने के विषय में बड़ी विचार प्रकृत किये हैं जिन पर हिन्दी-प्रचार आयोग का चयन रखा है । उसके बाद आप कहते हैं—

‘दूसरा सवाल यह है कि हमारे साहित्यकारों को दुनिया के साहित्यकारों में सम्मान देना चाहिए और अंतर्राष्ट्रीय साहित्य-सभों में शरीक होना चाहिए । इसके बिना हम दुनिया के अग्रगण्य देशों में नहीं हो सकते । हमको यह मानना होगा कि इस नवयुग में नये विचार योरोप और अमेरिका में धारण हो रहे हैं । उनके बिना हम अज्ञान की दुनिया का सामना नहीं कर सकते । पछुनी बात जो यह नवयुग सिखाता है वह यह है कि संसार एक है, उसके अलग-अलग टुकड़े हम नहीं कर सकते और जो अलग होना चाहते हैं वे पीछे पड़ जाते हैं ।

यह कथन अचरित सत्य है । अन्तिम अंतर्राष्ट्रीय सभों में शामिल होने के लिए भी हमें एक राष्ट्रभाषा की जरूरत पनी होगी । हम प्रांतीय भाषाओं के दम पर अंतर्राष्ट्रीय स्तर में नहीं आ सकते । यह स्वप्न देखना कि भारत की सभी प्रांतीय भाषाएँ संसार की अनुभूत भाषाओं के बराबर हो सकती हैं भूल है । एक राष्ट्र एक ही भाषा को लेकर अंतर्राष्ट्रीय सभों के सामने खड़ा हो सकता है । ही प्रांतीय साहित्य के कुछ अग्रणी अनुवाद संसार के सम्मले रखे जा सकते हैं पर यह तो बीसा ही होना जैसे कोई भारतीय अंग्रेजी के अर्थ पहनकर किसी समाज में बैठने का साहस करे । उन अनुवाद से जो सम्मान मिलेगा वह व्यक्ति का सम्मान होगा । और पुस्तक की मूल भाषा का संसार की दृष्टि में कोई गौरव न होगा । आज बसो और स्वीडिश और डैच भाषाओं का जो अंतर्राष्ट्रीय सम्मान है, वह इसलिए नहीं कि उनका अंग्रेजी अनुवाद छप बने बल्कि इसलिए कि वे अपनी मूल भाषा में पढ़ी गयीं और पसंद की गयीं । अब उनकी क्वालिटी हुई तो अंग्रेजी और जर्मन और डैच अनुवाद होने लग । अगर हम संसार-साहित्य में बड़े स्थान प्राप्त करना चाहते हैं, तो हम अपनी राष्ट्रभाषा बनायी होगी और उसी के आधार पर संसार-साहित्य-समाज में भाग लेना पड़ेगा । यह बात तो जो भी जान सकती है कि किसी समय संसार में पेंसीस करोड़ भारतीयों की एक भाषा का संसार में प्रचार हो जाय । लेकिन यह असंभव है कि भारत की मुख्य बाराह भाषाएँ भी किसी समय संसार की प्रौढ भाषाओं से अचरित का स्थान प्राप्त कर लें ।

लेख के अन्तिम भाग में मेहरू जी ने हमें संसार को अन्वय उन्नत भाषाएँ सोलने का आदेश देते हुए कहा है—

हम में न काठे लोगों को बिदारी भाषाएँ भी गीबनी चाहिए । बड़े हमारे लिए दुनिया को देखने की सिद्धिकिया जागो जिनके अन्वये रूप और ठानी हवा धायेगी ।

संप्रेषणी तो हम में से बहुत लोग जानते हैं। इससे हम फायदा उठावेंगे क्योंकि इस भाषा कम फैलाव बढ़ता जाता है। लेकिन संघर्षी काफ़ी नहीं है, और सिर्फ़ संघर्षी जानने की वजह से हम अक्सर थोसा जा चुके हैं। हम सारी दुनिया को संघर्षी ऐन्को से देखने लगे हैं और यह नहीं महसूस करते कि वह एकतरफ़ी है। अथवा इफ़ूमत अ राजनैतिक मुद्दाबारा करते हुए भी हम विचारों में बहुत कुछ उनके गुनाम हो गये—अगर हम केंच या अमन या वही नितावें या अलवार पर्वें तो मानुम होता है कि दुनिया में कोई और भीतर भी है और अथवों का अरमें इतना बड़ा हिस्सा नहीं है, जितना हम समझते थे।

अगर भाषा स्वीकार करते हैं कि हमारे लिए वही ताबाद अ योरोप की अन्य भाषाएँ सीखना मुश्किल है, इसलिए भाषा कहते हैं—

‘यह उचित होता कि विदेशी भाषाओं में जो अग्रिम पुस्तकें हैं उनका अनुबाव हिन्दी में हो। यह मुझे बहुत आश्चर्यक मानुम होता है अगर हम दुनिया की विचार-बाराओं को समझना चाहते हैं।’

अभी हम संघर्षी से बिल पुस्तकों का अनुबाव करते हैं। उनका प्रचार बहुत कम होता है, क्योंकि ऐसी पुस्तकों को समझनेवाले अघितर संघर्षी पढे लोय ही हैं, और वह हिन्दी अनुबाव न पढ़कर मूल संघर्षी पुस्तक पढ़ना क्यावा पसन्द करते हैं। पर योरोप की दूसरी भाषाओं के अनुबावों के विषय में यह बात न रखेयी क्योंकि उन्हें मूल में पढ़ना बिले-बिलाने धान्तियों के लिए ही शुभम होगा।

हम धाता करते हैं कि हमारे पाठक इस प्रश्न पर विचार करी और वह समझन में बिलको ज्ञम है कि हिन्दी के राष्ट्रभाषा होन से प्रांतीय भाषाओं को हानि पहुँचेगी। प्रांतीय भाषाओं और हिन्दी के सम्बन्ध का वास्तविक रूप समझो। यह काम भारतीय साहित्य-संघ का होगा कि वह निश्चय करे कि प्रांतीय भाषाओं की कौन कौन सी पुस्तकें हिन्दी में लायी जायें और उन्हें किस तरह संसार-साहित्य के सामन रक्खा जाय। हिन्दी को कोई अलग भाषा समझ कर उससे उदासीन हो जाना प्रांतीय भाषा और साहित्य के लिए साम-अद तो न होगा ही राष्ट्र-साहित्य के लिए हानिकर अलवता हो कामना।

नवम्बर १९३५

राष्ट्रभाषा कैसे समृद्ध हो

हमें यह देखकर हप होता है कि राष्ट्र-भाषा से हमारे नेताओं की दिलचस्पी बढ़ी या रही है। अज्ञान में हिन्दी प्रचार लप्ताह क संबंध में अलग मीलवी अमान अहमद भी सी बाई चित्तमंशि और अन्य महानुमाना ने जो भाषण किये अरमें राष्ट्रभाषा की अरति और प्रचार से पैदा होनेवाली सांस्कृतिक एकता का महत्व सभी ने स्वीकार किया। अगर राष्ट्रपति भी राजेन्द्रप्रसाद ने इस प्रश्न को दूसरी ही दृष्टि से देखा।

मानने बहिष्कार की एक सभा में भाषण देते हुए कहा कि राजभाषा प्रचार से ही समृद्ध होती। अब वह मित्र-मित्र प्रार्थों में व्यवहार में आने लगेगी तब उसमें नये-नये शब्द और मुहावरे बहिष्कार होंगे और उसका संसार दिन-दिन बढ़ता जाएगा। हम उस भाषण का एक अंश यहाँ मद्रक करते हैं—

My point of view is that Hindi authors and readers should be requested to give up their horror of un-Hindi idioms and uses. The desire must be to absorb as many varieties of expression as are available to them. Some of the articles appearing in this magazine, by their very nature, are untranslatable in Hindi except by a use of the local idioms. In such articles such idioms have been retained with a view to make the language more effective. Hindi readers must develop catholicity of taste and an anxiety to secure enrichment of expression by an absorption of expressive idioms of other provinces.

[मेरे विचार में हिन्दी लेखकों और पाठकों में यह निवेदन करना चाहिए कि वे हिन्दी मुहावरों और उनके व्यवहारों पर घाटी पीटना छोड़ दें। उनकी इच्छा यह होनी चाहिए कि अविश्वसिक के विपरीत विभिन्न रूप मिल सकें उन्हें ग्रहण करें। इस मस्यौदा के कई लेख कुछ इस ढंग के हैं कि उनका हिन्दी में अनुवाद होना कठिन है। इनके बिना कि स्पानीश मुहावरों का व्यवहार किया जाय। ऐसे लेखों में वह मुहावरे जो के लिये रखे गये हैं जिसमें भाषा बसाया सजीव हो जाय। हिन्दी पाठकों का अपनी दृष्टि में उदात्ता जानी चाहिए, और उन्हें यह धारणा होनी चाहिए कि अन्य प्रांतों के अग्रपूर्ण मुहावरों से अपनी भाषा को समृद्ध बनायें।]

सजीव भाषाएँ हमेशा दूसरी भाषाओं से अपना कोष बढ़ती रहती हैं। हमारे देश-देश-देशों हिन्दी में हजारों अंग्रेजी शब्द और मुहावरों का मिलना आ रहा है। अब अंग्रेजी भाषा सार्वभौमिक होने के कारण विश्वव्यापी से बढ़ रही है। मसाल की ऐसी कोई भाषा नहीं जिससे अंग्रेजी में अपना संसार न गया हो। आज कोई अंग्रेज लेखक अंग्रेज जीवन के दृश्य दिखाता चाहे तो उसे उपयुक्त शब्दों की कमी न होगी। मसौदा और अंग्रेजी अंग्रेज और अंग्रेजी सभी से अंग्रेजी का सम्पर्क है और उन देशों का अत्यन्त मिलते सज्ज अंग्रेज लेखकों को बहानों के अर्थों और मुहावरों से काम लेना पड़ता है। इस प्रकार द्वारा अंग्रेजी भाषा दिन-दिन अत्यन्त होती जाती है। हिन्दी का अंग्रेज भाषा की अन्य भाषाओं से बढ़ा है लेकिन अब वह राष्ट्रभाषा बन रही है तो उसे सभी प्रांतीय भाषाओं में अंग्रेज लेखनी पड़ेगी। ही हमका ध्यान रखना पड़ेगा कि अपनी कोष बढ़ाने को मुग में वह अपना रूप ही न लो बैठे। अंग्रेजों में जिस हिन्दुस्तानी भाषा का व्यवहार होता है वह हिन्दुस्तानी का विकास हुआ कर है, और हम उसे हिन्दुस्तानी न कह कर अंग्रेजी कहने के लिए मजबूर हैं। अंग्रेज हिन्दी की भी बही गति

हुई, ता बड़ रचिबनी हिन्दी हो जायगी । हिन्दी के मौखिक रूप हो जायम रहते हुए हम उसे बितना समझ बना सकें उतना ही अच्छा । जिस हिन्दी का बम्बई और पूना और मैसूर और मद्रास जाका या जकीसा म ग्रहिन्दी भाषी बनता द्वारा व्यवहार होता है, अगर कहीं वही हिन्दी मिलने में भी जाने सगी तो हिन्दी का अस्त ही हो जायगा । जिस तरह मिस्र-मिस्र देशों में व्यवहार होने पर भी अंग्रेजी की एक गर्भाश ॥ जिससे कोई बाहर जाने का साहस नहीं कर सकता उसी तरह हिन्दी की भी एक गर्भाश है और उसका चाहे कितना ही विस्तार हो उसकी इस गर्भाश को रखा होनी आवश्यक है ।

नवम्बर १९३५

त्रिवेणी' से हमारा नम्र निवेदन

मद्रास से निकलनेवाली अंग्रेजी सहयोगिनी 'त्रिवेणी' ने भारतीय साहित्य-संरक्षण की हमारी आयोजना और 'हंस' का स्वागत करते हुए एक छोट-सा नोट लिखा है, जिसे हम नीचे* दे रहे हैं । हमारी सहयोगिनी ने भी यदि से ही भारत की सांस्कृतिक एकता

* A COMMONWEALTH OF LITERATURES

We welcome the efforts that are being made by Mr E. M. Munsh to give an all-India status to our provincial literatures. 'Hansa', the Hindi magazine till now conducted by Sri Prenchaudji will hereafter be edited conjointly by Sjis. Munsh and Prench noj. It will publish articles about the different literatures with personl sketches of writers and poets, and translations into Hindi of the more valuable literary pieces. Triveni has similar aims, and since 1928 it has bestowed a great deal of attention on the literary and cultural movements Andhra, Maharashtra, Karnataka, and other linguistic units of India. In fact, this has been a prominent feature of Triveni, and it is not quite accurate today to say that we know the latest literary and cultural activity in England, but not that of our neighbouring province.

While we readily recognise that it is useful to conduct a magazine in Hindi for the benefit of all Indian provinces, we believe that it is not less important that Indian literature should keep in touch with the literature of the world by the publication of articles on the Indian literatures and translations of poems, plays and stories, in an international language like English. There are many ways in which Triveni and Hansa can co-operate with advantage. There is however a wide spread feeling in South India that, in their zeal for the propagation of Hindi, the precharaks are making exaggerated claims on its behalf and referring

का धारण अपने सामने रक्ता है और बड़ी योग्यता के साथ उसका पालन किया है 'हंस' का उद्देश्य भी यही है। ध्यान रखना इतना ही है कि जहाँ विदेशी भाषायाँ संस्कृति और साहित्य को धरोहर के माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में ले जाना चाहती हैं वहाँ हम भारत के विभिन्न साहित्यों में धारणता पैदा करके और सांस्कृतिक क्षेत्रों को मिश्रित राष्ट्रीय संस्कृति और साहित्य का रूप गिराने का प्रयत्न करें। हमारा विचार है जब तक हमारा एक साहित्य न ही जाय और हमारी संस्कृति में एकता न ही आ जाय हम अपनी वर्तमान दशा में अपने देश को संकर अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में कोई सम्मान का स्थान नहीं पा सकते। जब तक हम साहित्य और संस्कृति में राष्ट्रीयता की भावना का स्थान नहीं पा सकते। जब तक हम साहित्य और संस्कृति में राष्ट्रीयता की भावना का स्थान नहीं पा सकते। जब तक हम साहित्य और संस्कृति में राष्ट्रीयता की भावना का स्थान नहीं पा सकते।

to the literatures in Kannada, Tamil or Telugu with consideration it is one thing to say that, as Hindi is spoken by the largest number of Indians, it might eventually serve as a medium of communication between province and province. It is altogether different to exalt it to the position of a national language and impose it on all provinces, to the detriment of the local language. We draw a distinction between a common language and a national language. There are several sub-nationalities in India, and to them their mother-tongue is the national language and also the prime vehicle of creative self-expression. Hindi is not inherently superior to Telugu or Bengali nor is its literature as rich and varied as theirs. We respectfully warn Mr. Muzibi against the subtle danger that lurks behind the Hindi movement. The Hanks may meet dear of it.

उन्हें अपने उद्देश्य की शक्ति में विश्वास न धार्येगा वे उनके लिए अपने समय और बुद्धि का बलिदान क्यों करेंगे। किसी नये मत की पीछा सेने के बाद हम में कुछ उद्दता भा ही जाती है। यह स्वाभाविक है। विद्वानों को इसे बालकों का उत्साह समझ लेना चाहिए। हिन्दी राष्ट्रभाषा बनने के लिए अक्षीर नहीं है। अगर कोई Common language और National language में मेद की कल्पना करके अपने मन को संतोष दे सकता है, तो हमें कोई आपत्ति नहीं। हम हिन्दुस्तानी को Common language ही बनाने के इच्छुक हैं और हमारा उद्देश्य कम यही है कि It might eventually serve as a Medium of Communication between provinces and province. हिन्दी इसलिए सामान्य भाषा नहीं स्वीकार की गयी है कि उनका साहित्य ऐतन्तु या बेगना या किन्हीं अन्य दरबानों साहित्यों से अछे है, बल्कि केवल इसलिए कि उसे व्यास से व्यास समझते और बोलते हैं और इसीलिए साहित्यिक एका प्राप्त् करने के लिए हमें हिन्दी माध्यम की जरूरत है। हमारी समझ में अब तक यह नहीं आया कि इस आन्दोलन से प्रांतीय भाषाओं या साहित्यों को हानि कैसे पहुँच सकती है। क्या यह किसी साहित्य के लिए हानि की बात है कि उसके पाठकों का लोभ बढ़े और उसे अन्य साहित्यों से परिचित होने का अवसर मिले? क्या यह ऐतन्तु या तामिन के कवियों और धुमेककों के लिए हानि की बात है कि उनकी रचनाओं से एक प्राप्त् के बजाय समुच्च राष्ट्र फलना उठये या उनके पाठकों के लिए यह अनिष्ट की बात है कि अन्य साहित्यों की कमल कृतियों से आनन्द उठाने का उन्हें अवसर मिले? अंग्रेजी और अंग्रेजी साहित्य-द्वारा हमें संसार के सभी साहित्यों से परिचय मिलता है—क्या यह हमारे लिए हानि की बात है? अगर यह हानि की बात नहीं तो क्या भारत के अन्य साहित्यों से परिचित होना ही हानिप्रद है, या केवल इसलिए हानिप्रद है कि यह अंग्रेजी द्वारा न हानि हिन्दी बँधी गरीब भाषा द्वारा होता है? अगर नहीं उद्योग अंग्रेजी द्वारा तो क्या हमारी सहयोगिनी के लिए अधिक संतोष की बात होती? क्या और किसी भाषा के जरिये यह साहित्यिक एका लानी जा सकती है? अगर नहीं तो हिन्दी वह उद्योग करके कोई बहुत बड़ा अघराव कर रही है? अंतर्राष्ट्रीय व्यवहार के लिए हमें अंग्रेजी अवश्य पढ़ना चाहिए, प्रांतीय व्यवहार के लिए मातृ-भाषा ही मगर राष्ट्रीय व्यवहार के लिए अब हमारे लिए हिन्दी सीखना लाजिम हो गया है। अभी हम हिन्दी की अक-हेमता कर सकते हैं मगर आपद एक समय यह धार्येगा अब उसकी अवहेलना न की जा सकेगी।

नवम्बर १९३५

पटना का हिन्दी-साहित्य परिषद्

२१ २२ सितम्बर को पटना ने अपने साहित्य परिषद् का कई बरसों के बाद मानेवासा कार्यक्रमोत्सव बड़ी बुगधाम से मनाया। हिन्दी के शब्द-बाहुगर श्री भाबनमान श्री चतुर्वेदी समापति से धीरे साहित्यकारों का सम्बन्ध बनबट बा। हम तो अपने बुगधाम से उसमें सम्मिलित होने का बीरब न पा सक। सुझार की सभ्या समय से ही हमें प्यर हो घाया धीर बहु सीमवार को उतरा। हम छटपटाकर रह गये। उमिबार को भी हम यही धारा करते रहे कि धाम प्यर उतर जायगा धीर हम जैसे बायेंने सक्रिम प्यर ने उस बल्ल यभा छोड़ा जब परिषद् का उत्सव समाप्त हो चुका बा। पटने बाकर काट पर सोने से कसठी में काट पर पड़े रहना प्यरा सुबब बा। धीर में भी कीमारी के समय बाड़े बहु हुसकी ही क्यों न हो बुबुओं के मतनुसार धीर घमशास्त्रियों के भाबेगानुमार कारी क सवीप ही रहना प्यरा कस्यासकारी होता है—सीकिक धीर पारसीकिक दोनों दुलियों से। अतएव हमें धारा है कि हमारे साकिसिक बन्धुओं न हमारी पैरुहाकिकी मुधाक कर ही होवी। इस प्यर ने ऐसा सम्बन्ध बनसर हमसे धीन लिया इसपत्र बयसा हम उससे अबरय लेंगे बाड़े हम अहिंसा नीति ठोड़नी क्यों न पड़े। समापति का भी भापण धपकर बासी भास के रूप में मिला है, बहु पम-पर्म किन्तुता स्वारिष्ट होगा—यह सोचता हूँ तो यही भी बाहता है कि प्यर महोदय कही फिर विरें सेकिन उतना कही पता भी नहीं। इस मापण में धीन है बाबरा है मना न निदरन है धीर साकिसिकेविया के लिए धार्कन है मगर धापने पूबजों का बोम्य मस्तक पर लाशन की ओ वल कही बहु हमारी समझ में नहीं बावी। हमारा प्यरन है कि हम पूबजों का बोम्य बहरत से प्यरा लाद हुए है धीर उसक बोम्य के नीचे बने जा रहे है। हम अतीत में उमने के इतने धारी हो गये है कि वतमान धीर अविप्य की बंध हम बिप्या ही नहीं रही। यारोप धीर परिचमी बग इवीसिए हमारी ज्येधा करता है कि बहु हम पाँच हजार साल पहले के अंतु समग्रता है, जिसके लिए अजायबवरों धीर पित्रराओं में ही स्वान है। बहु हमारे भोजपनों धीर ताप्लनेकों की साध-साबकर इसलिए नहीं से बाता कि बमसे ज्ञान का अजन कर, बलिक इसलिए कि उन्हें अपन संग्रहालयों में सुपुचित रखकर अपने विजय-गर्भ की तुष्टि दे। उसी तरह जैसे पुराने बमाने में विजय की मूट के साथ नर-नारियों की भी मूट होती थी धीर पुलुसों में उनका प्रदशन किया जाता बा। प्राचीन अगर हम शाबरा धीर भाग बैता है तो उसके साथ ही बकिपी धीर अन्धबिरबास भी बैता है। बुनाके धाम राम धीर कृष्ण रामसीसा धीर राससीसा की बस्तु बनकर रहे गये है धीर बुठ धीर महावीर ईरबर बना विये गये है। यह प्राचीन क्य भाग नहीं तो धीर क्या है कि धाम भी धार्कन प्राणी जिसमें धम्मे-धाम पड़े-मिबे धामिबों की सभ्या है गरियों में नशाकर अयगा मन सुख कर लिया करते है? प्राचीन उन रण्टों

घोर जातियों के लिए गव की बग्यु होगी घोर हानी चाहिए या अपने पूजकों के पुल्याह घोर उनको सामनाओं से घ्राह मात्तामास हो रहे हैं। जिन जाति को पूर्वजों से पराभव का प्रपमान घोर रक्तियों का तौल ही विरागत में मित्रा से प्राचीन के नाम को बने रोयें। ऐसे घटन को क्या हम लेकर चार्ते जिसने हमारे पूर्वजों को इतना अकम्पद बना दिया कि ब्रह्म बलिपार मिलजी ने बिहार विजय किया तो पता चला कि तारा नगर घोर जिमा एक मित्रास बाधमालय का। बिडान् लोग मने सं राज्य का धाय्य पाते वे घोर अपनी कृटिया म बीटे हुए प्राचीन शास्त्रा म डूब रहते थे। उनके ईर्ष-गिह क्या हो रहा है, दुनिया किस गति से बड़ी जा रही है उन्हें इनकी खबर न थी। घोर शायद बलिपार उन बिडाना से मुकाहिय न होता घोर उनकी कृति क्यो की रयो बनी रहती तो व उसी तगमता सं अपने शास्त्र पर बल्ले घोर धाध्यात्मिक बिचारो के धानन मूठते रहते घोर अमर जीवन की शक्ति बापते बने जाते। उधर पश्चिम के जातिक ममत्र के तुलन का मुकाबला करके ससार विजय कर रहे व घोर हमारे बाबा-बाबा बडे मुक्ति का मार्ग दे रहे थे। पश्चिम म जिस वस्तु के लिए तपस्या की उसे वह वस्तु मिली। हमारे पूजकों ने जिस वस्तु की तपस्या की वह उन्हें मिली या मिलनी। जिसके लिए ससार मिथ्या हो घोर शुद्ध का जग हा उनकी यति संसार उपखा करे तो उन्हें शिकायत का क्या मौका है। हम स्वय की योग से निश्चित रहना चाहिए। वह हम मिनेगा घोर उबर मिनेया। कतुबेटी की के शब्दो म 'ग्रन्थो के बन्धनों के घासी हम स्वामी नाम के कवन में की मुक्ति का नील हूँहने के बजाय बेहाल का बग्यन इतिम मये। घोर क्यो न हूँहते? बन्धनों के निवा घोर ग्रन्थों के निवा हमारे वाम घोर क्या वा। पंडित लोग पउते ये घोर मोडा लोग मकते ये घोर एक-दुसरे की बेइज्जती करने ये घोर मशाई से कुरतव मिलती की तो व्यभिचार करतें ये। यह हमारी ब्यावहारिक संस्कृति थी। पुनकों में वह जितनी ही ऊँची घोर पवित्र थी अजहारा में उतनी ही निम्न घोर निम्न।

माये अतद्धर समापति की ने हमारी अतमान नाहितिक मनावृति का जो चित्र खीचा है उनका एक-एक अक्षर मयाव है—

हम धामी हम धायन को क्या करें? यदि किसी के पास सुनता है तो तुरन्त माल सता है घोर उन ग्रन्थ का पेट में सेहर कर बाहर धाता है घोर अपनी नाहितिक पीपी को उन निम्न निधि की गैरात बाँटा है। मसार के नाथों का मैं जिना प्रनाख मरस विरवासी प्रता है घोर यह चाहता है कि मये ही तरह मरा पाउन भी मेरी लोक-निम्न पर विरवाव करे, किन्तु यदि किसी के मुण्ड किसी की मोतिबता किसी की उन्नता की कर्षा मुगता है तब मैं उनके लिए प्रयास बगुन करने के इच्छा सेना चाहता है।

घोर भा-उ के धर्मिय शास्य तो बडे ही ममस्पर्शी है—

'हम बडे हा या घोर' हमने मर-मर घोर व्यक्ति-व्यक्ति में मरने का दर बोया

है। हमारे लिए मार बालमा ही गुनाह नहीं मर जाना गुनाह हो गया है—प्रायः के साहित्यिक चिन्तक पर जिम्मेवारी है कि यह पुस्तक को दोनों हाथों में लेकर बीने का खतरा धीरे मरने का स्वाद अपनी पीढी में बोये। यह पुस्तक शस्त्रधारों से नहीं हो सकता यह दो क्रम के धर्मियों ही के करने का काम है।

अक्टूबर १९३५

हिन्दी-साहित्य के विद्यालय

दो साल पहले हिन्दी साहित्य के इच्छुकों के लिए पढ़ाई की व्यवस्था केवल नाम की थी। बिहार के विद्यालयों में लोग बैठते थे मगर कुछ घर पर पढ़कर। प्रयाग का हिन्दी विद्यापीठ काशी का भगवानवीर साहित्य विद्यालय और सिरसा का हिन्दी विद्यालय मयासाम्य साहित्य की शिक्षा देते थे मगर धन की कमी और शिक्षकों के अभाव के कारण वे बहुत थोड़े-थोड़े छात्रों को लेते थे। न पढ़ाई ही नियमित रूप से होती थी न वे छात्रों के रखने का कोई इन्तजाम कर सकते थे। इसलिए बाहर के छात्रों और छात्रों के बच्चों को यही मुश्किल का सामना करना पड़ता था बेचारे इतनी दूर की यात्रा करने पड़ते थे और यहाँ कोई सुविधा न पाकर निरुत्साहित हो जाते थे। इस की बात है कि साहित्य-प्रेमियों के उद्योग से इधर दो साहित्य-विद्यालय खुल गये हैं, जिन्होंने साहित्य को ही अपना मुख्य धर्म बना लिया है। उनमें एक है बिहार प्रान्त का 'बेबनर साहित्य-विद्यालय' और दूसरा गोरखपुर का 'खोपापुर हिन्दी-साहित्य विद्यालय'। बेबनर का दूसरा नाम 'विद्यालय' है, जो ठीकस्थान भी है और अच्छी बतवावु के लिए भी प्रसिद्ध है। यहाँ हिन्दी साहित्य सम्मेलन की परीक्षाओं की पढ़ाई का अच्छा प्रयत्न है। उसके साथ अंग्रेजी संस्कृत शिक्षा प्रादि की शिक्षा भी की व्यवस्था की गयी है। एक छात्रवास भी है, जहाँ केवल पाँच रुपये महीने में छात्रों को अच्छा भोजन मिल सकता है। व्यायाम के लिए भी इन्तजाम किया गया है। इस विद्यालय के संस्थापक कानूनी के उत्साही मन्थन श्रीमन् मदनमोहन श्री कल्याण है। विद्यालय का प्रवक्ता योग्य व्यक्तियों के हाथ में है, जिनमें श्री अनारन भद्र 'टिब' एम ए और श्रीमन् मन्थन-नारायण सिंह 'सुभाशु' एम ए एल-एल बी के नाम से हिन्दी-संसार परिचित हैं। हमें यह जानकर विशेष गर्व है कि विद्यालय में छात्रों को लेखन और सम्पादन काम की शिक्षा भी दी जाती है।

खोपापुर साहित्य-विद्यालय की खुले केवल तीन साल हुए। यहाँ भी हिन्दी-विशेष-योग्यता और बिहार परीक्षाओं की शिक्षा दी जाती है। इस रूप में प्रायः प्रायः उत्कल महाराष्ट्र, गुजरात और पंजाब प्रादि अहिन्दी प्रान्तों के पच्छीम भागों को

साधुवृत्ति देकर शिखा देने की व्यवस्था की जा रही है। साथ ही यह प्रबन्ध भी किया जा रहा है कि ग्रिबी के साथ देश की दो अन्य प्रांतीय भाषाएँ भी सिखायी जायें। विद्यालय के छात्रासकों ने यह प्रबन्ध करके अपनी उदारता का परिचय दिया है, क्योंकि सांस्कृतिक विकास के लिए हमें बुराई को अपनी भाषा देना ही नहीं है। उनसे सेना भी है। तभी दान-प्रतिदान स्थायी हो सकेगा। जिन सम्जनों को कुछ पूछना हो हिन्दी साहित्य विद्यालय खोपापुर, पो देहीवा (योरकार) के पते से पत्र-व्यवहार करें।

अप्रैल १९३६

भारतीय साहित्य परिषद्

हम पिछले वर्षों में एक अखिल-भारतीय-साहित्य परिषद् की बहुरत पर अपने विचार लिख चुके हैं। हमें यह है कि महाराष्ट्र और गुजरात के साहित्य-परिषदों ने भी इसकी बहुरत उत्तीम की है और उसको कार्यरूप में लाने का आन्दोलन कर रहे हैं। भाषाएँ तो हर एक प्रांत की धनग-धनग हैं मगर सभी भाषाओं में सांस्कृतिक एकता मौजूद है और साहित्य की प्रेरणाएँ भी सभी भारतीय साहित्यों में प्रायः एक-सी हैं। प्राचीन और मध्यकालीन साहित्य सभी भाषाओं में या तो मूलप्रधान है या श्रुत्यार प्रधान मगर नये साहित्य ने मिश्र-मिश्र प्रांतों में धनग-धनग प्रवृत्तियों को विकसित किया है। धन का जीवन बितना बटित हो गया है और उस पर नित्य नये विचारों नये बातों नये दृष्टिकोणों का बिस तरह असर पड़ता रहता है, उसी तरह तवीन साहित्य भी जो उसी उद्यम से निकलता है विषय प्रवृत्तियों धाराओं और विचारों में इतना बहुरपी है कि प्रांतीय साहित्यों में मौलिक एकता होने पर भी अलग-अलग धाराएँ साक नजर आती हैं। अब समय आ गया है कि उन धाराओं का समन्वय किया जाय। पुराने जमाने में साहित्यकार केवल समाज का एक भूषण मात्र होता था उसका सचासन और मोह करते थे मगर नये जमाने का साहित्यकार इतना संतोपी नहीं है। वह समाज के परिष्कार में दखल देना चाहता है। राजनीतिज्ञों की गतिधियों को सुधारना चाहता है जो काम व्यवस्थापक लोग कालून और बरक-निधान से करना चाहते हैं वही काम वह धात्मा को बनाकर धान्तरिक धावेतों से पूरा करन का इच्छुक होता है। समाज में उसने अपना एक स्थान बना लिया है, और धन कोई उन्नत राज उसकी धरहेलना नहीं कर सकता। इसलिए यह बहुरी है कि भारत की सभी भाषाओं के साहित्यकारों का ऐसा परिषद् हो जिसमें साहित्य और कला और संस्कृति की समस्यार्यों पर विचार किया जाय और सभी एक-बुरे के अनुभवों और सिधियों से फायदा उठावें और जो करम उठावें वह व्यवसिधत रूप से। कितने ही ऐसे पेशिषा सामाजिक और बीडिक प्ररग हैं, जिन पर विचार-विनिमय

क्रिये और हम कोई राय कायम करने में अक्षम हो रहे हैं। प्रांतीय परिषदों में परस्पर कोई धारान-प्रदान न होने के कारण वे एक दूसरे की प्रगति से विभक्त बेचकर हैं। एक ही काम को समय-समय स्वतन्त्र रूप से करने से मन और धम की बिलनी चलि होती है, क्या वह समय-समय से कम नहीं की जा सकती? साहित्य अब केवल अस्ति और शून्य नहीं है। वह समाजशास्त्र भी है। धर्मशास्त्र भी है। अर्थशास्त्र भी है और सब कुछ है बिच पर राष्ट्रों का अस्तित्व टिकता है। ऐसे महत्व की वस्तु से हम इतने दिनों के लिए शक्ति रहे यह नहीं समझ में आता। भावा भेद ही हमका कारण था और अब भी है, लेकिन भेद के रहते हुए भी हम साहित्यिक संगठन को मुस्तभी न कर सकते। अतएव यह विचार किया गया था कि ३ और ४ अग्रेज का बधा में भारतीय साहित्यसेविता का परिषद् बनाया जाय और इस शुभकार्य का थीयच्छेद कर दिया जाय लेकिन कई कारणों से हम यह ठापीकें बचानी पड़ी और अब यह तय किया गया है कि नागपुर-साहित्य-सम्मेलन के अखतर पर २३-२४ अग्रेज की भारतीय परिषद् की बैठक भी हो। अब साहित्य सेवियों की अन्तराष्ट्रीय सभाएँ समय-समय पर होती रहती हैं तो एक ही राष्ट्र के प्रांतीय साहित्यकार एक-दूसरे से बेगाना बने रहें, एक-दूसरे से प्रकाश पाने की कोशिश न करें और साहित्य की प्रगति का उचित निष्पन्न न करें यह तो जीवन के लक्ष्य नहीं। हम मानता हैं इस अखतर पर सभी प्रांतों के महारथी माने का कष्ट करें। साहित्य-सम्मेलन क्या अभी तक यह कैलास नहीं कर पाया कि इस परिषद् की व्यवस्था करना उसका कर्तव्य है?

अग्रेज १६३६

प्रगतिशील लेखक-संघ

The Indian Progressive Writers Association पर हम किसी विद्यसी सख्या में आलोचना कर चुके हैं। हमने इस सब के अहंकार और कार्य-क्रम का भी उल्लेख किया था। हमें हय है कि संघ न अस्तित्व के साथ काम शुरू कर दिया है। उतका मुख्य कार्यक्रम प्रयाग में है। अमीरगढ़ लाहौर देहली अमृतसर लखनऊ आदि स्थानों में उसकी शाखाएँ खुल गयी हैं। इसाहाबाद में तो वह एक अमीर साहित्यिक संस्था का रूप धारण करती जाती है। सैसा इसके नाम से आहिर है। संघ उन साहित्य और कला-प्रगति का पोषक है जो समाज में आनुति और स्फूर्ति लावे जो जीवन की यथार्थ सम्स्याओं पर प्रकाश डाले। संघ न लखनऊ में १० अग्रेज की अथवा सामान्य अस्ता करना निरक्षय किया है। जिन अग्रेजों को संघ के अहंकारों से हनकारी हो वह भीषुद् इस एस अहिर, १८ कैलिब रोड इसाहाबाद से पत्र-व्यवहार करें।

अग्रेज १६३६

हिन्दी लेखक संघ का एक वर्ष

हिन्दी लेखक संघ के जीवन का एक वर्ष पूरा हो गया। उसके मुखपत्र 'लेखक' के जीवन के भी छह महीने समाप्त हुए और अब समय था मया है कि हम उसके कार्य की आलोचना करें। लेखक-संघ की हिन्दी में जल्द ही इसमें तो शायद अब किसी को संदेह न हो। उसके उद्देश्य ठीके हैं। काम-क्षेत्र विस्तृत है और इतने छोटे समय में उसने जो कुछ किया है, उस पर उसके इमे-गिने काबकर्ताओं को हम बधाई दे सकते हैं। अभी तक उसकी शक्ति केवल संगठन और 'लेखक' के प्रकाशन की धोर ही रही है। उसके साहित्यिक और सांस्कृतिक ग्रंथ की धोर बहुत कम ध्यान दिया गया है। सदस्यों की हजे करूत है, मगर यदि हरेक पाठक 'लेखक' का प्राहक बनकर लेखक-संघ में प्रविष्ट हो जाय तो संघ में और आभारख पत्रों में अंतर ही क्या रहता है। अब तो केवल लेखकों की संस्था होगी चाहिए और उसके पास ऐसे साधन होने चाहिए, जिनसे वह लेखकों में आत्मान-अदान का साहित्य और संस्कृति की समस्याओं पर प्रकाश डालने का लेखकों में परस्पर मंत्री और सम्मान पैदा करने का उद्योग कर सके। इन कामों के लिए अब और योग्य व्यक्तियों के सहयोग दोनों ही की जरूरत है। संघ के पास कानी कौड़ी भी नहीं। नेम्बरों से जो चन्दा मिलता है, वह 'लेखक' के प्रकाशन के लिए भी काफी नहीं होता। यही कारण है कि संघ के कार्यकर्ताओं की धारी शक्ति अपनी हस्ती बनाने रखने में ही खर्च हा रही है। 'लेखक' के गत छह संकों को देखकर हम यह कह सकते हैं कि उसने अभी लेखकों को बहुत उपयोगी सामग्री दी है। प्रत्येक संख्या में ऐसी घनक बातें रूठी हैं जो लेखकों के लिए जरूरी हैं और सम्पादकों ने उसे उपयोगी बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ी। जो कमी लगती है, वह यह है कि उसका आलोचनात्मक ग्रंथ बहुत कमजोर है। हासकि इस पत्र में उस पर आस जोर दिया जाता चाहिए। संघ के सदस्यों में आलोचकों की कमी नहीं है। ऐसा प्रयत्न होना चाहिए कि सब आलोचकों की एक मोट्टी बनाकर अपने-बानी पुस्तकों पर उनकी निष्पक्ष सम्मति प्रकाशित किया करे। इससे लेखकों का हित भी होगा और साहित्य का भी। हम 'हंस' के पाठकों से अनुरोध करते हैं कि वे 'लेखक' के प्राहक बनें। जो मुक्त है वह सीलने के लिए बनें जो बयोवृद्ध है वे सिद्धांत के लिए बनें। उनकी विम्भकारी धपनी कृपियाँ रखकर ही नहीं मयाप्त हो पाती बल्कि आने-बानों का मार्ग प्रयत्न का भार भी उन्हीं पर है।

दिसम्बर, १९३५

पुस्तकालय आन्दोलन

हाल में कलकत्ते में पुस्तकालयों को संरक्षित करने और भारत में एक पुस्तकालय मंत्र स्थापित करने के विचार से एक असरा हुआ है। पुस्तकालय का राष्ट्र के जीवन में क्या स्थान है, यह सिद्धने श्री सरकार नहीं। इतना ही कह देना काफी है कि वह विद्यालयों से नहीं महत्वपूरा है और उनसे नहीं कम आर्थ और उसके साथ ही नहीं बालन शील। अगर कोई इस बात की खोज करे कि अब तक विद्यालयों में क्या महापुरुष दिया कि या पुस्तकालयों में तो शायद बाकी पुस्तकालयों को के हाथ रहेगी। अब भी संसार के महान व्यक्तियों में अधिकतर नहीं है जिन्होंने पुस्तकालयों के विद्यालयों में शिक्षा पायी। भारत में पुस्तकालयों पर अभी तक बिल्कुल ध्यान नहीं दिया गया। हालीनों की प्रवृत्ति विद्यालयों ही को घोर रही है और इसका नतीजा यह है कि जनता में नये-नये विचारों के प्रचार के सबसे अच्छे साधन से हम वंचित रहे। सरकार ने न स्वाभाविक संस्थाओं में इस घोर अघतर होने की आवश्यकता समझी।

जेम्स जैसा नि भीच बिलसन ने पुस्तकालय सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए कहा—'पुस्तकों का एक स्थान पर संग्रह कर देना ही पुस्तकालय नहीं है। पुस्तकों स्वतः कुछ भी नहीं है। जब पुस्तकालय उन्हें चुनकर, उनका वर्गीकरण करके उन्हें प्राकृतिक रूप से प्रवर्तित करता है तभी पुस्तकालय का निर्माण होता है। यह बात इनारे पुस्तकालयों के अधिकारी अभी नहीं समझ सके हैं और इसीलिए समाज में पुस्तकालयों का भी स्थान होना चाहिए, वह उन्हें प्राप्त नहीं हुआ। अधिकतर पुस्तकालय तो अपना कर्तव्य नहीं समझते हैं कि पुस्तकों की रक्षा करते रहे और पुस्तकों को जहाँ तक हो सके कम हस्तु करें नहीं वे खराब हो जायेंगी। उन्नत देशों में पुस्तकालयों का पर अच्छे विद्वानों को दिया जाता है और इस पर को प्राप्त कर देना गौरव की बात है। भारत में इस पर के लिए कोई ऐत-नीय उपयुक्त समझ जाता है। वह पुस्तक-प्रेमियों को किसी तरह की सहाय नहीं दे सकता न अपने पर के महत्व को समझता है। क्या से क्या वह अपना कर्तव्य नहीं समझता है कि आप जो पुस्तक भी उसे निकलना दे। और जब तक इस पर पर सुयोग्य व्यक्तियों को न रखा जायना बोड़े-बहुत जो पुस्तकालय मौजूद है उनसे भी जनता को विशेष लाभ न होया। सम्मेलन के स्वागतार्थ्य के शर्तों में—

किन्तु शोक की बात है कि हमारे किन्ते बालक अध्यापकों के प्रापतिजनक दुर्भावहार के कारण पुस्तकों की धरणि के साथ विद्यालय से निकलते हैं। और परि विद्यालयों में हमें बोम्ब और प्रकाशनाय अध्यापकों की सरकार है, तो पुस्तकालयों में भी विचारशील और शिष्ट मनुष्यों की सरकार है, जिन्होंने बहुत कुछ पढ़ा हो जो पाठकों के

ससाहकार बन सकें किसी खास विषय पर बच्ची से बच्ची लिखावों का चुनाव कर सकें और पाठकों में स्वाभाव की प्रकृति को पुष्ट कर सकें ।

सितम्बर १९३३

परितोष

'हंस' के धारमकर्मिक लिखने के पहले सहयोगी 'भारत' ने हम के कायरताप्रा का परामर्श दिया था कि धारमकर्मिक लिखने से कोई फायदा न होया यह तो केवल धारमविज्ञान का एक बहाना है । मन् यह नहीं थे पर धार कुछ ऐसा ही था । दुर्भाग्यवश मैं धारमकर्म का बड़ा पक्षपाती हूँ और उसे साहित्य का बहुत्वपूर्ण अंग समझता हूँ । मैं बालता हूँ कि उनके इस परामर्श से विषय धारण की गण भी की मने खोस हुआ और मैं धारम भाव को कभी से लिखनेवाले पाश्चिक पक्ष 'जागरण' में एक छोटे से नोट में प्रकट किया । भारत के सम्पादक महोदय को मेरा यह लेख पढ़ कर धारम हुआ मगर उन्होंने उस लेख को धारमय होने हुए भी धारण ही उचित समझा । हूँ अपनी धारम-शुद्धि के लिए उस पर टिप्पिलियाँ भया दी । मैंने खाने में उस लेख को फिर देखा तो मुझे उसके लिखने का खेर हुआ । धारमवारी बुनिया में हम क्रिस्म के धारण होते रहते हैं । मुझे शुभव होने की कोई एनी सक्त बकरत न थी । 'भारत' को हमाय विचार नहीं पसन्द आता तो यह कोई ससाधारण बाल नहीं थी । किसी उद्योग को सभी पसन्द नहीं करते । दो-चार पसन्द करते हैं, दो-चार नापसन्द करते हैं । यह तो बुनिया का इस्तुर है सेमिल खेर भूल तो हो ही यथी धार पक्षताने से क्या हो सकता था । समझ या खेर, मुझने भूल हुई तो भारत ही इस काम करेया मगर 'जागरण' के तीसरे अंक में भारत के सम्पादक पं नन्दबुनारे बाबुपेयी ने मेरे उस लेख का जो उत्तर दिया है, उस पढ़कर मेरा यह खेर मिट गया । उन्होंने रोटे का जवान कतर से नहीं बमबोले से किया । इससे मुझे सच्चा परितोष हुआ । मुझे मामूम हुआ मैं ही शुभव होना नहीं जानता हम कला में मुझने कही धुरपर कलाविद् पड़े हुए हैं । बाबुपेयी भी करवाते हैं—

'प्रमथर को के उपम्यास उनकी प्रीपेयेयडा कृति के बारस कादी बन्नाम है और हिन्दी के बड़े से बड़े समीक्षक ने उनको सिक्कानत की है—'प्रमथ' के सभी समीक्षक बमते हैं कि उनका सबसे बड़ा दोष जो उनकी साहित्य-कला को कमयित करने में समथ हुआ है—यही प्रीपेयेयडा है ।

यह बमै हुए रिक्त के शब्द है जो सायद बहुत रिक्त से भरा बैठता था और हम धारम को बाहर भरपूर और से बाहर करना चाहता है । इसका क्या जवाब दिया जा

सकता है। सभी लेखक कोई न कोई प्रोपेगंडा करते हैं—सामाजिक, शैक्षिक या धार्मिक।
 प्रथम प्रोपेगंडा न हो तो सभार में साहित्य की उन्नति न रहे जो प्रोपेगंडा नहीं कर
 सकता वह विचाररहस्य है और उस काल में लेखकों का कोई धर्मिक नहीं। ये उस
 प्रोपेगंडा को नर्क से स्वीकार करता है। मेरा विरोध तो उस प्रोपेगंडा के धारण में है
 जो मान और धर्म कीति और धर्म-ग्राह के बस किया जाता है। जिस धारण में जीवन
 में एक बार भी किसी साहित्य सम्मेलन या सभा में शरीक होने का गुणाह न किया हो
 जो प्लेटफार्म को मूर्खी का लक्ष्य समझता हो उसे अपना विचार पीटनेवाला कहना
 स्वाभाविक नहीं है। यों तो यहाँ किसी धार्मिकता का भय नहीं जो धारण कोई करना चाहे,
 कर सकता है। बाजपेयी को ले मनोविज्ञान के विद्यार्थी की हितियत से मेरे उस लेख में
 मेरी प्रोपेगंडा बलि देकर संतोष प्राप्त किया यह मेरे लिए भी धान्य की बात है।
 एक इन्वैजिनिंग तो साबित हुआ गया। सब दूसरा इन्वैजिनिंग सुनिये। फर्क जुम काफ़ी
 लम्बी है—

‘भारत के सम्बन्ध में इतनी बुरी सम्प्रति पढ़कर हमें खोम किंचित नहीं हुआ
 (गलत खोम या धारणको इतना हुआ जिसकी मुझे स्वप्न में भी धारण नहीं की कम से
 कम इसी विचार से कि मैं धारण उन्नत में बहुत बढ़ा हूँ और मेरे सधिवाने में लेखक धारण
 मान लेते हैं) क्योंकि उनमें भी हम प्रसन्न भी की उपन्यास-कला का एक रहस्य ही
 देख पड़ा। उपन्यास लिखने का पुराना तरीका यह था कि एक पक्ष की परम शक्ति
 और और बरेख बनाकर दूसरे को हरा करके उसके विपरीत बना दिया जाय और
 उन्हीं दोनों विरोधी बलों के संघर्ष से कला का विकास होता रहे। यह बहुत पुराना ढर्रा
 था जिसमें मध्य की घोर में धार्मिक नैतिक उपन्यास का ढाँचा बढ़ा किया जाता था।

जिसे साधुनिक विचरित साहित्य एक नामाने से छोड़ चुका है।
 इमका अर्थ है कि ये उन्नी पुराने ढर्रे के दक्षिणमूर्खी ढंग की पुरानी सभार का
 खरीद बना हुआ है और ‘भारत’ के यशस्वी सम्पादक नये से नये ढंग के साहित्य के
 धारणकारी हैं—यूरोप के प्रस में उपन्यास-साहित्य की पुस्तकें निकलते ही उनके पास
 सभी जाती हैं और वह उनकी धारणकारक बुद्धि से पढ़ते हैं औरों को यह सीमाय
 नहीं मानी। इन्हीं बहुमता और धारण टूट पन की तो बरकत है कि धारण ‘भारत’ में
 ऐसे साहित्यिक लक्ष्य का प्रतिपादन करते हैं जिन्हें हम पुरानी सभार के फकीर समझ
 ही नहीं सकते—यही सोचकर चित्त की शान्त कर लेते तो कुछ होने की नीवत क्यों
 और महाभारत नाम से लेकर बीगबी नहीं एक बरकत बना जाता है और जब तक
 साहित्य की मूर्खी होती रहती यह संभव साहित्य का मुख्य धारण बना रहेगा। मानकी
 दुष्य नहीं बरमान करता और न साहित्य-लक्ष्य में परिवर्तन ही नक़्क़ा है। हाँ सतही
 धारणों से बढ़नेवालों का चाहे नये साहित्य में वह समय न नबर धारणें बरकत नये साहित्य

॥ विविध प्रसंग ॥

सेबी पुरानी परिपाटी का व्यवहार करते हुए भी नवीन आविष्कार का गौरव प्राप्त करने के लिए मोझे की टूटी जड़ी चिढ़ा करते हैं। धीरे धीरे ऊपर ही ऊपर तैरते हैं उन्हें ऐसा भ्रम हो जाय तो धारण्य नहीं। साहित्य का क्षेत्र है, सौन्दर्य की सृष्टि धीरे धीरे सौन्दर्य सम्बन्धवाचक है। सुन्दर की कल्पना ही बिना प्रयुक्त के नहीं हो सकती जैसे ही जैसे प्रकाश धारण्य के सम्बन्ध से ही व्यक्त हो सकता है। मैंने भी अपनी सभी रचनाओं में इस समय को मुक्त रखने की चेष्टा की है जिसमें मुझे भी नवीन आविष्कार का गौरव मिले धीरे धीरे हमारे मित्र ने मेरा कोई उपन्यास पढ़ा होता तो वह ऐसी प्रसन्न बात न कहते। संभव है बड़े से बड़े समीक्षक ने उनसे यह तिकायत की हो पर उन्होंने स्वयं कोई रचना पढ़ने का कष्ट नहीं उठाया यह सिद्ध है। बिना कोई चीज पढ़े उसकी आलोचना करना धारण्य का जीवन है धीरे मुझे इसकी शिक्षा पत्त नहीं।

इसके बाद दूसरा पैराग्राफ 'भारत सम्पादक के धारण्य-विद्यवाचकी से शुरू होता है जिसमें आपने घासबे घासमान पर बैठकर जमीन पर पैर बचीटनेवाले जुड़ प्राक्षिणों पर दया-दृष्टि डाली है। फरमाते हैं—

'साहित्य में हम कुछ साहित्यिक संस्कृति चाहते हैं साग-सपेन कुछ भी नहीं। चाहे वह साहित्य का कोई एक हो पुस्तक हो धारण्य सस्या हो—हम उसकी परत अपनी इसी मूल भावना को कमीटी पर करते हैं। यदि हम हिन्दी साहित्य सम्मेलन के विषय में हैं तो इसलिये, कि वह वास्तव में साहित्य-सम्मेलन नहीं है'

किन्तु कुछ साहित्य-सुधा-वृष्टि है। धारण्य का एक महान कृतिन रूप है, सम्मेलन की नीरवमयी बेखी में रहना चाहे उसकी सस्या एक ही एक परिमित हो। सभी बड़े-बड़े विचार प्रवक्तकों ने अपनी अकमली धारण्य से ससार पर विजय पायी है धीरे धीरे हमारे योग्य 'भारत' सम्पादक उस गौरव के उम्मीदवार हैं तो हमें तिकायत की कोई मुंबाझत नहीं। हम सभी चाहते हैं कि कोई ऐसी बात कहे, जो कोई दूसरा न कह सके कोई ऐसा काम कर दिखाए जो दूसरा न कर सके। नभी यह इच्छा सभी हीतो है कभी महत्वाकांक्षा से प्रेरित। हम इस वाक्येयी जी के बलवान व्यक्तित्व धीरे उज्ज्वल प्रतिभा का प्रमाण समझते हैं। उनको मजूर में हिन्दी का कोई सेखक नहीं बँबता में इन बातों से नहीं बँबता। धारण्य हमसे भी कोई बड़ी धारण्यो नथी प्रयुक्तों बात कहिए, मैं धारण्य भी न बँबता। मिनकूंगा ही नहीं। इतने महान आविष्कार की उन्हा कीन कर सकता है हिन्दी में ऐसा कोई सेखक नहीं जिसको धारण्यवाचिका मिलने योग्य हा। यहाँ तो सभी धारण्य-विज्ञान का उपासक है। केवल एक धारण्य है, धीरे वह भारत के मुख्य सम्पादक परिषद मन्त्रनुकारे वाक्येयी एम ए। धारण्य यही है कि उन्होंने 'भारत' का सम्पादक होना क्यों स्वीकार कर लिया क्याकि सम्पादकत्व में धारण्य-विज्ञान कृ-कृटकर भरा होता है। ऐसे ज्ञानी पुरुष के लिए तो कोई मुख्य ही ज्यारा उपयुक्त स्वान होतो। यहाँ मैंने मूल पढ़े। बात यह है कि धारण्यी धारण्य धारण्य चाहे स्वीकार करे या न करे,

लेकिन 'हम' नु मा बीमरे मेस्त धापने सेकों त्रिपुखियों के एक-एक शब्द से टपकर पड़ता है और जबकि धाप धपने सेकों को गसतियों से ऊपर समझते हैं उन्हें साहित्य के रत्न मानते हैं इसलिए जब मैंने उन पर अपना विगोपी मत्त प्रकट किया तो धापको भसहा हो गया। ग्रहकार ने हम और धाप जैसे व्यक्तियों से कहीं महान पुस्तों को हुम्सास्पद बनाया है। कोई भीकानेबासी बात नहीं।

इसके धाये धाप सप्तम आकाश से भी ऊपर उड़ गये हैं और साहित्य के सहेस्य और सत्र की पबिबठा पर जान से भरी बातें कही हैं। हम उसका एक-एक शब्द स्वीकार करते हैं। बेशक साहित्य सारिबक बीबन है। बेशक वह कठिन लपस्या और महान मत्त है। लेकिन जब कोई सूत्रों में बातें करे जिसको समझने के लिए किसी बार्त्तनिक के पास जाना पड़े तो फिर समझ क्या कबाब ? बात भी तो समझ न धाये। उदाहरणार्थ इन शब्दों को लीजिए—

'जहाँ व्यक्ति न व्यक्तित्व के कोई स्वतन्त्र बिपन नहीं रह जाते उच्च साहित्य की वह मन्मनूमि है। जहाँ अपरिग्रह का साम्राज्य है (फोटो नहीं खाने जाते। जहाँ बापी मीन रहती है गाथा जाने में सुख नहीं मानती। उन उच्च स्तर व जितने किन्ना कलाप होते हैं मान्य प्रख्या से होते हैं।

जहाँ बापी मीन रहती है वह साहित्य है ? वह साहित्य नहीं बुगापन है। साहित्य का काम भाषों का अन्त करण में अनुभव करना ही नहीं उनको व्यक्त करना है। वह मनोमत्त सभी साहित्य कहलाते हैं जब वह व्यक्त हो जाते हैं बापी म प्रकट होते हैं। तुजसीबास ने रामायण बाप धपनी धात्मा की व्यस्त किया है अन्धया धान उनका कोई नाम भी न जानता। वहीं शब्दिक गोरख धन्वे 'भारत के साहित्यिक लेखों की विरोपताएँ हैं किन्ना कोई धब नहीं होता। धबर बापी मीन रहने म सुख मानती। धान सहा म साहित्य शब्द का अस्तित्व भी न होता।

इन भाष्यों का सीबा-सावा धर्ष जो हम समझ सके हैं वह यह मानूम हीटा है 5 साहित्यकारों को धारम-बिज्ञापन नहीं करना चाहिए, यह सभी के लिए निध है और साहित्यिक प्राथियों के लिए और भी धबिक। इसके मानने में किसी को धापसे मत्तमेव ही हो सकता लेकिन क्या धारमकबा और धारम-बिज्ञापन समान है ? बोडे-बहुत धब्बे। बुरे अनुभव सभी प्राथियों के बीबन में हुमा करते हैं। जो सोब साहित्य के बसे क्षेत्र धाकर धपना लन-मन बुमाते हैं वह केवल धारम-बिज्ञापन के भूखे नहीं होते। धाप पने धार्त्तिक बाभीर्य के कारण उन्ह जितना चाड़े पठित समझ से पर साहित्य-क्षेत्र जो कोई भी भाता है वह धपनी धात्मा की प्रेरणा से ही भाता है। यह बूमरी बात है कि परम पद को प्राप्त कर सके बा न कर सके। स्कूल में सभी लड़के तो बाभी धीर गोखने नहीं हो जाते न सभी 'भारत सम्पादक हो जाते हैं पर वह क्यूना कि वे केवल विद्याभ्यास का स्वाँग रखने धाते हैं ऐसी बात है जिसका कबाब बापोरी है। फिर

हमने यह दावा तो नहीं किया कि हंस का 'ध्यात्मकभाव' धमर साहित्य बनेगा हम धमर ऐसी हिमालय करते भी—क्योंकि हम प्रोपगेंडिस्ट हैं—तो 'माछ सम्पादन' जैसे मन्तवी पुस्तक को हमारे बाने की उपेक्षा करनी चाहिए थी। लेकिन साहित्य के कूड़े करकट से ही धमर साहित्य की सृष्टि होती है। कोई धमर साहित्य के सिक्के का इरादा करके धमर साहित्य की रचना नहीं कर सकता। जिस पर ईश्वर की कृपा होती है वही इस पद को पाला है। हम तो कहते हैं कि एक मामूली मजदूर के जीवन में भी खोजने से कुछ ऐसी बातें मिल जायेंगी जो धमर साहित्य का विषय बन सकती हैं। केवल देखनेवाली धीरे धीरे निकलनेवाला प्रथम चाहिए। धाने बनकर आपने इससे भी ज्यादा मालों की बातें कही हैं—

'हमारे देश में ध्यात्मकता निकलने की परिपाटी नहीं रही। यहाँ की धार्मिक संस्कृति में उसका विधान नहीं है। यहाँ के सन्त हिमालय की कन्दराओं में गमक बिरबरासि की समृद्धि करते थे और करते हैं। प्राचीन भारत अपना इतिवृत्त धीरे धीरे ध्यात्मकता गूँथ कर धाम धिर जीवन का रहस्य बतलाता है और जिन्होंने बाबाएँ लिखी वह जिना बने। इस युग के महानुभाव महात्मा गांधी ने जो ध्यात्मकता लिखी है उसकी मूल भावना है, प्रायश्चित्त धर्मात् वह केवल गकारात्मक योजना है, परन्तु प्रेमधर की जैसी ध्यात्मकताएँ लिखा रहे हैं यह बतलाने की जरूरत नहीं है।

फिर वही हृदय शब्दाङ्गण, वही रहस्य मरी बाँटें जो सुनने में घूँट पर वास्तव में निरव्यक्त है। भारत की धार्मिक संस्कृति में समाचारपत्रों का बिचार जो तो नहीं है। फिर आप क्यों 'माछ' का सम्पादन करते हैं? प्राचीनकाल में बहुत-सी ऐसी बातें थी जो अब नहीं हैं और बहुत-सी ऐसी बातें नहीं थी जो अब हैं। तब कोई धर्मोपदेशी का एम ए भी नहीं होता था। मैं आपसे पूछता हूँ आप धमर नाम के सामने बाजपेसी और एम ए की उपाधियाँ क्यों लगाते हैं? केवल ध्यात्म-विज्ञान के लिए या इसमें धीरे धीरे रहस्य है? भारत के सन्त हिमालय में घस गये मगर धमर साहित्य की सृष्टि भी कर गये नहीं तो धाम आप उपनिषद्, वेद रामायण और महानारद के इरण करते हैं? कानिवास धीरे धीरे धाम और भास और बास न साहित्य लिखा या नहीं? या वह भी मस मये धीरे उनके नाम से ध्यात्म-विज्ञान के इच्छुकजनों ने पुस्तकें लिख डालीं? प्राचीन भारत में अपनी ध्यात्मकता नहीं गूँथ की कमी नहीं उनको ध्यात्मकता धाम भी मूर्ध की भाँति कमरू रही है। हाँ केवल उनका रूप यह नहीं था। उन्होंने अपनी ध्यात्मकता मन्त्रों और श्लोकों और ध्यात्मानुभावों के रूप में लिखी। हम धाम गद्य-लेख में धीरे धीरे लिख ली मिस रहे हैं। साहित्य में कल्पना भी होती है धीरे ध्यात्म-धनुमव भी। वही जितना ध्यात्मानुभव अधिक होता है, वह साहित्य उतना ही बिरस्यावी होता है। ध्यात्मकता का धाम है, कि केवल ध्यात्म-धनुमव लिखे जायें उपाय कल्पना का लेख भी न हो। बड़े-बड़े लोगों के धनुमव बड़े-बड़े होते हैं। लेकिन जीवन में ऐसे चिन्तने ही

घरघर पाते हैं जब छोटों के अनुभव से ही हमारा कल्याण होता है। मुई की धमक तसवार नहीं काम दे सकती।

घाये बस कर सहयोगी ने फिर एक घातक विवादास्पद बात कही है। मुझे—

‘साहित्य को केवल बाड़ी-बिनास माननेवासे धारमी उसके उपयोगितावाद की दुहाई दे सकते हैं। बस यीशु प्रेमचंद जो ने सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी बगरह का नाम लेकर भी परन्तु हम तो उसे बहुत ही साधारण कोटि की धारणा मानते हैं। लौकिक उपकार ही साहित्य की बन्दी नहीं है और न वह साहित्यकार के विकास में सहायक बन सकती है। भीति के बोहे लिखने के दिन बने। इस समय हिन्दी ने स्वनामधरों को अपने सत्कार और अपनी साधना की आवश्यकता है। दूसरा की भासाई का बीडा के घाये कमी उठावेंगे। फिर इस साधारण परोपकारी दृष्टि से भी धारकता सिद्धने के मौल्य हिन्दी में स्थित धारमी है। विद्यने ऐसे महत्कारित है जिनकी जीवनी हिन्दी बन्दा की पय-नियामक बन सकती है।

इन वाक्यों का क्या अर्थ किया जाय ? जब कोई कहे जाय कि सत्कार में धमक पाये ही धमके बसते हैं तो उसका अर्थ ही क्या हो सकता है। एक धारमी अपने जीवन के एक धारके सामने खड़ा है। अपनी धारणा के संघर्ष और संघर्ष विनता है, धारसे अपनी बीती कहकर अपने विषय को शांत करना चाहता है। धारसे धारित करके धारन उद्योगों के धारित्व पर धार सेना चाहता है। धार धार कहते हैं वह बाँधि-बिनास है। बाँधि-बिनास धारकता सिद्धना नहीं जातीक कहा है। धारिका का मृगान्त-बधन करना है। धारन धारक-पट को धारनी डोक्यों को धारनी धारों को प्रकट करना धार बाँधि-बिनास है। तो फिर साहित्य बाँधि-बिनास ही है और इसके सिवाय कुछ नहीं है।

जब उही साहित्य की उपयोगिता की बात। साहित्य का मूलाकार तय सुन्दर और रिक्त है। साहित्य की धारमी मनुष्य का जीवन है। कभी-कभी धर और धारन जीवन की। पर उसका उद्देश्य भी तो कुछ हुआ। क्यों सत्कार के मरण पुर्यों ने साहित्य की रचना की ? बिना किसी उद्देश्य के ? हम उन्हें इतना विघ्नकारी नहीं समझते। केवल अपनी धारणा की शक्ति के लिए ? इसके लिए लिखने की जरूरत न थी। साहित्य का धारन उपयोगिता की धारना का जल्दी है। जो धारन कलाकार है वह उपयोगिता को धारन रक्षण में धारक होता है, जो इतना धारन नहीं है, वह उपदेशक बन जाता है और धारमी हँसी उठवाता है। उपयोगिता मानसिक धारानिक व्यवहारिक या केवल धारनोधारक हो सकती है। मुख्य करके धारों की धारकता ही धारका धारन है। धार बाँधि पुस्तक या धारन में उपयोगिता का धारन नहीं है, वह साहित्य नहीं कुछ भी नहीं। ‘धीरार्जित’ को ही साहित्य धारणना ? धारनधर ने तो साहित्य लिखा ? धारनही धारन धारन ने भी तो साहित्य रचा ? क्या धारनही धारन भी उपयोगिता नहीं है ? धर उह

गयी यह बात कि हिन्दी में ऐसे लिखनेवाले मिलने हैं जिनकी जीवनो हिन्दी जनता को एक-निष्ठा बन सकती है। आपका क्या है एक भी नहीं मेरा क्या है कि मेरे घर के मेहतर के जीवन में भी कुछ ऐसे रहस्य हैं जिन्हें हमें प्रकाश मिल सकता है। घण्टर यही है, कि मेहतर में साहित्यिक बुद्धि नहीं केवल म विवेचन शक्ति होती है। साहित्यकार के विकास के घोर क्या कारण हैं ? या तो अपने अनुभव या दूसरों के अनुभव। किसी भी मनुष्य का जीवन इतना शुद्ध नहीं है जिसमें बड़े से बड़े महत्त्वपूर्ण के लिए भी कुछ न कुछ बिचार की सामग्री न हो। महत्त्वपूर्ण इन्हीं तरह बनते हैं। घुरे पर से भी फूल को बुन लेना निषिद्ध नहीं कहा जा सकता। एक महत्त्वपूर्ण से किसी ने पूछा था—घर इतने बुद्धिमान कैसे हुए ? उसने जवाब दिया—मुझों की सोहबत से।

यहाँ तक तो ऊपर की बातें थीं। अब तब की बात सुनिए। वीकुन्त बाबनेयी की कहानी है—

‘परन्तु जब ‘हंस’ की घोर से लिखा गया कि आत्मकथांक तो निरुत्तना ही तब मैंने उपर्युक्त टिप्पणी लिखी थी जिस पर विचरकर प्रमत्त भी मिलते हैं। ‘हंस’ को मेरे सम्बन्ध की कल्पना नहीं है। प्रमत्त भी यदि साहित्यिक लिप्यन्तार का पाठन नहीं कर सकते तो ऐसा न करने से उनकी असहिष्णुता का असत्य घोर असत्य रूप पाण्ड कर्ता है, सबसे दूसरों को नहीं जसको घोर उनके घर को ही बलि उठानी पड़ेगी—एसी घातक है।

आत्मकथा है ‘आमरस’ के अनुदेशनीय सम्पादन महोदय को इन वक्तव्यों पर कोई टिप्पणी बनाने की जरूरत भी कल्पना न मान्य हुई। आप मुझे एक पत्र भेते हैं मैं कर्ता हूँ मुझे आरपी टप की कल्पना नहीं मेरी जो इच्छा होगी कब मा। मैं आपकी टप का पाठन नहीं हूँ। आपने आत्मकथांक निकालने का विरोध किया। आप ही के जैसे बुद्धि घोर विवेक रखनेवाले बहुत से भाष्यों ने आत्मकथांक निकालने का समर्थन किया। घनर मस्तिष्क न हा तो मैं ‘आमरस’ के सम्पादन को भी समर्थन ही रूप सकता हूँ। मैं मानता हूँ इतनी ख्याति से मुझे वह भाष्य न लिखना चाहिए था। मुझे उठना लेना का घोर बहुत कुछ परिश्रम हो जाने पर अब भी है। लेकिन यह कहना कि हम आत्मकी बात नहीं मानते कठोर होते हुए भी उठना कठोर नहीं है, जितना यह कहना कि हम असत्य हो घोर असत्य हा घोर इसका उमियाडा तुम्हें उठना पड़ेगा। लेकिन जब आत्मकार को बात बनती है तो आरपी संयत रहने पर प्रयास करने पर भी बीधना ही जाता है। घंठ में हम वीकुन्त मंदपुरारे की बाबनेयी स मद्रता के साथ निवेदन करते हैं कि मेरी ता मन्त्री-बुद्धि जिन्हीं तरह बट गयी घम तो हाव न सगा हानांवि कोसित बहुत की घोर अब इस किन्तु से हूँ कि कोई घाँट का पूरा रईम घंठ आप तो अपनी कोई रचना कसे समर्थन कर हूँ, लेकिन आपकी मन्त्री बहुत कुछ करना है बहुत कुछ सीधना है, बहुत कुछ रचना है। आर्या बहुत मन्त्री बीध है, लेकिन संसार में बने

से बड़े धारतवाहियों को भी कुछ न कुछ भुलना ही पड़ता है। यह न समझिए कि जो कुछ आप समझते हैं, वही सत्य है, दूसरे गिरे गाबधी हैं। गठमेद होगा स्वामाजिक है, लेकिन जिससे मतभेद हो उन्हें नीच न समझिए। जिसे आप भीचा समझें वह आपकी पूजा न करेगा। अब मुस्सा झुक बीबिए। आपने बिगड़ कर मन को शांत कर लिया हैने आपके बिगड़ने का ध्यान उठाकर मन को शांत कर लिया। भाइए, हाथ मिला लें।

मार्च १९३२

पत्रों के ग्राहकों का आपत्तिजनक व्यवहार

भारतवर्ष में पत्र-पत्रिकाओं की जो दशा है, वह किसी से छिपी नहीं है। हिन्दी में तो बी-एफ को छोड़कर और सभी वाले पर बल रही है। प्रश्न होगा—बल सभी को चाटा हो रहा है, तो वे बल क्यों नहीं कर बी जाती? जिस बीब के ग्राहक नहीं उसे तैयार करके से कायदा? लेकिन क्या हमारे स्कूल और कॉलेज या विद्यालय कले पर बल रहे है? उनका काम सिखा का प्रचार करना है, अपना काम कर रहे है। इस पत्रिच उद्देश्य के लिए मुकसाल उठाना बुी बात नहीं। पत्र-पत्रिकाओं का भी यही काम है। वे विचारों का प्रचार करती है और कुछ मुकसाल उठाने को तैयार रहती है, लेकिन जिस तरह स्कूल या कॉलेज क छात्र माह्वार प्रिस वेना बल कर हैं तो विद्यालय मुकसाल उठाने के लिए तैयार होने पर भी न बल सकेगा उसी भाँति प्रत्येक पत्र को ग्राहकों पर भी कुछ तकिया करना पड़ता है। यह इस प्रकार के काम में एक तरह से अपने पाठकों को भी सहयोगी बना लेता है। पाठक बार व या ब्रह्म व देकर कमल पत्रिका के ग्राहक ही नहीं होते उस दस्ता द्वारा होनेवाले प्रचार के क्षेत्र के भागी भी होते है। यहाँ केवल ग्राहक और हुकलवार का जाला नहीं है। ऐसी दशा न बल हम देखते है कि पाठक पत्रिकाओं के साथ अपने वक्तव्य और जिम्मेदारी का विलक्षण विचार नहीं करते तो बड़ा दुःख होता है। आप किसी पत्र क ग्राहक रहें या न रहें, यह आपकी सुरी। पत्रों के व्यवस्थापक यह ता चाहते है कि उनके ग्राहक मिलने ही ज्यादा होंगे उतना ही उन पर आर्थिक भार कम पड़ेगा। इसीलिए वे पाठकों की अनुमति करते रहते है लेकिन पाठक को इस बात का पूरा अभिप्राय है कि अपना जल्दा पूरा हो जाने के बाद वह नये वय के लिए ग्राहक बने या न बल लेकिन जितना धन्य हो कि वे बी पी की सूचना पहुँचते ही एक कार्ड भालकर अपने इलाकार की सूचना दे दें लेकिन धनुभव यह है कि तीन-तीन महीने पहले से सूचना देने और बार-बार निवेदन करने पर भी कि 'यदि आपकी धनने नाम पत्र का ग्राहक बनना स्वीकार न हो तो आप एक कार्ड द्वारा इतना दे बीबिए'

शोर सूचना नहीं आती। मगर जब इस चीज को प्राचीन सिप्टाचार के अनुसार अनुमति का सम्बन्ध समझकर पत्र बी० पी० से भेज दिया जाता है तो प्राहक उसे गुरुरत लीटा बैठे हैं। परा भी नहीं साकते कि बी० पी० के भेजने में निश्चयता रख पड़ा होगा उनके नाम की पत्रिका छापने में भी कुछ न कुछ लक्ष पड़ा ही होया और बफ्तर को जो निहा-परी करनी पड़ती है वह समझ। और और तो यह है कि ऐसे कृपातु पाठको में प्रच्छे-प्रच्छे पढ़े-सिखे सम्भव होते हैं। अपने हीन पढ़े न कर्ष करके पत्रों से प्राठ धान कर्ष कर देना कौन-सी असममनसी या शिष्टता है? इसके सिवा और क्या कहा जाय कि यह भी ह्जारों बरिच के पत्रन का एक चिह्न है जो देश को गुमान बनाये हुए है। जिस देश के शिष्टत समाज में शिष्टता का इतना सम्भाव्यक प्रभाव हो जहाँ स्वाच की यात्रा इतनी बढ़ गयी हो उस देश का ईश्वर ही मासिक है।

मई १९३३

जापान में पत्रों का प्रचार

जापान की जनसंख्या सम्भवतः साठे घा करोड़ है। वहाँ व्यापक ही संतीय वैशिक और तो ही पञ्चीस सन्ताहिक और मासिक पत्र निकलते हैं। बाव ईनिकों की प्राहक-संख्या वस में बीस लाख तक है। इन पत्रों की प्रासिक बरता का अनुमान इससे हो सकता है कि 'प्रोसाफा मैनीपो पत्र के कार्यालय के बसवाने में संतीय साठ खपते सगे थे। टोकियो मीची' का पत्रन भी करीब-करीब ऐसा ही है। 'सबाही कम्पनी में भी टोकियो में बचीस लाख की लापत सं एक नितास भवन बनवाया है। एक-एक कार्यालय में दो-तीन ह्जार प्रादमी काम करते हैं। केवल सम्पादकीय-विभाग में चार-पाँच ही प्रादमी होते हैं। जापान और भारत की सम्भितगत प्रास में इतना बड़ा अन्तर नहीं है। उसकी प्राचारी भी यहाँ की प्राचारी का एक-पाँच सं प्रासिक नहीं है। फिर भी वहाँ के पत्र कियनी उन्नत बरता में हैं। भारत में तो ऐसा शम्भव ही कोई पत्र हो जिसका प्रचार प्रासास ह्जार में प्रासिक हो। इनका कारख तो यह हो सकता है कि यहाँ इरेक प्रास की प्रासन भाग्य है। लेकिन किन्ही-प्राची प्रान्तों की जनसंख्या तो सम्भवतः जापान की जनसंख्या की इन्ही की पर कीर्ती भी इन्ही कीर्ति वहाँ तक हमारा अनुमान है, बीस ह्जार से प्रासिक नहीं पपता। प्रासिकता सा चार-पाँच ह्जार के प्रासन ही रह जाते हैं। एसी बरता में पत्र की प्रासति बरोकर हो मपती है।

फरवरी १९३३

एक सार्वदेशिक साहित्य-संस्था की आवश्यकता

भारत में विज्ञान और धर्म की इतिहास और पश्चिम की शिक्षा और राजनीति की धारण-बोझिया संस्थाएँ तो हैं लेकिन साहित्य की कोई ऐसी संस्था नहीं है। इसलिए साधारण जनता को धर्म्य प्रान्तों की साहित्यिक प्रगति की कोई खबर नहीं होती और न साहित्य-सेवियों को ही आपस में मिलने का अवसर मिलता है।

बंगाल के बो-आर कलाकारों के नाम से तो हम परिचित हैं लेकिन मुजबूती तामिल सेनमू और मलयनाम घाबि भाषायो के निर्माताओं से हम बिसकुल अपरिचित हैं। घरेबी साहित्य का तो बिक्र ही क्या फ्रांस जर्मनी वर पोर्तुगल स्वीडन बेसवियम घाबि देशों के साहित्य से भी घरेबी धनुबाबों द्वारा हम कुछ न कुछ परिचित हो गये हैं लेकिन बंगाल को छोड़कर भारत की धर्म्य भाषायों की प्रगति या हमें बिसकुल ज्ञान नहीं है। हरेक प्रान्तीय भाषा अपना सम्मेलन धरन-धरन करती है और करना ही चाहिए। हरेक प्रान्त में लोकन कौथिलें हैं पर प्रान्तीय साहित्यों की केन्द्रीय संस्था कहाँ है? हमारा कयास न ऐसी एक संस्था की जरूरत है और यदि साहित्य सम्मेलन इसकी स्थापना करे, तो वह राष्ट्र और हिन्दी की बड़ी सेवा करेगा।

धमी एक हिन्दी ने जो विस्तार प्राप्त किया है वह एक प्रकार से अपनी शक्ति द्वारा किया है। हिन्दी ही एक ऐसी भाषा है जो भारत के सभी बड़े शहरों में समझी जाती है, जहाँ बोनी न जाओ हो। अगर घरेबी बोष म न या बड़ी होती तो धर्म्य प्रान्तों के निवासी एक-दूसरे से हिन्दी ही में बातें करते और प्रक भी करते हैं मरुति नहीं जो घरेबी से धर्नामिन्न है।

अब वह समय आ गया है कि प्रान्तीय भाषाओं का सम्बन्ध ज्वावा बनिय किवा बाब और हमारा संस्कारो का एका सम्बन्ध हो जाय कि हम राष्ट्रीय भाषा का ही नहीं राष्ट्रीय साहित्य का निर्माण भी कर सकें। हरेक प्रान्त के साहित्य की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं। यह आवश्यक है कि हमारी राष्ट्रभाषा में उन सभी विशेषताओं का सामंभस्य हो जाय और हमारा साहित्य प्रान्तीयता के बावरे से निकसकर राष्ट्रीयता के क्षेत्र में पहुँच जाय। इस विषय में हम धर्म्य भाषाओं के बखबातों की सहायता और महामोव स जितना धाने वह सकते हैं, उतना और किन्ही तरह नहीं बढ़ सकते। जो छो बई बंधना और मरुटी के निदान् हिन्दी में बराबर लिख रहे हैं और धनुमान किया या मरुटा है, कि हिन्दी का धर्म्य कौनता जायया लेकिन ऐसी एक राष्ट्रीय साहित्य संस्था द्वारा हम इस प्रगति को और तेज कर सकते हैं।

धमी हमें बम्बई जाने का अवसर मिला या। वहाँ हमें मुजरत के प्रमुख साहित्य-विषियों से बाठबीठ करने का लीबाग्य प्राप्त हुआ। हमें मासूम हुआ कि वे ऐसी बंध के विग मिठने उत्सुक हैं बन्कि ये तो बहूया कि यह प्रस्ताव सभी महानुमाओं का या

घोर म हिन्दी साहित्य सम्मेलन के माननीय अधिकारियों से धनुरोध करूंगा कि वे इस प्रस्ताव को कार्य रूप में परिणत करें। हिन्दी का प्रचार समस्त भारत में बढ़ रहा है। यदि साहित्य सम्मेलन ऐसी सस्था का आयोजन करे तो मुझे विश्वास है कि धन्य भाषाओं के लेखक उसका स्वागत करेंगे और हिन्दी का गौरव भी बढ़ेगा और विस्तार भी।

यह कौन नहीं जानता कि भारत में प्रांतीयता का भाव बढ़ता जा रहा है। इसका एक कारण यह भी है, कि हरेक प्रांत का साहित्य भ्रमण है। यह भाषा-प्रधान और विचार-विनिमय ही है जिसके द्वारा प्रांतीयता के सवप को रोकना जा सकता है। राष्ट्रों का निर्माण उसके साहित्य के हाथ में है। यदि साहित्य प्रांतीय है, तो उसके पढ़नेवालों में भी प्रांतीयता अधिक होगी। अगर सभी भारतीय भाषाओं के साहित्य लेखकों का वार्षिक परिशेखन होने लगे तो सवप की जगह साम्य सहकारिता का भाव उत्पन्न होगा और यह निश्चय रूप से कहा जा सकता है कि साहित्यों के मझकट हो जाने से प्रांतों में भी साम्य हो जायगा। जिन विद्वानों का अभी हमने नाम ही सुना है उन्हें हम प्रत्यक्ष देखेंगे उनके विचार उनके धीमुख हैं सुर्गे में और उत्सव से बहुत-से भ्रम बहुत-सी संकीर्णताएँ आप ही आप शान्त हो जायेगी। अन्त्य हम पी ई एन नामक विश्व साहित्य संस्था का संक्षिप्त विवरण प्रकाशित कर रहे हैं। जब बड़ी-बड़ी उन्नत भाषाओं को एसी एक संस्था की जकरत मालूम होती है तो क्या भारत की प्रांतीय भाषाओं का एक केन्द्रीय संस्था से सम्बद्ध हो जाना आवश्यक नहीं है? भारत की धारणा अभिम्पक्ति के लिए अपने साहित्यकारों की धोर देख रही है। वार्षिक उसके विचारों को प्रकट कर सकता है वैज्ञानिक उसके ज्ञान की वृद्धि कर सकता है उसका मन उसकी बेचना उसका धान्य उसकी अभिलाषा उसकी महत्वाकांक्षा तो साहित्य ही की वस्तु है और यह महान शक्ति प्रांतीय सीमाओं के अन्दर बकड़ी पड़ी हुई है। बाहर की टाबी हुआ और प्रकटा से वह वञ्चित है और यह वन्धन उसके विकास और वृद्धि में बाधक हो रहा है। सट्टि-बाटाएँ अपने एकान्त पथ पर चलकर मकील और प्रबाह-शून्य हो गयी हैं। इन बाटाओं को समन्वित करके हम उनमें प्रबाह और प्रगति उत्पन्न कर सकते हैं। और यह हिन्दी-साहित्य सम्मेलन का नैसर्गिक कर्तव्य है।

फरवरी १९३४

हिन्दी लेखक-संघ

हिन्दी लेखक-संघ के मगठन के विषय में भी सरयजीवन जी वर्मा को प्रान्तेजन कर रहे हैं उनके विषय में आपने संघठन के लिए एक धार्मिक प्रकटित की है और धर्मोत्तम के प्रस्तावित विचारों के आधार पर एक विवरण-पत्र भी बना डाला है। जब सभी धर्मों में हम समय मगठन होता जा रहा है तब कोई कारण नहीं कि लेखकों का भी एक

सगठन न हो। धारा है अलक्ष्य बग इन आवश्यक समझेगा और भी सत्यजीवन भी बर्मा के पास से प्राप्त करने तथा विवरण-यत्र मगाकर प्रस्तावित विवरण को देखकर, सब का सत्य बन जायगा और अपने समुदाय की श्रित-रक्षा में भाग लेगा। भी सत्यजीवन बर्मा ने अलक्ष्य समुदाय से जो अपील की है, वह इस प्रकार है—

मान्यवर महोदय

सेवा-संघ' के सगठन के प्रस्ताव पर पत्रों में काफी चर्चा हो रही है जिसे ध्यान देना होगा। प्रत्येक लोग इस प्रस्ताव से किसी न किसी रूप में सहमत हैं। यह प्रस्ताव नया नहीं। आपने स्वयं भी किसी न किसी समय इस प्रकार की एक मन्त्रा की आवश्यकता का अनुभव किया होगा। प्रस्तुत प्रस्ताव इसी विचारविहित धर्मसाया को पूर्ति के लिए किया गया है।

सगठन का यह युव है। सारा संसार सगठन की घोर दौड़ रहा है। समाज में प्रत्येक धरती के लोग अपना-अपना सगठन कर रहे हैं। यह अत्यन्त वांछनीय है। सब युग बहल गया है। प्रत्येक बग अपने स्वतंत्रों और धारकों की रक्षा के लिए किसी न किसी रूप में बहुमत की आकांक्षा करता है। व्यक्तिगत प्रयत्नों में धारकन कुछ भी नहीं हो सकता। अब तक हमारा एक सच न होगा हम एक मत न होंगे हममें अपने ध्येय की प्राप्ति की उच्छ्रित धर्मसाया न होगी हम उसके निमित्त प्रयत्नशील न होंगे—हम कुछ नहीं कर सकते। इसी हितु हमें सगठन की आवश्यकता होती है।

अब सभी क्षेत्रों में सगठन की आवश्यकता प्रतीत होती है, तो हिन्दी-साहित्य-क्षेत्र इस नियम से परे कैसे रह सकता है? हिन्दी-लेखकों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जा रही है। सभी अपनी शक्ति पहुँच कर अपना और धारकों के अनुसार उसकी सेवा और

जसका बहुत-सा समय और शक्ति मांग लेने में गप्ट हो जाती है। उसे धारणरकता है एक केन्द्रीय संस्था को जो उसे अपने व्यवसाय में कुशल सफल बनने में सहायता पहुँचा सके। उसकी सेवाओं का धारण कर सके और जो उसने मुक्त-दुल में सहायक बन सके। बीरे-बीरे वह समय भी था रहा है जब लेसन-बन्ना एक प्रकार का व्यवसाय समझ था। सभी सम्पन्न नहीं हैं। रोटी का प्रश्न सभी के माथ-साथ भया रहता है। अपनी धारणरकताओं के निमित्त सब को कुछ न कुछ 'घब' की धारणरकता पड़ती है, अतएव लेसकों के धार्मिक हित की रक्षा के निमित्त उनके लिए समय-कुसमय में धार्मिक सहायता का आयोजन करने के लिए भी एक संस्था की धारणरकता होगी। 'लेसक संघ' की उपयोगिता इस विषय में भी प्रतीत होती है।

महीन हिन्दी-साहित्य की सभी संस्थावस्था है। सभी उसे बड़े माँग से लेना मानना और पालन करना है। वर्तमान साहित्य की मूर्ति में यदि समय और दूरदर्शिता से काम न लिया गया तो प्रागे चलकर हम एक दिन पछताना पड़ेगा कि हमारी सारी मेहनत व्यर्थ गयी। धार्मिक युग में जहाँ प्रत्येक काम में जीवन के लक्ष्य दृष्टिगोचर होते हैं, वहाँ वह मानना पड़ेगा कि सभी से सारी चट्टाएँ घाबरहीन ही हैं। अविध्य में क्या होना हम यह नहीं कह सकते परन्तु अविध्य में हम क्या करना है यह हम निश्चय कर सकते हैं। वर्तमान और भविष्य के अनुभव हम अपना सभी कार्यक्रम निश्चय करन में सहायक हो सकते हैं। साहित्य की वर्तमान प्रगति और उसके विषय अनुभवों को सामने रखकर धारण रक्षा-व्यक्ति के व्यवसाय की कामना कर हमें अपना सभी कार्यक्रम बनाना पड़ेगा जिसमें हमारे लेसक-गण उसके अनुसार चल सकें। हमें अपने सहयोगियों की कठिन माँगों से सतबानसानुबन्ध रक्षा करनी पड़ेगी।

हमारे धार्मिक साहित्य की दशा पर भी यदि ध्यान दिया जाय तो उनकी प्रगति भी कुछ निरुत्साह-सी प्रतीत होगी। पत्रकार और पत्रों ने निश्चित ध्येय और धारण धनी एक 'निर्मिष्ट' नहीं किया है जिसके कारण पत्रों के प्रचार तथा उनकी उपयोगिता में बाधा पड़ रही है। अतः धार्मिक साहित्य की देख-रेख भी हमारा कर्तव्य होना चाहिए। लेसकों के ही अरोसे धार्मिक साहित्य का संवाहन है अतः 'लेसक संघ' विशेषरूप से धार्मिक साहित्य का परिवाहन कर सकेगा।

उपर्युक्त सारी बातों को देखकर धारण हमसे पूर्णतः सहमत होंगे कि धारण 'लेसक-संघ' का संघटन शीघ्र ही हो जाना अनिवार्य होगा। इनकी उपयोगिता के विषय में धारण हमसे अधिक मत्तुष्ट होंगे। हम धारण हैं कि धारण धारण अपना पूरा सहयोग देकर इस संघ की स्थापना में हारण देकर हिन्दी-साहित्य के एक धारण धारणरक कार्य के संवाहन का धारण करेंगे।

सितम्बर १९३४

पटना का हिन्दी-साहित्य परिषद्

इन्कीस-बाईस सितम्बर को पटना में अपने साहित्य परिषद् का कई बरसों के बाद पानेवाला कार्यक्रम सच बी भूम-धाम से मनाया । द्विती के शब्द-बान्धुगरी थी मानसमान की बुद्धि की समापति ने धीरे साहित्यकारों का ध्यान अलग था । हम तो अपने दुर्भाग से उस समय समितित होने का नीरस न पा सके । शुक्रवार की सन्ध्या समय से ही हमें प्यार हो गया धीरे वह सोमवार को उठता । हम छटपटाकर रह गये । उबिकार को भी इन यही धारा करती रहे कि धाम प्यार उत्तर जायया धीरे हम जैसे जय्ये सेकिन प्यार ने उस बल गला बीका जब परिषद् का उत्सव समाप्त हो चुका था । पटने बाकर बाद पर सोने से कमी ने बाद पर पड़े रहना क्याया शुक्रवा का धीरे को भी बीमाटी के समय चाहे वह हमकी ही क्यों न हो बुद्धियों के मत्तनुवार धीरे वर्तमानों के धारैतानुवार काशी के समीप ही रहना क्याया कल्याणकारी होता है—सीकिन धीरे पारसीकिन दोनों बुद्धियों से । धरत्य हमे धारया है, हमारे साहित्यिक बन्धुओं ने हमारी वैद्विधि मुमाक कर ही होयी । इस प्यार ने ऐसा धर्या धरकर हमसे बीन लिया हमका बदमा हम उससे धरकर लेने चाहे इन साहित्य नीति चौकनी क्यों न पड़े । समापति का जो नापख अपक बाधो मत के रूप में मिला है वह धम-धम किताब स्याकिन होगा—यह सोचता हूँ तो मही जो बाह्या है कि प्यार महोदय कहीं फिर बिसे सेकिन उनका कही पता भी नहीं । इन नापख न बीनन है, धारैत है धार्यनिवशन है धीरे साहित्य सेविगों के लिए धारया है धरर धापन पूर्वको का बीम्य मस्तक पर लावने की जो बल कही वह हमारी समस्त में न धारयी । हमारा धयाम है कि इन पुनको का बीम्य बररत से क्याया माने हुए है धीरे उनके बीम्य के नीचे बने जा रहे हैं । हम धरीत में रहने के इतने धारयी हो गये हैं कि वर्तमान धीरे मकिन की जैसे हमे किताब ही नहीं रही । धीरे धीरे धरिधवी जब इतीलिए हमारी उपेक्षा कप्या है कि वह हमें पाँच हजार साल पहले के जन्म समझ्या है, बिसेके लिए धनयवधरों धीरे पिबरापोलो न ही स्वान है । वह हमारे बीनपत्र धीरे ताससेको को लाध-मारकर इसलिए नहीं ले जाता कि उनस ज्ञान का धरंन करे, बकि हमलिए कि धरुँ अपने सभहामनों में स्वरचित रहकर अपने बिजय-धरं को मुक्ति के उती तरह जैसे पुराने जमाने में बिजय की मुट के साथ नर-नारियों की यी मुट होठी थी धीरे बुद्धियों में उनका प्रथान किगा जाता था । प्राचीन हमे धरर धारर धीरे धारं देता है तो उनके साथ ही कर्मियाँ धीरे धर्यानिवशन भी देता है । बुनाँके धाम राम धीरे इपल रामलीला धीरे रामलीला की बस्तु बनकर रह गये हैं धीरे बुड धीरे महावीर धरकर बना दिय गये हैं । यह प्राचीन नर धार नहीं तो धीरे क्या है कि धाम भी धरंनय प्राचीन बिनम धर्ये-लामे पड़े-लिखे धारमियों की काशी संख्या है नरियों में नरकर धारया मन शुध कर लिया करते हैं ? प्राचीन उन राट्टी धीरे जालियों के लिए धरं की

बस्तु होगी और होती चाहिए, जो अपने पूर्वजों के पुकारार्थ और उनके सापनाओं से घाय मातामता हो रहे हैं। जिस जाति को पूर्वजों से पराजय का क्षयमान और इन्हीं का ठीक ही विरसत में मिला वे प्राचीन के नाम को क्यों रीयें ? ऐसे इतन को क्या हम लेकर जायें जिसने हमारे पूर्वजों को इतना प्रकर्मण्य बना दिया कि वह बलिदान लिखनी ने विहार विजय किया तो पता चसा कि सारा मगर और किना एक विहाम बाचनालय या। विहाम गीय मने से राज्य का साधय पसे ने और अपनी कुटिया में बैठे हुए प्राचीन शास्त्रों में बूबे रहते ने। उनके इव-गिर्य क्या हो रहा है। दुनिया किस गति से बढी जा रही है। उन्हें इसकी खबर न थी। और शाधय बलिदान उन विहामों से मुवाहिम न होता और उनकी बुद्धि क्यों क क्यों बनी रहती तो वे उसी लग्नयता से अपने हास्य पके जाते और साध्यात्मिक विचारों के बालन्य सुटते रहते और समर बीजन की संश्लिष नाल्ये बने जाते। उबर पश्चिम के नासिक समुद्र ने सुधयन का मुवाबला करके संसार विजय कर रहे थे और हमारे बाप शशा बैठे मुक्ति का माग हुई रहे थे। पश्चिम ने जिस बस्तु के लिए तपस्या को उसे वह बस्तु मिसी। हमारे पूर्वज ने जिस बस्तु की तपस्या की वह उन्हें मिसी या मिसेगी। जिसके लिए संसार मिस्या हो और दुःख का पर हो उसकी यदि संसार उपेक्षा करे तो उन्हें शिकायत का क्या बीका है। हमें स्वर्ग की ओर से निरिचल्य रहना चाहिए। वह हमें मिसेया और बकर मिसेया। पनुबंदी की के ही शर्तों में 'बन्धों के बन्धनों के घासी हम स्वामी राम के कथन य भी मुक्ति का गौद हूँने के बजाय बेबाल्य के बन्धन हूँने मने। और क्यों न हूँने ? बन्धनों के सिवा और बन्धों के सिवा हमारे पास और क्या बा। पंडित लोग पढते थे और योद्धा लोग लड़ते थे और एक-दूसरे की बेइज्जती करतें थे और सड़ाई व फुरसत मिसती थी तो ब्यभिचार कपडे थे। यह हमारी ब्यावहारिक संसृति थी। पुस्तकों में वह लिखनी ही डंभी और पवित्र की ब्यवहार में उठनी ही मिस्य और निरुप्ट।

पाने बनकर मभापति की ने हमारे बतमान साहित्यिक मनोबुद्धि का जो चिह्न मींचा है, उसका एक-एक शब्द ययार्थ है—

'हम अपनी इन धारत को क्या करें ? यदि किमी के बोध सुनता हूँ तो तुम्य माल सैठा हूँ और उन धारत को पेट में लेकर फिर बाहर लाता हूँ और अपनी साहित्यिक पीढ़ी को उस मिस लिखि की करत बोटता हूँ। संसार के बोधों का मैं किना प्रमाद्य मरल विरवासी होता हूँ और यह चाहता हूँ कि मेरी हो लएह मेरा पात्रक भी मेरी मोक-निम्बा पर विरवाम करे, किन्तु यदि किमी के गुण किमी की मीचिबता किमी की उन्नयता की बर्षा सुनता हूँ तब मैं उनसे मिए प्रमाद्य ममूम करने के इबहार लेना चाहता हूँ।

और मापण के बलिदान शब्द तो बडे ही ययारथी है—

‘हम बड़े हों या छोटे हमने घर-घर और व्यक्ति-व्यक्ति में मरने का डर बोया है। हमारे लिए मार डालना ही गुनाह नहीं मर जाना गुनाह हो गया है’ “शास्त्र के साहित्यिक चिंतन पर जिम्मेवारी है कि वह पुरुषाय को शीशों हाथों में लेकर जीने का अरुण और मरने का स्वार अपनी पीछी में बोये। यह पुरुषाय सम्प्रदायों से नहीं हा सकता। यह तो कर्म के बगियों ही के करने का नाम है।

अक्टूबर, १९३५

लंदन में भारतीय साहित्यकारों की एक नयी संस्था

हम यह जानकर सच्चा आनन्द हुआ कि हमारे सुविचित्र और विचारशील युवकों में भी साहित्य में एक नयी स्फूर्ति और जाबुति जाने की धुन पदा हो गयी है। लंदन में The Indian Progressive Writers Association की इसी उत्थय से बुनियाद डाल दी गयी है और उसने जो अपना मैनिफेस्टो भेजा है उसे देखकर यह धारा होती है कि अगल यह समा अपने इस नये माग पर अभी उठी तो साहित्य में नवयुग का उदय होगा। उस मैनिफेस्टो का कुछ अंश हम यहाँ आस्तय रूप में देते हैं—

भारतीय समाज में बड़े-बड़े परिवर्तन हो रहे हैं। पुराने विचारों और विचारों की बड़े हिस्सी जा रही है और एक नये समाज का जन्म हो रहा है। भारतीय साहित्यकारों का धर्म है कि वह भारतीय जीवन में पुरा होमेवामी शक्ति को शब्द और रूप में और राष्ट्र को उन्नति के माग पर चलाने में सहायक हों। भारतीय साहित्य पुरानी सम्प्रदाय के लट्ट हो जाने के बाद से जीवन की यथार्थताओं से भागकर उपस्थान और भक्ति की शरण में जा छिपा है। नतीजा यह हुआ है कि वह निस्तेज और निष्पाठ हो गया है रूप में भी धर्म में भी। और आज हमारे साहित्य में भक्ति और वैराग्य की मरमार हो गयी है। भावुकता ही का प्रदर्शन हो रहा है, विचार और बुद्धि का एक प्रकार से बहिष्कार कर दिया गया है। निष्पत्ती का सचियों में बिसेपकर इसी तरह का साहित्य रचा गया है जो हमारे इतिहास का सम्मानकर काष्ठ है। इस समाज का उद्देश्य अपने साहित्य और दूसरी कलाओं को पुजारियों पंडितों और धर्मगणितोक्त बगों के प्राधिपत्य से निराम कर उन्हें जनता के निकटतम संसर्ग में लाया जाय उनमें जीवन और वास्तविकता लायी जाय जिसमें हम अपने भविष्य को उम्भन कर सकें। हम भारतीय सम्प्रदाय की परम्पराओं की रक्षा करते हुए अपने देश की पतनोन्मुखी प्रवृत्तियों की बड़ी निर्दयता से धालोचना करने और धालोचनमात्मक तथा रचनात्मक कृतियों से उन सभी बातों का सचय करे जो जितसे हम अपनी संज्ञित पर पहुँच सकें। हमारी धारणा है कि भारत के नये साहित्य की हमारे वर्तमान जीवन के मौलिक तथ्यों का सम्भव

करना चाहिए और वह है, हमारी रीती का हमारी दृष्टि का हमारी सामाजिक व्यवस्था का और हमारी राजनीतिक पराधीनता का प्रश्न । तभी हम इन समस्याओं को समझ सकेंगे और तभी हममें क्रियात्मक शक्ति आयेगी । वह सब कुछ जो हमें निष्पक्षता प्रकटकरना और अन्धविश्वास की घोर भे जाता है, हेय है । वह सब कुछ जो हममें समीक्षा की मनोवृत्ति साठा है, जो हमें विपक्ष कर्तव्यों का भी बुद्धि की कठौटी पर लक्ष्मण के लिए प्रोत्साहित करता है, जो हम कमजोर बनाता है और हममें समझ की शक्ति साठा है, उसी को हम प्रयत्नशील समझते हैं ।

इन उद्देश्यों को मानने रखकर इस सभा ने निम्नलिखित प्रस्ताव स्वीकार किये हैं—

१—भारत के विभिन्न भाग-प्रान्तों में लक्षकों की उत्थापन बनाना उन संस्थाओं में सम्मेलनों सम्मेलनों द्वारा सहयोग और समन्वय देना । प्रांतीय केन्द्रीय और तबल की संस्थाओं में निश्चल सम्बन्ध स्थापित करना ।

२—उन साहित्यिक समस्याओं से जेत जोल पैश करना जो इन सभा के उद्देश्यों के विच्छल न हों ।

३—प्रगतिशील साहित्य की मूर्ति और अनुवाद करना जो अन्तर्गत दर्जा में भी निर्दोष हो विमल हम सांस्कृतिक व्यवहार को दूर कर सकें और राष्ट्रीय स्वाधीनता और सामाजिक उत्थान की घोर बड़ सकें ।

४—हिन्दुस्तानी को राष्ट्रभाषा और इंडो-रोमन लिपि को राष्ट्र लिपि स्वीकार करने का उद्योग करना ।

५—साहित्यकारों के हित को रक्षा करना उन साहित्यकारों की सहानुभूति करना जो अपनी पुस्तकें प्रकाशित कराने के लिए सहानुभूति चाहते हों ।

६—विचार और राय को आजाद करन के लिए प्रयत्न करना ।

मैनिफेस्टो पर मकामी डा मुन्करान्न आनन्द डा के एम भट्ट डा डा सी शंभु डा एम मिन्हा एम डी दासीर और एम एल अहीर के शुभ नाम है और पत्र-पत्र-व्यवहार का पठा—

डा एम धार आनन्द

३२ रमन स्थावर

आनन्द ।

हम इन सभा का हृदय से स्वागत करते हैं और आशा करते हैं कि वह चिरं जीवी हो । हमें आशा है ऐसे ही साहित्य की उन्नति है और हमने यही आशा अपने सामने रखा है । 'हंस भी इन्हीं उद्देश्यों के लिए जारी किया गया है । हाँ हम अभी इंडो-रोमन को राष्ट्र-लिपि स्वीकार करने को तैयार नहीं क्योंकि हम नागरी लिपि में संशोधन करने उद्ये इतना पूछ बना मैना चाहते हैं विमल वह भारत की सभी भाषाओं

के लिए समझ रूप से उपयोगी हो। हम यह भी कहना चाहते हैं, कि अगर यह संस्था भारत के उस साहित्य को जो उसके पढ़े-सूने के अनुकूल हो अंग्रेजों में अनुवाद कराके प्रकाशित कराने का प्रयत्न कर सके तो यह साहित्य और राष्ट्र—दोनों ही की सज्जी सेवा होगी। हम हिन्दी लेखक-संघ के सदस्यों से निवेदन कर देना चाहते हैं कि वे इन प्रस्तावों पर विचार करें और उस पर अपना मत प्रकट करें। लेखक संघ के उद्देश्य भी बहुत कुछ इस संस्था से मिलते हैं और कोई कारण नहीं कि दोनों में सहयोग न हो सके।

जनवरी १९३६

साहित्य सम्मेलन के विषय में

पाठकों का सामुहिक ही है कि इस वर्ष हिन्दी साहित्य सम्मेलन का बतसा ईस्टर की छुट्टियों-में नामपुर में होगा। तैयारियाँ ही रही हैं स्वभाव-समिति बनायी जा रही है। प्रबन्ध मन्त्री भी ने हिन्दी के विद्वानों से निवेदनों के विषय निम्न योजना की है। निम्न्य तो धार्मिक और पढ़े जायेंगे लेकिन हमारे विचार में सम्मेलन को यकीन केवल हिन्दी साहित्य सम्मेलन न होकर ब्रह्म इण्डिया साहित्य सम्मेलन बनने की चेष्टा करनी चाहिए। यदि वह अन्य प्रायों के विद्वानों को नियमित कर सके और जो लोक मार्क-व्यय सेना बल्ल, उन्हें मार्क-व्यय भी द सके तो इससे हिन्दी-साहित्य का बहुत कुछ उपकार होगा। हमें इस बल्ल साहित्य की प्रगति के विषय में भारत के सभी महारथियों से परामर्श करके अपनी कोई नीति स्थिर कर लेनी चाहिए। सम्भव हम सबकी एक साहित्य-सभा का मेनिफेस्टो प्रकाशित कर रहे हैं। उस पर भी सम्मेलन को विचार करना चाहिए। सम्मेलन में व्यक्तिगत रूप से निम्न्य पढ़ लेने से साहित्य की प्रगति को कोई बिठा नहीं मिल सकती। उसे तो हम प्रगति का संचालन करने के लिए कोई सिद्धान्त स्थिर कर लेने की जरूरत है, जिससे वह साहित्य पर नियन्त्रण रख सके। प्रागतिशील और अप्रगतिशील साहित्य में क्या अन्तर है इस पर श्रुत और करके उसे अपना निश्चय देना चाहिए कि वह किस प्रकार के साहित्य को प्राथम्य देना चाहता है और यह माय-प्रदर्शन उसी बल्ल हो सकता है, जब सम्पूर्ण भारत के साहित्य-महारथियों के मत्परामर्श और सहयोग से सम्मेलन अपना कोई मत पक्का कर ले।

जनवरी १९३६

अखिल भारतवर्षीय पुस्तकालय-संघ

हमारे देश में संस्थाओं और समाजों की विशेष कमी नहीं है किन्तु उनमें प्रथम क्रम ऐसी ही है जो केवल प्रस्ताव पास करने में ही बहाने रहते हैं ! इसका मुख्य कारण है सच्ची सपुनर्जाति उत्पत्ती का न-कर्त्ताओं और सहानुभूतिहीन मन-वाताओं का प्रभाव । देश में मुद्रा का प्रभाव भी संस्थाओं और समाजों की उत्पत्ति में बाधक है किन्तु शिक्षा प्रचार-द्वारा अधिकांश को दूर करने का प्रयत्न भी संस्थाओं और समाजों-द्वारा ही किया जा सकता है । इसलिए मुख्य प्रभाव सच्चे स्वयंसेवकों और शान्तिप्रेमियों का ही है । इसी प्रभाव के कारण बहुतेरे सम्मेलन और मंच निर्वाह हो रहे हैं । अखिल भारतीय पुस्तकालय-संघ की भी यही वृत्ति है ।

हमें कुछ ऐसा स्मरण है कि साहौर की स्वतंत्रता-सोपिछी कांग्रेस के समय उक्त मंच का महाप्रबन्धन आचार्य प्रफुल्लचन्द्र राय के समापनत्व में हुआ था । उसमें कई महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास हुए थे । समापन के बाद में भी पुस्तकालयों के संगठन की एक अच्छी स्कीम थी परन्तु प्रस्ताव और स्कीम को कार्य के रूप में परिणत करने के लिए कुछ उद्योग हुआ या नहीं इसका हम पता नहीं क्योंकि पत्र-पत्रिकाओं में कभी इसकी खबर चलने में नहीं आयी । प्रायः समस्त-सोसाइटियों का यह अंग देखा जाता है वे सामान्य रूप में ही रहती हैं और धर्म के अन्त में महाप्रबन्धन करने के लिए समापन के पुराने धारि की खर्चा से पत्रों में कुछ धन मचा देती हैं । अब इस भारतीय पुस्तकालय-संघ की खर्चा भी सिद्ध नहीं है । क्योंकि आयामी ११ १४ सितम्बर को कमकरो में उसका एक बृहत् अधिवेशन होने का खबर है । उसके अध्यक्ष होने प्रतापसिंह-बिरबदिविद्यालय के पुस्तकालय डॉक्टर टामस । कमकरो की इन्प्रीरियल लाइब्रेरी के पुस्तकालय मिस्टर अन्नादुस्साह उसके मन्त्री का काम कर रहे हैं । प्रतिनिधि-शुष्क चार स्पदा निर्दिष्ट किया गया है । धारणा ही नहीं विरचान भी है, कि सम्मेलन बहुलाय में सफल होना । विद्वानों के पाणिपत्र पृथक् आयोज्य होंगे । विद्वानों के उमर मस्तिष्क से निश्चय हुए उपायगी प्रस्ताव भी पास होंगे किन्तु प्रति बंध हमी तरह रस्म पूरी करने से कोई ठोस काम नहीं हो सकता । इस सम्मेलन के मन्त्रियों में यह धारणा करती है कि वे इस बार कोई ऐसा काम-क्रम निर्धारित करें जिसे क्रियारूप रूप देने में विशेष कठिनाई न हो । उनके प्रारम्भीय उद्योग में सफलता होने के लिए ईश्वर से प्रार्थना करते हुए हम कुछ मोटी-मोटी बातें उनके सामने पेश करते हैं किन्तु पर ध्यान दिये बिना हमारा मतलब है कि हम में सजीवता और कार्य-धर्मता नहीं पा सकती । बार्ने ये हैं—

मिस्री केन्द्र स्थान में मंच का निर्दिष्ट कार्यक्रम होना चाहिए । व्यवस्था ऐसी की जाय कि कार्यक्रम में नियमित रूप से बराबर काम हो । प्रारम्भ में दो-चार बुक ड्रग्स लिए अपने बीच-बीच की मेबाएँ धरित करने की तैयार हों । त्याग के कारणों पर

मन्त्री मोटती है। त्याग ही की सभ्यता में सिद्धि बसती है। दो-बार त्यागी युवक ही सारे देश को पुस्तकालय-सम्बन्धी आन्दोलन की धोर धातुएं कर सकते हैं। कोई एक युवक समस्त देश के पत्रों में निरन्तर पुस्तकालय सगठन की चर्चा करते रहने का भार उठा ले। वह पत्र-गम्यार्थकों से भी प्रख्या करता रहे कि वे उसके नाम का महत्व समझ कर उसकी सहायता करें। टिप्पणियाँ लिखा करें। धर्मीयें किया करें। वह नियमानुक्रम धारणक पक्ष्यबहार करके ही संघ को सजीव सस्था रखे। ब्रूचण युवक मात्र-अर सारे देश में भ्रमण करके प्रचार-काम कर। लोगों की सहानुभूति प्राप्त करने का प्रयत्न करे, मनिको का सहयोग प्राप्त करे। सभी अगहों के छोटे-बड़े पुस्तकालयों का निरीक्षण करके एक रिपोर्ट तैयार करे। हमाग अनुमान है कि देश-अर के पुस्तकालयों की सूची संघ के पास तैयार होगी। उस सूची के सहारे सब पुस्तकालयों के सभामकों से लिखा-पढ़ी करके उन्हें सब से सम्बद्ध करने की आवश्यकता है। संघ के कार्यालय में देश अर के पुस्तकालयों की नियमावली और वार्षिक काय-विबरणों का संग्रह होना चाहिए। अब तक जो संघ के वरिष्ठेशन हो चुके हैं उनकी रिपोर्टों और स्पीचों का भी संग्रह प्रकाशित करना आवश्यक है। संघ की धोर से एक वार्षिक रिपोर्ट भी प्रकाशित हुमा करे जिसमें देश-अर के पुस्तकालयों का मन्वित विवरणात्मक परिचय दिया जाय। वह रिपोर्ट देश-अर के वित्तिक पत्रों में प्रकाशित कर दी जाय। यदि कुछ दिनों के बाद स्थिति अनुकूल हो जाय जिसकी पूरी सम्भावना है तो संघ का एक मुखपत्र भी निकाला जा सकता है।

हमारी समझ में यह योजना असाध्य नहीं है। ही इनमें आवश्यकतानुसार संशोधन हो सकता है। हम सब के सभामकों का ध्यान इधर धातुएं करना चाहते हैं। साय ही हिन्दी-पत्रकारों और पाठकों से भी हमारा अनुप्राण है कि वे संघ की सहायता में यथास्तमित हाथ बँटावे। हम देश में पुस्तकालयों के सपठन की बड़ी आवश्यकता है। सपठित होकर वे शिक्षा-प्रचार के कर्म को बहुत धावे बध सकते हैं। ज्ञान की ज्योति का प्रसार करने में पुस्तकालय आधुनिक स्कूल-कालेजों से भी बड़कर है। देश में ज्ञान का आलोक फैलाने के लिए पुस्तकालय ही सर्वोत्तम साधन है। पुस्तकालय की सपमोचिता को कोई भी अस्वीकार नहीं कर सकता। यदि मन्त्री सपन से इस विधा में काम किया जाय तो आशा है कि देश के बनी-भानी लोग अवरय हो इधर ध्यान देंगे।

जून १९३३

श्रीकृष्ण और भावी जगत्

मनुष्य को प्राप्ति से मुक्त और शक्ति से जोड रही है और धंत तक रहेगी। मानव सभ्यता का इतिहास इसी जोड की कथा है। जिस प्राप्ति में हम रहस्य को जितना अधिक समझा वह उतनी ही सभ्य और जितना ही कम समझा उतनी ही अमभ्य ममभी

जाती है। सोय मित्र-मित्र भागों से चम। किमी ने योग का भाग लिया किमी ने तप का किमी ने भक्ति का किमी ने ज्ञान का किन्तु त्याग मभी भागों का त्यागो लक्ष्य था। 'निवृत्ति को बुझाई सभी के रहे है। मुन का मुन निवृत्ति है सब ने इसी तरह का प्रतिपादन किया। मोक्ष प्राप्तिके बन्धन में छुन जाना सुख और शान्ति की चरम सीमा है। मोक्ष-प्राप्ति के मित्र-मित्र भागों पर दीपक सब के लिए एक है—निवृत्ति।

इसका परिणाम क्या हुआ ? जिने कम का धनुराय हुआ उसने संसार और संसार के व्यापार से मुझे मोड़कर जंगल की राह ली। कम बचन है कम से भागो नहीं। यह बचन पथी में बंधे होगा। तपस्वन धाराएं हो गये। धाव भी मोक्षार्थी वसी धर्म-रत्न पर ध्यान है। बुद्ध ने भी निवृत्ति को ही प्रबल रखा जन मत में भी इसी तरह की प्रबलता रही। निरालों के बिहार बस्ती से दूर बने और वहाँ निर्वाण-वद प्राप्त होन लगा। ईसाई धर्म में भी पोप का राजाधों पर अधिपत्य हुआ धार्मिक बने और कमजोरी सोय बस्ती से दूर जंगल में रहने लये। इस्लाम ने भी यही शिक्षा दी कि दुनिया से निरत न भगामो। संकर, रामानुज बलभोजाय सभी निवृत्ति भाग के उपासक रहे और यदि जन-साधारण जन भाग पर कमने लगते तो धाव संसार में मानव-बंध मिट गया होता। किन्तु काम क्रोध माह मोभ न मोक्ष प्राप्ति की निवृत्ति में सब बाधा जाती। यह गौरव भयबल हुआ को ही है कि उन्होंने निवृत्ति और प्रवृत्ति दोनों को समुक्त कर लिया। प्रवृत्ति-मुक्त निवृत्ति और निवृत्ति-मुक्त प्रवृत्ति के मात्रा की मृष्टि की। कम करो लेकिन उसमें बंधो मत। कम बचन नहीं है, कम से कम की धारा रचना बंधा है। यज्ञाय जो कम किया जाय जो निष्काम हो उससे बचन नहीं होता। वही मुन और शान्ति का मूल है।

सोबिए किन्ना महान सत्य है ! कितना मौखिक धारण ! निवृत्ति मात्रक स्वभाव से मत नहीं जाती। उसके भाव पर बसनेवाले विरिष्ट बन ही होये। जन-भावारण्य के लिए वह भाग नहीं है। फिर उनके लिए धर्म का क्या धारण रहे जाण है। बर्छावन धर्म पर चमना। यही ऊच-नीच का भेद उत्पन्न हो जाता है। निवृत्ति-भाग का पवित्र कम के बंधन में फिने हुए प्राधियों में ध्यान को यदि ऊंचा नहीं तो पूषक धारण समझता है। कम मनुष्य के लिए स्वामाधिक क्रिया है। धार्यो हैं तो बैसया पवि है तो बनेगा पद है तो लक्ष्य। कम के पूष विनाश को तो कल्पना भी नहीं हो सकती। ममाधि भी तो कम है। मौन रत्ना भी कम है। मोचना भी कम है। निर्य कम हो या निमित्त कम धाव कम के फे से नहीं निकल सकते। फिर कम सदैव बंधन ही क्यों हो। उससे परमाध भी तो किया जा सकता है। नया भी तो की जा सकते हैं। तब यह निष्काम कि स्वाम भाव से कोई कम न किया जाय बरन् जिगने कम ही यज्ञाय भाव से निष्काम मात्र से ही किने जायें। यहाँ कम का धारण तो मिपठा है, कम है। उत्पन्न होनेवाला नुग नहीं मिलता। न कोई भेद है न उपे है। कम में बुरपाय भी तो है।

लेकिन कर्मयोग के धार्मिक पर बने रहना छोटी बात नहीं है। जयस में समाधि जपाकर बैठ जाना उतना कठिन नहीं है बितना कर्तव्य की बेसी पर अपना बहिराल करना। अपने कर्मों में हानि या लाभ से उवासीन रहना बीरों का ही काम है। और ऐसे कर्मयोगी संसार में बिरले ही होने हैं। ममत्व क पजे न निकलना सिद्ध के मुँह से निकलता है। समय-समय पर ज्ञानी पुण्य अवतरित होते रहते हैं और ममत्व के बंधन को दुःख के मूस को तोड़ने का उद्योग करते हैं पर यह बंधन गटके पाकर कुछ और बढ़ होता जाता है। यहाँ तक कि धाम इस संसार में मण्डल का अर्कतक राज्य है। भारतीय ममत्व पर कुछ रोक की कुछ निग्रह था क्योंकि वह अपने परम्परागत संस्कारों से अपने की मुक्त नहीं कर सकता था। कुछ और यशोक जैसे बरिच को प्रमुता को मात मारकर ज्ञानावन के लिए निकल जाते हो संसार में मुक्तिक ही से मिले। भारत की संस्कृति धर्म की चिन्ता पर लड़ी की बनी थी। हमारे समाज और राज्य की सम्पुष्ट व्यवस्था धर्म पर अवलम्बित थी। लेकिन पारंपारिक देशों न धर्म को जीवन से पुनः रखा गया जिसका फल यह हुआ कि धाम संसार में जीवन-संधाम ने प्रवृत्त रूप धारण कर रखा है। और यह ईरबद्धीन सम्पुष्ट किसी सकारणक रोक की भाँति फैलती जा रही है। जातियों और राष्ट्रों में अविश्वास है, धास में संघर्ष। स्वामी और मजूर धनीर और गरीब में भीषण युद्ध हो रहा है। जन और प्रमुता की लुब्धा एक विकृत संतु की भाँति समस्त धर्म संसार को नियमनो बनी जा रही है। उदार की जो मुक्तिवाँ सोची जाती है वह फणीमूठ नहीं होती। हरेक राष्ट्र मरत्न बूसरे की बरत दबा बैठने की बात में लया हुआ है। निबल जातियाँ उनके वेरो के नीचे पड़ी अविम साँठे में रही है। मनुष्य एक महीन बनकर रह गया है। जीवन न कुचिमत बढ़ती जाती है। सम्पदा के पीछे संसार पागल हो रहा है। उसकी प्राप्ति में किसी प्रकार के बंधन नहीं बसबल राष्ट्र निबल राष्ट्रों का बसबल व्यक्ति निबल व्यक्तियों का मसा दबा रहे हैं। संघर्ष की व्यापक ध्वनि सुनायी दे रही है। कहीं शांति नहीं कहीं सुख नहीं। ईरबद्धीन उद्योग में शांति कहीं। हम नहीं समझते कि किसी युव में स्वाध का हटना प्राबल्य था। बिचारवान लोग कह रहे हैं कि यह प्रलय का मास है, वह संघर्ष एक दिन ध्वनि की भाँति फैलकर सारे राष्ट्रों को भस्म कर दामेगा।

ऐसे समय में संसार के उदार का एक ही उपाय है और वह है कर्मयोग। इसी उल्ल को सम्पुष्ट रखकर हम ममत्व स्वाध और संघर्ष के पंजे से छूट सकते हैं। स्वाध का विमुक्त होना ही प्रेम का प्रसार है, उसी भाँति जैसे धान्यकर का हटना ही प्रकाश है। हिंसा और अप्रेम से बचा हुआ संसार पंगु हो रहा है। हिंसामय अवतरण और हिंसा मय एकत्र में विरोध अन्तर नहीं है। धार्मिकीतिकवाद के बमहीन उल्लों से उदार का उदार न होना। उसमें अध्यात्मवाद की स्फूर्ति जालगी पड़ेगी। धार्मिकीतिकवाद कोटप का धार्मिकार नहीं। हमारे यहाँ चार्बाक के सिद्धान्त भी उसी पक्ष का प्रतिपादन करते

है। पर योरोप का ईश्वरहीन सुखवाद ही आज ससार पर धाबिपत्य जमाये हुए है। 'धबिफार प्रान्धियों का धबिफ से धबिक उपकार सिखान्त रूप से निर्णय है सेकिन्त धव तक बहु सिख न हो जाय कि 'उपकार से क्या धमिप्राय है तब तक इस मत का भारत समर्पण नहीं कर सकता। जिस तरह 'उपकार शब्ध का ब्यबहार किया जा रहा है उससे तो यही बियत होता है कि 'उपकार का प्राराय स्वाध के सिखाम धीर कुछ नहीं। यह स्वार्थ-बुद्धि बतमान धवत को संघाम का श्रेय बगाये हुए है। समाज म जो बिपमता केतो हुई है उसका कारण यही स्वार्थोपासना है। जब तक कर्मयोग के तत्व ब्यबहृत न हूंगे संसार स्वाध के पंजे से बजा पड़ा रहेगा। कर्मयोग ही यह तत्व है जो स्वाध को सिट्कार पराध की धब्बा फहरायेगा। योरोप मे काँट हीमेस शपिनहार धादि बलानिको ने धम्मात्मवाद के बीज बो रिये है। धनेरिका म बेचान्त-उत्थों का जिस उत्साह से स्वाधत किया जा रहा है, भारत के बयोपदेशकों धीर धार्शनिकों का बहाँ जो सम्मान हो रहा है, उससे अनुमान किया जा सकता है कि हवा का प्ल क्लिबर है। यही योग जो स्वाध के सब से बड़े उपकार है उससे धब बिरक्त-से होते जा रहे है। बिचारतीस मनुधम प्रत्येक राष्ट्र में बाह्य ब्यबहारों से पराडमुख होता जा रहा है। योरोप ने अपनी परम्परागत संस्कृति के अनुसार स्वाध को सिटाने का प्रयत्न किया है धीर कर रहा है। समन्टिवाद धीर बोलठेविबन उसके बहु नये धाबिफार है जिनमे बहु संसार मे सुदान्तर कर देना चाहता है। उनके समाज का धावरा इसके धावे धीर जा ही न सकता बा। किन्तु धम्मात्मवादी भारत इससे संतुष्ट होनेवाला नहीं। यह धपने परमोक को ऐहिक-स्वाध पर बनिदान नहीं कर सकता। यह धम्मात्मवाद से मन्कनर दूर जा पड़ा बा जिसके फलस्वरुप उसे एक हवार धव तक गुलामी करनी पड़ी। धबकी यह केतेगा तो संसार को भी धपने साध बना देना धीर उस ध्यापन ध्रातृभाव की स्वापना करेना जो संसार के सुख धीर शान्ति का एकमात्र साधन है। धबकी इस बागृति में अंध-नीच धोटे-बड़े का भेद मिट जायगा। समस्त संसार में धहिंसा धीर धम का ब्यभोग सुनायी देगा धीर भगवान् कृष्ण कर्मयोग के धम्मात्मा के रूप मे संसार के उद्धारकर्ता हूँमे।

† यह मेस भुंती भी के कारणों में उन्हीं के हस्ताधर में मिल गया। पता नहीं क्यों धपने के लिए नहीं भेजा नहीं गया बा संभव है कहीं किसी धजात पत्र में धपा हो। कब भिखा गया कठना मुश्किल है पर बोड़ा पुठना बकर लयता है।—सं

तसवीर के दो रत्न

हमें बेकारे महाशय रामोदर साहब के साथ बड़ी सहानुभूति है। हम तो यहाँ के र्क्षितों और धामीयों का सवाचार बेचकर समझ रहे थे कि वह भगवत्प्राप्तन जिससे काव्य और महाकाव्य बनते थे भारत से बिदा हो गया था केवल बिस्मू और मिस्मू प्रायमी रह गये हैं और अब हम किसी महाकाव्य के प्रावुर्गमि से निराश हो जाना पड़ेगा क्योंकि बाकिर पुराने जमाने के दुष्यन्त और धनुष और बिक्रम को क्यारै कहीं तक चलेंगी और बाकिर पुराने जमाने की बातें धाय कितनी ही नयी माया से और रहस्यवाद की कविता में लिखिए उसमें धाय नयापन तो नहीं ला सकते। लेकिन महाशय रामोदरसाहब जी का सुवा समा करे। उन्होंने एक पद्य महाकाव्य की सामग्री जुटा ली और माहित्य-समाज को उनका हस्तक होना चाहिए। उनके साथ ही भीमती रत्नप्रया देवी को भी बग्यबाद देना चाहिए कि उन्होंने रामोदर साहब जी के हृदय में ऐसे स्वासिक्रम प्रेम की सट्टि की। मुमताब् ने वही पाठ बदा किया मगर कितनी खीसासोन्ट के साथ। हमने समझते हैं रामोदर साहब जी को उनका हस्तक साहस का इस प्रकार पर परिचय दिया है और प्रेम के लिए जितना न विम वैदिक साहस का इस प्रकार पर परिचय दिया है और प्रेम के लिए जितना महान् बनिरात किया है वह हुल्ल और इरक के स्लेज पर भी रोड-रोड नही मजूर बाटा। अन्त के बारे में हम चिन्ता नहीं। जो विवाह बेड और सात्पों और बाजे-माजे के मात्र होते हैं उन्ही का अन्त क्या सबैब शुभ ही होता है? अथर हवा बतुर है और उनके बतुर होन में किसी काकिर को ही तक हो सकता है क्योंकि उसने तजरबे के पाटसाक म वह सिखा प्राप्त की है, तो कोई बजह नहीं कि उसका अन्त मुबमय न हो। रामोदर साहब ने गद्दी छोड़ ली नहीं। मगर अठावह साहब साहबाना की गद्दी का बारिब हारे हरेबे नी साहब को साहब अन्कार ही सकता है और नया वह गिट के पूरे अन्तबन को साहब-गारे क महत् को साहब में अठावह साहब सेते हैं उनी महत् के बने के प्रति धधडा रिजायेंगे। प्रसन्नय ! किर हता ने कुछ कम त्याग नहीं किया। वह विवाह के पहले वैष्णव-वम्प्राड की बीबा साहब हारे के महत् से ले चुकी थी और महत् को भी मेवा में पाँच हवार को धेमी अँट कर चुकी थी। वह कल्पी नोनिर्वा नहीं लेती है। हाँ रामोदर साहब जी के विषय में हमें कुछ मन्त है अन्ति हम उन्हें विरवाग जिनात है कि जिम तरह धाय हम उनही मरहता हर रहे हैं अथर मुसा न माग्ना कोई अथर धाय तो इतनी ही अन्तरा ने उनके साहब सहानुभूति भी प्रकट करेगे।

॥ तसवीर के दो रत्न ॥

२७ मार्च १९३३

अभिवादन

जिसके सामने धारा भारत किसी न किसी रूप में खिर मुलाठा है जिसे धार्मिक धीर मास्तिवक सानु धीर नृहस्य ज्ञानी धीर भक्त संघाती धीर कर्मयोगी समान रूप से पूज्य मानते हैं, उसी की शुभ जन्म-तिथि के उत्सव में हम भी इस भरा रिम धीर धासु भरी धासु सिने धानस्य ममाने धामे हैं ।

भगवन्, हम अपना रोगा सुनाकर धाप का मन व्यथित न करेंगे । हमारे बाध ने फूल धूप धीप मेवज जो कुछ है, वह धापक चरखों पर धधित है । भक्त की इतनी मानरथा तो कीजियेगा ही । फिर इन्द्र भोक हो या धीरसावर, जाकर स्वम के कुछ धोविये । जब धाप हमारी कवच-कहानी सुनना नहीं चाहते तो हम भी नहीं सुनना चाहते । जब तक है धाप की पूजा करते हैं जब न रहेंगे तो क्या होगा कर्न जाने । धापके लिए हमारे-संछे धासक्य है हमारे लिए ता धाप एक ही है । धाप हम बिस्फुट कर हैं हमारे तो रोम-रोम में धापु-धपु में धाप निराज रहे हैं हम धापको सँछे धुमा हैं ।

धान ने पीठा का उपदेश देकर समझ लिया कि उससे अनन्तकाल तक हमें धीवन धस धीर ज्ञान मिलता रहेगा । क्या धापने यह सोचने का भी कष्ट उठवाया कि उस उपदेश पर धधने की योग्यता भी हम में है या नहीं ? धाप तो अन्तर्यामी है । धवर वह योग्यता हम में न थी तो क्या धाप उसे प्रदान न कर सकते थे ? धान न वह सामर्थ्य नहीं है, तो क्या हमें इस धोखे में धानना चाहते हैं ? सूर्य मेघों की धाड़ में धिपकर यह कहने का साहस रखता है कि उसम प्रकाश नहीं ? फिर क्या हम उस योग्यता के धधकारी न थे ? धिधा का धधकारी मिथुक के सिवा कोई धीर भी होता है भगवन्—सेकिन क्यों दिसा न ? धाप समर्थ है, धापको धोप देना छोटे मोह बड़ी बात है । हमीं धुबल है, हमीं बोपी है हमीं धधाने है । योगेश्वर को धपने-धराये से क्या प्रयोजन ! मोह धीर बात्सल्य तो मानवी धुबलता है । मेव का काम तो धरचना है, उसे इससे क्या मलमल कि पृथ्वी की धास धुभठी है या किसी धधाने की धईया बहठी है । धापने धमर-धान की धर्पा कर बी हम उसे नहीं हृधधम कर सके तो धापका क्या धोप ? माठा बाधक के धामम धीवन रल देती है, वह लाठा है या नहीं उस इससे क्या मलमल ! यही तो निममधान है । सेकिन ऐसी माठा धिधने धिनो माठा कृतवाने का धव करेयी ? हमारा क्या धिधका ? हम तो बाधु के कठ थे । फिर बाधु में धिल पायेंगे । धुख है तो यही कि धाप के धाम नो कर्मक लनेगा । धापको कुछ धापुम है धाप की इस धग्मभूमि में बहूँ धापने धास-धिधका की धी धीर योग धाधन धी धिधा बा क्या हो रहा है ? उसकी धरा धासो से देधनर भी क्या धापको भोट नहीं मगठी ? धापनी धम निधुरता

का रहस्य तो यही नहीं है कि हम धापने गहरों से फिर गये। और क्या इसमें साधन योग हमारा ही है? तो अब धाप हो जाता है हम किमकी शरख जायें! शायद धापने वह उपदेश देकर पृथ्वी को स्वर्ग बनाता जाहा था पर पृथ्वी-पृथ्वी बनी हुई है, वहाँ हिंसा स्वाध और अपहरण का राज्य है। धापने यही प्रायना करने की वृष्टता करते हैं कि या तो इस पृथ्वी को स्वर्ग बनाएँ, या हमें इस पृथ्वी पर अपने अस्तित्व को बनाये रखने की शक्ति दीजिए और या या-----संसार में हमारा निस्तान ही क्यों रहे?

अगस्त १९३३

राहु के शिकार

छान में दो-चार बार भ्रम और चक्र पर राहु के हमले होते हैं पर जिन पर हमने होते हैं उनका तो बाल भी नहीं बौका होता ही भी दो ही धारमियों पर उनका प्रेव उतर जाता है। जिस पेट में भ्रम और चक्र को निगल जाने की शक्ति है वह तो भ्रमपटल के निवासियों को इस तरह चट कर चबता है जैसे अंडे के मुँह में बीटा। ही ही ही ही निगल कर वह सन्तोष कर लेता है, यह उसकी समझनी है। प्रहृष्ट स्नान और सोमवती स्नान और साजों तरह के स्नानों की बसा हिन्दुस्तान के सिर से कभी टलेगी भी या नहीं समझ में नहीं आता। आज भी संसार में ऐसे अल्पविरवाच की गबाइरा है तो भारत में। अब भी करोड़ों धारमो यही समझते हैं कि मूरख भगवान और पन्ध्र भगवान पर संकट आता है और उन संकट पर पंचा स्नान करना प्रत्येक प्राणी का धर्म है। चित्ने धक्के पाये पड़े-लिखे सोय भी इतनी धारम्या में पंचा न दुबकियाँ सपत्ते हैं मानों यही स्वर्ग द्वार हो। साजों धारमो अपनी गाड़े पसीने की कमायी खर्च करके बक्के साकर पशुओं की प्रति रेश में सादे आकर, रेश में जालें गैबाकर नगी में दुबकर स्नान करते हैं बेजल अल्पविरवाच में पड़कर। चित्ने बक्के और रिजयी को जाती है चित्नी गुहों के हृदयगुहों का शिकार हो जाती है चित्नों के गहने नुच पाते हैं इसका हान तो देव ही जाने। पुराने अमाने में जब सोय पंचम यात्रा करने स्नान करने जाले व तो इस यात्रा का कुछ महत्त्व भी था। भाग न बहुत कुछ धनुमन हो जाता था। नरियों क तट पर धर्मोपदेश सुनने का अवसर मिल जाता था। अब वह सब तो कुछ न रहा अजब धिने गैबाकर प्रति-प्रति ने कल्प सहसा रह गया है। अपर पनी भोग ही यह पुण्य भूटने धाले तो जोई बात न थी। रोगा तो यह है कि अकिञ्चल रहित ही धाले है महाजन के रुपये कब मेबर या जोरी में रेश में बैठकर। न जाने यह मिथ्या धम भारत का यथा कब छोड़ेगा।

अगस्त, १९३३

अजमेर में श्रीदयानन्द-निर्वाण अर्धशताब्दी

ऐसा तो भारतवर्ष में शायद ही कोई हो जो अजमेर में अक्षयशताब्दी के उत्पन्न का विरोधी हो। ऐसे उत्सवों में राष्ट्र में जागृति और उत्साह उत्पन्न होता है और अपने उद्धारकों की यादगारी महात्मा सम्म राष्ट्रीय जीवन का एक घंटा है। यों ता हर मगर में धर्म समाज के सामाने बसते होते रहते हैं और पुस्तक के उत्सवों में भी समाज के मुख्य कार्य-कर्तव्यों में विचार विनियम होता ही रहता है। पर स्वामी जी के निर्वाण के पचास वर्ष बीत जाने पर यह आवश्यक है कि जिस संस्था को उस महान् पुण्य ने जन्म दिया उसके प्रमुख मता एक साथ बैठकर यह विचार करें कि जिस माय पर वे अपनी संस्था को न बना रहे हैं वही वर्तमान बसा न सबसे अच्छा माय है या समझ कुछ रही बरस करने की जरूरत है। और अगर जरूरत है तो क्या है। इस उत्सव के लिए भक्ति-भक्ति के मनोरंजनों और उमात्रों का प्रबन्ध करना उस अवसर के महत्त्व को बटा देना है। इस्लाम धर्म का यही हो सकता है कि इन उमात्रों के बगैर उत्सव सफल ही न होता। उसके साथ ही हम देखते हैं कि वहाँ कई ऐसे सच हैं जो किसी सिद्धान्त से भी उचित नहीं सिद्ध किया जा सकते। मसलन हम जान लुधा है कि वहाँ हवन न इस हवाय सच करने का निरन्तर किया गया है। बेल में जब एसी आर्थिक बसा फैसी हुई है कि करोड़ों मनुष्यों को एक बन्त सूखा बना भी मससर नहीं। इस हवाय का भी और सुगन्ध जमा बालना न धर्म है, न न्याय। हम तो कहेंगे यह समाज के प्रति अन्याय है। क्या इस सन्धे का इससे अच्छा कोई सच न निकाला जा सकता था? बरस इतना शानदार हवन बेल में एक बिलबलस बात होगी। जो सोच हवन-बन्त के चारों ओर बैठे कर्तव्य बने हुए भी के कुप्ये के कुप्य माय न भोकेये उन्हें और उमात्राडयो की एक प्रकार की सनसनी बबरम होयी पर उस सनसनी की इतनी नीमठ बहुत व्याधा है। बामिकता भी जास हानतों में आपत्तिजनक हा जाती है।

अक्टूबर, १९२३

महात्मा जी का बौद्ध मिशनरी को जवाब

उस दिन महात्मा जी ने उस बौद्ध का बड़ा अच्छा जवाब दिया जो बीन से धामा है और भारत में बौद्ध धर्म प्रचार करना चाहता है। महात्मा जी ने कहा कि ब्रह्म धर्म में बौद्ध धर्म का बहुत कुछ घंटा मिला लुधा है और ब्रह्म के गण्य भक्त भारत में ही है। बुद्ध ने भगवान के मिठातों का प्रचार किया उनका प्रबन्ध कितना ही किया जाय सतना हो अच्छा सत यही है कि बौद्ध धर्म के सच्चे मिठातों का प्रचार किया जाय

उसके उन मित्रों विरवालों का नहीं जो हरेक वर्ग के साथ उठी तरह निकल पाते हैं जैसे बात में पीलों के साथ पास निकल पाती हैं। और धर्म के प्रचार का सामन नहीं है जो महात्मा जी ने बतमाया। उदाहरण—बौद्ध-जीवन के अपने धारक का सामन ही बौद्ध-धर्म का प्रचार है।

१६ अक्टूबर १९३३

स्थानीय रामकृष्ण सेवाश्रम

शाली के रामकृष्ण सेवाश्रम के द्वारा विगत बत्तीस वर्षों से तीन दुर्गियों की सेवा मुमुषा हो रही है। इस धारम के लेखकों वप के कार्य-विवरण से प्रकट होता है कि इसके धर्मशास्त्र में सोसल सी साथ रोमी धर्मों होने पर धर्मशास्त्र में बने गये। दुस एक ही धर्मशास्त्री रोमियों की मृत्यु हो गयी। इसकी अधिक मीलों का कारण यह है कि धर्मशास्त्र में बा रोमी नहीं होते हैं, ब अधिकतर बहुत बड़े या कमबोर का धर्मशास्त्री रोमों से पीड़ित होते हैं। अन्तर जो ऐसे ही रोमी नहीं होते हैं जो मृत्यु के निकट होते हैं। धर्मशास्त्र में रोमियों की योजना बसित शास्त्र एकही बतारह रही। अन्तर एकको बतिया और बागे पर ऐसे रोमी पाठ करते हैं जिनकी लख भेनेबामा कोई नहीं होता। धर्मशास्त्र में दो ही सोसल रोमियों की सेवा-मुमुषा तथा उनकी सब प्रकार की सहायता की गयी। धर्मशास्त्र में नहीं हुए रोमियों के सिवाय भी बहुत से रोमियों को धारम के धारमशास्त्रों की धोर से बतारहों की गयी। ऐसे रोमियों की सबका एकदलीस हजार बार ही भी थी। ऐसे रोमियों की योजना बसित शास्त्र दो ही धर्मशास्त्र रही। धारम की धोर से वरीकों की धर्म कई प्रकार की सहायता की गयी है। नच वप कुल भाव तिरछठ हजार एक ही सतहृत्तर ६ और धर्म धर्म हजार भाठ ही बितर ६ बा। इसमें बाने धोर-पाई के धर्म छोड़ दिने गये हैं। धारम के प्रचार निरीक्षक स्वामी नरोत्तमानन्द समापति राजा नर मोतीचन्द कोषाम्ब की बसदेवशस्त्र मन्त्री राम मोक्षिचन्द्र धोर स्थापना सहायक मन्त्री स्वामी सतपानन्द हैं। समिति को सेवा का धर्म बढ़ाने के लिए धोर भी धर्म की धारमयकता है। इस ही में धारम का बार्निकोत्तर धर्मकता के हार्निकोर्ट के बन्दिध धीम्मबनार मुम्बई के लभानिधाय में हुआ बा। उस अन्तर पर होड़ा के एक धर्मन न एक हजार धर्म का गुप्त दल धोर हुलमी जिने की धीमती धानीवारी दल में पाठ ही धर्म का दल किया बा। यह सस्था धीम-मुम्बई की बार्निकोर्ट सेवा कर रही है। धारम है कि बन्दिध इसकी पूरी सहायता करने की बितर यह धोर अधिक सेवाधर्म करने में धर्म हो गये। धोर-पूजा का सर्वोत्कृष्ट भाग धीम-मुम्बई धोर धारम धीम रोमियों की सेवा मुमुषा है धोर बहु रामकृष्ण सेवाधर्म के द्वारा मुबारक वप से ही मन्दिध है।

२० नवम्बर १९३३

विदेश यात्रा और प्रायश्चित्त

एक जमाना था कि भारत के मिथुओं ने विदेश-यात्रा करके अपने देश और धर्म का पीरन बढ़ाया था। फिर पाश्चात् का यह चक्र चला कि विदेश जाना पाप हो गया। और आज भी ऐसे नरनाहुरख धार्मिक मिसते रहते हैं कि लोग विदेश से सौट कर प्रायश्चित्त करने के लिए कासो बीड़ते हैं। इस बीसवीं सदी में ऐसा उभोसना भारत-देशे पाश्चात्-ग्रवान देश के सिवा और कहाँ हो सकता है, और भारत अध्यात्मवाद का केन्द्र है। आज भी यहाँ के अध्यात्मवादी आप विदेश जाना पाप समझते हैं और उसके प्रायश्चित्त-स्वरूप गोबर खाते हैं, सिर मुकते हैं और भोज बेते हैं। इस धर्मनिष्ठता और पाश्चात्-सिन्धता पर धांसू बहाने की बन्धा होती है। इसी विषय पर शिष्य भी ने सद् योगी 'आज' ने एक बड़े मने का नोट लिखा है। आप प्रायश्चित्त की व्याख्या करने के बाद कहते हैं—

'आप धरर समझते हैं कि विदेश यात्रा कोई पाप नहीं तो आपका यह कसम्ब हो जाता है कि इसके लिए प्रायश्चित्त का बभाव डालनेवालों को आप निर्भीकता के साथ रिखा दें कि आप में पाकपद के विरुद्ध युद्ध करने की शक्ति का धभाव नहीं है। और धरर आप ऐसा नहीं कर सकते या स्वयं भी इस प्रकार के पाकपद में विस्वास रखते हैं, तो फिर आपका यह कर्तव्य हो जाता है कि आप विदेश जाने के पाप से ही अपने को बचाने रहे ।

इसी पाकपद ने और इन्हीं पाकपदियों ने भारत को चौपट किया और आज भी उनका बैठा ही पाकपद उब है ।

अनबरी १९३४

अच्छी और बुरी साम्प्रदायिकता

इंडियन सोशल रिफ़ॉर्मर संज्ञेवी का समाज सुधारक-पत्र है और अपने विचारों की उबारता के लिए मस्तहूर है। डॉक्टर आसम के ऐंटी-कम्युनल सोम की धामोषता करते हुए, उसने कहा है कि साम्प्रदायिकता अच्छी भी है और बुरी भी। बुरी साम्प्रदायिकता को उन्नाङ्गना चाहिए। मगर अच्छी साम्प्रदायिकता बह है, जो अपने लोभ में बड़ा उपयोगी काम कर सकती है, उसकी बर्षो बर्षोसना की जाय। अगर साम्प्रदायिकता अच्छी हो सकती है, तो पराधीनता भी अच्छी हो सकती है, मकदरी भी अच्छी हो सकती है, भूठ भी अच्छा हा सकता है, क्योंकि पराधीनता में जिम्मेदारी से बचत होती है मकदरी से प्रफ़्ता जम्मु सोबा किया जाता है और भूठ ने दुनिया को ठगा जाता है। हम तो

साम्प्रदायिकता को समाप्त का कोई समझौता है जो हर एक संस्था में समझौता करता है और अपना छोटा-छा सागर बना सभी को उससे बाहर निकाल देती है।

जनवरी १९३४

जाति भेद मिटाने की एक आयोजना

दुर्भाग्य के नि भी यादव ने अल्पमान भेद भाव को मिटाने के लिए यह प्रस्ताव किया है कि सभी हिन्दू-उपजातियों को ब्राह्मण कहा जाए और हिन्दू शब्द को उड़ा दिया जाए जिससे भेद भाव का बोध होता है। प्रस्ताव बड़े बड़े का है। हम उस दिन को भारत के इतिहास में मुबारक समझेंगे जब हरिजन सभी ब्राह्मण कहलायेंगे मगर नि यादव का प्रस्ताव जाने या न जाने (जाने को डूर भविष्य में भी धारा नहीं) सेलिब्रिटी का एक कह रहा है कि हम-बीस साल में यह सारी बातियाँ जिन्हें हूट कहा जाता है ब्रह्मण नहीं तो खरी बरखरय बन चुकी होंगी। और खरी से ब्रह्मण बनना केवल उनके एक हम उल्लंघन का काम है। मरकर भेद-भाव मिटाने में सहायता क्या देवी उसे तो उसके स्वामी रत्न में जैसे कोई विरोध धारण जाता है। स्कूल में नरके का नाम मिटाने जायें तुरन्त उसकी बात सिखायी पड़ेगी। जहाँ हिन्दू नाम धारा नहीं उसकी बात धनिकाम रूप से आ जाती है। जन-गणना में तो हमारे बड़े-बड़े निबिलियन समाज-शास्त्र के पंडित जातियों में नयी-नयी लोच करके और सुखी छिपी जातियों का धर्म-धार करके अपना नाम धरकर सेते हैं। हिन्दू लुप्त जाति-भेद का कितना मरत है, सरकार हम बात में उससे कोस भर धागे बंधे हुई है। और हमारा तो कहना ही क्या हम तो पहले कामरु या ब्राह्मण या ईश्वर है पीछे धारमी। किता से मिस्टे ही हम पहला यथाय यही करते हैं कि धाप बौन साहब है। प्रानीयों में भी यही प्ररन पूछा जाता है—कौन टाकुर ? अगर यह अपनी सजाति हुआ तो उनके लिए चिन्तन भी है, समझ भी है करना उसमें हम कोई विलचस्पी नहीं रखती। और हम कितने मय से अपने को शर्मा बनी तिबारी जगुर्बेरी मिलने है कि क्या पुधना ? यह इसके सिवा क्या है कि भेद भाव हमारे रक्त में सन गया है और हममें जो पक्के राजबारी है वे भी अपनी साम्प्रदायिकता का विगुण बजाकर पूरे गरी समझे करना हमकी पकरत ही क्या है कि हम अपने को जगुर्बेरी या जिबेरी नहें। सामकर उस बरदा में कि हमने भेद की मूरत भी नहीं लेनी और इसमें भी मन्बह है कि हमारे पुढकों ने भी खनी बेरों के बराम किमे से।

फरवरी १९३४

रूस में धर्म विरोधी आन्दोलन

रूस में इन दिनों ईश्वर शोही सोवियट सरकार ने फिर जोरों से ईश्वर के विरुद्ध प्रचार करना शुरू किया है। इसपर उसके धनीश्वरवासी प्रोपेमेंडा में कुछ सुस्ती या बर्फी की बिकका गठीबा यह हुआ कि जो गिरजे बन्द कर दिने मये से वह फिर खुल गये धीरे जनता में धर्म चर्चा फिर बढ गयी। दुनिया में इस पर चाहे जितना खुश मये मगर हम तो यही कहेंगे कि इसकी जिम्मेवारी सोवियट सरकार पर नहीं उन वर्मोपकीबिबो पर है जिन्होंने धर्म के नाम पर मला प्रकार के पाबण्ड र्कना रखे हैं। ईश्वर मन की एक भावना है। उसके लिए मन्दिरो मन्दिरो या गिरजाघरो की जरूरत नहीं। वह बट-बट ब्यापी है एक-एक बालू में उसकी ब्यापि है। वह प्रजा की कमापी पर बैन करनेवासा राजा नहीं कि उसे इसकी बिन्ता हा कि लोग उसके बिमुक्त न हा बार्गे। जो लोग ईश्वर मन्दि की पुन म बडे-बडे महम बनवाते हैं कि ईश्वर इसमें र्कना से प्रसीम को चारवीवारी में बन्द करके ब्यापक ईश्वर का अपमान करते हैं धीरे जो लोग उसकी प्रतिमा बनाकर उसका श्रुपाण करत हैं भोग लपते हैं उसका बिबाह करते हैं धीरे उसके नाम की माला बनते हैं वे तो ईश्वर का बिलौना बनाकर ऐसा पाप करते हैं जिसका कोई प्रायश्चित्त नहीं। ईश्वर को उपामना का केवल एक माग है धीरे वह है मन बचन धीरे कम की शुद्धता धर ईश्वर इस शुद्धता की प्राप्ति में सहायक है तो लोक से उसका ध्यान कीबिए, लेकिन उसने नाम पर जो हरेक कम म स्वाब हो रहा है उसकी बड़ जोरना किसी तरह ईश्वर की सबल बरी संवा है। धीरे सोवियट सरकार इनी पालंड का बन्द करना चाहती है। सबशक्तिमान ईश्वर से भावनी क्या होह करेया ? गंगा को हमकी क्या परबाह कि कोई उसे पून बढता है या बूडे। वह दोनों की को समान रूप से वहा ले जाती है।

मार्च १९३४

हिन्दू समाज के वीभत्स दृश्य—२

साश की दुर्गति

समाज में कुछ बुराईया ऐसी हैं जिनके सुधार के लिए शास्त्रों के प्रमाद्य लोबने पड़ते हैं कुछ ऐसी जिनके लिए कानून में संशोधन कराने की जरूरत है। वह दोनों ही बार्गे बन्द माध्य हैं लेकिन कुछ एगी बुराईया भी हैं जिनके सुधार के लिए न शास्त्रीय प्रमाद्यों की जरूरत है, न कानून की केवल जनता में एक प्रकार के सन्भाव धीरे मुखि की धीरे हिन्दू नारों की दुर्गति उन्ही में एक है। ऐसा जान पड़ता है कि किसी हिन्दू के मग्ते ही

उसके सगे-सम्बन्धियों को उससे भेरा-मात्र भी ममता नहीं रह जाती। जटपट बाँस का टाठ बना सब को रस्सी से कसकर बाँध लोग किसी नदी या मरुभूमि की घोर भाग बसते हैं। अगर किसी भयोर की मारा है तो उन पर रेशमी या शाल का कपड़न है बरीब की है, तो मामूली नैनगुन का घोर घनाब है तो बिचड़े ही उनका कठन के लिए काफ़ी है मगर बाँस का टाठ और रस्सियों का बन्धन धवरय रहना चाहिए। घोर मारा को संकर सारा कितनी तजकबयो सिखाते हैं कि उसके भोके म सारा गरदन हिलाठी हाथ मटकाठी और पाँव उछापातो बमती है, अगर इतनी मजबूती स न बँधी हो ता धवरय ही नीचे गिर पड़े। सारा को बराक घर म डेर तक न रहना चाहिए, बकिन यह क्या कि बिसका बीते इतने प्यार करते थे मरने के बाद उनके साथ जरा भी मुरीबत जरा भी सौजन्य नहीं दिखा सकते। क्या बहु स्वाब का ही सम्बन्ध था ? घोर घब उन सम्बन्ध को निमाने की कोई बान्तर नहीं रही ? कहा तो जाता है कि मरने पर भी सान्ना देह के पाम मँडराठी रहती है लेकिन स्वार्थी हिन्दू समाज हमकी बिनकुन परबाह नहीं करता।

घोर रास्ते में 'राम नाम धरय है' का बहु सोर मषता है कि कुछ न पूछिए। मगर रत का समय हुआ तो सारे मुहम्मने की गीब गुस जाती है। क्या सोर हमलिए मषाबा जाता है कि जनता को जीवन की कणमंगुरता की याद सिना ही बाय—यह धारमी मर गया इसी तरह एक दिन तुम भी घोर तुम्हारे अपने भी राम नाम मत्य हो जायेंगे। मत्य एक ऐसा बठोर मत्य है जिनको बार-बार याद सिनात की जल्गन नहीं। सब जानते हैं हम एक दिन मरेंगे। हिन्दू-समाज म मीठ का भय घोर भी धरियक है। मगर को मीठ का मूम गया है तो बहु बन्ध मारमवान है। क्यों सोर मषा कर उनको मीठ की याद सिना रहे हो। हम सोरगुन मे हमारी धामिकता का नहीं हमारी हुदम शुम्पता का बोध होना है। यह नमम इतना गभीर और यह बीना इतनी ममस्पती होती है कि बिस को कम मे कम कुछ डेर क लिए मन्तमुनी हो जाना चाहिए। जिन समय मूक बंदना घोर गहरे धाम बिसतन घोर मृतामरु क प्रति सच्ची शुभ कामना घोर मृत्यु क रोब घोर धातक तथा धनगत की कल्पना से हमारे मन को उबानुन हो जाना चाहिए हम इन तरह भागते घोर बिस्माते हैं मानों हम शाक कम घोर स्वाधमय भम धरियक है। सिनाइयो घोर भुमसमानों का बेलिग। उनकी धम्लेपिट-निक्या कितनी शान्त मंभीर, कोमल और सौजन्य पुल जाती है। बाँस की टिन्डी की जगत या ता लकना का टानुन होता है या पलंग। सब उस पर बहुत बीरे मे निटा रिया जाता है घोर ताबुन न जाने जाने पिन भूकावे बहुत ही धामिकता धाहिस्ता कब्रिस्तान की तरह जाने है। मानम बरन बामे भी उतो शान्ति मे जगाह के पीछे बसत है। हम कुरम का कल्पनेमाता पर इतना मगर जाता है कि राज बसते लोग जग टिन्ड जाते हैं। मृग प्राणी के प्रति इन सानों

का यह सम्मान धीरे-धीरे लेकर बिच प्रसन्न होता है। उसके बिपरीत हिन्दू शव की किरानी पीसाले-र होती है कि उसे बीमत्स कह सकते हैं।

यह तो हुई रास्ते की बात। इमरान का दुख तो धीरे-धीरे मुछोत्पादक होता है। वह मकड़ी की चिता शव का उस पर गिटाया जाना वह भाम का समना वह चिराम्य वह मंग-धरङ्ग लोगों का उठे लिये चिता की मकड़ियों का उकसाना धीरे-धीरे शव को उमटना-पमटना वह कपाल क्रिया वह घाँटों का फूटकर बाहर निकलना—इतना रोमाञ्चकारी दुरम है कि जो उसके धम्मत्स नहीं है उन्हें कई दिन तक म्मानि होती रहती है। इससे कहकर शव की क्या बुरशा हो सकती है? यह सीसत रहकर साधारण शवमी मृत्यु से भवनीय हो उठे ता क्या धारण्य है धरम मृत्यु नये जन्म का द्वार है, तो इतना मसुन्दर इतना धमानुपीय क्यों? मृत्यु को इतने गन्म इतने बीमत्स रूप में दिखाकर हम अपनी धात्मा को सुख करदे हैं। क्यों शव बाह का कोई ऐसा विमान नहीं घोषा जाता जिससे मृत्यु हमारे सामने इतने धर्मगत रूप में न घाने हम उसका पैसाधिक ताड्य न देखकर उसका शान्त भव देख सकें। अपने ही प्यारो को घाँटों के सामने हम दशा में देखकर बिच म चिराम्य धीरे-धीरे शव से उवासीनता उत्पन्न होना स्वामासिक है।

बिच माता के स्तन से हम पने जिन धाँटों के स्पल म हमने अपार मुञ्ज का धनुमच किया बिच बालक को हमने गोद में चिलाया धीरे-धीरे जिन मित्रों के मसे लिपट कर हमने मुञ्ज के बिच काटे उन्हीं को यों बसते चिटकते पटते देखना हृदय को कोमल भावनाओं से शून्य कर देता है और शायद यही कारण है कि जीवन म हमारी बाहे किरानी दुःखा हो किरानी ही अपमान महना पडे हम सब कुछ 'धीरे-धीरे माबर की तरह पी जाते हैं। क्या अपने प्रियजनों की बुरशा करना भी मन्त्रों म लिधा हुआ है? क्यों ऐसी बीमत्स सीमा देखकर भी हममें उसके प्रति बुरशा नहीं उत्पन्न होती? रिवाज शान्तों से भी बुरशा बीमत्स होते हैं यह सत्य है, मकिन् यह भी मत्य है कि समय के प्रबाह के सामने रिवाजो का हुमेला परास्त होना पडा है धीरे-धीरे बजह नहीं है कि इस बिषय म भी मुबार किया जाय। यारण में भी कभी-कभी शव बाह की क्रिया होती है; मेकिन् मन्त्रों की मरुद से यह सीमा हनी बन्द धीरे-धीरे इतने परिष्कृत रूप में उनास्त हो जाती है कि धरमा की तरह वेह भी शण्ड-मान म धदुरम हो जाती है।

इस बुरशा क बाध सब धात्मा की शान्ति का उदरान शुरु होता है धीरे-धीरे दिन श्रद्धा भोजन में उसकी मयासि हातो है। धम क नाम पर कौने-कौसे पाल्ड किये जाते हैं वह पिन्दान धीरे-धीरे महागाओं के गकरे धीरे-धीरे चिराररीवानों का मूर्धों पर तान देकर शवों उडागा—शादी भीमा हिन्दू संसृति को हास्यास्पद बना देती है। जीवन-मरण रहन-महन रम्य-रिवाज से ही हमारी संस्कृति का धीप होता है। धर्म धर्म या जातिधरमे हमारे दशन धर्मों को धीरे-धीरे उमिपरी को पडने नहीं घाते। बे तो

हमारे रहन-सहन को ही देखकर हमारे विषय में बारखा बना लेते हैं। शायद शब-बाहू की बुद्धि देखकर ही अंतरियों और समाधियों का रिवाज पड़ा होगा। इस समय की प्रथा प्रचलित है, उसमें सुधार और सुस्थि की बड़ी आवश्यकता है।

मार्च १९३४

हिन्दू समाज के बीभत्स दृश्य—२

अंधविश्वास

हिन्दू समाज में पूजने के लिए केवल एक संघोटी बाँध लेने और दूध में रास मिला कर पीने का रिवाज है। अथवा बाँध और चरस उड़ाने का अभ्यास भी हो जाय ता और भी उत्तम। यह स्वामी भर लेम बाद फिर बाबा भी देवता बन जाते हैं। मूक हैं बूढ़ हैं मीन हैं पर इसमें कोई अयोजन नहीं। बहू दावा है। बाबा ने संसार को त्याग दिया माया पर मात मार दी और क्या चाहिए। सब बहू जान क संसार है। पुँवे हुए फकीर, हम उनके परामर्शन की बातों में मनमानी बायीकियाँ डूँडते हैं। उनको सिद्धियों का धारण समझते हैं। फिर क्या है, बाबा जी के पास मुराह मीनशासों की मीन बना हात सबदी है। सेठ साहूकार समझे फैसे बड़े-बड़े बरों की देवियाँ उनके दरजों को धारण करती हैं। कोई यह नहीं सोचता कि एक मूक बुढ़ाचारी सम्पत्त धारणी क्यों कर संघोटी क्यात से सिद्ध हो सकता है। सिद्धि क्या इतनी सासान बीन है। हमम मस्तिष्क स क्रम सेन की मालों शक्ति ही नहीं रही। निमान को तकलीफ नहीं देना चाहते। मर्दा की तरह एक दूसरे के पीछे बीड़े बसे जाते हैं, कुँ मे विरें या अमरक म इसका दम नहीं। जिस समाज में विचार बदता का ऐसा प्रकोप हो उसको संभरते बहुत निम समेते।

हमारे इस अंधविश्वास से अपना मतलब निवारणवालों के बड़े-बड़े जल्पे बन गये हैं, ऐसी कई जातियाँ वेदा हो गयी हैं जिनका वेदा ही है, इस तरह स्वार्थ से मान मान नशों को त्यागा। य काम उप अग्ना पुष जानते हैं बाबाओं की पेटेंट हासी म वास्तुविधि करने का और नये-नये हथकड़े प्रेमन का इन्हें पूब अभ्यास होता है। एक सिद्ध बन जाता है, कई उसके चेह बन जाते हैं और किसी उमाड़ स्वान पर देर रात देर है, मानों धारमियों के साथ से भी भागना चाहते हैं, भोग विवास में सिद्ध मनुष्याँ ने किसी तरह का संसंग नहीं रखना चाहते। किसी तरह यह बहूदाह उड़ा बी जाती है कि बाबा जी प्येहारी है, केवल एक बार तासा भर रूप पी लेते हैं। एक दिन दो दिन यह मरती निष्काम जाव से ऊजड़ में जात मगाय पड़ी रहती है। बस भक्तों का धाना

शुरू हो जाता है। बाबा जी संसार मिथ्या है का उपदेश देने लगते हैं, उधर भी राफ़र और घाटे की ढ़ड़ी लग जाती है। सफ़ियों के कद गिरने लगते हैं। कुछ भक्त मोन इन श्यागियों के लिए कुटी बनाया शुरू कर देते हैं। और मभ भक्तों से कहीं अधिक सखा सभी भक्तों की होती है। कोई सड़के की मुराद लेकर घाती है, कोई अपने पति को किन्ती सौतिन के रूप फ़ैस में से छुड़ाने के लिए। बिन सफ़ियों को दो घाने रोम की मजूरी भी न मयती वे ही हिन्दुओं के इस धंधबिरवास क कारख़ा ख़ूब तर मास उड़ाते हैं। दूब ग़रा पीते हैं और ख़ूब ग़ीब करते हैं। और बसते बसत सौ-पचास रुपये कोई बड़ा मोब कराने या मंभारा बलाने के लिए कसूल कर लेते हैं। समान सेवा का कोई न कोड़े घाघार यह मोन बकर लड़ा कर लेते हैं। कोई-कोई मंभिर बनवाने का फ़त ठने देठा है, कोई साजान लुबवाने का कोई पाठशाखा लोमने वा। और कुछ न हुआ ठी बचवाभा ठी है ही। इतनी मूलियाँ रामेश्वरम् की यात्रा करने वा रही है। हिन्दू-भाष का फ़तव्य है कि उन्हें रामेश्वरम् पहुँचाये। बिना हर-फ़िटकरी के मास लोला करने का यह ब्यबसाय इतना धाम हो गया है कि बाब हर पचीस घाघमियों न एक साधू है। और ऐसे मिशुकों की ठी मिनती ही नहीं। वो ख़रत पर बिस्वगी बसर करते हैं। ज्याबा नहीं ठी पचीस करोड़ में पाँच करोड़ ठी ऐसे मोग होये ही। बिब समान पर इतने मुफ़्तकोठों का भाग लदा हुआ है। बड़ कैसे पनप सकठा है, कैसे बाग सकठा है। ये मोब बार-बार यही प्रयत्न करते रहते हैं कि समान धंधबिरवास क कत में मुन्बित पड़ा रहे, केतने न पावे। हमें ख़ूब पकपक मास बिनाधो स्वय में तुम्हें इनसे भी बड़िया मास मिसेगा। हम हाब वो ठस हाब लो। स्वग का बप भी किठना मोहक खीच रहा है कि इन मोवों की कसपना शक्ति के कुरबान जाइये। मस्यलोक में लो कुछ दुर्मन है। बड़ सब मही गली-गली मारु-मारु फिरता है। ऐसे मुज के लिए किसी मिशुक को बोड़ा-सा मोजब कप देना वा किसी देबता को बस लख देना वा किसी नरी में एक डूबकी सबा देना कौन मुसी से स्वीकार न करेया। जब इतनी शम्पानी से मोब मिल सकठा है ठी किसी साबना की ज्ञान की सद्ब्यबहार की बकरत ?

और धाम बड़ी-बड़ी जमीदारियों के मामिक किठने ही माग्त है। उनकी सेन देन की बाटियाँ बसती हैं। तरह-तरह के ब्यबसाय होये हैं। और बहुबा उन्ही बालियों की मठानें बिन्होंने कामगार महन्तों को शान बी बी धाम इन्ही महन्तों से कब सेठी है। इनका भाव बिमान और ऐश्वर्य हमारे राजाधो का भी सखित कर सकठा है। उन बापघार का उपमोम धब इगके बिना कुछ नहीं है कि मुस्टडे खीय बंड पेमें और ब्यभिचार करें। राज के उत्थान वा जावति में वे भी गक बहुत बड़ी बाबा हैं। धन्ब बिरबागो बनता धब भी उन पर बरदा रखती है। वे उस एक चुटकी राज में स्वय में बाबिल कर सकते हैं। ऐसी बिमूनि और किमके पाम है ? इन महन्तों के बुठघार, ऐयाशी और पैशाचिकताधों की लबरेँ कभी-कयो प्रकाश में धा जाती है। ठी मानुस होठा

है कि इनका भिन्नता पतन हो गया है, लेकिन मुरादियों को उन पर बही श्रद्धा है। हम इतने धर्ममय हो गये हैं इतने पुरुषार्थहीन कि हमें अपने पुरुषार्थ से ज्यादा भरोसा धार्मिकता पर है एक प्रकार से हमारी विचार-शक्ति मृत हो गयी है। हमारे तीव्रस्वभाव क्या है? क्यों के प्रहारे और पार्श्वियों के धक्काड़े। बिधर बेहिए धर्म के काम का वाजार धर्म है। यमी-यमी मन्दिर गमी-यमी पुजारी और मिश्रक पूरे नगर के नगर इन्ही बीजा से धारा है। जिनका इसके सिवा कोई उद्यम नहीं कि धर्म का डोंग रचकर धक्कड़ बस्तों को टों? जब जनता मुर ठगी जाना चाहती है तो ठानेवाने मो डरकर पेश। होमे। बरकर हो तो धार्मिकर को माँ है।

धर्मों न देस फगास हो। जिस समाज पर एक करोड़ कोशल मूनन धर्मो के भगु-पोषण का भार हो बहु न जगल रहे तो दूयरा कौन रहे! गरीबो पर भी धर्म का जिनता बड़ा टकस है उतना शायद सरकार का भी न हो। कोई प्रहृष समा और जनता तीव्र स्वभाव को धोर बीबी। जो कुछ तन-येट कटकर बचाया या बहु सब धर्म-बिरबास की भेंट बह गया। और धार्मिक स्वभाव भी मिन बाय और यह भी मान लें कि उम बक्त किशानों से जगल कम सिवा बायगा और टकसो का भार कम हो जामना फिर भी धर्मबिरबास के सम्मोहन में अचेत जनता हमसे ज्यादा मुभी न होमी। उम उसका परलोक प्रेम और भी बडेवा और बहु और भी धार्मिकी से पार्श्वियों का शिकार हो जायगी। और हम धार्मिक बहिदता से बहकर इस धर्मबिरबास का फल जनता की बौद्धिक बुजलता है जो उसकी सामाजिक उपयोगिता में बाधक होती है। उम कदी न गोता मार सेना या शिबभिय पर जस बडा देना किमी भाई से महानुमुदि रखने या अपने व्यवहारों में सफ्फाई का पालन करने की अपेक्षा ज्यादा फल बाधक मानुम होता। उसने धर्ममी धर्म को छोड़ कर जिसरा मूल तत्व है समाज की उपयोगिता धर्म के डोंम को धर्म मान लिया है। जब तक बहु धर्म का यह धर्ममी रूप न प्रहृष करेया उसके उधार की धारा नहीं। सिद्धित समाज के मामने जितनी समस्याएँ हैं उनमें शायद सबसे कठिन यही समस्या है। यहाँ उसे धर्मबिरबास की पोषक प्रबल शक्तियों का सामना करना पड़ेगा जो धर्मन्तकाल से जनता की विचार शक्ति पर कब्जा जमाये हुए हैं। किन्तु भीमत्स है बहु दुश्य कि एक भोग-या बटाकारी जीव भूनी जमाये बैठा हुया है और एक दजन मनुष्य उसके पास बैठे चरम क दम गमाकर अपने जीवन को सकल कर रहे हैं। जनता की मनोवृत्ति जब तक एनी है केवल गजनीतिक धर्मिकारों से उमका कस्याथ नहीं हो सचता।

मीमात्र से धर्म देस में ऐसे सच्चे सत्यामियों का एक दम निरूप धाया है जो समाज-सेवा की धीर राष्ट्रीय जासति को अपने जीवन का ध्येय बनाये हुए हैं लेकिन धर्मी तक हमने निरुत्थे माधुष्यों में जासति उत्पन्न करने के जितने प्रयत्न किये हैं वे सफल नहीं हुए। न जाने क्या बहु शुभ धर्मतर धायया कि हमारा माधु-समाज धरने

कर्म का समझ जायगा और यह समझ जायगा कि उसके हाथों में देश का भगाने की शक्ति बड़ी शक्ति है ।

२६ मार्च १९३४

हिन्दू समाज के वीमत्स दृश्य—३

मंदिरों पर एक दृष्टि

हिन्दू समाज के परम पवित्र तथा माननीय मंदिरों की घोर दुष्टिपाठ करने से हृदय कांप उठता है । वहाँ की दसा कमीष ही नहीं बितावमक भी है । वहाँ मन्त्रि की आज्ञा की धारम-साधन की तथा उपस्था की निमल धारा बहावर सोवों के जीवन को सुन्दर और सुखकर बनाना चाहिए, वहाँ धाब बुधवार पापवार भ्रष्टता तथा दुष्कर्मों का केन्द्र बँसकर धारमा रो जठरी है । उन्हें बँसकर एक खोरदार प्रम उठता है, कि क्या यही मन्त्रि है ? क्या यही भवमान् का निवास है ?

यह बात अब तक किसी से छिपी नहीं है कि इन मन्त्रियों की धाड़ में धाब बढ़ बढ़े लज्जा-बन्क कल्प हो रहे हैं । पुजारियों का महर्गों का और बर्म पुरुषों का जीवन भयानक बिनासिता सं भय हुआ है । वे मन्त्रियों की धाड़ में अवम से बहम्य कर्म करते नहीं समति । ईश्वर को पाला सुगाकर कृत रखने के लिए उन्हें बँस्यार चाहिए । इस बहाने वे अपनी राजसी कामना को पूर्ण करते और अपने जीवन को बिनास-बासना और पठन के बहरे पड़े में डाल देते हैं । तिस पर भी हिन्दू-समाज के लिए वे पुण्य हैं माननीय हैं और बेबता-मुस्य हैं, क्योंकि वे पुजारी हैं, महत्त हैं और बमगुरु हैं । प्रतिदिन धनेफ भोमी-भामी तथा बर्मभीष मुबतियाँ पुण्य कमाले के लिए मन्त्रियों में पहुँचती हैं और वे उन ईश्वर के प्रतिनिधियों के द्वारा वा उनके सनेठ-माण से गायब कर बी जाती हैं और उनकी धाम-बासना की शिकार बन जाती हैं । हिन्दू समाज को यह सब कुछ मान्य है । प्रतिदिन उसकी बाँसों के सामने ऐसे दुरम धाले रहते हैं लेकिन यह धाँसों पर नही बाँस कर बवाल पर ठामा समाजर कुप है क्योंकि धाँसि व मोम बम के डेन्डार है ।

यहाँ इन पुजारिया तथा बमगुरुओं का जीवन सीधा-सादा पवित्र और त्वाय उपस्था से पूल रहना चाहिए, वहाँ धाब वे इन सब बातों व बिपरीत 'सद्गुणों' के भएदार बने हुए हैं । उनके बिपय में क्या बहा जाय । विगलाने के लिए तो वे बड़े सबमी हैं त्वापी हैं और तप तथा मन्त्रि के सा'साल् बमता' हैं लेकिन धन्वी तए देउने पर ही उनका सबमी रूप प्रबट होता है । उनमें धोम उस और काट नू-नूट

कर मरा हुआ है। यों कहना चाहिए कि उनका चरित्र अद्भुत है। गाँव मधुती शहर
गाँव में धार्मिक धारि बीजों के बिना उनका काम नहीं चल सकता।

यस देश के प्रति उनके व्यवहार पर भी दुष्टिपात कीजिए। वे शहर के कपड़ों
को स्वयं में भी देखना पाप समझते हैं। देशी मिसो का बरिया कपड़ा उनके कोमल
शरीर को नुसला है गड़वा है और उससे उनका शरीर किस जाता है। उनके लिए तो
शास्र मैकेटर का बना हुआ महीन से महीन समसम चाहिए। देशी धीर बिदेशी का
प्रम उनके लिए एक बेवकूफी का प्रम है। उनको देशी से क्या मतलब उन्हें देश से
क्या शरोकार? वे तो देश के बमगुरु हैं महन्त हैं पुजारी हैं। इसलिये वे जन-समाज
के लिए पूज्य हैं। उनकी बातों में उनके कर्मों में किन्हीं को हस्तक्षेप करने
का क्या धरिकार। उनके धान्य में किन्हीं को बिष्णु डालने का बाधा डालने का
क्या हक?

धीर इस देश में कोई धरिणी बात होती है, कुप्रथाओं के विरुद्ध धाराज उठायी
जाती है प्रचार किया जाता है, पुस्तकों धीर सज्जाबनन स्त्रिया को मिटा डालने का
प्रयत्न किया जाता है, या कोई देश-विरुद्धापी नियम या बिष्णु पान होता है तो वे जन
के डेकेदार, समय को न देकर हुए, धरिने नीच स्वाध-साधन के लिए ऐसे काज से विरुद्ध
बपनी पूरी शक्ति लगा देते हैं। जनता-द्वारा बिये हुए कपड़ा को जनता के ही विरोधी
कर्मों में व्यय करते हैं। कपड़ों को पानी की तरह बहकर वे ऐसे कार्यों के विरुद्ध धाराज
उठाते हैं और देश-विरुद्ध प्रचार करने का प्रयत्न करने हैं। जनता का कपड़ा
जनता के ही विरोध में खर्च करते उन्हें जरा भी संकोच नहीं होता। समाज के लिए
उनका यह काज धरिणी है और हस्तक्षेप का एक धान्य उदाहरण है पर वे धरिणी
पूरी शक्ति लगाकर भी देश को नश्यत पर जाने से नहीं रोक सकते क्योंकि उनमें कोई
जन नहीं है। शारीरिक मानसिक धार्मिक तथा नैतिक बल के जोषण धाराज ही ने
उन्हें पतन के गहरे गड में निरा किया है। उनकी बुद्धि को धरिणी के धरिने धरिणी ने
धरि रखा है, इसी कारण वे धरिणी धरिणी की बात धरिणी की धरिणी धरिणी धरिणी धरिणी
को धरिणी रोक रहे हैं। मना मित्र हुआ धीर निःशक्त मनुष्य समय की शक्तिधरिणी महर
को धरिणी रोक सकता है?

धरिणी के यह विधातागण नये युग की धाराज की नहीं मुन सकते। नये
धरिणी की धरिणी महर के विरुद्ध लड़े होने में उन्हें मुन मिलता है, पर वह निश्चित
है कि धरिणी नहीं कम रखा धरिणी उनका यही हाम रखा था वह धरिणी भा धरिणी न ही
है जब कि नवीन युग की प्रचलित शक्ति उनके धरिणी का ही मित्र होगी। धरिणी उन्हें
इस बात पर जरा भी समझे हो तो वे धरिणी देशों की धीर दुष्टिपात करें। वे यह धरिणी
से धरिणी कि नये धरिणी की महर से धरिणी रूढ़कर धरिणी के पुजारियों महरों धीर धरिणीधरिणी

ने क्या फल पाया। यह बात पुरानी नहीं है, कम की है। यह बात उन्हें एक मापी
 इंस्ट की सूचना से रही है और उन्हें साजनाम कर रही है। तिस पर भी यदि वे नहीं
 से तो वो उनके नाम में लिखा है, सो तो होगा ही किन्तु फिर उनके लिए कोई
 खबर न रहेया। सबसे धाब्धा तो यह हो कि वे अपने को सुधारें नवीन युग के
 अनुकूल बनायें। इसी में सलका हित है, कस्यास है। समय की सहर बहुत बसनाम
 लेती है। बड़ी से बड़ी शक्ति द्वारा भी नहीं रोकी जा सकती। बेश की दरा को मसी
 तालि बेकते हुए, बम के धाहम्बरों उसकी स्वर्णियों और राजसी नियमों से मुक्त करन
 ि ब धपना अपने बम का अपने समाज तथा अपने देश का सबसे बड़ा हित कर सकेंगे
 और जनता के हृदयों में जैसा स्थान प्राप्त कर सकेंगे।

अप्रैल १९३४

स्वदेशी

स्वदेशी की आड़ में लूट

स्वदेशी वस्तुओं का शिथिल प्रभाव देखकर जहाँ हय हय होता है वहाँ यह देखकर खे- भी होता है कि ब्राह्मण के त्वाय के नाम का व्यापारी समाज चिन्तना समुचित लाभ उठा रहा है। कोई स्वदेशी चीज खरीनिये वह उसी नाम की विदेशी चीज से का तो महुँपी होगी या अगर एक नाम हुए, तो नाम बटिया हुआ। नये व्यवहारों के विषय में तो हमें कुछ कहना नहीं लेकिन जो माल व्यापक नाम से बनता आता है वह क्यों विदेशी माल से बटिया का महुँवा हो। अगर ब्राह्मण से त्वाय की धारा की जाती है तो माल के करोड़पति मामिकों को क्यों कुछ त्याग करने को प्रेरणा नहीं होती। वह तो सतत बबरपस्ती है कि उरीब ब्राह्मण तो एक की जयह मवा खच करे और बनमान माल खोनर दोनों हाथों से धाना कर मरे। इस बेकारी के जमान में धारवी को एक-एक सेते की संवी है। मजूरी भी समी हो गयी है, कच्चा माल भी मस्ता हो गया है, पर कपड़े का नाम ज्यों का त्वा है। ब्राह्मण यदि एक का सवा देता है तो यह निश्चित है कि वह अपना कोई दूसरा बकरी खर्च कम कर देता है। दूसरा सब यहाँ पे- के बिना और है ही क्या। इस पेट काट कर महुँवा स्वदेशी माल खरीनिये है। अगर माल मामिक उनी तरह माल से जीवन के सुख भोग रहा है। उसके विमान में कोई कमी नहीं की जा सकती। वह तो बड़ी जाहला है कि भारत में और कहीं का माल म धाने पावे और वह अपनी चीज के मुँह मिये नाम लड़े करे लेकिन यह नीति बहुत शिथिल नहीं बन सकती न जनता को हुँसा मुसालये में रखा जा सकता है। अगर माल मामिकों की सोलुपता में ही बढ़ती रही तो जनमत की धारा पलट जायगी और फिर परिस्थिति को संभालना कठिन हो जायगा। 'स्वदेशी' राष्ट्र के प्रति श्रुति है और इस श्रुति का पालन दोनों और से होना चाहिए। माल-मामिकों का कल्प है कि वे धरने माल को उनी त्याग-भाष से सस्ता बेचने का उद्योग करें, जिस त्याग-भाष में ब्राह्मण उनका नाम सटीरता है।

१९ अक्टूबर १९३२

प्रयाग की स्वदेशी प्रदर्शनी

दुधनगर की प्रयाग में स्वदेशी प्रदर्शनी शुभ गयी। मत्त सब धान-जवन में प्रदर्शनी हुई थी। इन वर्ष धान-जवन पर पुनीम का क्रम्य है। इनलिए धनीवर की

कोठी में प्रदर्शनी हो रही है। बाबकी करीब दो सौ बूकानें धापी हैं, जिनमें मुर्शिदाबाद, बरौचोर, पबान धारि बुर-बुर की बूकानें हैं। बूकानों की रोसनी और सफ़ाई सराहनीय है। हम श्रीयुक्त मोहनलाल जी नेहरू और उनके सहकारियों को इस सफल उद्योग पर बधाई देते हैं। बिन्दगी में जिन चीजों की साधारणतः हा गृहस्थ को जरूरत पड़ती है, प्रायः सभी यहाँ मिल सकती हैं। अगर हम एक बार स्वदेशी का बत से भें तो हमें बहुत कम चीजों के लिए बाहरजालों का मुँह देसना पड़ेगा। साथी के लिए पक्क प्रबन्ध किया गया है। हमें एक बूकान पर मिश्र-मिश्र प्रकार की साइ बैसकर बड़ी प्रसन्नता हुई। धानू के लिए, ऊस के लिए, फूलों के लिए, घनम-घनम कारें तैयार की गयी हैं। किसानों की जरूरत की यह एक चीज हमें नजर पडी। इसके सिवा सभी चीजें शिक्षित समाज की ही जरूरतों को पूरा करती हैं। किसी ने कृषि-विषयक कोई चीज नहीं भेजी। शासक असुविधा के कारण ऐसी चीजों का प्रबन्ध न किया जा सका हा। बुधवार को प्रयाग का कोई धनाया ही धारनी होबा जो प्रदर्शनी में न पहुँचा हो। स्वदेश-ग्रम की यह सहर बेसकर किसानों के हृदय धालन्य और गब से न फूल उठेया। लेकिन अहाँ जनता के हृदय में स्वदेशी वस्तुओं के व्यवहार और प्रचार में इतनी लगन है, वहाँ इन चीजों के व्यवसायियों में चीजों को सस्ती बेचने और उनको उत्तम बनाने की लगन नहीं है। कुछ बोझी-सी चीजों को छोड़कर और सब चीजों में जनता को त्याग करने की जरूरत है। किन्तु स्वाम के आचार पर कोई व्यवसाय बहुत दिनों तक सफल नहीं हो सकता। उसे तो व्यापार के नियमों का पालन करने ही में स्थायित्व प्राप्त होया।

३१ अक्टूबर १९३२

स्वदेशी पर मालवीय जी

गत २१ अगस्त का कमकता में स्वदेशी कमसिबल म्यूजियम का उद्घाटन करते हुए पं मदनमोहन मालवीय ने स्वदेशी के सम्बन्ध में निम्नलिखित महत्वपूर्ण उद्गार प्रकट किये थे—

‘भारत के समस्त गृहानु नेता और तिसक ही धार दान महारमा मालवी स्वदेशी-ग्रवार पर बहुत धार्थिक जोर देते धार्ये हैं। सब प्रथम बंध भंय से इस धान्दोमन को विशेष रूप से उत्तमना भिजो। उनके बाद पचीस भय से हाइ इनको धार्थिक महत्व प्रदान करते रहे हैं। इनमें समेह नहीं कि धय यह धान्दोमन बहुत कलियामी हो चुका है सो भी बड़ी लगजा का विषय है कि धय भी हम सम्बन्ध में बहुत-सा धाय करने को रोय है।

‘जीवन निर्वाह के लिए कपड़ा एक बडा जरूरी वस्तु है। भारतीय भिसें और कियें धामी नक इत धारवरयकता की पूर्ति नहीं कर सके हैं। यह बड़े ही धारण्य का

विषय है कि बाहरवाले भारत के बाजार से रई खरीदकर उसे महाम पर लाकर अपने देश में से जाते हैं और वहाँ से उसका कपड़ा बनाकर फिर इस देश में बेचते हैं फिर भी वह कपड़ा देश की मिलों के कपड़े से सस्ता पड़ता है। जलान की इस समय भारतीय बाजार में प्रचलता है और उसने इस विषय में संकाशापर को भी मत्त कर दिया है पर हमारे लिए आपन और संकाशापर दोनों विदेशी हैं और इसलिए हमको उन दोनों के माल का उपयोग नहीं करना चाहिए। हमको एक-मात्र यह विचार करना चाहिए कि हम भारत में बनी चीजों से किस प्रकार अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकते हैं ?

इंजीन घर तक मुक्त-द्वार बाणिज्य की नीति पर बर्ष किया करता था और बाणिज्य नीति का पोषक था। अब उसने मुक्त द्वार बाणिज्य नीति को बठा बठा ही है और समस्त दृष्टिकोण में 'घरेलू माल खरीदो' का आन्दोलन बढ़े ओर-ओर से हो रहा है। इससे भी समुद्र न होकर उसने थोटा-सा न साम्राज्य व्यापी स्वदेशी-आन्दोलन को जन्म लिया है। अब इंजीन-जैसे देश को जो अब तक व्यावसायिक-जगत् में सर्वोच्च स्थान पर प्रतिष्ठित था अपने देश की बनी चीजों को व्यवहार में लाने का आन्दोलन करना पड़ रहा है तो भारतवर्ष के लिए स्वदेशी प्रचार के आन्दोलन में शक्ति लगाने की कितनी अधिक आवश्यकता है यह समझना कठिन नहीं है।

३१ अक्टूबर १९३२

भारतीय चीनी के कारखानों का अन्याय

स्वदेशी चीनी को प्रोत्साहन देना हर एक हिन्दुस्तानी का धर्म है लेकिन कारखानों के स्वामियों का भी जनता के प्रति कुछ दाय्य है। इसे वे भूल जाते हैं। एक ही दाम की देशी और विदेशी चीनी नीति। देशी चीनी घापको बढ़िया मितेयी। चीनी का भी बड़ी हात है। विदेशी चीनी का बढ़ने बहिष्कार हुआ है, यह व्यवसाय बड़ी उन्नति कर रहा है मगर चीनी के कारखानों के मालिक धन्य स्वदेशी व्यापारियों की ही प्रति घटिया से घटिया माल घाटकों के द्वारा बेचकर अपना उन्मु लीधा करना ही उचित समझते हैं। धनो हान में चीनी के एक विशेषज्ञ ने भारतीय चीनी के व्यवसाय पर आलोचना करते हुए कहा था कि विदेशी चीनी में बराबरीय मूल रहता है लेकिन भारत की चीनी में बहुत ज्यादा मूल रहता है। इन्ने धारा है हमारे चीनी ॥ कारखानेशर हम बेतायनी पर विशेष रूप से ध्यान देवे। विदेशी चीनी पर सरकार न कर लगाकर देशी चीनी की रक्षा की है लेकिन यदि कारखानेशर हम रक्षा का रूपमाय करेये तो वे जनता का महामय और महानुभूति को दैये और उनकी अफ-मोयुपता के हाथों एक बहते हुए व्यवसाय को घना पहुँचने की संभावना है। भारतीय रूपकों के हाथ में अब से-देकर यही

ऊन की खेती रूढ़ गयी है। अगर कारखानेशर जनता को गैसी बीनी खिलाकर अपनी बेव गम करते रहे, तो भोग विवश होकर बिदेसी बीनी खाने लगेंगे और बीनी के कारखानों का विनाश तो हो ही जायगा बेकारे किसान सेंट म मान जायेंगे। मैसी बीनी का स्वास्थ्य पर क्या असर पड़ता है, इसकी खोज तो कोई डाक्टर ही कर सकता है, पर इतना तो सभी जानते हैं कि मैस शरीर के अंदर पहुँचकर कोई लाभ नहीं पहुँचाता।

७ नवम्बर १९३२

असली और नकली स्वदेशी चीजें

कई दिन हुए जो एमवास की गौड़ ने 'घाब' में एक पत्र लिखकर बतलाया था कि प्रायःकत जिन फीटेमपेनों को हम स्वदेशी करते हैं वे सर्वथा बिदेसी हैं उनमें कोई नाम स्वदेशी नहीं सभी चीजें बिदेस से मँवाकर यहाँ बोज भी गयी हैं। यही हमने मइस्ने से बाजार में स्वदेशी के नाम से बिक रही है और जनता को बोजा दिया जा रहा है। अगर इन हमसो के प्रतिरिक्त और भी कितनी बिदेसी चीजें स्वदेशी के नाम से बिक रही हैं और जनता को धाका दिया जा रहा है। कितनी ही सुर्वथ कितनी ही ज्नी और रेसमी चीजें कितने ही शीरो और चीनी के सामान कितने ही तरह क काबज यहाँ स्वदेशी के रूप में बिक रहे हैं इन्मार्कि मेरेम के सिवा उनमें कुछ भी स्वदेशी नहीं है। एसे बोखेबाज ब्यापारी इस स्वदेशी की हवा में बिलना मूटना चाहे मूट सँ मगर एक दिन उनका परबा फलू हो जायगा और इस बोखेबाजी का फल उन्हें मीगना पड़ेगा। स्वदेशी मैसे के ब्यवस्थापको से हमारा यही धनुराच है कि वे बिना प्रच्छी तरह जाँच पड़ताल किये ब्यापारियों को स्टाल न दिया करें। बोखेबाजों के बुस धाने सँ यही नहीं होता कि बिदेसी मस की खपत होती है बल्कि उन्ची स्वदेशी बस्तुओं को उमरने का अवसर ही नहीं मिलता।

१४ नवम्बर १९३२

झककर-मिलों की धूम

घाजकस शककर मिलों की धूम है। जिन इलाकों में ऊन पैदा होती है वहाँ धाने दिन नयी मिलें खुलती जा रही हैं। मुगते हैं जाबा बीनी पर घाबाउ कर लग जाने के कारण यहाँ क कारखानों को खूब लफ्त हा रहा है। किनी-किटी मिल को तो मात्रे तीन रुपय मन का मगा हा रहा है। मया ऐसा मन्त्र देज कर ब्यापारी ममाज की सार क्यों न टपक पड़े। बल्कि ब्यापारी-समाज को इन मिलों से खयवा हो जाय किसानों को

सपत्न मुकसान ही मुकसान है। भिम ने मुकामले में यह शककर तैयार नहीं कर सकते और गुड़ की शककर के मुकामले में सपत्न नहीं। उनके लिए इसके सिवा और कोई रास्ता ही नहीं रह जाता कि ऊँच साकर मिल में पटक दें और जो कुछ हाथ सभे उसे भासते भूत को लपेटते समझ कर अपनी तकवीर ठोकते हुए घर की राह में। अभी तो यह सगहन से ही ऊँच की पेटार्ड में सया रहता है और फागुन तक यह कम पारी रहता है। इतने दिनों उसे रोम बोझ बहुत उस पीने को मिल जाता था कुछ गुड़ या लीड सारा भर जाने को रस सेठा था और ऊँच के सगोले और जूठन उसके जानवर साने से। उसके बसोत्त धाँच के गरीबों को भी बोझ बहुत उस पीने को मिल जाता था। और यह सगहन पूरा भाष फागुन चार नहींने जा किसानों के लिए बड़े ठाले के दिन होते हैं उस गुड़ और बोड़े से सगाम के सहारे बन जाते थे। लीड रास या गुड़ का सभ उसके बहाँ सारा भर रहता है। यही उसका नारता है यही उसके मेहमानों की साधिरधारी का मान है। गुड़ के बगैर उसका निबाह नहीं हो सकता लेकिन मिल का यह भूत उसका रसत बूस लेता है, उधी तरह जैसे लकासापर के मिसों ने उसके जुनाहा और कोरिबों का बूत बूस लिया। मिलवाले चिनती में बोड़े हैं। यह अब चाहे सपाम में संपटन करके ऊँच की घर मही कर सकते हैं और बास्तव में ऐसा ही भी रहा है। किसान सगमस में सपठित नहीं हो सकते। साया करोड़ों का संगठित होना ससमससा ही है। इसलिये वे मिलवालों को दया पर पड़ने के लिए मजबूर हैं। बेचारे अपनी या साइ की साड़ी पर ऊँच सा कर जाते हैं साइ पाने में कई-कई दिन मिल के हाते में किसी पेड़ के नीचे पड़े रहते हैं और मिल के ससासा को साठी रिरबत बेकर सब सपनी ऊँच तुलना पाते हैं। और मिल बनाउन सुन रही हैं। और बेस म उप्रति हो रही है। जो बन सायो करोड़ों के हाथ में जाता था वह अब चाड़े से ब्यबसाधियों के हाथों में बना हो रहा है, मगर इसकी दबा किसी के पास नहीं। भारतवाले मिल न जोसेमे ता संधन साकर जोसेमे। किसानों के लिए नहीं शरस नहीं है। उनम सचिकटर ता मिल वाला से पेशवी रूप सकर अपनी सुसामी का पट्टा सिखा सेते हैं। इसका इलाज कुछ नहीं। ब्यबसाय का यह युग है और हम चाहे या न चाहे उसके सकर से बच नहीं सकते।

२७ मार्च १९३३

स्वदेशी

सामता तथा सखिता स—सालों ही महान् कष्टनायक तथा सपमानजनक रोयों से रसा का एकनाय उपाय स्वदेशी को सपमाना है। मन से सचन से कम में 'स्वदेशी' हा जाना एक कच्चा साया भी बिभासती म गरीरना यही एक सगामन है

बिस्मिको जग कर ब्रिटेन में धानी दुनिया अपने अधिकार में कर ली अमेरिका स्वयं-भूमि बन गया और थापान एशिया का ब्रिटेन बना हुआ है। इसी एक संज का पाठ पहले भारत करता था चीन करता था और दोनों अम्मुबय के ठेके पर पर बैठे हुए थे। जिस दिन से भारतीय बाजारों में बिसामती माल भर गया भारत का औरब लुट गया। जिस दिन से चीन ने जिनने स्वयं कागज बनाने का तरीका दुनिया को सिखाया था बिसामती कापड तक अपनी बूकानों में भर लिया उसी दिन चीन की स्वाधीनता की मरम का बंटा बिसामती निर्मायों में बचने लगा।

स्वदेशी की महानता शब्दों में नहीं समझयी जा सकती। जब हम अपने शरीर पर अपने कपड़े में अपने पास एक तिनका भी बिसामती रखते हैं जब कि हम उसके स्थान पर बंदी तिनका रख सकते हैं तो यह स्पष्ट हो जाता है कि हम उस तिनके के बराबर अपना एक स्वयं बूँस रहे हैं अपने प्राई के सामने की बानी छठकर दूसरों को दे रहे हैं। स्वदेशी की पूजा सम्राट से एक तक करते हैं। ब्रिटिश सम्राट पंचम बाब ने एक बार किसी सरकारी कार्यालय का निरीक्षण किया वहाँ ब्रिटेन के बन टाइपराइटर के बजाय अमेरिकन टाइपराइटर का उपयोग होते देखकर उन्हें बड़ा दुःख हुआ। बाब भारत में साखों योरोपियन रहते हैं, पाप बरा इनके पाप बाहर पने बाधने। जमन बर्मनी का बना सामान बरीदता है ब्रिटिश ब्रिटेन का बना हुआ। हमारे वहाँ किसी ऐसे देशी मरेश है जिनके बपुओं में बेश की बनी चीजें काम में धाती हैं या जो बिसामत बाकर यह पूछते हैं कि— 'आपके यहाँ धमुक बस्तु भारत की बनी हुई बिसती है ?'

स्वदेशी का न अपनाया एक राष्ट्रीय दुर्गुण है। स्वदेशी सामान महंगा पड़ सकता है पर अपने बर का माल महंगा पड़ने पर भी खरीदा जाना है। स्वदेशी माल बराब हो सकता है पर अपनी मूल के लिए अपने ही मंड में अपठ कितने धारमी मारते हैं ? अपना अपराध सबसे पहले धम्म होता है। ठीक यही वशा स्वदेशी की भी है।

स्वदेशी में सबसे पहले कपड़े का स्थान है। बिसामती कपडा पहनना बान्धन में बेश के प्रति धम्याय है। ईश्वर के प्रति धम्याय है। अपना बेश जब अपना माल बनाता है तो फिर बाजरी माल क्यों खरीदा जाय। हम 'बहिष्कार' का पत्र नहीं पढा रहे हैं। किसी के प्रति भेद भाव नहीं फैला रहे हैं। जग्गा बेश की वसाह नहीं दे रहे हैं। हम केवल प्रत्येक व्यक्ति का धमन धमन कतब्य बतला रहे हैं। स्वदेशी एक धर्म है, एक बतब्य है। भारत में राजनीतिक धान्धोलन का प्राबन्ध होते हुए भी बिदेशी माल— बिदेशी कपडा निर्जीव धधिक्रता से धा रहा है। इस विषय में 'धी धम जनत में जो धीकडे धारे हैं उन्हें बेगडर धान्धन होता है। यहाँ पर पाठकों का ध्यान हम उन्हीं धीकडों की धार धाकगित करना चाहते हैं। पत्र विदता है—

'स्वदेशी के प्रति ध्यान बढने तथा धाबिक मन्दी होन पर भी भारत में बिसामती कपड का धायन धनुमान से धधिक धाबा में बढना जा रहा है। बम्बई के मिस धाबिक

सब की जो सबसे ठाकी विजयि प्रकाशित हुई है, उससे पता चलता है कि १९३१-३२ तथा १९३२-३३ के वार्षिक बयों (माघ से माघ) के बिलायती रई के सूत का धायात उन्मास प्रतिशत् और तैयार बागों का धायात घट्टावन प्रतिशत् बड़ गया है। इस बय के पिछमे तीन महीने से बिलायती कउड़े का धायात—कबल जागलो मस्ता माल ही नहीं—बहुत बड़ गया है। ब्रिटिश बाको कपडा एक बय में ८३३ प्रतिशत् अधिक धाया। बायानी बाको कपडा ३२५ प्रतिशत् अधिक धाया। ३१ माघ १९३१ तक कुम बिलायती सूत जो बाहर से धाया ४५१ पीठ बा। पिछमे साल ३१६ साळ गड माल धाया बा। ब्रिटिश सूत का धायात ११९ साळ गज से बड़ कर १३४ साळ गज हो गया बायानी सूत ६२ साळ से ८१ साळ गज। पिछमे साल ७७९६ गज बिलायती कपडा धाया बा इस साल १२२५३ साळ गज। मितम्बर १९३२ के बाय सबसे अधिक माल १९३३ की माघ में धाया। बिलायती माल बम्बई मडास बयास सिख और बर्मा—सब सबह करोड-करीब बराबर हो धाया है।

भारतीयो सावधान! समूची राजनीति एक घोर और स्वदेशी एक घोर। स्वदेशी प्रकारों को सतक हो जाना चाहिए।

१२ जून १९३३

भारतीय कपड़ा और भारतीय रई

बायानी कपड़ा बिदेशी होकर भी भारत की रई काम में लाटा है। भारतीय कपड़ा स्वदेशी होकर भी बिदेशी रई इस्तेमाल करता है। तो क्या भारतीय कपड़ा केवल इसलिये स्वदेशी कहा जाय कि वह भारत में बना है? कपड़े में मुख्य चीज रई है। मोटा कपड़ा बनाने का लक तो वैसे हो वैसे गज से अधिक नहीं। जिस कपड़े में केवल बहुत छोटी-सी रकम भारतीय मजूरों के हाथ लगती है और बड़ी रकम बिदेशी रई की मँट कर ही जाती है उसे किस रमीस में स्वदेशी कहा जाय? सब तो अमेरिका का उम्माळू भी भारत में सिगरेट बनकर स्वदेशी हा जाता है। चाचा का मुड़ भी भारत में चीनी बनकर स्वदेशी शककर हो सकती है। इम बिदेशी रई के बने हुए कपड़े से कही क्याश स्वदेशी तो बायानी कपड़ा है कयाकि वह भारत को रई से बन्ता है। मेरिन बनता से इस बिदेशी रई से बने कपड़े का स्वदेशी समझने की धारा की जाती है और स्वदेशी रई में बल कपड़ बिदेशी। हमारे मिन-मानिक भारतीय रई नहीं पतीर सकने। जायान जमी रई से धब्बे में धब्बे कउड़े बनाकर भारत भेजता है पर यही के मिनो के मिये बही रई हय है। जन्हे बोड़ी-सी भारतीय रई केवल मिलाबट के लिए चाहिए। रोप रई बिदेशी में ही धावगी। हमारे मिन-मानिकों में बरी इतना स्वदेश-

प्रजा तो उनका पेट भरने के लिए भरती ही है। इसी विषय पर भाषण करते हुए प्रभाव विरबिद्यालय के अध्यक्षों के प्रोफेसर मि. चाम्पसन ने ब्राह्मणों के दृष्टिकोण को इन शब्दों में व्यक्त किया है—

‘ग्रन्थशास्त्र के ज्ञाताओं का उद्देश्य यही है कि भारत अधिकांश सम्पन्न हो जाय जिसका धाराय है कि जनता का जीवन का ध्येय उँचा हो जाय और उसका अर्थ यही है कि लोगों को भोजन और स्वस्थ श्रमुर माया में मिले। यदि जापान से उस्ता कपड़ा आता है, तो गरीबों को अधिक बस्त्र मिल जाता है। मोटे तौर पर पिछले रूप जापानी कपड़े के आयात से यहाँ कपड़े की आपत नबभग अस्ती साक परिवारों में दुगनी हो गयी। इस तरह भारत अधिकांश बस्त्र पाकर बनी तुषा। अब रहा धोजन। जापान ने कपड़े में निष्ठाना बन भारत से लिया वह उससे कहीं कम है जो उसने खर्च करीद कर लिया।

६ नवम्बर १९३३

मि० मोदी की उदारता

बम्बई के मिलवालों ने संकशायर के साथ जो पक्ष की सभी की रिवायत की है, उससे धारा है कि साम्राज्य के सार बड़े-बड़े बाजारों में बम्बई के माल की धूम मच जायगी और यहाँ के भरे हुए मोचाम अट-पट खाली हो जायेंगे। हिन्दुस्तान के बाजार की मिलती ही क्या है। यहाँ के मुकल्ल किलाल क्या कपड़े करीबेंगे। शायद बम्बईवाँल समझते होंगे भारत में स्वदेशी की भावना इतनी बलवती है कि बम्बई निष्ठाना ही महुँगा कपड़ा बेचे बाजार उसके हाव से नहीं आ सकता। मगर उमे अपनी गमती बहुत अस्द मानूम हो जायगी।

१३ नवम्बर १९३३

संरक्षकों की धूम

जिसे बेलिए संरक्षक की माँग कर रहा है। बाइसराय से लेकर व्यापारी प्रांग जमींदार तक संरक्षक के पीछे पड़े हुए है। जिसके हाव में शक्ति है, वह तो धाय ही अपनी मरबी से कानून बनाकर संरक्षक प्राप्त कर लेता है। जिसके हाव में वह शक्ति नहीं है, वह सरकार से संरक्षक माँगता है। कपड़ को संरक्षक मिल गया। मोझे और बनिबानबाने रिसानेबासे सिधोनेबासे गरज मभी अस्तुधों के व्यवसायी संरक्षक की माँग कर रहे हैं। इसलिये जि बाइर से धानेबाप मात के मुकल्लिसे में ब ठहर नहीं सकते। जनता की जेब से जेमे ज्यादा मे ज्यादा पैसे गीब लिये जायें यही टिक नब का

पड़ी हुई है। चीजों को सस्ता बनाकर बाहर के मान को न घाने देने का सामर्थ्य किसी में नहीं है और जनता बेवश है। भारतीय व्यवसायियों ने जमा-खर्च में दखल देने का उसे कोई अधिकार नहीं। व्यवसायी जितनी कमूलखर्ची चाहे करे, जितना कुप्रबन्ध पाहे करे, कोई उससे बोल नहीं सकता। उसे मनमाना मफा करने की भी धाजारी है। वह न मेहनत करेगा न किफायत से काम लेगा न सुप्रबन्ध को अपने पहाँ चुसने देगा। उसने तो घातान मटकना पामा है कि हमें संरक्षण चाहिए। बाहर का व्यवसायी जो चीज घाट-घाले में देता है, उसी को वह एक रुपये में देगा और जनता मजबूर है। किसानों को तो संरक्षण की जरूरत है, क्योंकि इससे एक बहुसंख्यक समाज का हित होता है। इसलिए भी कि हम जानते हैं किसानों की दशा बहुत ही खराब है लेकिन वहाँ तो उन्हें भी संरक्षण चाहिए जो सत्तों उड़ाते हैं और केवल अपनी छोटी-सी जमाघट के लिए सारी जनता को मर्हंगी चीज खरीदने के लिए विवश करते हैं। मगर यह व्यवसायियों का दुय है। उनके सामने किसी जनता है।

१० फरवरी १९३४

आल इंडिया स्वदेशी संघ

जब विसम्बर में बम्बई आल इंडिया स्वदेशी कार्यकर्ताओं की जो सभा हुई थी उसमें स्वदेशी वस्त्रों के प्रचार के लिए कई प्रस्तावों के साथ एक प्रस्ताव इस धाम्य का भी स्वीकृत हुआ कि स्वदेशी व्यवसायियों ने संरक्षणों और जनता की स्वदेशी भावनाओं के बल पर उनमें चीजें मङ्गने सामों में बेचकर जनता की जो झूट मचा रखी है, उसकी निम्न की जाय और व्यवसायियों से अपील की जाय कि वे संरक्षणों के साथ न बाहकों को भी शरीक करें अर्थात् सस्ता मान बेचें। इसके साथ ही मजूरों के साथ उचित व्यवहार करें।

जब तक स्वदेशी संघ के पास एसा कोई अधिकार नहीं है कि वह स्वदेशी व्यवसायियों की घामदनी और लार्थ की जाँच कर सके तब तक यह व्यवसायी भी ही धंधे में मचाते रहेंगे। जिसे देखिए संरक्षण का मुल मचा रहा है। इसका धाय्य बदलति नहीं हो सकता कि हमारे वहाँ मजुरी की दर ब्याधा है या बन्धन मान बेचना है। फिर संरक्षण क्यों।

१० मार्च १९३४

काढ़ पर खाज

बम्बई और पहलवाबाद के मिस-मालिकों को संरक्षित मिल गया। बापानी कपड़े पर पचहत्तर फी सदी महसूल बढ़ गया। अब उनकी खीरी है। कपड़े खूब मर्हने दामों बेचें और खूब मफ्त उठायें खूब मोटरें खरीदें खूब बिहार करें। व्यापारियों का राज है। खरीददार तो किसी गिनती में नहीं हैं। उसका बग्न तो इसीलिए हुआ है कि व्यापारियों को मुंह मीचे बाम बे और भुखों मरे। अगर प्रकृति उसकी सहामता करती है, तो व्यापारी म्पदक संरक्षक की शक्य लेता है। कलता की कौन सुनेगा ? अमाचारपत्र व्यापारियों के शासन ब्यबस्था व्यापारियों की अनमठ व्यापारियों के हाथ में प्रोपेमेंटा करने की कला में कौन उनकी बरतवरी कर सकता है। बिधा और प्रतिभा सब कुछ तो उनके सामने बूटने टेकने को तैयार है। इस केकारौ और मन्दी में कम से कम इतना या कि कपड़े सस्ते मिल जाते ये पर हमारा करोड़पती मिस-मालिक जनता का इतना धाराम भी नहीं देख सकता।

जापान के कपड़े भारत में इतने सस्ते बिचते हैं कि वहाँ के मिस उनका मुक्त-बना नहीं कर सकते। हम पूछते हैं—आप क्यों उनका मुकाबला नहीं कर सकते ? अगर आप न सकत नहीं हैं अगर आप को माफ किमामत से बनाना नहीं आता तो जापानियों के बरखों में बैठकर उनसे सीखिये उनकी खागिरी कीबिए। आपकी हिमाकृत बेबकूबी और फिखूक-खरबी का उभावान जनता क्यों दे ? इन्हींबचाले तो वह कह सकते हैं, कि उनके यहाँ मजूरी की दर बढ़ी हुई है और वे अपने मजूरो के जीवन का धारठ नीचा करना नहीं चाहते लेकिन क्या भारत में भी मजूरो की मजूरी की दर बढ़ी हुई है ? क्या व्यापारी लोग यह कह सकते हैं, कि भारत का मजूर जापान के मजूरो से सुखी है ? कहने को तो शकद बे यह भी कहें। जन के मुंह से जो कुछ निकले वह सत्य है, लेकिन हम पर बिश्वास भी बनवाल ही करेंगे। हम तो इतना जानते हैं कि जापानी मजूर कितनी ही बुरी बशा में क्यों न हो भारत के मजूरो से बख्ती बरा में है। फिर भी जापान भारत के बाजार में आकर भारत के कपड़े का बाजार बन्द कर देता है और हमारे इकजमन्त मिस-मालिक संरक्षक का रोना रोने सकते हैं। यह तो खेत में इति कटना है, और कुछ नहीं। निस्सहाम जनता को बूटना है। इसको और कोई नाम ही नहीं दिया जा सकता।

अब कहा जाता है कि जापानियों ने भारतीय रई के बहिष्कार करने की जो शकद दी है वह केवल संघट-मुड़की है। वर्कशाम के बड़े-बड़े व्यापारी पीछत बना प्यड़-प्यड़ बीत रहे हैं घराबारों में बमान प्रकाशित कर रहे हैं कि जापान भारत की रई के बड़ेर निबाह नहीं कर सकता लेकिन हम पूछते हैं कि जब भारत जापान का कपड़ा न लेया तो जापान उसकी रई लेकर क्या ईषन बनायेगा या होसी बतानेगा ? जापान का कपड़ा भारत में लपला या इतना बह यहाँ की सस्ती रई लेकर

उससे मात्र तीव्र करता था और कम से कम नज़ा लेकर नहीं मात्र उन्हीं गरीब किसानों के हाथ बेच देता था। जब कपड़े का सबसे बड़ा बाजार उसके हाथ से निकल गया तो हम नहीं समझते कि वह भारत की रई संकर क्या करेगा। अपने देश की गरिबी के लिए वह मंचूरिया में काड़ी रई गया कर सकता है। क्या भारत ने मिल-मालिक इस बात का ज़िम्मा लेते हैं। घांटी ठोककर यह कहने का साहस रखते हैं कि अगर जापान की बुद्धि बंदर-बुद्धि न सिद्ध हुई तो वे भारत की मारी रई करीब लेंगे? और उसी ज़माने जिन शर्मों जापान करीबता था? हमने तो मिल-कुबेरों के बलाघात बड़े धीरे से पड़े हैं पर किसी ने भी ऐसा कहने का साहस नहीं दिखाया। उन्हें भारत के किसानों से क्या प्रयोग? भारत का किसान मरे या जिन उनके कपड़े लरीवे जाई और उनकी जेब पस सिने जाई। उनके हाथ से सपन है ही वे कोई ऐसा कानून भी पास कर सकते हैं कि प्रत्येक भारतीय को प्रति बप इतना मूल्य का कपड़ा करीबना होना। और हम उन्हें विश्वास दिलाते हैं कि संघर्षी सरकार उनके इस प्रस्ताव को बड़े हृष से स्वीकार करेगी। उसका इतने मरदार फलवा है। अंकातापर का मात्र कुछ न कुछ ज़ारा अपने समेता। प्रस्ताव होने की देर है।

अगर मिल-मालिकों ने वह भी सोचा है कि उनके मर्हों कपड़े बेचा कौन? कृपक ही तो उनके सबसे बड़े खरीदार है। कृपक के पास सामग्री का क्या साबन रह गया। वेहूँ बाता नहीं लेनहन कोई पुछता नहीं पाट दाउ-मारा फिर रहा है शक्कर का म्बरशाप भी उनके हाथ से निकल गया वह तो बस खड़ी ऊन बेचकर रुपये की खपक बचसो पाकर अपने भाग्य को ठोकरा हुआ घर बना जाता है। थोडा बहुत धन उसे इची कपाव से मिल जाता था वह साबन भी उसके हाथ से निकल गया तो वह कहीं से रुपया तालेबा मर्हों कपड़े खरीदने के लिए? अपना तो सवान धीरे पेट को बांधी नहीं होती उन पर धान यह अपना भी उसके हाथ से धीने लेते हैं। वह संघर्षित नहीं है, कहीं उनकी धाराक नहीं है। उन पर बाड़े को धाराक कीबिए, पर हम विश्वास है, इस संरक्षण से भारतीय कपड़े की निक्कासी में जरा भी वृद्धि न होगी। जो बीज एक रुपये में मिल रही हो उसे बंड रुपये में खरीदने के लिए हम मंडी धीरे बेकराये के समय भारत की बनता तीव्र नहीं है।

कहा जाता है, जापान ने अपने येन का दर निरा दिया है। हम पूछते हैं—उसी येन से तो जापानी व्यापारी भारत में रई खरीदते हैं या खरीते बचक वह कोई दूसरा येन बना लेते हैं? इसके जापानी बुद्धि-कोण से यह सच है कि रई मर्हों है। यह मर्हों रई संकर अगर वह सन्ता कपड़ा बेचता है तो यहाँ के मिलवानों का मतलब है कि वे जाना जाकर देखें कि वह किस बापू-मैप से इतना मस्ता मात्र बनाता है। और वे सर इस विषय में उनकी नज़र क्यों न करें। यह नहीं कि मंड से भारत की बरिठ बनता पर टेन मनाकर अपनी खपोपता की कमी पूरे कर ली। सस्ती बीज को मर्हों शर्मों

बेचना और सस्ती चीज को बाजार से निकाल डालना ठीक लगाना नहीं तो और क्या है ।

अच्छा तो अगर आपान ने बेम की दर गिराकर ही यह सफलता प्राप्त की है और कर्से की दर गिरा देने से ही सारी समस्याएँ हल हो जाती हैं तो आप भी क्यों भारतीय कर्से की दर गिराने के लिए और नहीं बचाते ? क्या यहाँ आप की बाल नहीं गलती ? क्यों नहीं गलती ? क्यों आप सरकार पर ऐसा बनाव नहीं डालते कि जो व्यवस्था आपान के लिए रामबाण बन गयी है वह आप को भी मिले ? उसके लिए पान्दोलन कोजिए । या सबसे आसान बटका आपको यही मिला है कि आपानी कपड़े को भारत से निकालकर अमरा को धपना सहुंया कपड़ा खरीदने के लिए मजबूर किया जाय ? उस व्यवसाय से क्या छवया जिसके लिए राष्ट्र को मजबूरन अधिक धाम देना पड़े ।

इन सरसखो से संसार लंप या गया है । सब यही चाहते हैं कि उसका मात सारी दुनिया खरीदे और वह निन्दी का मात न खरीदे । सारी दुनिया की बीसठ उसकी बनी मे या बाव और उसकी बीसी से एक पाई भी बाहर न निकले । और यह असंभव है । संरखल बिलने ही बड़ रहे हैं उसना ही ब्यापार बट रहा है और धव संसार का ब्यापार भाज के पाँच साल पहले के ब्यापार का केवल एक तिहाई रह गया है । फिर भी 'सरखस' का शोर मचा हुआ है । अगर आपान न भारत की सब बन्द कर दी (और वह इस धमकी को व्यवहार में लाने के लिए मजबूर है) तो कपड़े की आपत और भी कम हो जायगी । और कपड़े की ही आपत नहीं इसना असर और सभी चीजों पर होगा । धमी बयलें बचा लीजिए, मगर बहुत जल्द हाथ मजना पड़ेगा । अनता न संमठन नहीं है, लेकिन सी संमठन का एक संमठन तो सनकी दिन हुआ रात भीगुनी बकटी हुई बखिता है । हम आपनी कपड़े के बकीस नहीं हैं पर अनता के बकीस धवरय है और हम चाहते हैं कि कृत्रिम साननों से उसका गमा न चोटो जाय । संरखल ने सबसे बड़ी धुराई यह है कि ब्यापार को प्रतियोगिता से निरिचलत हाकर अपने धर की सुव्यवस्था करने के लिए कोई धंजुस नहीं रह जाता । यह वह खीरो की कोठरी है, जिसमे बैठकर आप बहुत धिन शान्त नहीं रह सकते । किसी व्यवसाय की वाप्यावस्था में ता संरखल का कोई धर्ब हो सकता है, लेकिन जो अवान धपने धैरो लड़ा नहीं हो मकता उससे हमें कोई धमता नहीं हो सक्ती ।

१६ जून १९५५

शिक्षा-सस्कृति

गुरुकुल काँगड़ी में तीन दिन

पिछले घाण्ड में मुझे गुरुकुल काँगड़ी के बसों का व्यवहार मिला। इच्छा तो बहुत दिनों से थी मगर यह सोचकर कि उस बेद-बेबायों के क्षेत्र में मुझ-जैसे प्रमुख व्यक्ति का कहीं गुजर कभी जाने की हिम्मत न पड़ी। सौभाग्य से साहित्य परिषद् ने उन्हीं किनों अपना वाकिक उत्सव करने की ठानो थीर मुझे न्योता मिला। ऐसा व्यवहार पाकर प्रता कंठे चूकता। किसी मुरा पुरी हुई। रात को सखनठ से बसकर प्रात काल हट्टार जा पहुँचा। वहाँ दो बह्णचारि मेरे राह देख रहे थे। गुरुकुल की सिद्धान्त बार्दिवा का कुछ बोझा-सा परिचय मुझे स्टेशन पर ही मिला। एक ठाँगा करने की ठहरी। ठाँवबाने ने शायद यह समझकर कि वो नये यात्रो हूँ कनखन के घाठ घाने माने। इधर से घाँ घाने कहा गया। ठाँवबाने ने शायद कहा घाठ घान से कम न होगे। बह्णचारियों ने बाजिब किराया कह लिया था। ठाँवबान से ठाँव-अंय करना उनकी शान क बिभाफ था। घाय मील जाकर दूसरा ठाँवा उन्हीं बानों पर माने। पहला ठाँवबाना उन्ही बानों पर चलने की तैयार था अपना अचराय समा कपटा था अपनी भूख स्वीकार करता था पर बह्णचारियों को उस पर क्या न घायी। उमन यात्रियों को ठमना जाहा था इमका अण्ड उसे देना जरूरी था। थीर नीति की दृष्टि में क्या था कोई मूल्य नहीं।

ठाँवा घाव बण्ट में कनखन घा पहुँचा। इम लीय उत्तर कर बाट पर पहुँचे। सामने की पहाड़ियाँ हरे-हरे आम्रपण्ड पहले लड़ी थीं। नीचे गगा पहाड़ियों की मोव से निकलकर उधनरी-सूदरी बनी जाती थी। यहाँ कई बाटारें हैं, जो बर्पाकाल में मिलकर काँगड़ी के नीचे तक बनी जाती हैं। मने समझ था किसी किरती पर नगी पार करनी पड़ेगी मगर किरती का कहीं पता न था। यहाँ पानी का छोड़ इतना ठेक है, नीच का पैदा इतना पथरीला कि बाड़ी दूर क बार किरती घाने जा ही नहीं सकती। तमेदो पर बैठकर लोग अन्ते-जाते हैं। यह एक प्रकार की बभई है जिसमें मिट्टा न मटकों की पगह टीन के कनखर होते हैं। कई कनखरों को सम्भ-लम्भे रखकर रम्मी थीर बानों से बीच देते हैं। तमेदो बीच में चौड़ा थीर दोनों विरों पर पतमा होता है। जिन्हें इम पर पहली बार बैठना पड़े उन्हें मन में कुछ सशय होने लगता है कि यह बोंया पार लवेगा या बीच ही में से डूबया। मगर थोड़ी ही दूर चलकर यह सशय दूर हो जाता है। यह बोंगी डूब नहीं सकती। पानी का बहाव कितना ही तेज हो खेंबर कितन हो भयकर हों बायु कितनी ही प्रचण्ड हो लहरें उधमकर उधके ऊपर ही क्यों न घा जाती

हैं पर उसे पचास नहीं कर सकतीं। बाबनी धरर उस पर बरा घँसकर बैठा रहे, तो बाड़े धनन्ध तक पहुँच जाय नूब नहीं सकता। इस पुच्छ-सी बस्तु को बिराद और प्रकृष्ट बन प्रबाह का इतनी नीरता से सामना करते देखकर ऐसा जान पड़ता था मनों कोई प्रकृष्टी धारता प्राण-सागर की सहुरों को टुकराती विध्न-बाधाओं को कुचसती परमपाम की घोर बनी जा रही हो।

धमी घाय बछ्या भी न गुबरने पाया था कि बटा था ययी घोर बर्पा होने मयी। घारे कपड़े भीय गये हुआ भी बसने मगी। सहुरें उल्लसती ही न भीं घसार्गे भरती थीं। कई बार तमेका नीचे को बट्टान से टकराया और हम बिरते-पिरते बचे। दस बकुरे-बकुरे हम काँपड़ी पहुँच गये।

२

पुच्छुन की इमारतें बेबकर बेधकितपार मुँह से निकल गया—नाम बड़े रहन बोड़े। एक ही इमारत है जिसे इमारत कह सकते हैं, पर साधारण हार्द स्फुत्तों को इमारत भी इतने धक्की होती है। तीन साल पहले यहाँ कई घोर इमारतें थीं। पर सन् १९२४ की बाढ़ में कई इमारतें बह ययी घोर हण-भण बाग बामू से भर गया। बिरे हुए धनना के खँडहर धमी तक नबर पाते हैं। हम सोम एक छोटो-से पक्के बर न टहरे, जिसे यहाँ पक्का बर्मसासा कहते हैं। यक य पँडित पधसिद्ध भी शर्मा भी था बचे थे। हम दोनो इसी कमरे में टहरे। स्वप्न किमा। इतने में भोजन था गया। बाले बैठ यय। पेड बहुत स्वादिष्ट थे। अतिथि-सत्कार यहाँ की कितेपता है। मस्कर रोगी भी यहाँ से तुच हुए मिना नहीं जा सकता। सबसे बड़ा बालन्ध मुझे यहाँ के ब्रह्मचारियों को देखकर हुआ। ऐसे सरल-हृद्य ईवासीन मुबक हमारे धंरेबी कसनेबों मे बहुत कम है। वह पँडितार्द बावावरण जो कसती की किती संकृत्य पाठशाळा न नबर पाता है, यहाँ नाम को भी न था। यहाँ विद्यालय का महमान प्रारंभ ब्रह्मचारी का मेहुमान है वह उसकी चारपाई बिछा देना उसके लिए पानी भर बामेना और उसकी घोठी भी मुती से छोट देना। यह विद्यालय नहीं किती शक्ति का आभन मानुम होता है। ऐसे उल्लाहो मुबक मने नहीं देखे। जो काम करते हैं उसमें धन-धन से निपट जाते हैं। प्रमाद की मात्रा इनम बहुत ही कम है। कुछ चीन्ने के लिए, कुछ जानने के लिए वह भोग सरब उत्सुक रहते हैं।

साहित्य-परिपक् का उत्सव मँध्या समय हुआ। साधार्य जी का ब्याख्यान हुआ। ब्रह्मचारियों ने धपनी-धपनी रचनाएँ सुनायीं। कुछ साहित्यिक नैठ थे दो-भार गर्द्वे भी एक-बो लेख एतिहासिक थे। इन रचनायाँ को किती ऊँचे धाररा से तोलना धन्याव होगा—ये प्रीड़ सेककों की कृतियाँ न थीं पर किती विद्यालय के शिष्यों को धन पर गर्व हो सकता है। हाँ यहाँ जो मंभीत मुनने में घाया उनसे कुछ भिपरा हुई। पुच्छुन में संनोठ-शिष्या का कोई प्रकृष्ट नहीं। शायद नवीत ब्रह्मचय के लिए बाधक समझ

जाता हो। मगर मुझे तो ऐसी धार्मिक संकीर्णता यहाँ कहीं न दिखायी दी। सबसे बड़ा धार्ष्ण्य मुझे ब्रह्मचारियों में विचार-म्हात्म्य पर हुआ। उनके राजनतिक सामाजिक धार्मिक विचारों में मुझे संकीर्णता का कोई चिह्न नहीं मिला।

हमारे दिन प्रीतिगोब बा। मोहनगृह में सभी ब्रह्मचारी धीरे धाधाम प्रज्ञा पर बैठकर धार्मिकों में मोहन कर रहे थे। हमारे धर्मगो विद्यालयों में कुतियों धीरे मेडो का व्यवहार होता है। यहाँ सभी तक धर्मविषय की बहू हवा गयी धायी। हमारी भारतीय रीति-नीति धाधार-विचार की रक्षा धरपर हो सकती है तो ऐसी ही उस्वाधों में हो सकती है। मगर शायध धव उधकी रक्षा करने की उकरत ही नहीं समझी जाती। धावकम वही पक्का धाय है, जो पाछे धीरे सभी बातों में विदेशियों का गुनाम हो केवल धम्य धर्मावमन्त्रियों का गाली देता धाय।

धाव सध्या समय एक कवि-सम्मेलन बा। पंडित पयसिह जी समाधि के। ब्रह्मचारियों में धपनी-धपनी रचनाएँ सुनायीं। धविकांत कवितारें हास्यमय ही मगर में ब्रह्मचारियों के साहस की सारोप कक गा कि उन्हें धपनी धावक रचनाएँ सुनाने में सेरमान भी सकोध न होता बा। किसी हव तक तो यह बाधोचित साहस सपहनीय है। हमने ऐसे बासक भी देखे हैं, जो कित्ता धमा में लड़े कर िये बायें तो उनकी जिन्गी बँध बायनी। उध मिम्क के देखत तो यह सुधता किर भी धाधयी है। पर रसिकधनों के सामने ऐसी रचनाएँ न सुनाता ही धाध्या जिन्हु सुनकर हँसी धावे। रचनाधों के धमाप हो जाने के बाद शर्मा भी ने विचारपूख धकनुता धी धीरे ब्रह्मचारियों को कूव हँसाया। शर्मा जो बितने बिद्वान् है उधने ही सरल धीरे उधार है। धीरे मेहमानबाबी तो उनका बीहुर है।

तीसरे दिन हमने मुस्वाविष्ठाता धी के धर मोहन किया। उधका स्वाध धयो तक भूमा गयीं। धमसेव धी उन सधकों में है जिनकी बातों से धी नहीं धरता। ध्यों-ध्यों बायें मानुम होती है धीरे धमोरंजन भी होता है। धाय धर्मगो साहित्य क धाध्ये उठा है धीरे भारतीय इतिहास के तो धाय पूरे माधिर है। ब्रह्मचारियों को उन पर धसीम धाडा है। मुधकुम धगर कुध न करे तो धी इधने मुधकों के सम्मुक धरम धीवन धीरे उध्व विचार का धावता रधता है उधके बाधित रहने के लिए काधी है। धर्मगो कानेध म ता धाधरयकठाधी धी गुनामी सिलायी जाती है धीरे धाध्यापक धोव ही धत विधा के सबसे बड़े सिधक होते हैं। जिन्गी की बीड़ में वे मुधक क्या पेश पा सधते हैं जिनके पौरों में उकरतों की मारी बड़ियाँ पड़ी हों। मधकारी विधायों में बाहू वे धाध्ये पर पा बायें पर सरकारी धीकरतियों से ता रान् नहीं बनते। मुधकुम ने धरने जंवन के धोड़े में सार्धों में राष्ट्र के बितने रोधक पैदा किये हैं उधने धीरे किमी विद्यालय में म िये होंगे। धिधियाँ सेरत पत्र प्राप्ट करना राष्ट्रीय सेवा नहीं। धाधार धीरे उधार के धार्धों को संभालना ही राष्ट्रीय सेवा है। धव तक मुधकुम ने एक भी इधतन्धोम स्वाधक

निकाले हैं। उनमें सार्वजनिक जीवन में भाग लेनेवालों की संख्या घटायी है। यह कहने में क्या भी शरयुक्ति नहीं है कि हिन्दो भाषा को जितना प्रोत्साहन गुरुकुल से मिला है, उतना समय ही धीरे किसी विद्यालय से मिला हो।

गुरुकुल की उपयोगिता के विषय में पहले अनन्त में बड़ा उद्दिष्ट फंसा हुआ था। पर गुरुकुल से निकले हुए स्नातकों का सांसारिक जीवन देखकर इस विषय की सभी तर्कारें शान्त हो जाती हैं। एक ही इच्छाशील स्नातकों में उन्नीस तो गुरुकुलों में काम कर रहे हैं जो साहित्य-सेवा में मगने हुए हैं तेरेस धाय-समाज के उपनेहक हैं पाँच मफलस बैठ हैं घट्टाएह व्यापार में मगने हुए हैं और सात विदेश में शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। इनमें से जो उलीख होकर लौट आये हैं। डाक्टर प्राणनाथ हाल ही में इंग्लैण्ड से वाक्टर होकर लौटे हैं एक और महाराज वैरिस्टर हो आये हैं। पिछले साल बार ब्रह्मचारी Senio Cambridge परीक्षा में सम्मिलित हुए और तीन पास हो गये। इससे यह सिद्ध हो जाता है कि ब्रह्मचारियों को संघर्षों में भी काफी सम्मत्त हो जाता है। महाराज सत्यव्रत जी विद्याभ्यासकार न हाल ही में ब्रह्मचर्य पर संघर्षों में एक ग्रन्थ लिखा है जिसकी सैली और भाषा दोनों ही परिमाजित हैं। किसी युनिवर्सिटी के विद्यार्थियों के लिए ऐसी पुस्तक लिखना सब का कारण हो सकता है।

गुरुकुल विद्यालय में एक आधुनिक विद्यालय भी है। यहाँ ब्रह्मचारियों को बड़ी कृष्टियों तथा रमों का भी ज्ञान हो जाता है। शरीर-विद्यालय को शिक्षा भी इन बच्चों को दी जाती है। हमें आशा है कि यहाँ के पढ़े हुए बच्चों द्वारा आधुनिक का उद्धार होगा। वे केवल पुरानी रास्ते के फकीर नहीं होंगे बल्कि मानव-शरीर के तत्त्वों को जानते हैं और राज्य-चिकित्सा में भी वक्षस रखते हैं।

गुरुकुल की प्राकृतिक लोभा का तो कहना ही क्या। बसवान् बरिन ऐसे ही बसवान् में विकसित होते हैं। सामने यंया की बस-क्रीड़ा है पीछे पर्वतों का मील संगीत। दाहिने-बाँवें भीला एक शीतल और कल्पे के लूख एसी साक धनी हुई विमल वायु में सँस लेना स्वयं भारतसुद्धि की एक क्रिया है। न शहरों का दूध-नी न यहाँ की स्वच्छ वायु। ब्रह्मचापि गंगा माता की योज में किमोर्लें करते हैं और बड़ी दूर तक लैटें बसे जाते हैं। नवतों की दूषित बसवान् में यह गुण कहीं। मगर पिछनी वाद में विद्यालय को भी शक्ति पहुँचायी है उसको देखते हुए सब विद्यालय का स्थान बरस देने का प्रयत्न पापरमक हा गया है। इसका प्रबन्ध भी हो रहा है।

माधुरी अप्रैल १९२८

बच्चों का स्वाधीन बनाओ

बहुत से लोग यह शीघ्र देखकर ही चौंक पड़े थे। बाह ! सड़के तो घाग ही स्वाधीन होते हैं। वह तो बचपन ही में न पुद्ग पर हाथ रखने देते हैं न मुँह में लगाय बालने देते हैं और जहाँ परा समझ घायी कि सरपट दौड़ना शुरू कर देते हैं। जल्दत है कि उन्हें घाजा पालन सिलाघो बच्चों का धरम करना सिलाघो संयम गिलाघो। उन्हें स्वाधीन बनाना तो ऐसा ही है जैसा घाग पर लेम छिड़कना।

यह समय है कि सड़के धाजकल उससे कड़ी ज्यादा स्वाधीन है जितन कि उनके माता-पिता इस उम्र में लुप वे। इस स्वाधीन प्रवृत्ति का जो नतीजा हो रहा है उसे देखकर यदि माता-पिता के मन में ऐसी हत्या पैदा हो तो कोई धारधप नहीं बलिन इनीसिए तो जल्दत है कि सड़कों को स्वाधीन बलने की शिखा दी जाय। बागक जिनना ही बलशामी होगा उठना ही स्वाधीन भी होया लेकिन घामी हम उम इमकी शिखा मड़ी देत। धवर मुबकों को जूज के लिए भरती किया जाय तो उन्हु बलापय जितान की बलरत होती है। धवर वे घायक बनना चाहें तो यह सम्भव नहीं है कि जितान सिगमे घाप ही घाप याने मग बायें लेकिन यह देखकर भी कि हमार बालक बन जितन स्वाधीन घाज है उतने जिनो घरीत कास म न वे। हम उन्हु बचपन में इन घमस्या को हल करने की उचित शिखा नहीं दे रहे हैं।

कोड़े से सड़कों में बालक को प्रभावत एना शिखा देनी चाहिए कि वह जीवन में अपनी रखा घाप कर सके।

वह तो मानी हुई बात है कि घाज के बालक स्वाधीन हैं और घय जितना के बम की बात नहीं है कि इम बया का पलट दे। इसके बहुत से कारण हैं—परिवारा का देखकों ने निकलकर सड़कों में घाबाय होना जहाँ परिचित बना के पबाय घीर स्वभाव से मोग मुक्त हो जत्ते हैं पुराने नीति-ध्वजहारों का सिपिन हो जाना जिनका पहने बिदेसी मबकों पर बहुत दबाव पड़ता था। मोटरकार मिलेना घीर समाबापन मब स्वाधीनता की प्रवृत्ति को मजबूत करते हैं।

लेकिन इम पर घायू बहाने से बाम न पलेया। पुराने जमाने में जब बम का हुसम घीर घयब मानना ममाब का नब मे माग्य नियम या घीर हर एब छोटी बलिन घपने से ठेकी जाति के मामल घयब मे गिर भरताती थी तब बालकों को बचपन ही मे घयब करना सिपाया जाता था घीर उचित भी था लेकिन घाज क्रिया बाहरी मना की घाजाघों को मानने की शिखा देना बालकों को सबसे बड़ी जल्दत की तरफ से घीरें बन्ध कर बना है। मुबकों के घामने घाज या परिस्थिति है उममें घयब घीर मप्रता का इतना महत्व नहीं है जितना ब्यक्तिगत बिचारों घीर कामों की स्वाधीनता का। इम नयी शिखा का घाजय क्या है ? घाजा-यापन हमारे जीवन का एक घीर है

॥ बच्चों को स्वाधीन बचाओ ॥

धीरे हमेशा रहेगा। अगर हर एक धारमी अपने मन की करने लगे तो समाज का हीरो बन जाएगा। अगर हर एक घर में जीवन के इस मौलिक तत्व को रखा होना चाहिए, लेकिन इसके साथ ही माता-पिता की यह कोशिश भी होनी चाहिए, कि उनके बालक उन्हें पत्थर की मूर्ति या पहेली न समझें। पत्थर माता-पिता बालकों के प्रति अपने व्यवहार को जितना स्वाभाविक बना उन्हें उतना बनाना चाहिए क्योंकि बालक के जीवन का उद्देश्य काम-क्षेत्र में घाना है, नैजस मात्रा मानना नहीं। वास्तव में जो बालक इस तरह की शिक्षा पाते हैं, उनसे धारम-विरास का मोप हो जाता है। वे हमेशा किसी की आज्ञा का इंतजार करते हैं। हम समझते हैं कि धार कोई आप अपने लड़के को ऐसी धारम बालनेवासी शिक्षा न देना।

दूसरा सिद्धान्त यह है कि माता-पिता को कोई बड़ा लुप न उब करनी चाहिए बल्कि लड़कों पर ही छोड़ देनी चाहिए। एक बावशाह ने जब अपने बालक को एक धार्याक को सीपा तो वह समाह ही—जितनी बस्ती हो उनके अपने को बेकार बना लेता। हमारा यह कलम्य नहीं है कि हम सजा अपने लड़को से अपनी धार्याएँ मनवाते हैं बल्कि उनका इस योग्य बना दें कि वह लुप अपने माय का अपने आप निरुप्य कर दें। लड़कों में यह प्रवृत्ति जितनी अधिक होगी उतनी ही सफल उनकी शिक्षा भी समझनी चाहिए।

तीसरा सिद्धान्त यह है कि गृहस्थों को बलतन्त्र के कायकों पर बसना चाहिए। तबुर्से वे वह बात मामूम होती है कि हम बलतन्त्र पर बड़े कितना ही विरवास क्यों न रखें हमारे बरों में स्वेच्छाचार ही का राज्य है। बर का मौलिक मुसोमिनी या कंसर की तरह बटा हुआ उसे जिन रास्ते चाहता है ले जाता है धीरे कमी इसका उलटा दिखानी देता है। बर में न कोई कायरा है न कोई कानून। जो जिसके भी में जाता है, करता है, बीमे चाहता है खुला है कोई किसी की बर नही लेता। लड़के अपनी राह जाते हैं जबान अपनी राह धीरे लुके अपनी राह। दोनों ही तरीक बलतन्त्र से कौचो दूर हैं—पहले तरीक में स्वतन्त्रता का नाम नहीं दूसरे तरीक में जिम्मेवारी का। यह दोनों तरीक लड़कों की शिक्षा की दृष्टि में अनुचित है। करना यह चाहिए, कि बर के माममा में लुके ही से बच्चों की राय भी बाम। छोटा बालक भी—अगर उसको सीमे रास्ते पर लनाया जाय—अपनी जिम्मेवारी को समझने लगता है। जिन लड़कों के साथ माँ-बाप बुरा व्यवहार करते हैं वे भी उनके साथ सच्छा स्नेह रखते हैं अगर माँ-बाप उनकी इस प्रवृत्ति को अपने स्वेच्छाचार से कुचल जायते हैं धीरे उनका बुरा मतीबा हम रोज अपनी धार्या से देखते हैं।

हर एक मामूम धारमी को यह जानकर बर धीरे धारम्य होता है कि बर में उमका भी कोई स्थान है वह भी लुप समझ जाता है। बालक भी हम माय से रासी नहीं होता। लुप परिवार का सबसे बड़ा खुस्य यह है कि वह हम प्रवृत्ति को व्यवहार में

ताने । ऐसा बालक मंदिर परिवार के सम्मान को रखा करेगा । यहाँ उसे स्वाधीन रूप
 काम करने का पाठ सिखा रहा है । हो सकता है कि इस विषय में कुछ माता का कड़वा
 अनुभव हो—बुबकों ने परिवार के हित को धोर ध्यान न देकर अपने ही अधिकारों पर
 धोर दिया हा । धर्मिमात धोर विभाग उनको राज में धाबकन के मुबकों में उबरत से
 ज्पाया मोनुर है लेकिन यह धाबक का धोर नहीं ता धार का धोर है । बालकों को यह
 सिखा देने के लिए समय से बुद्धि धोर सहानुभूति की उबरत है । इसका धायय यह है
 कि बच्चा ज्यों ही धाले धोर पले में फर समझने लगे उनके हाव म लेने दे रिये प्रार्थ
 उनका बजोफा हाँव रिया ज्ञाय धोर कुमाराज्बत्वा में ही उन्हें इस सोच्य बना रिया धाय कि
 वे लैसे का मूच्य समझने लगे धोर लख को धामरनी के धरर रखने को धायन भीजें ।

यह इन बातों पर ध्यान नहीं देते । कितने ही माँ-बाप ता धाले लडका के विषय
 उनसे ही बेखर होते हैं बिलेने धाले ताते या कुल के विषय में । बरमात धोर शरीफ
 बालकों की पारिवारिक स्थिति को परीक्षा को ज्ञाय तो मिड हो ज्ञायमा कि धाम-काल
 में जो धोर का जाले है उनका कारख परबालो की नाररबाही है ।
 बच्चों म स्वाधालता के माव वेग करने के लिए यह उबरती है कि बितनी जल्दी
 ही मके उन्हें कुछ काम करने का धयनर रिया ज्ञाय । धाय तीर पर यह समझ जता
 है कि धयने माता-पिता का कनम्य धयनी गमालो को कठिनाइयो म दूर रबना है ।
 इनका फन यह है कि उँसे ज्ञानमाना म नडके क्लिवाहीन हो जाने है । जब उगू बिना
 कोई उद्योग किये ही मारी बीजें मिम जाती है या ठिर के काम क्यों करे ? हाकीकि
 बिचार शाल्य का यह एक मोटा सिद्धान्त है कि नडको को धाले हाव से धाले उद्योग
 म कोई काम कर दिखाने में या को-बीज बनाकर जहो कर देने में बितना धानन्य
 मिमता है उतना धोर किसी बात में नहीं । नडका धयनी कागड की माव पानी में
 धातकर बितना लश होता है उतना बने-बने बिराल बहारा का बनने देधकर
 नहीं होता ।

हमारे सुधामित मरलों में धय इन बात को सोच समझने लगे हैं कि नडकों
 का हाव से कुछ काम कराना धयनर बजें की मानिक धोर मैत्रिक साधना है । हर एक
 घर में धया ही हावा धायिग । नडकों म धायन-बिरबाम उपन्र करने का इमन उत्तम
 कोई माधन नहीं है ।
 समन्र परा में धाले हाव से कुछ करना धयमान समन्र जाता है । नडकों के
 हर एक काम के लिए लीकर धयने हुए है । धाले-जाने के मिर् मोनरें हैं उन्हें तीर करने
 क लिए बूब साड करने पहिना रिये जाते हैं धोर ताकोर कर दी जाती है कि बने
 मिने न होने पावे । उनके मनोरंजन क मिर् निनेमा है बिबहापार है जहाँ उन्हें केवल
 धाय से दैमने की उबरत है नुर कुछ करना नहीं पडता । इमने पतगपना वा जो बुरी
 धाय पड जाती है नड बिलगी नर गाव नहीं धोरना । लेने ही बितान में पने हुए

॥ बच्चों को स्वाधीन बनाओ ॥

मुक्त है। जा अपने स्वाम के लिए अपने माइनों का ग्रहित करते हैं, सरकार की बेबा खुशामद करते हैं।

हम बहुधा सड़कों को कोई नया काम करते देखकर भबड़ा जाते हैं। बड़ी धु रण है, कहीं टोक न जाये। सड़के ने कमम हाय मं सिमा धीर हूँ हूँ हूँ का शोर मचा। ऐसा नहीं होना चाहिए। सड़कों की स्वामानिक रचनाशीलता को जगाया चाहिए। सड़का सिसोने बनाया जाये, बेतार का मत्र बनाया जाये, मसुमो का टिकार करना जाये, तरकारियाँ पैदा करना जाये, कपड़े सीना जाये, बीम बनाना जाये गार्कों में प्रमिनय करना जाये, या कमिता मिलना जाये, उसे वाचा मत वो। धर कोई बातक छात्र के बग्न हस्तो भी प्राकृतिक शक्तियों क बीष म रहे, घरिया म किरती जनाये मैदान में गाडी जनाये या फावण सकर जेत म काम करे तो उसे धारम-मिस्वास का जो प्रमुमत्र होमा बहु पुस्तको धीर उपदेशो से नहीं हो सकता। धारत्तर्भ वो यह है कि बहु लोग भी जिनकी बबानी कठिनाइयों म दुखरी धपने बासकों की बीमन-संधाम के उत्साह बदलनासे कामो से बचाते हैं।

हम यहाँ यह बतना देना चाहते हैं कि स्वाधीनता से हमारा मतलब क्या है ? इसका यह मतलब नहीं है कि हम बिना रोक-टोक को कुछ जाहे करे धीर वो कुछ जाई न करे। इसका मतलब यह है कि बाहरी बबाब की जगह हम में धारम-सयम का उदय हू। सच्चा स्वाधीन धायमी बही है जिसका जीवन धात्मा के शासन से सममित हो जाता है जिसे किमो बाहरी बबाब की जकरत नहीं पडती। बासकों में इतना विवेक होना चाहिए कि वे हर एक काम के बुख-भोप को भीतर की धाँको छ देखें।

अप्रैल १९२०

मानसिक पराधीनता

हम वैहिक पराधीनता से मुक्त होमा तो चाहते हैं पर मानसिक पराधीनता में धपने-धपको स्वेच्छा से जकरते जा रहे हैं। किस्ती राष् या जाति का सबसे बहुमुख्य धंग क्या है ? उसकी भाषा उसकी सम्मता उसके बिचार उसका कसब। यही कस बर हिन्दू की हिन्दू मुसलमान की मुसलमान धीर ईसाई की ईसाई बनाने हुए हैं। मुसलमान इमी कसब को रखा के लिए हिन्दुधों से धसब रहना चाहता है, उसे भय है कि सम्मिधस से कहीं उसके कसब का रूप ही बिभूत न हो जाय। इसी तरह हिन्दू भी धपने कसब को रखा करना चाहता है मकिन क्या हिन्दू धीर क्या मुसलमान दोनों धपने कसब की रखा की दुहाई देते हुए भी उसी कसब का बसा बाँटने पर पुने हुए हैं।

कमचर (सम्पत्ता या परिष्कृति) एक व्यापक शब्द है । हमारे धार्मिक विचार हमारी सामाजिक कृषियाँ हमारे राजनैतिक विद्वान्त हमारी भाषा और साहित्य हमारा रूढ़न-महान हमारे धाचार-व्यवहार सब हमारे कमचर के अंग हैं पर धाम हम कितनी बेदरी से उसी कमचर को जड़ काट रहे हैं । परिषदमन्त्रालय की शक्तिशाली देखकर हम इन अम में पड़ गये हैं कि हममें गिर में पाँच तक धोय हो दोय है और उनमें गिर से पाँच तक पुण ही मुठ । इस धमभक्ति म हम उनक लीप मो गुण मानुम होते हैं पीर धरने गुण मो दोय । माया ही को मे सोचिए । धाम अंग्रेजी हमारे मध्य-समाज की व्यावहारिक भाषा बनी हुई है । सरकारी भाषा तो यह है ही बपुजों में तो हम अंग्रेजी में काम करना हो पड़ता है पर जब भाग को मत्ता के हव ऐसे जस्त हा गये हैं कि निजी विद्वियों में घर की बातचीत में मो उसी भाषा का बाध्य लेते हैं । स्त्री पुण्य को अंग्रेजी में पत्र लिखते हैं, पिता पुत्र का अंग्रेजी म पत्र लिखता है । दो मित्र मिलते हैं, तो अंग्रेजी में बातचीत करते हैं कोई मना होता है, तो अंग्रेजी म । बावरी अंग्रेजी में लिखी जाती है । बाह ! क्या आग है ! क्या मोच है ! कितनी मायिकता है, विचारों को व्यक्त करने की कितनी शक्ति शब्द-अंतर कितना विशाल साहित्य कितना बहुमुख्य कितना परिष्कृत कविता कितनी मम्मस्यारिणो यद्य कितना अयवोधक ! जिसे देखो अंग्रेजी कबान पर लट्टू उसके नाम पर कुर्बान है । यहाँ तक कि हमारे योग्यता और विद्वता की यही एक परख हा गयी है कि हम अंग्रेजी बोसने या लिखन में कितने कुशल हैं । घाउं क्नास से अंग्रेजी के मुद्राविरों को रटन शुरू हो बानी है पर्यायों के मूकम अचने पर विचार होने समता है, अरनी अंग्रेजी बल्लता में अंग्रेजों का ऐक्सेंट और उच्चारण के साये इस प्रयत्न में जान कपा ही जाती है । अगर किसी स्वर का उच्चारण अंग्रेजों से उनके मौखिक पठन क दोषों के कारण नहीं होता तो हम मो अरने में बही बात पेश करे । धाम तक abc जैसे साधारण शब्द का भी टीक उच्चारण—जो अंग्रेजों को नी जेचे—बहुत कम लाग कर मकने है और हमारे यह मनोवृत्ति राष्ट्रीय भावों के साथ ही साथ बढ़ती जाती है । यहाँ तक कि अंग्रेजी ही पठित-समाज की भाषा बन गयी है । अरनी भाषा में बात चेत करते समय कभी-कभी एकाध अंग्रेजी शब्द धा जाने को तो हम मुमाओ के क बिल समझते हैं लेकिन कुल ता यह है, कि ऐसे मरुतों की नी कभी नहीं है, जो बहुत बोड़ी-सी अंग्रेजी बालकर नी अंग्रेजी ही म अरनी योग्यता का प्रयत्न करते हैं । अजब स्वयं में भी-किसी अंग्रेज से पीर अंग्रेजी भाषा में न बोवेना मपर यहाँ हम धानस में ही अंग्रेजी बोमकर अरनी मायिकक सामता का विशेष पीटते हैं । मैं उस मनोवृत्ति की कल्पना भी नहीं कर सकता जो एक हो भाषा-मायियों को अंग्रेजी में बात करने की प्रेरणा करती है । किसी मन्राही बंपानी या चीनी से तो अंग्रेजी में बात करन का कोई अर्थ हो मरता है । उनसे बातें करनी उच्यो है और इस बल और कोई ऐसी भारतीय भाषा नहीं जिनका मभी गणवाओं का एक-मा जान हो

मगर एक ही प्रांत के रहनेवाले एक ही भाषा के बोलनेवाले क्यों घापस में घंघेड़ी बोलें क्यों घंघेड़ी में पत्र लिखें क्यों प्रहाराग वा 'नमस्कार वा 'बंदे' या 'नमस्ते' वा 'उत्सनीम' करने के बदल 'मानिङ्ग-मानिङ्ग' कहे, यह मेरी सवक मे नहीं घाता । क्यों हल्को ही मुँह से निकले मैं इसकी कल्पना नहीं कर सकता । सभार में ऐसे प्राणियों की कमी नहीं है, जो यैयनी की चीजों का व्यवहार करके भी खिर उठाकर बसते हैं । उन्हें यही खुशी है, कि जोय मुझे इन चीजों का स्वामी समझने हाने । घंघेड़ी का व्यवहार करनेवालों की मनोवृत्ति भी कुछ इसी तरह की होती है । या तो उनका अभिप्राय यह होता है, कि देखें हम लोगों में कौन घंघेड़ी घंघेड़ी बोलता है, या यह कि इसो हम जितनी सफ़रई स घंघेड़ी बोलते है तुम में यह सफ़रई नहीं है । और इसका परित्याग यह होता है कि घंघेड़ी घंघेड़ी लिखनी और बोलनी तो वा जाती है पर अपनी भाषा भूल जाती है या हेय और तुच्छ समझकर भुला भी जाती है । यह हमारे सिद्धि-समुदाय की सज्जावतक ही नहीं शोकान्तक मानसिक शसता है ।

झाँसीसी कवि कब म कविता करता है कमन कमन मे कसी रसिबन में कम से कम जिन रचनाओं पर उसे पत्र होता है, वह अपनी ही भाषा में करता है लेकिन हमार यहाँ के सारे कवि और सारे लेखक घंघेड़ी में लिखने लगे अगर केवल कोई प्रकाशक उनकी रचनाओं को छापने पर तैयार हो जाय । जिन्हें प्रकाशक मिल जाते हैं वह खुशे भी नहीं जाहे प्रसन्न सामोचक उनका मनाक ही क्यों न उबारें मगर वह बुरा है ।

हम मानते हैं कि घंघेड़ी भाषा प्रौढ़ है हरेक प्रकार के भाषों को सामानी से बाहिर कर सकती है और भारतीय भाषाओं में सभी यह बात नहीं घायी लेकिन अब बही मोग जिन पर भाषा के निर्माळ और विकास का दायित्व है बूखी भाषा क उपाय हो जायें तो उनकी अपनी भाषा का अविध्य भी तो सुख्य हो जाता है । फिर क्या विदेशी साहित्य की नीच पर आज भारतीय राष्ट्रियता की दीवार खड़ी करेंगे ? यह हिमाकत है । आज हमारा पठित-समाज साधारण जनता से पूरक हो गया है । उसका रहन सहन उसकी बोल-बाल उसकी बेप भूवा सभी उसे साधारण समाज से अलग कर रहे हैं । आज वह अपने बिल म फूला नहीं समाता कि हम कियने बिरिष्ट हैं । आज वह जनता को नीच और गैवार समझता है लेकिन वह खुद जनता की गजरां से बिर गया है । जनता उससे प्रभावित नहीं होती उसे 'किरटा वा 'बिगईल' वा 'साहज बहापुर' कहकर उसका बहिष्कार करती है और आज खुश म क्लासता वह किसी घंघेड़ के हर्षों पिट रहा हो तो मोग उसकी दुपति का मजा उठावेंगे कोई बसके पास भी न कटथया । बरा इन गुलामी को बेधिय, कि हमारे विधानों में हिन्दी या उर्दू की घंघेड़ी द्वारा पढ़ायी जाती है । अगर बेचार हिन्दी-श्रीफ सर घंघेड़ी में लेखन न है, तो आज उसे मानावक समझते हैं । घायी क मुर में कर्मक लभ जाय तो यह शर्माता है, उत कर्तक

को छिपाता है, कम से कम उस पर भ्रम नहीं करता पर हनुमत्पत्नी दासता के कर्मक को सिखाते फिरते हैं, उसकी गुमाइश करते हैं उस पर अभिमान करते हैं मानो वह नेक-नामी का समया हो या हमारी कर्मिणी की भ्रमा ! बाहरी भारतीय दासता तेरी बलिहारी है !

माया को छोड़िए, बेप-भूपा पर भाइए । ध्यान उन साहब बहादुर को देख रहे हैं जो हूट-क्रेट समावे प्रकर से इधर-उधर बेसते बभं का रहे हैं । यह हमारे हिन्दुस्तानी आरोपियन हैं । रस्ते से हट जाओ, साहब बहादुर धाते हैं ! साहब को धमाम करो धान पूरे साहब बहादुर हैं । धुके लो धाप छिर से पाँव एक मुझाम नजर धाते हैं जो धपनी बुलादी का उली बेशर्मा से प्रब्राम कर रहे हैं जैसे काई बेरया धपने हाब-नाम का । धामन धात्मबल धपनय है बडे डूबे दरने का धात्मपीरब धाप मोरु-मठ को डूकरा बेते हैं किन्ती के नाक-भौ छिकोड़ने की परवा नहीं करते जो धपने स्वाप के लिए लपवोवी या धपनी मनोवृष्टि के लिए बाधनीय समझते हैं वह धबाध्य रूप से करते हैं । क्या मोरुमठ का धातर करें ! मोरुमठ के पुझाम नहीं लेकिन उली धात्मपीरब के पुतने से कछिए, कि जरा शाम को बिना फेस्टकैप लवावे किन्ती धंधेजी-स्वत म बना जाय तो उसके हाब-पाँव फूल जायेंगे लून छपडा हो जायगा 'बैहरा फल हो जायगा' क्यों ? इसलिए कि उसका धात्म-पीरब केवल धपन माइयाँ पर रोब जमान के लिए है उसमें धार का नाम नहीं । वह जिब समाम म मिलना चाहता है, जमकी छोटी स छाटी बड़िया की भी धबईलना नहीं कर सक्ता । जनता को वह समझता है हवारा कर ही क्या लंबी बह बुरा रहे लो बग धीर नाराज रहे लो क्या यह हमार कुध बना-बिगाड़ नहीं सक्ती । बिनसे कुछ बनने-बिपड़न का मय है उनके सापने वह मीबी बिस्वी बन जाता है । धपने एक मित्र साहब बहादुर से मैने पूछा—गुम इन टाठ से क्यों रहते हो लो बडे दार्शनिक नाब से बोले—इसलिए कि धंधेजी से मिलने पाता हूँ लो जूने बाहर नहीं उठारने पड़ते । जो मोप धचकन धीर टोपी पहनकर बाते हैं उन्हें जूने उठार देने पड़ते हैं । मैं कहता हूँ लो स्वाथ भेकर धंधेजी से मिलने नहीं जाले वह धचकन नहीं मिजइ भी पहने लो लो उन्हें जूते उठारने की जकरत नहीं धीर लो स्वाथ सेठर जात है वह किन्ती बप में हूँ उनकी धाला दबी रहती है । ऐमे प्राणियों की बया उठ धावनी की ली है, जो धपने क्यडे पर एक वाग को छिपाने के लिए साध कपड़ा ही कासा रैप ले । धपन स्वाथ बजबूर कर रहा ही लो धेरे बिचार में लो जूते उठार देना इससे कहीं धभवा है, कि इन उठ धपमान से बचने के लिए बेहयाई का एक धपराथ धीर धपन धिर पर से । यह मठ समझो कि धंधेज तुम्हारा कोट-नेट देखकर तुम्हारा ध्याना धातर करता है । धीर धपन ऐमा हो लो लो धपना बेव छोड़कर लम धातर को लेवा एक प्यहो शोरवे के मित धपने जम्ब-सिद्ध पीरब को बेचना है । एक बूसरे मित्र से यही प्ररन किना लो बोले—इससे छठर करने में बडा मुनीवा होता है जकता समझतो है यह कोई

साहज है, येर इन्हे ये नहीं धाती । एक धीर साहज मे कइया—धंयभी कइये पहलने से देह मे वड़ी खुस्ती धीर फुरती धा धाती है । परब मोन तरह-तरह की रसीलों से धापका समाधान कर बेगे । मैं पूछता हूँ—क्यों साहज क्या धारी खुस्ती धीर फुरती धयेभी कपड़ों मे ही है ? क्या यह कोई तिमिरमाती बीज है, कि बदन पर धामी धीर धापकी बेह न स्फूर्ति बीड़ी ! यह रसीलें जगों धीर नभर है । हाँ इत तक में धनश्य सार है, कि जब साध संसार योरोपीय धप के पीछे धा रहा है, तो धाप उससे धलग नैये धा सकते है । डूधरी रसील यह हो गकती है, कि हमार कोई ज्ञातीय परिधान भी धो नहीं है । निध-निध प्रांतीय परिधानों की धयेधा धो एक सार्वभैतिक योरोपीय परिधान का होना कहीं धच्छा है । बेसक यह टेका प्ररन है । यह बात भी विधारलीय है, कि धन्य बेसों मे धमीर-गरीब सबका पहनावा एक ही है धाहे उसके कइये मे क्रिस्ता ही सन्तर हो । धापके यहाँ किसान मिर्बाई धा नीमधास्तीन धा कुर्ता-बोती पहनता है कहीं सलवार है, कहीं पगड़ी कही धांधिया । पहले एक ज्ञातीय टाठ की सृष्टि धो कर जीजिय, फिर बिनायती पहनावे पर धायेध कीबिधा । भावा ही की नीति एक ज्ञातीय पहनावा भी बरसों के बाद कहीं धाकर धाविर्भूत होता है । क्रिती संस्था धा नीति-धार उसकी सृष्टि नहीं की धा सकती । धमी भारत को एक सार्वभैतिक परिधान के लिए बहुत दिनों तक इन्तजार करना पड़ेया मगर धन्य एक बह समय नहीं धाता धव एक के लिए हमार विधार में इत नीति को सामने रखना धाहिए, कि यधासध्य जनधधि का धम्मान किया जाय । धबर क्रिती प्राण्य में धनता कोट पहनती है, धो वहाँ के लिए कोट-सन्धन ही उपयुक्त है । इसी नीति जिन प्राण्यों में साधारण धनता कुरता धीर बोती पहनती है वहाँ कुरता धीर बोती को ही ज्ञातीय परिधान के पद पर धम्मानित करना धाहिए । धमिप्राय केवल यह है, कि शिबित-मयात्र केवल धपनी बिभिष्टता धा प्रमुत्ब जताने के लिए ऐसे धप-नूपा का ध्यवहार न कने जितम बिदेसीधन की ककक धाती हो । हो सक्या है, कि कुछ लोगों को धंयेभी बेप में रहने पर भी धरा धमिमान धा स्वाध-सिद्धि की भावना न हो पर दुर्भाव्यवता यह बिदेसी बेप धनता की धाँधों में जटकता है धीर इमे धारस करनेवाले धाहे बेधता ही क्यों न हों वे स्वाधति के होही धीर साधक धाति के धनन्य जल्य के रूप में मजर धाते है । संभव है, स्वाधीन हो धाने पर यही हमार स्वाधतीय बेप हो धाय मेकिन धव इधमें बह कुर्मत्कार न रहेंगे किन्तुमे इस बल्य इधे इतना मयहोमनीय बना रक्या है । धध सोधिए, क्या बह एक पड़े-सिसे ध्यक्ति को सोभा बैता है कि बह धपना रहन-सहन पेंधा बना ले कि धनता इधे धडा की दृष्टि से बेकने के बरले बुधा धा जय की दृष्टि से देखे । क्रिती समय धन धधि को पद-धनित करने का नतीजा बुध धी हो सकता है धीर यह तो स्पष्ट ही है, कि धगर धनता के हाधों में प्रमुत्ब होता धो बहुत से धंयेभी बेप के प्रमी यह बेप धारण करने के पहने ध्याध विधार से काम लेना धानश्यक धमधने मगर हमारो यह मनोभूति

माया घोर बेव तक ही रहती तो अधिक चिंता की बात न थी। हमने हमारे जितन घोर सामाजिक बिचारों पर भी धयना प्रमुख जमा लिया है घोर धर्मो में रोक-बाम न की गयी तो एक दिन हमारी भारतीय संस्कृति ही का लोप हो जायगा। यह एक साधारण-सी बात है कि पराधीन जाति को धरने में भारी बुराईयाँ घोर राज्य करनेवासी जाति में भलाईयाँ ही भलाईयाँ नजर आती हैं। हमारी सम्प्रदाय कहती हैं—धरने जगत्तों का मृत ब्रह्मणो ताकि तुम्हारी जात में कुटुम्ब घोर परिवार का भी कुप उपकार हो। पश्चिमी सम्प्रदाय का धारणा है—धरनी जगत्तों को मृत ब्रह्मणो चाहे उसके लिए दूसरों को बेव हो क्यों न काटना पड़े। धरने हा लिए चिंता घोर धरन हो लिए मरते। हमारी सम्प्रदाय कृपि प्रधान थी हम गाँवों में रहते थे जहाँ धरने धारणीयजता का संभग ब्रह्मणो-सी बुराईयाँ म हमारी रक्षा करता था। पश्चिमी सम्प्रदाय ब्रह्मणो-प्रधान है घोर बड़े-बड़े नपतों का निर्माण करती है जहाँ हम सारे बचनों से मुक्त होकर दुपारण में पड़ जाते हैं। हमारी सम्प्रदाय में सम्मिलित-कुटुम्ब एक प्रधान धंग था। पश्चिमी सम्प्रदाय में परिवार का धम है—बेवम स्त्री घोर पुण्य। दोनों म बुराईयाँ घोर भलाईयाँ दोनों ही हैं पर जहाँ एक में बेव घोर त्याग प्रधान है जहाँ दूसरे म स्वाध घोर सक्रियता। हमारा सम्प्रदाय में नम्रता का बड़ा महत्व था पश्चिमी सम्प्रदाय में धारण प्रत्या को बही स्थान प्राप्त है। धरने को मृत साराहो धरने मुँह मृत मिर्मा-मिट्टू बना। हमारी सम्प्रदाय में धन का स्थान गौण था बिधा घोर धारण से धारण मिमता था। पश्चिमी सम्प्रदाय में धन ही मुख्य बस्तु है। हम भी धन कमसे बे पर बचा के साथ। पश्चिम भी धन कमता है पर बचा का नाम नहीं। हमारी सम्प्रदाय का धारण धम था पश्चिमी सम्प्रदाय का धारण धम है।

अकिन यहाँ हम धरन सपुण्यों को प्रत्या नहीं करने बैठे हैं। हमारे कहने का तात्पर्य बेवम यह है, कि हमें हरेक पश्चिमी लोच के पीछे धारणें बंद करके धरने की लो प्रकृति हो रही है, बहु बेवम हमारी मानसिक पदाधन के धारण। हमारी सम्प्रदाय में लो रोग बे मगर उसकी बचा योरोपीय सम्प्रदाय की धरमचिन्ता नहीं है। उसकी बचा हमें धरनी हो संसृति म लोचनी थी। योरोपीय सम्प्रदाय की नम्रण करके हम धरने धरनी भी जहाँ बचाधों का धरणा करना पड़ेगा लो योरोप कर रहा है। योरोप धम धरण है, उसे धरने धरण का धरन नहीं घोर धरण योरोप क बिधारण लोच कह रहे हैं, कि यह संसृति धर बिधरस के धन में जानेवाली है। क्या हम भी जहाँ बुराईयाँ की नम्रण करके धरनी संसृति को भी बिधरस क धन में धरने का लोच करे? यह धमक नीधिण, कि यह राजनीतिधर परिधिण नहीं रहेगी पर हम परिधिण में हमने धरने धरिताय को लो धिया धरने धम की नता लो लो धरनी संसृति को लो बंदे लो हमारा धंग हो जायगा।

जनधरी १२३१

राष्ट्रीय कार्यों में गुलामी

हम यह देखकर महान् दुःख होता है कि हमारे राष्ट्रीय कार्यों में अब भी अंग्रेजी का बड़ी प्राधान्य है और महारत्ना भी ने कौबसी कार्यकर्ताओं को हिन्दी में नियम न जो उद्देश दिया जा उस पर ध्यान नहीं दिया गया। अब प्राप्तमाने अगर हमारे प्रांत में अंग्रेजी का प्राधान्य तो तो किसी हद तक समा के पास है मगर तुरंत तो यह है कि इसी प्रांत के कौबसी कार्यकर्ता अंग्रेजी में पत्र-व्यवहार करना अंग्रेजी में रिपोर्ट लिखना अंग्रेजी में मोटिस प्रकाशित करना अपन लिए शान समझते हैं। अब राष्ट्रीय नेताओं के हाथों राष्ट्र भाषा का यह अनादर हो तो किससे शिकार की जाय। शायद भाषा में लिखना-पढ़ना हमारे कौबसी नेताओं को भी अपनी मर्यादा के विरुद्ध जान पड़ता है। वह अपनी अंग्रेजी योग्यता का प्रदर्शन करके जनता को शायद प्रभावित करना चाहते हैं। अगर उनकी यह मनोवृत्ति है और इसके सिवा ही क्या सकती है तो ऐसे सम्मान तथा के पास है क्योंकि वह खुद अपनी सामाजिक पराधीनता की डीढ़ी पीट रहे हैं। इसमें बहुत से अंग्रेजी अंग्रेजी योग्यता रखते हैं। वह दिन में सोचते हाग अगर हिन्दी में लिखा-पढ़ा तो हमारे अंग्रेजी पढ़ने का क्या फल ? यह भी हो सकता है कि उन्हें हिन्दी में लिखने का शक न हो। यदि ऐसा है तो जनता को चाहिए, ऐसे गुलाम तरीकत के लोगों का विरस्कार करे। कांग्रेस जो कुछ अन्य देशों में प्रचार के लिए करती है, उसका अंग्रेजी में होना तो हमारी समझ में आता है। अन्य प्रांतों में पत्र-व्यवहार करने के लिए भी अभी कुछ दिन अंग्रेजी का मुँह ठाकना पड़ेगा। लेकिन जो बातें इसी प्रांत तक रह जाती हैं उनके लिए अंग्रेजी के बामन में मुँह खिलाना सम्भाव्य और राष्ट्रीय आदर्शों के सम्बन्ध प्रतिकूल है। कम से कम इस प्रांत में जो लोग हिन्दी लिपि उठानी सरलता से नहीं लिख सकते जितनी सरलता से वह अंग्रेजी लिख लेते हैं उन्हें अपने ऊपर सन्निवत होना चाहिए।

अप्रैल १९३९

अंग्रेजी भाषा का रोग

हम 'हम के पाठकों का ध्यान इस विषय की ओर पढ़ने भी आकृष्ट कर चुके हैं। हमें यह निश्चय हुआ है कि हमारे राष्ट्रीय कार्यकर्ता भी इस रोग में उठने ही प्रवृत्त हैं जितने सरकार के कर्मचारी या बकीस या कालेजों के अध्यापक। इसमें तन्मूह नहीं कि वे सार पढ़ने लगे हैं पर उनके मनीषाओं में सतमात्र भी संस्कृति नहीं पायी। किसी कर्मचारी की बैठक में जैसे जाइए, प्रायः सारकारी महाराजों को फर्ति से

धर्रेजी अग्रहण हुए पायेंगे। यह शब्द धीरे धीरे जो उन्होंने ईनिक पक्षों या धर्रेजी पक्षों में पड़े हैं बाहर निकलने के लिए अकुलाते रहते हैं धीरे धर्रेजर पाते ही पूरा निकलते हैं। हूँमी तो एक घाटी है जब यह हजरत धर्रेजी न जाननेवाली महिमाओं के सामने भी अपने बास्त्रिमास से बाध नहीं पाते। धर्रेजी भारत का यह बाधू कब तक हमारे गिरा पर रहेगा? कब तक हम धर्रेजी क गुलाम बने रह्य। इससे तो यही टपकता है कि राष्ट्रीयता धर्रेजी हजरत की गहराई तक नहीं पहुँचने पायो। महात्मा गांधी के सिवाय हम किसी नेता को धर्रेजी भाषा के प्रचार पर जोर देते नहीं देखते। यह विरिष्ठ रहे कि जब तक हमारी राष्ट्रभाषा का निर्माण न होमा भारतीय राष्ट्र का निर्माण क्याव धीरे धर्रेजा है। जापानी जापानी म धर्रेजा भाषा का प्रकट करता है चीनी चीनी भाषा में। ईरानी फारसी में अरबि भाषा की लिखित बनता धर्रेजी पढ़ने धीरे बोलने म धर्रेजा गौरव ममम्बती है। कितने ही सम्बन्ध तो यह कहने म मन्तोष नहीं करते कि हिन्दी लिखित या बोलने में उन्हें अमुबिधा होती है। यह चीनी-सारी मानसिक बाधता है। बड़े से बड़ा हिन्दुस्तानी भी एक गोरे से बात करता है तो धर्रेजी में। बह यह भूमकर भी नहीं सोचता कि धर्रेजा हिन्दुस्ताना में क्यों न बात करे। और धर्रेजा में धर्रेजी में बात करन को कितो हजरत कम्प भी मान लिया जा सकता है अकिन् धर्रेजा म धर्रेजी में बातचीत करने के लिए तो कोई बनीम ही नहीं।

सितम्बर १९३१

फ़ौजी कालेज की आयोजना

फ़ौजी की भारतीय बनाने के लिए फ़ौजी अग्रहण की जरूरत है धीरे धर्रेजा की फ़ौजी धर्रेजा के लिए एक कावेज जाना चाहिए। धीरे ही एक कालेज बनाने की स्कीम तैयार करने के लिए एक कमेटी बनायी गयी थी जिन्क समापति भारत के फ़ौजी भाट ब। उन कमेटी में धर्रे धर्रेजी रिपोर प्रकाशित कर बी है। उसे देखकर हमें निपटाता हुई। साठ माह्र साठ अग्रहण प्रतिबन्ध उन विधानमय में निबन्धना चाहते हैं। कमेटी के धर्रे-धर्रेकारी मन्त्र्य उन मन्त्र्य को एक ही धीम तक न पाते हैं। भारत में धर्रे धर्रेजा धर्रेजा धर्रेजा हैं। इन धर्रेजा से धर्रे जोध म कोई धर्रेजा अग्रहण न लिया जाय तो इनक धर्रेजा के धर्रेजा करन में धर्रेजा बय मय धर्रेजा। धीरे साठ साह्र की सकन के धर्रेजा से सत्तर बय। इनमें तो यही साबित होता है कि मरकर धर्रेजा फ़ौजी धर्रेजा की धर्रेजा को धर्रेजा धर्रेजा बराना चाहते हैं। जिन्क रिपोर धर्रेजा में सद्दर् हा रही थी धर्रेजा की धर्रेजा हजरत कालेज मिलाकर काम पर भेज दिया जाता था धीरे बहूँ वे धर्रेजा बहूँ धर्रेजा से धर्रेजा काम करते ब। कम से कम उनक धर्रेजा कोई धर्रेजा

नही सुनी गयी। पर भारत में चार हजार फ़ीजी अफसर तैयार करने में वैदित्त या सप्तर वर्ष लगते हैं। इनसे सरकार की नीयत साफ़ बाहिर होती है। हम पूछते हैं हमें चार हजार अफसरों की आवश्यकता ही क्या है? जब हमारी देश-रक्षा का भार हमारे ऊपर होगा तो हम निश्चय कर देंगे कि हम इससे कम अफसरों की आवश्यकता ही क्या है। इतने ही वर्षों में हम ऐसे-एसे दो विद्यालय खोल सकते हैं और वैदित्त वर्ष में जो काम होगा उसे सत्रह वर्षों में पूरा कर सकते हैं। हमारा ता' क्याम है कि फ़ीजी कालेज के प्रसंग होने की आवश्यकता नहीं। हमारे विद्यालयों में जैसे माईस का प्रबन्ध है वैसे ही फ़ीजी टापीस का भी प्रबन्ध हो सकता है। पहाड़ छोड़कर बुढ़िया निकालना हमारी सरकार की पुरानी नीति है। और, हमें यही सुनी है कि कई कमीशनों और कमेटियों के बावजूद यह नीयत तो बान्नी। अब यह देखना है कि इस रिपोर्ट को काय रूप में माने म किठना समय लगता है। रिपोर्ट में १९३२ से कालेज खोल देने की बात कही गयी है। देखिये।

सितम्बर १९३१

नवीन और प्राचीन

पूरा और परिष्कृत को प्राचीन संस्कृति में विशेष अन्तर न था। हाँ चूँकि नयी संस्कृति का बड़ा भाग परिष्कृत से आया है, इसलिए उसे परिष्कृत की उपाधि मिल गयी है। परिष्कृत संस्कृति हमें बहुत दिनों तक अकार्षणीय मे माने रखा। उसकी बटका-मटका देखकर हम ऐसे मतबाने हुए, कि जो कुछ सुन्दर और सरल भी हमारा वहाँ था वह भी हमारी नज़रों से गिर गया। वस्तु की पारदर्शी ही लीजिए। हमारा यहाँ पुरानी सम्प्रदाय यह भी कि कोई परिष्कृत या मिश्र जिस वस्तु वाले हमारे पास हो रोक टोक घा सकता था। हम उससे बाँट करके लुप्त होते थे। उस वस्तु हमें यह विचार कभी न सुनाता था कि इस मनुष्य के आ जाने से हमारा समय लुप्त हो रहा है। एक मिश्र की निकलबोई हमारी निगाह में अपने से कहीं ज्यादा मूल्यवान थी। लेकिन अब हम हरेक चीज़ को अपने के काँटों पर लीजते हैं, इसलिए किसी ऐसे आत्मी का धाना जिससे हमारा कोई स्वाध न सिद्ध होता हो हमें बाहर-ना लगता है। एक आत्मी आपकी अपना हिनीपी समझकर अपना दुःख रोने या केसल निगोच के लिए आपके पास आता है और धान उतक पाम एक मिनट बैठना भी चार समझते हैं। क्योंकि अब समय का मूल्य अपने से धीका जाता है। मनुष्यता सहानुभूति जिसबोई किसी से प्रबोधन नहीं है। अब जो कुछ है बनाया है। अब हमारे बड़े धारमियों के द्वार पर जो भीतर और बाहर का लड़कन लगा रहता है। जिससे स्वाध है, उसके लिए भीतर है। जिससे कोई प्रबोधन नहीं उसके लिए बाहर है। और हम इस संस्कृति का बखान करते नहीं बचने।

परिचय धारमियत का गला बोटकर स्वाध की मसोन बन गया है । वही हम यह मिना रहा है ।

पूर्वज सम्पत्ता धारमियों के आ आन से फूल उठती थी इन धरना धरोभाग्य सम्पत्ती की कि कोई मेहमान धाया वह धारी रात को धाये या पिछली रात को उसकी आतिरवारी में कोई कमी न होती थी । वह घर में सबसे अच्छे जगह पाया या सबसे अच्छा भाजन खाता या पौर सारा घर उनकी सेवा सत्कार में लपा रहता था । धर परिचय की सम्पत्ता न हमें रोने-बीर बनना मिना दिया है । मेहमान धाया धीर हमार प्राण-जन्म उड़ गये । कहीं से कहीं यह बसा गिर पड़ी धर मना गृहे ह कि वह जन्म मे जन्म रखा हो जाय । गृह-स्वामी का भुह उठप हुया है स्वामिनी की भवे कड़ी हुई है । मानुम होती है कोई धमगल धपनी धेयेरी धाया धामे हुए है । बाबू माद्व धपना कमप नही छोड़ सकते । मेहमान बाहर डरामध में टिक्य शिया बाठा है । स्वामिनी कमाले धर की लोडो नही है, कि जो बाड़े बनरनाला जला धाये धीर वह धर के लिए मोजन बनाने बंठे । उते तो धपन धरवासों के लिए मोजन बनाना पहाड हो रहा है । ठर ठर यह धमपूत न जाने कहीं से फट पड़े । धीर धंधर तो देखो पहले स धूषना भी न ही नहीं कोई बहाना कर लेते कि बीमार है या कहीं बाहर जा रहे है । जिस दिन मेहमान शिया होता है धर में जसे गया शिन होवा है । हम इतने स्वार्थी इतने मकीख हो गये है कि नि-स्वाध-भाध से कोई काम नहीं कर सकते । धपर धरिधि कोई मुकधमा नाया हा या सबसे किसी मोटे मरीज के लैमन की धारा हो या उनके धरिये कोई बड़ा धाडर मिना की सम्भाबना हो तो फिर परिस्मिति बनल जाती है । उम धरिधि कीधूब धातिर होती है मानुब होता है, धारा धर उम पर प्राण है रहा है । यहाँ भी वही रुया वही ह्यप । ह्यप । धीर जो सम्भन लये रंन में जितने रंगे है उनमे यह मकीखना उठनी ही धरिध है । धेधरिधों में मजूतों में धेरयों में बह प्रकृति धमी उठनी धीब नही है जितनी शिधित धीर सम्भ समाज म । धपन लिए, जो कुष हो धपने लिए, मही उनका जीवन सल है । हम यह नही बहते कि इस नदी सन्कृति में धीर उस पुरणी धरिधि-नेवा में सब धुराध्या ही धुराध्या या लुधिया ही लुधिया है । पुराने धातिध्व म बहुधा ब्रिकिकर धीर निधम्मे मेहमान गिर धर सवार हो जाते थ । लैकिन ब्रिकिकर या निधम्मे धारमियों के सत्कार में भी तो कुछ सम्भनता धी धुध उदायता थ । इन नदी मफोटाना म तो धीध स्वाध है धोधि लुधसर्धों ।

परिचय मे हमें सबसे जहरीला धो पान पहाया है वह यही लुधर्धी है । ममस्त संसार को स्वाध के परों लने रौदकर बह धर स्वाध का पिशाच हो गया है । उमये न हृषप है न कोमलता है न धर है । इस सिर मे धर तब भीतर मे बाहर-ठफ स्वाध मरा हुया है । हँसना-ओसना रोना-गाना एक भी स्वाध के लालो नहीं । धाधीन नसकृति में धिक्रिमक के लिए निमी मरीज मे धीस लेना ह्यम था । वध धी या हकीम माद्व

का जिस बन्धु किती मरीज का बुझाया मिस आय उसी बन्धु भर से बन्धु पड़ना धर्मिबाप का उसमें कोई रियायत न थी। हुकीम भी धनधर दबा भी न्यूर ही देने से मा कोई मुस्त्ता मिलते से तो उसम दबा के बहाने फीस बगुल करने की बन्धना तक उनके मन में न घाटी थी। मरीज की सेवा करना उनका बन्धु ना। इसी को बह प्रपना मौरज समझते से पर धाम जो कुछ होता है, बह हम रोज ही बेसते हैं। हाँ उस परिवार का एक बिल्हु धमी बाळी है। भित्तमे ही बैद्य या डाक्टर बर पर मरीज से फीस नहीं सेते। हाँ यथा से कुछ हमकी गजाइत निकाल भी जाती है। यही बह धारमोअस्ति है जो पश्चिम के इन बेड सी सार्तो मे हने दी है। बकीज पुराने जमाने में भी होते से धध्यापको से भी प्राचीन युग जालो न का पर बकीज मरकार से बेतन पाटा का धीर धध्यापक निष्ठा माँकर निष्ठा-दान देता था। मगुध्व स्वाध का पुठता होकर रह गया है। धमर उसमें प्रतिभा ह तो संसार का इससे कोई उपकार नहीं हो सकता। बह बापबाप पैसा करेगा पहाड़ों पर बापवा हवा म चरेगा शराबें उढायेगा। मुस्त म क्यों किन्ती की सेवा करे। उनके पश्चिमी गुरु ने उसे बह नया पाठ पढ़ाया है। धब तो हमारे महात्मा लोग बिना पैस के भारतीयों को नहीं से सकते। पहले बुद्धि या निद्धि की सफसता सेवा धीर उपकार मे भी धब स्वाध-निद्धि म। मरीज के होठों पर प्राण लमे हों डाक्टर माह्व बिना फीस नियं नहीं जा सकते। यह तो बूनी-बौगुनी फीस बसूल करने का मौका है। एसे शिकार क्या रोज लेंगते है। जब सभी स्व र्थ के उपसक है धुर्यें में नय पड़ गयी है तो हमारे धध्यापक भी न क्या धपराय किया है। बह भी योरोप जावगे बहों से लौटकर लम्बा बतल लेंगे। 'कैरियर' बनाना ही तो बीबन का उद्देश्य है। बाहू रे पश्चिम। तेरी बीला ईश्वर की भीसा से भी बिबिध है। क्या से दिन फिर कमी धावेंगे बब हमारी पुरानी संस्कृति का धध्युधय होगा। उस संस्कृति का जिससे गरीबी कर्षक म थी। क्या धासा है।

नवम्बर १९३१

संयुक्त प्रान्त के दा कन्वोकेशन

युनिवर्सिटी तो भारत म कोई है नहीं ही धनुष्ट बनाने क कई कारखाने है। इन निहाइ से संयुक्त प्रान्त भारत का लकनायार या बम्बई है। यहाँ ऐसे-एसे पाँच बड़े-बड़े कारखाने है जहाँ युवकों को बुम्सल धीर डिब्रूलगर्भी धीर बिनामिता धीर भूँसे धर्मिमान की शिक्षा भी जाती है। को ए पास होने का धब ध्यावहारिक रूप से यही है कि धमक युवक इन दुर्गुनों में पाम हो चुका है। बह बिना एस्पार में बमम धिनने के धीर किमी काम का नहीं। उन गरीब का कोई धीप नहीं। बह तो गुरु इन

मशीन में बना है। घाबिर उसने जो कुछ देखा है जो कुछ सुना है जो कुछ पढ़ा है वही घाबल तो उसके सामने है। किसी युनिवर्सिटी में जाने चाहिए। वही घाबल भारततीयता की कहीं गन्ध भी न मिलेगी। वही संघर्षी भाषा का संघर्षी बोल का संघर्षी धारणा का ही धारणिय है। त्याग और प्रेम के धारणा का एक मिरे से बहिष्कार कर दिया गया है। वही वही मित्रान्त है, जो ईर्मीयुड से कोई बड़ी-सी उपाधि लाया है। वही जो कुछ है, उपाधि है। इन विद्यालयों ने भारत में 'कैम्ब्रिज' सम्प्रदाय की सृष्टि करने में जो काम कर रियाया है वह और किसी ने नहीं किया। जो उसका धारणीकारी के धन्द्वर रह गया उस पर वही का जद्दू ऐसा जद्दू कि उस भर नहीं उठता। भारत की व्यक्तिगत धारणिक से धारिक तीन श्रया यहीना है पर हमारा उपाधिधारी युक्त सतह रूपसे से कम न नजर ही नहीं कर सकता। वह धरैमा बीस धारणियों का हिस्सा बट कर जाता है और उतक धारणिक रूप से कम दो नौ व्यक्तिधो के। भारत जैसे प्रदोष देश में ही यह धन्द्वर हो सकता है कि वही के राजपद-ओगिबो का बेतन सधार के धनबल देश से कई गुना बढ़ा हुआ है। वही धरैर हमारे विद्यालय में भी है क्योंकि वह भी उही वस्तुही शालन का एक धंग है। हमारे बाइतधामधर माहक को मदीये में हीन हवार चाहिए। जिस विद्यालय पर मुक्याधिष्ठिता विद्याधियों के सामने यह धारण रह रहा है उस विद्यालय में धार धरर धन के उपाधक हो तो क्या धारधम है। कहा धारणा ईर्मीयुड न जो हो प्रोफेसरो के बेतन कम नहीं है लेकिन कहां ईर्मीयुड और कहां भारत।

कैर, धार की उपाधि-बैटार् के धरधर पर इनाइनाद के कारणाने में नर रमन का धारण हुआ और नलनक के कारणाने में धर धारणधन का। नर रमन जोटी के वैधानिक है और धर धारणधन जोटी के विधानधर पर इन दोनो धारणों में बड़ा धन्द्वर है। नर रमन न तो प्रयाग के कारणाने की धुरि-धुरि धरंसा की है और उसे धारणा विद्यालय कहा है हालांकि उनी प्रयाग के कारणाने में वह कुछ किन्दासत का धरन उठा तो कारणाने की प्रबन्धकण जो कमेटी ने यह निरधय किया कि होस्टल के धारणा की धेर बड़ा ही धार धरैक धारणधो के बेतन में किसी तरह कमी हो ही नहीं सकती। यह है उन विधान का धारण जिस पर हमारा स्वराम्य है। रमन माहक ने तो प्रयाग धरिधविद्यालय की मुधना हुमाइ से करने में भी संशोधन किया। जिस विद्यालय में हमारे कुधो के धारण का निर्माण होता है वही धारणधो धरने नलन नर में लगी हो यह हमारे धुराधय की धार है। धार विधानों से ही हम शिक्षायत नहीं। उनका धरिधध धन पर है। वह धरुधन से धरिधना धारते हैं हमने धरुधन करने हैं, धरै धारण है धर धरती है। हम धरिध है। धरिध विद्यालय तो धरारी नलनधता के धारण है। नर रमन के धरं धं—'हम एक महान सधरता के उधरधधरारी हैं—धर वही धार धर धरधन इतना धारण ही रहा है तो धर धरने धरिध की धर धर निरध ही धरते

हैं। हम अपने विद्यालयों से यह धारणा करते हैं कि इस भनामात्र के अन्तर्गत पर वह स्वयं अपना सब काम कर लेते। तब तायद अन्य सरकारी विभागों की धर्मों पुरानी। कम से कम हम अपने विद्यालयों पर गव करने का मुँह होता लेकिन इस नीति से काम लेकर उन्होंने सिद्ध कर दिया कि व भी स्वाभोपासना में दूसरे विभागों से भी मद भी कम नहीं है। हम ऐसे विद्यालयों को अपनी महान् सम्यता का उत्तराधिकारी नहीं समझते बल्कि उसके लिए कर्मक समझते हैं। हमारे विद्यालयों का धारणा कुछ और वा और वह हम भी कुछ छोटे रूप में मुझुनों में देखा जा सकता है। सबसे अन्त में की जो बात सर रमन ने कही वह यह थी—

‘हिन्दुस्तान के विद्यालयों का यह धर्म नहीं है कि वह इस अन्ति और परिवर्तन की मति का और भी कुछ बनाए बल्कि उनका वास्तविक धर्म है कि वह राष्ट्रीय विकास को इस इत मति के लिए एक ब्रह्म—सकावट—का काम हैं। भारत में इस समय जो अन्ति अन्ति हो रही है उसका अर्थ हमारी समझ में सर रमन ने नहीं समझा। भारत की अन्ति केवल अपनी धारणा को पा जाने की इच्छा है। हम देख रहे हैं कि मोटोप की स्वाधीनता और कृषिमत्ता और हृषयहीनता भारत को अन्त करती बनी जाती है। हमारे विद्यालयों की स्थापना इसी उद्देश्य से सरकार द्वारा हुई थी और सरकार की अपने उद्योग में पूरी सफलता हुई। हमारी अन्ति अपनी बोधी हुई धारणा को—अपने स्वाग और सरसता और धारणाओं को—फिर आपस जाना चाहती है और इन परिस्थिती सचप और स्वाधीनता को मिटाकर उसकी जगह सहयोग और सहानुभूति को प्रतीत देखने की इच्छा है। इसकी मति में ब्रह्म जगाने का धर्म यही हो सकता है कि भारत इस पथ को चुनना देखता रहे। वर में प्राग भय जाने पर उस अन्त से अन्य बुद्धिना चाहिए क्योंकि विलम्ब से सवनात की ही सम्भावना है।

सर्वप्रथम निरवधिधामन में सर राधाकृष्णन का मापक अपनी निर्भीकता और राष्ट्रीय मत्तों के एतबार से इस प्रकार के मत्तों में अद्वितीय है। सर राधाकृष्णन ने अधिकांशियों की कृती या मत्तुशी की विलकुल परवाह न करके सच्ची और बेलाज बातों कह सुनायी है। इस आन्दोलन-काल में विद्यालयों का क्या धर्म है और मुक्त छात्रों से क्या धारणाएँ की जानी चाहिए इसका उन्होंने एक अर्थ बराबर की मति विवेचन किया है। हम हमेशा मुक्त धारणा है कि फिलासफरों को अपनी बात की खान निकालने में सिखा और किसी बात की चिन्ता ही नहीं होती। फिलासफरों के सम्बन्ध में विलनी ही हास्यास्पद कर्माएँ प्रचलित हैं पर सर राधाकृष्णन के इस मापक ने सिद्ध कर दिया कि वह फिलासफर होते हुए भी राष्ट्र के दुःख से दुःखी हैं और स्थिति समुदाय का इस समय क्या धर्म है इस अन्त में सह समझते हैं। विचारों की प्रीकृता और उदात्ता में हमने किसी अन्तोध्यान में ऐसा मापक नहीं मुना। उसका एक-एक वाक्य दिल पर धर करमेबासा है। धारणा बहा—

‘बुद्धिमान् धारणी का बहु भाषा नहीं होता कि हरक विषय में बहु कोई न कोई राय दे सकता है, न बहु किसी लेखक का सार एक वाक्य धीरे किसी संस्कृति का तत्त्व एक शब्द में प्रकट करता है। बुद्धिमान् मनुष्य में बुद्धि का विस्तार विचार की स्वाधीनता और नवीनता और अन्य मनोमात्रों को समझने की शक्ति होती है। वह हमेशा उन विचारों से सहानुभूति रखने की तैयार रहता है जिनसे उसे मतभेद है।

धार्मिक चरित्र धारण इन भाष्यों में विद्यालयों के पुराने धारण पर प्रकाश डालना—

‘प्राचीनकाल में विद्यालयों के संस्कार की उपाय एक मर्यादा से ही जाती थी जो एक हाथ से दूसरे हाथ धीरे एक युग से दूसरे युग तक चलती रहती थी। यह मर्यादा एक मनुष्य के वस्तु है। इसने जिसने ही धारणों को उठाया है किन्तु ही हमें चरित्र जगायी है। वह इच्छा धारण की बोधक है, वह धारण है जो धारण-कर्म और गुरु की ओर चलाकर साफ कर देती है। अतएव हम इन सामाजिक धार्मिक और राजनैतिक धारणों से मनुष्य को जो जो इन धारण के फलने में पैदा होता है जो हम विद्यालयों से दूर ही रहना चाहिए।

धार्मिक धर्म चरित्र कक्षा कि विद्यालय में युवावस्था का जोश और सजीवता होनी चाहिए। अतएव विद्यालय ऐसे मनुष्य पैदा करता है जो जिस के बोध है जो धार्मिक धारण की संरक्षण मनाते हैं, जो ऐसे धारण के बने हैं जो जोश से चरित्र है जो वह विद्यालय धर्म के धारण नहीं कर सकता। अतएव वह उच्छाह और पीरय से भरे हुए युवकों को लकड़ उम्हें बोधे स्वार्थी और प्रचारों का गुलाम बना देता है अतएव वह उनके विचारों को फटोर कर देता है और उनके धारण बढने को रोकने की निर्वीच कर देता है जो वह धर्म के धारण से दूर चला गया है।

यह धारण धारण से अतएव एक इतना धारण इतनी विद्यता से भरा हुआ है कि हमने से हरक का उसे धारण-धारण करना चाहिए।

दिनम्बर १९३१

स्वामी श्रद्धानन्द और भारतीय शिक्षा प्रणाली

जो तो स्वामी की प्राचीन धारण धारणों ने पूरा रूप में प्रकट के पर मरे विचार में राष्ट्रीय शिक्षा के पुनरुत्थान में उन्होंने जो काम किया है उसकी कोई नजर नहीं मिलती। ऐसे युग में जब धर्म धारण धारणों को हरक विद्या विचारों है यह स्वामी की ही का विचार था जिसने प्राचीन धारण प्रथा में भारत के उदार का तत्त्व समझा। लड़का जैसी शिक्षा पाता है किता ही मनुष्य बनता है। हमारा विद्यालय ही राष्ट्र की

संस्कृति के सबसे बड़े रक्षक हैं। विद्यालय पूछ स्वतन्त्र होना चाहिए, बाहरे स्वराज्य हो या परराज्य। राज्य से किसी प्रकार की सहायता लेना मानो शिक्षा का गला बँटाना है। धीरे धीरे शिक्षा के दरों में बढ़ियाँ पढ़ बर्गों को उस शिक्षा की योग्यता मिले हुए छात्र भी गुमान मनीबन्धि के मनुष्य हों तो कोई धारणा नहीं। राज्य-परिवर्तन होते रहते हैं राष्ट्र के प्रायशः में कोई परिवर्तन नहीं होता। धरर उसके धारण बनन बायें तो उसकी परम्परा नष्ट हो जाय धीरे धीरे राष्ट्र अपने व्यक्तित्व को खो बैठे। बीड़काम तक मुस्कुराना प्रथा भीवित रहो। मुसलिम युग में वह प्रथा नष्ट हो गयी धीरे उसका नष्ट होते ही राष्ट्र नौका का भगर उखड़ गया। जीवन के किसी विभाग पर नियंत्रण न रह सका। बह धीरे धारण को धार संस्कृति के स्तम्भ से धरणा धरणी हन छोकर बाठ-पाँठ के हन में धर गये धीरे बेक्य बस्वकारी अकमस्य पेट के बन्नों में संन्यास धीरे बान्प्रत्य का स्वान छीन लिया। धरणी राज्य में नये-नये विद्यालय धुन मगर लका प्रायशः धीरे उदरम कुष धीरे धा। बह दफ्तरी शासन का एक विभाग मात्र धा जिसका उदरय सत्य का जोध धीरे संस्कृति का विकास नहीं दफ्तरी के सिध कर्मचारियों का निर्माण धा। वही की पुस्तको पर शिक्षाविधि पर, धरणी राज की धार धी। धारों के धारमसम्माल को कुषना जाता धा। कोई धुषनकारी धी बहरी पय-पय पर धारना से कुषन न कुषन बसून करने की विधक रहती है। धुर्मानो का मात्र धम है। हाबिर न हो सको तो धुर्माना धी वेर में धारधो तो धुर्माना शरणर करो ता धुर्माना सबक मात्र न हो तो धुर्माना दबना तरह की फीस—पढाई की फीस पुस्तकालय की फीस साइंस की फीस इन्वहान की फीस रोशनार्ड की फीस। ऐसी संस्थाधा के धारना से यह धारना करना कि बह राष्ट्र की कार्य सेवा करें धुरातामात्र है। उनकी तो धारमा कुषनी धा धुकी है।

भारत के प्राचीन धारण की हन परिधनी धारण से बर धुनना कीनिय। वही हमारे बाइन बासलर माहब साधे ठीन हबार धरना महीना बठन पाठे हैं। कितना शाग दार धारका बंगला है कितनी धरणी-धरणी मोटरें हैं कितने स्ट्राइक में रहते हैं! प्रिन्सिपल माहब धा बठन भी मगमन धी हबार है। उतना शागदार बंदना तो धारका नहीं है पर धार निवार क्यारा कीमती पीठ है। मेडियो में धारकी स्वारा पहुँच है। धुड़की के शीकीन है ही। प्रोफेसर रीडर लकबरर डीन ड्यूटर डिमेंस्टर गरर उमर से नीचे तक वही शाग वही नमुना बहो टाण। धन बालाधरर में धरिध का विधक ही क्य। किनी पुणर संन्यामी का नाकर विठायें तो बह भी विभायती कैशन धीरे धीने धा धुमान हा धार कोमल-धुषय धरनों का पुषना ही क्य। जीवन क बह ठरम्मुक धीरे स्पर्ध धीरे मिध्या मोध के धुरय दैन-दैनकर मुषक भी वही रंन पकड़ता है। निवार धीरे मेबैंडर, बहुसंन्यक मूठ धीरे धुरा जाने क्य-क्य धरना उमके पीछे पड़ जाती है मही बसिक उमके मिर पर मबार हो जाती है। उन व्यतनों को पूरा करने क निर बड़ मठ धन बहानेबाधी गमी धुष करता है वही तक कि धारम-मम्माल तक

तो बैठता है। वह संकटों का जरा भी मुकाबला नहीं कर सकता। उसे किसी न किताब के पाठ्य की आवश्यकता है। धरने वन पर तो खड़ा ही नहीं रह सकता। जो एक बस्तु चाय न मिलन से बरहुवान हो जाय एक बस्तु मिथार न मिले तो पागल हो जाय वह जीवन-संशय का क्या मुकाबला कर सकता है। इस परिस्थिति में भी कभी-कभी रत्न निकल पाते हैं। भक्ति वह अणुवार है।

प्राचीन प्रथा की तरह यों उठाएँ। कुसपति है वह ज्ञान की मूर्ति बिद्या का अग्रगण्य जमीन का अग्र-गम बसे हुए धीरे सतार के प्रयोगों से उँचा उठा हुआ। सम्पत्तिक भी उसी मीन में डले हुए, कड़ी घाइम्बर नहीं कहीं विद्याविमान नहीं। बहो ज्ञान इसमें नहीं कि कौन विद्वान् व्यक्त हो, किन्तु पास कितने अच्छे कुत्त हैं या कौन सिनेमा रयादा देखा है वकि इस बात में कि किमें रयादा लाभ है किन्तु रयादा भक्ति या विद्वान् है कौन रयादा स्वाध्यायी है किन्तु मन्त्र धीरे महान्ता का भाव अधिक है। दोनों पाठ्यों में विद्वान् अन्त है।

स्वामी सदान्तर जो न इसी भारतीय धारण की विद्या कर दिखाया। समय उन्क अनुकूल न था विरोधिया भा वृत्तना ही क्या चारों तरफ बाधाएँ ही बाधाएँ। पर विद्वान् धारणाकारी से उतने ही हिम्मत के धनी थे। किसी बात की परबाह न करते हुए गुबकुनों की स्थापना कर ले। यद्यपि उमाने न मुबकुल पर भी धरना कुछ न कुछ अन्तर धरना। मुबकुल न निकले स्नातकों का भिन दुनिया म धरना पड़ा वह एक धीरे ही दुनिया की धीरे उममें सम्मानपूर्वक रहने के लिए उन्हें धरने जीवन न कुछ न कुछ धरना करनी पड़ी धीरे वह धारण मजबूत धीरे मुन्तर, धरन प्राचीन गौरव से रोक्सी बनावट धीरे विद्या की हिकाएत नहीं देना की धारों से देना हुआ प्रतिकूल परिस्थितियों से कुछ विविध पड़ा है—यद्यपि दिनों के इन्तहार में।

शुद्धि समाचार, अख्यान-वलिदान अंक,
जनवरी-फरवरी १९१०

सदाक फिल्मों के दिन गिने हुए हैं

एसा शक पड़ता है कि मन्त्र किन्हीं की हवा बहुत अन्तर विद्वान् जन्मी। मुक किन्तु एक साथ एक पूर्वकाल म प्रकृत हो जानी जो। ज्ञानों के अन्तरकाल का धारण धरनामिया अन्त धीरे भीम नहीं उठा करने से। मन्त्र किन्हीं की धर बहुत तप हो गया है। मन्त्र धरना किन्हीं का धारण धरी उन्त मन्त्र है जो धरना के जाता है। चिनी देत की धारण अन्त विद्वान् की धारणों में इतनी कुतल नहीं होती कि विद्वान् धरना मन्त्र धर उन्त धारण उन्त धर धरना मन्त्र किन्तु

बनानेवालों को बराबर बाटा हो रहा है और यह व्यवस्था बहुत दिन नहीं रह सकती ।
 मूक विज्ञों के दिन फिर लौटेंगे ऐसी धारा है ।

२६ अगस्त १९३२

जाग्रति

जीवन के लिए जागना जितना जरूरी है उतना ही जरूरी सोना है । दोनों
 क्रियाएँ एक दूसरे के सहारे पर हैं । नींद का न धाना भी एक बीमारी है, जिससे अनेक
 प्रकार की बाधाएँ आ सकती हैं । और जो प्राणी रात-दिन सोता ही रहे, वह तो मर
 सा है ही । यदि दोनों क्रियाएँ एक दूसरे की सहायता करती रहे—घाबनी बाये कर्म
 करने के लिए सोये जागना करने के लिए—तो जीवन सुखी होता है लेकिन जागना
 जीवन का मुख्य सस्रक है, सोना अर्थात्—विश्राम तो केवल उसका सहायक है । इस
 लिए, जाग्रति जीवन और अमृत्यु का बिन्दु है और निद्रा पतन तथा ह्रास का ।
 जाग्रति रज-अज्ञान क्रिया है निद्रा में तम की प्रचलता होती है । कम से कम सोने के
 लिये अनेक उपाय और साधन बताये गये हैं । अधिक से अधिक सोने के लिए आवश्यक
 किसी ने कोई उपाय नहीं बताया—उसी तरह, असे स्वस्थ रहने के लिए तरह-तरह के
 प्रयत्न किये जाते हैं पर बीमारी के लिए भी किसी ने कोई प्रयत्न किया है ऐसा कभी
 सुनने में नहीं आया । वास्तव में स्वास्थ्य का न होना ही बीमारी है—उसी तरह, जैसे
 प्रकार का न होना ही अंधकार है । घाबनी जितना ही कम सोये उतना ही जानक है,
 यहाँ तक कि कई विद्वानों का मत है, सोना कोई आवश्यक क्रिया नहीं । संभव है उप-
 स्थितियों के लिए सोना आवश्यक न ही उनकी प्रकृति में रज और सत ही रह जाता हो
 तम की सभमा हानि हो जाती हो पर साधारण प्राणियों के लिए भी बही नियम सामू
 है कि मात्रा से अधिक सोने में हानि है अतएव जब हम किसी राष्ट्र के विषय में जाग्रति
 की कामना करते हैं तो इसका बोध यह होता है कि वह राष्ट्र मात्रा से अधिक तमो-
 गुणी हो गया और उसमें जीवन की मात्रा अल्पतः से कम है । हम इसी अवस्था में हैं
 और उससे निरक्षण का प्रयत्न कर रहे हैं । हम इस तरह की मानते हैं कि हमारे लिए
 जाग्रति की बहुत बड़ी जरूरत है, लेकिन तम जाग्रति का उस अमृत्यु का क्या क्या
 हो इस विषय में अभी हममें बड़ा मतभेद है, अनेक विचारक अनेक सिद्धांत बताते हैं ।
 हम जागरण के दो-चार तरीकों में इसी विषय की निश्चयता करना चाहते हैं ।

सबसे पहले यह जरूरी है कि हमें यह समझ में—हमारे जीवन का उद्देश्य क्या
 है । जब तक हम इसका निश्चय न कर लें हम जाग्रति का क्या स्थिर नहीं कर सकते ।

धमिभ्र भी । जब से पच्छिम में कर्त्तों का युग धारण हुआ तभी से बहूँ की संस्कृति में स्वाध
 धीर सभ्य की प्रमाणता हुई । यद्यपि वह कथन बिलकुल सार-हीन नहीं है फिर भी पच्छिमी
 संस्कृति का का उद्भव स्वान है, यानी यूनान धीर रोम वह सभ्य प्रमाण गण्य था ।
 ईसाई-धर्म जो मूल में बौद्ध धर्म धीर बहुत धर्मता में हिन्दू-धर्म का ही रूपान्तर है,
 पच्छिम में उस पीढ़े के समान था जो कहीं बिदेस से जाकर धारोपित किया गया हो ।
 कुछ दिनों तक तो उनमें अपने भीतर की शक्ति से बाहर की प्रतिकूल शक्तियों का
 सामना किया फिर वह गूट हो गयी । बिदेसी पीढ़ा उस प्रतिकूल अन्तर्बाध में फल-पुल
 न सका । अन्त पच्छिमी ईसाई कहलजते हुए भी ईसाइयत से जोसों दूर है । ईसाइयत की
 हवा धीर अहिंसा का बहूँ नहीं नाम भी नहीं । रोम धीर यूनान क कवि दार्शनिक
 बौद्धा तो प्रसिद्ध है पर कोई त्वापी महात्मा था इसमें सन्देह है । वह भाग-प्रबल
 संस्कृति जो धीर राष्ट्र के समी अथ अधिभ से अधिभ भोगने के लिए लासामिष्ठ रहते थे
 जिसका परिष्कार आपस के सभ्य के सिवा धीर हो ही क्या सकता था । भारत में हम
 प्राचीनकाल में एध सभ्य का पता नहीं मिलता । इसका कारण या तो यह हो सकता है
 कि यहाँ शक्तिशालियों ने दुर्बलों को हतना कुचल जाला था कि उनमें धरियात् करने की
 सामर्थ्य न थी या यह कि त्वाय धीर सेवा भाव का हतना प्रसार था कि सभ्य को
 पनपने के लिए कोई अवसर ही न मिलता था । बलतापो धीर धसुरो में सद्गाइयों की
 कबाएँ मिलती है, लेकिन वह स्वाध का सभ्य न था बल्कि सिद्धांत था । धसुर धोस्वाधी
 से बलता त्वाधकारी । बेबता जब लड़े धारणरक्षा के लिए धसुरा को परास्त करने उन
 पर रोव बनाने का भाव कभी उनके मन में न धाया । योरोप में इसके प्रतिकूल स्वाध
 का सभ्य था—गरीबों धीर धनीरों की शासकों धीर शासितों की लड़ाई थी । ज्यो
 संघर्ष की आप पच्छिमी संस्कृति क हरेक धंग पर लगी हुई है । ईसाई धर्म न कई सभियों
 तक उस स्वामाधिक मनोवृत्ति को बढाये रखा । अंत में वह भी परास्त हो गयी अतएव
 योगेय के जीवन में धाव जो स्वाध का उन्माध है यह उनकी स्वामाधिक धीर सनस्तन
 मनोवृत्ति है । बार-बार अति का हीना ज्यो स्वार्थमय सभ्य का परिष्कार था ।

धरसे सप्ताह में तुम फिर इस प्रश्न पर विचार करेग ।

५ सितम्बर १९३०

जाग्रति

२

विद्यमे धंग में हमले योरोप के सभ्य धीर भारत के अहिंसा धीर प्रेम की सभ्य
 की थी । हमारी संस्कृति का मूल तन्व अहिंसा है पच्छिम की संस्कृति का मूल तन्व
 संघर्ष है । यह बात नहीं है कि पच्छिम में अहिंसा भाव का अस्तित्व नहीं या भारत में

संघर्ष कोई घनासी बात है लेकिन हम यहाँ संघर्षों से बहस नहीं। पश्चिमों जीवन की नस-नस में धनु-धनु में संघर्ष भर हुआ है। उसी तरह भारतीय जीवन में संघर्ष में घड़ियाँ और घम बसा हुआ है। संसार की विभूतियों पर अधिकांश पान के लिए और उन्हीं भोगों के लिए संघर्ष और संघर्ष अधिकांश है। अधिकांश से तो केवल सतोप और स्वाम और निवृत्ति का ही विकास हुआ है। योरोप का विवेका किमी संघर्ष में विजय प्राप्त करने के बाद उस विजय से अधिक से अधिक लाभ उठाने का प्रयत्न करता है। यहाँ धन में विजय प्राप्त करके ग्लानि और विराय में डूब जाते हैं। संघर्ष प्रभुता के सिद्ध पर पहुँच कर निवृत्त बन जाता है और धन के प्रचार में अपना जीवन गायक करता है। संघर्ष में मोलबन्धो होती है। अधिकांश एक बय दूसरे बय को बट कर जाय इसलिए प्रत्येक बय अपना संघर्ष करता है और अपने स्वार्थों को रखा करने के लिए संघर्ष प्रयत्न करता रहता है। भारत में इस तरह की पुटबंदी का प्रभाव नहीं मिलता। किसी बय को दूसरे बय से हटना भय नहीं कि वह अपना संघर्ष करता। प्रत्येक बय का कामगार निवृत्त था। उस संघर्ष के संघर्ष वह अपना जीवन व्यतीत करता था। संघर्ष संघर्ष और राष्ट्र का नेता था इसलिए नहीं कि उसमें धन बस था या दाहुबस था इसलिए कि उसमें इच्छा थी। संघर्ष धन कमाता था पर उस धन को अनिष्ट में खर्च करता था। संघर्षों में कुछ इस तरह की हाथी की कि लोग अधिकांश की संघर्षा संघर्ष कर्मियों का आत्म विचार रखते थे। उस वक्त का राजा केवल मिहामन की सोमा न बसाता था बल्कि उसे रक्षक-विजय का हित की रक्षा रहता थी। वह निवृत्त संघर्ष संघर्ष का कुछ न कुछ भाग प्रजा का कुछ-कुछ धन में व्यतीत करता था जिससे प्रजा में उसके प्रति सन्धि और प्रजा का भाव उत्पन्न होता था। अधिकांश केवल किसान से संघर्षा संघर्ष करके धन न करता था बल्कि प्रजा के हित की रक्षा करता था। कुछ और तानात्र संघर्षा संघर्ष और दुर्भिक्ष के संघर्ष प्रजा के लिए संघर्षा संघर्ष कर देता उसका धन था। संघर्ष ही सोमा अधिकांश की होने लेकिन संघर्ष में संघर्षा संघर्ष से और इसलिए कुछ प्रजा पर संघर्षा संघर्ष करने का संघर्ष न होता था।

इसके विपरीत पश्चिम में स्वाम और मोम का राज है। क्लो के आधिपत्य ने व्यवसायिकता की एक हुआ-सी पैसा दी है। वह व्यवसायिकता पश्चिमी संघर्षा संघर्षा संघर्ष है। संघर्ष का अर्थना अधिकांश इस व्यवसायिकता से हुआ है और धन होया वह धनतुल्य है। इसी का यह सुपरिग्राम है कि जो लोग धन धन में बैठ कर संघर्षा संघर्ष करते थे वे अब जिनमें में धन धन धन करने पर मजबूर है। धन का स्वामी उससे अधिक से अधिक काम लेकर कम से कम मजूरी देना चाहता है, और यह संघर्षा संघर्षा संघर्ष और संघर्षा संघर्ष है कि योरोप के प्रत्येक देश में इस उगाड़ धन के प्रयत्न कोरा न हो रहा है। संघर्ष ने तो उसे उगाड़ ही दिया पर धन्य देशों में भी धन या आजा संघर्षा संघर्षा हुआ है। धन के धन में धन धन से धन-धन का धन कर

सेते हैं इसलिए बहुत से सोय बेकार रहूँ हैं। इस बेकारी को दूर करने के लिए मिसों में ज्यादा मांस बनाना पड़ता है और उस मांस की आपस के लिए बाजार खोजे जाते हैं। व्यवसायभाव और साम्राज्यभाव इस तरह एक स्वान पर धाकर मिस जाते हैं। व्यापारियों को मांस की आपस के लिए ऐसा बाजार चाहिए जहाँ उनका मांस बे-टोक टोक बिक सके इसलिए कुछ देशों को अपने अधीन रखना उनके लिए धर्मिय हो जाता है। उनका स्वाभ हमी में होता है कि उस देश में वांछित व्यवसाय की उन्नति न हो पश्यता उनके मांस की विधि में बाधा होगी। जो कहना चाहिए कि वर्तमान शासन व्यापारियों के ही ह्रास में है। सरकार उन्हीं के बल पर चलती है। उन्हीं की स्वापरक्षा के लिए बड़ी-बड़ी सेनाएँ रखी जाती हैं। मून की नदियाँ बहायी जाती हैं। योरोप का महाभारत इनके सिवाय और क्या था। घोटाना-सम्मेलन इसके सिवा और क्या है। इस व्यावसायिक संस्कृति ने कम-अबल राष्ट्रों के लिए लाजिम कर दिया है कि उनके धर्मिक का में पराधीन राष्ट्रों की धर्मिक से धर्मिक सख्या हो।

इस संघर्ष का सबसे बच्चा उदाहरण वर्तमान पार्टी बचनमेंट है। राष्ट्र कई राजनीतिक दलों में विभाजित हो जाता है और जिस दल के प्रतिनिधि धर्मिक संख्या में होते हैं उसी के ह्रास में शासन धा जाता है। कभी-कभी तो ऐसा हो जाता है कि राष्ट्र की सारी शक्ति उस पार्टी के ह्रास में धा जाती है, जिसमें उस राष्ट्र के एक सिद्धार्थ बीबाई या इससे भी कम धारमी होते हैं। बर्त की संघर्षमय मनोवृत्ति किसी ऐसी शासन विधि की कल्पना ही नहीं कर सकती जिसमें साध राष्ट्र-सम्मिलित हो। कहने को तो बहुमत का शासन होना पर वह बहुमत शासन में धर्मिय होता है। धार किसी राष्ट्र में घाठ बन है और प्रत्येक दल के प्रतिनिधियों की संख्या पचीस ही तक रह पाय तो जिस दल की संख्या छब्बीस होनी बहु धर्मिकारी होगा। सेप सातो दल उसका विरोध करके उसे उन्नाड़ फेंकने की चेष्टा करती रहेंगे। मजा यह है कि ये धार्यों दल अपने निम्न-निम्न सिद्धान्तों के आधार पर लड़े होते हैं और अपने ही सिद्धान्तों को देश के कल्याण के लिए उपयोगी समझते हैं। सब के अपने-अपने देश सुधार के प्रोग्राम हैं। एक मरीज के घाठ चिकित्सक है। चाहिए तो यह वा कि धारों धारत में समझ करके रोगी का इलाज करते लेकिन बर्त प्रत्येक वैध अपने इलाज से रोगी की चिकित्सा करता है। एक वैध भी उसे स्वीकार नहीं करता कि उसके सिवा रोगी की चिकित्सा कोई दूसरा कर सकता है। मरीज इस परीक्षा में मरे, या जीवें, यह उसकी तकदीर है एक दम कहता है—दमेब व्यापार स देश का बन्धाव होगा। कुछ कहता है—बिस्फुर गमत हमने देश रक्षात्मक का बना जायका। बाहर से धारनेवाली बन्धुओं पर क सपाना चाहिए। जाहिर है कि दो मर्तों में एक धर्मिय धर्म मूलक है। दो परस्पर विरोध बीबाँ नमान धम नहीं देश कर मर्तों लेकिन पार्टी-शासन में यह धारत है कि ब धिय को भी धर्म बना देता है। और करने की बात यह है कि जब राष्ट्र पर को

संघट्ट भा पड़ना है तो सभी बलों को प्रथम गुप्त हो जाती है और बोधे दिनों के सिमे दलबन्दी स्वपित कर दी जाती है। योरोपीय महाभारत के समय इंग्लैंड में किसी एक बल का शासन न होकर संयुक्त राष्ट्र का शासन था। उसने लड़ाई जीत ली। मात्रकम भी किसी एक बल का शासन नहीं राष्ट्र के सभी बलों का सम्मिलित शासन है। इस प्रकार पर सम्मिलित शासन की बड़ी सफलता होगी या नहीं कोई नहीं कह सकता। पर, उन महादुमानों के ध्यान में यह बात कभी नहीं आती कि जब सम्मिलित शासन से हम संघट्टों पर विजय पाने में सफल हो जाते हैं, तो क्या साधारण व्यवस्थाओं में उससे विशेष उपकार न होगा लेकिन जिन लोगों की प्रकृति ही भयबामू हो संघप जिनकी मुट्टी में पड़ गया हो उन्हें सत्य को स्वीकार करने का साहस कहाँ से भाने !

सितम्बर १९३२

देहली के जामेया मिल्लिया की रिपोर्ट

देहली के जामेया मिल्लिया उन मुसलिम संस्थाओं में है, जिसने राष्ट्र के सम्मुख सच्ची सेवा का ध्यान रक्खा है। पहले यह जामेया (विद्यापीठ) स्व हकीम अक़मलुल्ला साहब के उद्योग से असीमद में स्थापित हुआ था पर उन्नीस वी बरस के असहयोग-आन्दोलन के बाद जनता के गिरफ्तार से उसे बका पहुँचा और उसे असीमद से उठा कर देहली में आना पड़ा। वहाँ कुछ स्थानीय संस्थाओं और कुछ रियासतों और अधिका-तर जनता की सहायता से नई अपना काम करता रहा पर इन बार आन्दोलन शुरू होने के बाद रियासतों से मिलने वाली इमदद बंद हो गई और उसे केवल जनता की सहायता और अपने कर्मचारियों के सहयोग और त्याग का आश्रय रह गया। इस परिस्थिति में श्री अफ्ताबुलक़मल ने किसी ही समय और उस्ताह से काम किया कि बहुत बोझ से मुक्त हो पर रहकर भी अरबक सेवा-काम में लगे रहे। इनमें सभी इतने मुयोम्य है कि उनके लिये किसी संस्था में स्थान मिल सकता था पर उन्होंने जामेया मिल्लिया का काम न छोड़ा और हर तरह का कष्ट उठाठ हुए असहस्य और अरम्य उस्ताह से अपने काम में लगे हुए हैं। इन सब बठिमारों के हाथे हुए भी उसके पल अमनो कई हमारों है, पुस्तकालय है और प्रकाशन विभाग है। जब जामेया न देहली से छान भीन पर अोजमा में भी सी पचाय एचड जमीन भी प्राप्त कर ली है, जहाँ विद्यालय की निजी हमारों बनें। यह है मिरालरी असमता से काम करने की चिमूर्ति। मुसलमानों में सरकार का मुँह टाकने की जो एक प्रवृत्ति है उसका यही नाम भी नहीं। यह धारक विरवान स्वावलम्बन और राष्ट्र प्रेम की जीती-जागती मिसाल है।

नवम्बर १९३२

॥ देहली के जामेया मिल्लिया की रिपोर्ट ॥

२६

सर पी० सी० राय का युवकों को आदेश

सर पी सी राय ने साहूँर में विश्व-विद्यालय के छात्रों को उपदेश देते हुए उनका विनासपूर्ण मनोवृत्ति की कड़े शब्दों में आलोचना की थीर बताया कि वे अपने शौक की चीजों के गुलाम बनकर अपना धीर राष्ट्र का भित्तिना बहित कर रहे हैं। उन छात्रों को यह उपदेश कबूचा तो लगा होया किन्तु वे विचार करेंगे तो उन्हें ज्ञात होना कि वे जिस रास्त पर जा रहे हैं वह कल्याण का माग नहीं है। वह बमला जब पया जब विद्यालय से निकलते ही अक्षर उनका स्वागत किया करता था। अब तो यह ज्ञान है कि शायद उन अक्षर का आवाहन करने में उन्हें बरसा लग जायें फिर भी उसके परान न हा। अब तो उसी युवक को विचय होयी थी अपनी बकरतों को कम से कम रख सकता है। अभी तुम्हारे मत्ता-पिता तुम्हारा दुभार कर रहे हैं लेकिन वह समय भी आयेगा जब वे तुमसे कुछ सेवा की धारा रनेमें अब तुम्हारे अन्तर गृहस्त्री का बोझ पड़ेगा। अगर तुम यों ही अपनी इन्द्रियों के गुलाम बने रहे तो उस बक्त तुम्हें कितना कष्ट होगा। हम मानते हैं यह तुम्हारे कामे-महाने धीर जेजने के दिन हैं लेकिन इसके साथ तुम्हें भी यह मानना पड़ेगा कि यही समय याने बाने संघाम की ठैयारियों का है। अगर तुमने किष्कयत की धारतें पैदा कर ली हैं अगर तुम अपने हाथ से अपना काम करने में संकोच नहीं करते अगर तुम सिगरेटें धीर सुपन्थ धीर टाई-कालर धीर प्रसेक्स के गुलाम नहीं हो तो भवान तुम्हारे हाथ रहेगा। तुम थोड़े में भी सुधी रहोने धीर अपनी उल्लिख न लिये यल करते रहाने लेकिन अगर तुमने लर्चीली धारतें पैदा कर ली हैं तो निस्संदिह तुम्हारा जीवन सकटमय ही व्यापका। तुम जीवन के सच्चे सुख का अनुभव न कर सकोगे। मुश्किल तो यह है कि हमारे विश्व-विद्यालयों में छात्रों के सामने का धारत होते हैं उनसे किष्कयती धारतों को प्रोसाहन नहीं मिलता। अम्पा-पकों ही पर छात्रों की दृष्टि रहती है। वे उन्हीं महानुभावों के आचार-विचार, रीति-व्यवहार की नकल कर रहे हैं धीर हमारे अम्पापक महानुभाव एक से एक बड़कर साहब बने रहते हैं। उनके सुट-बूट देखकर बेखते ही रहे जाइए। मानी जगमें होइ मयी हुई है कि वेनेँ ईस्तेबुलपन में कौन बायी से जाता है। वे सोचते हाने हमने बड़ी-बड़ी उपाधियाँ किम लिय प्राप्त कीं ? अगर मोटा-भोटा जाना पहचाना वा तो विनास्य जाने धीर परिधम करने की क्या बकरत थी। आखिर वह किसी से कुछ माँगने ली नहीं करते। अपना कमाती ई धीर जाल ख रहती हैं। इसका उन्हें पूरा अधिकार है।

किसी को उनकी निजी बातों में यत्न देने का कोई हक नहीं। उन्हेंने बीज बोया तो फल क्यों न खायें ? बिलकुल बुररत। इसमें किसी काष्ठिर को ही क्लाम हो सकता है। युवकों के लिये धीर कहीं टिकाना है ही नहीं। व अक मारकर विद्यालय में धारेंगे अक मारकर फीस देंगे धीर अक मारकर पढ़ेंगे। उनके हमने-भाडे में को

रखना पड़ने की संभावना नहीं। फिर क्या है मौखिक किए जाइये धीरे से कर दिए जाइये। छात्रों पर आपकी कैम्प-परस्ती का क्या असर पड़ता है, इसकी बिना किए बिना भी आप मान्य से रह सकते हैं।

नवम्बर १९३२

इलाहाबाद यूनिवर्सिटी के नए वाइस चांसलर

हमें विश्वास है समस्त प्रान्त की पंडित इकासनारायण गुट्टू के सब सम्मति से वाइस चांसलर चुने जाने पर हृष प्रकट करेगा। बोटों ने बही किया जिसकी उनसे प्रार्थना की जाती थी। हम काशी बाला को पंडितजी की काय पट्टा से उस नायक मौके पर अर्पित होना पड़ रहा है जब काशी यूनिवर्सिटी का जीवन ही संकट में है। आपने इन बोले ही दिनों में यूनिवर्सिटी पर अपने कुछ व्यक्तित्व की छाप लगा दी थी और प्रार्थना की कि यदि आप साम-बो-साम यहीं रह जाते तो यूनिवर्सिटी का बहुत कुछ नुसार हो जाता। हमें आपसे पुरस्कृत होने का खबर है पर इसके साथ यह संतोष भी है कि आप उसी क्षेत्र में काम करने जा रहे हैं जिसपर आपने अपना जीवन ही अर्पित कर दिया है, और वहाँ इस समय इसलाह की कुछ कम जरूरत नहीं है। अब एक हमारी यूनिवर्सिटी ने अपना जो कार्यक्रम रक्खा था वह अब समय के अनुकूल नहीं रहा। यूनिवर्सिटी केवल प्रेच्युएट बनाने की मंतीन नहीं है और न जनता का जन केवल मुम रहियों के पुरस्कार और अध्यापकों के वेतन के लिये है। राष्ट्र अब यूनिवर्सिटीयों से उँचे धारण की प्रार्थना रखता है, जहाँ, रटाई अपनी सीमा के अंदर रहे और छात्रों का अरिभ निर्मात्र उनका ध्येय बने।

नवम्बर १९३२

स्कूलों में स्वास्थ्य-परीक्षा

हमारे स्कूलों में कई साल से लड़कों की डाक्टरों की परीक्षा होती है। महीने में एक दिन डाक्टर साहब हवा के बोरे पर सवार होते हैं क्लास के लड़के मीरान में एक कठार में खड़े कर दिये जाते हैं और डाक्टर पाँच मिनट में सबका मुयाइना कर जाते हैं। पाच घंटे में स्कूल भर की परीक्षा समाप्त हो जाती है। डाक्टर साहब लड़कों की बाँटों की किसी को बाँटों की बीमारी बता कर अपनी राह लेते हैं। ऐसे मुयाइनों से लड़कों को फयदा तो कुछ नहीं होता ही एक जाम्ने की खानापुति ही जाती है। हमर कुछ दिनों से नई प्रथा निकसी है, लड़कों के अभिभावकों को लेवता देकर बुलाया जाता

॥ स्कूलों में स्वास्थ्य-परीक्षा ॥

२११

है और डाक्टर साहब उन्हें एक छोटा सा व्याख्यान देकर बिदा करते हैं। इस सम्मेलन की रिपोर्ट दूसरे दिन दैनिक पत्रों में छप जाती है। मंशा पूरी हो जाती है। यह केवल प्रोपेगेंडा है। इसमें कोई छल नहीं। हमारी समझ में लड़कों के स्वास्थ्य की परीक्षा बही कर सकता है जिस पर लड़कों को विश्वास हो जिससे वे अपनी बीमारियाँ निस्संकोच होकर बखु छुटें। दुर्भाग्य कालखंडों में वहाँ और बहुत से विषय पढ़ाये जाते हैं, वहाँ शरीर विज्ञान भी एक प्रधान विषय होना चाहिए। प्रोपेगेंडा रिपोर्ट और सबकों के मोटे यह सब केवल उभासे हैं जिनका कोई मूल्य नहीं। मुख्य चीज है लड़कों का स्वास्थ्य मानसिक भी और शारीरिक भी। इसके लिये महीनों में एक सेकेंड की परीक्षा प्रदर्शन मात्र है। इस पर सचेत ध्यान रखना चाहिए और यह धम्यापक ही कर सकता है।

दिसम्बर १९३२

गोरखपुर में शिक्षा सम्मेलन

गोरखपुर में गामनेजेटेड अध्यापक समा के अधिवेशन में मि. डी. एन. मुकरजी ने समापति के भासन से बहुत विचारपूरा भाषण दिया। आपने वर्तमान परीक्षा प्रणाली की आलोचना करते हुए बताया कि इंग्लैण्ड में इस सम्बन्ध की एक शिक्षा कमेटी ने विचारित की है, कि परीक्षाएँ वहाँ तक ही रुकनी चाया करें और प्राइमरी कोर्ट में केवल अंग्रेजी और हितात्म की परीक्षा की जाया करे। कमेटी की राय में इन दो विषयों की परीक्षा से लड़कों की मानसिक क्षमति का पता लभ जायगा। अनी ती यह हाम है कि लड़कों की छापी मेहनत परीक्षाओं की धोर सगी रहती है। स्काउटिंग कसरत खेल-कूद वाद-विबाध कने माहसिग धारि विषय जिनसे लड़कों का वैहिक और मानसिक विकास विरोध रूप से होता है, इन्तहाल की बेरी पर बड़ा धिये जाते हैं। लड़कों का मुख्य उद्देश्य इन्तहाल पास करना है और अध्यापक का परम कर्तव्य इन्तहाल पास करना है। और एक दुष्प्र भीष है। यह परीक्षा मनोवृत्ति सिखा कर सबभारा कर रही है और इस कर्म में खल भी अतिशयोक्ति नहीं है, कि सिखित समाज की शारीरिक दुबसताओं का यही मुख्य कारण है। हमारे शिक्षक पुरानी लकीर पीटते बने जा रहे हैं। छात्रों पर उनको इस आहुरवसिता का क्या धमर हो रहा है, उनकी बीनार्द किठनी कमजोर हो रही है उनमें रकनहोगरा का किठना प्रकोप है, यह सब धीयों से देखकर भा ब नहीं देखते। लड़कों के मनोरंजन और विनोर के लिये जो विषय चुने जाते हैं उनकी परीक्षा भी भी जाते हैं और इस तरह परीक्षाओं की संख्या बढ़ती जाती है। एक तो अंग्रेजी भाषा उस पर परीक्षाओं का यह धारक। इन दोनों बकरी के पाटों के

बीच में छात्रों का सवनासत हुआ था रहा। हृष की बात है कि जब शिक्षक समुदाय का प्यान इन बुद्धियों को धीरे धार्कपित हुआ है और मंभव है, कि शिक्षा प्रछानी में कुछ सुधार कर सकें मगर हमारे शिक्षक स्वयम् इतन कूप-महदूक है कि वह ऐम विषय में धररर होंये इसकी धारा नहीं होती। प्रंपजी का मूत उनक सिर पर भी सवार है। यही मापख प्रंपजी में दिया गया। प्रो डी एन मुकरजी बंगामी है नेकिन उनके थोटा सब बगामी न बे। वह हिन्दी में धपना मापख दे सकते बे और यदि हमारे शिक्षकों म इतनी योग्यता नहीं है, कि बे अनठा को माया में धरने विचार प्रकट कर सकें तो उनको शिक्षक बनने का नैतिक अधिकार नहीं है।

जनवरी १९३३

सम्पादक-सम्मेलन

मठ २१ २७ २८ फरवरी से इन्दौर में बडे समारोह के साथ सम्पादक-सम्मेलन का प्रबिधेशन सम्पादन-कमा क अनुमती त्यागी थी इन् विद्यावाचस्पति की सम्पन्नता से मनाया जानेया। धमौ तक हम विता में जो कुछ कान हुआ है वह निरधर-सा ही प्रमानित होता रहा है। केवल सम्मेलन हुआ मापख हुआ और कुछ नहीं। पर फल कुछ न निकला। मात्र हिन्दी के सम्पादको बेकर सम्पादकों लेखकों पत्रकारों की जो सुरता है, वह बखानीत है। प्रकाशकों या पत्र-मण्डलों के निये तो सम्पादक क्रिया के टट्ट है। किसे जब भी में धाया कान पकड़कर निकाला जा सकता है। एक सम्पादक स्वयं हमरे सम्पादक की क नहीं करता। एक लेखक हमरे लेखक का धरमान करना धपना गौरव समकता है। पुरस्कार के नाम पर अनमानित माया में कुछ रुपये पाकर लेख लिखनेबाले या हाइ-मौठ एक कर बडे बाटे से पत्र चलानेबाले सम्पादक-मंचालक दोनों की ब्रता दवनीय है। इससे प्रबिक प्रच्छा धवमर नहीं हो सकता जब कि सम्पादक-सम्मेलन इन समस्याओं पर विचार करे।

फरवरी १९३३

संयुक्त प्रान्त में शिक्षा का प्रचार

१९३१ ई में जो यखला हुई थी उसकी रिपोट में शिक्षा-मंत्रिणी जो धीकड़े रिक् बए है उनसे पता चलता है कि सन् १९११ में माधरमनुष्यों का धीमत्र अतिन प्रति बय मौस या १९२१ में वीतिन प्रति बय मौस और १९३१ में वीतापिन प्रति बय मौस।

संख्या नीजिए तो सन् १९११ में साक्षर मनुष्य सोलह लाख बीस हजार सन् १९२१ में सोलह लाख अठ्ठासी हजार और सन् १९३१ में बाइस लाख साठ हजार । अर्थात् पाँच लाखों की वृद्धि पाये हुए हैं ।

प्रथम सिफ-बेक के हिसाब से बेजिए तो—

१९११ में साक्षर पुरुष	१५,५४५	या ६१ प्रति बर्ग मील थे ।
	स्त्रियाँ ११,२५२	या ५ थीं ।
१९२१ में	पुरुष १५,५६९	या ६५ थे ।
	स्त्रियाँ १३,२२५	या ६ थीं ।
१९३१ में	पुरुष २,८४१	या ८ थे ।
	स्त्रियाँ २,६२२	या ९ थीं ।

यद्यपि यह शताब्दी में अत्यन्त घबड़ी हुई है, फिर भी अल्प राष्ट्रीय की तुलना में बहुत ही कम है ।

निम्न प्रान्तों की साक्षर संख्या का औसत प्रति बर्ग मील यह है—

बंगाल	१९२	मैसूर	१५९	कानपुर	१३९
बेङ्गलूर	१९	आन्ध्र	१४९	झाँसी	१३७
गुजरात	१७३	छत्तीसगढ़	१४३	फर्रुखपुर	११८
मद्रास	१६७	मधुरा	१४	अलीगढ़	११५
लखनऊ	१२३	प्रयाग	११८	मेरठ	१९
बलिया	१२४				

स्त्री-शिक्षा की दृष्टि से बेङ्गलूर का प्रथम स्थान है, अर्थात्—५४ ।

इसके बाद क्रमशः लखनऊ, अयोध्या, बंगाल, मैसूर, इलाहाबाद, मेरठ, मधुरा, फर्रुखपुर, झाँसी, दिल्ली हैं ।

इन आँकड़ों से पता चलता है कि साक्षर पुरुषों का औसत काशी में सबसे ऊँचा है और साक्षर स्त्रियों का बेङ्गलूर में ।

प्रथम वर्गों की दृष्टि से बेजिए—

	पुरुष		स्त्री	
ब्रह्म	१९२१	१९३१	१९२१	१९३१
काय	२९३	३३७	९३	८४
हिन्दू (मनामन)	७४	९४	७	१४
और	३६८	४९	७७	१२८

सिक्का	३२७	३७५	५६	३७
मुसलिम	७४	२७	८	१६
ईसाई	३१८	३२७	२६	३१४

सबसे साक्षर धर्म मत-वाले हैं उनके बाद धर्म और तब ईसाई हैं । हिन्दू धर्म मुसलमान सबसे पीछे हैं । स्त्रियों में ईसाई सबसे साक्षर हैं और धर्म इनके बाद । हिन्दू धर्म मुसलमान दोनों ही गण्य हैं ।

मई १९३३

दक्षिण का शान्ति-निकेतन

कमिन्ड रवीन्द्र के परिष्कृत तथा धर्म के कारण उत्तर भारत में 'शान्ति-निकेतन' एक धारा सिद्ध-संस्था मानी जाती है । उसे यह पत्र ब्यथ ही नहीं प्राप्त हुआ है । निर्मोह बहु सरकारी पाठशालाओं तथा विरब-विद्यालयों में वही धर्मो तत्त्व नियमित-परिष्कारित संस्था है । शान्ति-निकेतन काशी विद्यापीठ ग्राम महाविद्यालय एसी स्वतन्त्र सिद्ध संस्थाएँ उत्तर भारत के लिये बंधनी बस्तु हैं पर दक्षिण भारत में ऐसी संस्थाओं का निष्ठा प्रभाव था । हृष का विषय है कि शान्ति-निकेतन के ही आधार पर दक्षिण में भी एक महान् संस्था बंध कर लयी है । बीस बंध पूर्व प्रसिद्ध शिक्षा-प्रमी मि अर्नेस्ट उड व मदनपल्ले में 'मदनपल्ले विद्यालय' की स्थापना की गयी । इनके बाद वे विद्यालय बंध गये थे । इन बीच में यह संस्था मद्रास विरब-विद्यालय के आधार पर सिद्ध होती रही । हिन्दू धर्म मि उड पुन भारत आ गये हैं । उन्होंने मरलीक धरना रूप बीरम इत विद्यालय की सेवा में विद्या के निरन्तर किया है । उनके प्रतिष्ठित प्रसिद्ध सिद्ध विरब-संस्था तथा साधन-पुछ वा 'वे० एच कल्लम व इन विद्यालय के लिये अपना धन-धन-धन अदर करने का निरन्तर कर लिया है । गय उत्साह व धर्म प्रारम्भ हो रहा है । मय मय से शिक्षा की जायगी । विद्यालय का उद्देश्य होगा—'मन्त्रि-महेश्वर के नाम का प्रचार करते हुए सब ब्यापी शिक्षा देना । पहली बंधा है बीभी तक मधीठ की शिक्षा धर्मिधन हायी कम-नूड तथा ब्यापार की शिक्षा एक निरन्तर के हाम में है । दोनों ही विषय धर्मिधन है । जो बिना डाक्टरी मार्टीटिमेंट के लेन-नूड वा ब्यापार में धर्म हाडिर रूँया जननी स्कूल की हाडिरी वाट ली जायगी ।

विद्यालय तथा पाठशाला-संस्था नाम हुआर संस्थापर कोट में बना हुआ है और पचहत्तर एक भूमि में पैना हुआ है । मदनपल्ले नगर में इसे 'बहुधा मरी पुष्क करती है । धर्म के लिये धर्म धर्मिधन है । धारणा में एक मो नये धर्मो के रूँने के लिये स्थान है । बन्धियों के लिये धर्म धारणा बना हुआ है ।

विद्यार्थी तीन जुलाई से सुबेगा पाठशाला भीड़ पून से सुस गयी । हम इस प्रयत्न का इस संस्था का स्वागत करते हैं तथा निज उच्च धीर कर्षेस की सफलता की शुभ कामना प्रकट करते हैं ।

जून १९३३

फ़ैल होने वाले लड़के

कुछ प्रबन्ध विस्तारी है कि हमारे स्कूलों धीर कालों में अब कोई लड़का फ़ैल हो जाता है, तो उसे इसकी यह सवा धी जाती है कि स्कूल से निकाल दिया जाता है, धीर अब अपने स्कूल से निर्वयता से निकाल दिया तो ऐसे निकाले हुए लड़कों को दूसरा स्कूल क्यों लेने सवा । इस प्रकार लड़के के लिये शिक्षा के द्वार बारी धीर से बन्द हो जाते हैं । कितनी दयनीय परिस्थिति है । मगर इधर दूसरी समस्या यह है कि यदि इन लड़कों को रखने दिया जाय तो नये जाने वालों को कहीं से बगह मिले । नये लड़कों को भी तो प्राक्किर प्रबसर मिलना ही चाहिए । बात यह है कि यह तीस लड़कों वाली कैंप ही निरपक है । या तो हमें इतने स्कूल चाहिए, कि सभी लड़के एक सके या मौजूदा स्कूलों से इस कैंप को उठकर धीर अपूर्ण निकालनी चाहिए, या फिर सबसे उत्तम है कि इन्तझानों को धीर सरल कर दिया जाय जिसमें प्राक्किर-से-प्राक्किर लड़के पाठ ही सके । अब स्कूल या कालेज की सनख मौकरी के लिये बेकार हो गई है, तो क्यों लड़कों पर इतनी कैंप समायी जावे । फिर क्या लड़के के फेल हो जाने में केवल लड़के ही की कटा है ? स्कूल के अध्यापकों पर उसकी कोई जिम्मेवारी नहीं जाती ? माना अध्यापक बोझ कर पिना नहीं सकता लेकिन यह निश्चित है कि लड़कों की सफलता या असफलता बहुत कुछ अध्यापक के व्यक्तित्व अध्यापकस्य प्रोत्साहन पर निर्भर है । फिर किस मुँह से पैस होने वाले लड़कों को निकाल दिया जाता है ।

जुलाई १९३३

काशी में शिक्षा मंत्री का शुभागमन

शिक्षा-मंत्री के आगमन से काशी में धी तीन दिन जाली बहल-बहल रही । ऐसा मामूब होता या कि स्वयं गबनर साहब या गवर्नरसाहब साहब पचारे हैं । क्योंकि उन्हीं महानुभावों के शुभागमन के बबसर पर लड़कों पर पुनीम की लाइन लड़ी की जाती है ।

यह मिनिस्टर छात्रों को भी सम्भव वह महान् सम्मान प्राप्त हो गया। वरिष्ठ नए स्वराज्य विद्यालय के छात्रों-छात्रों की नया-नया वातिरदायिनी होती है।

अगस्त १९३३

लखनऊ विश्वविद्यालय

इस साल लखनऊ विश्वविद्यालय ने कानून के विद्यार्थियों की सामान्य पीस में वर्षीय स्तर की वृद्धि कर दी है। कानूनी स्तर से पहले भी काफी अच्छे हो जाती थी पर वह बहुत काफी नहीं समझी गई। मगर एक तरह से उस विद्यालय ने अच्छा ही किया। कानून में अब नए बकीलों की व्यवस्था नहीं है। कुछ तो इस बात को रोकने लिये करना ही चाहिए। हमारी राय में यदि ही स्तर साम की वृद्धि कर दी जाती तो कुछ कठिनाई विकसित। वर्षीय स्तर तो विद्यार्थी नहीं म कहीं से लाकर ले ही देंगे। और सब कीसे मन्दी हो रही है। कोई चीज तो तेज रहे। शिक्षा को तेज कर देना बड़े मुगम नीति है। लखनऊ विश्वविद्यालय को चाहिए कि सभी विभागों में खीस दुगुना कर दे। इसके उत्तरी धामधनी बहुत कुछ बढ़ जायगी। सरकार भी तो सब काम न करके बदन के चिक्र में रहती है। विद्यालय उसी सरकार का एक धर्म ही है।

अगस्त १९३३

भारत में लाल-साहित्य

भारत सरकार वह नहीं चाहती कि भारत में लाल-साहित्य का धर्म सत्त्व कान्ति की सीख देने वाले बनवायी साहित्य का संक्षेप म वही बोलते-बोले साहित्य का प्रचार हो। लाल-कान्ति को हम भी नहीं चाहते पर लाल-साहित्य किसे कहते हैं तथा किसे पढ़ने से हमारा दिमाग फिर सक्रिय है यह हम नहीं जानते। वही बात भारत के प्रमुख पुस्तक-विश्लेषक एच डी तारापोरवाला एएच एम भी नहीं जानते। इसीलिए उन्होंने भारत सरकार को एक पत्र लिखकर पूछा था कि वह कौन से पुस्तकों को "लाल" समझती है ताकि वे उन पुस्तकों की सूचना समाचार-पत्रों द्वारा हमें—जनता को दे सकें पर भारत सरकार की धोर से जो उत्तर दिया गया है उनसे तो बड़ी स्पष्ट है कि वह स्वयं इस विषय में कोई निश्चय नहीं कर सकी है। उसे स्वयं कोई नीति निर्धारित करने में कठिनाई है। भारत सरकार तो यह कहकर उत्तर दे चुकी है पर भारत के सरकार तथा पुस्तक विश्लेषक नवा करें। वह नये कानून के अनु-सार हीरेक वच से किसी किसी पुस्तक का धर्म धारण के लिये जो अभी तक बाजार में

‘निक रूढ़ी भी तथा सब लोग पढ़ रहे थे समस्त समक कर सकती है । वह सब धर्म को उस पुस्तक को ही गरकामुनी या उल्लेखक समझ सकती है । पुस्तक लिखना भी उल्लेखक साहित्य रखने का अपराधी हो सकता है । यह बड़ी विषम समस्या है, जिसके विषय में सरकार को अपनी नीति स्पष्ट कर लेनी चाहिये ।

अगस्त १९३३

फिल्म संसार में एक नई याजना

फिल्म हमारे जीवन में घाने बलकर आये कितना उपयोगी हो और शिक्षा तथा आरोग्य उसके द्वारा कितना ही मुक्त बनाया जा सके पर उसकी वर्तमान प्रगति तो किसी तरह भी आशाजनक नहीं कही जा सकती । हाँ धनर मुक्तों और कुश्रियों के निर्लेख्य बुद्धन और आसिजन और हुरवा तथा अपराध के दुस्व्यों पर ही समाज की आगुति और उन्नति का आरौमबार है, तो निस्सन्देह इन चीषों की आल से उन्नति की ओर बढ़े जा रहे हैं । योरोप का विकास तो अपनी सारी दुष्प्रथ्यों के साथ जा ब्या पर योग्य का अघ्यवसाय और साहस और उत्सग और अन्व ह्वारों कुश्रियाँ जो उस विकासिता का परदा डीकती है, यहाँ कहीं नजर नहीं आती । कहा जाता है, एक बड़ा भारी उन्नोम आरौपित हो गया है जिसकी संभावनाओं का कहीं धष्ठ नहीं है । केनाक उसने उस धन को बाहर जाने से रोक दिया है जो बाहर के फ़िल्म मैदाने में हुमें देना पड़ता था पर अंदर यही है कि वह ऐसे पूँबीपदियों के हाथों में है जो बड़ी निर्दमता से जनता को सामाजिक धनाधार की ओर लिए जा रहे हैं । उन्हें अपने नके से मसलन है, बैरा बोझ में जाय या बहिरत न । हम फ़िल्मेमा के विरोधी नहीं । उसका जो दुष्प्रयोग किया जा रहा है उनके विरोधी अवरय है । जनता का मनोरंजन होना अत्वरयक है यद्यपि ऐसे हरिष बैरा में मनोरंजन से कहीं बरुटी भोजन है । लेकिन मनोरंजन का अर्थ यह तो नहीं कि हमारी कुश्रिमत्ता जाधनाओं को और आशुक जगामा जाय । सच्चा मनोरंजन ही हुमें मद्भाबनाओं की ओर ले जाता है । इनलिये हुमें यह माधुम करके सुरी हुई कि मद्राम के फ़िल्म मैंगर बोड ने इन बात की जाँच करने के लिये एक कमेटी बनाई है कि फ़िल्मों का मद्रकों के मन पर क्या असर पड़ता है । इस कमेटी ने एक प्रस्तावनी बनाकर माद्रा-पिताओं से अनुरोध किया है कि वे अपनी इच्छानुसार उनके पचाव लिखकर कमेटी के पाम भेज दें और जो कुछ मसाह देना चाहें वह भी दे दें । जनम से कुछ प्ररम ये हैं—

क्या मद्रकों के लिखना में जाने से अनरी पड़ाई में कोई जायरा पड़ती है ? मद्रकों को अवरर लियेमा देना चाहिए या कमी-कमो ? मद्रके लियेपाचरों से क्या मनोमात्र

सेकर बर घात है ? बर पर से उनका कौसे बिक्र करते है ? क्या से सिनेमा म देखे हुए
 कुरयो घोर बाक्यो को दुहरते है ? क्या से कित्ती सास ऐक्टर या ऐक्सेस की प्रशंसा
 करते है ? क्या से उनकी प्रशंसा करते है या बीसे ही जीवन बिताने की इच्छा प्रकट
 करते है ? मङ्के घोर मुबक तिममा के बन्धे प्रभाव प्रहण करते है या बुर ? सिनेमा
 का चरित्र-गठन की सिधा—कठम्यज्ञान दायित्व—पर क्या असर होता है ? क्या
 सिनेमा से चरित्रपतन के कारणो की शंका हो सक्ती है जो जीवन का चिह्न रूप मङ्को
 के सामने रखता हो धबका गुराचरण की घोर उत्तमिध करता हो ? इसके प्रमाण में
 उदाहरण बीजिए । धाय मङ्को के सिधे किध तरह के किस्मों को अनुकूल समझते है—
 ऐतिहासिक सांस्कृतिक नाटकीय इत्ययजनक या सिधोपयोगी ? मङ्के अपनी धबत्वा
 के अनुसार किध तरह के किस्म ज्वावा पसन्द करत है ?

हमें धासा है कमेटी इस विषय में उत्तरों का बिचार करने पर अपनी सम्मति
 प्रकट करेगी जिसकी हम बड़ी उत्संठा से प्रतीक्षा करेवे ।

सितम्बर १९३३

ब्राडकास्टिंग देहातों में

इंग्लैंड में एक महाभाग यहाँ इन बात की जीब करने घाए है, कि यहाँ ब्राड-
 कास्टिंग के सिधे कौसे यैशान तैयार किया जा मक्ता है । सब की निवाइ देहातों पर है ।
 यौव-यौव ब्राडकास्टिंग का प्रचार हो जाय बन करोड़ों का बार-ब्यार है । ब्राडकास्टिंग
 से प्रजा का बहुत कुछ उपकार हो सकता है इसमें सन्देह नहीं । यही एक मागन है
 जिसमे उन्हें संसार की बाहमा से निरामा जा सकता है । बड़े-बड़े बिज्ञानों के मागस
 बड़े-बड़े संनैसाचार्यों के गाने सभी कुछ मिलतों में देहातियों तक पहुँचाए जा सकते है ।
 मैरिडन यह कम्पनी कोई परोरकारी संस्था तो नहीं है जो अपने प्रोपाम प्रजा के किठ को
 सामने रख कर बनाएगी । उसका उहेरय तो अपना जेब भरना हाया और इन ब्यबसाप
 के दुब में बीसे घोर हजारों बीजे प्रपदे की जगह मुकसान पहुँचानेवाणी मिड हो रही
 है उनी तरह इनका भी दुहायोग किया जाय तो क्या लाग्मुब है ।

सितम्बर १९३३

प्रयाग में रामलीला

हमें यह जानकर खुशी हुई कि प्रयाग में तेरह मास में बार इन मान किठ
 रामनीमा का उत्सव बिना किसी रोक-टाक के मनाया जायगा । प्रयाग के हाकिम रिना

ने इस तरह को स्वीकार करके अपनी व्यापकता का परिचय दिया है कि प्रत्येक समाज को अपने धर्मोत्सव मनाते का अधिकार है।

सितम्बर १९३३

एक उचित परामर्श

सहयोगी 'लीडर' के कल के पंक्त में एक सम्बन्ध ने शिक्षाध्यक्ष मि. मैकेंजी से बरखास्त की है, कि हरेक स्कूल में शनिवार का छाया दिन पाठ्यक्रम के बाहर के विषयों के लिये सरकारी तौर पर अलग कर दिया जाना चाहिए। वास्तविक त्रुमा स्कॉटलैंड तत्काल चिकित्सा प्राधि विषयों को स्कूलों के कर्मचारी छुटना महत्व नहीं देते जितना देना चाहिए। चूंकि अध्यापकों की कारगुजारी लड़कों के पास होने पर मृतहसर है, इसलिये नाबिभी तौर पर अध्यापकगण इन विषयों को फाल्गु सम्भरते हैं क्योंकि इनसे लड़कों की परीक्षा पर कोई धसर नहीं पड़ता। शिक्षा-विभाग यह तो चाहता है कि वे उपयोगी विषय लड़कों को सिखाय जायें पर वह ऐसे हेडमास्टरों की स्वेच्छा पर धीक देता है। मतीया यह होता है कि जहाँ हेडमास्टरों को इन विषयों में दिलचस्पी होती है, वहाँ तो इन पर कुछ ध्यान दिया जाता है पर जहाँ हेडमास्टर पुराने ढंग का हुमा वहाँ इन विषयों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता। यदि शिक्षा-विभाग के अध्यक्ष की धीर से इन धारण का कोई हुकम निकल जाय कि स्कूलों के कर्मचारियों को कम से कम एक सप्ताह में एक दिन इन उपयोगी बातों में लगाना चाहिए, तो यह प्रश्न व्यक्तिगत न रह जाय। यह कहने की जरूरत नहीं कि लड़कों के मानसिक विकास में इन विषयों का जो स्थान है वह किसी तरह गणित या भूगोल से कम नहीं। बल्कि कई प्राणों में कुछ ज्यादा ही है। एक उदाहरण यह अवश्य है, कि अभी इन विषयों के अच्छे शिक्षक नहीं मिलते और यह काम ऐसे अध्यापकों को सँपा जाता है, जिन्हें इनसे कोई परिचय नहीं होता। यह भी उनकी उद्योगिता का एक कारण है। हम किस क्रम में सम्बन्ध होते हैं उसी को धिस लवाकर करते हैं। जब अध्यापक में ही उद्योग नहीं है तो लड़कों को उन विषय से उचित क्यों होने लगी। जहाँ कहीं इन विषयों पर ध्यान भी दिया जाता है, वहाँ भी केवल बेगार की जाती है और बेगार के काम में लड़कों को उद्योग नहीं हो सकता। शिक्षा-विभाग ने अभी तक इन बातों की धीर ध्यान नहीं दिया है। धसर शिक्षा-विभाग के धिककारी मुधापनों में बाहरी बातों को जो कृप देय दिया करें और उन्हें भी अध्यापकों की कारगुजारी में शामिल कर में धीर उनके साथ उद्योग समय भी निरिच्छ कर दें तो हमें विरबाध है यह उपयोगी शिक्षा अपनी उद्योग न रहे।

सितम्बर १९३३.

शिक्षा का नया आदर्श

धन तक संसार के सामने शिक्षा का जो धारणा या नई परम्परागत समाज-व्यवस्था की ही पूर्ति करता था। समाज पर धन तक व्यक्तिवाद की प्रमुखता रही है और हमारी शिक्षा-प्रणाली भी व्यक्ति का ही सम-न करती थी। अल्पन ही से व्यक्ति का विकास होने लगता है और मुनिर्वाहियों में जाकर पुष्ट हो जाता है। उस सीधे में हमकर मुख्य ध्यात्मसेवी और स्वार्थी मित्रता में भी स्वाध की रक्षा करनेवाला पक्ष उपयोक्तारानी और धर्मही होकर रह जाता है। हमारी शिक्षा हमारी सामाजिक चेतना को नहीं बचाती उसका उद्देश्य अपने फायदे के लिए समाज से काम निकामना है। समाज केवल इसलिए है कि उसे बढ़ने और संघम करने का अवसर दे। नहीं मनुष्य सफल समाज बना है जो समाज को कुछ बंधी तरह एकत्रणाइट कर सके। व्यवस्था ही कुछ ऐसी है कि व्यक्ति को मजबूर होकर उसी नीक पर चलना पड़ता है, दूसरा कोई उम्दा नहीं है।

लेकिन समाज-व्यवस्था में बड़े बंध से व्यक्ति हो रही है। कम्युनिज्म का प्रचार हो ना न हो पर समाज का धारणा बदल गया है। भारत जैसे कठिनों के गुमान देश बस-बीस धर्म और धर्मोक्त-चिन्तन में पड़े रहूँ लेकिन संसार समष्टि की धोर जा रहा है और एक मुझे तो समाधिवाद की धर्मोक्त-धरता जो हर धारणी के लिए समान धर्मधर की व्यवस्था कछी है, जो किसी का सम्पत्ति या परम्परागत विशेष अधिकार नहीं बलती ईश्वरता के कहीं निकल है। एकत्रणवाद का प्रकट रूप इसके सिवा और क्या ही सकता है। मानवी सम्पत्ता का धोर चम का समस ठेका धारणा संसार-आपी धार्ध-चार्य रहा है। धारि से हम सही धोर जाने की बढा कर रहे हैं और नहीं हमारा धरन है लेकिन या तो इसलिए कि हमें अपने महान् उक्त की धर्धरता पर कमी विश्वास ही नहीं हुआ या इसलिए कि इसे धम की धारिणी सीधी धामकर हमने सोच लिया कि पहले धामे और कुछ तो ही नहीं सकता हम धाम भी इस धारणा से उतने ही धुर हैं धिधने कई हजार धाम पहले से। लेकिन समाज के सामने सबसे ठेके धारण की मूठि नहीं हुई और धाम भी धुम्धरन की धारणा उसी धरनध धर्मिध की धोर धीधे उठाए देव रही है और धन धीरे-धीरे धिधरधारी का धर्मध होता जाता है कि इस धारण को धारण करने के लिए हमें एक नई गति रचनी पड़नी धर्धानु—धालक के सधन-धालन और धिधर-धीध को धक धिधे से धरधना पड़ेगा जिससे समाज में धर्मध की धपहु न्धधेन का धर्मध धामे धोग एक-धुधरे से धरधनध रहने के धदसे धिधरधन करे और धक्ति का धधध इसलिए न करे कि उससे धुधरों पर धार्धक धधधेमे धक्ति इसलिए कि धुधरों की धधधता करे। संसार में धन समध धिन शिक्षा-धलनी या धधधर हो रहा है नई मनुष्य में ईध्या धध धुधध स्वाध धधधरता धोर धधधता धधधे धुधधे

ही को पुष्ट करती है और वह क्रिया शैशव की अवस्था से ही शुरू हो जाती है। सम्प्रदाय माता-पिता अपने बालक का बचपन से ब्यापक लाङ्घन्यार करके और बड़े होने पर उसको दूसरे लड़कों से अछी बसा में रखने की चेष्टा करके उसे इतना निकम्मा बना देते हैं और उसकी बुद्धि को इतना परिवर्तित कर देते हैं कि वह समाज का कून बूझने के सिवा और किसी काम का रह ही नहीं पाता। इस लिहाज से हमारे गुच्छुस प्राण-कर्म के इति या हीरो या राजकुमार कालेजों से कहीं उत्तम नें नहीं समी घाज समान नें। इससे उनमें सामानिकता का भाव पैदा होता ना। अब पश्चिम के विचारकों को भी यह शिक्षा दी देने लया है कि जिस शिक्षा-प्रणाली को ब सभियों से गने लयाए हुए है वह अरिज को दुबल बना देती है और मनुष्य की घसामाविक भावनामां का प्रबल करके समाज में अममस और पुककता का बीज बोती है। यह सामान्यवाद और व्यवसायवाद और एष्टों में अक्षय इसी कुशिक्षा के फल है जिसने व्यक्ति को प्रभावता देकर उस समाज का हिसक जन्तु बना दिया है।

शिक्षा के धार्यों में को सबसे बड़ी कान्ति हो रही है वह यह है कि रिजु के पहले पाँच-साल मनुष्य को बीसा बना देते हैं बीसा ही वह बन जाता है। इस शैशवावस्था में उसका अरिज बीसा बन जाता है वह बाद को फिर किसी तरह नहीं बढ़ता जा सकता। सामान्यतः अब तक हम आस्थावस्था को ब्यापक महत्व नहीं देते थे पर इसी अवस्था में हम अपने अज्ञान के कारण बालकों का भविष्य सदा के लिए बिबाइ देते हैं। इसी उम्र में बच्चे हमारे अज्ञान के कारण मूठ बोलना शुरू करने करना और चोटी करना सीखते हैं। इसी उम्र में आत्मस्य की और आरोप्य के सिद्धान्तों के विच्छ अचरख करने की धारत पड़ती है। इसी उम्र में वे विही स्वार्थी और कपूर होते हैं। और इस लिहाज में माँ-बाप पर बालक के अरिज के विषय में पहले से कहीं बड़ी जिम्मेदारि घा पड़ती है। जिसने ही विचारवानों का तो यह कहना है कि बच्चा पहले ही साल में बहुत-सी अछी या बुरी धारणें सीख लेता है। और चूकि इस उम्र में कोई बच्चा हासा नहीं लेता ना सकता इसलिए माँ-बाप का यह कर्तव्य हो जाता है कि वे माँ-बाप बनने के पहले रिजु-आत्मन के सिद्धान्तों से अछी तरह परिचित हो जायें। वह स्वीकार क्रिया जाने लया है कि अधिकांश बालकों में एक-ही प्रवृत्ति होती है और उन प्रवृत्तियों का अनुपयोग या दुष्प्रयोग उन्हें अछी या बुरा बना देता है।

सितम्बर १९३३

भारत में प्रेस

'भारत में समाचार-पत्र की बसा' पर ब्याख्यान देते हुए अर सी की रमन ने बहुत ठीक कहा कि पत्रों का सम्पादन एक लगी हुई रस्ती पर चलने के समान है और

सम्पादक को सदैव सचेत रहना पड़ता है, बरना जब भी उसका बीसेस इपर या उम्बर हुआ तो एक घोर बह 'प्रेस ऐक्ट' के गड़ में गिर पड़ता है, बूखपी घोर हठक के इमजाम के मुंह में। आपने क्रमशः कि ऐसे व्यबसाय में भी जहाँ हर बस्त फिर पर तमवार मटकती रहती है आधिक कठिनाइयों के कारण बरसा धीर भी जटव हो जाती है धीर इसका कारण केबल यही है कि यहाँ लोग बाम देकर पत्र पढ़ना नहीं चाहते। किसी ट्रेन में सफर करते बस्त जब एक सज्जन कोई धतवार मोल लेते हैं तो बित्तमो तल्लुक धाँसे साससा से मटी हुई पत्र की धीर लग जाती है धीर किठनी निजम्मत से लोक धतवार माँगम लगते हैं यह हम रोज धाँको देखते हैं। गरीबी का यहाँ प्ररन नहीं है। पत्रघूँटें से या प्रकाश करने वाले किसानों से कोई धारा नहीं करता कि वे धतवार पढ़ें। मगर जब पत्रे-लिखे धारमी को रोज इस-याँ धाने पाम-सिपरेट में उखा देते हैं मोंयी माँगकर पत्र पढ़ने की साव मिटा खेते हैं तो समाचार पत्र जैसे बसें धीर देठ में उनका कैसे-बह प्रभाव हो को धन्य देशों में पत्रों का है। धपिकाश पत्र विज्ञानों के बल पर बसते हैं धीर सभी तरह के विज्ञापन सापने के लिये उनके कासम तुले रहते हैं। जिन विदेशी बीजों के बहिष्कार के लिये सम्पादक कामम के कासम कामे करता है उन्हीं विदेशी बीजों की साठीसे के पुस बह विज्ञापनों में बाँधता है। मगर बह मन्बूर है। धन्य देशों में हजारों सुतिचित मुसक धनर ऐसा न करे तो उसका पत्र एक जिन न बने। यहाँ कोई पुजासा नहीं। समाचार-पत्रों में काम करके नाम धीर बस्त लोगों कमाते हैं। यहाँ कोई पुजासा नहीं।

अक्टूबर १९३३

प्रयाग की रामलीला बन्द

विद्यमे धंके में हमने इस बात पर धपनी लुगी बाहिर की भी कि नी सास के र इन साप फिर रामलीला हो रही है धीर हाकिम बिता ने बिना किसी शत के रामलीला का अनुस निकालने की धनुमति दे दी है, पर जिस बस्त मि बिताप ने यह हुन दिया था प्रयाग के पुनीसाध्यध नीनीतान यने ने। बाद को यह धाये धीर सुरस्त रामलीला की बाप कमेटियों को सूचना दे भी कि शाम होने के पहले सब पुनुसों को रामलीला के धरान में पहुँच जाना पड़ेगा। स्पष्ट रूप से तो यह धाँ कहा गया है पर इस सूचना का धनिप्राय यही है कि शाम की ममाज के पहले पुनुस निकल जाय करना को नहीं स्वीकार किया धीर रामलीला फिर स्वधित हो गई। हम नहीं बह सफते कि पुनिस सुपरिटेण्डेण्ट ने प्रयाग के मुससामाओं से इस विषय में सलाह करके यह गतीया निजामा या उन्हीं शास्त्रि मंग होग का स्वयं विचार उत्पन्न हो गया। जहाँ हमें मागूम है

॥ प्रयाग की रामलीला बन्द ॥

में हंसिगा बुद्ध में रोयेगा मीका पड़ने पर झूठ भी बोलेगा बेईमानी भी करेगा और
 बुद्धि वह ईश्वर-मनुष्य है, इसलिये उसकी सारी मानवी क्रियायें ईश्वरत्व के रंग में रंभी
 हुई, धार्मिक महान्, धार्मिक व्यापक होती। आप पाष-पाष सेर म मनुष्य हो जाते हैं तो
 ईश्वर क्या मन-यो-मन भी न जाये आप वो चार धार्मिकियों को जीते सकते हैं तो क्या
 ईश्वर वा चार धार्मिकियों को न जीते आप एक वो शक्तियों से मनुष्य हो जाते हैं तो
 क्या ईश्वर वो चार हजार शक्तियों से भोग न करे, आपकी ईश्वर-रूपता ही ब्रूयित है,
 बल्कि यों कहना चाहिये कि आपने ईश्वर की सृष्टि करके ही यह सारी मुराह्माँ पैदा
 कर ली।

घोर फिर आप पाप घोर पुण्य धम घोर धर्म इनीज घोर धरलीम म भेद
 ही कहीं रहा ? जब पाप के बड़े-बड़े विद्वान काम-रिखा के प्रचार पर जोर दे रहे हैं
 जब विनाह सत्ता ही धमानुपीय कही जा रही है, जब यह माना जा रहा है, कि हम
 जिसे पाप घोर धर्म कह रहे हैं वह केवल सामाजिक धर्म का ही फल है घोर समाज
 का बीसा संघटन है, उसम इसके सिवा कोई दूसरा फल हो ही नहीं सकता तो फिर
 धम घोर धर्म का पचका क्यों बाहर। साहित्य जीवन से तो भलग हो गयी सकता
 फिर आप कबियों से क्यों यह आशा रखते हैं कि वे पवित्रता और परमात्म में मोटे
 लयाएँ। जब हम लंबा मरुकर पापों से मुक्त हो जाते हैं, तो कवि क्यों न पवित्र-पावनी
 बना की महिमा पाए। वह जो कुछ मिलता है मनुष्यों के लिये मिलता है खुद भी
 उसी संस्कार में पना है, उससे आप जैसे यह आशा रखते हैं कि वह अपने संस्कारों से
 ऊपर उठ जाय।

मपर नहीं धार्मिक शिखी-कवि उन भावनाओं के ऊपर उठ रहा है। उसके लिये
 योषियों के हाथ-बिनास में श्याम की रास भीला और भावना बोरी में कोई धार्मिक
 नहीं रहा। वह गया की स्तुति भी नहीं करता और स्वर्ग की अप्सराओं और मनुष्यापरों
 की महिमा नहीं गाता। वह मयनों के कलाघ और शिष्ट की जीरी और मुरुर संघीत और
 रति-रुत्स्य जैसे कामोत्पीपक प्रसंगों से अपनी कविता को धर्मरुत नहीं करता। उसका
 विषय मनुष्य का हृदय और उसकी भावनाएँ हैं और वह प्रकृति के सीरय का ही उपा-
 सक है। उसके यहाँ नामियों का कुम्भन नहीं जन्म की अडा और उम्मात है, वह
 साधार का उपासक नहीं धनन्त और धनाधि की बुन में मस्त है। उसके लिये कृत की
 पंक्ति उपा की जाती पछिया का पाल धनाध क धर्म कियी वासा का रूप साहित्य
 या कियी गरीब रिताल की बुटिया या जंगल में मटकता हुआ पथिक समी समाल रूप
 से मुन्दर, मनीम और धार्मिक है वह समस्त भूमण्डल को सौन्दर्य का धायार समझता
 है, पय-पय पर उसके लिय मस्ती के सामान्य बिलरे पड़े हुए हैं वह पून की प्वाती में
 धाम की एक बड़े पीकर करो दे बुर हा जाता है, वह साहित्य में एक मया धम्मेस क्या
 जीवन नर् मानाएँ लेकर थाया है जिसमें वासना वा धमम दन्म नहीं कवि की

सम्बन्धी धर्मिताया घोर सन्धा प्रेम गहनक रहा है। वह समान की पवित्रता घोर मान
 बत्ता की घोर से आ रहा है, क्योंकि उसने साकार ईश्वर के पत्रों से अपना गता धुआ
 बिया है।

१३ नवम्बर १९३३

कारमाइकेल लाइब्रेरी की हीरक जयन्ती

कारमाइकेल लाइब्रेरी की स्थापना मन् १८७२ में हुई थी। इस प्रकार इसकी
 स्थापना हुए साठ बरस से ऊपर हो गये। इसकी हीरक जयन्ती मनाने की तैयारी हो
 रही है। मद्रास-प्रान्त के शिक्षा मन्त्री माननीय श्री जे. पी. घोषास्वामि ने पुस्तकालय
 के इस महोत्सव का समारंभ होना स्वीकार कर लिया है। यह पुस्तकालय हम प्रांत
 के बुढ़ाने पुस्तकालयों में नहीं बल्कि बड़े पुस्तकालयों में भी है। स्वर्गीय राम मच्छा
 प्रसाद ने इस मन्दिर के प्रमुख लापरिका के सहयोग से इस पुस्तकालय की स्थापना तथा
 इसका समर्थन किया था। आयरिशों और सरकारी कर्मचारियों की सहमता से पुस्तकालय
 मन् की धीरे-धीरे उन्नति होती रही। पहले यह पुस्तकालय ठोठे बाजार के पान
 चौक से गौरी बाग जाने वाले बागो सड़क पर था। पीछे इसका अपना बसमान भवन बना
 और मन् १८७६ में इसी में खुलने लगा। गठ बप के विवरण से इसकी बसमान बसा
 का कुछ परिचय मिल सकता है। पुस्तकालय के हान में जो इस समय बानने पूरा लग्ना
 और इसकी छुट चौड़ा है पाठकों के पत्रों के तिय १२६ सामयिक पत्र रख जाते थे
 इनमें २३ वैलिक-पत्र और ४३ मासिक-पत्र थे। पुस्तकों की कुल संख्या १७५५६ थी
 जिनमें धर्मग्रंथों की ७ ५११ हिन्दी की १ ५६५, उर्दू की २ ८८१ संस्कृत की
 २ १८३ बंगला की ६३६ मुकराती की १७८ और मराठी की ७६ रहीं। संख्या की
 संख्या २१८ थी। धान १ ५७२ व और अन्य ११ ८ ७ ६ था। इन विवरण से
 इस पुस्तकालय का महत्व प्रकट हो जाता है। बसामन् मुनिमिपलिट्टी ने मूठ-पूठ
 एनिडिक्स्टिब बसामन् राम बहादुर जयन्नाबसामन् मेहता का पिता धारमिक बसों में पुस्तकालय
 के पुस्तकालय से इनतिय मेहता जी उनको स्मृति में दो हजार रुपया समार
 पुस्तकालय के लिए करवा बनवा रहे है। धारा है कि शिक्षा-प्रयी इस पुस्तकालय के
 सम्बन्ध में अधिक विचारणी लेने इसकी पयात्त महायत्ता करेय तथा इनके प्रकष में
 मुबार करेय त्रिमसे इनक द्वारा धीरे धार्मिक शिक्षा प्रचार हो सके। पुस्तकालय के द्वारा
 बासामयिक सभा समी हो सती है जब उसमें उत्तम पुस्तकों क संग्रह का बराबर प्रकष
 हो तथा पुस्तकों की सुव्यवस्थित सूचा हो। इनक पाठ ही हमें इन बात पर भी ध्यान
 देना श्रिये कि पुस्तकालय की पुस्तकों में धार्मिक स धार्मिक सम्बन्ध नाम उगावे। त्रिम

पुस्तकालय में खुली हुई गई थी और पुरानी पुस्तकों का धब्बा संवह है, तथा उन्हें पढ़ने वालों की सख्या बहुत घटिक है यही बहुत बड़ा पुस्तकालय है ।

२० नवम्बर, १९३३

सिनेमा और युवक

सिनेमा-चित्रों में प्रायः जिन तरह के दृश्य दिखाए जाते हैं उनका युवकों के चरित्र पर बुरा परिणाम डेकरकर यूरोप में कई देशों में १९१५ से कम उम्र के कुमारों को सिनेमा देखने का कानूनी निषेध कर दिया है । हत्या और डाके के जो कांड इतने घबराव रूप में दिखाए जाते हैं उनका चिन्ती के चरित्र पर भी धब्बा प्रसर नहीं पड़ सकता । कुमारों के कोमल हृदय पर तो उसका प्रसर इतना सराब होता है कि किठनों ही में उसे काम रूप में मानने की चेष्टा की है और धार्मिक जेलखानों में बन्धी पीन रहे हैं । शिक्षोपयोगी चित्रों से धम्बलता युवकों का बहुत-बहुत उपकार होने की आशा की जाती है । भूगोल इतिहास आरोग्य धार्मिक विषया की शिक्षा चित्रों द्वारा बहुत ही सरल और मनोरंजक हो गई है, पर शिक्षा-सिद्धांत के समर्थों को ये शिक्षा-विषयक चित्र-पट भी दोष से आती नहीं हो सकते । इनका प्रसर इतना बराब तो नहीं होता कि कुहुरियों की धोर से जाय पर बौद्धिक विकास में इससे बड़ी बाधा पड़ती है । मड़कों में जो विनाश-वृत्ति होती है उसे शांत करने का यहाँ कोई साधन नहीं । ब केवल धीलों से देखते हैं बुद्धि और तुलना शक्ति से काम लेने का उन्हें कोई प्रबसर नहीं मिलता । इस तरह उनका मन विनाश-प्रिय हो जाता है और उसमें विचार की शक्ति क्षिप्त हो जाती है । यहाँ तक कि उनका कहना है कि बहुतेर बच्चा की मानसिक क्षिप्तता इतनी बढ़ गई है कि वे जो दृश्य देखते हैं, उनकी बागेभियों को मार नहीं सके । बालकों में जो क्रियात्मक और मई-मई बालों जो ब निकलने की प्रवृत्ति है वह यहाँ विस्तृत बन जाती है । मगर सिनेमा का प्रचार दिन-दिन बढ़ता जा रहा है, और धब्बे किन्तु बोलने से भी नहीं मिलते । जब तक यह व्यवसाय मुश्किल और विचारहीन तथा चरित्रवान् व्यक्तियों के हाथ में न आवेगा इसके मुजरने की कोई आशा नहीं ।

११ दिसम्बर, १९३३

सर पी० सी० राय का दीक्षान्त भाषण

सर पी० सी० राय ने काशी-विरह-विद्यालय के दीक्षान्त भाषण में कई बड़े महत्व के प्रश्न उठाए जिन पर र्थमीरता से ध्यान करने की आवश्यक है । महत्तम धार्मिक विचार से विरह-विद्यालय में नेकबतों का होना आवश्यक न होना चाहिए, बल्कि धार्मिक

मैत्रेय पुस्तकालोकन की मगन वेदा होनी चाहिए। विद्यालय छात्रा को पाठ्य क्रम के
 क्रमेण म फेंकाकर उनको शैक्षिक मौलिकता को नष्ट कर देता है। इनमें संदेह नहीं
 कि परीक्षाओं और मन्त्रों का बन्धन छात्रों के स्वाध्याय में बाधक होता है और छात्र
 भी ऐसे ही बितने ही महान् पुरुष मौजूद हैं जिन्होंने निमी विद्यालय का मंह नहीं देता
 मगर हमारे क्वास में भी ए तरह के छात्रा को विरह-विद्यालय का छात्र ममन्दा ही
 क्या न पाय। हमारे यहाँ जो संकेदरी शिक्षा कर्मणी है, वह मन्त्रिकुमन्त्रण तक ममाप्त
 ही नानी है पर उस वक्त धर्मिकता छात्रा की उन्न पश्य हो बठाएह वप की होती है
 और उनमें ग्रीह विचार का विकास नहीं हुआ रहता। वास्तव में जो ए तक उनी
 ग्रीह शिक्षा की कमी पूरी होती है। इनके ऊपर तीन नाम का समय विरह-विद्यालय का
 होना चाहिए, जिसमें छात्रों को लेखकों का मुनना सामग्री में ही और न स्वाध्याय और
 जोर में धम्मस्त हो सकें। जो ए तक की शिक्षा तो वहाँ तक सली हो सके धर्मिक
 से धर्मिक छात्रा को मिसनी चाहिए। मगर धारण्य यही है कि इस मन्दी न जमाने में
 वहाँ लोगों की धामरनिर्घा बट गई है। विद्यालय का ध्य बह गया है। बत्ती दलारी
 हूणुमत् जो धर्म विमानों में राज्य कर रही है। विद्यालय पर भी धासन बनाए हुए है।
 वही लम्बी-लम्बी उनक्याह है वही परीक्षा की पीस है, वहाँ छात्रा पर धाणक जमान
 की पुन है। हमारा साधारण ध्यापक किसी बालशर या डिप्टी प्रैक्सि ट में कम रोब
 नहीं जमाता। और यह तो विद्यालय स्थ नियम है। इसका पक्ष और विपक्ष शोना ही के
 समकक मित जायें मगर मानुभाषा के माध्यम द्वारा शिक्षा का जो धारण धापने
 दिया उनमें ही समक किसी को धापण हो ही नहीं सक्ती। हीराबाज में उद्गृहाय
 दो-से-जैसी शिक्षा ही ना रही है। जो बाठ उद्गृहारा ही सक्ती है वह धर्म मत्याओं
 ए भी हो सक्ती है मगर यहाँ बटिनाई यह पक्की है कि हरेक प्राण की भाषा धामय
 । मकन भाषाओं की संख्या भी एक दमन से कम न होगी। धपर हरेक प्राण में
 प्राणीय भाषा ही शिक्षा का माध्यम बना दी गई तो राष्ट्रीयता को चितना बडा पक्का
 पहुँचेगा। उनका धनुमाल नहीं किना जा सक्ता। हमारे धाव धुप-मंथुप होकर रह
 जायेंगे। इनमिने बकरत यह है कि मानुभाषा को शिक्षा का माध्यम न बनाकर राज
 भाषा की माध्यम बनाया जाय। और यह धम ही बुझा है कि हिन्दी क मिका कोरुमटे
 धारा एत बना बनेना भावक नहीं है। यदि बंभाज इन प्रस्ताव को स्वीकार कर ल तो
 हमारा विरवान है कि धर्म प्राप्त बाने जो धपरय स्वीकार कर लेंगे। यदि राज भाषा
 द्वारा शिक्षा मितने मने तो इंटरमीडिएट का कोम मरमता स मन्त्रिकुमन्त्रण में पुरा क्रिया
 ना सक्ता है। और तब धारा है छात्रा में वह धमिमान भी न पया हो जो धपनी
 बरार उनमें धा जाता है और उन्हें धर्मि धा ध्यागर के धयोप्य बना देता है। मगर एक
 परिचामी मत्या की बकरत तो हर हाणत में रहेंगी। उनके बिना गुजारा मी ही मक्ता।
 मसार की प्रगति में किने रहन की निवे हमरी उक्ता है।

॥ सर की सी राव का शीवालय धारण्य ॥

सर तेज बहादुर सप्रू का भाषण

इस्राइलियन युनिवर्सिटी के वीरान्त भाषण में सर तेजबहादुर ने पाठ्य-क्रम में ऐसा परिवर्तन करने के लिए आग्रह किया जिससे छात्रों की रोटी का सवाल हल हो सके क्योंकि रोटी का सवाल संस्कृति के सवाल से कहीं आवश्यक है। आपने बहुत बार फरमाया कि हज़ारों यवक अपने कानून और धाट और विज्ञान का डिप्लोमा लिए मार मारे भ्रम रहे हैं। आपने व्यवसायिक और भौगोलिक शिक्षा पर जोर दिया। मगर हम पूछते हैं कि औद्योगिक डिप्लोमा वालों के लिए भी कहीं स्थान है? स्कूली और वाय टेकनिकल स्कूलों को जाने दीजिए ज़ारों सोहारों और बहइयों के लिए भी तो काम की इफ़रत नहीं है। अगर उनकी सख्या और बड़ नाम तो उनमें भी बेधारी बड़ जायगी। फिर कौन-सा सद्योग सीकें जहाँ रोटी का सवाल हल हो सके।

मगर यही तो सिर्फ़ रोटी ही का सवाल नहीं है। सम्मान का सवाल है, बँपने का सवाल है, कार का सवाल है, फ़स्ट क्लास में सफ़र करने का सवाल है। धीरों में जो महत्वाकांक्षा है क्या युवकों में उसका होना बर्जित है? बड़ई या ज़मार को फ़िरी ने शान से बँपने में रूठते नहीं देखा। वह बहुत सफल हुआ तो अपनी बीबी के लिए कुछ पहने बमबा देवा या अपने कन्धे मकन को पक्का करवा लेवा। शान से नही भोग जीवन का निर्वाह कर रहे हैं जिन्होंने कानून पढ़ा है जिन्होंने धाट और विज्ञान की डिग्रियाँ भी हैं। उसी रास्ते पर हमारा युवक भी चल रहा है। उसे किसी तरह सन्तोप नहीं होता कि उसे प्रकृति में केवल जूते गाँठने के लिए पढा किया है, और ऊँची शिक्षा उसके लिए हाथिकर होगी। वह अपने समीप जो कुछ देखता है उसी का रंग उस पर धसर करता है। जो भोग उस पढाती है जो भोग उसे उपदेस देते हैं, जो भोग उसकी ज्ञान वृद्धि करण है जो जीवन के मन्ने धारत बगकर उसके सम्पुक्त बड़े होते हैं केवल मुमकिन है कि इनका प्रभाव उस पर न पड। ऐसे लोग जब उनसे औद्योगिक शिक्षा का अनुरोध करते हैं तो वह अपने धन्दर-ही-धन्दर मुक़ता है और सोचता है कि धाप भोग तो जिन्यनी के मन्ने उड़ा रहे हैं हम मजदूरी करण का उपदेस देते हैं। यही कारण है कि आज हज़ारों युवक निरास होने पर भी विद्यालयों की धोर बीरे बने जाने हैं। क्या इरज है थोटी के दो छात्रों के लिए ही कुछ धाता है शेष के लिए कोई धारा नहीं। कौन जान उमी की तक़ीर लख जाय और वह उन दो धारणियों में एक हो। कुछ भी हो वह पहले से ही हिम्मत हार कर न बैठेगा। एक या तीन बार अपनी किरमत्त धात्रमाणा अपनी धालें छोडकर, स्वास्थ जोकर, घर को बरबाद कर वह यह परीक्षा करमा और जब धमफ़त हो जायगा तो उसे यह ख़ाइन हो जायगा कि उसने बवा-शक्ति उद्योग कर दिया। धात्र में भाग कर धपन को धयोग्य नगध मेने पर उतछा युवक और मनस्वी धात्मा जमी सेवार नहीं होता।

बात यह है कि समाज का जेसा कुछ संगठन है, उसमें ऐसी स्थिति का पैदा होगा प्रतिचार्य का और वह हुई। जब तक बोर्ड से धारणी मस्तिष्क के बम से अपने स्वाधी को उत्पत्ति करत रहेंगे जब तक गिने-गिनाए धारणियों को भी ऐसे धबधब मिसते रहेंगे कि वे डिप्लोमा का पास-नोट लेकर सम्मान और ऐरबय के प्रदेश में विचार तर्क उस बस्त तक विद्यालयों में छात्रों का यों ही रेलपेस रहेगा चाहे विद्यालय उनकी भाकांचाओं की हमाबि ही क्यों न बनता रहे। यह स्थिति कुछ भारत में ही नहीं हुई है। अमेरिका योरप के उत्पत्त देशों में भी जहाँ कहीं व्यक्ति की प्रथानता है, यही पठा हो रही है। जब तक राष्ट्र समष्टि का रूप धारण न करेगा जब तक बोर्ड से अतुर व्यक्ति नक्षी के रूप पात्र बनते रहेंगे जब तक हरेक को अपनी-अपनी पकी रहेंगी जब तक राष्ट्र इस सत्तरवाचित्य को स्वीकार न करेगा कि राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति को समाज रूप से बंधित रहने और उत्पत्ति करने का अधिकार है, उस बस्त तक पढे सिको की यह भयकर बेकरी दिन-दिन बढ़ती जायगी। यह सत्य है कि धाब बड़े-बड़े राष्ट्रों के विभाजना से शोक है बिभूले विद्यालयों का मुँह तक नहीं देखा। लेकिन मसोमिनी हिटलर और स्टालिन समाज की शोक पर चलकर इस पथ पर नहीं पहुँचे हैं, वे क्रान्ति-मार्ग से अपने उच्चस्वाम पर पहुँचे हैं। और इज्जति बच्चों का खेन नहीं है। हम अपने युवकों के मस्तिष्क में यह स्थान नहीं बनने देना चाहते कि उत्पत्ति के द्वार उनके लिए बन्द है और समाज और राष्ट्र से विद्रोह करके ही वे अपने लिए स्थान निकाल सकते हैं। देश के लिए वह बुरा दिन होगा अगर युवकों के दिल में यह बात बैठ गई। उसक लिए यह परमावरणक है कि राष्ट्र इन सिद्धान्त को स्वीकार कर ले कि डिप्लोमा सम्पत्ति और अधिकार के खजाने की कुम्भी नहीं है। सभी शिक्षा का वास्तविक महत्व प्रकट होगा। अपनी जो शिक्षा भी एक व्यवसाय है और जो अधिक-से-अधिक धन खर्च कर सकता है वह बड़ी-से-बड़ी शिक्षियों से सकता है, बशर्ते कि वह निरा कोड़-मार्ग न हो। राष्ट्र के मावी कम्पास के लिए यह बकरी हो गया है कि समाज और राष्ट्र की वह व्यवस्था जिनमें बोर्ड से व्यक्ति संसार की विभूतियों पर धाबिपत्य जमाएँ असतोप और संभव की प्यासा फेमा रहे हैं, बरत ही जाय और हमारी महानता की कसीटी हमारी शान और विस्तारिता न हो बसिक हमारी सेवा और त्यागमय जीवन ही उनको कसीटी हो।

२५ दिसम्बर, १९३३

डाक्टर टैगोर वर्म्बई में

पत्रिका से जगदा बमूम करना भी एक कला है और इनके कलाबिद् भारत में दो हैं। एक महात्मा माधवजी भुवने महात्मा गाँधी। कौन धर्मज्ञ है कौन बोधम हमना

फैला करना मुश्किल है। दोनों महानुभावों को एक ही बनेट में रखना चाहिए। मामवीयजी ने टेबी व दिनों में लाशों बसूल किए। महारामाजी इस मन्वी घोर बेकारी के दिनों में केवल दो प्रान्तों में बाई तीन लाख रुपये बसूल कर चुके। सुना है मामवीयजी भी निष्कामने वाले हैं। तो बात यह है कि ये महानुभाव इस काम में सिद्धहस्त हो गए। पचास-गचास साल से धर्ममाम जो कर रहे हैं। डाक्टर रबीन्द्रनाथ विश्व-कवि हैं और बहुत बड़े कलाकार हैं। सफ़िन मिश्रण-कला में उर्दू दोनों पूज्य मिश्रणों से कुछ सीखने की जरूरत है। धनी हल में इस क्षेत्र में धाये हैं। मामवीयजी अतीत घोर वान घोर अपने बायी कमरकार से होते हैं महारामाजी जन्मा भी होते हैं घोर डाँटते मो हैं उनकी कला में यही विशेषता है। डाक्टर टैमोर ने निकट लगाकर शांति-निकेतन व बामकों बामिकाओं से धर्मिनव करमा खुब भी पार्ट किया लेकिन सुनते हैं धर्मवी रकम हाव न लगी। बात यह है कि जिस संस्था के लिये जल्द माँगा जाव उस संस्था से जनता में कवि घोर उस्ताह हुए बिना जन्मा बैस मिले। शांति-निकेतन ने धनी जनता के दिल में धर नहीं किया। जब तक वह सेवा घोर त्याग का रकाड जनता के सामने न रखे उस संस्था बड़े-बड़े लोग चाहे केवल बड़ी रकम दान दे दें जनता से मिलना मुश्किल है। मगर हम तो डाक्टर टैमोर जैसे महान अधि का पाठ कुछ घोरपूछा न जान पका। यदि शांति निकेतन से ऐसे छात्र निकलें जा जीवन-सधाम न कुछ कर दिखाएँ तो बेस धाव उसको भी ज़सी तरह प्यार करेगा बैस मुठकुनों को।

नवरी, १९३४

साम्प्रदायिकता और संस्कृति

साम्प्रदायिकता सब संस्कृति का बुझाई दिया करती है। उसे अपने धरनी रूप में निकलते शायद सज्जा धावी है, इसलिये वह धने की नाति जो सिंह की पाव धोड़ कर धर्म के जानवरों पर राज बमाला फिरता वा संस्कृति का खोन धोड़ कर धावी है। हिन्दू धरनी संस्कृति को कमायत तक स्वरचित रखना चाहता है, मुसलमान धरनी संस्कृति को। दोनों ही धमी तक धरनी-धरनी संस्कृति को धरणी समझ रहे हैं यह मूल गए हैं, कि धन न कही मुसलम-संस्कृति है, न कही हिन्दू-संस्कृति न कोई धन्य संस्कृति धन संसार न केवल एक संस्कृति है और यह है धार्मिक संस्कृति मगर हम धाव भी हिन्दू और मुसलम संस्कृति वा राता रोए जाने जाते हैं। हालाँकि संस्कृति का धम से कोई सम्बन्ध नहीं। धाव संस्कृति है ईरानी संस्कृति है धरन संस्कृति है सेरिम ईसाई संस्कृति और मुसलम वा हिन्दू संस्कृति नाम की कोई भीज नहीं है। हिन्दू मति पूजक हैं, तो क्या मुसलमन कन्न-पूजक और स्थाव पूजक नहीं हैं। शांति को शकत घोर शीरीनी वीन चड़ाजा है समजिध का गुवा वा धन वीन समझना है। मगर मुसलमानों में

एक सम्प्रदाय ऐसा है, जो बड़े-से-बड़े पैदावारों के सामने खिर झुकाना भी कुफ समझता है, तो हिन्दुओं में भी एक सम्प्रदाय ऐसा है जो देवताओं को पत्थर के टुकड़े और लकड़ों को पानी की धारा और बम धूम्रों को गणोडे समझत है। यहाँ तो हम दोना सम्कृतिना में कोई धन्तर नहीं बीनता।

तो क्या भाषा का धन्तर है ? बिलकुल नहीं। मुसलमान उलू को अपनी मिल्की भाषा कहें मगर मरामी मुसलमान कं लिए उलू बीनो ही धपरिबिठ बस्तु है जैसे मरामी हिन्दू के लिए मस्जिद। हिन्दू या मुसलमान जिस प्रायत म रहते हैं सब-भाषाएक की भाषा बोलते हैं चाहे वह उलू हो या हिन्दी बयसा हो या मराठी। बंगाली मुसलमान उनी तरह उलू नहीं बोल सकता धीर म समक लफ्ता है जिस तरह बंगामी हिन्दू। दोनों एक ही भाषा बोलते हैं। पीमा प्रायत वा हिन्दू उनी तरह परतो बोलता है जैसे वहाँ का मुसलमान।

फिर क्या पहनाचे म धन्तर है ? पीमाप्रायत के हिन्दू धीर मुसलमान धारने सामने बड़े कर दिए कार्य कोई लमीन नहीं। हिन्दू लकी-पुरुष धी मयममानी के-से शालवार पहनते हैं हिन्दू-स्त्रियाँ मुसलमान स्त्रियों की ही तरह कुरता धीर धोड़नी पहनती-धोड़ती है। हिन्दू पुरुष भी मुसलमानों की तरह कुसाह धीर पयडी बाँधता है। धन्तर दोनों ही रङ्गो भी एकते हैं। बंगाल म जाइए वहाँ हिन्दू धीर मुसलमा स्त्रियाँ दोनों ही साड़ी पहनती हैं हिन्दू धीर मुसलमान-पुरुष दोनों ही कुरता धीर धोड़ी पहनते हैं। उलूध की प्रजा बहुत हाय म लमी है जब से साम्प्रदायिकता ने जोर पकड़ा है।

कान-पान को सीखिए। मगर मुसलमान माँच खाते हैं ता हिन्दू भी धस्ली धी सवी माँच खाते हैं। ठीके हरने के हिन्दू भी शरण पीते हैं जैसे हरने क मुसलमान भी। नीच हरने के हिन्दू भी शरण पीते हैं नीचे हरने का मुसलमान भी। मध्यमबश के हिन्दू मा सो बहुत कम शरण पीते हैं वा मय के गोले बडने है जिसका गता हमारा पंश पुकारी क्याय है। मध्यमबश के मुसलमान भी बहुत कम शरण पीते हैं, हाँ कुछ नीच मस्लीम की पीनक धरम सेते हैं मगर इस पीनक कामी में हिन्दू भाई मयममानी से पीते नहीं हैं। हाँ मुसलमान गाय की कुर्बानी करते हैं धीर उनका माँच खाने हैं लेकिन हिन्दुमा म भी एसी क्रातियाँ मौजूद हैं जा वाय का माँच खाते हैं यहाँ तक कि मठक माँच भी नहीं धोड़ती हामाँक बकिर धीर मठक माँच में बिरपे धन्तर नहीं है। मगर में हिन्दू ही एक एसी क्राति है जो दो-माँच को धग्गाध या धपवित्र समझतो ह। तो क्या इसलिये हिन्दुओं को समस्त मंमार से धय-मधाय धीड़ देना क्राति ?

मंवीत धीर बित्र-कला भी मस्कृति का एक धंग है लेकिन यहाँ भी हय कोर साम्कृतिनक भेद नहीं पन्ने। वही राग-रागिणियाँ दोनों गाते हैं धीर मुसल वाच की बित्र

॥ साम्प्रदायिकता धीर संस्कृति ॥

कमा से भी हम परिचित हैं। नाट्य कला पहले मुसलमानों में न रही हो लेकिन धार इस सींगे में भी हम मुसलमानों को उसी तरह पाते हैं जैसे हिन्दुओं को।

फिर हमारी समझ में नहीं आता कि वह कौन-सी संस्कृति है, जिसकी रचा के लिये साम्प्रदायिकता इतना जोर बाँध रही है। वास्तव में संस्कृति की पुकार केवल डोंग है, निरा पाखंड। और इसके अन्वयात् भी नहीं भोग है जो साम्प्रदायिकता की सीतल-धामा में बैठे बिहार करते हैं। यह सीधे-साधे धारमियों को साम्प्रदायिकता की धोर कसीट लाने का केवल एक मंत्र है और कुछ नहीं। हिन्दू धोर मुसलमन संस्कृति के एक बड़ी महानुभाव धोर बड़ी समुदाय हैं जिनको अपने ऊपर अपने देशवासियों के ऊपर और सत्य के ऊपर कोई शरोसा नहीं इसलिये अनन्त तक एक ऐसी शक्ति की बकरत समझते हैं, जो उनके धाराओं में सरपंच का काम करती रहे। इन धारियों की जनता के सुख-दुख से कोई मतलब नहीं उनके पास ऐसा कोई सामाजिक या राजनैतिक काम-कर्म नहीं है, जिसे राष्ट्र के सामने रख सकें। उनका काम केवल एक-दूसरे का विरोध करके सरकार के सामने परिवार करना और इन तरह विदेशी शासन को स्पन्धी बनाना है। उन्हें किसी हिन्दू या किसी मुसलमन शासन की अपेक्षा विदेशी शासन प्यारी सझ है। वे धोहरों और रिवायतों के लिए एक दूसरे से बड़ा ऊपरी करके जनता पर शासन करने में हासक के सहायक बनने के लिये और कुछ नहीं करते। मुसलमान धरर शासकों का बानन पकड़कर कुछ रिवायतों या यथा है, तो हिन्दू क्यों न सरकार का बानन पकड़े और क्यों न मुसलमानों ही की माँति सुख बन जाय। यही उनकी मनोमूर्ति है। कोई ऐसा काम सोच निकालना जिससे हिन्दू और मुसलमान दोनों एक होकर राष्ट्र का उधार कर सकें उनकी विचार शक्ति से बाहर है। दोनों ही साम्प्रदायिक मस्त्रों मध्यवर्ष के धनिकों धमीशरों धोहरेधरों और पय-भोसुपों की हैं। उनका काम लेव अपने समुदाय के लिये ऐसे धरसर प्राप्त करना है, जिससे वह जनता पर हासन कर सकें जनता पर धार्मिक और ध्यावसायिक प्रमुख बना सकें। साधारण जनता क सुख-दुख से उन्हें कोई प्रयोजन नहीं। धगर सरकार की किसी नीति से जनता को कुछ लाभ होने की आशा है और इन समुदायों का कुछ सति पहुँचने का मय है, तो वे तुरन्त उनका विरोध करने को तैयार हो जायगी। धगर और जाता यहापई तक जाय ता हम इन संस्थाधा ॥ धधिकारा ऐसे सञ्जन मिलने त्रिनध कोई-न-कोई निजी हित लया हुआ है। और कुछ न तही तो कुचकाम क बंधनों पर उनरी रमाई ही सारल ही जाती है। एक विविध बात है कि इन सञ्जनों की धकमरों की निगाह में बड़ी दृग्गत है, इनकी ब बड़ी गतिर करते हैं। इनका कारण इनके निधा और क्या है कि वे सञ्जते हैं ऐनों पर ही उनका प्रमुख टिधा हुआ है। धारण में लूब लडे जाधा लूब एक दूसरे को मुसलमान पहुँचाधा। उनके पास परिवार से जाधो फिर उन्हें किम वा मय है वे धरर है। यथा यद् है कि बाधों ने यद् पालण्ड कैमाना भी शुभ कर रिधा है कि हिन्दू धारण कुने वर

स्वराज्य प्राप्त कर सकते हैं। इतिहास में उनके उदाहरण भी दिए जाते हैं। इस तरह की घटना कमिटी के माफ़क इसके बिना कि मुसलमानों में और ज्यादा बढ़गुमानी देने और कोई गरीबी नहीं निकल सकता। धरत कोई जमाना था जब मुसलमानों के राज-दास में हिन्दुओं ने स्वाधीनता पाई थी तो कोई ऐसा काम भी था जब हिन्दुओं के जमाने में मुसलमानों ने अपना साम्राज्य स्थापित किया था। उन जमानों को भूल जाइये। यह मुबारक दिन होगा जब हुनायी शासकों से इतिहास उठा दिया जायगा। यह जमाना साम्प्रदायिक सम्बन्ध का नहीं है। यह धार्मिक युग है और धार्य नहीं गीति लच्छन होनी जिससे जमाना अपनी धार्मिक समस्याओं को हल कर गक जिससे यह संघ निरस्त यह जमान के नाम पर किया गया पालंड यह गीति के नाम पर गरीबों को पुहने की कृपा भिटाई का मके। जमाना को धार्य संस्कृतियों की रक्षा करने का न प्रयत्न है न करण। 'संस्कृति धरियों का पेटनरों का बेकिरों का व्यसम है। हरिडों के लिये प्राण-रक्षा ही सबसे बड़ी समस्या है। उन संस्कृति में या ही बना जिसकी न रक्षा करे। जब जमाना मुक्ति की तब उस पर जब और संस्कृति का मोड़ छापा हुआ था। जमानों उनकी केतना बाधुत जाती जाती है वह देखने लगी है कि यह संस्कृति कबल कुटेरो की संस्कृति की जो राजा बनकर बिडाल बनकर जयत मेठ बनकर जनता को कुटती थी। सते धार्य अपने जीवन की रक्षा को धार्य चिन्ता है जो संस्कृति की रक्षा से नहीं सम्भव है। उस पुरानी संस्कृति में जसक लिए मोड़ का कोई कारण नहीं है। और साम्प्रदायिकता अपनी धार्मिक समस्याओं की तरक से धार्य बंध किए हुए ऐसे काम कर पर बन रही है जिससे उसकी परधीनता चिरस्थायी बनी रहेगी।

१५ जनवरी, १९३४

हवा का रुझ

हिन्दी जन के हंसैड के एक मदारदाता ने लिखा है कि पचीस साल पहले केमिन्ड में सार्वत्रिय और कविता ही धार्यों के विचार-विनिमय का विषय था पत्रनीति से हिन्दी का जय ती दिनकनी न थी। उनी केमिन्ड में धार्य कम्युनिज्म का सबसे ज्यादा घर है। मगर वह महाराज यह भूरा मये है कि पचीस जय पहले कम्युनिज्म की मूरत ही जिसने देखी थी। विज्ञान में मजोम यम और बैतार बनाए, तो बना राजनीति धर्यों-नी-रनों बैटी रहती। उधार्य और परम्परावादी बनो में मकलों के धार्यतवार के लिये बना धार्यत हो लकना है। कम्युनिज्म धर्यन्तु साम्प्रदाय ना विरोध नहीं ती करता है जो हुनरो में जमान मुज्य मोगना धार्यता है जो हुनरो को धार्य धर्योम रचना धार्यता है। जो धार्य को भी हुनरो के धार्यत हो मकमता है जो धार्य में कोई मूरतार वा

पर समा हुआ नहीं देखता जो समझती है उसे साम्यवाद से क्यों विरोध होने लगा । फिर युद्ध तो धारणावासी होते ही है । भारत में ही देखिये । बाप तो साम्प्रदायिकता के उपासक है, और बेटे उसके कट्टर विरोधी । युद्ध क्या नहीं देखते कि वर्तमान सामाजिक और राजनैतिक गणठन ही उमकी उबार, ऊँची और पवित्र भावनाओं को कुचस कर उन्हें स्वार्थी और उकील और हूबहूबूय बना देती है । फिर वे क्यों न उस व्यवस्था के दुरमन हो जायें जो उनको मानवता को पीछे धाक रही है और उनमें प्रेम की बपह उच्च के माथ जगा रही है । उसी सम्भावना के लक्षों में 'एमा मुस्लिम से कोई समझदार धारणी मिसेगा जिसमें बरा भी विचार शक्ति है, जो वर्तमान परिस्थिति का साम्यवासी विरुद्ध न स्वीकार करता हो ।

२६ जनवरी, १९३४

जर्मनी में नाच पर बहिष्कार

द्विजगत की सरकार न हाम में ऐसा करमान जारी किया है कि अठारह बप से कम उम्र के बिरोर युवक-युवतियों के गदे नाच में न जायें । ह्री अगर उनके साथ कोई उजबकार धारणी हो तो जा सकते हैं । जर्मनी के रसिक और मन्वसे युवकों ने इस करमान का विरोध किया है लेकिन जमन सरकार एम विरोध की परवाह नहीं करती । यूरोप में नम विनाशिता जोरों से बढ़ रही है, और वही मीग जो स्त्रियों के धार न कुन मचाते हैं बापिकाओं को मम बेप में बेखकर अपनी धाँसों को तृप्त करते हैं । हम तो उन युवकों से कहेंगे कि इस हुपम का विरोध न करने के बबसे उनका स्वागत करो और बही समय जो तुम मंगा नाच देखने में जाच करते वे मरगता बेस सेमने में लमाओ ।

१२ फरवरी, १९३४

स्वामी-सत्यदेव पाठशाला

पाठकों को यह जान कर हप होगा कि हिन्दी के विचारत सेनक और राष्ट्रीय कावर्त्ता स्वामी सत्यदेव जी परिषाजक ने कासी की धपने कायधक का केन्द्र बनाया है और अब वही निवास करेंगे । धार धरन मिला से हिन्दी की सेवा ता करत ही रहेंगे अब धारने एक पाठशाला भी स्थापित कर बी है । कासी एम विद्यालय क मिये उामुक्त स्थान है कर्त्ता यह हमेशा न विद्या का केन्द्र रहा है । एम विद्यालय म बहु भी विषय पत्राये जायेंगे जो मनुष्य की स्वातन्त्री स्वतंत्र-विचारक मयोगी उगर और विचार-

शौर बनते हैं। स्वामीजी ने बुनियाँ देनी हैं और राष्ट्रों के उत्थान और पतन का अध्ययन किया है। वह बड़े वैराग्य के उपासक नहीं हैं जो जीवन को अनित्य और संसार को दुःख का मूल समझता है। उन्होंने संसार के मुख्य धर्मों का तुलनात्मक विवेचन किया है। अतएव धारकी सम्पन्नता में किम बर्ग की शिक्षा मिलेगी इसका अनुमान किया जा सकता है। यहाँ यूरोप का इतिहास पारंपार्य शिक्षा के विकास का इतिहास पूरा और पश्चिम की संस्कृतियों का विचारपूरा अध्ययन धार्मिक विषयों पर व्याख्यान दिए जायेंगे। काली न यह पाठशाला अपने बर्ग की प्रतिष्ठित होगी जिनमें पूरा और पश्चिम की सभी सम्बन्धी बातों का सामंजस्य होगा। हम नहीं बड़ सकते काली जैसे फट्टर पंथी स्थान में ऐसी पाठशाला कहीं तक सफल होगी पर काली जहाँ प्राचीन है वहाँ उसने सर्वत्र नए प्रगति का स्वागत किया है और हम धारा करते हैं कि स्वामी जी अपने शुभ-उद्देश्य में सफल होंगे।

१६ फरवरी, १९३४

भारतीय कला की आत्मा

हिन्दू एकलेश्वरी सर प्रामाण्य हीने ने सज्जनक स्कूल आक-घाट की धार्मिक प्रवर्तनी के अन्तर्गत पर भारतीय कला की बनी सुन्दर विवेचना की। धारने फरमाया कि प्राचीन भारतीय कला कुछ धार्मिक पौराणिक और धार्मिक विषयों को अभिव्यक्ति की को विशेष रूप से भारतीय थे। धार्मिक विचार में यही भारत की जातीय-कला की आत्मा थी। देशक थी। मगर उस धर्मन्यता के युग में संसार की किम जाति की कला इससे भिन्न थी? फिर अब संसार में वही कला का यह क्या रूप ल था तो भारत में क्यों होता। यहाँ भी कलाकारों ने अपनी बुद्धि वृष्ण की रास सीमाओं और देवताओं के पौराणिक पात्रों के चित्रित करने में लगाई उनी तरह जैसे बौद्ध कलाकारों ने कई सचियों पहले बुद्ध जीवन को चित्रित करने में लगायी थी या जैसे बार को इटली के मदान् चित्रकारों और मूर्तिकारों ने ईसा और अन्य धर्म सम्बन्धी विषयों में लक्ष की। भारत की आत्मा ही कलाकार की आत्मा है और वह धर्म सचियों की धार्मिक और माध्यमिक मुनामी से मुक्त होकर व्याप्त स्वाधीन क्षेत्र में धारा चाली है और वही कलाकार धार का राष्ट्रीय कलाकार होना जो इस भावना को रंगों और पत्थरों में दर्शाए। देवी-देवता और राजा-रानो के चित्र धर्म केवल प्रार्थना के लिए रहे यह है राष्ट्रीय भावना को उन्ने कोई धारता नहीं मिलता। धार भी हमारे यहाँ ऐम धारोचकों को बनी नहीं है, जो वृष्ण की दधि सीमा के चित्र देवदर गरमर जा जाते हैं और उनकी प्रार्थना में धारियाँ निर्माण कर डालने हैं। नेत्रिय एम चित्रों में गीरम या धारमर का

अनुभव करने वाला वही सुखी और सुष्ट जीव है जो धाम के वास्तविक जीवन में नहीं पड़े और न परिस्थितियों के कारण पड़ सकते हैं ।

२६ फरवरी १९३४

पत्रकारों के लिये सतोष की बात

भारत के पत्रकारों की धाम जो धाम है, वह किसी से छिपी नहीं । इससे कहीं ज्यादा मेहनत सिर्फ गुजारा लेकर सामय ही कोई करता हो । बहुतों को तो गुजारा भी नहीं मिलता । चायबाव है तो उसे बेचते हैं नहीं द्यूतन करके पेट पालते हैं और पत्र निकालते हैं । जिसे हाम पाँच ओढ़कर विदेशियों से कुछ विज्ञापन और कचहरियों से कुछ मोटिस मिल गए वह तो चाहे साम को रोटी बाल का सेवा हो पर जो इसने भ्राम्यवान नहीं है वह तो जिन्ना बरबोर है । क्या मितम है कि बेचारे स्वदेशी-स्वदेशी चित्ता करने कात्म-के-कालम काम करते हैं मगर जन्हीं विदेशियों के विज्ञापन घाप कर अपनी रोटियाँ बनाते हैं । किसी-न-किसी तरह मरग को घपना पत्र तो बनाना ही है । इस-लिए पत्रकारों को यह सुनकर खुशी होगी कि कम-से-कम एक बात में वह दूधों से बाकी मारे हुए हैं मानी न पावस कम होते हैं । बम्बई प्रान्त के पावसखानों की रिपोर्ट से पता चलता है कि पिछले साल जहाँ पाँच हजार घायमी पावस हुए, वहाँ उनमें सिर्फ एक पत्रकार था । मगर हमारा तो क्या है कि पत्रकार धीवस से घाबिर तक सभी पावस होते हैं । जिसके पास होस-हुबास है ही नहीं वह क्या पावस होगा । जिसके पास कुरता ही नहीं है वह घामन कहीं से लाये । यह पावसपन नहीं तो और क्या है कि भूखों मर रहे हैं । बाल-बच्चे उसके नाम को रो रहे हैं और वह हजरत पत्र निकाल रहे हैं । बच्चे की मीठी-मीठी लोठमी बातें सुनन की उसे कुरसठ नहीं । वह सर हेनो या सर हैम या सर मितर का धसेम्बमी बाला मापस पछन और उस पर विचार करने में मर्क है । पुसिए, बन्निन धधिका के हिन्दुस्तानी बुधी वहाँ से निकाल लिए गए तो तुम क्यों पावामे से बाहर हुए या रहे हो । और हा कोई नहीं बामता । बन्निन है वह इतमीनाम से बहस कर रहा है । मरुजन है, वह इतमीनाम से बैठा रुपए की घलकियाँ बना रहा है । बमीबार है वह इतमीनाम से घनामियों से मजराने बसून कर रहा है और हमारा यह पावस सम्पादक उन घनामै बुधियों के रुप म लून के धीगु बहस रहा है । हिटलर ने या मुमोसिमी ने या बन्निन न या कजवेन्ट ने एक बात वह ही बम यहाँ पत्रकार साहब को मातासुसिया हो गया । वहाँ डाका पड़ गया और उन्हें ऐसा मातूम हुआ कि कोई इनके धंगड़-रंगड़ उड़ा न गया कहीं पुसिम ने गोमी बना दी और इनके मीने में

शोभी लग गई । यह सब पावनपन नहीं तो धीर क्या है ? पावन क्या पावन होता ?
 ह्मपाठ तो खपात है वह निकालना ही पावनपन है बीबानकी है अनून है ।
 ३० अप्रैल, १६३४

त्याहारों में दंगे

दंग की दशा कुछ ऐसी बिचड़ गई है कि कोई ऐसा त्योहार नहीं जाता जिसमें
 दंग नहीं बल्कि बहि-उत्साह न हो धीर कुछ सोचों की आनें न भावें । पुडरम हो या ईं
 होमी ही या पठहरा बने ही हो जाते हैं । इन त्योहारों के धाम से धामन की बकर
 एक बिन्दा धीर भय का सामना होता है धीर धरर त्योहार जैगियत से बीत बाव तो
 हम सुटी का सखि बने है । नीबल यहाँ तक पहुँच गई है कि त्योहारों में दंगा वा होना
 धररम की बात नहीं न होना धररम की बात है । धीर बंये होते हैं ऐसी-ऐसी के
 बुनियात बाठों पर कि वेककर हँसी जाती है, मनों त्योहारों के बाते ही लोयो के तिर
 पर कोई मूत सवार हो जाता हो । कहीं इसलिए लड़ाई हो जाती है कि एक हिन्दू
 लड़के की निचकारी से किसी मुसलमान के कपड़ों पर धीरे पड़ गए धीर उसके बीन न
 बाग धन गए । कहीं इसलिए कि ताजिया एक सास पाली से जापना या कलां ताजिये
 से बाते जापना । ऐसी-ऐसी बाठों पर साठियां सुरियां बस जाती है धीर बीन की झूठी
 हिमायत में बैगुनाहों का झूठ बहा दिया जाता है धीर पुरतो से जो भाईबाप बना का
 रहा है उदरम यसा पोट दिया जाता है धीर धामे के लिए दुरममी का बीज बो दिया
 जाता है । मना यह है कि ऐसे धरररों पर पड़े-लिखे लोच नेताबिरी करने के सिमे
 निरुत जाते हैं । चाहे जिन्दी में एक बार भी नमाज न पढ़ी हो या मन्दिर में न गए
 हों, न धररने स्वबाठियों से कोई हमरवीं की हो धरर ऐसे धीर पर राहात का दरा
 सुटने के लिए वे दूर पड़ते हैं । इससे तो नहीं धररवा होता कि त्योहार बन्द ही हो
 जाते त्योहार जाते हैं इसलिए कि लोच एक-दो दिन लुसी मनाकर रोड धरने बानी
 कुलपटों को भूल भावें धीर धापस से प्रम से पले मिलें । यहाँ त्योहारों में सून बहाना
 जाता है । न बाग का तक देता की यह बसा खैवी । जब तक धूत-भात धीर मेर नाव
 धीर धररिफ पारोड बस रहा है दशा के सुभाने का कोई मीका नहीं ।

३० अप्रैल १६३४

भारत में गुरु-प्रथा

जो तो संसार-भर में गुरु-प्रथा विप्र-विप्र नामों से प्रचलित है मगर भारत की
 ती उदने धरना यहा ही बना गया है । इस विषय पर हाल में लखनऊ विरचविद्यालय

के बादस चान्ससर ही पराजने मे एक धरपन्त ज्ञानबद्ध क भावस दिया । धारने धन्व
 भक्ति और मुक्ति की तुलना करते हुए बतसाया कि प्राचीन हिन्दू जन्मों में गुरु की महिमा
 इतने मुवासने के साथ बयान की गई है कि गुरु को ईश्वर से भी थोड़ा ऊँचा उठा दिया
 गया है । गुरु जो कुछ कहे उसे धीरे बन्द करके शिरोधार्य करना होया । कहीं-कहीं तो
 यह पत्र इतना जोर पकड़ गया है कि जब कोई नव विवाहित बहू जाती है, तो सबसे
 पहिले गुरु जी के घरखों में अर्पित की जाती है । गुरु जी एकान्त मे उसे क्या धारीबाँध
 देते है वह श्री से सिवा कोई नहीं जानता या जानता भी है तो वह गुरु जी की सम्प
 टता नहीं उनकी कृपावृष्टि समझे जाती है । गुरु बनने क लिए यह आवश्यक नहीं है
 कि वह तपस्वी हो बहुत स गुरु तो राजसी ठग-बाट से रहते है लेकिन यदि गुरु स्वामी
 हो समाज और शिष्टता के बन्धनों को तोड़कर फेंक चुका हो और केवल एक-दो प्रंगुस
 की लँगोटी सबाएँ बूमता हो तो उनका बाहु भोगों पर बहुत जल्द धसर कर जाता
 है । यह गुरु जी माया को धरने पाव नहीं पकड़ने देते उसे को ह्राप से नहीं छूते
 पैरों से छुकरा बसे है । और उनके ऊपर माया की बर्षा होने लगती है । फिर वह चाहे
 दोनों हाथा स समेटें लेकिन हाँ त्याग का बोंब बनाने रहती है । मानों वह केवल अपने
 शिष्यों की खातिर से उनकी भेंट स्वीकार कर रहे है, उन्हें तो माया से डर है । यह गुरु
 जी चटपट एक नए पन्थ की रचना कर डालते है । बिसरे द्वारा भक्त भोग सीधे स्वयं
 पहुँच कर आवागमन स मुक्त हो जाते है जो भारतीय के जीवन का मुख्य उद्देश्य है ।
 उस पन्थ के लिए एक नए किस्म का तिलक एक नए तन्त्र की उपासना सीधे निजामी
 जाती है, बिसका धारना इतना ऊँचा होता है कि केवल बोंग बनकर रह जाता है । इस
 पन्थ में वह सब कुछ स्तुत्य बन जाता है जिस पर साधारण ब्रह्मा मे धारमी को मुछा
 जाती है । मुछ्यों के अतिकार कभी-कभी इतने बढ़ जाते है कि शिष्यों को अपनी धाम-
 बनी का एक नाम निबन्धित रूप मे गुरु जी को चढ़ाना पड़ता है । गुरु जी के किसी धाम
 की धामोचना नहीं की जा सकती । और महा यह है कि इन पन्थो मे केवल मूख ही
 नहीं होते बडे-बडे विद्वान धम्म को तार पर रखकर बिचार को दरिया में डालकर
 पन्थ की गुप्त क्रियाधा को सम्पूर्ण धम्म धडा से करते है और उनका विरवान होता है
 कि उन्हें धात्मा क आ मुक्त मिल रहा है, उनसे धम्म सभी धभागे प्राणी बँधित है ।
 संकड़ों की बार इन गुरुओं का अंठाकोड़ हो चुका है । रोज ही किसी-न-किसी गुरु की
 इमई खुसती है पर जनता पर कोई धमर नहीं होता और वह मा गुरु जी का उमी
 धम्म धडा से स्वानत करने को तैयार रहते है । गुरुजी पहिलियों में बाने करते है
 ब्रितके मनमाने धम सबाएँ जा सतते है । धमर उनकी बात मच निकल गई तो पूछना
 ही क्या ! उनकी अमकार शक्ति की घुम मच जाती है । धिप्या हो गई तो वह भी
 उठनी ही धाराणी न मलय मान ती जाती है । गुरु जी में बुध-न-बुध धनोत्पादन होना
 परमाधरपठ है । धमर वह केवल मूख पीयर या केमे गाऊर या राख फँडकर रह गये

तो समय से कि वह देखा हो गए । कहीं-कहीं पर पीहारी मुक भी पाये जाते हैं जो केवल हवा पीकर रहते हैं । और धरत मुक को धरत भी मोल सजते हैं और कुछ मनचले भी हैं, जो वह योरोप और अमेरिका जाकर और भी वन और वन कमा सजते हैं । मालूम नहीं ऐसे पुरुषों का कमी घन भी होया या नहीं ।

अक्टूबर १६३४

स्वास्थ्य और शिक्षा

जो तो हमारा शिक्षा क्रम दोषों से भर गया है लेकिन हमारे विचार में हममें सबसे बड़ा दोष जो है वह इसकी स्वास्थ्य की ओर से उदासीनता है । धारमों के लिए दुनिया में जिम्मा रहने और काम करने के लिए जिम्मेदारी और इतिहास और संकड़ों पराम्ना विषयों की इसी बखरत नहीं मिलनी इस बात को कि हम कैसे स्वस्थ रह सकें । मरीजा यह ही रहा है कि हम धरत मस्तिष्क का बोध तो भर लेते हैं मज्जिन स्वास्थ्य की ओर से धीमा लिए हो जाते हैं । हमारे अधिष्ठत शिक्षित लोग बसले-ठरते रोय हैं । किसी को धरती का रोय है, किसी को बड़कन का । और इम्बिटोज तो इतना ग्यारक हो गया है कि कुछ न पूछिए । इसका कारण यही है कि बचपन में हमको स्वास्थ्य का महत्व नहीं समझया गया और हममें ऐसी धार्ये बनने की जेठ्या नहीं की गई कि हम अपनी सेहत की रक्षा कर सकते । और बचपन या बचपन होने पर बच सेहत और उन्मुस्ती का महत्व समझ में आना तो सुझी नार में पानी डालने से बरा हो सकता है । यह साब झोकाया जाइए या पीलिए, जाक विटामिनों के पीछे पीछिए, सेहत हान नहीं आये । हमारे बचपन में विभिन्न स्कूलों में 'तरीक उन्मुस्ती' नाम की एक फिटाब पडारी आती थी जिसमें हवा पानी रोतनी आदि पर छोटे-छोटे पाठ दिए गए थे और धार भी हमारी प्राप्तिरी रोहों में सेहत समझनी पाठ दिए जाते हैं, लेकिन बच्चों को यह सबक ठीक तरह पड्याए जाते हैं जैसे ब्याकरल या इतिहास । बन्दि ब्याकरल और इतिहास पर ब्याग और विद्या जाता है; कबोकि इन विषयों में केन ही जाने से नइके फेन हो जाते हैं । सेहत के पाठ केवल आया की दृष्टि से पड्याए जाते हैं और उनका जो मुकन बर्रम है उसकी परगाह नहीं की जाती । कुछ तो परीषाधों का निम्नता इतना जाक है कि धारों को हम मारने को फुरमत नहीं मिलती । और कुछ हमारी उदासीनता है, जिसके कारण जनता में इन धार्योजन को धोरों से उठाने की मुम्कनी ही नहीं । हमारा नइका एम ए की डिग्री लाए, फिर बाहे वह धार्यो की ज्योति क्यों न की बँडे और मन्गिन का रोय क्यों न पास ले । यह हमारी मनोबलि है ।

बहु विचार धार और पर फेना हुआ है कि लघीर और सेहत को बसधान बनाने

के लिए की कुछ मकलम धीरे में के का होना मान्य ही है। हमारे दिग्गज ही मुकलम धन
 धार्मिक कठिनाइयों से रतन निराश धीरे उत्साहहीन हो जाते हैं कि किसी प्रकार
 ब्यापार से उन्हें रक्षित नहीं रहती। बचपन से क्या फायदा जब पुष्टिकारक मानव ना
 मिमता? कसरत तो ठक करें जब प्राप्त-वास वायाम का हनुमा धीरे कुछ मिसे धी
 में के मिलें जाने म भी मलाई धीरे भाँस भरपुर मिसे। लेकिन उन्हें खबर नहीं ध
 दिन-दिन विज्ञान द्वारा यह साबित होता जा रहा है कि मामूली सारे जाने म धी
 मानुषी धान भाबी में शरीर के पोषण करने की शक्ति किसी तरह भी की कुछ म
 मनों से कम नहीं है। हाँ धपर हम उनका ठीक ठीर से व्यवहार करना जानें। जब
 हम पञ्चाननस इन पदार्थों का मुफ़ीद हिस्सा फेंक दें तो यह हमारा दोष है, उन बीज
 का बोध नहीं। खुरी तो यह कहकर होती है कि विज्ञान भी होने उनी तरह से जा रह
 है बिना हम पहले से जब रहे है। हमने नई सिखा पाकर गरीब जातियों की मजदूरी
 उन बीजों का व्यवहार करना छोड़ दिया जो हथारी भोजन सामग्री को पुष्टिकार बनाती
 धी धीरे नई-नई सामग्रियों के फेर म पड़ गए ध किन्तु धोरप के व्यापारी मन्वे-मों
 विज्ञापन दे-बकर हमारे सामन जाते थे यह धोबस्टीन है, यह कबकर भाट यह मास्टे
 मिस्क है। बस सारी दुनिया की पीपुलक शक्ति इनम गरी हुई है। जिस मुकलम को
 देखिए इन्ही इस्तिहारों बीजों के फेर म पड़ा हुआ है, लेकिन सब सिद्ध हो रहा है कि
 हमारे मुकली-माजर धीरे पापक-बचपु में जो पीपुलक पड़ाव मौजूब है वह इन बहु प्रसिद्ध
 सामग्रियों म हो ही नहीं सकते। कुछ धमीरी का धमिमान धीरे धपनी रक्ष धरे मफासत
 भी हमें पचझल करती है। हम गुड़ नहीं खा सकते जिसम पुष्टिकार तत्व भर पड़े
 है। हमें तो रतकर जादिए जितनी माफ हो सतनी ही धखी। यह धम फेला दिना
 गया है कि गुड़ या लौड़ जाने से फोड़ निकसते है। मया बाबक भी हम नहीं पाते।
 हम उसे जितना ही पुपना करके ताण जतना ही हमारी कम्पना प्रसन्न होती है। वह
 ऐना रिक्तत हुआ होना चाहिए जैसे बने का फूल। यह हम धूल जाने है कि वह जितना
 ही पुपना होता जाता है धीरे जितना धीरे उरका पास्त्रि किया जाता है उतना ही
 निस्सत्व होता जाता है। गेहूँ के विषय में भी हमें कुछ ऐस ही धम है। हम महीन से
 महीन मैदा माना धमीरी की शानत ममकने है मोटा घाँटा जाना पैबाकन है धीरे
 धमका जोकर ता काई पचा ही नहीं सतता। मया जोकर धीरे धान की बीज है। लेकिन
 सब विज्ञान के मिश्र हा रहा है कि गेहूँ का मबसे बहुमुष्य भाग उतना जोकर है, जा हम
 फेंक देते है। दापून की बस धीरे टूपेस्ट पर बहुत पहले जोग हो चुकी है मगर हम
 धभी तक इन धम म पड़ हुए है कि इतस हमार बीत मजबूत होत है।

मगर उरकत बड़ा धनध वा उन धमाम से होता है जो हम धपनी इन्धियों क
 धामाधिक व्यवहार क विषय म है। निशाधपस्या म जब बीजन का विनाश होत सतता
 है, हमारे जितन ही बाजार धज्ञान के बारत धपनी इन्धियों का दुरयोग करके धपनी

सेहत और देह दोनों ही का ध्यान कर बैठते हैं। उन्हें बिल्कुल खबर नहीं होती कि वह दुष्मन्तों में पड़कर अपने जीवन की किस निष्पत्ता से अब खोर रहें हैं। हमारी सभी कर्मश्रियाँ अपने-आपने विशेष काम के लिए बनी हैं। यदि मुँह का काम हाथ से लिया जाय और हाथ का काम पाँच से तो जिम्मा रहना कठिन हो जाय। मगर यही धर्यकार है जिस पर प्रकाश ज्ञान का कोई प्रयत्न नहीं किया जाता। धन्य हमारे हार्ड स्कूला और युनिवर्सिटियों में योग्य विरापञ्जा से इस विषय पर मातृपण करण जार्य तो निरन्तर हमारे विद्यार्थियों में जो गुण रूप से वृत्तचरण होता है वह बहुत कुछ कम हो जाय। जपरत है कि को शरीर शास्त्र का विज्ञान इस विषय पर धन्य के लिए लक्ष्मी सिखा सं थरी हुई पुस्तक लिखकर श्रद्धा का महत्व समझए। उन्हें बतलाए कि तुम प्रज्ञान के कारण अपने माथ कितना धर्याचार कर रहे हो। अगर मत्ता-पिता स्वयं अपने बालकों को यह ज्ञान दे सकत तो और भी धर्या होत लेकिन समाज किन स्थितियों में बना हुआ है उनको तोड़ शकत नहीं है और बहुत से लोग इच्छा होन पर इस मुठे संकोच को नहीं तोड़ सकतें। हमारे यहाँ काम-शास्त्र सम्बन्धी भी पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं वह इन दृष्टि से नहीं लिखी गई हैं उनके प्रकाशकों ने समाज हित के लिए नहीं बन बमान के लिए उन्हें प्रकाशित किया है और ऐसी प्राय सभी पुस्तकों में सीधी राठ विज्ञान की उठमी खेपन नहीं की गई है बितनी बुजुगों को गुण पावनाओं में मद-मुबी सेवा कर देन की। यह नाम कबिया और साहित्यिकों का नहीं डाक्टरों और इहाचारियों का है। इकर कुछ योरोप के विज्ञानों में इस महान् गम्भीर विषय के माय वेनबा बनना शुरू किया है और तरह-तरह की लखर छप्ट और गुमरछ करने वाली तरखाओं का प्रचार करने लगे हैं। इनके साथ ही विद्यार्थियों का भी यह कतथ्य होना लक्षित पबित्र साहित्य धारा जाय। इनके साथ ही विद्यार्थियों का भी यह कतथ्य होना लक्षित कि वे अपने कामका के अस्तित्व का पाटना ही कतथ्य को इतिधीन समकें उनकी धामा उनके स्वास्थ और उनके जीवन का कल्याण भी धन्य कतथ्य समकें।

माघ १६३५

महात्मा जी की जयन्ती

यहाँ हमारे निय परम गौमाय्य का बात है, कि हम राष्ट्र-माहित्य के धन में जर्म रुम धर्यगर पर धा रहे हैं अब गम्भीर देश में राष्ट्रमा मरणा गौमी की पुण्य जयन्ती मनानी जा रही है। हम भी उसक धर्मिनधन में धर्यगी धज्जोत्रति पाण्य करते हैं। राष्ट्र के निचारों में महात्मा जी के व्यक्तित्व में जो जागृति पैदा कर री है, उसे हम ब्राम्पि कर सकते हैं और जीवन का लक्ष्य धारण जैसा धाने राष्ट्र के नामने गगा उसने दी

॥ महात्मा जी की जयन्ती ॥

मानवता को देखने में भी उठना उठा दिया जो हमारी आन्त मानवता की सर्वोच्च कल्पना है। और साहित्य हमारी जागृति के स्वप्न के सिवा और क्या है। अगर हम और संदेहों से हमें गांधी-युग के पहले और उसके बाद के साहित्य में स्पष्ट अन्तर दिखायी देगा। गांधी-युग में जिस साहित्य की सृष्टि की है उसमें कमप्यता है विचारों की स्वतन्त्रता है, जीवन की सरलता है निर्मोक्षता है और सिद्धांतों और धारणों के लिए बलिदान का उत्साह है। 'कमा उला के सिने की जो धनमल पर्चा बस रही थी और धात्र भी चल रही है, और जो कला की उपयोगिता को हास्यास्पद समझती है, उसकी खदान पर संयम की मुहर मय गयी। महारत्ना जी ने साहित्य और कला में उपयोगिता के धारण पर धार देकर उसे माबुछता के यत से निकाल लिया। हमारा तो जयान है, कि किसी वस्तु का सुन्दर होना ही उसकी उपयोगिता की दलील है, अगर वह उपयोगी न होती तो सुन्दर न होतो और इवोभय सत्य भी न होती। हिन्दी भाषा को राष्ट्र भाषा के स्थान पर पहुँचाकर आपने जिस राजनैतिक दूरदर्शिता का परिचय किया है, वह प्राय ही क योग्य है। याब हम भारतीय साहित्य के एकीकरण का जो स्वप्न देख रहे हैं। वह भी प्राय ही के पुण्य आवेष्ट की बरकत है। इसमें दो राजें नहीं हो सकती कि हिन्दुस्तानी भाषा को भारके शुभ वयोग से जो जीवन का प्रकृति जो औरत प्राप्त हुआ है वह अमृतवृष है। आपने राष्ट्र को प्राय देकर जूने को खदान से की है और यदि हमने आपके इन महत्त्वान का अनुपयोग किया तो वह तिन दूर नहीं जब भारत की राष्ट्रीयता साहित्यिक और सांस्कृतिक धारणस्य द्वारा एकप्राय हो जायगी।

अक्टूबर १९३५

प्रयाग महिला-विद्यापीठ की साहित्यिक प्रगति

प्रयाग महिला-विद्यापीठ ने अपने जीवन के इन चौड़े दिनों में जो उपलब्धि की है, उस हम बहुत संतोषजनक कह सकते हैं। जब उन्होंने अपनी खमीन लरीय ली है, जगता मन्धन बनवाना शुरू कर दिया है और कुछ बनवा भी लिया है। उद्योग साजाना लर्ब बलीम हजार के ऊपर है और संस्थापक महीरय की किष्काप्यतारी की बरीमत्त इस राजें का बड़ा भाग केवल छात्राओं की फीम से ही पूरा हो जाता है, प्युनिवर्सिटी का गवर्नमेन्ट के नामने शाय फेमाने की उच्चरत नहीं पड़ती। जो कुछ कमी पड़ती है, वह चम्पे में पूरी हो जाती है। और जब हम देखते हैं कि छात्राओं से बचन घाट शया मास्कार लिया जाता है और जमी में उनके जाने-बीने खमै-महने का इतनाम हो जाता है, बन्दि कुछ ऐसी कामिकाओं की परवरिश भी हो जाती है जो फीम देने में धनमर्ब

है, तो हमें महात्म्य संगमभाष्य भी की प्रबन्ध-कला का अध्ययन होना पड़ता है। विद्यापीठ में कम से कम बर्ष में धन्वी से धन्वी शिक्षा देने का धारणा अपने सामने रखा है। वह बालिकाओं को केवल तीन साल में बर्षाक्युत्तर फाइनेस की परीक्षा के लिए तैयार कर देता है। इनके साथ ही पाठ-कला संगीत व्यायाम का भी प्रबन्ध कर लिया गया है। हम यह संस्कार इर्ष्य हुआ कि यहाँ ब्राह्मण मात्रास धारि प्राणों की कई बालिकाएँ भी शिक्षा पा रही हैं। इससे पताश सुती हम बात से हुई कि यहाँ की विदुषियाँ तिलतियाँ बनकर नहीं पृष्टेवियाँ बनकर निकलती हैं जो जीवन के किरी टोंग में अपने मह-विज्ञान कीदल से अपने लिए फलान बना सकती हैं। दूसरों पर मार न हीकर उनका उबार कर सकती हैं। अब से धीमती महादेवी बर्मा न हम सस्या का सबाजन मार ले लिया है उसकी प्रवृत्ति धीर भी तेज हो गयी है धीर विद्यालय की मसर्कप्रवृत्ता में साहित्य का प्रवृत्त भी होन मगा है। द्विती म पहला महिला-यल्प-सम्मेलन २५ जनवरी को विद्या-पीठ में ही हुआ। धीमती सिवराणी देवी उसकी सभानवी थी। पत्र-पत्रिकाओं में महिलाओं की कृतानियाँ धक्कर निकलती रहती हैं। यहाँ भी महिलाओं ने कई धन्वी धन्वी कृतानियाँ पकी बिनम मोमती कमला जीवरी धीर कमला देवी शर्मा की कृतानियाँ बहुत सुन्दर थीं। जीवराणी की रीलो गम्भीर है। कमला शर्मा की रचना आत्मकव्यात्मक की धीर उसका एक-एक शब्द बाकोचित बिनो म हुआ हुआ बा। एमे सम्मेलना म बहुत गम्भीर साहित्यिक कृतानियाँ पसन्द नहीं की जातीं। यहाँ तो माया धीर भाव धीर रीती ऐसी होनी चाहिए, निमने कुछ सुहल हो कुछ प्रवृत्तता हो धीर उसके साथ ही पढ़ने का इन भी धाकवक होना चाहिए। धानी उससे सभापण का-सा प्रवाह धीर भाव धन्वी होना जरूरी है। सभानवी की के भाषण पर हम अपने धक म विचार करिये।

फरवरी १९३६

प्रयाग महिला-विद्यापीठ की नई योजनाएँ

विद्यने महीने म हमने प्रयाग महिला-विद्यापीठ की एक अपील प्रकाशित की थी। हमें धारा है मङ्गल्य सङ्गमो ने उन पर ध्यान लिया होगा। ऐसी मस्या जो बहिमाओं धीर बालिकाओं की शिक्षा के प्रण की परिस्थितियों के अनुकूल रूप से हल कर रही है, वेमों के लिए मुहताब दा तो लभ की बात है। कई बारणों से धन्वी स्मूर्तों धीर बालिकों की प्रणानी हमारी बालिकाओं के लिए स्वस्फर नहीं माबित हो रही है धीर दितकर हो भी तो बह इतनी महीनी है कि साधारण गुरुब उमने नाम नहीं पद्य मकता। बह तो सम्पन्न लोगों की ही बीज है। महिला विद्यापीठ बहून् बोरे धर्ष में बालिकाओं की ऐसी शिक्षा देना है। बिनमे उनमें विषम जागृति नहीं धा जाती वे भर

के काम-बंधे में भी होशियार हो जाती है। इस मास उसने एक ऐसी योजना निराली है, जिससे हिन्दी मिडिल-पास सङ्कियों केवल तीन साल में एडमिशन की परीक्षा पास कर लेयी और नामक ट्रेनिंग विद्युपी तथा बिहार परीक्षा-पास सङ्कियों केवल दो साल में। बिद्यापीठ का सबैब से यह उद्देश्य रहा है कि स्त्रियों और कन्याओं को कम से कम समय में अधिक से अधिक ज्ञान मिले और यह दोनों योजनाएँ इसी उद्देश्य को पूरा कर रही हैं। इस वकत एडमिशन पास करने में स्त्रियों को बिहार या मिडिल पास करने के बाद पाँच साल लगते हैं। पाँच साल का काम जो बिद्यालय दो ही साल में कर दे वह सङ्कियों की शिक्षा को कितना सरल और सुगम बना रहा है, यह स्पष्ट है। और माहवार एक कुम्भ पत्रह रूप्य जिसमें पचाई होस्टल जीवन धारि सब शामिल है। अभी सिर्फ १५ १५ सङ्कियों के लिए यह बात इतना किया गया है। जो माता-पिता इस प्रकार से साम उठाना चाहते हों वह बिद्यापीठ के रेजिस्ट्रार से पत्र-व्यवहार करके अपनी सङ्कियों के लिए आवह रिख कर सं।

अप्रैल १९३६

महिला-जगत्

मिस्टर हरविलास शारदा का नया कानून

सामाजिक प्रश्नों में हम सरकारी हस्तक्षेप के पक्षपाती नहीं थीं हमारे विचार में विवाह की व्यवस्था का कानून बाँटी करके हमने वह काम कानून से किया था जगता के विचारों के सुधार से ही हो सकता है अगर विधेयकों को अपने स्वयंसेवकी पति की आज्ञावाद पर अधिकार दिखाने का जो विधेय मि. शारदा पेश करने का रहे है उससे एक बड़े मापी सामाजिक धन्याय का परिशोध होना । हिन्दू समाज ने अपनी देविता के माथ बहुत दिनों खुल्ल किया थीर अब उसे हम खुल्ल की जड़ कोटने में विजय न करना चाहिए । हम चाहते हैं, मि० शारदा के इस विधेय का देश स्वागत करेगा ।

जनवरी १९२१

नारी-जाति के अधिकार

यों तो भारतीय नारी सर्वत्र कुम्भेकी समझी गयी है थीर उसे समाज में पुरुषों से ऊँचा नर प्राप्त है किन्तु धन्याय कारखो हैं जिनकी विवेचना करने का यह अवसर नहीं है उनका स्वागत भी हो गया था । वह मन्दबुद्धिता जिनने एक थीर पराधीनता की बेड़ी पाँव में बसी कुमरी थीर नारी जाति नर समाने अज्ञानकार करती गयी । अज्ञान-नीच का ऐसा संज्ञानक रोप कैला कि उसने समाज को ही धिम्प-निम्प कर दिया । बलिष्क स्त्री-मुरप में भी नैर शक दिया । पुरुषों ने नारी जाति के स्वत्वा का अग्रहण करना शुक किया लेकिन उन्नीयता थीर सद्बुद्धि को जो कहर इस समय घासी हुई है कद् इन समय जेहों को मिटा गली थीर एक बार फिर हुआती मसतारें जती ऊँचें पथ पर भाकद् होनी को उनका हक है । भारत अपनी माताघों का सर्वत्र भक्त रहा है । मातृ पूजा उसके पथ का एक मुख्य ग्रंथ है । क्या आज अपनी माताघा हाउ विजयी होकर वह नारी-जाति के स्वत्कों को स्वीकार न करेगा ? भारत के कतन-काम में जब पुरुषों को अपने ही ऊँचर विरवाग न का कद् स्थियों पर क्या विरवाग करती पर इन एक वर्ष के ससमाह-संध्याम ने सिद्ध कर दिया कि भारत की देविता अब भी पथ थीर कतम्य की गयी पर अपने को होम कर खचती है । यदि पुरुषों को अब भी उन पर शासन बनन का उम्मा हो तो जमे शीघ्र से शीघ्र दूर कर देना चाहिए, क्योंकि वह बात है या न है देविता अपने स्वत्कों को खेनर ही रखेगी । उन्हें हर एक स्थिय में पुरुषों के समान

प्रबिकार होगा चाहिए और इसका निर्णय देवियों ही पर छोड़ देना चाहिए कि वे अपने हितों को स्वयं चालें से हों। हमारे विचार में निम्नलिखित विषयों पर नारियों को असतोष है और इस असतोष की देवियों के इच्छानुसार ही समन करना पड़ेगा—

१—एक विवाह का विषय स्त्री-पुरुष दोनों ही के लिए समान रूप से सामू हो। कोई पुरुष पत्नी के जीवन-काल में दूसरा विवाह न कर सके।

२—पुरुष की सम्पत्ति पर पत्नी का पूरा अधिकार हो। वह उसे रख-बच को कुछ चाहे कर सके।

३—पिता की सम्पत्ति पर पुत्रों और पुत्रियों का समान अधिकार हो।

४—तलाक का कानून जारी किया जाय और वह स्त्री-पुरुष दोनों ही के लिए समान हो।

५—तलाक के समय स्त्री पुरुष की भाँचो सम्पत्ति पावे और यदि मौजूदा सामान्य हो तो उसका एक घंटा।

फरवरी १९३१

तलाकों की संख्या क्यों बढ़ती जाती है ?

मारोप के एक विद्वान ने तलाकों की घीमाँसा करते हुए एक बड़े पत्र की बात कही है। वह कहता है कि ज्यों-ज्यों कुश्म उपायों से सम्मान निग्रह की प्रथा बढ़ती जा रही है, तलाकों का रिवाज भी बढ़ता जाता है। सम्मान के लालन-पालन में माता-पिता के बीच में स्नेह की एक कड़ी बनी रहती थी। विवाहिता की ओर उनकी दृष्टि अधिक न होती थी। अपनी सम्मान के लिये दोनों पक्षों से परस्पर संयम और त्याग करते थे। सम्मानों का निरोध करके अब स्त्री पुरुष दोनों ही विवाहिता में दूबे जा रहे हैं और विवाहिता महिष्णु नहीं होती। दुःख की कठोरता उनके लिये अनिवार्य है। दुनिया कुन्हे में जाय हमारे ता बँद में कटती है जब तक वह मनोभाव न हो धारणी विवाह में रह हा ही नहीं सख्ता। फिर मानुष में माता की सार्वभौमिक और मातृमय शक्ति का बड़ा भाग वर्ध हो जाता था। पुरुष की भी बाध्य होकर इस उत्तरदायित्व का कुछ न कुछ भार सेना ही पड़ता था। अब तो स्त्री-पुरुष दोनों ही विवाह में मुक्त होकर विवाह में दूब गये हैं। विवाहिता का पोषण नवीनता ही में होता है यह सारी हुई बात है। ऐसी वशा में तलाकों की संख्या न बढ़े ता नया हो।

अगस्त १९३०

सिनेमा स्टारों के अर्धनग्न चित्र

इंग्लैंड के एक धंधेमी पत्र ने एक दूसरे धंधेमी पत्र को इमपिये जोर को फटकार बताया है कि उसने एक 'सिनेमा-स्टार' से उसका जीवन का अनुभव मिथ्याकर प्रकाशित किया है और इसे 'नग्नता' कहा है। भारत में भी धंधेमी पत्रों को देखा-देखी इंग्लैंड की मनोबुद्धि बढ़ती जाती है जिन स्थितियों का जीवन इतना गुलाब-रस है कि कोई भ्रमा धारणी धंधेमी लड़की को उसके साथ एक पिनट के तिन भी छीड़ना पसन्द न करेगा बहो स्त्री सिनेमा में एकस बनते ही देखी बना भी जाती है और इन्हीं पत्र में उसके चित्र छपते हैं। इनका प्रसंग की बल्लो है और यदि वह अपने जीवन के मनमनी पैदा करने वाले कुत्तों-मिठे लो उये बड़े रूप से प्रकाशित किया जाता है। हमारे विचार में मयाचार-मनों का कर्तव्य केवल जनता में सजगनी पत्र करना और उनकी मनोबुद्धियों को विपाक करना नहीं बल्कि उनमें स्वस्थ निष्कर्षक सुबधि उत्पन्न करना है। हममें सदेह नहीं कि हम कुछ का पावर करना चादिए, चाहे वह कबीर के शब्दों में बिलन ही 'मयावन ठौर' में बसा न मिले भोजन धधकन स्थितियों का निमज्जता पूरा चिन्म बीच कर जनता में दुस्सित जागनामों को उत्पन्न करना अथवा उनके लज्जालयद चरित्र खान करके पाठकों में कुवासना को अथवा भारतीय धारा के विच्छेद ह।

अगस्त १९३२

गाजीपुर के को-आपरेटिव सम्मेलन में संतान निग्रह

पत्र की सचह माच का गाजीपुर में प्रांतीय को-आपरेटिव-सम्मेलन हुआ था। उसकी रिपोर्ट हाल में प्रकाशित हुई है। स्कोइल प्रस्तावा में एक संतान-निग्रह के विषय में भी था। को-आपरेटिव में एत विषय भी शामिल है यह एक नई बात है। शासन इस प्रस्ताव का मशा यह हो कि देश की जनसि के लिये बहुरूप-यानन करना धावरयक है पर प्रस्तावक महोदय को शासन मामुम नहीं कि संतान निग्रह और बहुरूप-यानन को मिन भीरें है। बहुरूप सन्धि बहान बायी सापना है, पर संतान-निग्रह दुबल करने वाले इधिम सापनों के मजानीसति को रोचना है। हम इधिम संताप-निग्रह से केवल भाषणिया ही की बृद्धि शोर्ता है। यूरोप में संतान निग्रह का सूब प्रचार हो रहा है भोजन उभवा जन विभासिता की बृद्धि के निशा और नुच गयी है। संतान बृद्धि और बहु भी दरिद्र देश में विद्यमान है भोजन उभर प्रतभन के लिये इधिम सापनों का प्रचार और भी बड़ी विद्यमान है। उभका मजमम उभर केवल बहुरूप है।

अक्टूबर १९३२

महिला-समाजों में संतान-निग्रह का प्रस्ताव

'संतान-निग्रह' का अर्थ है कुलित शाबनों से संतान की उत्पत्ति को रोकना । इसके स्वाभाविक साधन भी हैं, पर यह शब्द उस अर्थ में प्रयुक्त नहीं किया जाता । सभी साम-यो-साम पहले यह केवल एक वार्षिक प्रश्न था पर इतने ही दिनों में इसने एक सार्वजनिक समस्या का रूप धारण कर लिया है । और चूँकि गंतल का पालन-पोषण महिलाओं ही को करना पड़ता है और संतानोत्पत्ति की वृद्धि बेचनाएँ महिलाओं ही के हिस्से पड़ती हैं इसलिए इसके प्रकार की अपनी प्रायः हर एक महिला-सम्मेलन में उपस्थित होने लगी है । अथवा हय भूल नहीं रहे हैं तो हाल में होने वाले कराची और पंजाब महिला-सम्मेलनों में यह प्रस्ताव पेश होकर स्वीकृत हुआ है । इसके पहले कैम्ब्रिज सम्मेलनों में भी यह प्रस्ताव स्वीकृत हो चुका है । एक समय का जब संतान को संसार की सबसे बड़ी विभूति समझा जाता था । संतान के लिये नाना साधनाएँ की जाती थी और जब संतान मानवीय जीवन की विपत्ति समझी जा रही है । इसका कारण है, वर्तमान धार्मिक संधान । जो परिवार कुछ दिन पहले पचास व म सुख का अनुभव करता था उसके लिये अब दो सौ व की बकरत है । अब हम यह क्षणीय दुःख नहीं देख सकते कि चाहे हम एक बच्चे का पालन पोषण अच्छी तरह नहीं कर सकें पर हमारे के लिये बेबी-बेवताओं की अनिष्टिर्वा करते रहें । स्त्री चाहे अपनी बात से मर रही हो पर बच्चों से अपना रक्त चुसाती रहे । यह सब तो ठीक है । लेकिन इस निग्रह की छाड़ में अन्तर मिश्रित विषय भोग की व्यासधिनी हुई है तो समाज के लिये निग्रह उस्टे और हानिकर हो जायगा । वही संतान-निग्रह का बहुत प्रकार है वही संतानों की भी अरमार है और समाज-शास्त्र के पंडितों का मत है कि दोनों में अविष्ट सम्बन्ध है । अथवा इस निग्रह का एक यह होता है कि हम अपने कप से विषय-मोम में पड़ जायें तो यह समाज के लिये आतीर्वा की अग्रह शाय सिद्ध होया ।

नवम्बर १९३०

मिस मैयो की आत्मा एक पारसी महिला के वेष में

मिस जार्जिया सोहराबजी बार्-एट-आ एक पारसी महिला है जिने विषय में कहा जाता है कि उन्होंने मिस मैयो की अस्मिता रचना 'मिस इंडिया' के लिये गावदी देवर भारतमाता की सेवा की थी । अब हम यह कर्तुं हुए शर्म जाती है कि उन्हीं मिस सोहराबजी न इंग्लैंड में भारतीय महिलाओं के विरुद्ध प्रोपोगैंडा शुरू कर दिया है । विषय मिसा संघ के एक नाम अन्तमें म चलने भारतीय महिलाओं का इतने अग्रवास्तव

सभ्यता में मजाक उड़ाया कि क्याचित् मिस मेयो को भी इतना साहज न होता। मिस
 सोहराबजी जैसे दरजे की शिक्षा-वाप्त महिला है, हम यह मानते हैं। लेकिन शायद उन्हें
 भारतीय दृष्टियों से मेन-बोस का कमी खबर नहीं मिया और उनका ज्ञान मुनी-मुनाई
 बर्तों पर है। संभव है उनके बिबेसी रहन-सहन और भाषा-विचार के कारण ही
 भारतीय घरों में उनका प्रवेश न हुआ हो। या हुआ भी हो तो उन्हीं लोगों में जो
 स्वयं भारत के लिये कथन-स्वरूप है। लेकिन अगर मान लें मिया काय कि उनके
 कथनानुसार भारत की लिये में बुराईवाँ नहीं हुई है। तो उनका धर्म वा कि वह भारत
 में आकर अपनी बहनों का सुधार करतीं पर धारको जहर उभरने ही न मजा घांटा
 है। अगर वहाँ भी ऐसी सभ्यता घांटा मीनू की जिनसे वह उपहार न मुना तमा
 और दो बहिन महिलाओं न बनीं ऊँचे होकर मिस सोहराबजी को ऐसी गरी-नारी बार्से
 मुनाई कि सापट उन्हें सब जिनो समाज की निम्न करन का साहज न हो। बहिन
 निम्न करने में नहीं है। इन्होंने न जिनो का मान ही होता है न धार ही। जिनको
 प्रमत्त करन के लिये मिस सोहराबजी यह कीचड़ उघाल रही थी उन्हीं में धारम में
 बैठकर उनके इन व्यवहार की धारोचना का होयी। भारत को परिचयी जीवन और
 सम्पत्ता का धर्म बोझ बहुत धनमय हो गया है और धर्म वह किसी ऐसे स्त्री या पुरुष
 का नग्न स्वीकार नहीं कर सकता जिनने परिचयी सम्पत्ता धारिजात कर ली हो और
 समझता हो कि धर्म उसे धारो उभरने को नीचा समझन का धारिजात है।

नवम्बर १९३२

भारतीय महिलाओं में नवीन जाग्रति

भारतीय महिलाओं में अपने जागृज्य व निष्ठ कर लिया है कि वे समाज के क्षेत्र
 में पुरुषों से बिल्कुली धारो निष्पक्ष नहीं है। विरोध कर जिन बंधनों से पुरुषों ने उन्हें जकड़
 रखा था और उन का सामन करने व उन धारिज्यों को तोड़ डेकरने के लिये वह बहुत
 निष्पक्ष हो रही है। धारदा-विम से मुक्तमानों की एक बड़ी संख्या का तो धारिजित है
 ही हिन्दुओं में भी कुछ ऐसे पुरुष हैं जो उनका विरोध करते हैं पर स्थितियों में जिनमें
 मुक्तमान विज्ञा भी शामिल है एक स्वर से इन विम का स्थापन किया है। तसाक का
 विम धारो बालून का रूप नहीं भारत का समाज और हिन्दू पुरुषों में धारो इन समाज्या
 पर बहुत बतमेर है पर हिन्दू धारिज्याएँ उन धर हर एक महिला-गम्येनन न धारो देती
 है। धारिजित धर्म में भी महिलाओं में अपने परिष्कृत तद्विचार का धारिजय लिया है।
 वे धारिजित निष्पक्ष विचार धारिज्या है धारिज्या या लिये की बोर् की उन्हे पण्ड
 नहीं और राष्ट्रीय एषता का तो जिनने धारों में निष्पक्षों में हरेक धारिजय पर धारिजय

निया है, उस पर बहुमत से हिन्दू और असमान पुस्त्या को सज्जित होना पड्या। जिम महानुभाषों को हमारी बेबियों की बिचारशीलता पर छुदेह का उम्ह सब धपन बिचारों में तरमीम करनी पड्यगी। भारतीय महिलामार्ग ने धर की बारीबारी क धपन बिच तरह धपनी बचवा प्रमाणित की है उसी तरह राष्ट्र के बिलुत क्षेत्र म ब पुस्त्यों से धपने रह्यैनी।

दिसम्बर १९३०

बालिकाओं का सुकार्य

गठ स्यारुह निम्ब्वर रबिवार को स्थानीय क्यागल हार्ड स्कूल में धार्य-क्या क्यायम मन्विर बडीबा की क्यागो का गया लम्भ डिग्दी तलवार धुरे, धातन तथा धाय क्यायम देलकर हम बड़ी प्रसन्नता हुई। बालिकायें सभी पुर्तीनी कपन सिबित तथा बच भी। उमक बेहरे से पबिकता सक्परिपता तथा समय प्रकट हो र्छा था। उनका परका मास तस्कृत म कवनापकवन को सडकियो का क्याबतन उनकी सिधा को व्यक्त करता था। इससे यह साठ मानुम होता है कि उम्ह क्यायम के साब मानसिक सिधा भी बाली ही जाती है। ध बप की उम्र को सडकी कानंज म धर्ती की जाती है और यह सोमह कर्प की उम्र म बिदुपी स्वस्व तथा धारम-रचा के योग्य होकर बालक से निकलती है। क्या जो कुछ नहीं केवल बायु काया मानिक पडटा है। ममात्र का एक धंग बहुत ही दुबल होन के बायु ही हम इतनी हीन क्या म है। हमार यहाँ की पुपन बमाने की सबासियो रचधन म शान का धामना करती थी पर धारकन की सडकियाँ धपन स्वतन्त्र्य की रचा नहीं कर सक्ती उनकी सखान भी बापुर्य और दुबल पैवा होती है। इन बहुत बड़ी कमी को यह बिद्यालय पूरा कर रहा है। और इमी वर्सम के प्रचारक कुछ सडकिया की सेकर ब भारत धमल क निवे निरने है। हा इस मरइत के सनुधोय म पुर्ण सफलता की बामना करत है।

दिसम्बर १९३२

इंग्लैंड का नैतिक पतन

भीमठी निम्न वोजन म 'मण्डल म इंग्ली' का जिम सामाजिक बसा का बिच सीबा है उसी हेगतर हम धबाब रू जात है। सब तरफ हरेत मात म इंग्ली-हकार धारण का और सब भी है। हम धपनी रीति-नीति म लगी का धनुगरण कर रहे है। हमारी धरनीतिक और सामाजिक सस्थाएँ इंग्लीड की सस्थाओं क मयन पर ही निर्बाध

॥ बिबिय प्रसंग ॥

की जा रही है। घोर बातों में जाते हममें मतभेद हो लेकिन अल्प के नियम में हम ईपसीड के पूरी तरह कायल हैं। लेकिन उक्त महिला ने जो धिक् सींचा है वह बड़ा ही रोमांचकारी है और हम अतापनी देता है कि पारबास्थ की नकल करने में हम बहुत विचलित हो काम सना होगा। धाप मिलती है—

'घातकण होटलों घोर विधाम मुहा म हू' करने की बर्मान धीर बोधबाजी देखी जाती है। राज ही एसी तबरे घाली है कि घात फलौ होटल के मेजर को अरका दिया गया कम उस होटल के मानिक की। अरुतर बोधेबाज होटलों में घाने है कई दिन टहलते हैं और नकली अक देकर भाग जाते हैं।

वहाँ के दरिजों की बसा का वलन बड़ा ही कफलाजक है। घान मिलती है— 'ललिन टाका पीड़ितों की दशा। मने उन लरिजां का जो उरका करल-करते अकमरे हो गय से अरुतन देखा वा जो ईपसीड के हर एन भाग से अम्मिलित फल घापे से इन मुसमरों के जुमूय को देखन के लिये फिना ही महिमाएँ मोटरा पर बैठ कर घाई थी। उरु उनकी दशा पर अरारणय वा पर दया न थी। वे हूसे लमरुता मममनी थी। व इन दरिजों को अचना अम्मल-बीअव दिना कर उनकी घाई में अकाशौय वापने के लिय ही टाप' अघनी मङ्कीली मोटरा पर अडकर तिलमिया की तरह इपर-उपर बूम रही थी। ओह! वे अमीर कहमाने जाने विलाय-ग्रिय लौच विलने कूर हो मरते हैं। मनुष्य वा मनुष्य के प्रति यह अ्यबहार अस्पना म भी नहीं पर सकता।

ऐसी दशा में अयर अमीरो के प्रति इय की घान अने तो क्या अरारणय है।

दिमन्वर १६३२

कायस्थ कान्फरेंस

अवकी अयान में कायस्थ कान्फरेंस हुई। कुछ लोम इपर-उपर से आ गए, कुछ अ्यस्तान हुए, कुछ अस्तान पाम अिअ गए और कान्फरेंस का काम मपाठ हो गया। कायस्थों को इन तरह अलने करल मगमम आनीम साल ही गया लेकिन कायस्थ समाज घात भी नहीं है वहाँ आनीम साल पहुँचे वा अन्कि उनकी दशा और भी अरुत हो पर है अहेम वा अगराअर की कुट्टी सब करते हैं। अयर बहो अग्गल जो ममा में मअने अ्यादा विलमते हैं सबसे अ्याअ अरारणय करल है और सबसे लम्बी रकम अकरते हैं। ऐसे अ्यस्तानेन अठअ्यगेन अत्रियायों वा ममाअ पर कोई अयर नहीं पद मकना। अयर अानेो इग ठाल अघनी मङ्कीली की शारी करली है तो अयन सभा म शयेक होअर अरार-अर का रौना रौयेये अलिन कम अर अयके अेने के विचार वा अयर अालगा तो अयन अालाअर के अयतर अज जायेगे। अया हृदय-हीन समाज अिलरै अर्य और अचन

में कोई मेल नहीं जो स्वास् पर धरणी धारमा बेच डालना भी पाप नहीं समझता कभी नहीं उठ सकता । उसका दिन-दिन सब पतन होता जामना धीर एक दिन कोई उसका नाम भी न लेगा । करारबाद को रोक्ने के लिये जो विधान सोचे गए जैसे बहिष्कार निकेटिंग या सड़कों की धोर से विबाह से ईकार, इनमें से एक भी सफल न होगा । धरम मुबकों म इतना धारम-सम्मान होता तो रोना काहे का बा । यहाँ तो बर अपने पाप से भी दो क्यम जाने हैं । मोटर का ठकावा नहीं करता है ईमपीएड जाने के लिये चर्च की माँग बर ही करता है । जिस समाज म ऐसे निमज्ज पुण्याध्वीन मुबक हूँ वह बहुत दिन बीतित नहीं रह सकता । हमें तो धारम कायस्थ समाज म एक भी उदाहरण नहीं मिला यहाँ लेन-देन का वृद्धित व्यापार न हुआ हो । कहीं राह खच के रूप म कहीं सिखा के चर्च के रूप म कहीं मयाँश-रखा के बहाने से रुपये उँठे जाते हैं । बेचारा बर का पिता अपने संबंधियों के दबाव से मजबूर हो जाता है । उसकी मिलजुल सता नहीं । वह तो खुद करारबाव से मजबूर करता है, लेकिन मजबूर है ! उसके बहनों धीर फूका धीरामामा नहीं मानते । धारिकर वह ऐसे निकटवासी की जेखा कैंने करे । जिस समाज में ऐसे-ऐसे घूठ हैं उसका रसात्म के सिखा धीर कहीं ठिकाना नहीं है धीर वह बड़े बैप से उस धोर का रखा है । पहले चार-पाँच सौ रुपये धीरत बरजे का ख़ूब बा । अब वह चार-पाँच हजार तक पहुँचा है । जिस बर में दो-तीन कम्पार् धा गई है उस समझ तो उसका सम्मान ही गया । माता-पिता के लिये धर इसक सिखा धीर कोई साथ नहीं है कि वे अपना पेट काटें तन काटें बोबापरी से रूपए लावें । उनका साथ बीबन मारकीय हो जाता है । मगर समाज के मुसिया रकमें बहारते जाते हैं धीर कमी-कमी सभा में धाकर रोते-जाते हैं । अब तो इन धनीति की कोई दबा है तो यही कि बलिभर्यें स्वयं धरना भाव्य अपने हाथ में लें धीर विबाह के बन्धन में उस बस्त तक न पड़े जब तक कोई ऐसा बर न मिले जो प्रेम-भाव से उनके सामने माना न टेके । जब बालिकाओं में वह धारम-सम्मान उदय होया तभी इस जाति का उधार होया । सड़कों धीर सड़कों के बापों को हमने बहुत देखा धीर जगते जाता करना छोड़ दिया ।

जनवरी १९३३

शक उपयोगा प्रस्ताव

परी-निभी जातियों में धरपश्य होतो हुई भी कामस्थ जाति बहुत ही निघड़ी हुई है । इन जाति क सगमग मध्य प्रतिशत सीग मीठरी-मैसा धीर कलम की सेवा करके पेट पालते हैं । इसा कारण जातिमाम दरिद्र धीर धोरों के नौकरी के उम्मीदवारों के डेब का चारण बनी हुई है । ऐसी हालत में जायब ही किनो जाति को धीरोपिक सिखा तथा

उद्योग-जीवी होने को इतनी बखरत हो जितनी कायस्थों को । पुरत दर पुरत लौकरी-वेसा होने के कारण इसकी तरतों में बुलायी कम गयी है, इसलिये घाब बेकारी के बमाने में भी लौकरी के लिये ये धारे-धारे फिरते हैं । इस पर भी तुरत यह कि जो लोप व्यापारी है जो कमल्प व्यापार की ओर लय गये है उन्हें लौकरी निगाह में रखा जाता है ।

कायस्थों के समूह की एक ही रचनात्मक संस्था है—कायस्थ पाठशाला । वह भी केवल लौकरी के उन्मोदकार उजुष्ट ही तैयार करती जाती है । यद्यपि इकर तीन बप से मुंशी हरमन्त प्रसाद इसके नेगर्भन हुए है धीसोपिक-शिक्षा का बहुत प्रबन्ध हुआ है, पाठशाला में काफी उपरति की है फिर भी प्रपत्त निरी काम-बन्धा म है । इस स्थिति में हमें एक सेमोरेण्डम प्राप्त हुआ है । इसके नेजक है विमासपुर (मध्य प्राय) के सम्मानित नामरिष लब व्यापारिक मुंशी रायचन्द्रमाल वर्मा । उनका प्रस्ताव है, कि यदि भारत के दो लो पचहत्तर लाख कायस्थ केवल एक बपया एक बार बना ली दें तो वो लो पचहत्तर लाख बपया हो जावे और इस बपये से इतने अधिक कारणसे लोमें वा सकते हैं, कि दो लो पचहत्तर लाख कायस्थ कुम लौकरियां प्राप्त कर अपना वेत भर सकते हैं । ये कालकाली ही नहीं किन्तु बहुत ही उपरत हो जावये । इन प्रपत्त को प्रारम्भ करने के लिये वे अपनी ओर से धार्ड हजार बपया केन के लिये तैयार है । प्रस्ताव बड़ा उपयोगी है तथा विचार करने योग्य है । प्राप्ता है लोम इनको मनभावये और प्रस्तावक को सहायता देंवे ।

जनवरी १९२३

सर हरिसिंह गौड़ का तलाक-बिल

। धर्मो बहुत दिन गयी हुए कि तलाक का नाम मुनकर हिन्दू समाज के बाल लड़े ही जते से और उस दोरोप की मध्य समझकर विरलुप्त कर दिवा भारत वा । पर इन कई बयों में बहुत बड़ा सामाजिक परिवर्तन हो गया है और समाज की ग्याल-बैठना बहुत कुछ जानूत हो गई है । अब यह स्वीकार किया जान लया है कि लो और पुण्य दोनों के अधिकार समान होने चाहिए । अभी तो यह लाल है कि पुण्य में लोई मिलने ही बोर ही लोई बहु किन्तु ही लण्ट हा । लक मान जितना ही बरवाचार करे औरत के लिये वहीं लाल लरी । बहु उमदी लबन वेना छोड़ दे लानी लुगरी लारी कर ले किन्तु लो पर उगडा अधिकार ल्यों लल लकों बना रहता है । लो में लय म लो बहु पूरुड ही लमल गलल म लोई हो या बिगी बारल-बल लछने अर्गनुष्ट हा लो ललले लिये लाला लक है । सेलिन पुण्य में विलनी ही लुरलनी हो लो के लिये वहीं लरण लरी । बहु गल्लगी लीति बहुन दिन लती सेलिन अब लहीं लल ललली । अब लो लार का

तलाक़ा है कि स्त्री को भी वही अधिकार प्राप्त हों। सर हर्बिसिंह ने तलाक़ के लिये तीन कारणों का निर्देश किया है—

- १—जबकि पुरुष अश्वस्थित पितृ हो।
- २—जबकि पुरुष को क्रोध की बीमारी हो।
- ३—जबकि वह अपसक्त हो।

स्त्री पुरुष में मनोमात्स्य के धीरे बहुत हैं कारण हो सकते हैं। उनका इस बिल में कोई बिक्र नहीं है। हम नहीं समझते वर्तमान रूप में किसी को उससे क्या प्राप्ति हो सकती है। हिन्दू-विवाह का आदर्श बहुत उँचा है। हिन्दू-विवाह और तलाक़ दो परस्पर विरुद्ध बातें हैं लेकिन इस बात का मुख्य बहुत कम हो जाता है, जब उसके पालन का भार केवल स्त्रियों पर रखा दिया जाता है। विशेषकर जब हिन्दू बेटियाँ कुछ इस बिल की माँग पेश कर रही हैं तो पुरुषों को उसे स्वीकार करने के सिवा धीरे कोई मार्ग नहीं रह जाता। जब तक बेटियाँ कुपचाप बिना किसी तरह का असन्तोष प्रकट किए अपने कर्तों को छुड़ करती जाती हैं पुरुषों के पास अपने को बीबा बने का एक बहाना था। वह कह सकते थे—हमारी बेटियाँ पतिव्रत पर अपनी जान देने वाली हैं कि चाहे पुरुष क्रिपण ही खुश करे उनके मन में कोई दुर्भावना या ही नहीं सकती। अब भी हमारी अभिक्रम बहनों की यही मनोवृत्ति है लेकिन क्यों-क्यों उनमें रिश्ता का प्रचार हो रहा है उनमें अपनी वर्तमान अवस्था से निर्रोह उत्पन्न हो रहा है और तलाक़ की माँग उठी निर्रोह का सूचक है। पुरुषों को अब उनसे समझौता करना होया। उनकी शिकायतों की परहेलना करके अब वे अपने पुरुषत्व को कर्मक से नहीं बचा सकते। यह मत्व है कि तलाक़ प्रथा का दुष्प्रयोग किया जा सकता है। पश्चिमीय देशों में उसकी जो सीधालेवर हो रही है वह हम मित्य अवधारणों में देखते हैं। भारत में भी तलाक़ ने मुकदमों अभिक्रम ईसाई धीरे ऐम्प्लोईडियन बम्पत्तियों की धीरे से ही बाबर किये जाते हैं लेकिन वर्तमान हिन्दू विवाह में तो ऐसी मुद्रास्त्रा या बर्द है नहीं तलाक़ बिल की आवश्यक ही क्या थी।

हाँ इस बिल के साथ इस बात का भी विचार करना आवश्यक है कि पुरुष की जायदाद में स्त्रियों का कुछ अभिक्रम रहे। अन्यथा ऐसा हो सकता है कि नित नए पुरुषों का उस सेनाधी मनोवृत्ति तलाक़ को एक बहाना बना लें।

कुछ लोगों का यह कहना है कि पड़े लिले समाज का एक अल्प भग्न ही इस बिल के पक्ष में है। इसलिए वर्तमान प्रथा में अमर ही ने दो-चार शायदाँ दुष्प्रयोज्य हीती है तो उन दो-चार के लिये सारे समाज को क्यों भ्रष्ट करने की चेष्टा करते ही। उन्हें हमारा यही उत्तर है कि यह बिल उन्हीं दुष्प्रयोज्य बम्पत्तियों के लिये बनाया जा रहा है। मुनी बम्पत्तियों के लिये उस बिल का होना न होना दोनों बराबर है। विधवा-विवाह का बिल पाठ हो पागे से सभी विधवाएँ विवाह तो नहीं करने लगीं। शारदा कानून न भी

तो बाल विवाह नहीं बन्द कर दिया ही उसमें कुछ एकापट प्रचरय डाल ही । सबसे बड़ा कानून बन-मठ है । लेकिन फिर भी ऐसे कानूनों का हमें स्वागत करना चाहिए जिनका उद्देश्य सामाजिक व्यवस्थाओं को दूर करना हो ।

मार्च १९३३

लखनऊ की वेश्याओं में नई जाग्रति

पश्चिम सिन्धु एजेंटों की विन-दूनी रात-बीगुनी बहती देखकर बेरयाओं की आँखें भी खुल ही पयीं । ये बेचारी बस-बस साध तक रियाज करें फिर भी समाज में झुका नहीं खान नहीं । रहनों से निकाली जाती हैं । कोई भसा घावमी बिना अपनी हजबत में बट्टा लगाये उनसे बोल नहीं सकता । सोय उनके साथ से भी बचते हैं । कुछ बर्मीदार, ठासुनेवार बकर उनके कबरदानों में ये धीर बक्कर सेठ सल्लुकारों की महुकियों में मंगसामुखियों का धावर होता था पर इस मन्वी ने दोनों ही का काफिया रंग कर दिया है । धब इन बरीबों का भार कौन संभाले । सरकारी नौकरों में तो इतनी जान ही नहीं रहती । हाँ पानेदार धीर डिप्टी मजिस्ट्रेट बकर उन्हें सरफराज किया करते हैं मगर ये लोग सबसे बेगार में काम लेते हैं । बेरयाओं को उनसे क्या फेद पढ़ूँच सकता है । उबर सिन्धु को एकसे है कि माने में बोड़ा मुद-मुद भा गया बस स्टार बन बैठे । पबिकाओं में उनके बिब निकसने लगे । पोस्टों में उनके बिबों पर लोगों की आँखें बमने लयीं । धब्बे-धब्बे समाचार पत्रों में उनकी एफिंग की टापीकों के पुल बाँधे जाने लगे । यों समझे कि प्रसूत मालों ईसाई हो गया । धब उसे कौन प्रसूत कह सकता है । मब वह साहब है धीर सोय उसे साहब कहे है । तो धब मंगसामुखियों ने सिनेमा पर धावा बीन देने का निरबम किया है । धीर रसिकों के शहर लखनऊ की बेरयाओं ने एक संस्था की सृष्टि भी कर डाली है जिसका नाम होया कि बहु बेरयाओं को सिनेमा क्षेत्र में जाये । अब सजी वातियों में जाग्रति फैल रही है तो बेरयाओं में क्यों न फैलती ? धीर लखनऊ की बेरयाओं में जी बर्तमान युग में बेरयाओं का कैरिटर है । एक बार बहु सिनेमा में बुस जायें फिर बही सोय जो उनके कोरों की धीर टाफना ऐब समझती है तक उन्हें निर्ममित कर धपने को धन्य समझेंगे । उनको तसवीरें बीबान धानों की रोमा बढ़ायेंगी । बहूँ पाड़े से रसिकों तक ही उनकी कैरिठि भीमिठ रहती थी बहूँ एक ही बकत माओं धारमी उनके कसा बीरतल पर मुग्ध होंगे ।

अप्रैल ११-३३

नकदूरी है। इसविषय में इतरकामी करके बोई ऐसा नकदूरी जो लानीमगाऊना ठन्दुग्ग हो
 और विष्णु या बाप क विचार प्रच्छे त्रा मुझे बनाये।

यह जामा साहब गिदारा इष्टी कपटन के पाम गये ही क्या? इसविषये कि
 यह भी साहब और होयत देखते हैं। एसा क पाम ता उम क भी म जाडा। एमे
 मङ्गल का नीत्रिए जिमक मा मार मिषार बुक है। उनरा मगगा हक प्रामे कडाडा
 और वा-वार हवार जो बाप के मके कडा क नाम म बंक म उमा कडा मकी की
 पाम बुक के दीविये। इन जा-दा जामा क ह-बाड म परम भी न जाय। एमे
 दीविए कडा का मगगा और मग्गामित बुक म विवाग्ग क मो का। एम बुवा म
 लडकिया कमी मुयो गही रगी। विष्णुमरा म कडा म एम पुबक विषय का किरिबल
 है विचारणीय है मद्रवाकाची है पर कोई उनका मगगा कडा बाता नही। एम
 मुक्तों में घोट नीत्रिए और उनके माव कडा का पामि-उग्ग क रोत्रिए।

अप्रैल १६३३

औरतों का क्रय विक्रय

महपानी 'नेशनल सोम' को उमरे कतदूरी के मकारशाना म एम एम ए के
 पकड़े जल की लबर का है का औरता का मगगा कडा है। इस पर म क्री प्रीम मो
 मिला। यह सोप प्राम एम क डिना मे प्रीम का कडाकडा म उठारा मने है प्रीम
 मुता मगा साहबगापुर घारि विषयो म बच देते हैं। इस पर म मगी लाल मके क घाडमी
 है मीटिन म जल क म वा बुटित मरगा इतता होशियारी म कडा कने घान है कि
 किमो को लबर म हू। यह सब हमारे किरिब एतन के मरगा है। एम एम ए गये
 है कि घनागाडन के मग्गाम्य एमेक निवगने रहत है यही म कि घानी बहनों
 और बटियो के मरगा मे भी मगाक गरी कडा। उन मरु की मगगा का मगा मगा
 घाडक कडा ही है। बेचारी विम-विम बरवा जाती है। मरुनों की मरुगी मरी मपनी
 किमल ठकाह हू जा रहे है पर लिख बापमी उगा मर गी है मगगाकिया क विवामा
 निवना जा रगा है। कि एमी बागपां नरा म हों और मरा म ककम घाडक हा।
 परमाना का बुग्गकार भी बहूपा मित्रों क पतन का मग्ग एघा करना है किरि
 एमपर तो औरता का मरगा क मग्गाने उनके पर क मग्गो होने है जो पाम ती
 उनको मग्गिचार का मावन बनाते है और पीछे म बरवाया के मर मे उनको पर मे
 निवगन देत है प्रीम बहु मरगां इगी मुटा क हाको म मगी है। बटिना और
 मुग्गा की किरिब है।

अप्रै १६३३

शक दुखी बाप

एक सम्बल जिनका नाम बताना हम मुनामिब नहीं समझते हमार पाप एक पत्र मिला है, जिससे विदित होता है कि धात्रकस धपनी कन्याओं का विवाह करने में पिताओं को चितनी मुसीबत का सामना करना पड़ता है। उक्त सम्बल ने हमसे उन मुसीबत का इत्माज पूछा है। हम इस विषय में उतने ही निस्महाय है, जितने स्वयं बड़ है। हम तो इसका एक ही इत्माज नजर आता है और वह यह है कि लड़कियों को धरणी सिखा दी जाय और उन्हें ससार में धपना रास्ता धाप बनाने के लिये छोड़ दिया जाय उसी तरह जैसे हम अपने लड़कों का छोड़ देते हैं। इनको विवाहित देखने का मोह हम छोड़ देना चाहिये और जैसे मुबको के विषय में हम उनके पत्र भ्रष्ट हो जाने की परवाह नहीं करते उसी प्रकार हम लड़कियों पर भी विस्वास करना चाहिये। एक यन्त्र बड़ मुहिछी-बीबन बसर करना चाहेंपी तो धपनी इच्छानुसार धपना विवाह कर सेंगी अन्यथा धविवाहित रहगी। और सब पृथो तो यही मुनामिब भी है। हमें कोई धविचार नहीं है कि लड़कियों की इच्छा के विरुद्ध केवल कड़ियों के पुताम बनकर केवल इस मय से कि खानपान की नाक न कट जाये लड़कियों को किसी न किसी के गले में डरें। हम विश्वास रखना चाहिये कि लड़कें अपनी रक्षा कर सकेंगी तो लड़कियाँ भी धपनी रक्षा कर सेंगी।

उस पत्र का एक अंश हम ऐसे ही और यद्यपि हम विश्वास नहीं कि उस पत्रकर किसी को कुछ धनर होगी लेकिन कम से कम ॥१॥ संतोप तो हो जायगा जो धपना कुछ दूसरों को सुनाकर होता है—

मैं धात्रकस एक फिकर में मुबतिला हूँ। मेरा खयाल है कि इत्माज धाप के टाट हो सकता है। मुझे धपनी मुयोम्य कन्या की शायी की फिकर है। बड़ा कही भी बाधपीत करता हूँ वही से खयो की बड़ी टावाब की माँग होती है। धापके शहर में ही एक प्रसिद्ध रईस बाबू—रिटामर्ड डिप्टी कमिस्टर है। उन्होंने मुझसे पाँच हजार नकर धामाया सामान-बहेब के मागे। धाप विचार करें कि लड़क पाँच हजार के अमर लयमग बार हजार का सामान और इतना ही अमर चाहिये। अमर किसी घर में तीन लड़कियाँ हुई तो धामे लाल खये उनके विवाह के लिये एक सेना बकरी है। धाप विचार कीजिये कि कापसबो के पाम को नौकरी करके नुबर करते हैं इतने खये कहीं से धा सकटे हैं और फिर ईमानगारी क साथ काम करके कोई भी नौकरी करके इतने खये पैसा नहीं कर सकता। मैं करारबाब क सकत खिलाफ हूँ। मैंने धपने लड़के की शायी में करारबाब मुतसक नहीं किया जिस हूर शकस जानता है। अगर करारबाब करडा तो मुझे भी काछी खये मिल सकतें से लेकिन लड़की की शायी में करारबाब करन को टैवार हूँ क्योंकि

नजबूरी है। इसलिये मेहरबागी करने की ई एसा लड़का जो तालीमयाफता तन्दुरस्त हो और विच्छेद भां बाप के विचार अच्छे हो मुझे बताइये।

यह साक्षात् साहब रिटायर डिप्टी कमिश्नर के पास गये हो क्यों? उनलिये कि बाप भी चाहता और बीमता देखते हैं। एसा के पास तो गम नर भी न जाय। ऐसे लड़कों को बीबिए जिनके भां बाप विचार बुद्धे हैं। उनका स-उरता देकर भाग बगारण और बो-बार हजार जो बाप के मर्के कया न नाम से बंरु म जमा करके पन्को को पास बुद्धे दे दीजिये। इन काउद्यां बाता क न्काय पर कबल भी न जाय। छोड दीजिए कया को सम्पन्न और सम्मानित बुद्धे म विद्याने क मोह बा। एग बुद्धे म सज्जिमी कभी सुयो नही रहती। विद्यालय म बहुत से ऐसे मुश्क विषय बा कस्तिवान् है विचारतीस है यदुस्वाकोपी है पर को उनको मझाता कय बायत नही है। एमे मुश्को से छोट सीजिए और उनके साथ कया का परिप-वहल क राबिए।

अप्रैल १९३३

औरतों का क्रय विक्रय

सहयोगी 'नेशनल काम' को उमरे बालगुर के मबादना म एक एमे एम के पकडे गल की छतर पी है जो औरता का बयापण करता है। इन गम म कई औरत भी भिजी। यह तोय बाय-गाम क विषय से औरता को बहुराकण या उठरण मात है और बुद्धेगार साजबहापुर बाधि जिनो म चल बेते हैं। इन वम म यमी नीक उरें क घासमी है सेटिये न जले कब म मर बुद्धि कयार इतनी होशियारी से कयने कय घात है कि किमी को लपर न हुई। यह सब हमारे कस्ति उतन क सजग है। हम इनत गिर गये है कि घनाशरत के मजबसपर तरीके निदानते रहते हैं यमी लच कि घानी बहनों और बेटियो के बेकन म भी मंशक मही कय। इन छट्ट की बुद्धेया बा मय गगय बादि क बाट्ट ही है। बेकारी विम-विम कयगी जारी है। मजुरा की मजुरो मही पयची किमल उबाह एए बा रहे हैं। पंड-निये घासमी भूयो मर रहे है कयारिया बा विवायत निधला या रा है। किन एमी बादाने बर्त म ही और कयो न कयन माबा ए। परबायो बा बुद्धेगार या बहुबा सिबर्ग क एएन बा बाग्य हुया करता है बरि क बायत तो औरतो बा मबनाश करनान उनके बर के प्राखो होये हैं बा पर्य तो उनको कयिकार का माचन बगते ए और पीछे से बरनामी के मर से उनको पर से निदान बेते हैं और बहु मजुराई इमी दुष्टों के हाथों पड जाती है। कस्ति और मूगता को बनिहारी है।

मई १९३३

वेश्यावृत्ति

मि ई अहमबशाह मुक्त प्रांतीय कौंसिल के उन बचानाम मेम्बरों में से हैं जो सर्वत्र प्रजा-पक्ष की विरोध ही करते रहे हैं। कौंसिल के विगत अधिवेशन के अवसर पर वे श्वेत-पत्र के 'सम्बन्ध' सम्बन्ध में। इसी कारण उनके किसी भी कार्य में अन्धता को यह धारणा रहती है कि वह वास्तव में प्रजा के हित में है या विरोध में पर यह धारणा यह नहीं है कि मि शाह जो कुछ करते हैं वह अन्धता के विरोध में ही होता है। उदाहरणार्थ बेरया-वृत्ति-निवारण तथा सिन्यों की लरीव-विधि रोकने के लिये जो बिल उन्होंने पेश किया है तथा इसी नैनीताल के अधिवेशन में जो 'सेलेक्ट कमेटी' के सुपुर्ष भी हो गया हो वास्तव में बड़ा उपयोगी और धारणापक्ष बिल है। एल्फ-गरिपड ने भी 'ट्रिफिक इन विमेन' सम्बन्धी इसी प्रकार के विधायक बनाये हैं पर न जाने क्यों मि चिन्तामणि ऐसे व्यक्ति भी इस बिल का विरोध कर रहे हैं। इस विरोध में कोटी बलवन्ती ही नहीं है ? मि चिन्तामणि ने इस बिल के विरोध में जो व्याख्यायण दिया था वह उच्छ्वहीन था उसमें केवल नये होममेम्बर की प्रस्तावना को (बिना प्रस्तावना को होममेम्बर ने सङ्घ 'नौटाया' था) और भी मि शाह की खिल्ली। हमारी सम्मति में मि चिन्तामणि धारणा का विरोध केवल बलवन्ती का फल है और यदि यह बिल न पास हो सका तो इसमें भीप उनका तथा उनके समर्थकों का होगा।

जुलाई १९३३

अभागिनी विधवा

कई दिन हुए देहली में एक हिन्दू विधवा ने रैल की साइन पर बैठ कर बाल बेना चाहा। संयोग से ड्राइवर ने ब्रेक लिया और इन्जिन को रोक दिया। जब पौरत को इन्जिन के नीचे से निकाला गया तो उसने यह ककशा में दूबे हुए खम्ब कहे— 'मे नाम विधवा हूँ। मे अपनी जिन्दगी के तम था चुको हूँ। इस दुनिया में नहीं रहना चाहती। तुम लोग मुझे क्यों तप करते हो मुझे मर जाने दो।

और उस विधवा पर धन धारण हरया के अण्डर मे धारिणीय बल रहा है।

जुलाई १९३३

महिला विद्यालयों में बिहारी-सतसई

पंजाब के पत्रों में कुछ दिनों से यह बहुत चिन्नी हुई है कि बिहारी सतसई को महिला विद्यालयों से क्यों न उठा दिया जाय। जिन पुस्तकों में श्रुंवार का मन्त्र और

निम्नग्रह रूप दिखाया गया हो उन्हें सड़कियों से ही क्यों लड़कों से भी उठा देना चाहिए। हमारे पुराने ब्रह्मवापा के धर्मरत्न जिगद्री शापरी का उद्देश्य ही अपने धामपदाचार्यों की लोक-विकासिता और अयुक्तता को उच्छ्रान्त और उभारना था श्रुत्यार वैसे पवित्र विषय को इतना संशय और चिन्ता बना गए हैं कि धाम उन कवियों पर दबा जाती है, जो अपनी मुक्ति की हत्या करने के लिये मजबूर थे। हम यह नहीं चाहते कि बिहारी को स्कूलों से विलक्षण उठा दिया जाय। बिहारी न कविता के धारणा में ऐसी अंधी उड़ान को है और ऐसे-ऐसे अछूते और नाजुक समाज पैदा किये हैं कि उनसे अचित रहना साहित्य के एक बड़े धान्य से वंचित रहना है। लेकिन स्कूलों के लिये बिहारी का एक सुख एरीरान होना चाहिए जिसमें से कुर्याचपूर्व होई निकाल लिए जायें जाये कवि ने उनकी रचना में कलम ही क्या न तोड़ ही हो। देव और मठिराम और पदाकर प्राणि की रचनाओं के भी स्कूलों एरीरान निकलना चाहिए। हम नहीं समझते कोई अस्वापक या अस्वामिक युवकों या युवतियों के सामने उन बच्चों या कवियों की स्वास्था कैसे कर सकती है जिनमें बूट-बूट कर रचित रहस्य भरा हुआ है। इंग्लैंड में कुछ धर्मनिकों का प्रस्ताव है कि युवकों और युवतियों के लिये रचित टिक्क स्कूल बाने जायें। इन श्रुत्यारी कवियों को ऐसी स्कूलों में विशेष रूप से स्थान मिलना चाहिए।

सितम्बर १९३१

प्रयाग में महिला व्यायाम मन्दिर

प्रयाग महिला विद्यापीठ ने महिला व्यायाम मन्दिर यत्नकर बड़ा सामाजिक उपकार किया है। हमारे विरले हुए स्वास्थ की रोग-बाध जितना महिमाएं कर सकती है और कोई सक्रिय नहीं कर सकती। इन व्यायाम मन्दिर से यह धारणा तो नहीं की जा सकती कि प्रयाग-महिलाओं की कोई बड़ी संख्या इससे लाभ उठा सकेगी। इसका बाप तो केवल महिलाओं के सामने एक नमूना रक्त देना और कभी-कभी प्रदर्शन करके उनके मन्द होने वाले प्रस्ताव को उभारना होगा। महिलाओं के दिल में अगर यह बात बिट्टाई जा सके कि अपने परिहार के लिये पुष्टिकर भोजन की आवश्यकता करना धामपदों से नहीं प्रयाग मरुत ही बल है और अपने बच्चों में व्यायाम की आदत बालक से उतके आब अपने बड़ा उपकार कर सकती है तो राष्ट्र के लिये बड़े संघर्ष की बाल ही।

सितम्बर १९३३

विधवाओं के गुजारे का बिल

श्री हरिद्विभास शारदा ने अपनी सामाजिक सेवा से भारत के इतिहास में धमक पड़े प्राप्त कर लिया है। अब उन्होंने हिन्दू-विधवाओं से गुजारे का बिल प्रेमसेवनी में पेश करके समाज की ओर धारा की है उसके लिये समाज को उनका कृतज्ञ होना चाहिये। हिन्दू समाज के पतन का मुख्य कारण धर्म का पतन है तो विधवाओं की पुनरा भी उसका शत्रु मन्त्र है। वही स्त्री जो पति के जीवन-काल में घर की स्वामिनी थी और जिसने उस गृहस्त्री के निर्माण में पति के साथ शारीरिक कठिनाइयों में भी पति के मरते ही अपना हाथ नहीं हटाया है। उसी की योग्यता के लिये उसे भी पति के मरते ही दुःखित होती है वह हम लिये अपनी ही ओर देखने है। उस काल में अपने मरने का पति के कर्मों की दया का प्रबलमन्त्र रह जाता है। पति की छोटी हुई सम्पत्ति पर उसका कोई अधिकार नहीं रह जाता। धर्म सम्मिलित परिवार है वह तो उनकी वशा और भी शोचनीय हो जाती है। वह स्वामिनी से लौटती हो जाती है और सार्वजनिक की सेवा करके अपने जीवन के दिन बटाती है। इस लक्ष्य में कितनी ही घर से निकल जाती हैं कितनी प्रयत्न और कठिनाइयों से तब धर्म परिवार ही जाता है। यह बिल विधवाओं को अपने पति की सम्पत्ति में कानूनी अधिकार देने के लिये बनाया गया है। अब हमारी समझ में ऐसा शायद ही कोई सिद्धि सम्पत्ति हो जो इस बिल का विचार करे, मन्त्रि-कट्टर सम्प्रदाय के महानुभावों ने हम शक्य है जिनकी मरणा असेम्बली में कम नहीं है, करना प्रकृतियों का मन्त्रि प्रवेश बिल अब तक बिल का पास हो चुका होगा। शायद उनकी ओर से इस आधार पर विरोध किया जाय कि विधवा सम्पत्ति पत्नर उस अपने मरनेवाला को ही देनी या कोई उत्तम वंश की या सकती है पर इन महानुभावों से हमारा यही निवेदन है कि यदि आप हिन्दू समाज के हितचिन्तक हैं तो इस बिल में रोके न घटकाएँ। धर्म पुरुष अपनी सम्पत्ति का जिस तरह चाहे उपयोग कर सकता है, तो स्त्री को क्यों उस अधिकार से वंचित किया जाय। अब सम्पत्ति पर उसका कानूनी अधिकार हो जायगा तो उसके लिये धर्म का कानून सभी उनका आधार करेगा और किसी को उनकी मरने के लिये कोई काम करने का साहस न होगा। औरत मरने की ओर अब भावपी है, अब समुदाय में कोई बात नहीं पूछता। अब समुदाय में उसे धर्म और रक्षा मिलेगी तो वह मरने नहीं जाने लगी। जो कुछ भी हो इन समय हमारा सामाजिक धर्म यह है कि शास्त्रों और स्मृतियों की शरत सेकर इस बिल को रद्द कराने की चेष्टा न करें। विधवाओं के साथ समाज ने बड़ा प्रेम किया है और प्रेम को पालकर कोई समाज संसृष्ट नहीं हो सकता।

अक्टूबर १९३३

महिला-सम्मेलन में सन्तान-निग्रह

धामी हाथ में प्रयाग में प्राचीन महिला-सम्मेलन हुआ उसमें धीरे-धीरे महत्त्व के प्रस्तावों के साथ सन्तान-निग्रह का प्रस्ताव भी स्वीकृत हुआ धीरे-धीरे स्पिनिसिपलिटिया धीरे-धीरे सकारों से इसकी विधि सिद्ध करने का प्रयत्न करने का आदेश दिया गया । अत्रिनेक सन्तान यह कहता है कि देश में अत्यन्त स्त्री-पूरण को सुदृढभाइय बन देना चाहिये अर्थात् उन्हें जनन शक्ति से बाधित कर देना चाहिए धीरे-धीरे देश में सन्तान उत्पन्न करने का अधिकार ऐसे प्राणियों को मिलना चाहिए, जो लिंग-निर्माण धीरे-धीरे नीचे से मजबूत हो पाएँ इसका मार ही सुगम्यता भी है । यजुरा धीरे-धीरे अब सिद्धि स्त्री-पूरण को सन्तानोत्पत्ति का अधिकार में होना चाहिए । अतएव देश में जो विज्ञान-प्रतिभाशाली वैज्ञानिकी स्त्री पुरण है उन्हीं पर देश में अत्यन्त सन्तान पैदा करने को जिम्मेदारी धारणी है । अतएव इन सम्मेलन की विद्वान् मन्त्रियों स्वाधिसाली देविया का जहाँ यह प्रस्ताव करने को अग्रत है कि अयोग्य स्त्री पुरण सन्तान उत्पन्न न करें वहाँ धामी योग्य बनना का सुयोग्य सन्तान उत्पन्न करने की प्रेरणा करनी चाहिए । पुरुष-मिली विचारगोचर विधि धीरे-धीरे अग्रत विचार करने पुरण सन्तान-निग्रह नहीं कर सकने धीरे-धीरे मार उह इन जिम्मेदारी से आशा कर सकता है । उन्हीं का सन्तान उत्पन्न करके उनका पालन करना ही पड़ना अत्यन्त हैस में अयोग्य सन्तान भ्रम जायसी । देश में अयोग्य का मार पकर धारणी पदापत्तिताना धीरे-धीरे धारणी इन पर पर पड़ेचना । धारणी धारण में देश का क्या अग्रत पड़ेना ।

उपर बह-बह विज्ञानशास्त्री इन धारण में है कि अयोग्यनी में धारण मार का सन्तान चाहें पैदा कर सकें । एक विज्ञान में तो यहाँ तक अग्रत-बाधनी की है कि जो हवार तीव्रत तक इन विधि में बहुत अग्रत-गोचर हो चुका होमी धीरे-धीरे अग्रत ही नहीं विरिचत है कि जो हवार धारणी तीव्रत तक विज्ञान द्वारा अग्रत स्त्री-पुरण ममार में हलचल मचा रहे हाने । इनविधि हमारे अग्रत ममार की यह अग्रत बाध ही रित्त तक अग्रतनी पड़ेगी । किन्तु विज्ञान उन्हीं इन जिम्मेदारी में सकने कर देगा । तब तब अग्रतनी की सकस्या भी इन ही चुकी होगी । एक योग्यी मारकर ह्यारी सन्तान उठना ही योग्य प्रान कर सकयी विद्वान् धारणन रूप धीरे-धीरे अग्रतनी नरएत मारकर भा नहीं मिय सफगा । कम मार रित्त की धीरे-धीरे धारणी धारणी शाना । अग्रतान उम अग्रत में हम न शान ।

नवम्बर १९३३

कुमारों शिक्षा का आदर्श

शिक्षा-विभाग के अध्यक्ष मि. मेर्सेनी ने मुरादाबाद की एक कच्चा पाठशाला में कुमारियों की शिक्षा का जो आदर्श उपस्थित किया उस पर हमारी देवियाँ उनसे कुछ होंगी या नाउरक यह हम नहीं जानते। आपके विचार में कुमारों और कुमारियों की शिक्षा में वही अन्तर होना चाहिए, जो उनके जीवन में है। समीकरण और सामुदायिक से उनके जीवन का कोई उपकार नहीं होता। वर्तमान शिक्षा प्रणाली उन्हें मात्र और गृहिणी बनने के योग्य नहीं बनाती। मुश्किल तो यह है कि पुरुषों ने महिलाओं को इतना सतारा है कि अब वे माताएँ और गृहिणी न बनकर अपनी आर्थिक स्वाधीनता प्राप्त करने पर तुली हुई हैं। अगर पुरुष बच्चे पासना और ओज्ज्व फलाना नहीं चाहते तो स्त्री क्यों सीखे। जो शिक्षा पढ़कर पुरुष रोटी कमाता है और इसलिए धीरों को अपनी सीधी समझता है वही शिक्षा स्त्रियों भी सीखना चाहती है। वह जाना क्यों पढ़ने काकालत क्यों न करें, अध्यापिका क्यों न बनें? इसका फैसला हमारी देवियों को ही करना चाहिए कि उनकी कच्चाएँ कैसी शिक्षा पाएँ, स्वार्थी पुरुषों का फैसला वह क्यों संभर करने लगीं।

जनवरी १९३४

महिलाओं की शिक्षा पर पं० जवाहरलाल नेहरू

किसी विद्वानी संख्या में हमने मि. मेर्सेनी के स्त्री शिक्षा-संबंधी विचार की आलोचना की थी। मि. मेर्सेनी महिलाओं को माता और गृहिणी बनने की शिक्षा देना चाहते हैं, और समावरक विषयों को उनके विभाग में डूँडकर वही पल्टी नहीं करना चाहते जो लड़कों की शिक्षा में की गई। लड़कों को पत्रों के लिए क्लार्क बनाना अभीष्ट था। लड़कियों के सामने वह यह आदर्श नहीं रखना चाहते। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने महिला विद्यापीठ के बीकानेर मापक में इसके विपरीत मत प्रकट किया। आपका ख्याल है कि महिलाओं को केवल वैवाहिक जीवन के निवे क्यों तैयार किया जाय। उन्हें अब एक आर्थिक स्वाधीनता न प्राप्त होगी उस वक्त एक परिस्थिति में साम्यवाद व उत्पन्न होगा। अगर साम्य का एक मास पाचार आर्थिक ही हो जाय तो भी कमी-बेटी का अंशट रहेगा ही। अगर देवी भी एक ही ख्याल लाती है, और देवता भी एक ही चीज बनना तो अक्षय ही कुछ बोझी ही अक्षयता या जायगी। जहाँ तरह देवी की ज्योता कमाती है, तब भी अक्षयता पैदा होगी। दोनों बराबर जायें तभी मीथल डिक-डैनी। इसका अर्थ यह होगा कि मुश्किल से ही में पाँच ब्यक्ति चुली होंगे। बात यह

है कि वेस्टाघों में प्रचानता की जो भावना उत्पन्न हो गई है यह केवल उनकी मूर्खता के कारण है। यह समझते हैं वे बाहर से पन कमाकर लाते हैं, इसलिए उनका महत्व घटिक है। उन्हें यह मूल ज्ञाता है कि स्त्री घर में जो काम करती है, वह उनकी कमाई से कई गुना ज्यादा महत्व की चीज है। वहाँ पुरुष विसकुल धने नहीं है वहाँ पराधीनता और स्वाधीनता की संघ एक नहीं है। दोनों ही एक दूसरे के समान रूप से पराधीन हैं। पुरुषों के दृष्टिकोण में परिवर्तन हो जाने से यह सारा विचार भिन्न सकता है, और पारिवारिक विच्छेद के लज्जास्पद दृश्यों से समाज की रक्षा हो सकती है।

अनवरी १६३४

रूस का नैतिक उत्थान

रूस को बदनाम करने वाले अंग्रेजी पत्रकारों में बराबर यही मित्रा जाता है कि रूस में विवाह प्रथा प्रायः उठ सी गई है, पारिवारिक संकटन गूट हो गया है, स्त्री-पुरुष स्वैच्छा से सहवास करते रहते हैं आदि। लेकिन इधर ही-एक भारतीय सज्जनों न वहाँ का जो धर्मो देखा जुगत मित्रा है उनसे तो मायूम होणा है कि रूस ने और कितनी विभाग में जाड़े प्रगति की हो या नहीं लेकिन नैतिक दृष्टि से तो वह पश्चिम की अन्य सभी उन्नत जातियों से आगे निकल गया है। वहाँ बाजारों में बेरघाएँ धरने टिकर की उलास में बकर नगरी नहीं मजूर जाती न होटलों और कहवा-खानों में धोरतों के नये चित्र ही घटघटे मजूर जाते हैं जैसा योरोप और अमेरिका के प्रायः सभी देशों में देखा जाता है। यही नहीं जुडाऊ और उपरंत आदि बीमारियाँ जो योरोप में दिन-दिन बढ़ रही हैं, रूस में बहुत कम हो गई हैं और वहाँ के डाक्टरों को पारा है कि कुछ दिनों में यह किरंगी बीमारियाँ नेस्त-नाबूद हो जायेंगी। बेरघावृत्ति का मूस कारण आर्थिक संकट है, जो बार को मानसिक दुःखता का रूप धारण कर लेता है। वहाँ धन घोड़े से धारमियों के हाथ में है वहाँ साक्षिमी है कि पनवान सोप धरमी विनासिता को तप्य करने के लिये प्रमोदनों में काम लें। उसी से बीमारियाँ भी फैलती हैं। जब किमी के पास इतना धन ही न रहे कि वह उसे विनासिता में उड़ा सके तो बेरघावृत्ति धार ही धार मुप्त हो जायगी। फिर जब रिवियों के लिये जीवन के किसी विभाग में कोई स्कावट नहीं तो वे क्यों इन सज्जालय नृत्ति का धारण लें। धन के लिये रूप जो वेचना कोई पश्य नहीं करती। वह तो धन के लिये ही धारण-अमपण करना चाहती है। यदि वह पश्चिम से धरने जीवन को सुधी बना सखती है तो वह यह पृथिव धारण कमी न लेवी।

फरवरी १६३४

वैवाहिक लेन-देन और कानून

'बीर' के एप्रिल के अंक में श्री केशवानन्द वर्मा ने बहुत कम-बिक्रम धारि कुप्रथाओं को कानून द्वारा बन्द कराने का प्रस्ताव किया है। ऐसी प्रथाओं को कानून द्वारा तो क्या यमराज द्वारा भी बन्द कराया जा सके तो हम धारण नहीं मन्दि हूँ मय हूँ कि यहाँ कानून हमारी कुछ सहमता नहीं कर सकता। या बात धर्मोप-सूत्रा होती है तब मुक्त रूप से होगी और किसी को खबर तक न होगी। या प्राची विवाह का इच्छा है वह अपना सब कुछ बेचकर लड़की खरीदेगा। उस प्राप किसी तरह नहीं रोक सकता। इसी तरह लड़की का बाप भी बर को जरीबन के लिए अपना बर तक बेच देता है। कानून तो तब बीर म या सचता है कि कोई परिवार करे ? हाँ विवाह के बाद कम निकाली जा सकती है और सेनेवालों को बड़ा बर दिलाया जा सकता है। लेकिन तब तो बड़ी अन्यायपूर्ण धर्म हा जाते हैं। कौन अपनी पत्नी के प्यारे पिता या भ्राता दामाँ पर मुख्यता चलायगा ? नहीं मात्र यह बस मुँह बहाने की नहीं। हाँ सरकारी कानून अगर इतना करे कि बर-बच के जोड़ बना दे और जबरबस्ती या रबाधरी से उनका विवाह करा दे तब शायद कुछ उपकार हो सके। मगर तब वह एक बर या कन्या के पिता की जेब में न बाहर पुँधन की बेच म जायगी। शायद उससे ज्यादा। समझा नहीं है। जब तक जन-जन समाज में सुखा की दृष्टि में न बड़ा धारण और जनमत उस अन्याय में समझल जोगा तब तक यही दशा रहेगी। हमे अपनी सारी शक्ति यह जनमत सधार करने में लगाती होनी। मुश्किल यह है कि बड़ी धारणों का धारण कन्या के विवाह में विफल बनता है और उन्हें को जान्त करता है कम पुन के विवाह में संवो एकम इकार जाता है। कैसे काम चल।

अप्रैल १९३४

क्या स्त्रियों का पाजामा पहनना जुम है ?

या तो काले-बोरे का मेर हम समाज में सभी जगह मौजूद है यहाँ तक कि ईंग्लैंड और फ्रांस तक म भी कामा या धारण होता रहता है। लेकिन यह मरज यच्छिण धारणिका में बड़े लोगों पर है और शायद बड़का जा रहा है। खबर है कि किसी हिन्दुस्वामी स्त्री को गोरी औरता की दशा देनी पाजामा पहनने का शौक चर्चिया लेकिन कामी औरत गोरी औरतों की मरज करने का साहम कर—यह बात बड़ी के मन्दिट्ट छात्र को मागवार चुकरी। इस स्त्री पर मुख्यता चलाया गया और उसे जुमन की सजा दी गई। यहाँ शैक्षणिक वाज बेचार ठगुर किसी मुँह को मुँहा टोपी पहले बेचन

कामे से बाहर हो जाते हैं और उसकी शक्ति ठण्डा सम्मल करते हैं । मगर ये बेचारे ठण्डा मूय हैं । यहाँ शिक्षित मस्तिष्क एक मस्तिष्क का सेमों की मरुत करन के जुम में सजा देता है । क्या वह भी इतना ही उजड़ नही है ? हम तो उम कावो देवो को कुम्भ पर गया घाती है जो माओ एमो मोक्षरर चोख को छाडकर वाकामा पहनने बनी । सबसे क्रिटर के जमनी म घायल की और अपनी संस्कृति की बिनाउ रतने की को नई मीनि निकानी है, तब से कामे गोर का नेत्र शायद और भयंकर हो गया है ।

मद्र १९३४

सन्तान नियम और प्राकृतिक नियम

ब्रह्मचर्य के मरुत को द्विदू शास्त्रकारों ने जितना समझ का उतना शायद और कहीं न समझ गया हो लेकिन इसका उद्देश्य सन्तान-नियम नही बल्कि मनुष्य के बल बुद्धि की रक्षा करना था । उतम सन्तान के लिए भी बल-बुद्धि की रक्षा आवश्यक थी लेकिन हम उस प्रकार से विरते-विरत यहाँ तक विरे कि बाल-विबाह को प्रसार होने सगी और उले रोस्ने के लिए जानन बनाया पडा । प्राचीन धारण ह्यु-गुष्ट सन्तानो से मय पूरा पर था । उत युग में धाबारी को उकरत की घोर रागे का प्रम इतना बटिम न था । सब जमाना बरम रखा है और संसार म जकरत से उगारा घादमी हा पवे है । इसके साथ ही बच्चों के पासन-पोषण का भार भी बढ़ गया है । हम धरन बासका को पुष्टिकरक जोवन और घबटी सिखा देना चाहते हैं और बहुत से बच्चों का बाल सिर पर मादकर अपनी डिगयी नही लक्ष्य करना चाहते । मापारण बिल के घादमी को घपर माठ-माठ मङ्गों मङ्गिक्यो का लख सटाया पड तो ममक सा कि उनकी और उनके बच्चों की शानत है । अपनी भी सासत और बच्चा की भी सासत । हमी उकरत में सन्तान-नियम के विचार को जम्म लिया । हमम ता किमी को घापति नही है कि संतान-नियम आवश्यक बन्नु है । मसमेव इसी म ई कि बहु उद्देश्य ब्रह्मचर्य द्वारा पूरा किया जान या कुविम उपाना मे । धार ब्रह्मचर्य द्वारा हो मय तो मरग उलम सचिन वह न ही मके तो हम कुविम साधनों की भी बुरा नही मही समझत । कुछ विद्वानों का कथन है कि हम प्राकृतिक विधान म मापक न होना चाहिए बरति हमम परिधाम भोगत होता है । मगर मानव मनुष्यि ता प्राकृतिक विधान के विराम का ही नाम है । धरन हम प्रकृति-माग पर ही चलन ता धार भी कडगमा म रतन और निराध पर किमी बमर करते थे । प्रकृतिपर नियम पाना तो मानवो मरुता का मरग हो है । ही संतान-नियम के विराम जा मबमे विचारने माग्य बाव न ब-पड है कि हमम स्त्री गुरप की भाव मानना बड जाती है और नियम अनुनिार घृश रतन के ।नए विग

त्याग और बलिदान की बहुरत है, उसके सिबिल ही जाने के कारण स्त्री-मुख्य में प्रेम बन्धन बीना हो जाता है और वह गृह क्माह और प्रसन्नोप के रूप में प्रकट होता है। इसके सिवा कुछ बीमारियाँ पैदा हो जाने की संका भी रहती है, अतएव हमारे विचार में बम्पति को अपनी बहुरत स्थिति स्वात्म्य प्राप्ति का विचार करके ही इस विषय में निश्चय करना चाहिए। इसके लिए कोई ब्यापक नियम नहीं बनाया जा सकता।

मई १९३४

नारियों के साथ अन्याय क्यों

प्रब तक समस्त संसार में यह क्यथा जा कि नारी को एक ही काम के लिए पुस्वों से कम मजूरी मिलती थी। पुस्व चार घाने पाता है तो नारी को तीन घाने ही दिए जाते हैं। शायद यह कारण ही कि नारी पुस्व के बरतार काम नहीं कर सकती। या यह कि पुस्व को एक परिवार का पालन करना पड़ता है और नारी को कुछ पत्नी है। सब अपने ही ऊपर कार्य करती है। लेकिन समय बरतन रहा है या बरतन बय है और अब नारियों ने सिद्ध कर दिया है कि बहुत से कामों में वह पुस्वों के बरतार ही नहीं पुस्वों से ब्याता काम करती है। रहा परिवार का पालन। ही अब यह बहुरी नहीं रह गया है कि नारी परिवारहीन हो। इस बेकारी के अमाने में कितने ही पुस्व अपनी पत्नियों की कमाई पर पुस्व-बसर करते हैं। और अब तो अविवाहित स्त्री भी विच्छारियों द्वारा संतानवती हो सकती है, फिर किस क्यथा से उसको कम वेतन दिया जाय ? हाँ नारियों से हमारा मन्न निवेदन है कि अब वे एकान्तमोव की बाल छोड़ें और अपने बेकार पुस्वों की सती तरह नाइबरबारी करें जैसे—पुस्व अब तक अपनी बेकरतियों की करता रहा है।

मई १९३४

राष्ट्रभाषा

भारत की राष्ट्र भाषा

‘अंग्रेजी बोला सब में भाषण देते हुए भारत के मूलपुत्र बायसराय नाथ गिदिय ने इस बात पर बड़ा सन्तप्त हर्ष तथा गर्व प्रकट किया कि गोलमेड में आयें हुए प्रतिनिधियों में कुछ तो बड़े ही काबिल हैं क्योंकि वे बड़ी दृष्टी अंग्रेजी बोलते हैं। अब नाथ महोदय भारत में वे उन्हें यह देखकर बड़ा हर्ष हुआ कि यहाँ पर अंग्रेजी भाषा का बड़ा प्रचार हुआ। आप कहते हैं—“अंग्रेजी भारत की राष्ट्र भाषा है। अंग्रेजी भाषा शान्ति और व्यवस्था की भाषा है। भारतीय राष्ट्र भाषा क्या है यह अपनी तक बड़े शिष्य भी नहीं तय कर पाते हैं। बहुत सोच-समझकर ‘हिन्दुस्तानी’ को ही यहाँ की राष्ट्रभाषा निर्धारित किया है। बहुत बड़े अंग्रेजीवादी भी कभी अंग्रेजी को यहाँ की राष्ट्रभाषा नहीं मानते। हमारी समझ में साइ महोदय ने बड़ी जल्दी यहाँ की राष्ट्र भाषा तय कर ली। यह क्या संस्कारों की योग्यता का सबूत; यह तो हर एक मुसलमान देश अपना स्वामी की भाषा को अपनी भाषा बना ही लेता है। यदि बंगाली कोई ठीका पालता है तो उसकी राष्ट्र भाषा बंगला होती है। उसी ठीके की समान किन्ती हिन्दी बोलनेवाले के यहाँ पसकर हिन्दी को ही अपनी भारतीय-इबाल बना लेता है। बाह ठीके तो अपनी असली भाषा यहाँ तक भूल जाते हैं कि ‘ऐ-ऐ’ की कमी नहीं कहें। टीक इनी प्रकार कुछ नव रण क भारतीय हिन्दी इतनी भूल जाते हैं कि अपने माँ-बाप को भी वे अंग्रेजी में ही बात लिखा करते हैं। विनायक से नीटकर ‘तुम’ को बपह ‘दुम’ कहना मामूली बात है। हम भारतीय भाषा के विचार में भी अंग्रेजों के इतने दास हो गये हैं कि अल्प अति बनी तथा सुन्दर भाषाओं का हमें कमी ध्यान नहीं आता। उदाहरणार्थ यह तो सत्य ही है कि कौन अंग्रेजी से कहीं अधिक प्रिय मधुर तथा व्यापक भाषा है। सीटोप में ही नहीं दुनिया के अधिकांश भागों में इसका अधिक प्रचार है। इसका पता हमें सब लगता है जब हम इंग्लैंड छोड़कर और कहीं जाते हैं और वहाँ अंग्रेजी जानने के कारण हमें बेबकूफ बनना पड़ता है। अंग्रेजी बड़ी अपनी भाषा है पर जिनका तथा जिन बुद्धि में हम इसे धारर देते हैं वह हमारे लिए सब की बात नहीं है।

यह क्या शान्ति तथा व्यवस्था की भाषा। इसका सबूत तो हम आज दिन मिलता है। विनायकी मजाधार-पत्र इनी टेनीशाफ या डेनी मिरर या इनी न्यूज (तीनों ही मन्त्र के हैं तथा अनुशासन के प्रमुखात्र हैं) जो अंग्रेजी में ही छाप हैं पर इंग्लैंड

की राजनीति के अधिकांश सूत्र प्रायः इन्हीं के हाथ में हैं और इनकी भाषा प्रायः सबसे अधिक कटु, दुष्ट, अहरीनी और गिन्ध होती है।

२ दिसम्बर १९३३

बड़ोदा राज्य में हिन्दी

बड़ोदा हिन्दुस्तान की उन रियासतों में है जिसे बहुत ही उन्नत तथा सुशासित कहा जा सकता है। कुछ समय तो बड़ोदा बेसी रियासतों का ही नहीं किन्तु सम्पू्ण ब्रिटिश भारत का भी सामाजिक सुधारों में अगुया रहा है। शिक्षा अनिवार्य कर देना शिक्षा निःशुल्क कर देना तथा बाल विवाह निषेध उसके अनेक सुधारों में से है। बड़ोदा का सबसे नया सुधार या अपने राज्य भर के मन्त्रियों में अग्रुतों का प्रवेश अनिवार्य कर देना। इस सुधार से कुछ सामाजिक-कीटाणु तो बेहूष बुझी हैं। इसका प्रभाव सुदूरवर्ती और हितकर है। अब इस रियासत का राजा महान् कार्य है हिन्दी को राज्यभाषा स्वीकार कर लेना। ब्रिटिश प्राणियों में सबसे पहले यह सुधार मध्य प्राय म ही हुआ था कि हिन्दी को ही परामर्शी भाषा स्वीकार किया गया था। इसके बाद शायद बड़ोदा ही पहला इतना बड़ा स्थान है जहाँ हिन्दी का अब साम्राज्य होना। बड़ोदा एक मरठा राज्य है, जिसके अधिकांश निवासी मुजरगती हैं। इसलिए इस राज्य के इस सुधार का और भी महत्व है। क्या हम आशा करें कि बसवर, बीकानेर, उदयपुर ऐसी और-मरठो रियासतों भी उर्खू के स्थान पर हिन्दी को सर्वोच्च भासन होंगी।

बड़ोदा सरकार ने इतर कई भूमें भी की है जिनमें सबसे बड़ी भूम बूडे अज्जास लठैयब जी की पैठन बन्द करना था। भारतीय सिविल सर्विस के रिटायरड पैठनबल्ले कर्मचारी भारत के शिक्षाक आम्बोलन में नियम होकर भाग ले सकते हैं, पर भारत की सेवा करनेवाला एक भारतीय रियासत से पैठन न पावे यह कहीं की बुद्धिमानी है।

२ दिसम्बर १९३२

हिन्दू-विश्व विद्यालय में हिन्दी वाद-विवाद

नर एविकार को काशी विश्व विद्यालय में हिन्दी वाद-विवाद हुआ। स्थानीय विद्यालयों के अतिरिक्त कई छात्र बरभनपुर, पटना बुबकुन काँपकी आदि से भी आये थे। विषय था—हिन्दी भाषा ही राष्ट्र निर्माण का एक मात्र साधन है। प्राण्टीय कौंसिल के समन्वित सर सीताराम मुख्य विचारक थे। स्थानीय कामेजों की चार आचार्य

मो सम्मिलित हुई थीं। उपस्थिति मन्दी थी। लगभग पचीस छात्रों ने भाग लिया। प्रविकास छात्रों के कथन से यही सिद्ध होता था कि वे केवल अपनी कोई रचना सुना रहे हैं। उत्तर और प्रत्युत्तर में जिस व्यंग-विमोह और आलोचना की आवश्यकता है और जिसके कारण ही चार-विचार में आकषण होता है, अथवा गिने-गिनाये छात्रों ही न ध्यान दिया। राष्ट्रीयता के उपादानों में जाति धर्म और राजनैतिक तथा भौतिक परिस्थिति संस्कृति और भाषा इन पाँचों ही अर्थों का होना आवश्यक है, लेकिन हमारे विचार में एक भाषा का होना मुख्य है। राष्ट्र भाषा के बिना राष्ट्र का बोध हो ही नहीं सकता। वही राष्ट्र है, वही राष्ट्र भाषा का होना साभिमी है। अगर सम्पूर्ण भारत को एक राष्ट्र बनाना है तो उस एक भाषा का आचार लेना पड़ेगा। अंग्रेजी भाषा का प्रचार अत्यन्त है। इसे हम राष्ट्रभाषा का पद नहीं दे सकते। भाषा ही राष्ट्र साहित्य और संस्कृति का निर्माता करती है, छात्रों को बुद्धि करती है। नदियों और पहाड़ों से राष्ट्रीयता के विक्रम में जो भाषा पढ़ती थी उसे रैल और हवाई जहाजों ने मिटाना शुरू कर दिया है। अगर एक संस्कृति रहते हुए भी एक राष्ट्र भाषा का आचार न रहे तो ऐसा राष्ट्र स्वामी नहीं हो सकता। एक भाषा बोलनेवालों में कभी-कभी विरोध उत्पन्न हो जाते हैं और उनका पुनर् राष्ट्र बन जाते हैं। संयुक्त अमेरिका इसका उदाहरण है। किन्तु इसकी केवल एक निदान है। इसके प्रतिफल एक नए एक संस्कृति और एक धर्म के अन्तर्गत मिस-मिस्र राष्ट्रों के अनेक उदाहरण हैं। इससे यही निम्न होता है कि राष्ट्र-निर्माण में भाषा का स्थान सबसे महत्त्व का है। जयन्त क्रिमासोऊर क्रिमे ने भी भाषा ही को मुख्य स्थान दिया है। इस विचार में मुसकुल काँग्रेसी के दोनों छात्रों के कथन सब से मन्दी रहे और टाकी उन्हें प्रदान की गयी। हम उन छात्रों और छात्राओं को जिन्हें परक क्रिमे उनको सकलता पर बर्खास्त देते हैं।

२६ दिसम्बर १९३२

हिन्दी द्वारा उच्च शिक्षा

महाभारत पंडित मदनमोहन मालवीय ने काशी विश्वविद्यालय में उपाधि वितरण के शुभ अवसर पर हिन्दी भाष्यम द्वारा शिक्षा का समर्थन किया और कहा कि शीघ्र ही विद्यालय में इंटरमीडिएट कक्षा तक हिन्दी द्वारा शिक्षा दी जायगी। हिन्दू विश्वविद्यालय को इस विषय में अग्रसर होना चाहिए था और हमें हब है कि उन्में जो धारा की जाती थी वह पूरे हुई। अंग्रेजी द्वारा शिक्षा लेकर हमारे विद्यालयों में छात्रों का विरतना समय गप्ट होता है अपना छोड़ा बहुत अनुभव हम सभी को है। छात्रों को मरबूर होकर इतिहास और भूगोल तक रटना पड़ता है और उनको साथी शक्ति माना तक ही रह

जाती है बिपय की धोर ध्यान देने का उन्हें बचसर ही नहीं मिलता । हिन्दी माध्यम से यह दोष मिट जायगा । संभव है, इस सुभार से छात्रों का धंधेकी पर चतना अधिकार न रह सके वे इतनी धंधेकी धंधेकी लिख या बोल न सकें । हमारे रईसों में कितने ही तो धंधेकी के इतने बड़े मकत हैं कि वे अपने बड़कों को धंधेकी के स्कूलों में पढ़ाते हैं । इन लोगों को शायद यह सुभार धंधेका न सगे लेकिन जब यह सिद्ध होता था रहा है कि धंधेका का धंधेका बहुत कम रह गया है, तो केवल भाषा के पीछे क्यों छात्रों की लिखनी बरबाद की जाय । फिर बरमनी फ्रांस जापान धंधेका देशों में राष्ट्र भाषा में ही लिखा ही जाती है । तो क्या वही धंधेकी बोलने धोर समझनेवाले सोय नहीं लिखते ?

२६ दिसम्बर १९१०

पुरानी उर्दू

इंटा की 'कितनी कई कहानी' से तो हिन्दी-संसार परिचित ही है । इंटा अठारहवीं शताब्दी में हुए । उर्दू की बुनियाद उनसे बहुत पहले पक चुकी थी । सबसे पहली बड़ रचना बखिख के मुतुबशाह के समय में हुई, जो सत्रहवीं सदी के धादिकाल में गोलकुटा का बानशाह था । यह लिखित बात है कि उर्दू का बन्ध बाहे उत्पत्ती भारत में हुआ हो लेकिन सबसे प्राचीन उर्दू रचना बखिख में हुई । उस समय की उर्दू का एक बमूना देखिए—

शहंशह भवानिख निने एक रत
 बबारी के फुरखर त सब संयात ।
 हरेक कुलमूरत हरेक सुरा बा
 सो हर एक तिसकत हरेक तिसरबा ।
 सुराही पियाले से हातां (मने
 नरीमां ते मशगुल बातां मने ।
 जो मुतरिब जो सहरा में इस बात गाय
 तो फिर उनको इस शीक ते हाज गाय ।
 सगे मुजिबां गाने यों चाक सों
 कि बरती हिले मस्त धाबाज सों ।
 जो गाबन बह साह की कमाते धने
 सो रफी परगां बमाते धने ।
 शरान हीर सुराही मुकन हीर बाय

हुए मस्त मजलिस के सोगी तमाम ।*

कुतुबशाह के पहले मुहम्मद कुली कुतुबशाह ने (१५२१-१९११) में जू में एक मसजिद भी की। यह शायद पहला मसजिद है, जिसने जू में पद्य-रचना की। उद्योग भी एक नमूना है—

गन्ही साँसों पर किया है भडर,
खबर सब गेबाकर हुआ बेखबर ।
बेटा छत्र सरो निकस जब छंद छों
निमन जोल मुँहफों निमन ज्यों क्रमर ।
छंद-बगुराई मा-जे निमन-दिलारि देना ।
सबक नाक ही ज्यों धंसे बल हुए,
कनेज पहाड़ी के फुट बल हुए ।
एक एक जान एक कौहु या बुर्ज ज्यों
ने हाती में फिलने मरे बुर्ज ज्यों ।
दिले इम्द लड़ने को जो बीर से
बमाना हुआ तल उपर नीर से ।
हुआ गुम जिबर का उबर मार-मार,
क्यामल जमी पर हुआ धाराकार ।

भावार्थ—जब मेनारों कोष में धावीं तो पहाड़ों के कनेजे का कर पानी हो पद्य । एक-एक पहाड़ान एक-एक पहाड़ के समान का जो (हाथों में बलक गदा लिये हुए था । जब वे बीर लड़ने बसे तो संसार परों के नीचे आ गया बीर सिर ऊपर से ।

का दरिया मङ्ग का उबलने लगा
समय उम वी किरती हो बलने लगा ।

उम समय बलन भी जू में प्रयुक्त था ।

दिसम्बर १९१२

दक्षिण में हिन्दी प्रचार

मद्रास और आन्ध्र प्रान्त में हिन्दी प्रचार का काम जिसने संवर्धित और सुचारु रूप से हो रहा है वह सबका प्रशंसनीय है । वहीं इस समय कर्नाटक तीन तीनों हिन्दी प्रचारक मित्र-मित्र वेगों में स्थानीय रूप से काम कर रहे हैं । प्रचारक-संस्थान से 'हिन्दी प्रचारक' नाम का एक उपयोगी मासिक पत्र निकलता है प्रसिद्ध जगदा 'प्रचारक'

* तै—बे हाथी मने—हाथ में बाण मने—बाण में बाण—उरु, धड़े—वे हीर—धीर ।

सम्मेलन' होता है और सम्मेलन द्वारा 'प्राथमिक 'मध्यमा' और 'राष्ट्रभाषा' तीन परीक्षाएँ होती हैं जिनकी सफलता का अनुमान परीक्षार्थियों की संख्या से किया जा सकता है। इस वर्ष प्राथमिक में दो हजार पाँच सौ चार उम्मेदवार ने जिनमें दो हजार एक सौ सनसठ परीक्षा में बैठे और एक हजार आठ सौ सोलह पास हुए। मध्यमा में एक हजार एक सौ उन्नास बैठे और सात सौ इकठ्ठातीस पास हुए। राष्ट्रभाषा परीक्षा में पाँच सौ उन्नासी बैठे और तीन सौ बयालिस पास हुए। उम्मेदवारों की कुल संख्या चार हजार छे ऊपर थी। परीक्षा-केन्द्रों की संख्या दो सौ इकठ्ठासी थी जिनमें एक सौ पचहत्तर केवल बाल्य प्रान्त में थे उन्नीस तामिलनाड में बालन कैरल में चौतीस कर्नाटक में और एक बम्बई में। प्रचार की प्रगति का प्रत्याशा इसके किया जा सकता है कि यह एकदुबरे के उम्मेदवारों की संख्या उसके एक साल पहले की संख्या से दुगुनी थी। और इस उद्योग में प्रान्त के प्रमुखतामी गण्यमान्य सम्मान भी शरीक हैं। उनमें सर सी पी रामस्वामी वीवान बहादुर की एस मुबहुरएस ऐयर, बस्तिन ए बैकटरजब प्राधि हैं। 'हिन्दी-प्रेमी-सङ्घ' के कार्यक्रम की जो व्यवस्था तैयार की गयी है, उसे देखने से साधुम होता है कि उसके उद्देश्य निष्ठाने अने और क्षेत्र निष्ठाना निस्तुत है—

१—समाएँ और बससों का आयोजन।

२—हिन्दी कक्षाओं की शिक्षा।

३—प्रचार समा की परीक्षाओं के लिए विद्यार्थियों तैयार करना।

४—स्वामीय स्कूलों और कालेजों में हिन्दी का प्रचार करना।

५—हिन्दी बुने खेमकर बनता में हिन्दी के प्रति प्रेम बढ़ाना।

हम मद्रास के हिन्दी-प्रेमियों को उनके उत्साह और जगन पर हृदय से बधाई देते हैं। मातृ की राष्ट्रीयता एक राष्ट्रभाषा पर निर्भर है और बच्चों के हिन्दी-प्रेमी राष्ट्रभाषा का प्रचार करके राष्ट्र का निमिष कर रहे हैं। राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र का रोष हो ही नहीं सकता। वहाँ राष्ट्र है, वहाँ राष्ट्रभाषा का होना लाजिमी है। अगर उम्मुख मातृ को एक राष्ट्र बनाना है, तो उसे एक भाषा का आधार लेना पड़ेगा। हिन्दी भाषा का व्यवहार प्रापञ्च है इस हम राष्ट्रभाषा का पत्र नहीं दे सकते। भाषा ही राष्ट्र साहित्य और संस्कृति का निर्मात्र करती है, आधारों की सृष्टि करती है। संस्कृति में एकरूपता होती हुए भी एक राष्ट्रभाषा का आधार न रहे, तो राष्ट्र स्वाधी नहीं हो सकता।

दिसम्बर १९३२

तृतीय दक्षिण भारत हिन्दी-प्रचारक सम्मेलन

राष्ट्रीय एकता के लिए एक राष्ट्रभाषा चाहे सबसे महत्वपूर्ण चीज न हो पर महत्वपूर्ण प्रकरण है, और यह भी निश्चित है कि हिन्दी के बिना और कोई प्रांतीय भाषा भारत की राष्ट्रभाषा बनने का दावा नहीं कर सकती। अतएव दक्षिण भारत में हिन्दी प्रचार का काम राष्ट्र-संघटन के सिद्धान्त से बहुत बड़ा काम है। हिन्दी-प्रचार-समाज की अग्रणी विद्यालय है, अग्रणी पत्रिका है, वह हिन्दी की कई परीक्षाओं की आयोजन करती है और पास होनेवाले विद्यार्थियों को उपाधि देती है। उसका वार्षिक सम्मेलन भी होता है और अबकी उसका तृतीय सम्मेलन या विसुके सम्मेलन से—पी देवदास गांधी। अंगरे इस अवसर पर जो भाषण दिया वह बहुत ही विचारणीय उल्गाह-बंदक और सारवर्णिक है। अंगरे समा के काम का सिद्धान्तोक्त करते हुए कहा—

‘हम बीसहू बयों में आपको जो सफलता मिली है, उसके लिए मैं आपको बधाई दिये बिना नहीं रह सकता। इस प्रान्त में आप पत्रपत्र नाम्ना नामा के पाम पहुँच सके हैं किन्तु से बार बार भारतीयों ने हिन्दी का काम बलाऊ जाल प्राप्त कर लिया है और ठीक हवाय भारतीयों की परीक्षाओं में डेठे हैं। हमारी बड़े माँके की बात यह देख रहा हूँ कि आपका काम शुरुओं तक ही सीमित नहीं है बल्कि देहातों में भी फैला हुआ है। गठ व्यवहार की परीक्षाओं के बा सौ पचासी केन्द्रों में दो नौ से अधिक काम हैं।

देवदास जी का यह प्रस्ताव सबसे समझनीय है कि दक्षिण भारत के हिन्दी-प्रणी स्त्री-मुरप उत्तर भारत का दीप दिया करें। हम प्रान्त में दो-तीन मान रह जान से बेबस आपन में प्रेम और अनिष्टता ही नहीं बनी बल्कि हिन्दी भाषा का वह सम्मान हो आयमा जो बरसों हिन्दी-मुरतकें पढ़ने से नहीं प्राप्त हो सकता। अंगरे प्रान्त के मरुर मास-म मरीन नतकक में उकर उर-उर बंगला बोलने समते हैं। अंगरेजी बोलने का असा सम्मान इन्सेण्ड में हा जाऊ है, बीसा भारत में नहीं हो सकता। हम तो चामने हैं कि दक्षिण की हिन्दी-प्रचार समा के इन काम में प्रयाग का साहित्य-सम्मेलन या मारपी-प्रचारणी समा भी हाय बटाएँ और हर मान अंगरे तब से हम-बीन हिन्दी सेवियों को दक्षिण में।

हूमर से हिन्दी प्रचार के विषय में किमी प्रचार की ध्याना रचना उन पर अकरत से ज्यादा प्रमेता करना है लेकिन मेरे हैं कि प्रांतीय विद्याय और नेतामा से अब तक इस विषय में उवासीनता से काम लिया है। हम यह दावा नहीं करते कि हिन्दी भाषा समुपन है। इसका प्राचीन साहित्य ता किमी भी प्राचीन प्रांतीय साहित्य से अकरपी का दावा कर सकता है, लेकिन नवीन साहित्य में अभी हिन्दी कई प्रांतीय भाषाओं से पीछे है। लेकिन हिन्दी का दावा उसके साहित्य के अत पर नहीं उमरने

व्यापकता और सुबोधता के बल पर है। और इस बात में कोई भी प्रांतीय भाषा उसका सामना नहीं कर सकती। अथवा अन्य प्रांतों में भी उसे वही प्रोत्साहन मिला होता जो बहिष्कृत भाषा में मिला है, तो अब तक हिन्दी का बहुत ध्यान व्यवहार हो गया होता। यदि अन्य प्रांतों में हिन्दी का प्रचार स्कूलों में अनिवार्य रूप से होमे तब तो राष्ट्रभाषा की समस्या आसानी से हल हो जाय।

हिन्दी भाषा का भविष्य कितना उज्ज्वल है और उसके प्रचार से राष्ट्र-भाषा जितनी बसवान हो जायगी इसकी जर्नी आपने इन बहुमूल्य शब्दों में किया—

हिन्दी से भारतवर्ष के हर प्रकार के शत्रु को सच्चा भय है। जिसको सन्देश हो वह बहिष्कृत भारत के हिन्दी काय का निरीक्षण करके अपना सन्देश मिटा सकता है। जहाँ-जहाँ हिन्दी की छांव छाया है वहाँ-वहाँ बाह्य अवाञ्छित शिष्ट पतिष्ठित नागरिक घामीय छोटे-बड़े के भेद टूट पड़े हैं। भाषा के प्रचार के साथ ही साथ एकदम सच्चा ऐक्य स्थापित होने लगा है। भारतवर्ष तो यह है कि एक भाषा का आबोधन इतनी तेर लगाकर क्यों शुरू किया गया। किन्तु अज्ञान भूतकाल पर अकठोर नहीं करता। उसका तो वर्तमान से ही सम्बन्ध है। आप बिस्वास रखें भविष्य उज्ज्वल है।

जनवरी १९३३

हिन्दी ज्ञान यात्री मण्डल की हिन्दी भाषियों से अपील

हम इस अपील को बड़े हृष से प्रकाशित करते हैं और हिन्दी भाषियों से अनुरोध करते हैं कि वे हिन्दी ज्ञान यात्री मंडल को प्रोत्साहन दें—

‘जगन्म पत्रह रूप हृष, बहिष्कृत भारत में हिन्दी-प्रचार-आन्दोलन का भी गच्छेत हुआ था। इस समय कोई बार ही हिन्दी-केन्द्र है जिनमें अब तक छः बार से भी अधिक स्त्री-मुख्य हिन्दी का अध्ययन कर चुके हैं। इस आन्दोलन की सफलता का साथ अब पूज्य महात्मा जी को है। सम्भव है, यह काम प्रारम्भिक प्रचार की दृष्टि से सतोपजनक प्रतीत हो परन्तु राष्ट्र-भाषा को अन्तर्गत में राष्ट्र जीवन का प्राण समझनेवाले हिन्दी-प्रेमीयण साथ ही इससे तृप्त होने। कहा जाता है, कि हिन्दी-प्रचार-आन्दोलन के प्रधान ही पहलु हैं—राष्ट्रीय और साहित्यिक। बहिष्कृत में इस समय जो हिन्दी-प्रचार हो रहा है वह राष्ट्रीय दृष्टि से अत्यन्त ही है। साहित्यिक पहलु पर अब तक कोई ध्यान नहीं बिना गया है। यही कारण है, इस पत्रह रूप की सम्बन्धी अक्षय में बहिष्कृत-आन्दोलनों की हिन्दी धोरण-मुख्य प्रवाहमय या मुहावरेंदार नहीं बन सकी। साहित्यिक पहलु पर ध्यान देने के लिए बड़ी उपयुक्त संस्था या व्यक्तियों का निताभत समागम है। इन समय बहिष्कृत भारत

ने हिन्दी की सेवा करनेवाले तीन ही प्रचारकों में उत्तर भारतीयों की संख्या दस-बारह से अधिक नहीं थी। और प्रचारकों में हिन्दी की उच्च योग्यता रखनेवालों की संख्या भी अनुभवों पर गिने योग्य है। सबसे बड़े खेती की बात यह है कि न उत्तर भारत के लिखित एवं उल्लाही नमूनों ने इस ओर ध्यान दिया और न ज्ञानमयोद्ध साहित्य सेवियों ने ही रचिणियों पर कृपा वृष्टि रखी। हिन्दी भाषियों को राज-भाषा के प्रचार की प्रतिष्ठा पा ही नहीं अपितु अपनी 'मातृ-भाषा' की प्रीतिरता को प्रभुत्व बनाये रखने के विचार से ही रचिणियों का साथ देना आवश्यक है। अन्ति के इस युग में उन्हें उदत्त रहकर अपनी मातृ भाषा को सम्भाव्य बलिध्यान की गति-विधि पर किमत्सक विचार न करना देश के लिए बड़ा हानिकारक है।

'अन्वय' लेखक — इस धारणा के अनुसार न्यूनता को बचायति दूर करने की वृत्ति से सन् १९११ ई० को 'हिन्दी-ज्ञान-धारी-मण्डल' नामक आचार्यों की एक संस्था स्थापित की गयी। हिन्दी प्रचारक विद्यालय मद्रास के प्रिन्सिपल एवं हुपीकेना समी की महोदय इस संस्था के अध्यक्ष चुने गये जो अद्यापि उन स्थान की सोना बड़ा रहे हैं। आप रचिण्य न हिन्दी साहित्य के बड़े पक्षपाती हैं और आपके कृपा

पुत्र प्रोत्साहन से ही प्रति रूप कुछ हिन्दी-प्रमी हिन्दी साहित्य सम्मेलन की परीक्षाएँ दे रहे हैं। आपके द्वारा मद्रास को बहुत से हिन्दी-साहित्य-सेवियों की प्रशासनीय उपायों का परिचय मिला है। पूज्य धारणा द्विवेदी जी मद्रास में हमारी इस आयोजना को बड़ा ही रमापनीय एवं समयोचित समझने की कृपा की है। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन प्रयास तथा एकत्र अन्वय हिन्दी संस्थाएँ भी हमें यथोचित सहायता देनेवाली हैं। काशी की मातृ प्रचारिणी समिति ने अपने असीम कुछ रचिणीय विचारों की विशेष रूप न पढ़ाने का विचार किया है। इसके अतिरिक्त एक श्री बन्धु श्यामसुन्दरदास जी बाबू प्रमोद जी भीमार्थसिंह जी परिशत हरिनाथ उपाध्याय जी परिशत रामचन्द्र त्रिपाठी जी प्रोफेसर रामदास जी बीड़ परिशत हरिचन्द्र जी समी प्रोफेसर इन्द्र जी श्री मोहनलाल 'महोती बियोली' एवं माधनलाल जी बतुर्वेदी आदि महानुभावों ने मद्रास के उद्योगों की पूर्ति में महामुक्त करने का बचन दिया है। विशेष रूप की बात यह है कि बाबू संवत् लाल जी अन्वय एम ए की कृपा से प्रयास-महिमा-विद्यापीठ में रचिण्य मातृ संस्थायों के संकायकों को समझे समयोचित सहायता के लिए अपना हार्दिक अन्वय प्रदान करते हैं। हम प्रतिशत रूप से रूप को मद्रासी मुक्तों को निःशुल्क शिक्षण प्राप्त या शिक्षण के रूप में प्राप्त देनेवाले हिन्दी मद्रास तथा हिन्दी संस्थाओं की अन्वयिक अन्वयण है। क्योंकि इन समय यहाँ शिक्षकों को महानुभावों से उदार भारत में ही रह कर हिन्दी की उच्च शिक्षा प्राप्त करना चाहते हैं। प्रचार-मातृलोक का बलिध्यान बड़ा उद्योग है और उन्हीं उद्योगों के लिए रिती

काम से काम करनेवालों की सख्या भी काफी है, परन्तु इन सबके राष्ट्र-सेवकों को ज्ञान प्राप्त देनेवालों की सख्या अभी सम्तोपजनक नहीं है। अतः शिक्षित हिन्दी-भाषियों से हमारा अनुरोध है कि आप लोग बखिख में हिन्दी-भाषा के 'साहित्यिक प्रचार' को प्रागे बढ़ानेवाले इस आन्दोलन की सहायता करें।

१ अप्रैल १९३३

हिंदुस्तानी एकाडेमी

हमारी संस्थाओं में जहाँ रुपये-पैसे की बात आ जाती है, वहाँ कार्य-कर्ताओं में माका-फूटोबल होने लगता है। एक बल चाहता है कि यह सारे रुपये हमारे मित्रों और सहयोगियों को मिल जायें। दूसरा बल अपनी तरफ खींचता है। जिस बल की हार हो जाती है वह गुन मपाड़ा मचाना शुरू करता है और उस संस्था में और उसके किम्मेदार कार्यकर्ताओं में ताना प्रकार के मचाव और कल्पनिक बाप निकालने लगता है। अतः वह कुछ विषयी होता और परत भी काम-भूँछ न हिमाता। एक संस्था पूर्ववत् निर्वोच होती। मगर जबकि रकियाँ बाँटने का अधिकार उसके हाथ में नहीं है, इसलिए उसे उस संस्था में ऐक ही ऐक मचर आने लगते हैं। हिन्दुस्तानी एकाडेमी भी उसी तरह की संस्था है। जो काम प्रायः एक कोई न कर सका और वह हरेक को कुरत रखना है, वह एकाडेमी करना भी चाहे, तो नहीं कर सकती। हमम इस विषय का राय साहब श्यामसुन्दरदास का पत्र और श्रीमुख ताराचन्द्र मंत्री द्वारा दिया गया अबाब दोनों ध्यान से पढ़ें और हमें वही ज्ञान पड़ा कि राय साहब की आलोचना कुछ उसी तरह है वही हरेक संस्था के विषय में की जा सकती है। जिस संस्था के राय साहब कुछ कर्ता-कर्ता है और जिसे वह प्रायतः संस्था समझते होंगे उसके विषय में इससे कहीं कहीं आलोचना की जा सकती है। हाँ यदि रायसाहब ने ऐसे उदाहरण दिये होते कि एकाडेमी की कार्यकारिणी कमेटी ने साहित्य-कमेटी की सम्मति के बिना अमुक सेवा को पुरस्कार दिया अमुक बाहिमत किताब छपवाने अमुक व्यय का व्याख्यान दिलवाना वी एक बात होती पर अपनी आलोचना में ऐसा कोई उदाहरण नहीं मिलता। रही यह बात कि एकाडेमी सर्वप्रिय नहीं है, उसकी पुस्तकों की और पत्रिकाओं की अथवा किसी नहीं होती यह अकर बेजा सिद्धायत है। मरुति एक सरकारी या अर्ध सरकारी संस्था होने के नाते एकाडेमी को यह सर्वप्रियता तो प्राप्त नहीं हो सकती जो दूसरी साहित्यिक संस्थाओं को प्राप्त है, फिर भी हमारा यह ज्ञान है कि एकाडेमी अतः उद्योग करे और अपने आर्थिक पानीपन से काम से तो उसकी प्रकाशित वस्तुओं की खपत ज्यादा हो सकती है। अतः हमारी विषय की पुस्तकों कहीं मरुत असेवियों की तरह विक्रयी है और कौन-वी गनीर पत्रिका

नऊ पर बसती है ? अगर नऊ का खयाल किया जाय तो प्राय ही में धस्ती पत्रिकाएँ बन कर देनी पड़ेगी । और एकादमी कोई बुराज नहीं है !

१० अप्रैल १९३३

तिमाही या त्रैमासिक

एत रविवार को हिन्दुस्तानी एकेडेमी के जसस में त्रिमाही शब्द पर बड़ी मनो रंजक बहस हुई । बाबू ख्यामगुम्बरचास का पक्ष था 'त्रिमाही पत्रिका' यगा और मदान का खोड़ है । एक मुसलमान साहब 'त्रिमाही' शब्द की ही टक्काम बाहर बतला रह्ये और इसकी जगह 'सिद्दाही' रखना चाहते थे । इन महानुमाबा को धमी ठक यह नहीं मान्य कि हिन्दुस्तानी एकेडेमी हिन्दी या उर्दू एकेडेमी नहीं है । उनका नाम ही बतला रहा है कि उसे संस्कृत या फारसी से बिलेप प्रेम नहीं है । उसका एक उद्देश्य एण्ड-भाषा का निर्माद्य है और यह ठभी हो सकता है, जब हम हिन्दी और फारसी का मोह छोड़कर कुल मन से हरन भाषा के प्रचलित शब्दा को धपनायें । हिन्दी के लिए भागते-प्रचारिणी समा और उर्दू के लिए धंनुमन-उरफिए उर्दू है । 'उचित मनाचार और 'बाप्यार' पत्रिणी को मुबारक हो जनता को तो धपना 'तार और रतगानी ही पमन्य है ।

१३ नवम्बर १९३३

एक हिन्दी-साहित्य विद्यालय की जरूरत

जब से मद्रास-ग्रान्ठ में हिन्दी का प्रचार बढने लगा है वहाँ से मैकनों दुबक हिन्दी साहित्य का ज्ञान बढाने के लिए इलाहाबाद और काशी में धाने मने है मरिन बड़ी तेजी कोई सस्था मही है, जो उन्हें धाधय हे सके । काशी में दीन-साहित्य-विद्यालय है पर बिची तरक से कोई महापठा न पाने के कारण उनकी बसा मुष्यबस्थित नहीं है उनके मंचानक दयाबज्जा धगना कुछ समय देते है और जो कुछ बगते है वह भी गमीमत है । हिन्दी प्रचार का टीका कुछ उन्हे तो लिया मही है कि धारा धामिन उन्ही पर रन्य दिया जान । इलाहाबाद का हिन्दी विद्यापीठ भी कुछ इसी धारा में है । दुनिबनियों के साहित्य-उद्योग का प्रबन्ध है पर उनम ऐसे विद्यार्थी क्या लाभ उठा सकते है । बर तो दुनिबनियों के छात्रों ही के लिए है । जरूरत एक विद्यालय की है, जिनम नियमित रूप से शिक्षा दी जाय हिन्दी के विज्ञान धप्यारक हों और छात्रों के रूठन का भी प्रग्य हो । धम-दीध छात्र बतियाँ भी हों ता और भी धग्धा । हमारे यहाँ धान दिन हाई स्कुल गमते रहते है, जिनकी धब न कोई जरूरत है न कोई उपयोगिता । क्या ही

सम्झा हो कि किसी विद्याशाली का ध्यान इतर छात्रों का होना । अगर ऐसी-साहित्य सम्मेलन में यह प्रश्न उठाया जाय और ऐसे विद्यालयों की अकरत विद्यापी जाय तँ समझ है धनिकों को ध्यान हो । अगर इस तरह का कोई विद्यालय हिन्दू-बिस्व-विद्यालय में खोला जाय तो एक बहुत बड़ी कमी पूरी हो जाय । क्या यह सम्झा की बात नहीं है कि हिन्दू के प्रधान केन्द्र में एक भी ऐसा हिन्दू विद्यालय न हो जहाँ हिन्दू-साहित्य की ऊँची पढाई हो सके ? और हिन्दू को हम राष्ट्र-भाषा बनाना चाहते हैं । प्रथम प्राणों में हिन्दू से जो बलि पैदा हो गयी है, यदि हमारी अकर्मण्यता से वह ठंडी पड़ गयी तो फिर राष्ट्र भाषा का स्वप्न बहुत दिनों के लिए भंग हो जायगा ।

२५ दिसम्बर १९३३

लेडी अब्दुल कादिर का राष्ट्र-भाषा प्रेम

बुदा मला करे सेडी अब्दुल कादिर का जिन्होंने कमकला में महिला सम्मेलन का नियमन करते हुए इस बात पर जोर दिया कि भारत में राष्ट्र-भाषा का प्रचार होना चाहिए । हम आपके इस कथन से पूरी तरह सहमत हैं कि हरेक प्रांत में राष्ट्र-भाषा अर्थात् हिन्दुस्तानी की पाठ्य-क्रम में आवश्यक बना दी जाय । आपने अपना भाषण उच्च में लिखा था पर वहाँ उच्च समझनेवाली बहुत कम महिलाएँ थीं इसीलिए आपको उसका अनुवाद करना पडा । भारत के अधिकांश भागों में हिन्दुस्तानी बोली और समझी जाती है, उच्च में लिखी जाय या हिन्दी में । मद्रास में उसका प्रचार हो रहा है । मैसूर में भी शुरू हो गया है । अगला धनी तक पुष्ट पर हाथ नहीं फैरने देता हालांकि बंगाल के कई विद्यालय हिन्दी के प्रसिद्ध विद्यालय और लेखक हैं । 'भाषा' नाम की पत्रिका के सम्पादक बंगाली सम्जन हैं । कई बंगाली लेखिका भी हिन्दी की कुशल लेखिकाएँ हैं जिनमें श्रीमती अया मिश्र का नाम उल्लेखनीय है । उनके गल्प खेटी की पत्रिकाओं की शोभा बढ़ाते हैं । अब तक एक राष्ट्र-भाषा नहीं बन जाती तब तक एक राष्ट्र कैसे बने ।

१ जनवरी १९३४

काश्मीर की एसेम्बली में उद्घोष

काश्मीर में नयी व्यवस्थापिका की जो योजना प्रकाशित हुई है उसमें अमीरों और महाजनों के लिए विशेष निर्वाचन नहीं रखा गया है और यहाँ अंग्रेजी सरकार अमीरों की रक्षा के लिए एक द्वितीय सभा आवश्यक समझ रही है । यह कौन नहीं जानता कि निर्वाचन में अधिकतर अमीरों और जनमान ही कामयाब होते हैं, इसलिए

इन समुदाहों के लिए विशेष निर्वाचन की व्यवस्था वास्तव में उन्हें दोहरा निर्वाचन देना है। इसके साथ ही काश्मीर-बखार में बहुमत का धारण करके वहाँ की व्यवस्थापिका तथा की सारी कार्यवाही उन्हीं में करने का निश्चय किया है। एसेम्बली के मेम्बरों के लिए उन्हीं का ज्ञान आवश्यक रखा गया है। उन्हीं काश्मीर के मुसलमानों की भाषा होना ही चाहिए उन्हीं उन्हीं से प्रेम है। भारत सरकार ने उनके भाषों का धारण करके बड़ी किया है, जो उन्हीं करना चाहिए था। हमारी व्यवस्थापिका समुदाहों में क्यों बहुमत की भाषा का प्रचार नहीं किया जाता? यहाँ क्यों सारी कार्यवाही अंग्रेजी में की जाती है।

२६ जनवरी १९३४

तेईसवें हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन पर एक दृष्टिपात

उत्कल-गजल की राजधानी बिस्नी नगर का बहुमापित सम्मेलन प्रतिबन्ध के समान मार्गक समाप्त हो गया। एक साधु और वेनी दृष्टिवाला दसक सम्मेलन के चार दिनों की कार्यवाही को देखकर सहासा यह कहना चाहता कि 'निराकार परमात्मा अब साक्षात् होते हैं' तक शायद संसार के ईश्वरवाकियों को एसी ही निरस्तता हुआ करती है। सम्मेलन पर शालभोज्य दृष्टि से इस टिप्पणी में इतना लिख देना ठीक हीना। घाने की बौद्धिकता उसको अभावित कार्यवाही की अतिरिक्तता पर लिखी जायेगी क्योंकि सम्मेलन के लिए हिन्दी-संसार के हृदय में पहुँचे हैं वे बहुतेरी पारखार्ण भी जाँचें तो हस्तास्पर मानुस हस्ती की परन्तु प्रायः कम पाठोबी-हाउस प्रतिनिधियों की हाहू-हीरी से हृदय और भीरे भीरे रिक्त हो रहा है, तक बिबेटी जाती प्रदर्शनी की पुस्तकों से उनमें ब भासंकार्य बोमठी-सी प्रतीत हो रही है। जो कुछ भी हो सम्मेलन हो गया बहुतेर प्रस्ताव स्वीकृत कर लिये गये परिपरे हो गयीं—मानी बिस्न कमर गये। इतना ता धरकर है कि इन सब सम्मेलन की आत्मा की भूख नाचक-नाचिकाओं के रूप की मूय न ही सवकी बुधा में सचकाड़ा कर उठती हुए राष्ट्र को जाग्रत करती हुई आत्मा की। सम्मेलन का प्रत्येक प्रतिनिधि जो इस युग में रहता है, चाहता था कि जसो से जसो हिन्दी धारे भारत की भाषा बन जाय। सम्मेलन में चार दिन तक गैर जसादर, पून बरमाकर और अयकनाम या-यादर हमें यह सुझाने की श्रेष्ठ की कि शीघ्र से शीघ्र हिन्दी की उपरति कर ले प्रत्येक भारतवासी के हृदय मन-अरिठक की अतिरिक्तता का प्रभावशाली माध्यम बन जाय। अस्तु, सम्मेलन के प्रति रिक्त के विरुद्ध बर्षान समाचार पत्रों में प्रकाशित हो रहे हैं परन्तु 'जापरख के पाठकों को धारण देखा इतिवृत्त—धीन कर जो शान्ति से लिखा हुआ—अधिक अथवा।

८ अप्रैल, १९३४

प्रथम दिवस

वके हुए प्रतिनिधियों और अध्यक्षताय वकों के साथ सूचनानुसार बुलुस निकला । जेसा कि प्रबल मन्त्री श्री पत्तुमास श्री का कपन या बुलुस का सरेस्य नयर की मुख्य-मुख्य सङ्कों पर बुम-बाभ कर प्रवशिनी के उद्घाटन समारोह को समारोहपूख बनाता बा । कबिबर प्रयोध्यासिह श्री उपाम्याय 'हरिप्रौष' ने प्रवशिनी का उद्घाटन किया । उद्घाटन के पूर्व उनके भाषण ने वही मनोरंजन किया वही एक तरह से लोगों के मन में 'प्रथिक उपदेश' की भाषमाएँ भी पसा कर दीं । प्रवशिनी न तो ह्रीसर का बुक-स्टान ही थी न हिन्दी पुस्तक एजेन्सी की बुकान हो । वह एक छोटा-मोटा संप्रहामय-सा बा जितने सन्ने हिन्दी संसार की वीकें उतनी न कोमीं जितना उसने पुस्तक प्रकाशकों का जिज्ञापन और लेखकों के मन की नीरखपूख प्रतंसा का बालारख किया । प्रोबनोसर, विपय निर्वाचनी श्री बीठक हुई । इस बीठक में वह जोर दिखता बा जो प्रोबनोसरजत किन्ही प्रस्ताव को बनाने में प्रकट होता है । प्रस्तावों के निर्माण और उनकी स्वीकृति के बाब मुख्य सम्मेलन का प्रविशेदन प्रारम्भ हुआ । जैसे संभव है कि केसरिये रंग से रंगी हुई साक्षिनी पहले हुए बासिकाधों का संयन मान उन स्वयंसेवकों को न मोह सका हो जो पास देखने में उतना ही उस्ताह दिखत रहे वे जितना उस्ताह एक सार्बन्ट बारष्ट दिखाने में प्रकट करता है । पकान में लगी हुई विपय सभापतियों की लसवीरें पीने-पीटे सचर्य में लिखे हुए भाषय बाक्य और प्रतिनिधियों विशिष्ट ब्यक्तियों के झुठों-कोटों पर लने हुए बाल-बासमानी पून सच कोई मानों बुम्ब-सा हो उठे । एक निरुस्तावामी दयक की उपस्थित देखकर यह माने ही प्रतीत हो कि मुख्य प्रविशेदन प्रांतीय प्रविशेदनों से भी अया-बीठा होखता बा परन्तु सभापति स्वागताध्यक्ष प्रादि के सन्देशबाहक भाषण यह बता रहे वे कि सम्मेलन भारत की एक सन्धी और सुगादीव इच्छा को प्रकट कर रहा है । श्रीमान् बड़ीया नयेरा का एक सिपि के प्रयोग का निर्देश श्रीमान् बनरयामबाब जिङला का हिन्दी को ब्यापक बनाने का प्रविश परीचा-विमान की भी बुद्धि के साक-साक सम्मेलन की कथा बुद्धि के समान्बार ब्यान देने योग्य वे । शाम को भी दोपहर की प्रीति विपय निर्वाचनी की बीठक हुई । रात के ब्याह बने एक प्रस्तावों का निर्माण होता और उनकी स्वीकृति होती रही ।

२ अप्रैल १९३४

दूसरा दिन

प्रातःकास डेढ़ बँटा देरकर साक्षिय-परिषद् का प्रविशेदन हुआ । सभापति श्री माबनमान श्री बतुर्वेदी के भाषण ने साक्षिय और राष्ट्रीय जीवन के बायोम्य उपरबासित

को बतलते हुए साहित्य को साम्प्रतिक शक्ति को सामने रखना। उनके भाषण को कुछ पंक्तिमें बतमान साहित्य के लिए प्रेरणा का काम करती है। इसके बाद प्रमचंद्र जी नवीन की धादि के भाषण हुए। इन भाषणों में साहित्य को जनता के जीवन के साथ घाब बनना हुआ बताया और हिन्दी साहित्य में व्यापकता पूरा राष्ट्रीयता को सामने के लिए ध्यानरयकता बतायी। मध्याह्न को विषय-निर्वाचनी की बैठक हुई और बार बजे से मुख्य सम्मेलन का ध्वनिबेधन प्रारम्भ हुआ। धीमुष् अयचंद विद्यालवार को विधि-पुवक मनसाप्रसाद पारितोषिक देने की बोपसा की गयी। रात्रि को इतिहास परिपद् की बैठक हुई जिसमें महामहोपाध्याय पीरीशंकर हीराचन्द घोषा धीमुष् अयचंद विद्यालंकार धादि के भाषण हुए।

१ अप्रैल १९३४

तीसरा दिन

प्रातःकाल धीमुष् पिरिबर लर्मा जगुर्वेरी के समापवित्त्व में दर्शन परिपद् की बैठक हुई। धादि के लम्बे सारगमित भाषण के बाद अल्प विज्ञानों ने भाषण लिये। इरान परिपद् ने एक स्वर से बरान शास्त्र के अध्ययन की सिफारिश करण हुए यह निर्धारित किया कि साहित्य-सम्मेलन बरान शास्त्र पर पुस्तकें सिफारिश करण प्रकामित करे। मध्याह्न को विषय-निर्वाचनी की बैठक हुई और शाम को बार बजे मुख्य अधिवरान प्रारंभ हुआ। विधाकियों को जपाधि-पत्र दिये गये प्रस्ताव पाठ किये गये जिसमें मापा के व्याकरण की मुट्टियों पर निबेचना करण हुए टैशन भी ने मापा-मुषार पर जोर दिया। रात्रि को विज्ञान परिपद् की बैठक हुई जिसमें समापति धी रामराज धी गीद् के मुम्बर मानिक भाषण के उपरान्त डा धीरलप्रसाद धी धीमुष् बीनानाज मुट्टेन धादि विज्ञानों के "बेरकाल निषय" धादि विषयों पर भाषण हुए।

२ अप्रैल १९३४

चौथा दिन

प्रातःकाल वरान सम्मेलन और सम्पारक-सम्मेलन की बैठक हुई। सम्पारक-सम्मेलन में कई एक महत्वपुवक प्रस्ताव स्वीकृत हुए। वरान सम्मेलन में धीमती बमता धादि जिन्हें ने सभामनी की ईधियात से बहुत ही मनोरंजक अनुभव-पुवक भाषण लिया। प्रमचंद्र जी धीनापसिह, लैलन्ध मुमार, मागनलाम जगुर्वेरी धादि के भाषण भी हुए।

॥ चौथा दिव ॥

परम सम्मेलन में श्रीमती रत्नकुमारी देवी का 'संदेश' नामक काव्य के अतिरिक्त ऐसा मासूम होता था कि साहित्यिक पहलवानों को खासी घाबाड़ा मिल गया हो। मध्याह्न को सबदानुसार विषय-निर्वाचनों की बैठक हुई। शाम की मुख्य अतिथिगत में प्रस्तावों की स्वीकृति के साथ-साथ शुक्रेश बिहारी मिश्र अतुरतेन शास्त्री आदि के शास्त्रीय और समीक भाष्य हुए। पाँच बाल के फंड की योजना का महत्वपूर्ण प्रस्ताव स्वीकृत हुआ और ईश्वर का धार्मिक भी स्वीकार किया गया। रात्रि की श्रीमहादेवी जी बर्मा एम ए के समा-नेतृत्व में कवि-सम्मेलन हुआ। कवि-सम्मेलन में अनेक कवि से और प्रायः तीन बार हजार अमता उपस्थित थी। श्रीमंत बचन साहसीप्रसाद सेठी (ईश्वर) रात्रिकुमारी चौहान आदि की कवितारें सुन्दर थी। बाकी जो कवि धाम बगला के द्वारा कवियों तरह 'हुट' किये गये। रात्रि के अंश बने तक कवि-सम्मेलन होता रहा।

इस प्रकार सम्मेलन सफल समाप्त हुआ। स्वागत-कारिणी के प्रबंध कर्तव्यों का प्रबंध प्रसंगगत था। सम्मेलन की ठीकरियाँ भी ठीक थी। यह बात धुमरी है, कि पास ही के राबल सिनेमा में अधिक भीड़ रहती थी। हिन्दी-प्रेमी-भाषी इस की उपस्थिति से विन्नी सम्मेलन के आश्रय को महता बट्टी नहीं। परन्तु बहुत बड़ बट्टी है।

२ अप्रैल १९३४

वे-राष्ट्र-भाषा का राष्ट्र

कोई समय का जब धम की एकता ही मनुष्यों के एकीकरण का मुख्य कारण थी और एक बर्मे के माननेवाले बहुधा सामाजिक और सांस्कृतिक बातों में भी एक ही बात थे। तब मात्र और संस्कृति जीवन और दृष्टिकोण सभी का उद्गम बम था। सिक्किम नहीं जापुति में बम की उस ऊँचे स्थान से हटा दिया और उसकी बगल पर बिन ध्यवस्वाम्यों की बिठाया उनमें जाया धमर मुख्य नहीं है, तो किसी से पाँच भी नहीं है। धाम हरेक कौम की अपनी एक भाषा है। अमेरिका की कौमी बवान रखने पर भी दो कौम हैं। बन्धन अमेरिका में कई कौम स्पेनी और पुर्तगाली जाया बोलती है फिर भी वे धमर-धमर राष्ट्र हैं। राष्ट्रों के निर्माण में भौगोलिक परिस्थितियाँ ही मुख्य हो गयी हैं धमर भाषा भी उन्हीं भौगोलिक परिस्थितियों से बनती है। एक साथ इनके के राष्ट्र बाने एक साथ बवान बना सेते हैं या यों नहीं कि कुछ प्राकृतिक शक्तियाँ साथ ही धाम उनकी एक साथ बवान बना देती हैं। इस लिहाज से कभी कभी बम-रस पाँच-पाँच कौम में बोलती बधस जाती है। बिकिन बोधा बहुत अन्ध होते हुए भी इन बोलियों में कुछ समानता रहती है और बड़ी समानता एक देगी जाया क बप से बनटिन हो जाती है। निजम साहित्य की रचना होने लगती है और बड़ी समय पाकर उन प्राप्त या देश की कौमी

कबान बन जाती है। धाम विहार मंगुल प्रदेश पचास सालोंका भी पी राजपूताना के
 धारि प्रांतों की बोनियों में काफी धरत होते हुए भी हिन्दी अपनी मातृभूमिका के
 धारण इन प्रांतों की मातृभूमि बनी हुई है। हम अपने काम इसाके के बाहर
 बालों व बासोंवा या पत्र व्यवहार करन में हिन्दी का ही व्यवहार करते हैं। अगर उद्द
 को भी हिन्दी में लिखा गया था—क्योंकि वहाँ तक बोनी का सम्बन्ध है इन दोनों
 मापाओं में कोई धरत नहीं—तो हिन्दी बोसमबालों की संख्या पन्द्रह करोड से कम
 नहीं है और समयमेबालों की संख्या तो इतने नहीं क्या है। धारण है कि धामी
 तक वह क्यों बीभी पबान नहीं बन गयो। कुछ दिन पहले तक तो धम्य प्रांतीय मापाएँ
 अपने उमठ साहित्य के बल पर यह स्थान बने का दावा करती थी लेकिन धनुसब ने
 धम यह निड कर दिया है कि हिन्दी ही में यह जमता है कि बहुकीमी कबान बन मक।
 बात यह है कि धामी तक हमने इन विषय की धीर ध्यान नहीं किया। दृष्टिगत भाग में
 हिन्दी-प्रचार का काम औरों से हो रहा है। धरत धीर प्रांता में भी प्रचार किया जा
 सकता तो धम तक मंत्रिम हमारी धीको ने धामने होती लेकिन धम तक हमारी
 शोधित पठिचाओं तक ही बन्द रही। इस लेख में धा सक्ताएँ काम कर रही हैं उन्हाने
 माहित्य-निर्माय का काम हाथ में ले लिया जिसमें उन्हे बिसधुन सफलता नहीं हुई
 क्योंकि वे साहित्य-सुरधार नहीं बनाया करती या पुराने कवियों के धम्य व धोत्रने में
 मधम धीर शक्ति का दुरपयोग किया थाकि जिस तरह का साहित्य वे करीं न तिकाय
 मके वह धाबकम की जगहों को पूरा नहीं करता। हिन्दी उद्द का धरत का मगडा
 धनबता धडा कर दिया गया। जकरत भी कि जिस तरह दृष्टि में हिन्दी प्रचार का
 धाम ही रहा है, उनी तरह धम्य प्रांतों में भी होता। धीर सबसे बड़ी जकरत इन बात
 की थी कि हमारा राष्ट्रमात्रा परिपद् होता जिसकी हरेक प्रांत में शात होती। उन
 परिपद् में हम प्रथक प्रांत के साहित्यिक धरारबिया का निर्मात कर मकते धीर
 माहित्य का निर्मात भी कर सकते धीर उनकी सलाह धीर सहयोग से राष्ट्रमात्रा का
 प्रचार ही न बकते बकि राष्ट्र साहित्य का निर्मात भी कर सकते। राष्ट्र के लिए राष्ट्र
 भाषा तिकरी बकरी है, उठना ही बकरी राष्ट्र-साहित्य भी है। धीर साहित्य मंगुठि
 का एक प्रवाल धंग है। पहले इन तरह के परिपद् की जकरत न समयमे जा रगे हो
 है कि जब तक हम धम्य मापात्रा के सन्ध्याओं की हिन्दी में धाने का निर्वाण न
 धीर हमारे धरती एने सम्मेजन न होंय त्रिममें सभी मापात्रा क मजक धीर बिडार
 हों धीर धाने धनुसब धीर प्रतिभा में एक हमारे का प्रभावित करें, हम राष्ट्र क
 न कर मकने। धामी तक हमारे धरती जो कुछ है वह प्रांतीय है, उन पर र
 नहीं है। हम एच का दुर करने क लिए हमें सोच हो ऐसा धायोत्रन क
 भारत की साहित्यिक प्रतिभा को एरविन कर सकें। हमें विरधान

साहित्यकार गृही से हमसे सहयोग करेंगे क्योंकि राष्ट्रभाषा में मिलकर वे अपने विचार क्षेत्र को कहीं व्यापक बना सकेंगे। जब हमारी राष्ट्र भाषा होगी हमारा राष्ट्र-साहित्य होगा तभी अन्तर्राष्ट्रीय भाषाओं की अन्तर्गत में हमें स्थान मिल सकेगा। मद्रास के हिमाचल पत्र विद्यार्थी म एक बंगाली विद्वान् ने इसी विषय पर अपने विचारों को प्रकट करते हुए कहा है—

प्रांतीय भाषाएँ अपनी-अपनी विशेष रचना सीसी पर बनती हैं। इसमें कोई हानि भी नहीं। लेकिन हम कभी अपनी राष्ट्र-संस्कृति में उत्पन्न कर सकेंगे जो प्रांतीय संस्कृति से प्राप्त हो जब तक हम देश के जुने हुए साहित्यिक रचयिताओं की सहाय, दायित्व और प्रकाशन न मिले। वही लोग कदा के ऊँचे आदर्श हमारे सामने रख सकते हैं।

महात्मा सहाय बड़ीरा ने अपने भाषण में धारि से अल्प एक इसी बात पर जोर दिया कि हिन्दी को क्यों और कैसे राष्ट्र भाषा बनना चाहिए। महात्मा सहाय ने हिन्दी को अपने राज्य की सरकारी भाषा का स्थान दिया है। इसलिये उनका कथन और भी महत्व रखता है। लेकिन हम आप क इस अर्थ से सहमत नहीं हैं कि हिन्दी केवल सामान्य भाषा के रूप में ही राष्ट्र भाषा हो सकती है। विद्वान् सेनाक अपनी प्रांतीय भाषा को प्रोत्साहन देना न सिद्ध करना न पसन्द करते। लेकिन जिसमें लिखने की प्रवृत्ति है, उसके लिए कदा कोई कठिनाई नहीं हो सकती। हिन्दी के ही सरल भाषा को अपना सेवा विद्वानों के लिए केवल दिनों की बात है। जब उन्हें हिन्दी द्वारा विस्तीर्ण क्षेत्र मिलेगा तो वे प्रांतीय भाषाओं में लिखने पर भी अपनी अच्छी से अच्छी रचनाएँ हिन्दी में भी करेंगे। जिस तरह योरोप में प्रवेश पान के लिए किसी रचना कर अंग्रेजी या फ्रेंच में करना आवश्यक है, वही तरह भारत की जनता के सामने आने के लिए एक हिन्दी में लिखना आवश्यक हो जामया लेकिन अन्तर्गत बोधी देश के लिए मान भी हैं कि सर्वप्रथम बाएँ को अपनी भाषा का मोह हिन्दी में न लिखने देना तो भी उन विद्वानों के उत्सर्ग और परामर्श से काम तो उठाना ही जा सकता है। ऐसे सम्मेलनों से प्रत्यक्ष काम लिखना होता है, उसके कभी व्यापक अर्थवत्त्व लाभ होता है, जिससे विचारों में प्रवृत्ति आ जाती है, बुद्धिमत्ता बल आता है, और ऐसे संबंध पैदा हो जाते हैं, जिनके सामने प्रांतीय दुर्भावनाएँ आप ही आप मिट जाती हैं।

हालांकि संसार में भारत ही एक ऐसा देश है, जिसकी अपनी कौमी जवान नहीं है। जब एक अन्तर्गत केन्द्रिय शासन के सिवा हमें एकता में जीवनेवाली क्या चीज है? हम में शक्ति नहीं वह भी राष्ट्र भाषा ही हो सकती है।

६ अप्रैल १९३४

हिन्दी का दावा

किसी राष्ट्र को बनाने के लिए संस्कृति की समागता जरूरी होती है। माया और साहित्य संस्कृति का मुख्य धर्म है। जब तक एक माया और एक साहित्य न हो एक राष्ट्र की कल्पना नहीं हो सकती। जब तक कौम में अपने विचारों के फैलाने की कोई एक माया न हो वह कौम नहीं कहला सकती। भारत में कई सम्प्रदाय प्रांतीय मायाया के होते हुए इन जो हिन्दी को राष्ट्र माया का स्थान देना चाहते हैं वह इन लिए कि वह भारत में अधिकतर समझी जाती है और किसी प्रान्त में उसको धारण के सिवाया जा सकता है। बंगला बहुत सम्पन्न प्राण है, लेकिन बंगाल के बाहर उसे कोई समर्थ नहीं करता। यही हाल मराठी मराठी और अन्य प्राणियों का है। हिन्दी ही एक ऐसी माया है, जो सारे भारत में फैली हुई है। दक्षिण में बेशक उसकी पहुँच नहीं थी लेकिन यह हिन्दी प्रचार धार्मिक ने बड़ी भी उसके समझने और बोझने के माध्यमों की धारा में पैदा कर लिये हैं। इसमें संदेह नहीं कि राष्ट्र माया हिन्दी हमारी इस प्रांतीय हिन्दी के रूप से बहुत कुछ प्रिय होगी। उसमें सभी प्रांतीय प्राणियों के शब्द और मुहल्ले मिले होंगे और वह हिन्दी व्याकरण के नियमों को भी कभी-कभी तोड़ दिया करती। उस देश में उसका रूप कुछ-कुछ मेटा और विस्ती की प्रकृतियों से मिलता होगा। इस विषय में सहयोगी बनना चाहता है—

उसके नियम में इतना बड़ देना काफी है कि उन्हीं और हिन्दी प्राण के रूप में ही समाग है। निरि का बड़ अन्वय है, परन्तु निरि का निखर तो सीखनेवाने की हृदय से ही होना। जो निरि भारत के अधिकतर प्राणों में धारण के सीखने या सीखने वाली ही राष्ट्र निरि बन जायगी। कुछ समय के लिए दोनों ही निरियाँ साथ-साथ ही रह सकती हैं। यही कारण है कि हिन्दी के विभागीय कभी यह माय पैदा नहीं करते कि किसी स्थान में उन्हीं को निर्वासित करके हिन्दी को स्थान दिया जाय। वह तो बड़ी चाहते हैं कि जहाँ कभी हिन्दी को स्थान नहीं मिला वहाँ उसका माय खोज दिया जाय।

२३ अगस्त १९३४

उपभाषाओं का उद्धार

एवं यह सोचकर धारण भी हुआ और तब भी नि नहीं वहीं प्राणों की उप भाषाओं में जान डालन का प्रयत्न किया जा रहा है। अपनी ब्रजभाषा बुद्धिमत्ता ही और अन्य भाषाओं में प्राण हिन्दी में शामिल समझी जाती है और इन भाषाओं के माय धारण तो साहित्य मौजूद है। अपनी और ब्रजभाषाओं का तो क्या बहना। हिन्दी साहित्य

॥ उपभाषाओं का उद्धार ॥

में जो कुछ है वह वहीं दोनों उपभाषाओं में है। तो क्या यह भ्रंश है कि बोलियों की साहित्य का रूप दिया जाय ? बोलियों में जो कुछ साहित्य है, वह धाम नीतों में रचरचित है और धाम नीत एकत्र करने से धरम जन बोलियों की रक्षा हो सकती है तो हम इस धामनोत्थन के साथ हैं। लेकिन यह क्याल कमाना कि जोअपुरी तिहुती और प्राप्त की एक ही एक बोलियों में साहित्य की रचना की जाय और उसके पत्र निक्कलें शक्ति के धरमधरम के सिवा कुछ नहीं है। पण्डित करीब धारणी जिम धाया को बोसते समझते और लिखते हैं, वह तो धनी साहित्य नहीं बना सकी उपभाषाएँ वह धमत्कार जैसे कर लिखावैनी जिनके बोलने और समझनेवाले भाषाओं ही एक एक बने हैं।

२३ अप्रैल १९२४

हिन्दी उर्दू और हिन्दोस्तानी

ऊपर लिखे हुए नाम से प्रयाग की हिन्दोस्तानी एकेडमी ने एक न पत्रलिहू की धर्मा का यह भाषण पुस्तक-रूप में प्रकाशित किया है, जो उन्होंने मार्च २२ न एकेडमी में दिया था। धर्मा जी हिन्दी और संसुठ के ही नहीं फारसी और उर्दू के भी प्रकांड पंडित से और उनका भाषण जितने जोर और परिधम से लिखा गया है उतना ही मनोरंजक भी है। धारणे पहले नाम से यह लिखाया है कि हमारी भाषा का पुराना नाम हिन्दी था और धमीरकुसरो के बक्त तक 'उर्दू' का प्रयोग ही न हुआ था। धमीरकुसरो ने 'खालक बाणे' में बार-बार 'हिन्दी' या 'हिन्दवी' शब्द का प्रयोग किया है। कवि 'मीर' के बसाने में 'रेकता' शब्द का व्यवहार शुरू हुआ। 'उर्दू' शब्द का व्यवहार धरारकुसी धरी से पहले कहीं नहीं पाया जाता। धारम इसका कारण यह है कि उस बक्त हिन्दी में फारसी और अरबी के शब्द इतनी कसरत से न धामे थे। धम फारसी और अरबी शब्दों की बूब भरमार हो गयी थी हिन्दी के दो निम-निम रूप हो गये और धम एक बही नाम बना जाता है। हिन्दुस्तानी शब्द का व्यवहार धंधेजी राजकाम में शुरू हुआ है और धम यह उम निमी-नुमी भाषा का पर्याय है, जो जन भाषारण की भाषा है और जिसमें फारसी-अरबी के बहू समो शब्द बढ़लने से अकुत्त हाठ जाते हैं जो धाम ठीक पर बोले जाते हैं। उसका सबसे गवा भाष राष्ट्र-भाषा हो गया है।

फारसी लिपि का प्रचार तो उठी बक्त से हो गया जब धूमसमानों का भारत पर धमिकार हुआ। शही कर्मान पत्र-व्यवहार धाधि और धारा धधानती काम फारसी लिपि में होता था। पड़े-मिसे हिन्दुओं को भी फारसी नीमनी पढ़ती थी और जिस तरह धात्र भी धंधेजी पड़े लोग बहुधा धंधेजी में ही निजी पत्र-व्यवहार करते हैं क्योंकि धंधेजी लिखना उन्हें हिन्दी लिखने से धामान मानुम होता है, उनी तरह उन बक्त भी निज के कामों में फारसी लिपि का व्यवहार होने गया।

उड़ू धीर हिन्दी ब्याकरण में धीरे-धीरे भेद बढ़ाया जा रहा है। मौलवी लोग ब्याकरण का फारसी की तरफ झींचते हैं धीरे परिष्कृतकृत संस्कृत की धीरे। शर्मा जी ने राजा शिवप्रसाद धीरे मौलवी धर्मभुक्तक के लेखों से प्रमाण देकर यह सिद्धाया है कि उड़ू हिन्दी के ब्याकरण में जो भेद है वह उन दोनों को अलग-अलग रसों पर चलने के लिए मजबूर कर रहा है। मौलवी धर्मभुक्तक साहब फरमाते हैं—

‘हमारे यहाँ अब तक जो पुस्तकें ब्याकरण की प्रचलित हैं उनमें धरवा ब्याकरण का अनुसरण किया गया है। उड़ू बालिस हिन्दी अबान है धीरे हमका सम्बन्ध सीधा धरवा-भाषाओं से। इसके विरुद्ध धरवी भाषा का तात्त्विक ऐतिहासिक प्रामाण्य के परिवार से है। इसलिए उड़ू का ब्याकरण विज्ञान में धरवी अबान का अनुसरण किसी तरह जायज नहीं। दोनों अबानों की बियोगताएँ पक्क-मुक्क हैं जो विचारने से स्पष्ट प्रतीत हो जायगी।

इन उद्धरण में मान्य होता है कि समसमान विद्वान् हिन्दी-उड़ू के ब्याकरण भेद को कितना दूषित समझते हैं धीरे किम तरह इन भेद को मिटाना चाहते हैं। एक दूसरे समसमान मौलाना बहीदुद्दीन मनीम का कथन भी विचार करने योग्य है—

‘हमारे बाब दास्त उड़ू अबान के गैर धारियाई होने का सबूत धरवी तरह देते हैं। वह उड़ू अबान की किमी विज्ञान का उठाकर उमय से बोझी-मी इबारात नहीं से इंतफाद कर लेते हैं धीरे उन इबारात के अलफाद मिल कर बताते हैं कि देखो इसमें धरवी के अलफाद अनुकावला फारसी धीरे हिन्दी के प्यारा है।

मगर ‘फरहम आनफिया से पता चलता है कि हमारी अबान में हिन्दी के अलफाद उमय अबानों से प्यारा है। धीरे जो इबारात हमारी अबान को खीब तानकर धरवी की तरफ से आना चाहते हैं वह एक एनी उलतो करते हैं किमसे इन अबान की प्रकृति बिपद जायगी।

निधि-अर धात्रकम हमारी एक बड़ी जन्मि समस्या है। इस हमने धार्मिक धीरे ऐतिहासिक महत्त्व से ज्ञाना है। यह ता बुद्ध-मुद्ध सम्बन्ध ज्ञान पढ़ता है, कि फारसी-धरवी के बीच असदृष्टि के शब्दों का व्यवहार कम हुआ जाय धीरे हिन्दुस्तानी भाषा धाम तीरे पर व्यवहार में धाल लये। निधि निधिभेद के भिदने की सम्भावना दूर प्रविष्य में भी नजर नहीं धाना। फारसी निधि से धमन प्रामकता धीरे धरादता का बोध है। तो एक बड़ा दुल भी है धीरे वह उगधी बलि है। फारसी निधि एक तरह का शादईद है धीरे उसमें समय धीरे स्थान की बधत होती है। धीरे हमारे ब्याम में उगधी यह लुपी ही उगधी रखा कर रही है। अमर ममार्ग में जहाँ बही ऐतिहासिक भाषाओं का व्यवहार है, वहाँ उमने सुधार की योजना की जा रही है। उड़ू में भी कई विद्वानों ने निधि का मरम बनाव की धीरे ध्यान लिया है धीरे व समय-समये चिह्न बनाकर उन शब्दों को निखाना चाहते हैं किमसे निधि फारसी निधि में कोई बाध ही नहीं है। मगर यह उरबीर शायद

हो कारगर हो सके ; यद्यपि मैं मसजिद, मद्रास और मीसूर आदि प्रांतों के मुसलमान वहाँ की भाषा का व्यवहार करते हैं । सिंध मुजरात महाराष्ट्र तथा बंगाल के मुसलमान भी वहाँ की प्राचीन लिपि ही का व्यवहार करते हैं । बिहार में भी साधारण मुसलमान कीर्षी लिपि ही काम में आती है । फारसी लिपि का व्यवहार उत्तर भारत और पंजाब के मुसलमान ही करते हैं । अतः हमारे मद्रास में हरक खान के लिए अबू धीर हिन्दी लोगों ही भाषाओं का लिखना-पढ़ना सबसे पहले तक साजिमी कर दिया जाय तो हमारे काम में कुछ दिनों के बाद स्थिति समाप्त होगी ही लिपियों में सम्मिलित हो जायगा और ऐसे ही लिपि अधिक परिष्कृत और सुगम और सुबोध खान पड़ेगी उनका व्यवहार करेगा ।

इस प्रश्न पर जो मुसलमान विद्वानों के विचार दिये जा चुके हैं । अल्प कई विद्वानों ने भी कुछ इसी से मिलती-जुलती सम्मति प्राप्त की है । उनमें जो विचारशील हैं वे अबू ब्याकररुह शैली विगत आदि खेदों को मिटाने के पक्ष में हैं और प्रायः सभी चाहते हैं कि अबू में फारसी और अरबी के उच्च इतनी कसरत से न साथ आये । एक साहब का तो कथन है कि—

‘उर्दू पर अधिकार हासिल करने के लिए लिख विस्ती या मसजिद की खजान का अनुकरण काफी नहीं है, यह भी उकरी है कि अरबी और फारसी में अस्तित्व रखने की नियाजत और हिन्दी भाषा की अक्षी योग्यता प्राप्त की जाय । अबू अभाव की बुनियाद जैसा कि मान्य है, हिन्दी भाषा पर रखी गयी है । उसके निम्नान् कारक-बिह्व और संज्ञापर हिन्दी से लिये गये हैं’ ‘यह उर्दू खजान का साधन जो हिन्दी भाषा को सुलभ नहीं मानता और महज अरबी-फारसी का पाठी बनता है वह मानो अपनी गाड़ी को वे पहियों के टिकाने तक पहुँचाना चाहता है ।

इसी से मिलती-जुलती राम मीलाना मसीम पाणीपती की है । उन्होंने अबू खजान को ठरकरी देने और सही मानों में हिन्दुस्तानी बनाने की ठरकरीय यह बयान की है—

‘कि हिन्दू मसजिद हिन्दू बेमाला हिन्दू इतिहास और हिन्दू-साहित्य के दृष्टान्त का इजाफा करें, तो इससे हमारे मसजिद और अल्प पर कोई घसर नहीं पड़ सकती और न कोई बीज हमें मजबूर करती है कि इन बीजों के मजबूर पर हम मजिद करें बल्कि इस इजाफे से हमें निम्नलिखित लाभ होने—

(१) हम मिश्र-मिश्र प्रकार के विचारों को प्रकट करने में ज्यादा समर्थ हो जायेंगे ।

(२) यह इतना हम पर नै बुर हो जायगा कि हम नेत्रण नाबिक भूषा के कारण हिन्दू-साहित्य से बुर जायेंगे ।

(३) हिन्दू हमारे साहित्य से ज्यादा परिचित हो जायेंगे ।

(४) हमारी जमान सही मार्गों में हिन्दुस्तानी जमान कल्पाने के योग्य होगी ।

(५) हिन्दू मतसमझों के ऐक्य की बुनियाद मजबूत होगी ।

घाये बसकर शर्मा भी मे हिन्दी के प्रति पुगने मुसलमानों के अनुगम का बतान
दिवा है । धार कहते हैं—

'उर्दू के ही नहीं बल्कि पहले फार्मी ने बड़े-बड़े मुसलमान कवियों ने हिन्दी
में कविता की है । हिन्दुस्तानी या छोटी बोली के धारिक कवि धर्मी सुसरो माने गले
हैं । बा' के भी बनेक मुसलमान विद्वानों ने भिन्न-भिन्न मुहम्मद जामनी रहीम मुख्य
हैं हिन्दी में कविता की है । मीर जुसामधमी धारा' हिन्दी कविता के अच्छे पारसी वे ।
मीर ख़ुमसुआह भी अच्छे काव्य-मर्मज्ञ थे । सम्यद जुसामधमी 'रसमीन ने नादिका-
बख्त पर एक पुस्तक उर्दू स्वाइको में लिगी है । 'रसमीन के अतिरिक्त मधुनाथक
रसजल बोकी बनील मुबारक धारिक नामी कवि हुए हैं । उर्दू के मीरूना शम्बर
हजरत 'हसरत' मुहानी म भी पूर्वी हिन्दी म पर बनये हैं जिनका एक नमूना यह है—

कहाँ गए मी।ह बावरी बनाइके ?

बावरी बनाइक फरकियाँ रिदाइके कहीं गए :

मम माहुन इवाम स रील नाग

मिस बिन मुजल रही ठग घाप ।

बिरह की रीम निपट बंधिपारी

रोबत बोबत बटल जाय जाग ।

अम का रोम लगाइ के हसरत

राय रंग मर बीन्ह त्याग ।

अन में शमा भी मे हिन्दू-मुसलमान बाना ही म बपील की है—

'हिन्दी उर्दू का मरझार दोनों जातिमों के परिधम का फल है । अरबी-अरबी
अपह भाषा की इन दोनों सत्ताया का बिलय मजबूत है । दोनों ही म अपने अपने तीर
पर बनेक उपरति की है । दोनों ही के मास्त्रिय-अकार म बहूमध्य अन्त मीचल ही गब है
धीर हो रहे हैं । हिन्दीबाने उर्दू-मास्त्रिय मे बहुत कुछ सीम मजये हैं । इमी ठरठ ठग
बाये हिन्दी के लजाम म फायदा उगा मजये है । यदि बाना एष एरू दूमरों के निपट पहुँच
बायें धीर मीर-बहि को छोड़कर यदि भार्द-भाई की तरह जलाम म मिल बायें तो यह
जगत अरिपियाँ घाने घाप ही दूर ही बायें जी एक को बमये मे बर रिय हू है । एमा
होना बोर्द मरिबल बात नहीं है । सिर्फ मजबूत इरादे धीर हिन्दुमत की उमगत है । बिना
एकठा के भाग धीर जाति का कम्पाण मही ।

अप्रैल १९२४

दक्षिण भारत में हमारी हिन्दी प्रचार यात्रा

दक्षिण भारत हिन्दी-प्रचार-सभा की कृपा से हमें प्रबन्धी बहूँ के हिन्दी के क्या सकों से मिलने और उनके प्रचार की सफलता को अपनी भाँखों से देखने का अवसर मिला। सभा न इस वय हमें पश्ची-दाल के प्रबन्ध पर दीक्षान्त मापस करने का मेवता दिया और हम २७ दिसम्बर की बम्बई से चमकर २५ की शाम को मद्रास जा पहुँचे। हमारे साम हिन्दी प्रन्ध रलाकर कार्यालय के मालिक भी नापूराम जी प्रेमी और बम्बई-हिन्दी-प्रचार-सभा के प्रमुस कापकर्ता भी धार संकरन् व। तीसरे दरजे का सडर वा मवर रास्ते में कोई जास तकनीक नहीं हुई। प्रमी भी अपने साथ मयसक क मद्दू और पुर्तगी रक जाने थे। बीपारी के बाद से जाने-बीने के विषय में वे बहुत सतक रहते हैं। रास्ते में हमने कूब मद्दू खाये। पुर्तगी इपर बहुत कम स्टेजनों पर मिलती है। एक-दो स्टेजला पर मिलती भी हैं तो बहुत खाल। एक स्टेजला पर हमने पहली बार इवमी खायी। यह खाल और उदव के बाल के मीरे से बनती है। दोनों मीरों की समल माया से मिमाकर मूध मते हैं और इस मूधे हुए घाटे को रस-भा यो ही पका रहने देते हैं। इससे इसम कुछ सट्टापन भा जाता है। दूसरे दिन इसके मोटे-मोटे टिकन्ड बनाकर भाप पर पकाये हैं। इस प्रान्त में इवमी खाने का बहुत रिवाज है। होटलों में बेसिए तो हर एक खायी इवमी और बाल और बटनी खाता हुआ मडर घायेगा। मिटाई से यहाँ मिटी को प्रेम नहीं है। हाँ अब उत्तर भारत के संसर्ग ल मिटाई का कुछ प्रचार हो चमा है।

मद्रास पहुँचकर हम रात्रमाच जी योगनका के मेहमान हुए। वीबाम्ब से भी काला कालेसकर जो भी बहूँ उखरे हुए थे। उनके बटनों का खालन्ड मिला। भाप केवा की मृति है। हिन्दी-प्रचार न भाप जो मिमांछात्मक काय कर रहे हैं वह बहुत ही भासाजनक है। अब तक किसी बात की उपयोगिता न विचार्य वे हमारा प्रम उठक प्रति स्वामी नहीं हो सकता। हिन्दी ज्ञान को कैसे उपयोगी बनाया जाय—वही प्रम भापके सामन है। बड़े-बड़े व्यापार तो संघर्षों के हाथ में हैं। बहूँ हिन्दी की बाल नहीं बल सफ्टी। मगर छोटे-छोटे व्यापारों में जो भारतीयों के हाथों में है, हिन्दी का व्यवहार करने से कुछ सुबिधा हो सकती है। इसी हेतु से भाप परिस्थितियों का अध्ययन कर रहे हैं। हमारी शुभच्छाएँ भापके माथ हैं। योगनका भी उन बख्सी पुवों में हैं जो बल कमला ही नहीं भागते उसका सपुपनीव करना भी जानते हैं। भाप की बात से फिगनी ही साधनिक संस्थाओं की सहायता मिलती रहती है, और हिन्दी-प्रचार के तो भाप एक स्तम्भ हैं। अमिमान तो भापको धू भी नहीं गया। भाप बड़े ही हंसमुख निष्कपट उद्योगी मुषक हैं और सजा के कोपाच्छ हैं। भापके घर हम लोग पाँच दिन रहे, बिम कुल इस तरह, जैसे अपने ही घर में हों।

पदवी-दान का जलसा गोलस हास म था । मरा समाज था कि बहुत बड़ा जन-
 घट होया लेकिन मालम हुआ कि छट्टियों के कारण बहुत मे हिन्दी प्रेमी बाहर बन गय
 है । यहाँ के रेलवे विभाग मे मस्त टिकट जारी करके लोग भी जितने लोगो को मशाम
 से बाहर पहुँचा दिया था मगर समाजद्वों को लाशर बाड़े कम हो बरी जितने
 लोग मे प्रायः सभी हिन्दी-प्रचार से सम्बन्ध रखने से ही हिन्दी प्रचारका से हम मिला
 बरी हम को देखकर मन में आशा थीर एक की मुहमुदी हास लगती थी । कुछ समय ता
 कई-कई से मीन उप करके प्राये से हीर उनमे देखियो की भी आनी लाशर थी । हम
 आन्दोलन-की बुनियाद केवल सांस्कृतिक नहीं उससे बड़ी अधिक राजनीतिक है जो सम्पूर्ण
 देश को एक राष्ट्र-भाषा के मुख से बंधा देखा जाहता है । इसलिए इसे प्राप्त के प्रति
 चिन्त नेहायों का महयोग भी प्राप्त है और त्याग-आत्मता से बरे व्ययवर्थाता का भी ।
 भी राजपौसाभाषा जिन समा के डायरेक्टर और भी से नापेरबर एक जिनक बाहम
 प्रसीधन हों और केवल नाम क लिए नहीं बल्कि उसके हरेक काम से विनयन्वी
 रहते हों उन समा का प्रभाव और प्रचार इतना तेजी से बढ़ रहा है तो का प्रारम्भ
 है । १९३ म प्राथमिक अध्ययन और राष्ट्रभाषा टीना परीक्षाया से बँटनवाना को
 लाशर एक हजार सप्त ती थी १९३३ म भी हजार साठ ही गयी मगर १९३४ म यह
 संख्या घट कर चार हजार छ ती इकठामिस हो गयो । इससे सफा होती है बरी हिन्दी
 का लोक पट तो नहीं रहा है । अथवा गमा है तो यह लंब की बात होनी । हमारा
 कर्तव्य है कि इन अवनति के कारणों को जोड़ें और उन्हें दूर करने की षटा करें ।

मनम मे देखने के साथक केवल हो चीजें हैं । एक ती समय का ता आ मात
 मीन तक बता गया है, कुमरु अथार की थियोमोडिकल सोमार्दो का केन है । इतना
 रमणीक बन-उठ आरतकय से हीर नहीं । मीनों तक समूह के किलार टलरी-टलरी
 हवा का आलम्ब उठाते बने जाइये । अथार मशाल से आन मीन पर समर के विभाग एक
 कमोनी के रूप में है । समका क्षेत्रफल की मीन स कम न होना । बहुत ही माट-मुपरी
 फूल-पत्तों से मजी हुई जयह है । पुस्तकालय है प्रचारान-विभाग है मन्दिर है मंत्राल-
 मय है कलकारियों और अन्य थियोमोडिकल मञ्जना के विभाग-अथार ? बीच से एक
 विभाग बट-बच है, जो अपनी बुरी सोड में लयमम हो हजार प्यका की शरणा दे मरता
 है । बरने है स्व० मिसेज एनीकेमस्ट बनी-कमी बृध के मीने बँटनर रूप के पियामुमा
 को अपना उपदेशमठ विभागा करती थी । यह तपोभूमि दरमोय है । इन दिना हम
 सत्ता का बाधिकोत्मक हो रहा है । इन दिना म प्रतिनिधि प्राये हुए हैं ।

मुझे बा बँटकों में प्राप्त के प्रमुख प्रचारका से आनधीन बरने का मुपयगर
 मिया । तीन ठगन ती उत्तर भारत के हैं जिन्होंने दक्षिण ही को अपना पर बना लिया
 है । सभी मशालाओं के दिनों में हिन्दी-प्रचार की समन आयन होनी पी । सभी म
 जलाह दीग पहा । सभी इन काम को पेशा समरु कर नहीं विनयन्वी के माय कर रहे

है। उन्हें साहित्य के भी प्रेम हैं और साहित्यिक-विषय की वर्षा सुनने के लिए बड़े उत्सुक पाव गये। महात्मा देवदूत जी विचारों में जो कैरल प्रांत के संभारक हैं और बिहार प्रांत के निवासी हैं, यद्य-काव्य के बा गंजहू भी प्रकाशित करार हैं और एक ग्रामा भी मिल रहे हैं। इन संघर्षों को पहले से विरिक्त होता है कि आपकी धनुभूतिमां किछनी कोमल और आपकी भावनाएँ किछनी मामिक हैं। उसक साथ ही भाषा पर भी आपका पूरा अधिकार है।

एक रात को हम प्रचारकों का अविनय-कीर्तन बेसन का बरकर मिला। दो साल हुए कुछ सालों में एक नाटक परिपक्व बना ही थी और प्रचार क लिए साम में दो एक नाटक लेन मिया करते थे। मठमेव के कारण इस वर्ष परिपक्व में कोई नाटक नहीं लेता। मठ उन संज्ञनों से धनुरोप है कि व अपने महाम् चरित्र की ध्यान में रखकर वैयक्तिक मठनेवों को भुन जायें और प्रचार क इन धन को विविध न होने दें। मैंने सुनिवास नाटक के जो दो-तीन हरम देखे उनसे इन मठनेव पर पहुँचा कि बोड़े से संवम के साथ वहाँ के अभिनेता बहुत सफल हो सकते हैं। एक दिन म बाखकन का पार्ट दिखाया गया था। मुझे यह बात बहुत पसन्द आया। बाखकन के मठनेव म हर का कोट की और विद्रोह का—वह विद्रोह जो ईश्वर की सत्ता से भी इनकार करता है, जिसे संसार इस कपट सन्ध्या और अत्याचार का संस्कार-या नजर आता है।

मद्रास में दो सभासभ्य हैं। एक पशु-पक्षियों का और दूसरा जस-जीवों का। वही बहुत साधारण है पर मछली नभन बड़ा ही सुन्दर है। मछलियों का ऐसा विभिन्न विभिन्न और अद्भुत संघर्ष भारतवर्ष में दूसरा नहीं है। लीसे के पानी से भरे केसों म रेश-बिरली मछलियों की क्रीडा बड़ा ही मनोहर दृश्य है।

समा में जो मकाम किराये पर ले रहे हैं। एक में तो उसका बपतर पुस्तकालय पढ़ी-विद्याम आदि है दूसरे म प्रथ है। दोनों का किराया तीन सौ पचास रू देना पड़ता है। मन्त्री जी ऐसे मकाम की तलाश म हैं जहाँ दोनों ही काम हो सकें। ऐसा मकाम मिल काम तो सामय किराये में कुछ किरायात हो और काम व्यापक व्यवस्थित रूप से चलने लगे। ऐसी उपयोधी संस्था के पास अपना नभन न हो और उस लड़े तीन हजार रुपये कालामा किराये के रूप में देना पड़े यह हिन्दी प्रमिया के लिए बर्न की बात नहीं। इनका धारस यही मामूम होता है कि अभी तक हमने हिन्दी-प्रचार का महत्व नहीं समझ पाया। इनकी जिम्मेदारी बखिख से कही व्यापक उत्तर भारत पर है।

हिन्दी या हिन्दुस्तानी वचिण भारत के लिए निवेशी भाषा के नमल है। अध्यापक भी प्रायः वचिण के नाम हैं। धाना की पुस्तकों पढ़ने के बिना हिन्दी को व्यवहार म लाने के शायद बहुत कम मौके मिलते होंगे। इसका परिहार यह ही सकता है कि इनका भाषा-ज्ञान केवल विद्यार्थी ज्ञान हो कर रहे जाय। इनके कुछ उपाधरस भी मिले। हम ऐसे कितने ही मज्जम मिले को किराये तो समझ लेते हैं, लेकिन हिन्दी

बोल नहीं सकते और न हिन्दी भाषण धामानी से समझ पाते हैं। अगर ध्वन्यालय
 कालों में धारों से हिन्दुस्थानी ही न बोलें और इसका खाम रबे कि धाव भी धापन
 में कम से कम क्याय में हिन्दुस्थानी का व्यक्तार करें तो उन्हे शय बोलन का धन्याय
 हो पायगा और बहु हास्यजनक मूम में न गये जिनकी एक बिलोरी-प्रचारक महोदय न
 हुए मिमाले देकर हमें कुछ हँसाया था। दूसरा निबन्ध का में प्रचारक महोदय ने
 कहेंगा यह यह है कि वे हिन्दी को पत्रों-पत्रिकाया का ध्वन्यजन वर्णन रह प्रिमम उतका
 भाषा ज्ञान बढ़ाया जाय। जिन्हे साहित्य-रचना का कुछ शौक है उन्हे कमी-कमी पत्रों
 में कुछ लिखते रहना चाहिये। दक्षिण के साहित्य में एसी कितनी ही शौक होती जिन्हे
 हिन्दी में लिखने से उत्तर और दक्षिण की सांस्कृतिक एकता का बड़ फायदा है।

मन्थान में हमने पाँचवें दिन मैयूर का प्रस्थान किया। यहाँ से छाटो साइन जाती
 है। गाड़ी में बड़ी डेलन-डेलन की सड़क चिन्नी तरह कीट तय। मैयूर का मध्य प्रचारक
 की त्रिपयमय की हमारे प्रथ-प्रस्ताव से। बंगलोर न थी जम्बुनाथ जी भी उनी दृष्य न
 से। मरे नामने केरल प्रान्त के एक मन्थन कीटे से। उनसे साहित्य और हिन्दी-प्रचार
 के विषय में बड़ी देर तक बातें होती रहीं। हिन्दी-प्रचार में उन्हे प्रम तो था पर उन्के
 यह भय भी था कि कहीं यह ध्यान्नेलन धावे चल कर हवा में न उड़ जाय। इन तरह
 का सन्देश कभी-कभी मन में होता स्वाभाविक ही है। हमारे ध्यान्नेलन इतन जोश में
 कि हम चिन्नी ध्यान्नेलन को लगीव देसकर भी धार-दाया न निकल गयी हो सक्ने।
 मीन उन मन्थन को बिरबाध नियाया कि हिन्दी प्रचार धन केवल दो एक उन्पारी
 ध्यस्तियों का लभ नहीं रहा बहु एक मस्या है जिनसे जनता के निम्ना में धपना स्वाय
 प्राप्त कर लिया है और धारा है कि दिन दिन इसकी उन्नति होगी। हम मुक्त हो मैयूर
 पहुँचे। हिन्दी-प्रस्थियों में हमारा स्वायत्त किया और हमें धृष्य-धवन में टहर। यहाँ हम
 हर तरह का धारण का और हाटन न स्वायी थी शिष्यप्रदाय जी न जिन उधारता में
 हमारा स्वायत्त किया उनको कहीं तक लौटके नें। इनको उन्न धयी ध्यान्नेलन तीम मान
 में उगारा नहीं है और इनका बाल-जीवन भी बड़ा ही सज्जतय था यहाँ तक कि केवल
 बाल मान की उन्न में न्हें घर में आगना पछा और बहु बगतार धारण एक होन्म में
 लौकर हो गये। बहाँ उन्काले का धमधम प्राण लिया उमम उन्काले का एक पिता के
 गांधीय से यह होन्म धामने का उन्पारा किया। और धन धार धान पुण्याय के पय
 स्वयं स्वतन्त्र है। धारणों साहित्य और धम में विशय रचि है पर धारक विचार बर
 उदार है धार्मिक मकोमता का नहीं मान भी नहीं। धार्मिक और ध्यागारिक उन्नति
 के माय धपने वैदिक उन्नति का भी ध्यान रखा है। धार नियमित रूप में मूप नमस्कार
 और ध्यागम करते हैं। धाम वेश्यों की सति धार नकम धन मधु करके ही मन्पुष्ट
 गरी हुए। धम मधु भी किया है। धार अनिष्ट और स्वयं स्वक है। और जिनो

॥ दक्षिण भारत में हमारा हिन्दी प्रचार धारा ॥

सुम्पसन की धारने पास नहीं फटकने देते ; बुड़ी से बुटो पशाओं म पुदगार्थी धारमी क्या कृप कर सक्ता है । यह उपदेश हमारे मुक्क शिवप्रसाद जी के जीवन से से सक्त है । मुझे यह बेल कर बड़ा ह्य हुआ कि धारने धन की धारना स्वामी नहीं बनने दिया स्वर्न उसके स्वामी है । धारके जीवन का उहरव परीपकार है । धारका इराडा है कि धारने जन्म स्थान बुमन्दाहर में एक धन्धी ध्यावामशाला कायम करें और मुक्कों का धरनी देह और स्वाम्य का बसबान करने का धरधर हैं । कितना पवित्र उहरय है ।

बुम्बु-धरन से धिना हुआ ही एक पुसर होतक है—धाम्य-धरन । इसके स्वामी बडीप्रसाद जी है । मैसूर मे उत्तर भारतीयों का यह पहला ही होतक है । और बडे सुम्पवत्किठ रूप से बस रहा है । बडीप्रसाद जी बडे प्रसन्न-चित्त सेवा-उत्तर साहित्य रचितक ध्यक्ति है और हिन्दी-साहित्य की प्रगति से खूब परिचित है । धार नौ बुमन्दाहर के निवासी है और नपरिवार बडी रहते है । हमें मैसूर के मुक्क बतनीव स्वामी की तैर कराने का जिम्मा धारने लिया था और इसके लिए हम धारके धारारी है ।

मैसूर में यों तो बेलने की बहुत-सी बीजें है, अकिन्तु हमारे पास समय न था इसलिए हमें जन्ही स्वामी की बेलकर अनुत्त होना पडा जो मैसूर से मिन हुए है और जिन्हे हम कम से कम समय म बेल सकते है । मैसूर बड़ा ही साक-सुकरा सुन्दर उद्यानों मे मजा हुआ रमणीक स्थान है । बिबर बाह्ये उबर पाक यहाँ तक कि रैमब नारन के किनारे भी फूलों की नारन नजर आती है । सड़कें चौड़ी है, नर-मुबार से पाक औरस्ते पर बेलो मींग पीरो से घने हुए स्ववारय बने है । बिबकी शक्ति की तो यहाँ हतनी इकरत है कि देहातों में भी बिबनी की रोशनी है । और है भी बेलब सती । देहातों में तो केवल ही धाना मुक्ति है । दूसरे शहरों में केवल मुनिधिपैमिटी के धन्वर रोशनी होती है । उसके बाहर धेबेरा । यहाँ हरेक पक्की सड़क पर बिबनी की रोशनी है, और चामुंडा पहाड़ी से नगर को बेलिए, ती माधुम होवा है, बिबनी-धकार का बान बेला हुआ है । यह पहाड़ी शहर से मिकी हुई है और धन्वर साय-धबेरे शहर के नोय उधर र हुआ बाने जाते है । कोई एक हजार फीट ऊँची होगी । चर्चार् के लिए बोटर बाने नामक सड़क बनी हुई है । बिस पर बिबनी की रोशनी है । बोटरी पर चामुंडा देवी का शिरर है । उसे बरा और ऊँचार् पर महाराज के निवास के लिए एक सुन्दर बँवना बना हुआ है । चामुंडा देवी मैसूर राजा की कुम-बेवी है और महाराज धन्वर यहाँ पूजन ङ लिए आते है ।

मैसूर नगर से बस-बाउह मील पर मैसूर की पुछनी राजबानी धेरिवापट्टम है । यहाँ तक बन्धी सड़क बनी मनी है । धेरिवापट्टम पहले बहुत मुम्बार बस्ती की धेरिक्क प्रब भोग इधे खोड़-खोड़ कर बूसरी जमहा मे धान्वाद होते जाते है । पुछना किना ती मिसमार हो गया । चार बीवारी जन्ही-जन्ही बाने है । यहाँ की खबस बतनीव बस्तु मुनताम हैदरमती और टीपू की मजार है । एक रमणीक उधरन के मध्य म मजार की

ज्ञानसार हमारा है जो काले पत्थर की है। धनुष बड़ी दृढमूर्त पत्थीकारो है और दरबारों पर हाथी बाँध का नाम है जो मैसूर को साम कसा है। किसे के बाहर मुसलान टोपू का महल है जिसका नाम दरिया वीलत बाग है। टीपू मुसलान मसिमें म पहाँ धाकर विधाम किया करते थे। इसी को बाहरी दीवारों पर उस जमाने को प्राय सभी ऐतिहासिक और राजनीतिक घटनाओं के चित्र बने हुए हैं जो बहुत कुछ उन चित्रों में मिलते हैं जो प्राय भी शहर के चित्रकार दीवारों पर बनाया करते हैं लेकिन धनुष नक्काशी बहुत ही बारीक है। जिस स्थान पर मुसलान अपनी प्रजा को ज्ञान दिया करते थे वह दरबार किसी तरह भी दिल्ली के दरबार धाम से कम विशाल नहीं है।

मेरिमापट्टम से हम कृष्णराज सागर देखने पाये। यह एक बहुत बड़ा सागर है जो कावेरी नदी को एक बाँध से रोक कर बनाया गया है। बाँध कोई दो मील लम्बा और बमीन में कोई एक सौ पचास फीट ऊँचा होगा। बाँधा इतना है कि उस पर मोटरों बड़ी घालानी में घा जा सकती है। इस बाँध को बनान में मैसूर सरकार का करोड़ों करोड़ स ठपर खर्च हो गया है। इस सागर से नहर निकाली गयी है, जो सबभग पंचाम मील तक की भूमि को सिंचाई करती है। इसका फल यह हुआ है, कि पच वहाँ पान और ऊन की पैदावार बसरत से होने लगी है। ऊन की लपट के लिए सरकार ने एक शकड़ मिल भी बनवाया है। इसी पानी से बिजली भी निकाली जाती है। इन निर्माण में रियासत के सबभग बाँध करोड़ खर्च हो गये हैं। भारत में इससे बड़ा दूसरा बाँध नहीं है। बाँध के गोचे एक रमणीक स्थान है, जिसे कुन्दारन कहते हैं। वहाँ क्रीडांग की विभिन्न मीमा देखने में घाती है। एक नाली से दरिया का पानी लाकर एक डायू नहर में बड़े बम में प्रवाहित किया गया है। दोनों तरफ कीबारों की छाया है जिनके पास रंग-बिरंग शीशों में बिजली का प्रकाश किया जाता है। उद्यमते हुए पानी पर जब इन रंगीन प्रकाश का प्रतिबिम्ब पड़ता है, तो ऐसा मान्य होता है कि कीबारों ने रंगीन पानी निकस रखा है। दूर से देखने पर इन्द्र बनुप का-सा दुर्य प्राँलों को मुग्ध कर देता है।

मैसूर का राजमन्त्र भी देखने लायक है, मगर यह कोई उन्मत्तगतीय बात नहीं। राजमन्त्र का उन रियासतों में भी बाँधों को मग्ध कर देते हैं जहाँ प्रजा नरक के कष्ट भोग रही है। हमारे राजाओं में निष्पान्थे फोमरी ला बड़ी है जो अपनी रियासत की धामनी का बड़ा धाम अपने ही भोग-विभाग पर जड़ा देते हैं। उनकी प्रजा मानो है ही इसलिए कि जमा-जमाकर राजा साहब को ज्ञान के लिए है और मुँह में बाप मी बना उनको ज्ञान काट भी जायेगी। मैसूर तो सम्पन्न राज्य है और उनके राजमन्त्र को रियासत की शास के धनुषार होना ही चाहिए। एक-एक हाथ की मजाबट बगन रणिए। दरबार-नाम तो इन टाक का है कि शायद ही किसी राज्य में हो। पराँ दरार के उन्मत्त पर महाप्राजा साहब मिश्रामन पर बिराबडे है और परबारी और

कमचौरी अपने दखले के अनुसार कुंवियों पर बैठे हैं। इन-पान से उनका स्वागत किया जाता है। मगर इन इन्द्रपुरी का इन्द्र अनुमति विमूति का स्थायी होते हुए भी स्वाम का उपासक है। अन्य रियासतों की भाँति यहाँ का दरबार इन्द्र का बजाया नहीं किसी मंत्रासी का प्राथम है। महाराज का राज्य से बाँटस लाख रुपये सालाना मिलते हैं पर यह इनके भाग-विभास में न बाँच कर प्रजा-हित के कार्यों में ही खच किये जाते हैं। यही कारण है कि यहाँ की प्रजा अपने राजा को पुजती है और उत पर नम करती है। महाराज संपीठ और व्यायाम के प्रेमी हैं और साहित्य से भी ध्यान की रचि है।

मैसूर का चिड़िया घर देखकर बम्बई और मद्रास के चिड़िया-घर बैठे ही लजते हैं जैसे महम के सामने भोजड़ा। बितने विचित्र पशु-पक्षी और जल-जीव यहाँ हैं। सायब कमकल के चिड़िया घर के सिवा और कहीं नहीं हैं। पशुओं के लिए मैसूरिक बसाओं की व्यवस्था ऐसी सायब ही और कही हो। हमने बितने जीव देखे सभी हूट-गुट साफ-सुन्दर और प्रसन्न दिखायी दिखे थे।

मैसूर में सरकार को घोर से रेलम का कारखाना भी खुला हुआ है, बन्दन के तेल का भी। बन्दन पर इस रियासत की पनोपोजी का इबात है। उसका व्यापार सरकार के हाथों में है। कमा-कोरस का विभाग भी है यहाँ लकड़ी बँट हाथी बाँट धान कुन्हाये धादि की सिखा भी जाती है। यहाँ की बनी हुई चीजों का प्रदर्शन होता है और बिजने भी जाती है, पर चीजों की कीमत बहुत ज्यादा है। यहाँ सबसे धखी बात जो हमें मामूम हुई वह यह है कि रियासत के कर्मचारियों का या पुलिस का यहाँ विस्तृत मर्तक नहीं है और रिबरत की चर्चा यहाँ बहुत ही कम है। राज्य की सुव्यवस्था का इतने बढकर हमारे विचार में बुरा प्रभाव नहीं हो सकता।

मैसूर में हिन्दी-प्रचार के कामकर्ताओं और सचालकों में मैंने कुछ एकात्मक मात्र देखा। सभी में हिन्दी के प्रति ईश्वरपरी उत्साह और अनुपय है। ये हिन्दुत्वमय भी बुधबाप काम करनेवाले व्यक्ति हैं जो सामर स्वप्न में भी प्रचार ही का स्वप्न देखते हैं। श्री टी कृष्ण मूर्ति और श्री के शीतलम मूर्ति बानो ही संजम यहाँ की प्रचार-सभा के मन्त्री हैं और केवल पत्राधिकारी मन्त्री नहीं बल्कि सभा में बीचन का मन्त्र डालनेवाले मन्त्री। दोनों ही सिखा विभाव में धर्यापक हैं, लेकिन हिन्दी-प्रचार को धपना व्यसन बना चुके हैं। एक तीसरे उत्साही मुकम मि जे पी० बर्मा हैं। यह इन्टर मूनिबिटी बोर्ड में हैं और यहाँ सायब साम भर ही उनका पना होना लेकिन हिन्दी प्रचार में इस जोश से सहयोग दे रहे हैं, जो लक्ष्यक है। अपने उत्साह के सामने बाधाओं को कुछ धमकते ही नहीं। इन्हें यहाँ उत्तर भारत के पढ़नेवालों को सचिठ्य करने के लिए एक 'हिन्दुस्तानी हितैषी मंडल' खोलने की मुन है। कोई मुने या न मुने धाप धपना कचन किये जाते हैं। बाबिार भरे हाथों उत मंडल की स्थापित कर के ही छोड़ा मुनियार की ररम तो मैंने कर दी उत पर इमारत खड़ी करना मैसूर के उन संजमों का काम

है, जो व्यापार में जन कमाना ही नहीं चाहते अपने भाइया को सेवा में उसका एक घंटा प्रयत्न करना तो चाहते हैं। और जिम्मेदारी भी सबसे ज्यादा उन्हीं लोगों पर धाती है, जो संसार की प्रगति को दबते और समझते हैं।

मैमूर में इन्दिरा बहन से मिलकर चिन्त बहुत प्रसन्न हुआ। इस देवी से मैं काफी प्रयास और दिस्ती में मिल चुका था। प्रयाग-महिषा-विद्यापीठ में हो साम तब इन्हीं हिन्दी का मिश्रण ज्ञान प्राप्त किया है और ध्यानकर्म यहाँ प्रचार कर रही है। प्रायः प्रचार-सभा के मन्त्री भी इच्छामूर्ति की ही सहजमित्री हैं। हिन्दी-ग्राम इन्हीं प्रयाग की सभा। पति ने भी सहज अनुमति दी। अपनी छोटी-नी बच्ची को घर पर छोड़कर वह प्रयाग जती चली। जिस धानोमन में ऐसे साधक हों वह क्या न सफल हो। एक दूसरी देवी श्रीमती लक्ष्मी धर्मा है। इस बुढ़ाबस्ता में इन्हीं विशाल प्रयाग किया और सब तर्क पड़ रही है। उनका उत्साह धर्म्य है और मुक्तों की भी सन्निहित करता है। जहाँ-जहाँ मैं गया वह मेरे स्वागत के लिए मौजूद थीं। हम उनकी कुटिया में उस श्रद्धा से घने जैसे मन्दिर में जाते हैं और वही हमने दस-पाँच मिनट तक इस तरह मुबारक मन्त्री मन्त्री बहुत दिनों की बिछुरी हुई बहन से मिल रहे हैं और बहन अपने ही समय में अपने स्नेह और महामान्यारी के सारे धरमार्ग पूरे कर सना जाती हो। श्री मूर्ती के दर्शनो का शोभाय भी हमें मिला। प्रायः मैमूर-बिरवाविद्यालय में धारमी के अध्यापक हैं और तर्क के अध्ये भाग्यार है। प्रायः हिन्दोस्तानी से प्रेम है और संस्कृत के तो प्रायः पंडित हैं। प्रायः इन दिनों अगस्त होता था धारमी में अध्यापक कर रहे हैं। हिन्दू मुसलमान समस्या पर धारने को मोन है स विचार प्रकट किये काय वह हमारे सीधो में भी होते तो भारत प्रायः स्वयं हो जाता। प्रायः साधुधर्मो-वा-सा अधिन अधिन कर रहे हैं। साम्प्रदायिक मनोवृत्ति से प्रायः को भला है। धारक चरखों में बैठकर हमन को धारिक शांति साम की वह दिव्य दर्शन से होती है। हिन्दी में एक और उपानक श्री गोनू देवा के सस्तर का भी मुद्दबतर हमें मिला। धार मैमूर-बिरवाविद्यालय में अध्यापक हैं और इन दिनों अध्यापक हैं। प्रायः जिस जराएत से हमारा स्वानत किया वह हमारे जीवन की बड़ी सधुर अनुभूति है। प्रायः इन दिनों उन्हीं का अध्यापन कर रहे हैं और हमारी कई कई रचनाएँ प्रायः नजरों से गुजर चुकी हैं। प्रायः विशाल साहित्य-ग्राम और साहित्य के एक मुख्य निबन्ध के प्रति धारका उपद्रवता हुआ सम्मान देकर हम इत्थान हा गये। प्रायः हम यही शिवायन हैं कि प्रायः प्रायः दीर्घ की मन्त्री हैं। सजा हुआ एक मिनट बस भेंट करके हमें यह प्रायः पद्या कि मिनट पीना भी कोई सद्भजन है और तब से मिनट के प्रति हमारा अनुग्रह बढ़ गया है, क्योंकि धर्म को हक छाती नहीं देना सक्ते—दावान में रमाती नहीं तो वह कुटिया है—और जब तिरपेटो से भरा हुआ उन्हीं सामन हो तो मोन का उठना उठ कर धार।

यों हम तो यहाँ वा असलों म हिन्दी के विषय में अपने विचार प्रकट करने का प्रसर मिला लेकिन विशेष आग्रह का प्रसर वह का जब हम विश्वविद्यालय भवन में हिन्दी के कमिटी से मिले । पचास मिनों से कम न थे और यह सभी पुरुष हैं जो कुछ विश्व-विद्यालय में पढ़ रहे हैं । पर हिन्दी से इतना प्रभ रचते हैं कि कुछ न कुछ समय निकाल कर हिन्दी प्रचार की गेट करते हैं । यह राष्ट्र-भाषा के उत्साही सैनिक हैं और उसके प्रचार का सम्पूर्ण धर्म इनको है । कई मिनों न हिन्दी में अपनी रबी हुई थीं परी और हम लोगों में घंटे भर तक कपड़ी के भाष माहिरियक सम्झाओं पर लुभ पपराय हुई ।

मैसूर की राजभाषा कनाड़ी है और बोलनेवालों की संख्या इतनी बड़ी के अन्तर्गत है मगर वह संख्या मात्रात कम्पई हैरतवार रिपाठत और मैसूर में फैली हुई है और इससे इस भाषा के विकास म बाधा पड़ रही है । कनाड़ी का प्राचीन साहित्य उंचे बरजे का है और नये साहित्य में भी अच्छी उन्नति हो रही है । बचपन में कनाड़ी-साहित्य परिपक्व कर अपना मसन है, पुस्तकामय है और उसके द्वारा कनाड़ी-साहित्य के अन्धे अन्ध प्रकाशित हो रहे हैं । मैसूर म मुझे कई कनाड़ी-साहित्य-सेवियों की सेवा में हाजिर होने का प्रसर मिला । कई अन्ध प्रांतीय भाषाओं की तरह कनाड़ी को भी यह लंका होने लगी है कि हिन्दी-प्रचार से कनाड़ी की प्रगति म कुछ बाधा न पहुँच । इसका कारण यही मान्य होता है कि हिन्दी प्रचार के उद्देश्य के विषय म कुछ अम धनी तक बाकी है । हिन्दोस्तानी प्रचार का उद्देश्य यह हमिज नहीं है कि वह प्रांतीय भाषाओं का स्थान धीत न । वह तो संशुद्धी भाषा का वह स्थान लेना चाहती है, जा अपने मारतक्य म प्राप्त कर लिया है । राष्ट्रभाषा की प्रांतीय भाषाओं म कुछ वही सम्बन्ध रहेगा जो प्रांतीय कौशिलों और भारतीय एसेम्बली में है । एसेम्बली प्रांतीय कौशिलों के किसी नाम म बाधा नहीं डालती ; हाँ कुछ ऐसे विषय हैं जिनका सम्बन्ध पूर्व प्राप्त से है और एसेम्बली उन्हीं के विषय म व्यवस्था करती है । जो लेखक वा पत्रकार अपनी पुस्तक या पत्र का सारे मारतक्य में प्रचार चाहेना उनके लिए संशुद्धी माध्यम की बगह हिन्दी माध्यम का साधन उपस्थित कर देना ही हमारा ध्येय है । धान्तिर कोई ऐसा दिन तो आवेगा ही चाहे वह दूर अविद्य म ही क्यों न धावे कि भारत अपनी संस्कृति और अपने साहित्य के साथ अन्ध उन्नति के पहलू में बैठे ; अथवा हम भारत को एक देश म मान कर महाद्वीप मान में जिसम बहुत से देश हैं तब भी तो हम एक प्रभाव भाषा की सकरत पड़ेगी जो जिनमे अन्धदेशीय सम्बन्धन किया जा सके ; हाँ अथवा इन देशों म कोई सम्बन्ध ही न रहे, तो दूसरी बात है ; तब तो एक प्राप्त भी अपनी प्रकक सता न कायम रक सक्या । हमारा क्याम है कि हिन्दुस्तानी का प्रचार साहित्य-सेवियों के लिए परा और कीर्ति का एक महान् क्षय शील देता है और प्रांतीय भाषाओं को उनमे बदगुमान होने की विपकुल अकरत नहीं है । अभी तक अन्ध जो कुछ किया है, वह

प्रांतीय बुद्धि से ही किया है। हम परिभाषिक शब्दों का बोध बनाते हैं। तो धनम धनम सामारण्य कोप बनाते हैं। तो भी धनम-धनम। धनम हमारे पास कोई धनम-प्राणीय या राज-भाषा-परिचय ऐसी होती नहीं प्रतिपद्य प्रत्येक भाषा के महारथी एक होकर दो-चार दिन या दो-चार हफ्ते बैठ कर राष्ट्रभाषा-मन्त्रालयी नमस्याधों पर विचार किया करते तो शायद इस बीस नाम में हमारी एक सम्पन्न राष्ट्रभाषा बन जाती। पृथक-पृथक काम करने में समय और शक्ति का अपव्यय हो रहा है। वरुण विज्ञान शास्त्र के हथारों ही शब्द हैं जो सभी प्रांतीय भाषाधों में एक हो सकते थे। धनम-धनम भाषापन्थी करने की बहरत ही न पड़ती।

पौच दिन मंसूर की मेहमारी खाकर हमल बंगसार का प्रस्वान किया।

मंसूर से बयसार कोई चार घंटे का सड़र है। बीच का प्राकृतिक दृश्य बड़ा ही रमणीक है। कहीं हर-भरे सेत है कहीं घाम नारियल और सुपारी के बाग और कहीं हरियाली से ढकी हुई ऊँची-ऊँची पहाड़ियाँ। घाघाट में कुछ बागल से और उन मर प्रकृत में बहु पवत। शोभा स्वल्पित हो गयी थी। बीच-बीच बाटियों की पोर में विद्याम करते हुए घाम नहर आ जाते थे जिनकी ऊमई से पुतो हुई बीबारें यामवाला की सझई और मुबचि का पता से रही थीं। यहाँ की मिट्टी लाल है, जिससे लेतो की घटा और भी सुहावनी हो जाती है। सेतों में जो किजान काम करते नहर घाने थे उनका पश्रिवा कुला और बाँधिया था। घोठी के मकाबसे से बाँधिया किजयत की बीज है। यहाँ बाग के सेत भी बहुत मिये जिनम नहर से सिचाई हो रही थी। धर यहाँ गभा भी पेश होने लका है और राज्य की ओर से एक शक्कर की मिल भी है।

शाम को हम बंगमोर पहुँच गये। स्टेशन पर हिन्दी-प्रचार-सभा के धरपच की मिट्टर, भी निद्याम एक भी बम्पुनावन कीधारि सत्रन मौजूद थे। हम धरपच जो के महमान हुए।

बंगमोर समुन की सतह से तीन हजार फीट की ऊँचाई पर है और मंसूर से कुछ टेंडा है। बंगमोर शहर के दा भाग है। शहर जो मंसूर राज्य के अधीन है और घावनी पर धरपची सरकार का राज्य है। बाबासे तान लाल के ऊपर है। शहर में तो कोई गाम बाउ नहीं प्रयाग या लखनऊ जैसा हो है, लेकिन घावनी की मरुतों की मरुई और बंगमों की मरुतोट देनकर जित प्रमन्न हो गया। बंगसार में और प्राय-वर्तिन्य में से धीयन के घर हाते हैं। घर में हीसयत के धनुमार दम-दोन-बाग को-रियाँ होती हैं। मकान के सामने एक छोटा-सा बाग और चार वीचारी भा बनाये जाती हैं। हर एक घर बमने जैसा मामूम होता है।

परम दिन प्रात-काल हम लान बाय की मर करन गय। उमका रवका एक भी

एक है। राम की मनाचट और लफाई और सुन्दरता साठ-मुबरी रवितें फूलों की मबारिषी शीत मंशप मम को मुख कर मेठी है। लाउ बाव यह है कि यह पाक-मूलतान हैबरप्रसी की मुबिषि और मनस्पति-ग्रम की बाधवार है।-यहाँ पौधों और मोर्जों की बिडी होती है और विभिन्न प्रकार को मनस्पतिमा को बिबेहों से मंवाकर उपजाया जाता है। बंगलोर की सब से बलानीय बस्तु यही पाक है।

बंगलोर से तीन मील पर बिज्ञान का बहु प्रसिद्ध बिद्यालय है, जिसे भी बमसेर की मोतेरबा की टाटा ने स्थापित किया था। बमसेर बाकर इस बिज्ञान-भरि के बलन न काना दुर्माय की बाव जाती है। उबिचार के दिन हम कीई तीन बने यहाँ पहुँचे। बिद्यालय बन्द था पर डॉ० सर सी बी० रमन ने बड़ी खुशी से हमारा स्वागत किया और हम बिद्यालय के रासायनिक बिभाग पुस्तकालय और लेबोरेटरी की घेर करायी। मैं दो-बार बैज्ञानिकों से पहले भी मिल चुका हूँ। यह बड़ा समन्वय बड़ा ही प्राकण्य नूक नूक और अपनी बुन में मस्त होता है। प्रकृति की वनस्पत रहस्यमयी रचमाओं में सबिह बिबरते रहने के कारण कयाचित् समुप्य उसके लिए मामुली परु-मान रह जाता है, सेमिन बैज्ञानिकों के इस प्रिण को देखकर मैं अकित हो गया। ऐसा प्रसचचित् व्यक्ति जिसका पोर-पौर कामको क सरल उद्याह से उबला पड़ता हो मैंने दूखत नहीं देखा। यह बिज्ञान के भातिक है। और यह इन्क उनकी धाँकों में उनके कपोसों पर एक-एक घंघ में रमा हुआ है। यह इस तरह से पीड़-नीककर एक-एक बीज हम बिखा रहे में मारों कोई बासक अपने जित्नी सजा को अपने सिमाने और कनकीवे और नये कपड़े सिमाने के लिए मधीर हो रहा हो और बाछता हो कि एक ही सँघ में सारी जिभुतियाँ बिखा हैं जिसम कुछ बाकी न रह जाय। मैं धपर कहीं कि इती इन्पटीदकूट में उनके प्राक बसते हैं, तो गमत न होमा। इसकी एक-एक उबिस एक-एक फूल एक एक पीवे यहाँ तक कि उसके मनोरम प्राकृतिक दुरय पर भी जम्ह नब है, मारो यह प्राकृतिक इत्य भी उनकी अपनी रचना हा। इस बिद्यालय से बैर को अब तक म्वा मान पहुँचा है, यह तो कोई बैज्ञानिक ही जानता होमा हम तो सर रमन के ब्यक्तिज्व की छाप हूय पर लेकर धावे। जिभुत-मिमान और धम्य बिज्याय बन्द से यह हम न देख सके। सर रमन ने हमें एक मडे का उमाठा दिखाया जो हमारे लिए तो खेल का पर बुद्धिमार्गों के लिए साबिक धाम-बीन की बीज है। तबने के बममाय पर चुटकी भर बानु बिबेर बो और तबने पर एक बाप मारो। बानु कनी सीधी रैबा का रूप बाउल कर मेठी है, कमी बूठ का। तबने की धलम-मयस्य ब्यभि मिध-मिध धाकार में प्रकट होतो है। सर रमन जिस जिन्वारिमी और बीला से तबने पर बानु बिबेरते और बाप मवाते से यह देखकर कौन ऐसा मुर्षा बिन होमा जो यग्ग् न हा बठठा।

बार बने हम डॉक्टर छाहक से बिबा हुए और यह तोफते हुए निकले कि काउ

वही लोग धारने वक्ष्यन को धारनी कन न बनाकर व्योति बना सकते वो उसके लिखना प्रकृत संमता ।

उसी दिन हमने भीगी के बतनों का कारखाना देखा जो इन्सटीट्यूट से मिला हुआ है । क्रिया बिलकुल कुम्हारों की-सी है । एक खास तरह की मिट्टी यहाँ निकलती है, जिसमें थो-एक चीजें मिला देने से लुगी तैयार हो जाती है । लुगी को मित्र-मित्र लोगों में बाँट कर बाहर निकालते हैं फिर सुताते हैं, रंगते हैं और मट्टी में पकाते हैं । यो-कम में यहाँ के बने हुए बिलीनों और मूर्तियों और फूलबालों धारि का अच्छा संग्रह है जिससे मामूय होता है कि इस काम में यहाँ कितनी उपरति हुई है । नल खपते, माबल छार की बिक्रिया सब कुछ यहाँ तैयार होती है । मीमुर-राम्य में बिल्ली का व्यवहार बड़ो कवच से होता है, उसके लिए भीगी का लिखना सामान दरकार होता है वह हसी कारखान में तैयार होता है ।

बपतोर में भी मीमुर को बसि हिन्दी का अच्छा प्रकार हो रहा है । यहाँ के ऐतनस हार्ड स्कूल में तो हिन्दी भाषिणी कर दी गयी है । कुछ उद्योग बंधे भी लिखाने लगे हैं । यहाँ एक जलसा हुआ जिसके समापति प्रो ए० धार भाषिया से । प्रो भाषिया मीमुर हिन्दी-प्रचार-सभा के प्रेसिडेंट हैं । मीमुर में उनके दशन न हो सके थे । वह सीमाय्य यहाँ मिला । धारको हिन्दी और उड़ू से बियोप खि है नपर बोलते हैं बंधेनों में और बहुत अच्छा बोलते हैं । स्कूल हेव मास्टर को सम्प्रदाय पिरि एम ए भी हिन्दी के जरासक है और धारने गुनवीह्य रामायण का कनाड़ी पथ में धनुबा किया है । इस स्कूल के साथ एक व्यायामशाला भी है, जिसे पत बप महारना की ने घोषा ना ।

बपतोर में महिलाओं की कई संघानित संस्थाएँ हैं और प्रायः उन सभी में हिन्दी पढ़ानी जाती है । सिताई बुगई, कचाई बेट का नाम संगीत बसीदे काङ्गा ग्रय सभी संस्थानों में जारी है । सम्नापन और सभासन-नाम देखियो ही के हाथा में है । वहीं-वहीं सङ्घियों के लिए व्यायामशालाएँ भी हैं । स्त्रियों की यह बाधति एण के धारातर प्रबिन्तु की सूचक है । यहाँ का कोमल जलबानु सपोष क लिए बटुन धनुबुन जल पढ़ाया है । सभी महिला-समाजों में संगीत का प्रचार है । बीघा यहाँ का व्याप बाबा है । काय से देखिया महीने में बी लिन प्रास-पास के बहातों को भेंट कर दिना करें, वो पाबशाली स्त्रियों को भी उनको जापति कन कुछ प्रकाश मिये । यों तो सभी संस्थाएँ ठरककी कर रही हैं पर मसोरवरम् महिला-समाज को उपरति बिटोय एण से सर्वोत्तरीय है । यहाँ १९१ में हिन्दी कनाथ लीसा गया । परने साथ बेकन धार देखिया परीक्षा में बंदी और पठपथ यह सक्ता बङ्गर पैठानिम तक पहुँच गयी । भी महत्वा की दो देखिया प्रजाय महिला विद्यापीठ में पढ़ रही है । धन तक लीन ती बिनो एण समाज से हिन्दी का काम बजाऊ जान प्राय कर चुकी है । यहाँ एक

॥ इक्षिय भारत में हमारी हिन्दी प्रचार धारा ॥

बाबाजिनी समा भी है, जिसमें बेजियाँ सामाजिक नियमों पर मुबाहसे करती हैं। इतना ही नहीं यहाँ से 'समाज भारती' नाम का एक हिन्दी वैसाखिक पत्र भी निकलता है जिसमें बेजियाँ मित्र-मित्र नियमों पर जेल मिलती हैं। समय-समय पर यहाँ विद्वानों और राष्ट्र नेताओं के भाषण भी होते हैं। एक बार महात्मा जी भी यहाँ अपना धर्म उपदेश कर चुके हैं। इस क्रीडा पर कौन-सी संस्था गम न करेगी।

कनाड़ी भाषा और साहित्य-परिपक्व भी बंगलोर में ही है। हमने बड़ी यत्ना से इस साहित्य-संघ के परिचय की। अच्छा लाला परिपक्व का अपना प्रबन्ध है जिसमें एक हास है, एक पुस्तकालय बाबनालय और दफ्तर। कनाड़ी भाषा के कई महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ परिपक्व द्वारा प्रकाशित हो चुके हैं। बाबकम परिपक्व ने मैसूर राज्य के प्रोत्साहन से एक बृहत् कनाड़ी-संश्लेषी कोष बन रहा है, जिसके एडिटर और कोष-संयोजक एक बहोमूर्ख सज्जन प्रो. कैंट नारायणप्पा हैं। आप जिस उत्साह और तन्मयता से यह कार्य-सम्पादन कर रहे हैं वह बच्चों को सम्मिलित करता है। ग्रन्थ पहले मैसूर विश्व-विद्यालय में केमिस्ट्री के अध्यापक थे। अब वेंशन पाठ्य हैं। कनाड़ी साहित्य बहुत पुराना है और इसका काम साहित्य तो बड़े ऊँचे दरजे का है। नया साहित्य भी बढ बढ से बढ़ रहा है। परिपक्व के कुल्लभ उपसमापति की सञ्ज्ञा की के दशकों का सौभाग्य भी हमें हुआ। आप साहित्य के एक यस्तवी लेखक और कवि हैं और प्राचीन साहित्य के बहुर विद्वान। कनाड़ी साहित्य किताब बनी है, इसका अनुमान इसी से किया जा सकता है कि अभीसवी सदी के अन्त तक इसमें अणभय बाध ही कवि हो गये थे जिनमें पचीस सहिसार्ये थीं और पचीस राजे-रईस। एक विद्वान ने तीन बिल्बों में उनके जीवन अरिख लिखकर कनाड़ी साहित्य के इतिहास की पच्चीस सामग्री बुग दी है। अन्तर कनाड़ी साहित्य की कुछ पीढ़ें हिन्दी-साहित्य में जा सकें तो बाबल-मरान के बोनो ही भाषाओं को नाम ही। कुमार व्यास की अमर कृति 'भारत' सत्य कनाडी साहित्य का सबसे जलम ग्रन्थ है। कनाडी विद्वानों का कहुता है कि ऐसे कवि भारतीय में दो ही बार हुए

अब इस प्रान्त में हिन्दी का प्रचार हो रहा है तो शक्य संविष्यन् में कोई कनाडी ज्ञ अपने साहित्य-रत्नों को हिन्दी में मेट करे। 'हंस' में मुञ्जरावी मराठी उर्दू, बी पत्रों के संबद्धीय और विचारपूख सेखों पर टिप्पिसियाँ भी जाती है अन्तर कोई ही जातनेशाने कनाडी विद्वान कनाडी के सामयिक साहित्य पर टिप्पिसियाँ लिख कर । में भेजने की हुवा करें, तो 'हंस' उपकार मान कर उसे सङ्घ स्वीकार करेगा क अपना गौरव समझेगा।

बंगलोर में जिन के बी ऐयर का व्यायाम मन्दिर भी देखने की चीज है। मानम नहीं ऐयर महोदय ने इफका नाम हुबर्मीस व्यायाम मन्दिर क्यों रखा है। हमारे अनुमान की तो हुबर्मीस से कुछ कम न थे। हुबर्मीस न अन्तर पहाड़ के दो टुकड़े कर दिये थे तो हुनुमान की सूर्य को सफा मिमम गये थे और धोनामिरि पर्वत को एक

हाथ पर उठाकर कोई बार्ड हवाग मौल दीवते जसे धाये थे । इस मन्दिर में मुबकों को हर एक तरह का ध्यायाम सिखाया जाता है । ऐपर स्वयं बड़े ही सुगठित शरीर के स्वामी है धीर धारक कई शिष्य धखी-जाये पहलवान हैं । धापने नूर्य लम्म्कार के धाधार पर धपनी एक ग्याशाम-बिबि निजामी है धीर इन विषय का बहुन-मा माहिश्य भी प्रकशित कर चुके है हम उनसे मिल तो न सके क्योंकि उन दिन बहु कहीं बाहर गय हुए थे । लेकिन उनके मधिम बुकलेट का हमने पडे उससे मायूम हुआ कि धापने नबीन धीर प्राचीन विधियों का मिधण करके एक वैज्ञानिक धम्माल-अम निकाला है जिसने बोड़े समय में ही धारधयजनक फल प्राप्त हो गकता है । धीर यह पहलवान धपन कफ्यानस्था में बहत ही बुबला-मजला था । ऐसे मन्दिरों की प्रत्येक नमर में बकरत है धीर हवाता ख्याम है जि जनता उनका बडे ह्य से स्वागत करेगी ।

मैसूर राज्य न हिन्दी धमी तक धकलियाटी मजमुन है । हिन्दी प्रेमियों की धीर से बहु धान्दोलन हो रहा है कि हिन्दी को धाजिमी बना दिया जाय । धपर यत्र उद्योग मकन हो जाय ता हिन्दी प्रचार दुगनी गति से बढ़ने लये । इसी विषय पर कुछ विचार विनिमय करने के लिए मैं मैसूर राज्य के दीवान नर निर्डा इम्पाइन की त्रिरमठ म हाकिम हुआ । दीवान माहब बडे ही विद्या प्रेमी धीर उदार ध्यलि है । हमारी धानधीन हिन्दुस्थानी में हुई । उन्नु साहित्य का उन्ने धख्या परिचय है धीर बेतजम्भुन उन्नु बोमठे है । हिन्दुस्थान में एक राष्ट्रभाषा की बकरत को बहु भी स्वीकार कल्टे है धीर इन धान्दोलन में उन्ने महानुमूठि है लेकिन एक सांस्कृतिक विषय में बहु नरकारी तीर पर कोई कारवाई करने के पल में नहीं है । जब तक यह भाय इतनी बलवान नहीं हो जाती कि धर्यकारिणी नमिति इत्ते बहुमठ से स्वीकार कर से तब तक राज्य इनमें धमन देना मुनामिब नहीं समझना । सब कुछ राष्ट्र भाषा के धमियों धीर प्रचारकों के धैय उमाहू धीर मबा पर मुनहसर है । जब तक हम हिन्दुस्थानी को सर्वमम्मनि से राष्ट्र भाषा स्वीकार न करा में तब तक राज्य उमे जैसे स्वीकार करेगा । दीवान साधब हमारे माध बडे मेहरबानी से पेश धाये । गोरे धमिधारियों से हमें यह विगाया है कि धमिधार धीर मजकना न येन नहीं होना । दीवान माहब हमके धरबाह है । धापने मिनकर किर-निर मिचने की इच्छा होती है ।

इसने बोये नि बंभनोर न पुना की प्रस्था विद्या । धी निबामरान बो न हमारा बो मन्गार विद्या उनके लिए हम उनके एस्तानमन्ध है । धार है तो एक इन्दी के धकल मगर धाधक पागन्धोर में मजीवता भरी हूँ है । धार बधोय है धरभारक है लेकिन है धीर हिन्दी प्रचार के म्भंभ है । धापने जनाडी भाषा में *Book of Knowledge* के डंग की एन माना माधिक धमिधार के अर में प्रचारित करना धारमन दिया है धीर रापर उनके धार मन्धर निजल चुके है । इसमें धमेक ब्नाक है धीर माहिश्य विद्याम इतिहास मूयोन बना बीशान जीव शास्त्र बन्धनि धारि धमेक विद्यों पर धामनो

पयोपी निर्बंध है। धीरे-धीरे की गयी है कि उसकी माया मरज सजीव धीरे रोचक रहे। हिन्दी में अभी तक ऐसी कोई माता नहीं निकली है। श्रीनिवासराय इसका एक हिन्दी एडिशन निकालने का प्रयत्न कर रहे हैं। आंक उनके पास है ही बेधम निबंधों का उल्लेख हिन्दी में अनुवाद करना है। हमें ध्याता है कि हिन्दी में इस माता का धार होना। बच्चों के लिए हिन्दी में किस्से कहानियाँ तो बहुत निकली हैं, लेकिन ज्ञान बढ़ानेवाली पुस्तकों का अभाव है। इस संग्रह से यह कमी पूरी हो सकती है।

फरवरी-मार्च १९३५

सरहदी सूबे में हिन्दी और गुरुमुखी का बहिष्कार

नये शासन विभाग में कुछ तरह का स्वराज्य और प्राथमिक एटनोमी मिलान बाकी है उसका मसूदा हमारी सरहदी सरकार ने दिखा दिया। उसे इसकी विस्तृत परवाह नहीं कि समय संसार में अल्प-अल्पवालों के कुछ हक मान लिये गये हैं और उनमें ध्याता धर्म और संस्कृति की रक्षा का मुख्य स्वत्व है। अगर समय संसार से उसे क्या मतलब ? उस तो स्वराज्य मिला है और वह एक नयी नीति नये विभाग का प्राथमिक करेगी और बुनियाद को दिखा देगी कि बहुमत अपने अल्प-अल्पवालों के साथ किन्ती उदारता का बर्तन करता है और इसलिए उसे क्यों न डोमिनियन स्टेट्स मिले। हमारा खयाल है, अगर अल्पमत और बहुमत में इस तरह के व्यवहार का सरकार को विरोध दिखा दिया जाय तो वह डोमिनियन स्टेट्स नहीं पूछ स्वराज्य भी बड़ी सुती दे दे देगी।

सरहदी सूबे के शिक्षा मंत्री एक युसुफमान उम्मत हैं जिसकी नीतिगत और दृष्टा की हम बहुत प्रशंसा मूल चुके हैं, सरकार के सुपरिचरको में उनका ऊँचा स्वत्व है। मिनिस्त्री के लिए अभी तक तो बिना विबाध की सबसे ज्यादा उदारता मानी है, वह नहीं है। अगर शिक्षा-विभाग के डायरेक्टर कोई ओरोपियन साहूब होते तो मिनिस्टर साहूब के लिए वे सारी जिम्मेदारी उठ जाती। कीन नहीं जानता कि बिना मिनिस्टर साहूब का की पुसती है और जबकी रसी बुरों के हाथ में होती है। अगर वह बरा भी अपनी सकीयता का परिचय दे तो उसे मिनिस्ट्री की पही छोड़ना पड़े और ऐसे साहूबी तो मिलने ही होते हैं, जो शिक्षा के लिए स्वायत्त का स्वायत्त कर उन्हें इस लिए अगर डायरेक्टर कोई अंग्रेज उम्मत होते तो हम मिनिस्टर साहूब को बरा का पात्र समझकर चुप हो जाते। लेकिन अब हम देखते हैं कि आजकल शिक्षा-विभाग के डायरेक्टर एक युसुफमान उम्मत हैं, और हिन्दी तथा गुरुमुखी के बहिष्कार का मरकुतर उनकी गुन नीति है, तो नहीं नहीं कि मिनिस्टर इस जिम्मेदारी से नहीं बचते बल्कि सारी जिम्मे

गयी जन्हीं पर धा जाती है। यह तो हमारे समझ में लुप्त धाता है कि हिन्दुस्तानी मेनिस्टर एक बोरोगियन डाइरेक्टर के सामने पूँ नहीं कर सकता और पूँ करे तो सभी कीरिबत नहीं सक्रिय यह हमारी समझ में नहीं धाता कि हिन्दुस्तानी मिनिस्टर सुवतानी डाइरेक्टर के सामने भी पूँ नहीं कर सकता ? अपनी इच्छा के विरुद्ध हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि यह बहिष्कार दोनों संजना के संयुक्त विचार का फल है मगर जिम्मेगारी मिनिस्टर साहब के सिर है। क्योंकि वह इस पत्र पर इनलिए है कि प्रजा के हकों की रक्षा करें विशेषकर धरममत के। बहुमत धरनी रक्षा मान कर सकता है मगर यहाँ हम यह देखते हैं कि जो धरममत का रक्षक समझा जाता था वही उनका प्रजक हो रहा है, और इससे भी ज्यादा लोक और संजना की बात यह है कि वह लोग भी मौन है जिन्हें इस विषय में धरममत को धार से संजना चाहिए था। हमारे मुसलियम लीडरों में—यहाँ तक हम मानुम है—धरनी तक किसी ने भी इस धर्याय-मूल धरमात तक धर्याय-मूल संडील नीति के खिलाफ धाधर नहीं उठायी। इसका धय इसके सिवा और क्या हो सकता है कि मिनिस्टर साहब ने जो नीति प्रचालित की है उसे पगर फिना जा रहा है, या कम से कम उसे इतना महत्व नहीं दिया जाता कि उस पर ध्याय एवं स कृप कर्त या लिखा जान। मुसलमानों ने धर्य जातियों पर सदियों तक जिन लिप्यधता और ध्याय के धाम साधन किया उनका इतिहास में कोई उबाव नहीं मिलता। और धाय उठी जाति का एक ध्यक्ति प्रजा के माने हुए धयिधर धीने सता है और उठी जाति के नेता शान्ति से बँडे है।

और यह धिनगाते उस वक्त फेरी नयी है जब इ प विरधाम और विरोध की शरुत धारों तरक कीमी हुई है और बशाध्यापी विस्कोट का प्रय है। एक तरक तो यह प्रयल किया जा रहा है कि हिन्दी और उधू में एकधता पन कर उनमें जो धेन है उनको धिन किया जाय और उनमें ऐसा समझध कर दिया जाय कि वे धयाध म देश की धर्याधया बन जावें। हमारी धोर इन धारों का धीर बोधा करन का प्रयल किया जा रहा है। क्या हम हमारे प्रान्तों के मुसलमान धिवा ने यह धाधना नहीं कर सतने कि 'मुसलमनों के माध वही ध्यधरार कते या तुम चाहते हो कि वे तुम्हारे माध कर के मुन एने धिधागत के धरुधरार से हम धरधरार पर गरहने धूधे के धर्यधमत के हकों की धिधाधन करे ? लोकधेध सभा में धरधधिय धर्यधमत ने यह धियकुन जायध धयिधेश की थी और यह एक शरुत ही ध्यीधरार भी कर सी गयी थी कि जनधम धयाध और नधुति की रक्षा धियाध की धीनिध धारधधों-धारा कर की जाय जिसध बहुधन की धाध में उधें धिनो धारा का धय न रहे। एने धरिधधय हररक जनधताधर धियाध के मुध्य सधम है जो धयध संधरार म गरधधयध सधमे जाते हैं मगर सरहरी धूधे में वही मुसलियम बहुधत धिधु और धिकर धर्यधमत के धीरधुतिध स्वधधों पर धाधा कर रहा है धिनने धीरधधन की धान है। यनोवधियी धरधधती रहती है यह हम मानने हैं लेकिन हमनी नरी कि धर्य

मत् में कुछ धीर हो धीर बहुमत में विलकुल उसने पिछड़ । क्या सरहरी सूबे के मुस्लिम बहुमत ने इस पञ्चराश-पूख नीति से यह साबित नहीं कर दिया कि हिन्दू-मता का यहाँ धार्मिक शासन की स्थापना से जो विरोध था वह सबका साधारण था । धीर जब इस दशा में कि अधिकार बहुत ही बाड़े मिले हैं बहुमत इतनी दस्तबाजी कर रहा है तो उन अल्प अल्पमत की क्या वृत्ति होगी अब अधिकारों का लक्ष बढ़ जायगा ? जो साल पहले हिन्दी क हिमायतियों ने पञ्जाब सरकार से यह विलकुल जायज मुतासला किया था कि यहाँ पर हिन्दी में पठे मित्र बाने का जो निरोध है वह उठा लिया जाय और हिन्दी पत्र मत् न किसे जाया करें क्योंकि यहाँ हिन्दुओं की एक बड़ी संख्या हिन्दी में ही पत्र-व्यवहार करती है, तो इस पर चारों तरफ बाबेसा मच गया था कि उन्हें जो मिताया का रहा है उसकी बड़ छोटी या रही है । हालाँकि मुतासला एववा निरापक धीर निरीह था । कुछ हिन्दी सिरनाओं से उद्गु के प्रचार या विकास में कोई बाधा न पड़ सकती थी । धाम धारे देल में उद्गु सिरनामे मित्रे बाने जगें तो उससे उन्हें जो कोई बड़ा फ़ैद न पहुँच जायगा और न हिन्दी पठे मित्र बाने से हिन्दी ही मासामान हुई जाती है । केवल उन हिन्दी-मत्रियों के मनोमालों के धारण का प्रश्न था ; जो बुर्जाप्यवस उद्गु नहीं पढ़ सके । वह भाँग टूटगा ही यही हालाँकि हिन्दी प्रेमियों की संख्या पञ्जाब में भी बीस फ़ी सदी से कम न होगी लेकिन बड़ी मोम जिन्होंने हिन्दी का यहाँ निरोध किया यह हृदिब न बर्नित करने कि इच्छित भारत न यहाँ मुसलमानों की साधारण साम्य इस की सदी से कमना न होगी उद्गु सिरनामेबाने पत्र पत्रकर उँक दिने जावे और बर्नित करना भी नहीं चाहिए । उद्गु केवल प्रातीय-भाषा नहीं है अगर उसी तरह हिन्दी केवल प्रातीय भाषा नहीं है-धीर उनमे से किसी एक को भी मिताया नहीं जा सकता । उनकी उन्नति पृथक पृथक भी सहयोग में है । दोनों को अपने-अपने विकास और सँभार और सम्भवा का समान अवसर मिलना चाहिए । क्या उद्गु प्रेमियों में कम्यता का इतना समान है कि वह कुछ जिस हक पर जाल देते हैं वही दूसरों से छीन लेता चाहते हैं और उध कुछ और निघरा और मनस्ताप की कम्यता नहीं कर सकती जो ऐसी दशा में उन्हें कुछ होता ? वह तो विलकुल सन्नधी रीति है, कि जो बीब इन्वीवद के लिए सुधा समझी जाय वह हिन्दुस्तान के लिए निघ ।

यद्यपि उद्गु स्व पर विचार करना चाहिए, जिसे पूरा करने के लिए इस नीति का साधिका किना क्या है । सरहरी सूबा अपने बालकों और बालिकाओं की प्राप्ति की व्यापक भाषा में सिखा देना चाहता है, किसे के हिन्दुस्तान में अपना उचित स्थान प्राप्त कर सकें और इसके लिए विद्य-निघ भाषाओं में सिखा देना इच्छितकर है । सरहरी सूबे में धाम कमल उद्गु है इसलिये एकको उर्द में ही सिखा मिलनी चाहिए और अंग्रेजी का तो प्रमुल है ही अगर हरेक प्राप्ति इनी नीति का अनुसरण करने लये तो देश में हाहाकार मच जाय । हिन्दुस्तान के अस्थार सूबा में उर्द जाननेबानों की संस्था

नमस्कार है, फिर भी उर्दू पत्रान का समी जयहू काका इत्यनाम है और हुना चाहिए । विहार में तो वहाँ कहीं या सड़के भी उर्दू पत्रान के इच्छुक हों वहाँ उनके लिए शिक्षा का प्रबन्ध हो सकता है । हम यह मानते हैं कि बाज हाजरी में सम्पन्न हो बहुमन म मिता देने के लिए और इस प्रकार घास के मेव-भाज भी ब्रह्म ब्राह्मण के विचार में जबरन ऐसी नीति का धामय लेना पड़ता है । नकिम यह उसी हालत म मुसलिन है जब सम्पन्न के पाव अपनी कोई जाया कोई साहित्य या सम्पत्ति म न । मरहती गान्त के हिन्दू इस धरणी म नहीं या मकते । उनके पास बहु मय कुछ कानी मीत्रु है जिससे उनकी पुनक सामाजिक सत्ता यानी जमी चाहिए । कई बातों में तो वे बहुमन से बने हुए हैं । शिक्षा ही को ले लीविए । शूरे मर के इस्लाम विहित म्पुओं म उनीम हिन्दुओं और सिक्कों के प्रबन्ध से है । हिन्दू सड़कियों की सत्ता मुसलिम शासिकाओं से कही म्प्राप्त है । मिस्लिम की परीक्षा में छ मात सर्व सड़किया के मुजाबले म हिन्दू और सिक्क कम्पारों की संख्या एक ही उम्पठ की । हिन्दू मरफार को इम्पुटेसस भी अपनी मरवा के अनुपात से कहीं पत्रान धवा करते हैं । ऐसी हालत में उन्हें बहुमन म मिता देने की कोई कामिल बेकार है, उसी तरह छेस गिन् बहुमन मुसलमानी को धरने म पचा लेना चाहे तो यह उनको हिमानत होयी । यद्यपि हम बिरोपाधिकारों क पक्ष म नही है । नेकिन त्रिभ नीति पर धामकल धारत कम रहा है उसके सिहाज से ही मरहती मूक के हिन्दुओं और सिक्कों को बिरोपाधिकार मिलन चाहिए ।

इस मारी परिस्थितिपा पर विचार करके हम उनी कनीजे पर पहुँचते हैं कि इस नयी नीति की प्ररक्षा चाहे और जिन कारकों से हुई हो राष्ट्रहित की सम्भावना उनमें नही है । धार्मिक दृष्टि से बेसक इस नीति के लिए एक उन्न पेश किया जा सकता है । मपर जब कि मरहती की हिन्दी जगत शूरे का विशिष्ट धंग है तो उनक स्वत्वा का किसी धार्मिक नीति पर होम नहीं किया जाना चाहिए । यह कहना कि यह इरम बेक नीयत से उठाया गया है किनी को धीरे में नही धान सकता ।

हमारी पता किन्ने उपायम जितनी सज्जा और जितनी दय के योग्य है । हम सोझा-सा धर्निकार पाकर भी उसका अनुयाय नहीं कर सकते । वही हम या उनको के गैरों के नीचे पड़ मिकर रहे हैं धरनी धर्मिनी और धरनी अदूरपरिगत म उन नीया को बुचनन म बाज नहीं धाते जिन पर हमारा बाहु है । जब तक हम इन मनाकत ध धरने की मुक्त न कर लेंगे और हम में एक दूसरे के प्रति सम्भारना न जानेगी हम चाहे स्वराज्य मिले चाहे स्वय हमें गुलामी से निरगत न मिलेगी । हमारे भाव्य के विधाता हमारी इन मोच-जपोट पर जितने गुण हों और उतने धीर शूरे और शक्ति याने बराने बहु कम है । जारा हम उनका ब्रह्म समापण कुन करते जा प्यामा के शेर के साथ कनक में हमारी इन कृतिपा बन हाने हैं । क्या हम धरना करें कि मरहती का शिक्षा-विभाज धरनी धरनी धरनी करेगा का महानता न मरने बड़ा धरना है और

इस पाससी को बर्मीस के अन्दर दफन कर देया ? मुगलमि नेताओं से भी हमारी यही प्रार्थना है कि वे अपने प्रजाब धीर अपनी उदारता धीर राष्ट्र हित-कामना से काम लेकर कौम को इस घमच से बचायें ।
 विसम्बर १६३५

हिन्दुस्तान की कौमो जबान

कानपुर के सहयोगी 'जबाना' में मि सलीम जाकर ने उक्त विषय पर एक साहसपूर्ण लेख लिखते हुए अन्त में कहा है—

'अगर एक जबान का पैसा करना बकरी है तो धीर नहीं तो हिन्दू धीर मुसलमान इसी पर रजामन्व हो जायें कि दोनों अपने-अपने बच्चों को हिन्दी धीर उर्दू दोनों जबानें मदर्सों में पढ़वायेंगे धीर जो महत्व प्राप्त बंधुओं को हासिल है उसकी बड़ काट देंगे हस्तों की जबान बदलवा देंगे मदर्सों में कैलने मुस्ली जबानों में लिखे जायेंगे धीर बर्मीस मुस्ली जबानों में बहस करेंगे क्योंकि इन बातों के क्वीर बंधुओं का प्रभुत्व पर शीर नहीं आ सकती ।”

हिन्दू तो आज भी जालों की संख्या में उर्दू पढते हैं, लिखते हैं धीर उसको अपनी मातृभाषा समझते हैं । मुसलमानों ने शुरू में हिन्दी की अपनाया था अगर अब वे हिन्दी का अक्षर देखना भी मुनाह समझते हैं । क्या इपारे मुसलमान बोस्त इस बात पर पडी होवे कि हिन्दी हाई स्कूल तक माजिमी छपार दे बी जाय । हमारा बकरी है हिन्दुओं को हाई स्कूल तक उर्दू के माजिमी बनावे जाने में एतराज न होवा । अगर दोनों जबानें हाई स्कूल तक माजिमी हो जायें तो दोनों जबानों का बिकस इत बंध से होवा कि वे दिन-दिन एक-दूसरे के समीप जाती जायेंगी धीर एक दिन दोनों मापाएँ एक हा जायेंगी । अगर मुसलमान इसे मंजूर कर लें तो मुस्ली जबान भी यही हो जायगी कैलने भी इसी जबान में लिखे जायेंगे धीर बर्मीस भी इसी जबान में बहस करेंगे । अब तक बानो भाषाओं को समीप न भावा जायना बंधुओं का प्रभुत्व बना रहैगा ।

विसम्बर १६३५

हिन्दुस्तानी एकाडेमी का सालाना अलसा

हिन्दुस्तानी एकाडेमी प्रजाब का सालाना अलसा जनवरी के पहले अषाह में होना लिखित हुआ है । इस अवसर पर प्राय के सुनीपः धीर विडान एकत्र होकर साहित्य धीर संस्कृति के अनेक विषयों पर प्रायण करेंगे धीर लेख पढ़ेंगे । एकाडेमी ने अककी उर्दू विभाय की सधारण के लिए बखिष के बबोबूज अनुजवी धीर कम्पायी भीमाला

अपुन हक को निर्दिष्ट किया है। हिन्दी विभाग के सहायक भारतीय डा० यंगाराय भ्य होने। बिहार के बसन्ती लेखक राजनीति-विचारक और बसन्ती सन्धि-प्राम्थ सिंह बसन्ती के सहायक चुने गये हैं। इस तरह एकादमी ने अपनी अन्तर-राष्ट्रीयता का परिचय दे दिया है। हमारे देश में साहित्य की प्रांतीय संस्थाएँ तो अनेक हैं पर अभी तक ऐसी कोई संस्था नहीं है जो अन्तर प्रांतीय साहित्य-संस्थाओं को निर्मात्र करके भाषान-अन्त का सम्बन्ध पैदा करे। हिन्दुस्तानी भाषा भारतवर्ष की आम भाषा है और हम एकादमी से अतिव्यक्त अनुरोध करते हैं कि वह इस अवसर पर अन्य प्रांतीय के साहित्य-अर्थियों को भी निर्मात्र किया करे। इससे मही नहीं कि एकादमी का यह उत्सव बसन्ती का अन्त हो जायगा बल्कि हिन्दुस्तानी भाषा और साहित्य को प्रमत्ति मिलेगी हिन्दुस्तानी भाषा का प्रभाव बढ़ेगा हमारा साहित्यिक दृष्टिकोण अनेक और हमारे अनुभूतियों का भंडार सम्पन्न होगा। साहित्य के ऐसे जितने ही प्रमत्त हैं जिन पर अभी तक हमने केवल व्यक्तिगत रूप से विचार किया है। उन पर परस्पर के संभावकों से प्रकटा पढ़ेगा और हम अपनी भाषित्या का गुधार और अपनी भाषाभाषा की पुष्टि कर सकेंगे।

दिसम्बर १९३४

राष्ट्र-लिटि

राष्ट्र-लिटि सचिबि की सूचनाएँ समक-समय पर पत्रों में छपती रहती हैं और उनमें पत्रों को सचकी प्रमत्ति की जानकारी होती रहती है। हम के विद्यते संक में हमने भी कावा कालेतर का इस नियम पर एक उचमामक सेर भी प्रकाशित किया का। दिसम्बर की 'माधुरी' में हमी विषय पर भी बेंकटपत्र न एक बसन्तीपुर्ण लेख छप बाबा है जिसमें उन्होंने यह विद्याया है कि भावरी लिटि में छोटे बहुत परिचयम कर देने में हो राष्ट्र-लिटि का उद्देश्य पूरा न हुआ। उनके लिए का एक बसन्ती नयी लिटि की बसन्ती है जो कम से कम समय में सन्ती लिटि और छारी जा सके। अन्तम भावरी लिटि की बसन्ती एक नयी लिटि का आविष्कार भी किया है और कोर नयी लिटि आविष्कार करने के विरुद्ध जो युक्तिवा दी जा सकती है उनका जबाब भी दिया है। हममें कोर तक नहीं कि बेंकटपत्र को का यह उदाय सारिक के माध्य है सचिब जब हम यह देखने हैं कि भावरी लिटि में छोड़े ही अन्तर-अन्तर स बहुत बसन्ती मुजरतों अन्तम गुदाधुरी भाषि लिटियों के निरुद्ध का जाती है और इन प्रांतीय में अन्तर छ सन्ती ही नयी भाषारो भी नाचर भाव भी जाय तो भी समकम से करोड़ भाषित्यों का प्रमत्त का जाता है जिन्हें नयी लिटि सीधनी पड़ेगी। बल्कि समक-समय भाषि का उद्देश्य भी बसन्ती लिटि है हम

मिए मावरी को हम ब्राह्मी लिपि के प्रिठमा ही समीप से जानै उतनी ही भारतीय लिपियों में निष्कृता था जायगी । इस विषय में कुछ प्रचार धीर प्रोपेगैण्डा हो भी चुक है, धीर लिपि-सुधार-मिति की कोशिशों में उसमें जो कच्चाईयाँ थीं उनके दूर हो जाने की भी आशा है । ऐसी दशा में हम तो किसी नये धाविष्कार का भजन नहीं कर सकते । हमें तो सम्पूर्ण राष्ट्र को अपने साथ ले चलना है । लिपि-सुधार-मिति में संयुक्ताचारों के लिए कुछ नयी व्यवस्था करके धाये की कठिनाईयाँ भी दूर करने की चेष्टा की है धीर की हरि भी नोबिस से हमें यह जानकर बड़ा हय हुआ कि वह जो नये टाइट बनवा रहे हैं उनकी संख्या मीठूवा पाँच सौ की बगलू डेढ़ सौ से ज्यादा न होनी । इसके धाये में किसी सुविधा हो जायधी धीर प्रकाशन न कच की कितनी किष्कत हो जायधी उसके साथ ही इन नये परिवर्तनों के लिए किसी प्रिठमा की बकरत नहीं । बोडे से सम्वास से हमारी धार्मि उनके नये रूप से सम्बन्ध हो जायधी ।

जनवरी १९३६

हिन्दुस्तानी एकाडेमी का वार्षिक सम्मेलन

चार सप्ताह के बाद धरकी बाराह, रोख, चौबह जनवरी को हिन्दुस्तानी एकाडेमी इमाहाबाद में फिर अपना सामाना बल्ला किया । इसके समापति बिहार के प्रिठमा नेता साहित्यकार धीर 'हिन्दुस्तान रिब्यू' के बरम्भी सम्पादक भी सचिवदानन्द सिंह थे । साहित्यकारों का सम्मेलन था । उन्ही बगु धीर हिन्दी दो विभागों में कन दिया गया था । उन्ही विभाग के सत्र मीठाना धनुस हक धाष्ट्र्य के धीर हिन्दी विभाग के सत्र का ममानाव भय थे । दोनों विभागों में कई बरम्भी-बरम्भी बिष्टता धीर मनेपछा धीर खोज से मरे हुए सैल पड़े लभ बबर बीनों सम्मेलनों के धमक-धमक होने के कारण बोठाधों की सारे निबन्धा को मुनने का प्रबलण न मिला । निर्मेधित सम्मेलनों के एक बगलू रहने का कोई हलकाम ही सकता तो आपस में बिचार-बिनिमब के बबसर मिसते धीर इन सम्मेलन की उपमोमिता कहीं क्याथा बक जाती । नहीं संख्या हीते ही मीन धपने-धपने डेरों की राह मीते थे धीर बूलरे दिन फिर उसी बकल धाष्टे थे जब बल्ला मुक होनेवाला होता था । उन्ही धीर हिन्दी विभाग की धमक प्रबल कर देने से एक धीर हानि यह हुई कि उन्ही धीर हिन्दी के बीच में जो बीबार खड़ी होती जा रही है, वह धीर भी डेधी हा मयी । धमक बोनों समुदाय मिय नहीं सकते तो न मिसें । धपनी उफनी धमक बजाना चाहत है, तो बजाते धार्मि मेकिन गया इसमें भी कोई बुराई है कि धार्मि एक-दूसरे की सुन भी नहीं सकते । धमक निबन्धों की चुनी हुई संख्या सम्मिधित रूप से पड़ी जाती तो पुरकता न भल तो कुछ न कुछ कम हो ही जाण । हमें तो इन सारे निबन्धों

में मौजाना बन्दुस हक सातम का सुतबा ही सभने ज्वाश विचारपूर्वक बाल बरा । उनक भावत में धोर वा स्फूर्ति की धीर सकीन पैदा करनेबासो शक्ति थी । धापन बहुत ठोक कदा कि धमी तक साहित्य धीर भाषा की उपरति के लिए कितने प्रयास किये सने धोर किये वा रहे हैं । उनमें कोई सामयस्य नहीं है । हरेक धपने-धपने ढंग से धपना धाना काम करता है । दूसरे की धनुमुक्तियों धीर यमक्तियों से साथ उठान की चेष्टा नहीं की जाती जो काम एक करता है, वही काम दूसरा करता है, धीर इस तरह बहुत-सा परिशय धीर बन ब्यब हा जाता है ।

समापति सङ्घोष ने एकाडेमी के किये हुए कामो पर एक सरसरी मजर शक्यन हुए यह इच्छा प्रकट की कि ऐसे सम्मेलन प्रतिबध होना चाहिए धीर उसमें भागत क प्रस्य भाषाया के सिद्धांतों को भी विमन्थित करना चाहिए । धापने हिन्दी-उर्दू विबाध पर प्रकाश भासा धीर दोनों बहनों को समीप धाने धीर सने विम धाने का धनुराध किया । धापके सन्द भइ है—

‘धालरेवम एव एजेस्वरबसो ने सर विविधम वैगिय (धवनर संयुक्त प्रान्त) को हिन्दुस्तानी एकाडेमी को कायम करने की राधत देते हुए धरने भापय में कदा वा कि ‘एकाडेमी एक ऐसी बबाल को राबकी देने की कोशित करेवी जिस धरे-नितने भावा के धसावा सब समक लक्ये । मुझे इस दृष्टिकोख में पूरी सहायमुक्ति है । सर विविधम मैरिस ने तिष्ठा सनी को बबाध देते हुए कदा—हर हिन्दी तिष्ठाबाल का उदरय यह होना चाहिए कि प्रान्तों बहु मुसलमानों के पढ़न के लिए लिख रहा है । धीर इमी तरह हर उर्दू तिष्ठाबाले को यह कायल रगना चाहिए, भासा बहु हिन्दुधों के पढ़ने के लिए लिख रहा है ।

उत्तर भारत में यह विषय साहित्य धीर भाषा दोनों ही एतबार से बहुत महत्त्व पूख है धीर समापति ने धपने भापय न इमी समस्या को हल करन की चेष्टा की नेकिन धार्थधवाधियों को उनका बहु प्रयत्न दूध इधिकर न लजा धीर बसा समात्त हो जाने के बाद धरों में पुनकटा के समचल में बार-बार सेत विसे का रहे है धीर बहु सिद्ध किया जा रहा है कि उर्दू धीर हिन्दी सब समन-समय टसरी पर बलकर एक दमरे से इतनी धर निकल गयी है कि उनका समीप धाना समम्भव है धीर यह कि उनको विमाने की कोशिता दोनों ही भाषाधों को मटियामेट कर देवी । एतथाधियों का बार बार चुनौती दी जा रही है कि वे कोई ऐसी रचना करके दिखावे किममें एका का धाराध निभाया गया हा धीर बहु किये-बहाली की पुस्तक न हो । बकिक वार्ड एतिरागिक वा वैज्ञानिक वा दार्शनिक वा धालीधनारक इति हो । हम धरने पुनरतापारी भाधयों में बड़े धरक के साथ पुछेंगे कि समर ऐसी कोई बबाल धीजुर होतो धो इस संस्था की उकण्ट ही क्यों पड़ती । धी सञ्चिभाग सिद्ध वे सिन भाधयों का इवासा रिधा है । उही भाधयों में अब यह धान ग्रीक निवारी ययी है कि एकाडेमी के सम्यारणों को

मेंता कोई मची भाषा निर्माता करता नहीं बल्कि उर्दू और हिन्दी की पुनरु-पुनरु तरफकी बसा वा और इस रूपा वा नाम 'हिन्दुस्तानी एकाडेमी' केबल इसमिए रक दिमा गया वा कि 'उर्दू-हिन्दी एकाडेमी' कुछ जुनने वा लिखने में भला न लयता वा । हमारे विनों ने तिस परिभम से यह खोज की है, उसके लिए वे बचाई के पाठ है लेकिन सर विवि-यम मीरिस वा प्रानरेकुस राय राजेश्वरवती के उन भावों में जो उनके मन में वे हिन्दु-स्तानी एकाडेमी के विषय में किसी तरह की बुनिया नहीं मानूम होती । वे दोनों भाषाओं की इस प्रगति से असन्तुष्ट वे और उसका सुधार करने के लिए ही एकाडेमी की स्थापना हुई थी । उर्दू और हिन्दी को पुनरु-पुनरु अपने रास्ते पर चलाने के लिए किसी तरह के सरकारी सहारे की जरूरत न थी दोनों भाषाएँ उसकी मदद के बिना उन्नति कर रही हैं ।

अगर हम पूछते हैं अन्तर सर विनियम मीरिस और राय राजेश्वर वती ने उर्दू और हिन्दी को पुनरु करने ही के लिए एकाडेमी की स्थापना की तो अब हमारा कर्तव्य क्या है ? पुनरुता को बढ़ाना वा बढ़ाना ? अन्तर बढ़ाने का निश्चय कर लिवा नाम तो यह साहित्य और उन्मु दोनों ही के लिए चाहिएकर होता । हमारा धारत पुनरुता नहीं एकता होना चाहिए । इसे मानकर हमें चाहे अपने कर्तव्य का संज्ञा करना होगा । और मिथाने की सबसे पुरासर उदबीर यह है कि बर्तमानक फाइनल और हाई स्कूल परीक्षा तक उर्दू और हिन्दी दोनों भाषिमी विषय बना दिये जावें । उनी मानेवासी पीछी तिस भाषा वा विचार को स्पष्ट करने के लिए जो सब उपयुक्त समझेनी उसका व्यवहार करेनी । और ऐसे तो हजारा उन्मु हैं जिनका ध्यान भी हम व्यवहार कर सकते हैं, पर भाषा-बानुदी विज्ञाने की हजस हम उन सबों का व्यवहार नहीं करने देती । वास्तर हाउसबन्द ने हिन्दुस्तानी में जो भाषाक दिया वा उस पर यारों ने खुब कृष्ण मारे वे लेकिन कम्प उन्मु किसी ऐसे पम्बिक जगसे में बीसने का प्रबसर मिलता तिसमे प्रबु वा कम्पक हिन्दु-मुसलमान दोनों ही होते तो उन्मु मानूम होता कि वही बनता की भाषा है ।

फरवरी १९३९

दिल्ली में हिन्दुस्तानी सभा

हिन्दुस्तान में समय यह पहला मौका था कि आठ मार्च को देहली की जर्मिया मिलितरा में देहली के उर्दू और हिन्दी के शरीकों और छात्रियकारों ने मिलकर एक हिन्दुस्तानी सभा की बुनियाद वाली जितकर उद्देश्य यह होवा कि वह दोनों छात्रियों को एक दूसरे के समीप लावे उनके शरीकों में मुहम्मद हमदर्दी और एफता पैदा करे, उन्हें

एक-दूसरे के बिचारों और भावों को जानन और समझन का मौका द और हिन्दुस्तानी भाषा के विकास का साधन करे। एक समय या जब इन्म और उन की इतनी उन्नति और राजनीति में इतनी जागृति न होने पर भी भारत में बहुत कुछ मुहूर्तत ही और साहित्य के क्षेत्र में तो कोई श्रेय ही नहीं था मगर जमाने ने कुछ ऐसा पलटा था कि हिन्दी हिन्दुओं को जवान हो गयो और उर्दू मुसलमानों की। हिन्दुओं ने उर्दू से मुंह मोड़ना शुरू किया मुसलमानों ने हिन्दी से। धन्य-अनन्य दो कर्म हुए और दोनों जवानों और साहित्य राजनीति के क्षेत्र में पड़ गये। भारत में मनभूटाब बान लगा। हिन्दी प्रकार की कोई कोठिया उर्दू बायरे में सन्नेह की भावों से देखी जान सभी उर्दू प्रकार की हिन्दी बायरे में। हालांकि धन्य का राजनीति से कोई सम्बन्ध नहीं उनका विषय तो ईशान है और ईशान चाह अपने भावे पर कोई लक्ष्य लगाये वह ईशान ही है मगर वह राजनीति का युग है और कोई उद्योग ऐसा नहीं जिन पर राजनीतिक सभी धरा का रंग न चढ़ाया जा सक। इसका नतीजा यह हुआ है कि हिन्दी के नए उर्दू के कारे है और उर्दू के नए हिन्दी से। उर्दू में जो कुछ लिखा जाता है वह उर्दू पाठकों को सामने रखकर हिन्दी में जो कुछ लिखा जाता है, हिन्दी पाठकों को सामने रखकर। हिन्दी लेखकों को यह समझें कि उनके पाठकों में उर्दू जाननेवाले भी हैं, जब वह जानता है कि ऐसा नहीं है। उर्दू लेखक इतना धाका नहीं है, क्योंकि जब भी विद्यार्थी पीढ़ी के कुछ लोग बाकी हैं जिन्हें उर्दू और हिन्दी दोनों से एक-सा प्रेम है, क्योंकि वह उन्हें एक ही जवान के दो रूप समझते हैं फिर भी ऐसी लोग साधारण में इतने कम हैं कि जब और जवान की प्रगति में उनका लिहाज नहीं किया जा सकता। इस तरह दोनों जवानों धन्य हुए जा रही है और जिनसे हम अपनी जवान में बेतकलुज बन्धनोत्तर न कर सकें उनसे दिस बर्कर मिलेगा। हिन्दी और उर्दू साहित्य बन्धनोत्तरी से ऐसे जमाने से गुजरे, जब साहित्य ने धन्य विन्दी से नाया तोड़-सा लिया था और उनकी सारी ताउत बिच्छू और विनाय के कुछ रंग में बटती थी या बहुत हुआ तो रात की रात की और बुनिया की धनियता पर विनायके बचायी लेकिन बुनिया में जो साहित्य बँद-आपते हैं उन्हाने बीम की सारी बलापी है उसकी संस्कृति बनाना है। धन्य ही बीम का पद-प्रवृत्त होता है। उनका निम्न प्रेम की व्यापि ने भर होता है। धन्य सतसुख और संतुष्टिवादी के लिए जयहू नहीं होती। धन्य युद्धार से लड़नेवाले लोग हैं यही धन्य। ऐसी बीम-सी जालि है जिनका बीमारोपण धन्यों ने न किया हो। इनसे दिस इनकार हो सकता है कि बीम का एकीकरण उनको संस्कृति का एकीकरण है और यह उदरय धन्य की दोन्नी विचार-विनिमय और सहानुभूता से ही परा हो सकता है। भाषा के एकीकरण का भी इनके निम्न कुछ का साधन नहीं। धन्य ज्ञान की भाषा नितियाँ और वाक्यों में बनती हैं मगर साहित्य और संस्कृति की भाषा तो विज्ञान के समाज में ही बनती। जब उर्दू का एक धन्य अपनी को रचना ऐसे

समाज के सामने पड़ेगा जिसमें हिन्दी के लेखक भी शरीक हैं तो बड़-ऐसी भाषा तिलम की कोशिश करेगा जो हिन्दी-पार्श्व की समझ में आए। इसी तरह हिन्दी का सेसक उर्दू के शरीकों की महदली में अपनी भाषा को सुबोध रखने पर मकसूर हुआ। और अगर हमारी अन्य योजनाओं की तरह इस समाज का भी शीकिय के हामों अस्त न ही गया तो कुछ दिनों में हम आशा कर सकते हैं कि जैसे दिल्ली में हिन्दी और उर्दू दोनों ही का अन्त हुआ उसी तरह हिन्दुस्तानी भाषा और सीली का विकास भी विन्नी ही में होगा। अभी तक हिन्दुस्तानी के हिमायतियों के रास्ते में जो सबसे बड़ी मुश्किल है, वह यह है कि वह कुछ कोई इन्मो बीड उध भाषा में नहीं लिख सकते। अगर हिन्दुस्तानी समाज कोई छोटी माटी पत्रिका भी हिन्दुस्तानी भाषा में निकालने का प्रयत्न कर सके तो वह इन्मो की बहुत बड़ी शिषमत्त होगी और उन लोगों को जो हिन्दुस्तानी के समर्थक तो हैं पर हँसी के झोंक से उसका व्यवहार नहीं करते क्योंकि अभी उनकी ताकत बहुत ही बड़ी है, बड़ा प्रोचअहन मिलेगा। हम समाज के अगिन्यों से बरबस्त करते हैं कि वह अपने अस्तलों की सुधगाएँ अलवारों में प्रपावा करें ताकि औरों को उनकी कारगुजारियों का ज्ञान मानुम होता रहे।

अप्रैल १९३६



नीर-क्षीर

नीर-घोर

पुरान—सूर्य बरत—मनुवाक तथा संपादक रामचन्द्र वर्मा तथा श्री प्रमदारण धाम प्रणत ।

भीष्म पं रामचन्द्र वर्मा पुरान के हाकिम घोर धरती के बिद्वान् है । शायद उनके सहकारी श्री प्रमदारण जी भी धरती के धार्मिक-कामि होंगे । इन दोनों महानुभावों ने पुरान का हिन्दी अनुवाद करना शुरु किया है । यह पुस्तक बेमेल एक शूद्र है । हमने धरती इबारत भी मयी है । उसके नीचे सचकी टीका भी कर दी मयी है । मानुम नहीं टोकाएँ किम मुकस्तिर के धाबार पर की मयी है । उचका नाम कहीं नहीं दिया मया । किता किसी मुसलमान या मुस्तनद धार्मिक की सगर के यह टीका बीते ही माय नहीं हो सक्ती जैसे बेजों की टीका किसी संस्वतम मुसलमान द्वारा संपादित की हुई । हाँ इनका एक शुक फल धरय हो सक्ता है घोर बह है हिन्दू-मुसलमानों का वैयतल्य । न बाल हमारे ये भाई कब समझे कि इससाम बम का बिज्ञानु पुरान की बह टीका बेजोवा जो मुसलमानों द्वारा सम्पादित घोर प्रमाथित हो । ऐसे अनुवादों से तो भगवाँ घेने के विषय घोर कोई फल नहीं निकल सक्ता । किमु संसार में ऐने भी प्राखी है, धामकर भारतवर्ष न जो बुरतों के मर्तों का लंडन करना ही जातीय सेवा का मुख्य उपाय समझे है ।

हिन्दू मुसलिम-इसाहाद की कहानी—नेगर स्वामी भद्रामण्य जी ।

स्वामी जी ने हिन्दुओं घोर मुसलमानों के धापस के भगवे की मुकसद तापीत लिगी है । भगवे हमरा होते रहे है । हिन्दुओं की बीजों घोर बीनियों से पूब मराधवाँ हुई । मुसलमानों की बीजों से बीजों की बीजों से हिन्दुओं की हिन्दुवाँ से । धरत पाठिगत घोर बनयत लड़ाइयाँ परमप से होती बनी या रही है । मगर कोठित यह होनी चाहिए कि हम उन भगवाँ को भूल जायें न कि गड़े मुरके उपाइ उपाधकर बिरोधी की धाप घोर मरवाते रहें । हिन्दू मुसलमान के मिर पर हमजाय रगजा है मुसलमान हिन्दू के मिर । दोनों पक्षों को धपने पक्ष का ममयन करने के लिए दलीमें घोर प्रमाथ मिल जानें है घोर धमदा कभी तय नहीं होता । जब तक हम बुरतों के धनगुणा पर परदा शासना घोर गुणों को हेराना न गीमये जब तक हम धपने हुय की उपाय न बनाये तब तक युधर की कोई धनता नहीं हो सक्ती ।

अंधा पतहाद घोर मुफिया सीहाद—नेगर श्री स्वामी भद्रामण्य जी ।

इन पुत्रक में मुसलमानों के एक गुठ धार्मिक सम्प्रदाय का वृत्तम उपाति ने

लेकर उसके बदलान स्वल्प तक खोज और प्रमाण के साथ लिया गया है। इस पुत्र सम्प्रदाय का नाम इसमाइलिया था। इसकी बाणी हुसैन बिन सबाह नाम का एक सिमा मुसलमान था। हुसैन ने अपने सम्प्रदाय को कैसे फैलाया उसके क्या-क्या सिद्धान्त थे और किस समयों से वह कई सदियों तक बढ़-बढ़े बायसालों को नीचा दिखाता रहा यह बृहत्तम किस्ती बयानाव से कम मनोरंजक नहीं। कम के नाम पर संसार में कैसे धत्याचार होते चले गये हैं, इसका यह एक प्रश्न उठाकर है। जब हुसैन की के जमाने में इस सम्प्रदाय की बढ़-उठान गयी तो उसके कुछ बड़े-बड़े धारणी सिन्धु धारि स्थानों में नाम धावे। सिन्धु के लोहे उठी इसमाइलिया फिरके धनुयायी हैं और उनके इमाम सर आधाडी हैं। हिन्दुस्तान में जाने पर इस फिरके के फिरके ही हिन्दु भी शामिल हो गये। एक इस फिरके के नेताओं को यह भासता है कि यदि हिन्दुस्तान में मुसलमानों का राज्य न रहा तो हिन्दु फिर हिन्दु-धर्म को मानने अवैध। इसलिए उन मुरादों को फँसाने के लिए नये-नये धर्म-ग्रन्थों की रचना की गयी जिसमें हिन्दुओं के पुराणों और प्रवृत्तियों का भी समावेश कर दिया गया। उन ग्रन्थों के नाम भी हिन्दु-धर्म-ग्रन्थों जैसे रख दिये गये। यही नहीं भासा ही भी हिन्दु कहलाते हैं।

इसी इसमाइलिया फिरके की बेबा-बेबी योरोप में ईसाइयों ने भी जेमुट नाम का सम्प्रदाय धारी किया जिसने रोमन धर्म की धरती हुई दीवार को बहुत दिनों तक सभामा और उसके प्रकारक मुसलमान के धरकर हिन्दुस्तान और बापल धारि एरिमाई देशों में ईसाई-धर्म का प्रचार करते रहे।

लेकिन हम लेखक के इस कथन से सहमत नहीं हैं कि इस प्रकार का धर्म विरवाह मुसलमानों और ईसाइयों ही तक मरुत है। हिन्दुओं के भी कई ऐसे मत हैं जिनमें बड़ा का सबसे कम रूपयोग नहीं किया गया और ईसाइयों या मुसलमानों से बाह्य फिरकों ने किया और न गयी निमित्त है कि मुसलमानों के भारत में जाने के पक्षे हिन्दु-धर्म में हिंसा और अंधविश्वास का पता न था। पास्तारियों से बुनिया कमी काली नहीं रही। अगर मुसलमानों ने इसमाइलियों ने अपने भक्तों की धात्वा पर अधिकार जमाया और उन्हें धर्म्य धर्मवालों की हत्या करने पर धामारा किया तो भारतवर्ष में भी ऐसे कामांध मुरदों और महन्तों की कमी नहीं रही का धर्म की भाँ में नामा प्रकार के झट्टाचरक करते रहे। यह मानना पड़ेगा कि हर एक धर्म में धर्म की सरलता और धरक से फायदा उठानेवाले मुख रहे हैं, सब भी हैं और हिन्दुओं न लम्बे साधनान रहना चाहिए।

माधुरी : माघ १६८

भाषा—लेखक व० रामयोगाम विभ डिप्टी कमिश्नर।

यह एक रूपक है। एक महान् उद्देश्य नामा-धर्म में परकर किस त्रिधि निम्न

ही पाया है, यही शय मनोहर कहानी का विषय है। बीच में वास्तविक विचारों का समावेश मिलता है। माया बहुत सरल है। धारि में लेखक महोदय का चित्र है। उसके बार महाराजा बसंतपुर का फोटो भी है। लेखक का चित्र देखकर तो पाठक की उत्सुकता शांत होती है, पर महाराजा साहब यहाँ क्यों था बैठे यह समझ म नहीं पाया। संभव है, महाराजा साहब गुलियों के इन्टरव्यू में या लेखक महोदय पर उनकी विशेष कृपा हो। बहुराज उनके फोटो से पुस्तक का महत्व बढ़ता नहीं कम हो जाता है। क्योंकि यहाँ कृतामर की वृ धाती है।

शब्द भवन—लेखक पं रामगोपाल मिश्र ।

इसमें भी व ही लोगों चित्र चित्रण रहे हैं रायद दोनों के ब्याक बनना जिये पर ने समझीं ज्यारा सपा भी बयो थी इसलिए उन्हें वीमका से लिना देने की प्रेरणा बही हुमा कि उनका कुछ उपयोग हुमा। उपन्यास म वास्तव-विवाह कुत्र-विवाह धीर केनेन विवाह के कुपरिष्कार दिनाये गये हैं। दर्शन की कुत्रया का भी उत्सव क्रिया गया है। कनक का जीवन इसलिए पुख्कय हो जाता है कि पिता के निधन होने के कारण उसका विवाह कप्य मुपारी से न हो सका। सोनह बय की वास्तव-विषया शांता इसलिए बिय भा लयी है कि उसकी नव-विवाहिता विमाता ने उसे मुमराम भेज दिया। शांता का छोटा भाई सतीश हेमलता के प्रम में नरारय के विवा धीर कुछ न देखकर घर से निकल जाता है धीर हेम का विवाह कप्य मुपारी से हो जाता है। किन्तु हेम के हृदय पर सतीश की मुहर थी। हेमलता मिशन की शरण भेरी है धीर धन की उसे भी बिय पाना पडा है। पुस्तक करणारस-युख है। करित्र-विषय में भी लेखक की कुशलता वा परिचय मिलता है। माया परम धीर मुबोध है। विवाह की समस्या बटिन है। बोरोर में प्रम के विवाह होये है पर बोड़े ही दिना में समाक की नीव धाती है। धम ही एक एमा स्वप्न है जिनके धापार पर बैवाहिक धमन धामीयन घटन रह सकता है।

पुष्प कुमारी—लेखक पं टीकाचम विषाठी ।

कमल स्त्रिओर ने एक धोर मंषट में पुष्प कुमारी की रखा की है। पुष्प कुमारी ने उमी सल प्रक्रिया की कि कुम्हार के विवा धीर किसी को न करेगी। कुछ निर्णों के उपरांत एक महामा धाड है धीर पुष्प कुमारी को रोकर बहते हैं कि यह घटाए बय की धवस्था में विषया हा जापयी। पुष्प कुमारी बटिन तास्या से भाप्य जिनि को धप्यया कर टेनी है धीर कमल स्त्रिओर स उबका विवाह सामन्य हो जाता है। पुष्प कुमारी के माँ धापय-गाय धीर बहता स्त्री तनिता माम-नमुन से सग्गा करके धमग हो पाती है पर बहुत बट्ट करर धम को छिद धरने कुटुम्ब से धा मियती है। बलगा ने बहुत धधिध धाम लिया गया है। उन्पल बया है भापुम होता है, कोँ रींरुन भी कया बाँच रहे है। बही

॥ नीर-चार ॥

शैली है, वही भाषा। अमुदियाँ इतनी हैं, इतनी इतनी मही वाक्य इतने मही धीर धसपठ बिचकी कोई हूय नहीं।

शीलमयि—यह भी पं टीकाराम की कृति है। धाम्यायिका बुटी नहीं है। पति एक बिचवा के प्रेम में प्येठ जाता है। पत्नी इस खोक में मर जाती है धीर मरने के बाद स्वप्न में पति को उपवेश देती है। पति की धामिं खुम जाती है। यह उस बिचवा को किसी धनावासय में भेज देता है।

गौरी रांकर—लेखक भी मबारीभास गुप्त।

प्लाट में कोई नवोपगता नहीं धीर न कोई बरिभ ही उस्नेसनीय है। पहले ही धप्याय में नायक का गौरी से भिसना धनोबे डंप से हुपा है। गौरी हमबा जाने के लिए मबल रही है, या मबलुर है, वैसे कहीं से जावे। संकर उही समय बहाँ धनावास था जाता है धीर गौरी के लिए हकबे की सामग्री ला देता है। एक मुबती का हमबे के लिए बिब करना धीर एक धपरिचित मुबक के पैसों से हकबा जाने को तैयार हो जाना हस्त्यजनक है। छोटी-सी तो पुस्तिका ही है, पर वह भी धाबन्त ऐसी ही धसपठ घटनाधों से मरी पड़ी है।

माधुरी १० मार्च १९२४

धादरां बहु—धी शिबनाम शास्त्री की 'लेखक' नामक बँमला पुस्तक का धनुवाद। धनुवादक भी शिबसहाम बतुबेसी।

मूल बँमला पुस्तक के उग्रीध संस्करण हो चुके हैं। इधसे बाहिर है कि पुस्तक कितने मार्लों की है। मजा यह है कि धनुवादक महोबय में केवल धनुवाद ही नहीं किया पु-बाध कबा को सुखाध भी कर दिया है। धब सिध हो गया कि किसी मनुष्य को केवल लेखक की पुस्तक का धनुवाद करने ही का धमिकार नहीं उसने मनमाना उसट-येर करने का धीर उस पर भी पुस्तक को मूल का धनुवाद करने का धमिकार है। हमारी समझ में यह धनुवादक महोबय की धनाधिकार बेष्टा है, उन्हें इसका कोई मबाब नहीं कि किसी लेखक की कीर्ति को धपनी इध्या से धप्ट कर दें। धीर सुनिए। यह पुस्तक हिन्दी में पहली ही बार धनुवाधित होकर प्रकाशित गही हुई। इसका पहला एडीशन 'धारवा' के नाम से पहले छप चुका है। यह दूसरा एडीशन है पर नाम बरभ गया है। 'धारवा' शायद धध्या नाम था इसलिये फिर नामकरण किया गया है। इसे भी बोले-बड़ी धमभला जाहिए।

पुस्तक धामिकाधों के लिए उपयोगी है धीर इधसे उगाक मनोरंजन भी होना किन्तु धनुवादक ने इसे सुखाध करके इस पर बोर धापाध किया है। मामूम नहीं इस

किताब में एसी कौन-सी खूबी थी कि हमका बेगमा से धनुषान करना आवश्यक समझा गया। यदि हमारे यहाँ के हिन्दी लेखक एनी साधारण कथाओं की कल्पना भी नहीं कर सकते तो हमारे भाषा का ई-बद ही मानिक है। सम्भव है, मूल पुस्तक में कोई कथा बाध हो धनुषान में तो कोई एनी बाध नहीं पियायी देती। हाँ अगर कोई सूची है तो यह कि भाषा में यहाँ-यहाँ बमला का भयक पा गयो है, जो भाषा की सरसता में बाधक होती है।

मासुम नहीं प्रकाशक महोदय ने इस पुस्तक के लिए चित्र चित्र चित्रकार से बनवाये हैं। हमने ऐसी धर्मी लखीरों कभी नहीं देखी थीं। क्रोमम जाति के माय इतना भीषण आधा-आधा घात तक किसी ने न किया होगा। ऐसी लखीरों से तो लखीर का न रहना हज़ार गुना अच्छा था। वास्तव में इन चित्रों में पुस्तक के अर्थ बाह्यगुणों को मिटा दिया है।

गृहिणी गौरव—अर्थों का संग्रह। धनुषानक धीक-प्योसास बर्ना।

साठ बेंगला गलों का धनुषान है। कहानियाँ मनोर्षक और सिखाय देती हैं। कई कहानियों में स्त्रियों के आरत करिब दिखाये गये हैं। पहली कहानी तो बहुत अच्छी नहीं किन्तु शेष कहानियाँ उच्च कालि की हैं। 'मेरा का अधिकार' हमें बहुत पसन्द आयी। धनुषानक ने भाषा सामान्य को कहीं हाथ से नहीं जाने दिया। पुस्तक में लखीरों को बर को समन्वित की गयी है। शुरु में मेरा का चित्र और उनका संक्षिप्त जीवन करिब दिया गया है। उनके चित्र हुए दानों की एक ताजिका जो दी गयी है जो दाना के मूलाक को घटा देती है। पुस्तक अच्छी है और चित्र साधारण-अच्छे हैं।

मासुमि माघ १६२१

भारतीय शासन—बीजा संस्करण। मन्त्र और वास्तव की प्रकाशनात्मक सेवा।

हम राक्षसीय युग में अब कि प्राणिमात्र के हृदय में स्वराज्य की अन्वितगार्ह उभरी है यह आवश्यक ही नहीं अनिवाय है कि हम अपने देश की शासन-व्यक्ति से कभी सति परिचित न। जब तक हमें यह न मानुम तब तक कि हम पद्धति में बना-बना बुद्धिवादी हैं उनके मुबार की बना-बना योजनाएँ हैं और शासन के चित्र-चित्र दोनों के परिचय में हमारा अक्षेप कर्नाण होगा हम स्वराज्य के आन्दोलन में पूरे अन्धकार में सम्मिलित नहीं हो सकते। हम पुस्तक में हम एक विषय की कितनी ही बातें मानुम तो

घबरी है—ब्रिटिश साम्राज्य का शासन पार्लियामेंट प्रिवी कांसिल भारत सरकार, भारतीय व्यवस्थापक मंडल प्रांतीय सरकार बेसी रिपोर्टें भारतीय शासन के विभाग—इन सभी विषयों की विवेचना की गयी है। लेखक ने केवल इन संस्थाओं की बर्षा ही नहीं की उनके विषय में अपनी राय भी देयी है। 'इंडिया कांसिल' से साधारणतः लोग घबराते हैं। लेखक ने उसका विस्तार से वर्णन किया है। आपकी यह राय है कि इंडिया कांसिल की कोई जरूरत नहीं। जब उपनिवेशों के सेक्रेटरी को इंडिया कांसिल की जरूरत नहीं तो भारत के सेक्रेटरी का चाहीस भास वाणिज्य बर्ष करके एक कोसिल रखने की क्या जरूरत। पुस्तक उन भागों के लिए बहुत उपयोगी है, जो राजनीति में प्रारम्भिक ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं। पीछे बघातेकर हुने की मे इसकी भूमिका निखी है।

स्वाधीनता के पुजारी—लेखक की मूर्ख विचारलकार।

इस पुस्तक में कस के कस प्रबल देश-भक्तों को बीर-क्या का संघर्ष किया गया है। उनमें कई सिखाई है कई राजकुमार हैं कई ऊंचे राज्य कमचारी हैं। इन बीरों ने कितनी विलेटी से कड़ी से कड़ी यातनाएँ देनी देश प्रति की बेबी पर कितने प्रमुख विरवास और सदस्य उत्साह से अपने को बलिदान किया यह पढ़कर उन बीरान्ताओं के प्रति हृदय में खडा की महुरे-सी उठने लगती है। स्वाधीनता की बेबी से बरवान पाना कितना कठिन है, इसका अनुमान इन चरित्रों के देखने से हा सकता है। पुस्तक सचित्र है, ठेरू हास्टोन चित्र चित्रे मने है। चलन सीधी चित्तकल्पक है और बाड-बाड चरित्रों में तो कल्पनाओं से कहीं अधिक भाग्य आता है।

इशुल चरित्र—लेखक की नल्पनसाम पुत्र।

एह नृगोल की उल्लु-पुस्तक है। ये लेखक पहले साहौर की वैज्ञानिक उल्लु पत्रिका 'रोसनी' में निकले थे। अब कुछ काट-काटकर उल्लु पुस्तक का रूप दे दिया गया है। इसमें नृगोल के उस नाम का बहान किया गया है, जो वलित से सर्वत्र रखा है। पृथ्वी की वायुिक पति वामु मंडल पृथ्वी का वाकार, सूर्य-रेखा धारि विषय रोचक और सरल भाषा में लोग के लाल निखे गये हैं। हमारे जमान में यदि कोई स्कूल इस विषय को उल्लु भाषा में पढ़ाने का निश्चय करे, तो उसे अपर्युक्त पुस्तक के बभाव की सिखायत न करनी पड़ेगी। इस पुस्तक में नृगोल के इन भाग की मे मशी बार्ने निख दी गयी है, जो कोस की साधारण प्रथमी पुस्तकों में नहीं मिल सकती। जहाँ कहीं जरूरत पडी है लेखक ने चित्रों और लकड़ों से भी काम लिया है। आपकी इससे बहुत अच्छी हो सकती थी। इस पुस्तक में यह विस्तारता है कि लेखक ने अपने विषय को मूब स्पष्ट करके

सम्य दयामु, नीतिपरामर्श बढाया गया है। इनी भाँति तुर्कों को भी धापने मनुष्यता से रहित जिनाफ्त वा झूठझूठ इका बजानेवाले स्वार्थी भूटे घोर निर्दयी बतलाया है। मामा भी का राजा है कि उन्होंने जो कुछ लिखा है अपने अनुभव से लिखा है इसलिए हम उनकी धामोचनार्थों को मिथ्या तो नहीं कह सकते हैं कि जितने दुर्गुण बर्मनों में हैं वे सभी योरोप की धम्य जातियों में भी उसी मात्रा में भीभूर है। संभव है मामा भी ने इंग्लैण्ड को अपनी बेकनीयती का परिचय देने के लिए वे लेख लिखे हों। यदि ऐसा हो तो बड़े हर्ष की बात है। हम मामा भी का स्वागत करने को तैयार हैं। इन दिरों के सम्बन्ध में मामा भी के लिखार जानने योग्य है बकर। तुक घोर जमन जातियों के स्वभाव का सच्चा ज्ञान प्राप्त होता है।

माधुरी वैराग्य १६८०

कर्तव्यापास—लेखक की बेचनारामण त्रिवेदी।

यह मौलिक उपन्यास है। हिन्दी में इतना बख्खा मौलिक उपन्यास हमारी मजूर से नहीं गुजर। पर माया में बंगला की फनक मिसती है। कहानी इतनी सुन्दर है लेखक की शैली इतनी प्यारी है चरित्रों का प्रचरन इतना मनोहर है कि जैसे पाठक मनोमात्रों के उद्यान में गुजर रहा हो। कहीं मानमय पितृसक्ति है तो कहीं बीपशिखा की भाँति हृदय में आसनेवाला पुत्र प्रम। अन्धकता का बिभ तो हिन्दी उद्यार में एक धनूटी बस्तु है। उसके पति ने अपने पिता की धामा से अपनी पहनी स्त्री को त्याग दिया है। बेचारी की त्यक्ता मनोरमा अपने पुत्र सुशील के साथ मायके में विपत्ति के दिन काट रही है। यह बड़ेज के पूरे रूपसे न मिलने का लण्ड है। अन्धकता अपनी छीत न बनती है। एक बार वह अपने सीतेसे बेटे को देख लेटी है। इससे उसका हृदय घोर भी व्याकुल हो जाता है। वह जानती है कि पति के देख पर मेरा धधिकार होने पर भी उसका हृदय पर मनोरमा ही राभ्य कर रही है। क्यों न करे? उसके पुत्र है वह अनुपम सुन्दरी है। मैं धनागिन हूँ। पुत्रबिहीना पत्नी को पति क्यों प्यार करेगा। उसके धाम्य म उन्तान-सुख भोगना लिखा ही नहीं। अपनी मन् के एक बालक को वह अपना पुत्र बनाकर पासतो है, लकिन वह भी उसे दया से जाता है। सुशील की लेखस्वी मूर्ति उसकी धीखा में नाथती रहती है। वह पति को मनोरमा की हवा भी नहीं लगने देना चाहती उसे भीपख शपथ निसा कर पुत्र-बशाग से भी बंधित रहती है यहाँ तक कि बुद्धिया मनोरमा धंत को संसार से बिदा हो जाती है। अन्धकता इन धवसर पर अपनी सीत के पास पहुँच जाती है। मनोरमा उसे देखकर कहती है—

‘बहुत अन्धकता! धा माई इस धंतिम ममय में एक बार तुझे गने से तो मगा नूँ। तेरा कोई अपराध नहीं है खंवार। नहीं-नहीं इस तरह रोकर मझे दुखी न कर बहुत—धाम में धम्य हो गयी। तेरे ऊपर ईश्वर जानते होंने—किसी दिन मैंने बिडप

नहीं किया। धाम भी यही धारतीर्थाय अपने हृदय से देकर जाती हूँ 'तेरा जीवन साक्षिणी के समान पवित्र रहे।

बन्धन शब्द का प्रयोग सुनकर मनोरमा धीर हो जाती है। सौत भी क्या पहले ही शायं हो चुकी थी। धाम सपली-मस्ति का उन्मत्त होता है। मनोरमा अपने पुत्र को उसकी गोद में सौंप बैठी है।

इसी बीच म पति महोदय भी धा पहुँचते हैं। मनोरमा उन्हें देखते ही बिगना उठती है—'स्वामी! प्राणनाथ! यह कहते ही उसमें अचानक बल का संचार हो जाता है और वह पति के पैरों पर गिर पड़ती है। पन्द्रह वर्षों की अश्रुनाथा धाम मरण संन्या पर पूरी होती है। सज्जित पिता स्वी और पुत्र से जमा माँपता है और इन कस्तुर कया का धोत हो जाता है।

इस उपन्यास में मुख्य पात्र चार हैं—मनोरमा सुतोम राजेश्वर और बन्धुका। मनोरमा का चरित्र भारतीय पत्नी का धादक है। उसका पति-प्रम घटन है। पति ने उसे त्याग दिया है उसकी लखर नहीं लेता। उनके पास एक पत्र भी नहीं लेखता। पर उसे विरबाव है कि पति को उससे प्रम है वह पिता की धाक्षा से बिचरा होकर मनी धरहेलना कर रहा है। वह जानती है कि स्वामी को मरे बियोप म और पीडा हो रही है पुत्र बियोप ने उनका हृदय धटा जा रहा है वह पिता की धाक्षा मानने के निर मी पति के प्रति इ प या धाक्षा का मान नहीं धाले पावा। एक बार वह सुतोमा धरम पिता के ध्यवहार से दुली होकर उनको उपेक्षा करता है तो मनोरमा उसकी मग्मता करती है। इन समय उसके मुझ से जो शब्द निकले हैं उनसे पति-धटा की पवित्र धारा-भी बहने लगी है। अत्रकमा के प्रति भी उसके मन में इ प का भाव नहीं है। बट-नी जलन नहीं। वह अपनी बसा पर दुली पर संतुष्ट है। भारतीय माती का हमने बड़कर और क्या धाचरख हो सक्ता है ?

राजेश्वर महाम्ताय है तो धंघड़ी पड़े-सिधे सेरिग लाव बड है। पिता की धाक्षा धा पामक करना वह अपना परम कठम्य लभभने है। उचित और अनुचित का बिचार अपने हुए भी वह पिता की एक धरमन्त अनुचित धाक्षा के सामन गिर कूडा देते है। उन्हें धरनी प्रिय पत्नी को त्याग कर बूसरा बिबाह करते हुए लजाव नहीं होता। धाम बना में उन्हें प्रम नहीं है। उनका हृदय मनोरमा और सुतोम के बियोप में लड़पना रहा है मन्दिन वह सुतोम का पत्र पाकर भी जग्मता जबाव नहीं लेता किन्ती प्रचार की महापता नहीं करते। वह जानते थे कि इन दशा में धरि क्यु मुप महापता करना भी चाहें तो मानिनी मनोरमा उसे स्वीकार न करेगी। र्जगा हम ऊार निग धामे है मनोरमा से उसके धंघिय समय में उनही भेंट होती है।

सैगक ने सबम धरिग रचना-नीयल अग्रकता से चरिग म गिगाया है। वह ननी माठा-रिता की सङ्गी है, राजेश्वर का बराम भी सुन चुकी है सकिन सीतियासाठ

की धाग में जतने की धपेचा बह मर जाना ही धपेचा समझती है। वह अपने माता-पिता के कमरों में यह बात टास देती है। लेकिन उसके पिता की राजेन्द्र-मा बूढ़ा बर मिलता कठिन मामूह होता है। बिबाह हो जाता है। समुराज में धाकर बन्धुका को जात हाता है कि यद्यपि कोई मेरा धनादर नहीं करता पर पर धर का प्रम मेरे सीठ ही पर है। यहाँ तक कि उसे मामूह हाता है राजेन्द्र भी उसे प्यार नहीं करते। वह ईर्ष्या की धमिल म जतने सगती है। वह धाकर अपने पुर्गाम्य पर धकेसे बैठकर रोना करतो है। पति उसकी बड़ी खातिर करता है, मबर धाये विल धर में ऐसी बातें होती रहती है जिनसे उसे पता चलता है कि यहाँ कोई मेरा नहीं यहाँ तक कि पति भी पट्टल सीठ क पति है उसके बाध मेरे। कमी-कमी वह यह धीचतो है कि जो धपनी पड़नी प्रखय-गामी को इतनी निवयता से त्याग सकता है वह मेरा क्या हो सकेगा ? इसी मय धेरता की वता म एक बार वह धपनी ममर के धर के नेबते में जाती है। वहाँ मुसील भी धाया हुआ है। मुसील कहीं से तमासा देकर धाया है धीर बन्धुका को धपनी बुधा समझकर उस तमासो का जिह्न करने सगता है। उसकी प्यारी-प्यारी बातें सुनकर बन्धुका क 'हुक्क बंध्या जीवन म धनायास ही मातृत्व का लवय हुआ। वह तुल्य बड़ी से अपने धर चली धायी। उसे समेह हुआ कि मन्ध ने सीठ को भी धवरय बुसाया होगा। मरे स्वामी भी धवरय वहाँ मये होये। धपनी सीठ के बिहार की कल्पना करके वह ध्याधुन हा मयी उसकी धाँसों के सापने उसी लदके की सुरल नाच रही की मामूह होता बा राजपुत्र की तरह मुकुमार देवकुमार की धाँसि सुन्दर लड़का पास बैठा है। अब लड़का इतना सुन्दर है, तो उसकी धाँसि जाने किखनी सुन्दर होयी ? इसी वकत राजेन्द्र धपनी बहन के यहाँ जाने को लंघार होतो है। बन्धुका को निरवय हो जाता है कि यह सीठ मे मिलत जा रहे है। वह समेह यह भीपख लपक रिजाती है—'धात्र धरि वहाँ धामो तो धपन लड़के का लून पियो।

राजेन्द्र मर्माहत-से हीनर बाहर जाने जाये है। लेकिन जब बोधी धेर के धार बन्धुका को जात होता है कि राजेन्द्र रात धर धर ही पर रहे एत को भीजन भी नहीं किया तो उसका धरिह दूर हो जाता है। लेकिन ने एत धवरर पर बन्धुका के धनीनाथ को जिठनी सुन्दरता से प्रकट किया है, उससे उनके स्वी-दूधन के ज्ञान का धपेचा परिधय मिलता है। उस दिन से जने जने बन्धुका की ईर्ष्या की धाग ठडी होने सगती है। जो माल के बाध फिर धाविनी के धर जाने का मोका मिलता है। मुसील के वहाँ धाने की धाशा है। बन्धुका धध की धपन पति से वहाँ जाने का धनु-राध नरती है। पर वह नहीं जाते। वह भीपख लपक उन्हें धूधी गड़ी है। बन्धुका धाती है धीर उसकी धाँसि मुसील का धारों धोर हुँकने सगती है पर मुसील पड़ी नहीं धाया है।

कुध धिनों के बाध मुसील अपने पिता को एक पत्र लिखकर धपनी किखी पठीचा

में पाव होने की सूचना देता है। पंडित जी इन सब को खोलते भी नहीं। चन्द्रकान्त इन सब को पढ़ती थीं पर पति से उसका जवाब देने का धाग्रह करती है। चित्तमा स्वामाधिक परिवर्तन है। पति धरम पुत्र और परित्यक्ता स्त्री से प्रेम करता तो चन्द्रकान्त का बोध बरता हय को धाय वहकती। तस्मि पति का जग होने क प्रति यह प्रणाय बनकर चन्द्रकान्त की सहृदयता जागृत हो जाती है। अन्त को बहु पुर मुठान के पत्र का जवाब देती और उसे इलाहाबाद धाकर पढ़ने का अनुरोध करती है। वह यही रहती थी। मुसीम इलाहाबाद धाकर पढ़ता है पर अपने पिता के घर नहीं जाता। चन्द्रकान्त को उसके प्रणाय धामे की भाव मागुम हो जाती है। वह उसे घर पर बुलाती है खुद मागि में बैठकर उसकी तलाश करने भयती है, पर वह न जाता है न गिनायो देता है। इसी वनको बरता बन्धी नहीं है। यह बहु चन्द्रकान्त नहीं है जिने हम पहले देव चुके हैं। इय मे सब सहृदयता और प्रेम को स्वान दे रिया है।

मुसीम के स्वभाव म मान को मात्रा अधिक है। वह यों तो धन पिता को देने नहीं चाठा लेकिन उस को और मेवाञ्चन धीमकार में बोरा की प्रति धन पिता के कमरे में जाता और उनके बरखों पर मिर रखकर रोता है। उनके प्रायुषो मे चारर नीग जाती है। धाइट पाठे ही वह डिर नीचे कुकर जाता जाग है। मयर उनकी बोरो दिनी नहीं रह्यो। चन्द्रकान्त और उनके पति दोनों ही मीर मरने हैं कि प्रागमुव नीन या। राजेन्द्र महुप्रय पिता की धाजा का बरकरा पानम करने पर गुने हए है चाहे इसके गिए अपने प्राण ही क्या न देने पडे। पुस्तक के अधिम दो-तीन परिच्छेद जिनमें चन्द्रकान्त मुसीम और राजेन्द्र के बरिषों का पूषण व विद्याम हुआ बहून हो मुन्दर है। राजेन्द्र का परचाताप चन्द्रकान्त की ग्यानि और मुसीम को गिनमलि का गिरान अन्वन्त मनोहर है। हम पाठका मे अनुरोध कर्ये हैं कि इस बरख क्या का मररय पड़े। एये उपन्यास उन्हीने बहून वम पड़ हागे।

माधुरी १६ फरवरी १९२६

द्विस्तम्भ कथानियाँ—सगरुध रं रामस्वयं नीयम।

बानकों के लिए घांटी-घाटी कथानियों का सग्रह है। हर एक कथानी के अन्त में उनके मिलनबानी सिखा भी ही मयी है। भाग सरल और रोचक है। पर हमारे समय में शिक्षा का प्रबल करण को उन्मत्त न थी। मइके स्वयं कहानिया से सिखा ग्रहण कर सक्ते हैं। वम से वम कुछ सीखना तो पड़ता ही।

बसन्त पुरजा—नरक की वनवा गार नीयती।

यह नीयती महोदय की जन नीट कथानियाँ का सग्रह है जो उन्हीने सम्य-
 ॥ नीर-नीर ॥

समय पर लिखी धीरे प्रकाशित करायी है। कहानियाँ प्रायः सब मजेदार हैं। बसवत-पुरजा भायाबिनी मोहिनी याचि बहुत ही सुन्दर हुई हैं। हास्यरस की गहरी चारनी का मजा सब कहानियों में विद्यमान है। भाया मुहाबरेदार बोल बाल की हैं। पंडिताऊ भाया कहानियों के लिए अनुकूल नहीं होती थीं। महाशय ने इस गुरु को जब समझा है। कहानियों में लेखक की प्रतिभा झलक रही है। हमें याशा है, भाप धीरे भी प्रशंसा मिलेंगे। कहीं-कहीं एकाध शब्द बेगुहाबरा घा पये हैं। 'सुसासणी' शब्द टकसास बाहर है। यह मारबाड़ी मकल-ती मानुम होती है। याशा है, लेखक महाशय इसका ध्यान रखेंगे। कहीं-कहीं तो घापका बर्छन बहुत ही रोचक धीरे सजीब है। बहुत प्रशंसी थीब है। मुबारकबाडी के भायक।

माधुरी फरवरी १९२७

कर्मदेवी—लेखक श्री प्रवासीसाम बर्मा।

यह एक छोटा-सा मनोरंजक ऐतिहासिक उपन्यास है, जिसमें सत्य की अपेक्षा कल्पना से अधिक काम लिया गया है। कर्मदेवी जालोर के राजा दुबय सिंह की पुत्री थी। मेवाड़ के दुबराज मस्तसिंह से उसका प्रेम हो गया था। पर इधर अकबर की निगाह भी कर्मदेवी पर पड़ चुकी थी। उसने जब कपट नियत बसात्कार याचि साबनों से उसे अपने बरा में करना चाहा पर सफल न हुआ। आखिर उसने बहुर से मस्तसिंह का काम तमाम किया धीरे कर्मदेवी उसके साथ सती हुई। अकबर के चरित्र को बड़ी शूरता से बिगाड़ा गया है पर कथा मनोरंजक है, भाया बहुत सुन्दर। संस्कृत शब्दों का प्रयोग कुछ कम होना तो पुस्तक अधिक उपयोगी हो जाती।

शाह्यालालि—लेखक पांडेय बेचन शर्मा 'अग्र।

यह अग्र की छठ कहानियों का संग्रह है जो पाँच-छ साल पहले 'माज' में निकली थी।

एक-एक कहानी समाज के एक-एक श्रेण का चित्र है। अधिकतर कहानियों में हिन्दू समाज की बुराईयों का कसूर विज्ञाप है। 'पटीचा' हास्य-कथा है, बहुत सुन्दर है, भाया सजीब धीरे भाव मर्म-स्पर्शी है।

जीवित हिन्दी—(प्रथम भाग) संप्रहर्षा श्री लक्ष्मीचन्द्र शूराना।

इस संग्रह में यह मनीनता है कि केवल समकालीन रचनाओं के ही धरा लिये गये हैं। अकसर स्कूली सघर्षों में जो ब लक्ष्मणाल धीरे राजा शिवप्रसाद से धारम्भ करके बाबू राधाकृष्ण दास तक समाप्त कर देते हैं। समकालीन सच्चको को झूठे तक नहीं। ऐसे संग्रह कामज-कसाओं के लिए उपयुक्त हो सकते हैं। उसका उद्देश्य भाया का कम-विकास रिखाना है। हिन्दु बासकों को प्रचलित भाया से अपरिचित रखने का फल यह होता है

के ने कुछ निराम बैठ है ता ब्याकरण और मुहाबरे को गणविद्या करन सगत है । इन ग्रंथ म यह बोध नहीं है । वाचका के लिए बहुत उपयोगी ह्याय ।

माधुरी माप १६८५

कंकास—सचक जपराकर 'प्रमा' ।

अपनी रचनाओं के अत्यन्त सुन्दर कल्पना हुए नाम रखने की प्रथा प्राचीन काल से चली आती है । किताब तो है सखियल पर नाम इतना सुन्दर मानो साहित्य का रत्न हो है । 'प्रमा' की ने इतना सुन्दर उपन्यास लिखकर इतना भीमन्त नाम दान किया कि पहल पाठक को एक प्रकार की धरति हो जाती है । वह समझने लगता है कि इसमें कोई दैताधिक रहस्य होया या कोई हत्या-बाद लेखिन त्रिन पर बह करके जब वह पुस्तक उगता है और एक परिच्छेद पर जाता है तब उन मायुम होया है, कि यह तो कोई जैसे जैसे की बीज है । पुस्तक समाप्त कर लने पर उनके सामन कंकास का प्रीणय ना धनर छोड़ जाता है । यह 'प्रमा' की का पहला ही उपन्यास है पर ध्यात्र हिन्दी म बहुत कम ऐसे उपन्यास है, जो इमक नामने रखने का सके । मुझे ध्यत्र एक धार म यह सिधासत की कि ध्यात्र क्यों प्राचीन वैभव का धार प्रताते है ऐसी बीज क्या नहीं निपटते तिनमे अवमान समस्याया और सुखिया को सुनसाया गया हो न जान क्या बेटी यह धारता हो गयी है, कि हम ध्यात्र से का हकार बप पूब की बातो और मनस्याया का बिबल सफलता के साथ नहीं कर सकते । मुझे यह धमग्मव-ना मायुम होठा है । हमको उस प्रमान के रहन-सहन धाधार-बिधार का इतना धम्यतान है कि धम-इहम ही धीर बलना यवाच का रूप धडा करन म बहुधा धमफल होती है । शायब यह मटे प्ररसा का फल है, कि 'प्रमा' की ने इस उपन्यास म समवाशीन सामाजिक मस्याया को हल करने की चेष्टा की है और पूब की है । मेरी पहली सिधासत पर कुछ लोग ने मुझे पूब धाते हाथों लिया या पर बह मध बहु बठार बाते बहत त्रिन लग रही है । धार एसी ही धम-बाँध लताया के बय एमा सुन्दर बसु निबल धाये तो म ध्यात्र भी उनको सहन करन को ठीयार है । इस उपन्यास को निबल धार-बाँध महीन हो गये । मैं धागता या कि कोई दुधम धागतर सखन हमरी धमोचनता करें । मम मम बने मित्रों से—किताबी धामाधना रक्ति मधमे नहीं बडी हुई है—इसको धम्याधना करन की धम्यत की पर सभी बाते करक टान मय दमसिध ध्यात्र मुझे इस कल्पना का पानन पुर करता पडा । मैं एवध हूय से बरता है कि मुझ दम रचना मे बडा धामन्य मिया ।

भेदक की कवितामयी शैली में यद्यपि उतनी सजीवता और मरदानापन नहीं पर उसकी कमर सौंदर्य और कोमलता न पूरी कर ही है। बुराई के विमल में मनीषता है, बेचिप्य है और हृदय है। चरित्र में गहराई है जान है और सत्य है। संभावनों में विचार है, तन्म है और पुननवाने भाव्य है। मंगल का हिनू-आदरुवार विजय का दामनिक-बड बाव स्वामी जी का बगुलाममत्पन किशोरी की पाकंडमयी धामिकता और निमन्म्य बिलासिता सभी पाठक को मुग्ध कर देते हैं। घंटी का चरित्र बहुत ही सुन्दर हुआ है। उसने एक बीपक की भाँति अपने प्रकाश में इस रचना को उज्ज्वल कर दिया है। प्रसङ्गपन के साथ जीवन पर ऐसी सारिक बृष्टि, यद्यपि पढ़ने में कुछ धस्वामाधिक मानुम होती है, पर यथाय म सत्य है। विरोधों का भेल जीवन का गूढ रहस्य है। वह भी सही है यमुना भी सही है, पर दोनों न कितना मूल्य समर है। एक कठोर है, दूसरी कोमल। एक ध्राव को मय दूध समझनाली बूझती बिप भी प्रहृष्ट करने को तैयार।

मुझे विरबाव है कि 'प्रसाद' भी ऐसे और भी रत्न उत्पन्न करेंगे और हिन्दी भाषा उनका यबोधित सम्माल करेगी।

नवम्बर १९३०

परदा—नेहक की बनेन्द्र कुमार बिन।

बनेन्द्र कुमार की रचनाएँ जोड़े हैं जिनमें से प्रकाशित होने लगी है। कुछ कथा निम्न 'त्याग भूमि' में निकलीं कुछ भाषुटी में। ली-वार और इधर उधर निकली होनी और परख' तो उनका पहला उपन्यास है, पर जो कुछ उगहोने लिखा है, बहुत ही सुन्दर लिखा है। भाषा चरित्र कुटुंबियाँ सभी अपने ढंग की निपटा है। उनमें साधारण-सी बात को भी कुछ इस ढंग से कहने की शक्ति है, जो दुर्लभ भाकपित करती है। उनकी भाषा में एक टाव मोच एक साथ भग्याइ है। इसके साथ ही वह उन दिवनिस्टो में नहीं है जिन्हें मल विषों में ही धानन बाटा है। सुन्दर को वह कमो ह्राव से नहीं जाने देते। 'परख' है या छोटी कितान पर हिन्दी में एक बीज है। भाषा इतनी सजीव शैली इतनी भाकपक चरित्र इतना भासिक कि जित मुग्ध हो पाटा है, मवर यह नयी जिवाह प्रभा हमारी समक में नहीं भापी। यदि कट्टी और विहाटी को सेबाकत ही धारण करना था—और ऐसा प्रतीत होता है कि जीवन में वह फिर न भिसे होंगे—तो जिवाह कन्मन को क्या पकरत थी? जिवाह भासना की बीज न हो सम्मान पैदा करने की बीज न हो पर संघति की बीज तो है ही ऐसी गाड़ी तो है ही जिसके दो पहिमे होते हैं। यदि स्त्री और पुरव को एक बूसरे के प्रेम सहारे और सहा मुमुक्ति से पकरत न हो तो जिवाह का नाम ही कौन से। कट्टो का चरित्र एक सरल बुझती विषया का चरित्र है, जिसमें विराय भी है और तुण्ड्या भी धनिभाषा की है

धीर निरपरा भी । विराय क्रिडा ग्रांथित गुण्या क्रिती दबी हुई । बिहाये म बरानी
 भी उर्मय है । बहु उर्मय का समीप पुत्रा है । विन्ता पनीरश धीर परिछाम बहु कनी
 सोषता ही नही । खाता है ता उर्मय स बोसता है ता उर्मय मे प्रम करता है तो उर्मय
 से धीर मन्थाम सता है, तो बहु भी उर्मय मे । सत्यप्रवाश का पतन—हम उने पतन
 ही कह्ये—एक मन्सवी मुवरु का पतन है, आ निव्यातबं के फर म पड जाता है । हम
 विरवाम है इय रचना का घरर हाया । हम बीनेय जो को इय पर बपार्ई देते है धीर
 कषा प्रमियों से घाघह करते है कि बहु इते धरवय पड ।
 जैनय जो से हमारो बोरी देर को मुमाकात है । सीय सादे लहृषापी धाम्मी
 है, हृषय में देय-भक्ति बू-बूट कर मय हुमा लम्बे-लम्बे संघार हुए बरा है न
 धाँकों पर मुनहरी एक न काई टोम-टोम । पुनचार काम करनेबन धाम्मियों म है
 पूरे सग्यापही । धाम्बन गुनराय संशय जेन म जेन जोषन पर काई उन्म्याम निवने
 की सामगो जमा कर रहे है ।

शराबी—मपत्र भी पत्यइय बेचन शर्मा उर्ष' ।
 फरपटी १६११

उष जो की भाषा म प्रवाह है उँर है धीर स्तूर्ति है । हाँ कड़ी-कड़ी रिमी
 बाउ को मबीन इय स करने के लिए बहु म्नाखरे का खपाय नही करने । मानिक न्न
 कषा का मानक है धीर जग्राहर नायिका । दोनों ही शराबिया क बन्धे है । बपार्हर
 का बाउ उने मारलीक कर कर से निकाल देता है । बहु मुनन बरना के म्ने म धारर
 रिया हो जाती है । मानिक उमने बिबाह करके उनका उदार करता है । क्यातक का
 कम मुप एना एना पया गया है कि समरुन में बडिनाई पडना है । हमका भी विचार
 नहीं किया गया कि उरग्याम म किन बातों के विस्तार को उकरन है धीर कीन-नी बाउ
 का चार बाख्या में ही ममात कर देनी बाहिए । शराबियों के बरिन म क्षमिधायकि
 का प्रम हा मरुता है, मगर बहु मही कहा जा सरग्रा कि एम साग 'जोते जगने'
 दिन मही मरुते । उष जो पकटे मयापवासी है धीर इम रचना म 'नी उमपी पचाप-
 धाम्ना रुचि मा कुम्बि की परबाह म करते हुए मरने धमपी रूप म गिराणी देती है ।
 कारमनाक का बरिन एक शरायो की गषका ठरसीर है । बहु स्वमाह का 'प मा मीष म
 होने पर भी मते म रिठका बड़ा पयु बन पाजा है धीर डिर मया उगनन पर उने
 धिना पघाग्रा धीर म्नानि होतो है धीर मते में किमी बाग को मे भायम की रिठनी
 प्ररुठि होता है म एक कुटय बिनहार को मना के साव रिग्याय म्ने है । मानिक
 का बरिन भी एक बिनानी मुवरु का बरिन है, आ जशनी को उउतो हुँ उर्मय म
 हीय से प्रम करता है धीर जब हीय का दुमरे पुनन मे बिबाह हा जाता है तो पडना
 निगता धीरकर भाग्यत हो जाता है धीर जब उमका शराबी बाउ मर जाता है तो

बह बुर इस दुष्पसन म पढ़कर अपनी मनोभ्यसा भूल जाता है और घन्ट में बजाहर से बिबाह करके मुक्ती होता है। उसी बजाहर के घर में हीरा के पति की हत्या हो जाती है और वह नदी में डूब कर धारमबाध कर लेती है।

फरवरी १९३१

सपना—सपक स्वामी धान्य मित्र धारमती।

स्वामी जी इसके पहले 'भावना' मित्रकर साहित्य में परिचित हो चुके हैं और बिबोने भावना पढ़ी है, वह जानते हैं स्वामी जी जैसे साहित्य की मूट्ट कर रहे हैं। 'सपना' म उन्होंने अपनी बिबुधी बय संविनी की स्मृति लेवी पर अपने हृदय के पुरनों की बर्पा की है। आपने मुमिका मे जिन्हा—

मैं सोचता हूँ जो सपने की तरह बट गया और सपने की तरह ही फिर उबड़ गया उसी की बात मे लोगों को क्या सुनाता फिर ? खुद भी क्यों उसकी स्मृति पोस पोस कर कटित बनाई ? यह भी मैं जानता हूँ कि स्वप्न मिठने के लिए होता है और जो महसूसता है वह कभी उबड़े नहीं वो उसकी सुन्दरता भी लपट हो बाम। बीबन इतना प्रिय और सरस मानूम होता है। यही कारण है कि उनमें इतना प्रबल धारमबाध है। मैं स्पष्ट अनुभव करता हूँ कि बिब मित्र जी मैं भी बठा हूँ परि उसे खोने न पाता वो उसकी समुद्रता को पहचान भी न सकता। मैं उसे ओकर ही तो पा सका हूँ। सब रहा यह, कि मैं उसे खोने—सूट जाने—की पीर को गा गाकर क्यों तहनाता हूँ इसना मन्ना न पुधिए। इसे हृदयबान ही जान सकते हैं।

स्वामी जी की भाषा म बम को स्पश करने की प्रबल शक्ति है, उसमें सगीत है कोमलता और धारमबाध है। स्मृतिर्या इतनी पबिब इतनी मनोहर है कि बिब पर हुमेता के लिए अरर छोड़ जाती है। जी जानता है, कि उसके उदरधों से पाठकों का मनोरंजन करे। एक-एक पंक्ति म धारकी प्रसन्न-सी भरी हुई, सच्ची भक्ति म डूबी हुई, कविता का धारमबाध धारमेया। शायद यही यक्ति जी बिबने और बिस्तृत होकर मीर की बानी को धरमहृय जिन्वा बा। धारि मे डाक्टर बीमती कुन्दन कुमाटी देवी का एक संवेजी कवन है, जो पढ़ने और मनन करने योग्य है। हम इस पुस्तक को हिन्दी का उज्ज्वल रत्न समझते हैं और धारा करते हैं कि उसमें फितन ही बिबोनी धारनामों का कस्याध होगा।

फरवरी १९३१

कुमुदिनी—लेखक श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर धनुबाधक श्री भग्यकुमार जीन।

बिबकवि श्री रवीन्द्रनाथ जी का यह एक नया उपम्यास है। पहले 'बिबाल धार्य' में क्यश मिबसता रहा। अब पुस्तककार प्रकाशित हुमा है। मधुसूदन जी

क्या नामक है—इका ही इच्छा वैसे पर जान देनेवाला कुमाभिमानी और बन को संसार की सर्वोत्तम निधि माननेवाला कूर पुण्य है। कुमु उचार स्नेहमयी धारमाभिमानी गनी पर दुःख से निरक्त हो जानेवाली सहानुभूति और कोमलता को देखी—नायिका है। एम धर्मोप्य जोड़ का मेम न सुखकर हो सकता है, न हुमा है। ऐसे पुण्य जहाँ होंगे यहाँ यही बाधाएँ नष्ट होंगी। वह परनी को भी धरने जीवन विधान की कस का एक पुराँ समझना है और बाह्य है, कि वह भी धर्म्य पुरुषों की भाँति उसके इशारों पर नाचे और जब उसे इन उद्योग में मजबूत नहीं होती तो वह उत्तरोत्तर क्रोध और उद्विग्न होता जाता है। ईमानस्व का भंक्रु तो दोनों कुर्मों में पहले ही से मौजूद है। मनुमुन धारमाभिमानी का धरन प्यार भाई को मठा और स्नेह की दृष्टि से देखना उसे और भी बाधता कर देता है। वह दम्न ईर्ष्या और संकीर्णता की भावों से देखे मूर्ति है। ऐसे पति भी होते हैं हमें तो इन स्वीकार करने ही में संकोच होता है। पर संसार में सभी तरह के मोप होते हैं और ऐसे पुण्यों का होना भी सम्भव है। हाँ हमारा निरबाध है कि ऐसे पुण्य समार में धरिक्त होते तो सवार नरक-मुच्य हो जाता और सभी बरों में बही कनह नजर धाता जो इन पर में हुमा। कुमुदिनी विधनी ही देखी है उठना ही मनुमुन पिशाच है। पहनी ही रात को जब कुमुदिनी को मुच्छाँ या जाती है तो मनुमुन कटुता है—नायक उस मुच्छाँ का धरमाध कर धायी हो क्या? पर हमारे यहाँ इनका रिवाज नहीं। तुम्हें यह धरनी नूर नयरी बात खोजनी होगी।

किर धंमूटी की बात धाती है। कुमु के पाम निरबाध की ही हुई एक धीरोड को धंमूटी है। मनुमुन मही चाहता कि भाई की ही हुई बस्तु को कुमुन इनकी प्रिय बनने। मनुमुन वह धंमूटी उड़ा मेटा है और कटुता है—हाँ मीने सी है। मीने तो वह रिया का उसे तुम नहीं रख सकती।

कुमुन नरती है—तुम्हारी बीज तुम रत सकोगे और धरनी बीज में नहीं रत सकती ?

इन पर म तुम्हारी धरन मममी जानवाली कोई बीज नहीं है। कोई बीज नहीं ? तो यह रत तुम्हारा पर, मगहामो।

नापठ यह कि मधुमुन के धरिन में करी कोमलता नहीं बही मजबूत नहीं। वह इच्छता और धरिमाध और मुक्ति मोभारिकता का पण्डित धरतार है। धारकप है कुमुन को उन धरिमाध रूप-मापुटी का उन पर उतरा भी धरन मही पड़ना। जहाँ बड़े बड़े मजागा क निर भी रक्त जल है बरों भी बह ज्यों का त्यो बना रतता है। केवल दो-तीन बार ही उगना निर पगोत्रता है पर वह भी जब उगे बीने से बतारा जाना

है, कि कुमुद लक्ष्मी के ग्रह सेकर धायी है। उसका मन रूप से बँधन होता है बरकर मगर उसमें बायोहीन के सिवा और कुछ नहीं है। जिसकी बार मधुमुदन उससे प्रेम बिछाता है, कुमुद के हृदय में जीव-दान मचती है। पति का क्रोध तो उसकी समझ में आता है, उसका प्रेम समझ में नहीं आता। उस प्रेम में कपट है, स्वाभ है, बमरद है, धात्मसमाग्य नहीं।

कुमुदिनी के मनोभावों का अत्यन्त सजीव चित्रण स्वयं उसी के शब्दों में हुआ है।

मोती की माँ कुमुद से पूछती है—तुम क्या समझती हो कि जेठ जी से प्रेम कर ही नहीं सकती ?

‘कर सकती थी। हृदय में एक ऐसी चीज भर जायी थी कि जिससे सब बातें अपने पसन्द कर लेना मेरे लिए बहुत आसान था। शुक ही में तुम्हारे जेठ जी ने इसे टोड़कर बरकनाशूर कर डाला है। धाब सब चीजें कठोर होकर मुझे सता रही हैं— मैं जानती हूँ मैं जो पति को थड़ा के साथ धारम समपण्य नहीं कर सकी हूँ वह मेरे लिए महापाप है, लेकिन उध पाप से भी मुझे उतना डर नहीं जिसना मझाहीन धारम-समपण्य की प्शानि की माय करके हो धायी है।

जरा बेर रूप रहकर कुमुद ने फिर कहा—तुम भाव्यवान हो बहुत न जाने तुमने कितना पुख्य किया होगा अभी तो तुम बेबर भी को सम्पूर्ण हृदय से प्रेम कर सकती हो। पहले मैं समझती थी कि प्रेम करना गड़ब है—सभी स्त्रियाँ सभी पतिवों से अपने आप ही प्रेम करती होंगी। धाब देख रही हूँ कि प्रेम कर सकना ही सबसे बुलम है, वह तो जन्म-जन्मान्तर की तपस्या से ही हो सकता है। धाब्या बहुत सच-सच कहना सभी स्त्रियाँ क्या पति को प्रेम करती है ?

मोती की माँ जरा हँसकर बोली—जिना प्रेम के भी धाब्यी स्त्री बना जा सकता है, नहीं तो सघार जलेबा कैसे ?

‘बही विजाठा देती रहो मुझे। और कुछ धन सक्त जाहे नहीं कम से कम धाब्यी स्त्री तो बन सक्त। मुबन इसी में ज्यारा है, कठिन तपस्या तो बही है।

बाहर से उसमें बाभाएँ पड़ती है।

‘भान्तर से उन बाभाधों को दूर किया जा सकता है। मैं कर सक्तूंगी हार न मानूँगी।

यह है एक सही गारो का शुद्ध बुद्ध संकल्प। पति की सारी बुदाइयों को भूसकर भी वह धाब्यी स्त्री बनन ही से अपने जीवन की सार्थकता समझती है।

पुस्तक में कितने ही स्वतन्त्र इतने गर्मस्पर्शी हैं कि चित्त मुग्न हो जाता है। और

भाव-व्यञ्जना का तो पृथक् ही बना । हमार विचार में यदि कवि ने मधुसूदन का चरित्र इतना दुःख म लिखाकर इतने दुःख और सुखर पित्राग होगा तो जीवन की ७ बड़ी धीर भी मायिक हो जाती । मधुसूदन को तो हम एक धमाधारण लोभी व्यक्ति समझकर उमने बुला करम गयते हैं धीर कुमुदिनी की विद्वम्बनाओं का प्रत्ये उमने बहुत दुःख हम हो जाता है पर इमम तो कोई दो राजें ही ही नहीं सजनी कि यह उपजात बड़े उंचे बरने का है धीर बन्ध कुमार जी ने अपनी प्रांभम माया ६ इनका अनुकार करके हिन्दी भाषा का उपकार किया है ।

माघ १६३१

मेरी इरान यात्रा—नरक महेश प्रमाय मौलवी धालिम प्राश्रिय ।
 जो माय धंधवो के बिजल है व इम्मील की मर करम जाते हैं । महेशप्रसा

आ परवी-अरनी क धाषाय है उनके लिए इरान से ज्यादा प्रम धीर किम दस से हो नाता था । बाटोने की यात्रा बहुत सुगम्य है । इरान समीप होते हुए भी दूर है क्योंकि वहाँ यात्रियों क लिए कोई सुविधा नहीं । रायण यह पहला ही यात्रा-बतावत है जो हिन्दी में लिक्ता है । यह उन विमलस्वी धीर यात्रा-ग्रम का प्रमाण है, जो भारतबागिया में प्रब जावरित होन गया है । पुस्तक ब्याचू संशों में विभावित है । पहले संड म इरान का संक्षिप्त वृत्तान्त है धीर हमारे विचार से बकरत से ज्यादा संक्षिप्त है । इतत ज्यादा बिस्तार तो माधारण भूगोल की पुस्तकों म मिलता है । दूसर खपटों म पामपोट बने मिलता है धीर उनकी क्या आवश्यकता है यह बतलाना गया है । मरे विचार म इने पहला संड होना चाहिए था । बाकी संशों म बनारस मे कटापी बाले कटापी से जहाज र ईरान धीर मित्र-मित्र ईरानी स्थानों का बखल है । यात्रा बड़ी मनोरंजक है धीर तैवाने यात्रियों क लिए बड़े काम की चीज है । हाँ हम इतना बह्ये कि यात्रा की यात्रा कसी है धीर नहीं बह सजीवना नहीं है जो यात्रा-वृत्तान्त का प्रब्य मुछ है । पुस्तक म कई ईरानी स्थानों धीर नपटों के बिब है । इरान का माधारण परिचय जो हमें यहाँ मिलता है वह यह है कि यहाँ क लोग बड़े धार्मिक-मैत्री उदार धीर मज्जन है । जीवन समी संहमा नहीं होन पाता है । मड़कों ताराब है रेलें कम । मोटर सारिया का बिपदा बहम गता है । ग्रमवानु स्वाभ्यवृत्त क मीमम मुशानता धीर दूर मनोहर है ।

वातायन—नगर भी जैनेन्द्र कुमार ।

माघ १६ १

यह बीकनर कुमार जी की लेख बतानियों का लेख है । जिनमें कई तो परिवारों में लिख्य बनी है । कई इन मध्य में पत्नी का लिखने है । जैनेन्द्र जी की रचनायें

ने हिन्दी उपन्यास और गल्प-साहित्य को पीरब प्रणाल कर दिया है। इस संग्रह की 'फोटोग्राफी' 'बलिष्ठ चित्त' 'शामी' आदि कई कहानियाँ संसार के किसी साहित्य के लिए गव की वस्तु हो सकती हैं। ऐसा चुलचुलापन ऐसी शरीरता ऐसी सुकृतिता और नहीं कम देखने में आती है। बीच-बीच में ऐंठे वाक्य रत्न बिसरे मिलते हैं जो चित्त को मुग्ध कर देते हैं। दो-एक उदाहरण नीजिए—

'बह बर, जिसमें मक्खू के पुराने धिन सुख के बिभास के उन्लास के दिन शब भी जिम्बा था जो मक्खू के समीप उसके बाप का उसके माँ के समीप उसके पति का एक मात्र प्रयरोप तस्मूति-बिहू था जो उनक जीवन में धूल-मिल गया था जिसके कोनों में भीतर बाहर चारों तरफ मारों अपनी शाखा-पशाखाएँ फैलाकर उनका जीवन-मृत्त बना-मृत्ता था।

'सोचा बह तो दिखी नहीं है, दिखी का बाजार है, बहाँ अपनीरी ठन कर अपना प्रस्तन करती है और बहाँ गरीबी अपने को अपनीरी बाने में छिपाने समती बनती है। बह जयह तो देखी नहीं बहाँ अपनीरी सकती है और गरीबी मिकुड़ी पडी रहती है— बह नमियाँ जो सपाट चिकनी नहीं हैं जो संकरी और टेडी-मडी हैं बस शरीर को रक्त बाहिनी नसें।

'और देबर स्त्री के जीवन में धारवक वस्तु है। एक देबर बाहिए, जिसको धारसर बनाकर, हँसी खेल-खूब और निमोद-प्रमोद की स्त्री की अपस मुत्तम धामोवातक कृतितां कुल कर तृप्ति लाभ करें। पति के साथ स्त्री एक उत्तरवापिनी भारबाहिनी कर्तव्य और धार्मिक की मंडलों क बीच प्रतिष्ठित और मग्गीर, गृहस्थिण है।

जैनेन्द्र की की कृतितां मखेदार होती है। वह निशाने पर सीधे जा बैठती है पर धारस नहीं पहुँचाती। बन्धुक हवाई है या सुगन्ध की चिककारी समनिए। उसकी कल्पना बहुधा ऐसी प्रत्यक्ष हो जाती है कि भावों का चित्र-सा सामने चित्र जाता है। जिन्ह कहानी के साथ-साथ साहित्यिक रस का आस्वादन करना हो उनके लिए इन मन्त्रों में बहुत मिलेवा पर नमक कही प्यादा नहीं कड़वापन कही इतना नहीं कि धाँजा से पानी बहे, मिठास कहीं इतनी धारयनिक नहीं कि भी ठक भाप। धाम-धरिण बरुन करने में जैनेन्द्र की अपना शानी नहीं रखते। हम विरबाम है अनवा इन रनों का धार करेनी।

दिसम्बर १९५१

मणिगोस्वामी—नेत्रक भी हृषानाय निय एम ।

यह पत्रिकाओं के धाकार का एक माटक है जो हरेक प्रभार से अपनी उत्तमता को प्रकट करता है। इसका धाकार पुस्तक का नहीं पत्रिकाया का-ना है। हम यह नहीं करते कि इस धाकार की पुस्तकें नहीं जातीं। बहुधा बहुत धन्य के मोटेपन को कम करने के लिए इस धाकार में पुस्तकें छापी जाती हैं। पर यह केवल सत्तर पुस्तों का प्रत्येक पुस्तरी नवीनता है। उनका समग्र। नेत्रक में यह रचना अपनी कमपत्नी जो को समर्पित की है। है भी धन्य। निया पहले बार में प्रकाशक तब मन्दिर में जाता है। टीसरी नवीनता है। साधारणतः पुस्तकों में एक भूमिका होती है। यहाँ तीन भूमिकाएँ हैं। भूमिकाओं में भी नवीनता उदात्त भरी हुई है। धारने बहुत सब कथा है कि हम नोटकों को केवल समारा समझने है ज्ञानवर्द्धि या भावोत्कर्ष का उपकरण नहीं। मेरिन यह दूसरी भूमिका में प्राप्त करते हैं—

हमारे प्राचीन नाटककार समस्या पूर्ति करनबाम प्रथमीठ धमवीवी थे। उनोंने कला में किसी भी धात्मजनित ब्रह्मण्य भी सृष्टि नहीं की। उन्होंने बिरव को धोर धाया में स्थापन नहीं किया। उनके हाथ अनुर शिल्पी कुम्भार क हाथ थे कमाबिद् या अष्टा ग प्रपदान के हाथ नहीं।—तो हम उदा चीन्हे पठते हैं धीर बड़ी साधकाली से भूमिका देने मतते हैं। गिस्तबेह तीनों भूमिकाया में भागिधियक उत्प भरे पडे हैं जिन पर लन करन की उकलत है—

‘नासिच्छता की बेनी पर ही बसा का जन्म होता है।

‘हमारे प्राचीन नाटककार कुछ पंडित थे कुछ विद्वत् पर वे सभी स्कून। इनको पापों में कोई भी बाक्य चीय नहीं मुन परता ध्यबध-धमिमय हृदय का परिधम नहीं मिलता।

‘प्रत्येक मनुष्य का जीवन धात्म-प्ररात वा एक हीन प्रदान है। पिता पुत्र को धन्य देता है, पुत्र में धपने धापची प्रकट करन के लिए।

क्या अनुभूतना में दुष्यन्त के दरबार में शकुन्ता का रत्न धोर विचार ‘दाएण चीय’ नहीं है? यशभारत क्या एक महान दुःखी नहीं है? ^{अनकार} _{अनकार} के बा- जीवन के इस धन्य से भी बहकर कोई ‘दाएण चीय’ हा मकती है—

इसमें सश्रेष्ठ नहीं प्राधान्य विद्वाना में भागिधिय के शिष्यों में कमकर मीसिच्छता को ज्ञानि पहुँचानी पर यह शिष्यने साधारण धली के कमाबिधों के सिण है। अष्टा के लिए प्राचीन समय में भी कोई शिष्यता न था। शिष्यने मतते हैं अष्टापो ही की शीसियों में।

धीर धन्य मूल नाटक पर धारण। यह भी एक नवीन कण्य है। हमको हरेक नवीन कण्य से किद नहीं। सभी तरह हरेक नवीन कण्य पर हम सट्ट भी नहीं होना

जाते। माटक एकांकी है, जिसमें छः दृश्य हैं। मण्डिगोस्वामी एक जमींदार है। उनके दो बड़े धीरे एक लड़की है। तीनों बचाने हैं। मण्डि की स्त्री का वैवाहिक हो चुका है। पहले दृश्य में मण्डि धीरे बटुक की बातचीत है। बटुक दूसरे विवाह का अनुरोध करता है। गोस्वामी की अनिच्छा रहते हुए भी धर्म को राखी हो जाते हैं। मण्डि के भावों का परिवर्तन बहुत है। वह नहीं-नहीं करके भी हाँ करता है। मण्डि का बड़ा पुत्र बीरेन बड़ा उत्साही जोशीला बेराभक्त है जिसके विधायक जाने की तैयारी है। पर माप के विवाह की खबर सुनते ही वह पागल हो जाता है धीरे धर्म को अपनी हत्या कर लेता है। मण्डि की पत्नी बोके ही दिनों में उसका उपमे-यैसे पचाकर उसे फटना बतकर बसी जाती है। इस मानसिक चोम से वह भी अंत में पागल हो जाता है। मित्र जी ने वास्तव में 'पारमर्शिक ब्रह्माण्ड' की सृष्टि की है। बीरेन का चरित्र हेमलेट की छाया-सा मान्य होता है। मगर इस मण्डि में वास्तविकता नहीं जाने पत्नी धीरे नाटक का जो उद्देश्य है, वह मनीषावित् पूरा होता है। उसमें गहराई है, प्रभाव है, व्यथा है।

धर्म में हम यही कहेंगे कि 'कला की सृष्टि' के लिए नास्तिक होना आवश्यक नहीं। इसके लिए भावों की गहराई और तीव्रता की ही आवश्यकता है। संसार के व्यापारों से आस्तिक और नास्तिक दोनों ही प्रभावित हो सकते हैं।

सितम्बर १९३१

आई.पी.—लेखक श्रीमत्त जयराज प्रसाद।

यह प्रसाद जी को म्यारह कहानियों का सुन्दर संग्रह है। प्रायः सभी कहानियाँ निम्न-निम्न पत्रों में छप चुकीं। आई.पी. नारी-हृदय की एक सुन्दर कथा है ऐसे हृदय को जिसमें प्रेम धर्म मौलिक और तेजस्वी रूप में प्रकट हुआ है। चारियाँ बेचनेवाली बन्धुविन दुबली की बरुण बेचना हृदय को हिमा देती है। पयुषा एक शराबी के हृदय का चित्रण है। प्रसाद जी को गहरा शराबी में भी मनुष्य का ब्याप्त हृदय देखती है, उसकी अन्वेषण नहीं करती। यहाँ प्रत्येक कहानी पर कुछ लिखने की विशेष आवश्यकता नहीं। प्रसाद की ^{कथा} ~~कथा~~ म प्रभाव नहीं वह शीघ्र ही नहीं चमकी इसलिए हाँफ कर शिथिल ^{पर} ~~पर~~ वह शान्त गम्भीर और रसमयी है। कहीं-कहीं तो उसकी सजीवता जैसे स्पन्दित हो जाती है। बेशिष्ट, 'बासी' में तुलजाभा का बर्धन किठना मार्मिक—'मच्छुद्रपन' अचलता और हँसी से बनी हुई वह तुलजाभा सब हृदयों के स्नेह के समीप थी।

एक रात्रि का बर्धन बेशिष्ट—

'ब्रह्म-मी' औरनी रात्रि अपनी मतवाली उन्मत्तता में महल के मीनारों और गुम्बजों तथा नुओं की छाया में लड़कड़ा रही है, जैसे मोना जाहती हो।

इस तरह की सबसे अच्छी कहानी यानी है जिसकी कल्पना गहरा हो पा
गहरा घरर भीड़ जाती है ।

पेरिस का कुबड़ा—धनु भी दुर्गति निह । मूल मंगल विचार तो गो ।
बिकरर हू यो घास का सबसे बना साहित्य महारथी समझा जाता है । यह

पुस्तक उनी की एक फासोखी पुस्तक का धनुवा है । इस मंगल की एक पुस्तक का
धनुवार स्व भी गणेश शंकर विद्याधी की ने किया था । उसके लक्ष्य बड़ उपस्था
'मा मित्रेवुम का धनुवाद बहु पूर कर गये है । 'पेरिस का कुबड़ा बाल्य म तानी
रेम का कुबड़ा' होना चाहिए था । थापर धनुवारक महोदय ने 'जातीयता को धर्मिय
मनकर पेरिस कर दिया । हयें यह बेककर ह्य हुआ कि यहाँ नामा धीर म्याको को
जों का रयों रूने दिया गया है । भारतीय बलाय का प्रयास नहीं किया गया है । इस
नए का प्रयास का कभी किया गया है, मफलत हुआ है । स्वयं नाम बरम देने म
बेतीपता या जातीयता नहीं बलत जाती । उरकी जडे हमने गारा गहरी होना है ।
दिर हरेक बसु को भारतीय बनाने का प्रयास ही बपो किया जाय । इसका एक तो
यही होता है, कि भारतीय पाठकों को मरार की धीर किनी जालि की कपाधो म कीई
बाल्य ही नहीं थाता । हम इतने मकील बुद्धि है कि हमारा लना धनुवाय नहीं । हम
बिदेती किमो को दितने काय से देखते हैं । यहाँ तक कि सिद्धि मयात्र तो देती
किमों के नाम से ही चिहता है । अपने निकट की बसुधा म गारा प्रभाविण होना
स्वामिक है, लेकिन अपने पुत्र को प्यार करक दूमे बायका म प्रम किया जा
मछता है । हम लम धनुवाद-वीली को रोकना चाहत है जो हरक मान्दपीय को
मारीय बनाने के प्रयास में सर हीन बना देगी है । जातीयता जल-प्रमिष्ठ उपस्था
है । उसके विरय म बुध लियता ब्यक है । बहु किम्य म धी धा बुरा है । धनुवार बैना
मम धीर मुबाय हाता चाहिए था बैना नहीं जान पचना जामाकि यह लियत ह्य हम
उन कठिनायनों की धोर से धाँवें नहीं बन्द कर सकत जो किनी म बार-बार नामने
धानी रहती है । फिर कोई धनुवार जितना ही मुग्ध नहीं म ही लक्ष्य मकत ही रहती
है । फिर हम तो दुर्भाग्यवश सभी योरोपीय मामलों का धनुवाद धधमी धनुवार मे
राते हैं । तो को लक्ष्य मफल की लक्ष्य ही उमम धमल के लय का बग धनुवा
बपारा का सकता है । फिर भी 'पेरिस का कुबड़ा मनोरंजक धीर साहित्यिक
पान्यर नद है ।

पद्मेश्वरकारी—ने धनुवा है ।

नवम्बर, १९३१

रुमा धान का प्रमिष्ठ उपस्थाकार है । यह पुस्तक उनी ने एक उपस्था का

घनुवार है। इस उरम्यास में फॉब इन्डि के समय कम बढ़ा मन्वीब विचल किया गया है। पुस्तक बहुत ही रोचक है और घनुवार भी सुन्दर हुआ है। साहित्य मंडल न सर्वे के केन्द्र रिस्ती में हिन्दी प्रकाशन का नार उठाया है, यह उद्योग प्रशंसनीय है।

कनीजिया समाज में मयानक अत्याचार—ने श्री कान्तिरूप्य शुक्ल ।

इस पुस्तक में हम कहानियाँ भी मयी हैं जिनमें कनीजिया समाज में होमेबामे सामाजिक अत्याचारों का बखान किया गया है। समाज में सभकिया की कितनी दुबसा होती है, विषयों का कितना अयमान किया जाता है और स्वार्थी समुह कैसी-कैसी सीमारें रखते हैं, इसका सासा यंत्राकोड किया गया है। कहानियाँ सच्ची जाल पढ़ती हैं जिनमें सचाफटा है पर है, मन को स्पस करने की शक्ति है। हमें विरवास है, लेखक को अपने प्रमल में विशेष सफजता होनी। मुश्किल यही है कि यह पुस्तक उन हाथों में पहुँचे कैसे? पहुँचे या न पहुँचे पर इसमें तो कोई सन्देह नहीं कि एक-एक कहानी से लेखक की सद्मत्तना टपक रही है। इस बात के नबवुक्तों का अर्थ है कि वह इन पुस्तक का प्रचार अधिक से अधिक कर। एसी रचना के लिए हम शुक्ल जी को हृदय से बधाई देते हैं।

महापाप—लेखक काउंट टास्टराय ।

काउंट टास्टराय के दो छोटे उपन्यासों को एक साथ प्रकाशित किया गया है— कजलक और क्जुजर सानाटा। टास्टराय की रचनाओं के विषय में कहना ही क्या हालांकि वह कभी-कभी भावों और विचारों की सामोचना करने में इतने मल्ल हो जाते हैं कि पाठक का भी उम जाता है। यह दोनों कहानियाँ टास्टराय की प्रसिद्ध वस्तुओं में हैं। और घनुवार मुलम्बे हुई सरल भाषा में किया गया है।

मुन्वखबीर हिन्दी कलाम—ने डाक्टर जाकर हुमेन पी एच टी ।

हिन्दी-साहित्य के निर्माता में मुसलमानों न नत काम में जो कुछ किया उसका अर्थ से हिन्दी भाषा कभी मुक्त नहीं हो सकती। लेकिन नबे मुब में मुसलमानों न हिन्दी-साहित्य से केवल उबासीमता ही नहीं कभी-कभी इय का ब्यवहार किया है, जो उर्दू-हिन्दी के अन्वये के कारण और भी बढ गया है। धाज बहुत कम मसलमान हैं जो हिन्दी-साहित्य से परिचित हों और उसमें लिखनेबामो की संख्या तो जेमती पर निनी जा सकती है। इसलिए हम का जाकर हुमेन माहब के कृतन है कि उन्होंने ऐसी भाकदरी के बामने में यह पुस्तक प्रकाशित करके मुस्लिम संसार को हिन्दी-साहित्य से परिचित कराने का कर्बिले-मुबारकबाद काम किया है। आपने एक अध्याय में हिन्दी साहित्य में मुसलमानों का स्थान पर कुछ प्रकाश जमा है एक दूसरे अध्याय में हिन्दी

साहित्य की विशेषताएँ बयान की गयी हैं। दोनों ही धारणाओं को पश्चर हम वास्तव
 माह्व की विरुद्धा के तो उतने कायम नहीं हुए, पर वह सहज्य धरयय ई धीर उन्ह
 मुसलमाना की इम साहित्य उपेक्षा का बडा दोष है। धारने बहूत ही धरुधा प्रत्या
 दिया है कि हमारे स्कूमा में धगर हिली धीर उन्ह दोनों ही माह्वो कर ही मायें तो
 मनी सिञ्चित बनता दोनों भाषाधो को समान रूप से मिलेगी धीर बोमेगी। मतोडा
 यह हागा कि कामान्तर म एक हिनुतस्तानी भाषा का विरुध हा जायगा धीर बोमी
 तान का प्रयन हमेशा के लिए तय हो जायगा। इमी धाठय का प्रत्याह हमार मिन
 मनी हमीबुम्माह ने 'मीडर' में किया था। इम पत्र की जिननी कर्बा हुँ उनम
 पित होठा का कि बनता जमे सहय स्वीकार करने के लिए तैयार है पर हमारे सिद्धा
 ण के कथपाठों ने उम पर कुछ विरोध प्यान न दिया।

इम धारणाधो के बाध मूल पुस्तक शुरू होती है। उमे मजक न ध भाषा म
 रना है। पहले भाय म मीठि है, हुपरे म मलिध धीर जान तीसरे म म्युंगार बीय म
 कुकन धव है धीर पाँचवाँ जमीमा है। धरुधो की ध्याख्या विस्तार से की गयी है
 धीर धरुधाध भी दिये गये हैं। हुपारे विचार म म्युंगार रम का बनाध इमने बहूत धरुधा
 हो सकना का धीर जाने बोधा का धम भी धोममात कर दिया गया है। फिर भी मायक
 न सराहनीय प्रयत्न किया है।

दिसम्बर १९३१

रुपाइयात समर सैयाम—धनु की दीविमोतरल जो गुन।

प्राग्नी-साहित्य में शायद इनसे ज्यादा प्रसिद्ध कोई पुस्तक नहीं है विशेषर
 बोरान में। इम रुपाइयो म कुछ एना रम है कि इम संग्रह को समार-साहित्य म बहूत
 ठेका स्थान प्राप्त है। बंयला में इमने गुन्दर सञ्चित धनुबाध पत्रने ही निरुध कुटे है।
 द्विती म प्रमा' म गुण्त जो ने इम रुपाइयो का धनुबाध शक किया था। उन मसय बर
 धनुष एह गया था। प्रयास-पुस्तकायय ने धम इम धनुबा' को पुनरु क धाधान मे
 गुन्दर चिचों महिठ बड़ी मजाबट क माय प्रकाशित किया है। शक म गुण्त जी का
 कथन है जिनमें उहोंने मूल कारणी धीर उमके धरुधो धरुबाध दोनों म ए एक मे भी
 परिचिध न होने पर भी धनुबाध कर धानन के साहय का जिऊ किया है धीर इम ज
 कहने पर मजबूर है कि गुण्त जी का बाध-कीशान भी इम धनुबाध में कोई रम न पया
 कर सधा। इम कथन के बाध भी उय हृष्यहाय न उमर तैयाम धीर उमकी बरिधा
 पर धरुधा निरुध किया है। इमके बाध मूल धनुबाध है। गजाम की रुपाइयों म बा
 विराम-मय धनुषाम है जो मस्ती है बहु धनबाध में न धा नरी धीर न धा नरानी की।
 कनि की धारणा का मूल मे ही धारागत हा गकठा पा। सिद्ध जरण्ड का धनुबा' भी
 शक नहीं। उमने जगाह जगह मलमाना धनुबाध कर जगा है। चिधा म कर् धरुधे है

॥ धीर धीर ॥

घोर कई बीमरों में भागों का विच्छेद हो ही नहीं सकता। उसमें सिर्फ तो कटिना ही है। राय-राबिनियों के बिना प्राचीन लिपियों में नहीं है पर मतीया कुछ नहीं। घट्टर को घट्टर घोर भागों को कामिक बनाने का प्रयत्न कभी लठन नहीं होता। सर, उस दृष्टि से न देखकर भी इन बिनों में जीवामय केवल तीन बिनों में था सका है—पृष्ठ ५ पृष्ठ २१ और पृष्ठ ४। ३६ और ४० पृष्ठ के दोनों बिन तो मन में स्मृति उत्पन्न करते हैं।

दिसम्बर १९३१

आरोग्य शास्त्र—सेकक थी अनुसूचन शास्त्री।

हिन्दी में आरोग्य आरोग्य-शास्त्र सम्बन्धी पुस्तकों की वृद्धि है। घोर होना ही चाहिए। मनुष्य के लिए आरोग्य से बहकर कोई वस्तु नहीं। धर्म पुस्तकों की धनदा इत रचना में यह विरोध है कि इसमें पुरानी बातों के साथ नवी बातों का समावेश कर दिया गया है और स्वास्थ्य के विषय में नवी से नवी तकनीकों की व्याख्या भी कर दी गयी है। यह मूल रूप से चिकित्सा की पुस्तक नहीं बल्कि इसमें उन विषयों का प्रतिपादन किया गया है, जिनसे चिकित्सा की प्रकृति ही न पड़े। चिकित्सा भी है मगर केवल इतनी नहीं कि वह भी आरोग्य-शास्त्र का एक शाखन है। ईसा ज्ञेय उपेदिक मरीरों का धारि संकामक बीमारियों का विचार रूप से सम्मेलन किया गया है। स्नान पर एक पूरा अध्याय है। पहले अध्याय में स्वास्थ्य विज्ञान है। दूसरे अध्याय में शरीर विज्ञान दिया गया है। तीसरा अध्याय भी इसी विषय पर है। चौथे अध्याय में यमिधान और प्रसव और पौषण अध्याय में तिसु-वाहन। धाने के बार अध्याय स्नान और भोजन से सम्बन्ध रखते हैं। पचने अध्याय में रोय-कीटाणु का विकार है। रोपी की सेवा धारु-स्मिक उपचार स्वाभाविक चिकित्सा पर भी एक-एक अध्याय है। बीबीसवें अध्याय में धर्मिचार से पैदा होनेवाली बीमारियों की चर्चा की गयी है। एक अध्याय में ज्ञान तुल्ये दिये गये हैं। सौन्दर्य-विज्ञान पर भी एक अध्याय है। गृह-निर्माण कला हस्तरेखा विज्ञान भी आरोग्य के शाखन है और इन प्रयोगों को भी स्वागत दिया गया है। पुस्तक सज्ज है। अध्याय सौन्दर्य शरीर-रोग धारु-स्मिक उपचार सम्बन्धी तीकड़ों बिन है। तीसरे अध्याय में अध्याय- उत्प भी दिया गया है क्योंकि शरीर और धारु का सम्बन्ध समझे बिना आरोग्य प्राप्ति नहीं हो सकती। अंशह बहुत सोच-समझकर किया गया है और एसी कोई बात नहीं उलने पायी जिसका आरोग्य से हूर का सम्बन्ध भी है। धारु-धरु अध्याय और अध्यायी सुन्दर। जिसका धारु हरजे की। मुख्य धारु है, लेकिन वह पुस्तक नहीं आरोग्य का पुस्तकालय है। धारु रोपी के निदान और चिकित्सा का सर्वान और विस्तार से होना तो पुस्तक सर्वावपूक हो जाती। फिर भी बड़े काम की चीज है। प्रायः रोषक और उत्पन्न है।

मार्च १९३१

यूरोप की कहानियाँ—सघहनर्ता की खीगापाम मेवटिया ।

इस सघह में इस धांस जर्मनी इग्लैंड इटली आदि देशों के कहानी लेखकों की पैरीस सुन्दर कहानियाँ बी गयी हैं । यह कसा भारत म यारोप स भासी है । इसलिये इन यारोप की प्रकृति को बेसते रूग्म की उकरत है । यूरोप के प्राय सभी विहाग लकडा को रचनाएँ कुनी मयी हैं । टास्सटाय बेलाफ तुग्नेब गैविमम वाकी अनातास परस मोपांसा बसठ हाईको कई आदि-आदि संकको बी कीसिमा कमी-कमी परिवारा म निकमती रहती है । यहाँ सभी एक मडकी म जमा है और अपनी-अपनी कीसि मुना रहे है । प्राय सभी कहानियाँ एसी हैं कि पढ़कर मन मुग्ध हो जाता है । कसी मलका म कलक की 'हाइ नामक कशनी मानबाव है । 'बन्दहार और 'कीटाणु भी प्रखी है । बाब कहानियों के इस सघह म रचने का मम इसके सिबाय और कुछ नहीं हो सगता कि यह बिबेरा की है । भूमिका म कहानी के विकास और गुण-दोष का बिबेचन मिया बया है और कहानी की रचना पर मूख्यान बिचार प्रबट जिये गय है । उनका एक धंरा हम सेते है—

'पहले यह देख लेना चाहिए कि कयानक की रचना का आमार क्या हो कहानी लिखने के लिए एक उद्देश्य का होना आवश्यक है ! जिरी एक पुण अथवा मम पुण की धनिम्पक को ध्यान म रलकर कहानक को सृष्टि करनी चाहिए ।

माच १९३२

बीस कहानियाँ—सघहनर्ता की यमपत्र टाडन ।

इस सघह में हिन्दी की बीस अखी-अखी कहानियाँ जमा की गयी हैं । एक मयक की बबन एक कहानी सी गयी है । कुनाथ सुन्दर है, सेविन मूस्य प्रधिक ।

गल्प मल्लरी—सघहनर्ता की मुन्नाम ।

यह भी हिन्दी के सुप्रसिद्ध गल्प लेखकों की रचनाओं का संग्रह है । कुन सगह कहानियाँ हैं । सेगकों का परिचय भी मिया गया ह ।

कहानी कैसे लिखनी चाहिए—सेखर मु कश्यापाम पी एम ए ।

यह बीमठ पुठों की छोटी-सी पुनक है और इस बिषय की कानिन् पत्रको पुठक है । 'कशनी जमा' के बिषय में एक पुठक की उकरत है और बहो कुप मरी है बहो यह पुठक कये सेवका का बहुत कुप साम पहुँचा सकती है । भूमिका में मुन्ना की कसमते है—

'इस पुस्तिका में बहुत-सी बातें ऐसी हैं जो बढ़ायी जा सकती थीं और बहुत-सी ऐसी भी हैं जो छोड़ दी जा सकती थीं' किन्तु पुस्तिका जिस रूप में है उसी रूप में इसलिए उपस्थित की जा रही है कि जिसमें विशाल और अनुभवी लोग इसकी वृत्तियों को देखकर एभी पुस्तक लिखें जिससे कहानी-लेखकों को ठीक-ठीक शिक्षा प्राप्त हो।

तो यह पुस्तिका केवल इसीलिए लिखी गयी है कि इसकी वृत्तियों को दूर करने के लिये कोई दूसरी पुस्तक लिखे। हमारे विचार में लेखक अब कोई जिज्ञासु लिखने बैठे जो अपना यह काम होना चाहिये कि यथासक्ति वह अपनी रचना को निर्दोष बनाये ज्ञान-बृद्धकर कोई कसर न छोड़े।

अब पुस्तक में धातु परिचय है—कहानी प्वाट चरित्र-चित्रण कथोपकथन कहानी की रचना क्लासिकल शैली और कहानी के विषय में साम्य विद्येय बातें।

पठक सत्य पर लेखक महोदय कहते हैं—कहानी लिखने से धम्मी धामरनी हो सकती है। इसके अर्थ होता है कि धामको हिन्दी-पत्रों का अनुभव नहीं है। हिन्दी में बहुत कम ऐसे पत्र हैं, जो पुरस्कार देते हैं। दो-चार इने-वने लेखकों को सम्मन है कुछ पुरस्कार मिल नाम पर साधारण यहाँ कहानी लिखना अभी व्यवसाय के पद पर तक नहीं पहुँचा है। ऐसी विरली ही कोई पत्रिका होगी जो मई पर काम रही हो। तो फिर बाटे का पत्र निकालकर कोई पुरस्कार देते दे सकता है।

ऐसा बाल पढ़ता है कि यह पुस्तक कई धम्मी पुस्तकों के आधार पर लिखी गयी है क्योंकि इसमें जगह-जगह असम्बन्धता पायी है। फिर भी इसमें काम की बहुत-सी बातें हैं जो कहानी लिखने में सहायक होंगी।

दो एक छोटे-छोटे उद्धरणों से यह बात प्रकट हो सकती—

'प्रायः के लिये सामग्री प्रकट करके मिला जाती है, जैसे कभी समाचारपत्र पढ़ने से कभी साधारण बातचीत से कभी अचानक घटनाओं के देखने से और कभी साधारण अनुभव से। सम्भव है कि नये लेखक को यह प्वाट की सामग्री साधारण बातों में न मिलती है किन्तु प्वाट बुझने का सम्पास उसको निपुण बना जाता है—

चरित्र-चित्रण के प्रकरण में साम्य लिखत है—

'यहूँ किस्म की कहानी घटनात्मक होती है, जिसकी सफलता के लिए धाम-व्यक्त है कि घटना बराबर होता काम। इस प्रकार की कहानियाँ या चरित्र-चित्रण के लिए बहुत कम स्थान मिलता है। दूसरी तरह की कहानी यह है, जिसमें साधारण का चित्र लीखा जाता है—इसमें चरित्र-चित्रण का स्थान प्वाट और घटनाओं से अधिक आधारभूत समझ जाता है। इसका अर्थ यह नहीं है कि घटनात्मक कहानियों में चरित्र-चित्रण का बिलकुल अभाव हो या साधारण-गम्भीर कहानियों में घटनाएँ या प्वाट न हों क्योंकि गम्भीर कहानियों में दोनों बातों का होना आवश्यक है।

मार्च १९३२

बेलि क्रिस्तन रुक्मणी री राठौराम, पृथ्वीराज री कही

धनुषारक—स्वर्गीय महाराज श्री जगमान सिंह जी माह्व ।

राठी-मरेय पपीराज बहो बीर घण्ट है जिनन महाराजा प्रताप को उम समय ला से मरा हुषा पत्र सिखा बा जब महाराजा कटा स तम धाकर मकबर को परायोनता स्वीकार करल का विचार कर रहू थे । इस पत्र को पढ़ते ही महाराजा नमन पवे धीर धन्य तक स्वाधीनता का भंडा फहराव रह । यह पत्र भाब धीर भाया धीर धीर धारि मुशों के लिए एतिहासिक साहित्य म एक प्रमुख वस्तु है । पपीराज मार बाड़ी भाया के सबभण्ट कवि ये धीर हुण्ड के परम भक्त । 'बेलि उन्ही की रचना है । सम्भारकों ने धरने प्राक्कवन मे कहा है कि मारबाडो भाया म यह कविता का सबभण्ट रच्य है । मारबाडो भाया को डिगल कहते है । महाराजा पपीराज ने हिन्दी म भी कविता की है, पर उनकी बखना डुमरी बखी के कविता में है, पर सम्भारक-डय का दावा है कि पपीराज 'अंधकार' से जिनो तरह कम मरी है । बलि म हुण्ड-भरित पाया गया है । मुसिका में राजस्थानी भाया की उत्पत्ति बिद्वान धीर बिस्तार का बिस्तार बलन है । फिर महाराजा पपीराज का करिब सिखा गया है धीर उनकी रचनाया के दुप बरामि पवे है । 'बलि म कुल तीन छी बार पद्य है । बरेठ पद्य का भाबाय दिया गया है । माभारत हिन्दी जाननबासा धारमी इन पद्या को नही समझ सकता । इनलिए डिगल का शरकोय भी दिया गया ह । एक सप्पाय म बलि क मित्र-मित्र पाटालरा को मानने रस लिया गया है । सम्भारका ने जितने परिषय धीर बिद्वता मे इन पद्य का ज्ञान दिया है, बहु प्रशंसनीय है । पुस्तक को बोधयम्य बनाने के लिए उन्तोत कोई बात नही छोड़ी । डिगल भी हिन्दी भाया ही का एक रूप है धीर उमक शरकाय तथा टिपणियाँ भाया-बिज्ञान के लिए बडे महत्व की चीज है । जिनुस्तानी लम्हमी ने इस पुस्तक को प्रकाशित करके अपने साहित्य-धर्म का परिषय दिया है । डिगल भाया म अनभिन्न होत के कारण हम 'बलि' के पद्या का पूरा-पूरा समझारन ता नही कर सक पर माबाय को पढ़कर यह कह सकते है कि पपीराज म समाधारण प्रक्रिया थी । हम का-एक पदों से इसका जराहरण देंगे—

धीन शत्रु का बखन या किया गया है—उम मूय मे जगत न मिर पर म फरक बाग बनाया धीर सपन बर्छा न धपनी धारा जगत न मिर पर की । नयी धीर दिन बनन मने । सरोवरों का जल धीर रावि घटक मयी । पपी म नगोरता धीर शिमान मे उम भाव या गया ।

बाँदा शत्रु बलन का बखल एक पद देगिला—पपी री रचियानो को बलि धीर बालन मनरपाम भीहुण्ड की भाति लपबहि टाउबर एक हो ए है । नि धीर राज

का भेद नहीं जाना जा सकता। अर्थात्-मुनिमख प्रम म पङ्कत सम्प्रा-बन्धन करता
मूल मये ।

अप्रैल १९३०

डी येसारा—लेखक श्री उमाचत शर्मा ।

सामयिक पुस्तक है और अन्धे समय पर निकली है। लेखन में लक्ष का उद्धार किया। उस वक़्त पार की शक्ति खील हो गयी थी। मुस्तफ़ कमान ने तुर्की का उद्धार किया। सुलतान योरोप का पुराना रोगी मसहूर था। लेकिन धार्लैंड का उद्धार करन के लिए डी बेसरा को संसार के सबसे शक्तिशाली साम्राज्य का मुकाबला करना पड़ा। इसलिए हम डी बेसरा को लेनिन या मुस्तफ़ कमान पाता से कम नहीं समझते। अंग्रेज़ सरकार ने धार्लैंड का क़त्ल बमन किया लेकिन टिनड्रिनस का नहीं बानी मता धान अपने स्थान टेंबस्वित्ता और दुइटा से धार्लैंड का बेतान का बादशाह है। नहीं की बटा बहुत कुछ भाएट से मिलता है और साम्राज्यवादिबो की कूटनीति की चालों को मही उची डम पर चल रही थी लेकिन डिमन कालिच पार्लेस न को स्वन्त बेसा वा उसे डी बेसरा ने पूरा कर दिखाया। पुस्तक एक महान पुस्य का चरित्र है और उस पढ़कर हम बहुत कुछ सीख सकते हैं। पुस्तक सही ही राक्षक है, उपन्यास की तरह, ही माया इससे सरल होती तो अच्छा होता। डी बेसरा के अतिरिक्त अन्ध आहरित नेयामों के चित्र भी हैं। धार्लैंड का एक मवशा वे दिया जाता तो इसकी उपयोगिता बढ़ जाती। जिन्हें बेस प्रम की समझ है उन्हें इस पुस्तक से बहुत कुछ ज्ञान होगा।

विप्लव—लेखक श्री राजामोहन गोकुल भी ।

डी राजामोहन गोकुल भी हिन्दी के उन गिनेहुए लेखकों में हैं जिन्होंने धार्मिक सामाजिक और नैतिक विषयों पर स्वतन्त्र विचार किया है और उन विचारों का निरर होकर पावन किया है। धार्लैंड के विचारों में मीलिकता है गहरा अन्वेषण है और भारतीय को कायम करनेवाली सच्चाई है। धार्लैंड की माया में लज्जित और लोच की बगह स्वामी बदलन की-सी दुइटा और ठेक है। धार्लैंड इस सत्तर वर्ष की अवस्था में भी मये से मये विचारों का प्रतिपादन बर्ताई था और ट्राटस्की की-मी निरीकता से करते हैं। धार आत-माँट छुट-आत धम-सम्प्रवाय इन सभी को समाज के लिए बलक और उनकी स्वामाजिक प्रवृत्ति में बाधक समझते हैं और धार्लैंड की-मी यमीतो के धामने छिर न भुका देवा कटिन है। अट्टाहस बप की मुधास्था न की धार्लैंड की स्त्री के मर जाने पर इसलिए विभुर जीवन स्वर्गीय करे कि वह मर जाता तो उसकी स्त्री धार्लैंड की-मी धार्लैंड का पालन करती स्थायमय जीवन का ऐसा पवित्र और ठेका धार्लैंड है कि जिसकी मिसाम मुश्किल से

॥ विविध प्रसंग ॥

मिनेगी और इस दृष्टि में भी आपकी जिम्मेदारी नीजियों को लक्षित करती है। विचार-वस्तु ॥ धर्म नाम को चरितार्थ करता है। इसमें महारथ मोक्ष भी के बुने हुए सारा का सप्रह किया गया है और धरोहर भी ने इसे प्रकाशित करके हिन्दी के विचार-साहित्य में एक स्तम्भ-सा गढ़ा कर दिया है। पहला संग्रह है 'ईश्वर का बहिष्कार'। माथुरे में यह लक्ष्य-नामा बाठ नाम श्रेष्ठ क्रमशः निरुद्धी भी और हिन्दी संसार में इनके हस्तगत मन्त्रा भी थी। इन दसनामा का अन्वय गती है और भग्य पी शोभा इतनी जनबुद्धी और विनामय हृदि का करना। अंतर्विधान 'ईश्वर का बहिष्कार' नामि सदा सदा और विचार करने योग्य है। लेखक नाम परने बुद्धिमान है वह क्यों मानने लगे कि इनमें ही यही कहें कि अन्तर्गत रूप में महारथ का बहिष्कार न भवना दिया है।

मुसलम विपरीत—नरक भी मुख मन्त्रि राज संघारी एम धार० ए एम

ऐसी एक पुस्तक की बड़ी ही उन्नत की और संघारी भी ने यह पुस्तक लिख कर देना का उपहार दिया है। भारत किसानों का देश है। उनका सब कुछ गती पर मुनहसर है। सरकार भी माना अपने-नये-नये रिष (गाय) पर लक्ष करती है किन्तु खेती पर उन्नत कोई प्रयत्न अन्त नहीं होता। गौर होती है किन्तु उनका कोई प्रचार नहीं होना और वह सारी मेहनत सरकार की दफ्तों की आचरित्या की शोभा बढाने की ओर हा जाती है। मन्त्र ने उन लोगों को एक जगह संग्रह करके उने जनसाधारण के लिए मुक्त कर दिया है। अमीन की किन्तु जुता गाय वेहें उने धानु संग्रही अन्तर्गत उन्मानु मन्त्रा अपन आत्म धारि फलनों के पेश करन की विधि विचार में लिखी गयी है और नये से नयी खोजों का उपयोग किया गया है। एम अन्तरी के रिषों में खेती के विचार शोत्रानों के लिए प्रथम आचार नहीं है। उनके लिए और एनेक रिषान के लिए यह पुस्तक बड़े काम की है। हाँ इनकी कीमत बहुत उन्नत है। अन्तर्गत के अन्तर्गत को रचना होना चाहिए या इन्तर्गत वि धर साहित्यिक रिषान की बन्तु खेती रोटी के समय का एम करनानो उन्नत खोज है और अन्तर्गत न विज्ञाना के अनुार उन्नत खोजों पर कर न मन्त्रा चाहिए या बहुत कम।

अंतर्विधान—विषय श्रीमती पुष्पादनी देवी।

हिन्दी साहित्य का निर्माण में देवियाँ जो स्वयं सती आ रू। है पर उनके लिए योग्य की मान है। एम-रचना में ता उनका स्थान मन्त्रों में जो अन्त भी कम नहीं। एम भाषा की शोभना ही प्रथम बन्तु है। अन्तर्विधान ही का मान है। एम तो बन्तु ही बना। एम-रना मन्त्रि ए म एम हिन्दी-मन्त्र, देवी पुष्पादनी के नाम से अन्तर्विधान-नामा था। पर इस अन्तर्विधान का अन्तर्गत एम बहुत मन्त्रों है कि एम अन्तर्विधान

धारण रचना-रक्ति थी और अपने कुमारी जीवन में ही उन्होंने ऐसी धारणासुप्ति प्राप्त की जो प्रौढ़ कवियों को भी गौरव प्रदान कर सकती है। पर खेद है कि वह 'कसी को लिखनी शुरू हुई थी कि तोड़ भी गयी। केवल उन्नीस वर्ष की अवस्था में उनका धर्म धान हो गया। यह सारी कर्मिणाएँ सोमह और उन्नीस धाम की धारणा में ही लिखी गयी हैं। इतनी उम्र में ऐसी भावपूर्ण कविता करना साधारण प्रतिभा का काम नहीं है। उनका विवाह भी अत्रगुप्त की निधामकार से हुआ था पर वह निमित्त नहीं है। उमर उमर ही गयी और उनके दुखी हृदय को सांत्वना देने के लिए जो कुछ खेद उन्हें मिला वह यही कविता का संग्रह है। पुस्तक को हाथ में लेते ही एक चख के लिए हाथ और हृदय दोनों में विहरण-सी हो उठती है और इन कविताओं में जो वेदना है वह सतबुद्ध हो जाती है। क्या वह धारणा जीवन के संघर्षों से मुक्त होने के लिए ही उदय रही थी ?

दुःख पत्र पर कम धारणा हैं होने को चरखा में जीन।

और निरन्तर-धर्म में धर्म तक भी धारणा की धारणा थीय ॥

त्रिभूत धारणा में वह उदय और कसक ही वह इस धारणात्मक संसार में क्या धारणा पाती। हमें धारणा है, साहित्य-संसार इस संग्रह का धारणा करेगा।

जनवरी १९३३

भर्तृहरि चरित मृद्धार, नीति और वैराग्य-रावण—धनु की हरिदास की वेष

धनुहरि के तीनों उत्कृष्ट साहित्य के ही नहीं नू-साहित्य की धनु रचनाएँ हैं। जीवन की इन तीनों अवस्थाओं का साधक ही किन्ती कवि ने इतना मार्मिक दृष्टिकोण और धर्मों को समझना सा विचलन किया है। हिन्दी में इन कृतियों के धनुवाच को पहले ही धनु चुके हैं लेकिन हरिदास की ने प्रत्येक श्लोक की व्याख्या रत्नोत्त का धनुजी कपान्तर, सबसे मिसली-जुमली हिन्दी उद्गु, धारणी कवियों के धनु देकर इसे धनुवाचरणा के लिए सुबोध बना दिया है। व्याख्या बड़ी उत्कृष्टी हुई। उन्नीस धाम में की गयी है किमते उसके पढ़ने में आनन्द धारणा है। ने तीना पुस्तकें धनु तीवरी धार प्रकाशित हो रही हैं इन्हीं से ज्ञात होता है कि हिन्दी पाठको न इनका धनुना धारण किया है। धनुहरि का जीवन चरित भी दिया है, नगर उसमें किठना इतिहास है, किठनी कल्पना इतना धनुना मुक्ति है।

हिन्दी मुक्ति—धनु की हरिदास की वेष।

मुक्ति का धारणी साहित्य का प्रसिद्ध संग्रह है। इतना धनुना नीति-धनु संसार साहित्य में मुक्ति के धनुना है। धनुना को ऐसी कोर्षि धारणा नहीं है किधन इतना धनु-

बाद न हो गया हो। इसकी भांति इसकी सरल मरम धीरे मज्जी है धीरे कर्माएँ इसकी शिक्षाप्रद धीरे मनोरेजक कि चिरकाम छ पाठ्यपुस्तका म इसका प्रथम स्थान रहा है। जिसे फारसी साहित्य से नाममात्र का भी परिचय है उसम मुनिस्ताई मबरय पकी है। शेष सारो कवि भी या धीरे इन कथाओं को जग्होने अपने छंने से असंतुष्ट कर लयम जान ज्ञान दी है। मुनिस्ताई के संकड़ा बापय धीरे शेर मोकास्तिया का पं पा चके है। हरिदाग जी के अनुबाव म मूम का धान्य पाठा है। हर कथा के अन्त म उससे मिलनेवाली शिक्षा भी दे दी गयी है। इस पुस्तक की यह चौथी प्राणुति है। इससे प्राणुम होता है कि हिन्दी म इसका रिठना धारर है। बापको के लिए तो इनका बढ़ना साबिबी है ही बुद्धों को भी इसम बहुत कुछ शिक्षा मिलती है।

चिकिरसा-चंद्रोदय—जेनक दो हरिदाग जी बीच।

इस अनुपम ग्रन्थ के दो अरणों की धालोचना पहले किसी अंक म की जा चुकी है। पाँचवें भाग म तीन अरण है। पहल दो अंडो म बिप का वखन किया गया है। तीसरे अरण में स्त्री-पुरुषों की चिकिरसा दी गयी है। छठे भाग म चौथो धीरे शबाव-तौप का निशान धीरे चिकिरसा दी गयी है। इन भाग के अन्त म दवाएँ बनाने धीरे सेवन करन में जिन बातों के जानने की जरूरत होती है वह सब विस्तार म लिगी गयी है। बीसा हमने पहल कहा था हरिदाग जी म प्राणुर्वेद के अनेक ग्रन्था को सपकर उनका तार इन पुस्तका में भर दिया है। बिषय का इतना विस्तार बखन कथाचित किगी एक तानुर्वेद ग्रन्थ में म मिलता। तीन ती ज्ञानीम पुष्ट इन बिषय पर रिय गय है। हर धार के अहर की पहचान उसस पंग होनेवाले तौप उसकी चिकिरसा सभी कुछ ती । वहाँ तक कि बासने कुछ मक्की धिपकती तक क अट्टर-नी चिकिरसा बतायी गयी तीर मुस्त भी अधिकांश पठोस्थित है जो बड़ महरब की बात है। इन पुस्तका को बढ़कर धानी बनना धीरे अपने परबानों ही का नहीं मकि धीरे मुस्तमबाना का भी बहुत कुछ बन्नाय कर लता है।

हिन्दियन प्रय निमिटेड प्रयास की बाधोपयोगी पुस्तकें—वालार्का का विद्यासागर,

विद्यानायर क अरिप म बातका की गंध की जितनी बातें हैं वह सब यहाँ बड़ी सरल भाषा में लिखी गयी है। सड़का का इस अरिप म ज्ञान हागा कि विद्यानायर पढ़ने-लिखन म ही सब सड़कों से तेज म थ लय-रू म भी बौर् सड़का उनको बरबरी म कर लता था। वह माता-पिता क चित्तन भक्त थे। एक अध्याय म उनक जीवन की गह शिक्षाप्रद घटनाएँ जमा कर दी गये ८। मुस्त मान-गोपी है। बर् बिा भी है।

बेरया का हृदय—संस्कृत भा० धनीराम प्रथम ।

एक बेरया ने अपनी जीवन कथा लिखी है और उस पर सच्चाई का रंग भरने में पूरा रूप से सफल हुई है। एक अच्छे सुसलमान परिवार की लड़की माता-पिता के मर जाने के बाद रिस्ते के एक बच्चा कमलू मियाँ के घर में बसाया जाती है। कमलू मियाँ का बेटा पहला बच्चा बच्चा में सामरामा है और जाता है और इस लड़की को अपनी और बाल्यिक करके उससे निकट कर लेता है और उसे बच्चा ले जाता है। बच्चा में वह अपने परवा खोम लेता है और नर-पिताय बच्चा के बच्चा के रूप में प्रकट होता है। धामलू रोटी है बिचड़ती है, पर बच्चा में उसका कौन सहायक है? वह इस बच्चा में फँस जाती है। पहला पुनिस की गोली का शिकार होता है धामलू को कौन की सजा होती है और बाहर निकलने पर पठन उसका स्वागत करता है। तब से धामलू तक वह दुखिया प्रथम का अत्यन्त बूझती रहती है और जब अफम हीन का अन्तर माता है तो संसार से विदा हो जाती है। कहानी अत्यन्त कठोर और उसके साथ ही बच्चा-मूलक है। एक निरामिता किस तरह अपनी रक्षा करने को बेव्यक्त करती है और अन्त में अस्फुट होती है इसका बखान बहुत ही रोमांचकारी है। उसी के मुख से सुनिए—

‘कौन ऐसा स्वाम है जहाँ प्रसिद्ध के साथ जीवन बट सकेगा? कौन ऐसा है, जिस पर विश्वास कर सकेंगी? फिर वह जीवन किम लिए? किस माता पर यह छापी धाम अठोठ होपी? धम तो हो ही माय है—या तो जन्म को विदा कर दो हीस को जो दो और दोरो की प्रति संसार के मजे लुटो और या फिर उस स्वाम पर जलो जहाँ तुम्हो की दृष्टि से बच सको।

जब बिसन की पत्नी बेरया धामलू के पास आकर कहती है—मुझे इसमें क्या? माय नहीं जानती। धामने कभी पत्नी होने का सुख नहीं उठाया। धामने एक पुरुष ही प्रेम का केन्द्र बनाकर जलकी पूजा नहीं की। धामने स्त्रीत्व के उस पुरुष प्रभाव में गिरा नहीं जगता जिसमें बहना एक अपूर्व बात है। फिर धाम एक स्त्री के हृदय के गर्मों को कैसे समझ सकती है?

इस स्त्री की बातों ने धामलू के जीवन की धारा ही पलट दी। यही बेरया जो बिसन की बीवी हाथों से मृत रही थी अब कहती है—

‘तुम अपनी स्त्री से प्यार नहीं करते? यह तुम्हारा बड़ा अश्याय है। वह तुम्हारी है, तुम उसके हो। मैं अब तक तुम्हें धोखे में बाल रही थी। मैं न तुम्हें प्यार करती हूँ न कर सकती हूँ। मेरे इस शक्तिरूप के पीछे अपना सबनाश न करो न किसी और के रूप से पीछे पडना। तुम्हारे घर मैं दिखी हूँ। उसकी पूजा करो।

पुस्तक अत्यन्त रोचक है और समाज के एक ऐसे वर्ग की और हमारा ध्यान आकर्षित है जो अपनी जिम्मेदारी से जाहें जो कुछ हो हमारी जिम्मेदारी से दुरी है क्योंकि

वैवाहिक जीवन ही समाज का तथ्य है और शायद यही हम-जीम मान रहे। कई
 स्थल तो बड़े ही मार्मिक हैं। माया में प्रकाश और रम्य है और आशु के बिना बड़े
 सुन्दर है।

सन्देह यही होता है कि यह बंधन क्या है या नहीं। हाथ धमकी
 बरपाएँ एसी होती हैं इतनी धारणी से प्रेम के अर्थ में यह 'आनेवाली' ता समाज
 क्यों उन्हें इतना हीन समझता। धारणी धार धारणा नहीं है ना उमर सपना
 धारण है।

इसाइ वाला—मरक भी धमकी कांपन रोकर।

प्रकाश दिव्य है। इयाकला ज्ञान रूपा। रीता माय कायत्र म पण है। जनों में
 प्रम होता है और गुण म न बिबाह हो जाता है। प्रकाश की माया शाय म प्राण होती
 है, "कारा का पिता भी बहुत नागाज होता है लेकिन जब इयाकला समाज और गण-मया
 में उन-मन से लग जाता है और बाद की मयाप्रार धारणीवन म प्राण मन है तो पिता
 का श्रेय शाय ही जाता है और वह धमकी पुत्र और पुत्र-मया का स्वभाव कला है।
 पुस्तक का उद्देश्य ही सामाजिक इच्छा है लेकिन येही पुस्तक व निरा जिन मोक्षता
 की प्राणरयता है वह यही कम है और मया जान पड़ता है कि बहुत जन्मी म निरा
 कर समाप्त कर ही मयी है।

अधुकरा—समाज भी विमोह शंकर ज्ञान।

इस संघर्ष का पहला आय दो-तीन माय हुए निश्चय ही। "7" इसका दूसरा
 माय है। हमें कुछ बहानियों तो उन मेगता की है आ पहल मया म नहीं का मके
 व और कुछ मय मेमकों को है। हुए धर्म बहानियों है और धर्म हा मया। बहानियों
 साहित्य विमोह का म है ज्ञानी म यह रण म यह धर्म मनीय हीना 7। बहानियों
 म इयाकला को ही 'अपघारा जनम बुमार को ही 'रुपा' धनीगम की प्रम की
 'बहन भी पुत्रमाल पुत्रापान बहरो को जनी प्रतामाराजग आ का धारणीयों
 गुण बहानियों है। मरधार मोहन मिह के मरे मन्तर मया म सामाजिक गुण को
 धारना प्रण है। शायद मरधार माय को मनी इच्छा देश क उदाह क निरा
 धारणक मय 'रुपी हो। हमें तो हमें मरधार हो व मरण निरने है। वैवाहिक
 जीवन केवल मन की इच्छा नहीं है और न मन की कल्पना और निरा को प्रम बहने
 है। धार हम मया प्रणव धनी-गुण बुमरे पुण-नी को मरधार मरधार कान मय तो
 वैवाहिक जीवन का धर्म ही ही जाय। एसी धार बहानी निरधार मरधार माय ने
 विमोह की मया नहीं की। मरधार प्रमा निरा आ का मरधार भी मरधार का
 विमोह हीन बिना है। इयाकलापण का मरधार नहीं मया नहीं निरान का निरने

॥ ओर और ॥

प्रकार की किरायें—सेवा थी भोलानाथ जी ।

स्वामी जी के उपदेश हमम सुन हैं । उनमें एक मकड़-हृदय क पुपकित करन
 वाने उद्गार हैं प्रम म दूब हुए और धाम्पारिमक धान्य म सने हुए । यह धौटी-सी
 पुस्तक धापक कुछ सेना का मसह हैं । इसम भी धाम्पारिमक तारो पर प्रकटा रामा
 मना हैं । धाम्पारिमक एक एता विषय हैं जिनसे सामारण से नाधारण धानी भी कुछ
 म कुछ परिचित हैं । हम धक्कर लोको को कहते-मुनते हैं—जो कुछ करना है ईश्वर
 करता है, वीमार माया है, पट-बट म राम ब्याप्त हैं मग बगा तो कटौती म मगा जह !
 धजा होगी बरी भगवान के ध्यान होंगे धारि पर यह धान परलपरगत है धनुमूत नहीं
 हमबिए हम मुन से ऐसे महान मर्या का ब्यबहार करके भी उनके धनुमूत धावरण नहीं
 र मकठ । जिनम इन तन्त्रों को धरना बिया है बही ज्ञानो है बही मत्राय्या ह । स्वामी
 भोलानाथ जो 'श्री धनुमकी पुस्तो म हैं और इन विषय पर लिखने हुए धा बन्ते हैं—
 हैं धारिनार हैं । मठमठा का रहस्य इन विषय पर लिखने हुए धा बन्ते हैं—
 ईश्वर-प्राप्ति का तकमे मरल माग उनही संतान मनुष्य मात्र की सेवा और उन्हीं से प्रम
 है । और हमार सपान म यह धाम्पारिम का मार है । सुरिकम यहो है कि ज हमसे
 कहा जाता है कि—

रिम मर म जा मुक-दुय मित सम मर म ईश्वर की इच्छा का मचाग ममन्धे और
 सग के लिए उते धरन हृदय-मन्त्रि म प्रतिष्ठित करो ।

तो गुरुध मन म मन्वेह होता है कि ईश्वर हम बुनिया के धात्रु धोघन क लिए
 केमन एठ मानकी कल्पना तो नहीं है । जब हमारे बुनो म भी ईश्वर की इच्छा ही का
 संचार है तो संक हातो है कि हम धगनो दरा को मुधारने का प्रयत्न ही बना करें ?
 और बही संक हम नहीं म पर पहुँचतो है कि जिनका संचार के पयावों पर धारिनार है,
 उन्हीं विपत्रता को शांत करने के लिए हम कल्पना की गृष्टि करक उमे मम्मोक्ति कर
 िया है ।

मितम्बर १९३३

धारम-विम्बूनि—रचयिता थी पद्मकान्त मापधीय ।

पद्मकान्त जो मे लिगी में द्वा-निगारर बनिता प्रमियों का एक नवी बीड
 देने की चला की है । मगर उद्वन का मुमहय का ग्वा-नों के लिए उद्ग की उमेय
 जिनकी धनुमूत मिड हूँ है शास्य लिगी उरती धनुमूत म हा । हाँ का बाग उरर
 है कि उद्ग को गीरों उरताया मे माने जाने का गीरक गान्त हूया है तब जारर उगमें
 बहु मत्राँ धायी है । पद्मकान्त जो की क्वा-नों ता मरल-मरल का दराक और संग
 मर का मियर-नी मानक होता है । लिगी बनिता म प्याग और मगुराना और

॥ बर धार ॥

परिचित जो धमी उपरिचित से लगते हैं। सम्भव है धामे बचकर भाषा के मंत्र बाने पर हिन्दी कबान्तों में भी धमीत मा रवाँ की कबान्तों का-सा मन्त्र धामे। धमी तो बहु वात नहीं धामी।

नवाक का हाथी—मनु मुठी कन्हूयामाम।

मुंशो कन्हूयामाम ने हिन्दी को उर्दू-साहित्य के हास्य रस से कुछ परिचित कर दिया है। इस सग्रह में उन्होंने दस प्रच्छी-प्रच्छी कहानियों का संग्रह कर दिया है। 'बार्थिकिम' और 'धंगुली की मुठीबत' विशेष रोचक हैं। मगर ऐसी कोई कहानी नहीं, जिसे पढ़कर हास्यमय मनोरंजन न हो।

साहित्य-समीक्षा—मंसक भी कामिवास कपूर।

श्री कामिवास भी कपूर हिन्दी क सुपरिचित धामोचका में है। इस पुस्तक में उनके धामोचना-संबंधी लेख को उन्होंने समय-समय पर पत्रों में प्रकाशित कराने से सग्रह कर दिये गये हैं। लेखा-सवन प्रमाद्यन और रंयमूमि को विस्तृत धामोचनार्णें भी दी गयी है। कामिवास भी की धामोचनार्णें पञ्चास उचित होती हैं यही उनकी खूबी है। 'हिन्दी में नाटक और धामिनय' और 'हिन्दी में उपन्यास साहित्य' विचारपूख लेख हैं।

मानुषी—लेखक श्री सिमारामशरण गुप्त।

श्री सिवारामशरण भी की कविताओं में जो शक्ति और माधुर्य ही की प्रकल्पता उछली है नहीं जितेपठा उनकी कहानियों में है कही-कही निरीह चुटकियाँ भी लेते हैं। बानों में महटाई है धकश्य पर पाठक को नहीं पढ़ने में कोई मटका कोई हचकोमा नहीं लयता जैसे किटी लिपट में बैठकर नीचे उतर गये। 'रूपये की समाधि 'पय में से' और 'कष्ट का प्रतिदान' बड़ी सुन्दर और ममत्परायी कहानियाँ हैं।

शॉव—नम बर्पा क

हिन्दी मासिक पत्रों में 'शॉव' ही एक ऐसा पत्र है जिसने एक धारय सामने रखकर सर्वत्र उसको पूरा करने का यत्न किया है। उसके धारय से बहुतां को मठमेव ही संकटा है पर उसने जो कुछ सत्य समझा है उसका प्रतिपादन करता है और प्रशंसनीय निर्माता से। नमन्वर से उसका नया रूप धारय्य होता है और इस साल उसका नम-बर्पाक बड़ी धमकक के साथ निकला है। कविताओं कहानियों और इसके विशेष स्तम्भों के धारिकता इस धंके में कई विचारपूख लेख हैं जिनमें प्रो रामराम पौड़ का 'भारतीय परमोन्मवार पंडित लक्ष्मीनर बाजपेयी का 'हमाटी पठिता बहुते' श्री बामहृण्य गुप्त का 'सोनिवेट क्त' श्री मत्पयीनर जर्मा का 'प्राचीन धारय में

यजुषा' तथा हिन्दू विवाह की रस्मों व 'परिव्रतम' धारि सेल विचारणीय है। बाबू
 देवी भी मे जिग संगठन की बर्षा की है उससे बरयाद्यो का चाहे धार्मिक नाम हो मने
 मगर समान में सम्मान तो सभी मिल सकता है जब उनके चरित्र म मंयम धा जाय
 यदि फिर व शून्य धीर गाण को पेशा बनाकर भी गृहिणी बनकर रह। बर्मा जी न
 बहुत से प्रमाण देकर यह निश्चि कि पुराने जमान म गलिक्राया का मभात्र मे
 धन्धा धारर वा धारर मरैव चरित्र से मिलता है। धात्र भी सभी बरमाओं मीमून है
 जिन्होंने मंवीय की उपासना को ही अपने जीवन का आधार बनाय गया है। धमादर
 धीर धयमान ता रूप के बेचने से होता है। धयग धात्र भी प्राचीन गलिक्राया की मूर्ति
 बरमाओं माचने-माने को धयना मरुन काय वा म धीर बबल धम हात्र पर जिगा ताप
 रिक्त स मर्बध कर ल धीर लकाधारिणी बनकर गह मो काई बजत्र नहीं कि धात्र या
 उनका धमादर है। धी मोहननाम जो म ध म मय्य म जिगाय है कि पुरान नमर म
 हिन्दुओं की विवाह-प्रथा म बना-बना पारबनन हुए पर विवाह को बनमान ममय्य वा
 हल करन की चेष्टा नहीं की। ममात्र की पत्र बड़ी कठिन ममय्या है। हम धन म
 टोम रहे हैं पर कोई माग नहीं पाते। एक धीर पुगनी बहुधा रम्य है शून्यी धार
 रिचम को धन्धाकन्य मरुन है धीर उसमें पत्रा हात्रवाये "गन्ध"।

तूकान

टाण्कारी माहिलियक पत्र है। कनकला म गवायोहन लक्ष्म जी क मभात्रकन्य
 मे निकला है। ताकामोहन मोनुम जी इन बुडाबस्था म भी नोत्रबाना वा मारा गस्त
 है। तूकान में हास्य काल-बिलोद कगनी धारि मनात्रम की काही नामधा गती है।
 कमीर धीर विचारपूख सेल भी िय जाते हैं। सम्पादक म धयन कौरस्य क रिपय म
 लिया है 'तूकान देउने में कमी-कमी गमार के लिए बहुत धरिठकर बहूण भयारना
 धीर कबांदायीय प्रवीठ होता है किन्तु बाम्पध म एमा होता नहीं। उनको गर्मी लगी
 धरमता मरमता बटोर्या धारि म से प्रत्यक गुण प्रकृति देवी के तिगी न किमी इदरय
 धायन के निमित्त ही होता है। "नी म पत्र क नाम की वषाण्णा मिड होती है।

मदारी

हास्य-नम वा पाश्चि पत्र है। प्रयाग से भी बनभ्रम प्रमार गण्ट 'रगिर की
 एकीटरी म प्रकाशित होता है। बाबू धरु निरम गुरु है। बरिगाणों धीर गणों भी देना
 है। हम धाता है मगारी माहिलियक गदबन्धियों मे धयन एधर धामे बंनग को मबत्रा
 एणै। एमे लक पत्र की जन्मर थी। हाँ मगारी वा वाय दना धागान नहीं होता।
 कमी-कमी बंदर उन बाट भी लिया करते हैं। इगनिए बंडरों वा मभात्र मयय कपारा
 धात्राकर काय मेना धरिचि निगार होगा।

टर्की का मुस्तफा कमास पारा—लेखक श्री शिवनाथराय टंडन ।

जिस बीरामा ने टर्की को गुलामी बर्ष पार्लंड धीर स्नेहधारिता से मुक्त किया उसी मुस्तफा कमास पारा का यह जीवन चरित्र है, जो कई अंग्रेजी पुस्तकों के आधार पर लिखा गया है । मुस्तफा कमास ने जिस वक्त होसा संघामा टर्की साम्राज्य का अंत हो चुका था । एक और गृह-युद्ध का आजार गम था दूधरी धीर योरोपियन नितियों का धार्तक । देश के द्वितीय उद्धार की कामना कर रहे थे । मौजवान तुर्की की स्थापना हो चुकी थी धीर वह प्रत्येक मुख्य स्वान में गुप्त रूप से देश में नबीन नःमृति पैदा करने का ज्योम कर रही थी । लिखने ही उच्च राज-कर्मचारी इस मौजवान नःमृति में थे । मुस्तफा कमास को जमीन एक तरह से तैयार मिली । उसके ऊपर कई बार सन्देश हुआ पर हर बार वह कमचारियों के मद्दयों से बच गया । योरोपीय मद्दा युद्ध में उसे अपनी सैनिक योग्यता दिखाने का अवसर मिला धीर उसने बर्से-शानियाम में बिपक्षी सेमाघों को परस्त करके अपना सिक्का बिटा दिया । फिर उसने किस तरह अपने वाघाघों धीर कठिनाइयों में अपने प्रतिमातृष्व व्यक्तिष्व का परिषय देते हुए, सुसतान को माजूम किया किस तरह देश को बेश होदियों से मुक्त किया किस तरह राज्य को शक्तिशाली बनाया किस तरह सामाजिक सुधार किये यह साध नुत्तान्त इस पुस्तक में अपने मनोरंजक रूप से किया गया है कि उपन्यास का मद्दा धासा है । माया चुमबुनी धीर मंत्री हुई है । जीवनीकार को अपने नामक में जो पडा होगी माजनी है, वह एक-एक शब्द से टपकती है । यदि धाम्याओं का स्पष्टरूप से बर्णिकरख कर दिया जाता तो पस्तक धीर भी उपयोधी हो जाती । प्रारम्भिक-जीवन 'योरोपीय युद्ध' 'तुर्की इम्पिट धादि परिष्वेधों से हमें बिषय के मममने में ज्यादा सुगमता होती । तुर्की का नवशा नी होना बन्दरी था । ऐसे महान व्यक्ति की जीवनी ऐसी होनी चाहिय कि इसकी जीवन-कथा के साध-साध देश की ऐतिहासिक धीर राजनैतिक प्रयति पर भी कासा पडता था । यह शेष लटकता है । हम धासा है इतने एविसन में वह कमी इर र ही धायगी ।

गांधी-विचार शोहन—लेखक श्री किशोर भास व मशाभ्यासा ।

श्री महात्मा को महात्मा गांधी के सम्पक में रहने का बहुत अवसर मिला है, महारमा की की पुस्तकों धीर लेखों का धापने दूध स्वाध्याय किया है । इस पुस्तक में धापने मम ममाय सत्याघठ स्वराज्य बाखिगय उद्योग शोपामन स्वच्छता धीर धारोम्य तिषा साहित्य धीर कसा धादि बिषयों पर महात्मा जी के विचारों का जन करके नबनीठ निकामकर रख दिया है । महात्मा को म्र बोधन एक जिमासधी है, धापने हरेक मम हरेक बाधय हरेक काय की तरह में धाम्यामिक तरह धिरे होते हैं । उन तारों का यहाँ दूध रूप में नंबह कर दिया गया है । हमने ऊपर जो बिषय दिने है

॥ बिबिष प्रसंग ॥

सहस्ररी—समक डॉ बनीराम प्रेम भूतपूर्व सम्पादक 'बाप' ।

डॉक्टर बनीराम की कहानियों का हिन्दी में आद्य स्थान है । यह पुस्तक उनकी व्याख्या कहानियों का प्रथम है । आपकी कहानियों में वह नवान्त यह बोधने में हों जो धारकत धरकर मनचले गल्प-लेखकों की कहानियों में नजर आते हैं पर स्थानिकता है, जो कहानियों में बतपटे कथामु का स्वर नहीं—भीठे हमने का स्वर भर देती है । बेजिये विद्यया के यमोमाओं का यह चिन्ता सुन्दर विषय है—

'क्या मेरे हृदय में पुनरुत्थान की मानना न हो ? सारे जीवन में जिन एक पुरुष की बाली में मान्य पाया हो हृदय में भावुकता पायो हो जिन्होंने दो घंटे वार्तालाप करके जीवन की सुष्ठु वास्तविकताओं को जवा दिया हा उनको फिर देखने की इच्छा कितने में होती ।

बीच-बीच में आपकी कहानियों में हास्य-परिहास की बख्शी आशानी रहती है । कसा मसा नाम की कहानी पढ़कर हँसते-हँसते पेट में बम पड़ गये । कुमुद मधुसूक्त जालिम की धीर तर्क की उमने ऐसी लहर भी बि' उन्न भर न मूल्य ।

जयन्त—लेखक की रामनरेश त्रिपाठी ।

यह त्रिपाठी जी का नाटक है धीरे मिलता गया है केवल पाँच दिन में इस रफ्तार से तो शायद आप साल भर में पन्द्रह-बीस नाटक लिख डालने की इच्छा में लिखने करके घाने की कसर पूरी कर लेने ।

नाटक बख्शा न पढ़ने सायक बख्शा है बपोदि वास्तविक जीवन में चाहें इतनी प्राधानी से निखारी राजा हो जाय लेकिन नाटकीय जीवन में तो हम मज्जता के पहले हीरो को इससे कहीं मीपक कठिनाइयों में डेखना चाहते हैं । यहाँ तो सठ के निवा धीरे न डेखता धीरे बखियाँ हैं । इतनी सखी सख्यता ने उनका महत्व को दिया । दो-चार रात और दो-चार भाषण डगर एक राजा का कामना बना वे तो धात्र निम्नानवे सभी सबक उसे केमन को तैयार हा जायने धीरे मकने बड़ी मूल ता यह हुई कि आपने यह स्पष्ट लिख दिया कि आपन इन पाँच दिन में लिख डाला । आप चाहें एक ही दिन में लिख डालते मगर आपकी या तो 'म विषय में यामोस रहना जात्रिए बा या कम से कम तो पाँच महीने लिखते ।

फरवरी १९२४

बलभद्र और इतिहास की कहानियाँ—समक श्री धानन्द कुमार ।

यह दोनों पुस्तिकाएँ बच्चों के लिए लिखी गयी हैं धीरे मनोरंजक हैं । दोनों के नाम बार-बार घाने हैं । इनके लेखक श्री धानन्द कुमार जी ज्ञान-माहिर्य की बख्शी

॥ विविध प्रसंग ॥

रचना कर रहे हैं। घापकी रजतार त्रिपाठी भी न भी लेम हैं। बलभद्र घापने पाँच पेटि में लिख डाली। घाप लोगों के मस्तिष्क न महसूस की गति है। मेरिण प्रतिभा को इस तरह मरपट छोड़ देना ठीक नहीं। राक कर चलना चाहिए।

फरवरी १९३४

नरम्पू पब्लिशिंग हाउस देहरादून की पुस्तकें

वी घार सहगम न चीन प्रस विमिन्ड क मेनेजिम डायरेक्टर का पर त्याग करने क बाद देहरादून से पुस्तक की एक नयी माना निकालनी शुरू की है और इस बोड़े ही समय न उन्होंने ब्रिटीश पुस्तकें निकाल टाली हैं और निजामन का प्राधान बना डाला है, उधसे प्रकट होता है कि घारक उम उत्साह और धुन में घारका नाथ गती घाडा है। हम घापकी इस नयी साहित्यिक योजना का स्वागत करते हैं।

इस माना की छः पुस्तकें नम समय हमार मानने हैं। विनम चार ता क्वाजा हसन निजामी के 'गदर की कृतानिया नामक माना की उर्दू किताबों के मरन अनुबाध है। पाँचवी पुस्तक का नाम है—'भारतीय विद्रोह और छठी पुस्तक है—'देवी बीर का वृत्त एकीकृत।

अफसरों की चिट्ठियाँ—मनु श्री बयनारायण तनू।

इसमें उन पत्रों का संग्रह है जो अंग्रेजा अफसरों के बीच न घा गयी थी और ब्रिडक द्वारा उन समय के हाकिमा नो कमखोरियो का पना चलना है।

बहादुरशाह का मुकद्दमा—मनु श्री गोदानाथ मिह श्री ए।

इस पुस्तक में उस मुकद्दम का हान लिना गया है जो बहादुरशाह पर अंगरेज के प्रम न चलाया गया था। प्रत्यक दिन की अरबार्ड का ब्रिडरग्न दिया गया है। उनको बेतानिधाने को जा मडा बी गयी था उनका हान बडा बन्द्या तनक है।

बखार अंमजों की चिन्ता—मनु श्री बयनारीन सठ।

अंगरेज के दिनों में बागियों न अंग्रेजी अरुमरा पर क्य-क्या अन्वाचार किये उनका बयान है।

बगमों के आँसू—मनु मणा नयजानिकाना श्री श्रीरामर।

मनु इस माना की मरमे मभारंजत और अवालनाका पुस्तक है। बहादुरशाह के देश-निधन क बाद मजबूत को जा दुगति हुई उमी की कानु मग है। अरुमरा की बेचियों तथा बटुमा को किस अरुम गनी-गनी अरुम गनी अरुम अरुम अरुम

दिया गया है। बहादुरशाह सफ़्फ़न मनुष्य के बड़े प्यासु और हरियाबिस। मगर बाब्रह्म होन के लिए बेबल इन सवपुणों की जरूरत नहीं होती। उनमें उग पुणों म से एक भी न था जिनसे मुमनों ने सवियों तक बिस्मी पर राज किया। वह इसी मायक के कि कोने में बड़े पैशन लिया करते और फकीरों की कब्रों पर मजकू लगावा करते। ऐसत आसमी बगावत म क्या सफ़्फ़न हो सकता था। इसका रंड ऊन्हे भोगना पड़ा। जिन्यी के सलत-फेर का धालें खोसनेवाला बुरान्त है। अनुवाच सभी बिठावों के धन्दे है। स्वावा सफ़्फ़न की भाषा इसनी सरस होती है कि उबू भाषा भी होती तो बाघानी से समझ में आ जाती।

भारतीय विद्रोह—अर्वात् राउलेट कमेटी की रिपोर्ट (प्रथम भाग)—
 अनुवाचक श्री अकुर मनजीत सिंह की राठौर।

राउलेट कमेटी की रिपोर्ट भारतीय इतिहास के विचारियों के लिए महत्व की वस्तु है। इसमें १८९७ से अब तक के भारतीय क्रान्तिकारियों के कृत्यों का बखान है। राउलेट की रिपोर्ट के परिष्कार स्वरूप को राउलेट ऐक्ट पास हुआ जिसका फल सत्वाग्रह आन्दोलन के रूप में प्रकट हुआ वह समकालीन इतिहास की एक मुख्य घटना है। यह पुस्तक उसी रिपोर्ट का हिन्दी अनुवाद है। पहला भाग सभी निकला है। दूसरा भाग भी निकलने का रहा है। पुस्तक इसकी मनोरंजक है कि इनमें उपन्यास का सा मन लगता है।

देवी वीरा—अनुवाचक श्री सुरेन्द्र शर्मा।

वीरा क्रियतर इस के क्रान्तिकारियों में बहुत प्रसिद्ध है। यह पुस्तक उसी की आत्मकथा है। इससे पता चलता है कि वीरा के विचारों में कैसे क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए और क्योंकि उसने अपने बलिदान और त्याग से क्रान्ति के पीछे को चीना। पुस्तक सभी मनोरंजक है।

धर्म-ब्योधि—लेखक श्री जगतनारायण।

इस पुस्तक में बियोसोफिज्म दृष्टिकोण से हिन्दू धर्म का निबपण किया गया है। बियोसोफिजी या प्रज्ञा-बिद्या उन आत्मानों म से एक है, जिन्होंने सत्य और विज्ञान की सहायता से हिन्दू धर्म और धर्म धर्मों में गुप्त रहस्यों को समझने और समझने का प्रयत्न किया है और इसमें कोई सन्देह नहीं कि उसके धरर से कम से कम उसके अनुयायियों में वह धार्मिक कट्टरता नहीं पायी जाती है। बियोसोफिजी सभी धर्मों और सम्प्रदायों का समान रूप से बाबर करती है और उनकी बृत्तियों पर प्रकम्प बसती है। हिन्दुओं में अपने धर्म और उसके बिद्यान्तों से जो प्रबिरवास आ गया था उसके बियो

श्रीजी ने बहुत कुछ मिटा दिया है। लेकिन उसका साथ ही बुद्धि को गीण और विरबास को मुख्य स्थान देकर उसने सब ग्रन्थ भ्रष्टा को भी जगा दिया है और उस मस्तराज को पुनर्जीवित कर दिया है, जिनके कारण हिन्दू-धर्म निरस्त हो गया। मसतम् यह बर्खास्त करने का समयन करता है परलोक के विषय में किन्तनी ही ऐसी बातें कहता है, जिनका कोई प्रमाण नहीं दिया जा सकता। फिर भी यह पुस्तक पढ़ने योग्य है क्योंकि उसका क बड़े-बड़े विद्वान् और साधक हिन्दू धर्म के विषय में क्या कहते हैं यह जानने की इच्छा सभी को होत्यो है। इसके साथ ही उसमें धार्मिकता के धनात्मभावों को विचार करने और अपने मर्तों को बदलने की कांछी सामथी है। पुस्तक की भाषा सुबोध है।

सचित्र श्रुत-बोध—सम्पादक श्री नरदेव शास्त्री बंटीय।

इसमें परमहंस परित्याजकाशाय को एक ही घाट स्वामी शब्दकाय तीव्र प्रथम आशान पुरुकुल कायिको तथा कुसपति महाविद्यालय ज्वालापुर का संक्षिप्त जीवन-वर्णित और उनके मर्तों के संस्मरण है। स्वामी श्रुतबोध की क मर्ता और विषयों को संख्या हजारों तक पहुँचती है। श्री नरदेव भी म इन मस्तराजों को उन्मत्त करके एक प्रसर से मुक्त बर्खास्त में की है। आता है धाय बलकर स्वामी के अनेक शिष्यों में से कोई विद्वान् इसी सामथी के आधार पर स्वामी की का एक मुन्तर जीवन-वर्णित निघन्तर अपनी सपनी को इच्छा करे।

भगवान की शिक्षा

यह पुस्तक श्री अरविन्द काय की पुस्तक का मर्तानुवा है। परमा मस्तराज समाप्त हो जाने पर यह दूमरी घाटित निरामी गयी है। बोध और उसके निदान्त के विषय में भी अरविन्द बोध जैसे महात्मा क विचार धर्मस्य है। धारणा कथन है—

'यद्यपि माच्छरप के पाग इस समय कुछ मशी है फिर भी धर्मन तगोवन क सहारे यह सब कुछ कर लेना।

पुस्तक बड़े महत्व की है इसने हिन्दी मन्तर को भी अरविन्द काय क जैसे विचारों से साध जगने का प्रथम से लिया है।

अप्रैल-मई १९३४

रघुनाथ महात्मा गार्गी (दो भाग)—मन्तर श्री मा एन एंज।

यह धर्मकी पुस्तक का उद्ग मनुवा है जो कि भी एन एंज ने मन्तरमा गोपी के विषय में एंज में लिखी है और जिनके योरीन और धर्मिका म धूम मबा की थी। वि एंज मन्तरमा जी के परिच्छि विषयों में है और उन्में धर्मन निरन्तर म देन बुके है। महात्मा जी के धारणों और विचारों से उन्में किन्तनी महानुभूति है म हम मर

दिखा गया है। बहादुरशाह सज्जन समुदाय ने बड़े दयालु धीरे दरिगारिस। मगर बल्लशाह होने के लिए केवल इन सद्गुणों की जरूरत नहीं होती। उनमें उन मुसों में से एक भी न था जिन्होंने मुगलों ने सभियों तक रिम्बी पर राज किया। वह इसी सामक के कि कोने में बैठे रेशम सिबा करते धीरे फकीरों की कर्जों पर भाड़ लबावा करते। ऐसा धारमी बधावत में क्या सफल हो सकता था। इसका बड़ ऊर्ध्व मीयता पत्र। जिन्गी के उकट-पैर का धाँके खोसनेवाला बत्ताय है। अनुबाब सभी किठारों के धन्धे हैं। कजाना सद्गुण की माया इतनी सरस होती है कि उतू भाया भी होखी तो बाबाजी से समक में था जाती।

भारतीय विद्रोह—अबाल् राउलेट कमेटी की रिपोर्ट (प्रथम भाग)—
 अनुबाब की अकुर मनजीव सिंह भी राठीर।

राउलेट कमेटी की रिपोर्ट भारतीय इतिहास के विद्याधियों के लिए महत्व की वस्तु है। इसमें १८६७ से धव तक के भारतीय अर्थिकारियों के इत्यो का बखन है। राउलेट की रिपोर्ट के परिणाम स्वरूप जो राउलेट ऐक्ट पास हुआ जिसका फल सत्याग्रह आन्दोलन के रूप में प्रकट हुआ वह समाकामीन इतिहास की एक मुख्य घटना है। यह पुस्तक उसी रिपोर्ट का हिन्दी अनुबाब है। पहासा माय धनी निकला है। दूसरा माय भी निकलन का रहा है। पुस्तक इतनी मनोरंजक है कि इनमें उपन्यास का-टा मन लकता है।

देवी बीर—अनुबाब की सुरेन्द्र शर्मा।

बीर अग्रगर क्व के अर्थिकारियों में बहुत प्रसिद्ध है। यह पुस्तक उसी की आत्मकथा है। इससे पता चलता है कि बीर क विचारों में कैसे अर्थिकारी परिवर्तन हुए धीरे बमोकर उद्योग धनने बजिराल धीरे खान से ब्रम्भित क लीचे को सीखा। पुस्तक बड़ी मनोरंजक है।

धर्म-अयोधि—नेटक की जयतबाणपत्र।

इस पुस्तक में विद्योतोपिकस दुष्टिकोण से हिनू बम का निरूपण किया गया है। विद्योतोधी या अज्ञ-विद्या इन आन्दोलनों में से एक है, जिन्हामें शास्त्र धीरे विज्ञान की सहायता से हिनू बम धीरे धर्म धर्मों के गुण रहस्यों को समझने धीरे समझने का प्रयत्न किया है धीरे इतमें कोई अन्देह नहीं कि उसके धयत्र से कम से कम उसके अनुयायियों में वह आर्थिक कट्टरता नहीं पायी जाती है। विद्योतोधी सभी धर्मों धीरे सम्प्रदायों का समान रूप से आयर करती है धीरे जनकी गृहियों पर प्रकाश बावती है। हिनूमा में धनने धर्म धीरे उसके सिद्धान्तों से जो धर्मस्थापन था गया था उसके विद्यो-

तोड़ी ने बहुत कुछ मिया दिया है। लेकिन उसने साथ ही बुद्धि को गीछ घौर विरवास
 ने मुख्य स्थान देकर उसमें उस समय थड़ा को भी जगा दिया है और उन संस्कारों को
 जन्मीकित कर दिया है, जिनके कारण हिन्दू-धर्म निवस हो गया। मसमन्त बहु बसुभिभम
 न समपन करता है, परसोक के विषय म कितनी ही ऐसी कर्त कहता है, जिनका कोई
 ग्माछ नहीं दिया जा सकता। फिर भी यह पुस्तक पढ़ने योग्य है क्योंकि सधर के
 बड़-बड़े विद्वान् घौर साभक हिन्दू धर्म के विषय में क्या कहते हैं यह जानने की इच्छा
 तनी को होती है। इसके साथ ही उसमें धात्रकल के प्रगारमबाणियों को विचार करने
 घौर अपने मतों को बदलने की काफी सामथी है। पुस्तक की भाषा सुबोध है।

सधित्र शुद्ध-बोध—सम्पादक श्री नरदेव शास्त्री बेवतीच।

इसमें परमहंस परिभात्रकाबाब भी एक ही घाठ स्वामी शुद्धबोध तीच प्रबम
 भाषान गुककुल कौपड़ी तथा कुनपति महाविद्यालय ध्वातापुर का संक्षिप्त बीबन-वरित
 घौर उनके मक्तों के संस्मरण है। स्वामी शुद्धबोध भी के मक्तों घौर विषयों को सख्या
 ह्वायों तक पढ़ौबती है। श्री नरदेव भी ने इन संस्मरणों को एकत्र करके एक प्रकार
 से कुछ बसिष्ठा मेट की है। यग्या है धाये कतकर स्वामी के धनेक शिष्यों ने से कोई
 विद्वान् इसी सामथी के आधार पर स्वामी भी का एक सुन्दर बीबन-वरिष सिलकर
 अपनी ससगी को इत्याच करने।

मगवान की कीला

यह पुस्तक श्री अरविन्ध घोष की पुस्तक का मर्मानुबा है। पहला संस्करण
 समाप्त ही जाने पर यह दूसरी धाकृति निकाली गयी है। घोष घौर उसके सिद्धान्त के
 विषय में भी अरविन्ध घोष जैसे महारमा के विचार धमूस्य है। धापका कम्पन है—

‘यद्यपि भारतवर्ष के पास इन समय कुछ नहीं है, फिर भी अपने लपोबस के
 सधारे बहु सब कुछ कर सेवा।

पुस्तक बड़े महत्व की है, इसने द्विती सधर को भा अरविन्ध घोष के ऊंचे
 विचारों से भाब बढाने का धाधर दे दिया है।

अप्रैल-मई १९३४

लयाक्षात महारमा गार्धी (दो भाग)—मेरक भी सी एक एज।

यह धमरो पुस्तक का उदू धनुबा है, जो मि भी एक एज न महात्मा
 गोपी के विषय में हान में गिरी है घौर बिसने गारोप घौर अरविन्ध में धूम मधर की
 पी। मि एज महारमा भी के धनिष्ठ मित्रों में है घौर उन्हें बहुत निवट स देल बुके
 है। महारमा जो के धाधरों घौर विचारों से उन्हें कितनी सहानुभूति है म् हन सब

जानते हैं। इस पुस्तक में उन्होंने महात्मा जी के विचारों और उनके धार्मिकता की
 मार्मिक विवेचना की है। इसमें सबकुछ नहीं कि मैं एंड्रयू ने धार्मिकतात्मक दृष्टि से यह
 पुस्तक नहीं लिखी है बल्कि उनका उद्देश्य यह था कि महात्मा जी के सिद्धांतों और
 धारणाओं की उनके यथावत् रूप में परिष्कारवालों के सामने एवम् और उन उभयतन्त्रियों को
 मिलावे जो विरोधियों ने महात्मा जी के विषय में फैला दी है। इस पुस्तक को पढ़कर
 महात्मा जी का चरित्र उनकी गहरी ईश्वर भक्ति उनका धनुष स्वाम उनका निर्भीक
 सरल-सम उनका अटल विश्वास अपने उज्ज्वल रूप में हमारे सामने आ जाता है।
 महात्मा जी बिलकुल बड़े राजनैतिक गता है उससे कहीं बड़े व्यक्ति हैं और उससे भी
 कहीं बड़े धारणी हैं और उनके बड़े से बड़े विरोधी को भी यह मानना पड़ेगा कि उनके
 चरित्र में मजबूती अपनी शरम सीमा को पहुँचकर इतना के समीप आ गयी है बल्कि
 हमारे हमारे पुराणों के पुरुष शैवता माने जायें तो उनमें एक भी महात्मा जी के समीप
 नहीं आ सकता। कुच्छ भी उन्हीं उनसे ऊँच सिद्ध हो सकते हैं जब वह केवल मानव
 हृदय-कमी धर्म के एक नाटक मजके जायें। एंड्रयू के साहब के एक-एक शब्द से महात्मा
 जी के प्रति अद्भुत आनंद होती है और अनुभावक महोदय ने—जो स्वयं एंड्रयू के साहब के उस
 जमाने के सिद्ध हैं जब वह दिल्ली में प्रोफेसर थे—इतना सुन्दर अनुवाद किया है कि
 कहीं भी पता नहीं चलता यह अनुवाद है। धन्य टाइमिंग पर अनुवाद में लिखा होता
 तो यही पता होता कि यह उर्दू का मौलिक ग्रन्थ है। अनुवादक इस काम में सिद्धहस्त
 है और अपने ही तरीके मुसलमानों की भाँति उन्हें भी महात्मा जी से मन्ना प्रेम है।
 उर्दूवाँ सज्जनों के लिए यह पुस्तक अमूल्य है।

उपदेशामृत (पौष भाग)—लेखक श्री प्रो० सुभाकर, एम ए ।

सुभाकर जी के ही शब्दों में 'उपदेशामृत' के पौष भागों में इस प्रकार लिखा
 देने की कोशिश की गयी है जिससे बच्चों में सदाचार सच्चरित्रता की नींव बूझ हो।
 हम निमित्त बंद मंत्र शकना उनके भाग देकर बच्चों का ध्यान उन धारणाओं की ओर खींचा
 गया है, जो उभारनेवाले तथा उन्नत करनेवाले हैं।

धारणा यह कथन बिलकुल सत्य है कि धार्मिक शिक्षा सभी उपयोयी हो सकती
 है, जब उसका ध्येय बच्चों को उत्तम नागरिक धारणा अनुप्य-समाज का उपयोयी सदस्य
 बनाना हो। मुश्किल यह है कि ऐसे उपदेश कामकों को प्रिय नहीं लगते। जिस उम्र के
 बच्चों के लिए यह पुस्तकें रची गयी हैं वे इन विषयों की व्याख्या क रूप में नहीं
 पसन्द करते। हाँ यह पुस्तकें पाठ्यक्रम में दायिम की जा सकती हैं और इनके पाठों
 को धार्मिक नये-नये विद्यालयों द्वारा रोचक बना उपचा है।

देवी जोन—लेखक डा धनीराम भी 'प्रेम' ।

पन्द्रहवीं सदी के प्रारम्भ में फ्रांस के कुछ भागों पर इंग्लैण्ड का अधिकार था और फ्रांस की राजनैतिक बला कुछ ऐसी पड़बड़ हो रही थी कि इंग्लैण्ड का प्रमुख उस पर बढ़ता जा रहा था । जिस समय फ्रांस की बला बहुत हीम हो गयी थी और वह बरबर कई सदाइयों में हार गया उसमें एक प्राचीन युवती जोन घाउ मार्क ने फ्रांस की सहायता करके उसे इंग्लैण्ड के पंजे से मुक्त कर दिया । जोन घाउ मार्क अझाई की विद्या में जानती थी सिद्धिजत मा न थी पर उसके हृदय में अपने व्यक्ति देश के लिए इतना प्रबल अनुराग उठा कि उसे मानों ईश्वर की ओर से प्रेरणा हुई कि नू बाकर फ्रांस का उद्धार कर । धर्मोन्माद की बला में उसे मानो ईवी प्रेरणा हुई और वह बन सं निकल पड़ी । फ्रांस की अनगता ने खुले दिल से उसका स्वागत किया । वह मानों उतका सद्धार करने के लिए ईश्वर को ओर से भेजी गयी थी । बाकी पसट गयी । फ्रांस जीत गया । इंग्लैण्ड को वहीं से भागना पड़ा ।

मगर वहीं युवती जिसने अपने देश के साथ इतना बड़ा उपकार किया था धर्मन्य पावतियों की कट्टरता का शिकार हुई । पावतियों ने उस पर जादुपरती होने का इनबाम मनाकर उसे जिन्या जमा दिया । उसी देवी का यह चरित्र है और लेखक ने उसे सरल और प्राकृतिक भाषा में लिखा है । पढ़ने में उपन्यास का-सा धान्य आता है ।

अक्टूबर १९३४

अन्धिम आकांक्षा—लेखक श्री विद्यालमशरण गुप्त ।

यह सिमारामशरण जी का दूसरा उपन्यास है । देहाती जीवन की एक कच्छा-जनक कथा है, जिसमें कर्मियों के हाथ बिके हुए संसार ने एक नर-रत्न को प्रायास पर प्रायास देकर मृत्यु की घार में गुमा दिया है । रामलाल है तो टहलुभा मछिन सेवा विनय और माइस का पुतला । स्वामी के घर का काम इस तरह करता है—बैठे अपना काम हो । मगर, जब माँ में एक बार डाँटा पड़ता है तो बन्धक से एक डाकू को मार आता है । बस उस पर नर-हत्या का अपराध लग जाता है । उसकी शानी होती है, एक बुस्टा से जिसका गुलाब सिंह नाम के एक मुश्ते से अनुचित सम्बन्ध है । यह है तो मुश्ता पर देहात में उतका रोब भी है और सम्मान भी जो धानकस के निर्जीव देहाती समाज की साधारण बला है । रामलाल उस इत्तल तो नहीं करता सेडिन प्रो-योग उसके प्रायासार्गे से पीड़ित होकर उसे इत्तल करना चाहते हैं । उनसे मिल जाता है । पढ़ा जाता है सजा होती है और जेप में मर जाता है । उपन्यास की रचना प्राण-रूपा की शैली में की गयी है । इस शैली में कथाकार से हृषारी मीने हो जाती है और उसकी हरेक बात में हमें निजत्व का अनुभव होता है । मुग्धी का विवाह, स्नेहमयी माता

का देहान्त को किसी का बुझ नहीं देना सकती और जिनके जीवन का सबसे बड़ा ध्यान बुरों को भोजन करना है, रामनाम का मुख्यमा यह सभी वृत्त धारण के सामने ध्यानस्थ के देहाती समाज को बड़ा करते हैं। ही चित्रण तैम के चटकीसे रंगों में नहीं पानी के हाथ के रंगों में किया गया है। बीच-बीच में बार्तालाप में सामयिक परिस्थितियों पर सुमझे हुए विचार प्रकट किये गये हैं, जिससे ब्यहिर होता है कि जेदाक महोरम कितने आगहक है। अध्यापक भी ने रामनाम को नीच कहनासामा को कितन जोरा से छटकारा है—

‘बिनाकार है हमारी इस समाज व्यवस्था को जो रामनाम जैसे धारणी को भी नीच कह सकती है। मन अपनी आँखों देखा सिमक छापभारी ऊँची बाँधि के भोग उस कुएँ में झूँकर देखने में भी डर रहे थे। ऐसे स्वार्थी भोग ही हमारे समाज में सब कुछ है बिनाम न शरीर का बस है न धास्मा का ‘हम भोग विवेकियों की बेड़ी में बकने हुए हैं, इस बात का अनुभव हमारे स्थित समुदाय को कुछ-कुछ होन लगा है। परन्तु हमारे शरीर में इससे भी बहुत बड़ी एक बड़ी पड़ी हुई है और वह है जम्ममठ या बसमठ उन्मत्ता के सम्बन्ध में हमारा अन्विरबास। बह की खेप्टता हमारे लिए सब कुछ है, उसके सामने सच्ची मनुष्यता का मुख्य हमारी वृष्टि में कुछ नहीं।

राजनैतिक स्वतन्त्रता के लिए सामाजिक स्वतन्त्रता पहले जरूरी है। इसे धारणे इन विकल शब्दों में घोषित किया है—

‘समाज में सब के ऊपर मनुष्यता की प्रतिष्ठा कर लेने पर ही ही स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकते हैं ‘हम कहने लगे हैं समाज-संस्कार बुद्धियों का काम है हम सैनिक हैं हमारे लिए तो लड़ाई चाहिए, लड़ाई। यह भी-बाँधी सुनकर हम ध्यान से धुमकित हो उठते हैं और समझने लगते हैं सब हमारे उच्चार में डेर नहीं परन्तु यह सोचने का भी कमी हमने कष्ट उठाया है कि हम में सैनिक का अभाव क्या है? प्रतापसिंह शिवाजी अजयान योविलासिंह बन्दा बैराजी रघुबीरसिंह और लक्ष्मी बाई क्या ये सब साधारण सैनिक थे? परन्तु बार-बार स्वतन्त्रता का घोर फटकार भी हम उसे रक नहीं सके। ‘राष्ट्रपति के निर्वाचन का प्रश्न यदि आज हमारे सामने आ जाय तो मनुष्य को न देखकर हम अपने-अपने जात्युल जातिय और वैश्य को ही देखन लगेय।

सुरक्ष यह है कि यदि कोई इस अन्व-विरबास के खिलाफ कुछ कहे, तो और तो और साहित्य-जगत में उस जात्या-जोही की पत्नी मिलती है।

अस्मिन् अक्काशा में तीव्रता नहीं है, लेकिन इस कर्म पर गुप्त को की मेकनी तोय हो गयी है और बतसा रही है कि वह ऊँच-नीच की मानना उन्ह कितना बुलित कर रही है। पुस्तक का मुख्य डेक लगेय ज्यारा है।

मार्च १९३५

रक्षा सम्बन्धन—लेखक श्री हरिद्विष्य 'प्रेमी' ।

जिन दिनों हरिद्विष्य या 'भारती' ने सम्पादक के जहाँ जिनो आपने यह ज्ञाना लिसा या और यद्यपि यह आपका पहला ही ज्ञाना है लेकिन आप हमसे सफल हुए हैं । और पत्रों के शिक्षा-विभाग न इन मैत्रिकुमेशान की पाठ्यपुस्तका न से लिया है । राज स्वान की प्रसिद्ध पटना है, जब गुजरात के बहानुरशाह ने मेवाड़ पर चढ़ाई की और राणा सांगा की रानी कमवती न हुमायूँ के पास राणा भेजकर उससे मदद माँगी थी और हुमायूँ न उसे स्वीकार किया था—

यह इस्तजान नहीं हुआ है यह आप में कूट पढ़ने का स्याता है । हिन्दुस्तान की तबारीख कह रही है कि राणा के बावें नै हज़ार मुर्दानियाँ करवा है ।

हुमायूँ अपने भ्रात्रे न इतना व्यस्त रहा कि बल पर मेवाड़ का मदद को न पहुँच सका और जिस बल पहुँचा बेबी कमवती की बिठा जल रहा थी और मेवाड़ बहानुरशाह के हाथों विषयस्थ हो चुका था लेकिन और स्त्री-मुग्धों के । दम कितन साऊ और कितन उदार और मजहबी कुटिलता से किये निर्मित । कमवती उभी राणा नामा की स्त्री है जो बाबर से लड़ा था और जिसन प्रतिज्ञा की थी कि मुघला को भारत के बाहर सदेकर दम सँगा । वही कमवती धरमर पढ़ने पर बाबर के बेटे को रानी भेजती है, और बिजयी शत्रु का पुत्र उन राजी का बारों की मति सम्मान करता है । वास्तव में इन सहायकों को मजहब से कोई सम्बन्ध न था । वह तो केवल बीरों की बिजय मानसा की ब्रिदार्ण होती थी । बहानुरशाह ने मेवाड़ पर चढ़ाई का भी इसीलिए कि मेवाड़ के राजा न उसके बायीं भाई को अपना यहाँ पनाह थी थी । बहानुरशाह को श्रेष्ठ न भी हिन्दू सिपाहियों की कमी न थी न मरान की फौज में मुसलमान सेनाओं की । आजकल जो मजहब का यह धार्तन है वह गुनामी से पदा होनेवाली बराहों का फन है । ज्ञाना और-रक्षुण्ड है और मलक न धन पावों क मय से धम और प्रम और पावीयता पर जो उद्गार प्रकट कराय है वह मन की हिसा देत है और मस्तर को उँचा कर देते हैं ।

माच १६३५

रूसी कहानियाँ—अनुबाक श्री रामचन्द्र टण्डन ।

जग्याम श्री बना में तो मन का जोड़ घँस ने किया जा सचता है । अग्य हग के पाम डास्टावेस्की तुगमिब टाम्पटाय और मक्मिम गोरीं है तो घँस न पाम बान अक अनाटोस पाम एमिम जोला और रामा रामा है लेकिन बहानी-कजा न मन शान्त समार के माहित्य में बेजोड़ है । अगम मतमर हो मकता है लेकिन इसमें रिमो को इनकर नहीं हो मरता कि इन बना में क्या माहित्य का दर्जा किमो में भी घटकर नहीं

है। और इसका कारण है—स्त्री शक्ति की वह पीढ़ बनाओ जो शक्ति के पहले की। इस संघर्ष में बायबल कहानियाँ हैं जो या तो बरिष्ठ जीवन की हैं या धर्म और दया का अपव्यक्त होनेवाले उपस्थान हैं, जिन्हें बुद्धिवादी के शायद पॉन्डे धरें हैं। ईंग्लैण्ड या फ्रांस की कहानियों में धर्मिकता मध्य कक्षा के जीवन का चित्रण होता है। शारी-म्याह की सम स्याएँ और और-समारो क्लब जुधा मार-पीट शक्ति विषय ही उनमें दुर्लभ्ये जाते हैं। इन देशों का पिछला नग सम्पन्न है और उसकी सामाजिक समस्याएँ उतनी रोमांचकारी उतनी प्रसन्नकारी और उतनी गहरी नहीं हो सकती। इसी संघर्ष में बायबल के अन्तर्गत का 'इमानदार और केवल इसलिए नहीं महत्व रखता कि वह एक शरणी की सन्धी लम्बी है, बल्कि इसलिए कि वह बरिष्ठ जीवन में जो कोमलता जो आलीशानता होती है, उसको मानव-हृदय से निकालकर बायबल रख देता है। टास्टराय का 'बहुत सत्य है बहुत परमेश्वर' शक्ति के अन्धी विषय का मरुतम है। पीछे चलकर टास्टराय का मठ हो गया था कि कला को सबसौम्पुची होना चाहिए जिसका ध्यान नके वे पके समी से करें। जिस कला का समझने के लिए विशेष ज्ञान और शिक्षा की आवश्यकता हो उससे जन-भाषाएँ का नया उपकार हो सकता है। इसलिए उन्होंने बहुत-सी कहानियाँ बुद्धिवादी और कर्मों के ढंग पर लिखी और किसी हब एक सफल भी हुई। 'अनोखा डोल इसी तरह की एक कहानी है, जिसमें वे पढ़ों को भी कुतूहल का धारण्य मिल सकता है। हालांकि जो लोग कहानियों में कुछ रस चाहते हैं, उन्हें वह मनोका डोल जिसकुल पील ही मवेगा। 'माल मयारी' इस संघर्ष में आरंभ सबसे अजीब और सबसे रसपूज कहानी है। 'बेलाव की 'घाउ' कल्पना की अज्ञान के निहाल से तो बड़ी सुन्दर है, लेकिन बही धर्मोपदेश का एक निरन्तर ढंग। पन्नाह बप बेला में बन्ध 'उत्ने के बाद ठठ मगामेवाला कैंची बन की और से कितना विरक्त हो जाता है और उससे से उसे विदानी बूझा हो जाती है—इसे पककर एक बार हमें रोमांच हो जाता है। मगर बेलाव ने इससे बहुत अन्धी कहानियाँ लिखी हैं। चिरिकोव का 'माल' बाल जीवन का तारिखक धर्मयन है और मोर्फी का 'अधुमुत मिलन' ही एक मुबली के हृदय-बाह्य और कोमलता की अत्युं अन्धक है, जो मालो हमारे जीवन की संतुलित सीमाओं को पैसाकर चिरिकोव के अन्ध एक पहुँचा देती है। बुद्धि की 'समयमर की प्रति में प्रेम के उस अमरकार की कथा है जो कठोर से कठोर आस्था में भी आशा और धीमन का संघार कर देती है। 'भ्रम्यु और सिपाही और 'मूठ' इस संघर्ष में केवल सेंसी और विषय की विचित्रता के लिए रचो यकी जान पड़ती है। इनमें रस नहीं है और न जीवन का स्पन्द ही है। धर्मिकता में ऐसी कहानियाँ बहुत मिलेंगी।

इन इन कहानियों में से कई एक अन्धी अनुवाद में पढ़ चुके हैं और अगह-अगह इन्हें मानुम हुआ कि अनुवादक महोरय को किसी तरह अपना नया पुत्राएँ निष्कृत जाता पड़ा है। यह अन्धक रोप नहीं माया का रोप है, जो धर्मो एक नैज नहीं नन्धी

धीरे संस्कृत के शब्दों का व्यवहार करते हुए बर लगता है कि वही भाषा स्थिर न हो
 पाम । शुरु में बाठ पठों का परिचय िया गया है जिममें इस सभह के रचयिताओं
 का मंत्पित परिचय दे दिया गया है धीरे स्वी साहित्य के महारथियों—तुमनव शास्त्र-
 वस्की टास्मटाय बेबन धीरे गोर्षी के छोटे प्रिंट भो है ।

पुस्तक का मूस्य तीन रचया है, जो हमारे प्रयास न बहुत व्यास है ।

मास १६३५

आहार, सयम धीरे स्वारथ्य—नेटक भी मयवठी प्रमाइ ।

ईधों धीरे बास्टरों ने तो इस विषय की धनेक पुस्तकें लिखी है पर इस पुस्तक
 की खास बात है कि यह एक ऐसे मरीज की लिखी हुई है जिमने मर वम बगों ने केवल
 आहार धीरे सयम के बल पर एक बाठक बीमारी से य्ठ किया है धीरे धन्त न जिबकी
 हुए है धीरे इन दृष्टि से इस रचना का महत्व बहुत बढ़ गया है क्योंकि इमम नेटक ने
 जो कुछ लिखा है, उसका मुर उजरबा किया है । धतएव हमने इस पुस्तक को धात्रि से
 धन्त ठक बढ़े ठीर से पढा । चूकि हम मुर इसी रोग में बहुत रितना व्यस्त रहे है धीरे
 मरठे-मरठे बने है इसलिए हमें इस विषय से धाम दिलचस्पी भी है । एक बीमार सी
 हकीम के बटावर होता है । हमने बहुत रितना सारे बीधा हकीमो धीरे डाक्नरो के डार
 की लाक धनकर धन्त न केवल संयम धीरे आहार से धपनी जान बचायी । इस पुस्तक
 के लेखक न भी मरी अनुभव है । जो मीय मानसिक परिधम से धपना स्वास्थ्य सी
 बीठे हों या जो मेहनत करके भी धपने स्वास्थ्य की रक्षा करना चाहते हों उनक लिए
 इन पुस्तक में धनेक काम की बातें मिलेंगी धीरे यधि नै इसके धावशा पर चलेंगे तो
 धासानी में बीमारी न शिकार न होंगे । लेखक न धात्रि न धपना धात्मकबान्धक परिचय
 देकर बटा िया है कि वह क्यों बीमार हुए, क्या-क्या कष्ट रहू धीरे धन्त में कंठे
 स्वास्थ्य-नाम किया धीरे धन्न उनकी क्या हामत है । धापने बढ़े पते की बात कही है—

‘वही अनुप्य ने रोग का कारण धपने की छोड़कर ईरबर को नमम्य धीरे उनके
 निवारण का उपाय डाक्टर क हाथ में दिया वही उमम पुकपाव की गंवाया धीरे धकध
 मीय दुरथा धपने निर पर मारी ।

कसक न विषय का सरीम धध्यायों न बाटा धीरे धपने जीवन भर के धनमर्षों
 की नम भर दिया है । पहले बायह धध्यायों न आहार क महत्व प्रयाजन धीरे उनके
 धावरयक धंधा का बखल है धीरे मिन्न-मिन्न विटामिनो की बर्धा न गये है । नक्यो
 देकर धापन स्पष्ट कर दिया है कि किस पधाध न कीन-ना विटामिन रितना है धीरे
 उनका स्वास्थ्य पर क्या धमर पड़ा है । बाइ ने तीन धध्यायों में जन वायु धीरे मूस-

प्रकृत का मूल्य विज्ञानाया गया है। मोषहर्षे धर्म्याय मे विचार-शक्ति धीर स्वास्थ्य की भीमासा करते हुए धाय लिखते हैं—

मनुष्य को पूरा स्वास्थ्य प्राप्त करने के लिए चाहिए कि वह सबसे प्रथम सद्ब्रह्मभूति धीर उदारता के साथ रहे। ईर्ष्या द्वेष क्रोध अहंकार कृता अपसा लेना भय भूट धारि धवगुणों को त्याग वे दूसरों के धरणा को चमा कर दे अपने धरणाओं की मीठी मीठ से धीर शारीरिक क्लेश को हँसी-मुसी मेमते हुए यथाशक्ति अपने कर्तव्य का पालन करता रहे।

ऐसा मनुष्य तो बेवता ही हो जायगा फिर बीमारी उसके पास क्या फटकने लगी। उसके तो धर्मिर्षि से रोगी बने हो जायेंगे। धर्म के तीन धर्म्यायो म ब्रह्मध्व समय की पाकधी धारि का उल्लेख है। एक धर्म्याय मे व्यायाम धीर निद्रा का निद्र सात धर्म्यायों मे मित्र-मित्र बाध पदायों मे—दूष मांस धनाद शाक-भाजी फल धारि—का तुलनात्मक विवेचन किया गया है। वीरों को रक्षा पर एक धर्म्याय धनन है। सर्वोत्तम प्रकार का भोजन क्या है इस पर धारि की सम्मति का सारांश यह है—

- १—दूष की मात्रा बड़ा ही जय।
- २—हरी पत्तिया की भाजी अधिक जायी जाय।
- ३—प्रति दिन कुछ न कुछ कच्ची शाक-भाजी धरय हो।

बतिसमें धर्म्याय मे 'भाज पानों का संगठन' शीपक लेकर धारि एक ठानिका हाप सनी बाध पदायों मे पाये जानेवाले पोषक तत्वों को स्पष्ट कर दिया है। इससे हमें स्वयं अपने भोजन का कैसला करना सरल हो गया है।

पुस्तक रोगियों धीर दुर्बल स्वास्थ्यवासों के लिए बाध धीर पर उपयोगी है। सेबक ने विषय को इतनी याम्पता सद्ब्रह्मभूति स्पष्टता से निमाया है कि ऐसा शुष्क धीर धरिधर विषय भी रोचक हो गया है। विषय को स्पष्ट करने के लिए धनेक विषय दिये गये हैं। छपाई यच्छी कामक बहिया। बाहार धीर संयम के मन्वन्ध की शायब ही कोई बाध हो विष पर यहाँ प्रकृत न डाला गया हो।

मइ १६३६

कारवाँ—नेक की मुबनेरवर प्रसाध।

कारवाँ हिन्दी साहित्य के इतिहासमें एक नयी प्रगति का प्रवतक है, जिसमें शा धीर धास्कर बाइरड का मुबनेर उगन्धय हुआ है। अभी तक हमार हिन्दी ड्रामा बटनायों धीर धरिधों धीर कथायों के धाधार पर ही रचा गया है। कुछ समयसा नाटक यी लिखे गये हैं। जिनमे धर्मियों का या गये या पुराने विचारों का बाका लीचा गया है पर सब कुछ धूल बटनात्मक दृष्टि से ही हुआ है, धीवन धीर उगकी मित्र-मित्र

समस्याओं पर मूरम वनी तात्विक बौद्धिक दृष्टि बाधने की चेष्टा नहीं की गयी जो नये ज्ञान का आधार है। जैसा सेलक ने अपने 'प्रवेश' में खुल कहा है—

हिन्दी में समस्या नाटककारों का सबसे एक सहज धारणा है। उनके कपोल-कल्पन में 'समस्या शब्द' का आ जाना।

सेलक ने यहाँ कुछ मुबालास से काम लिया है, लेकिन हममें तो यों नहीं हो सकती कि समस्या नाटक की स्पिरिट का उगहाने खुब पकड़ पाया है और हमारे जीवन के पुष्ट रहस्यों प्रम और नाबुकता की धाड़ में छिपे हुए भ्रोधिकारा पर ऐसा विशय प्रकाश डालना है कि उनको धार छात्रों डर भगता है। सम्माण म अगह अमह मनो नावों की एनी मार्मिक विवचना की गयी है कि सेलक की मूळ की प्रकरता और बद्धि की तीव्रता का कायम होना पड़ता है। राजन जब स्त्री से कहता है—'स्त्री की पृथा पुरप पर बमात्वार है या जब प्रतिमा महेत्र से कहती है—'हृदय तो टूटने ही के लिए बन है। मानव जीवन की सबसे बनी टुजेही तो यही है कि हमारे हृदय नहीं टूटते या जब मिस्टा मिह कहते हैं—'अनुभव तो मनुज जीवन की हार है। संसार का कोई अद्रिय मय जब हम पूछतया परप्रत कर देता है तो हम उसे अनुभव कहते हैं। या जब वह धामे बमकर ठिर कहते हैं—'विशालिष जीवन में मुक केवम उन अइकार का नाम है, जो स्त्री का पुत्र पर या पुठय का स्था पर बिजय पाने म गता है। या जब पित्रोर माया म कहता है—'कोई भा मनुज्य अपने प्रम पाव क माय मुन्दी नहीं रह सकता तुम्हें उम बाबक के लिए पग रा परत्यान और बनिवत करना पड़ेगा। और मुल मुल नाम है विजय का। या जब माया कहती है—'स्त्री का वास्तविक जीवन जनी प्रारम्भ होता है जब एक पुत्र्य अपने धारकी उमर' लिए मिटा चुकता है। तो माना हमारी बुद्धि पर एनी कहीं बाट पड़ती है कि हम अण भर के लिए बाँचना बाने है और जो बाहता है सेलक का जोरा के माव संडन कर, जो छात्र इत बात का प्रमाण है कि उनका निगाता ठीक बैठा है।

पस्तक में प्रवेश और उमरहार को छोड़कर घा एकाकी नाटक है जिसमें ठा'ग 'हम में गत रूप घा चुक है शेर छान या तो अयकशित है या अन्य दिनवालों म निरत चुक है। 'समाज एक बशाहिन विडम्बना म मिमज वरी धरत पति में कर्माती है—'समाज क मन्मूय म तुम्हें प्यार करके के लिए उतकशयिनी हूँ और विशाह करके यदि मिन बीचिका के लिए धरत अ'प का नहीं बचा है—यदि हम कश्मि मय का समयत गुम नहीं करना चाहत—तो मुळ प्रम तो बाहिन। अगर बेशहिक जोरत में प्रम नहीं है—और निस्मग्ह नहीं है—तो धीर क्यों है? मुकशारण क जाबन म? ध्यदिचार में प्रम बेकम रनिकों की मुकृत का अण उछानेबाका की बगना है। मरने मय कर में बहु बेकत मखान की निर्मायक प्ररणा है। भाग की इच्छा का मान प्रम मयत रना गया है। जब एक जाड़ा हम जिम्मेदारों म मर जाता है तो एक हमारे के प्रति त्याग

धीर सहानुभूति की मानवीय भावनाएँ जाग उठती हैं। यही वैवाहिक जीवन है, यही प्रेम है। धर प्रेम से कवियों और रसिकों के प्रेम का धाराप है, तो वह वास्तविक में होगा मत्स्यरोग म नहीं। यह प्रकृत है, कुप्र है कि स्त्री जीविका के लिए अपने धांपको बेचती है। धरसी श्री सवी दुनिया के बसनेवासे मकहूर है। उनके स्त्री-पुंस्य दोनों ही परिधम करते हैं। प्रायः स्त्री ज्यत्वा करती है। जीविका का बड़ा प्ररन ही नहीं है। फिर भी धरिधर पुंस्य ही प्रधान है। बहाँ मरुकिर्या पिता की सम्पत्ति की धरिध होती है बहाँ भी पुंस्य का धरर कम नहीं है बल्कि धीर ज्यत्वा है। धिसमें बुद्धि कम ज्यत्वा है, यही धिसयी है। कभी-कभी मेहरे मरु नरर धा जाते हैं। ऐसे धरों में स्त्रियों की प्रधानता होती है। वैवाहिक जीवन से धरकनेवासे बह पुंस्य है जो धरनी धरुमस्यता के धररुध कोई धिस्येधारी नहीं लेना चाहते जो धरसे धिरे के धुधररर है जो धिसास के पुंस्य है। धर्रे से कवि हों या किसाधकर। धिसाह धररर एक बन्धन है, लेकिन इध नरर से धेरिध तो जीवन ही क्या है? किनी भी ऐसे सधाज की कल्पना की जा सकती है, बहाँ धिररुधता का ररर ही? ऐसी धुठोपिया तो धरर तक किनी ले नहीं बनामो। कुध न कुध बन्धन तो जीवन मे रर्रेया ही। इधी का नाम संयम है धीर धिस ठररु जीवन क धीर धिसागां म उधी ठररु वैवाहिक जीवन में भी उधका धरर धरर है। वैवाहिक जीवन म धरर रररते ही स्त्री-पुंस्य दोनों बधुधारी का धरर कर लेते हैं धीर इध धर का धिसना ही बुद्धता से धररन हाता है उधना ही जीवन सुधी होता है। धुन उध धिसय का नाम है जो स्त्री की पुंस्य धर या पुंस्य की स्त्री धर धरने में होता है, बड़ी सुधर धुधित हो मरुती है, लेकिन धिसधर। उध धिसय का नाम सुध नहीं बल्कि धरिधधर है।

धेर यह तो धुरे धिसधर की धरर धर पुधी धरिध के मनोरुधस्यो का बड़ा ही धररक धिसध है। वैवाध धिसधर पुधी एक बड़ा धुरिध धरिध है धर धिसकुध धरर धीर उधके धरर ही कुध कधधोर जो नहीं चाहता कि उधकी स्त्री उधका धररनी धर रहे। बलधरन पुंस्य मनोरुध मधुधय की धरररर न करता। धिस धिसाध के धरर धरर कहते हैं—'धररर धेरि है 'सधाज की एक धुरधहीन लीह धिसि मे ही उधे धुधररु धनाया है धुधररर उध धर क्या स्वध है? स्वध तो मनोरुध मधुधय का है, क्योकि धरर धररर से प्रेम करते हैं। धिसधर पुधी मधुध है कधी कधक हा। नी बने से धेरर ध' बने धरर तक किनी धररर में नाक रररते हा। धरने जीवन रररर का धरर-धरर धरर धररर के लिए धररर हा लेकिन उधका धरररर धरर कोई स्वध नहीं है स्वध है मनोरुध का क्योकि बह धरररर से धरर करता है।

एक सधुधहीन सधुधधारी' म धररकन धेरि सधुधधारी धररने म धरर है उधकी जीधी-धररधी ठरररीर। 'धिसधर धिसा का तीसधध के धरिधनी धीर धरररिध धिसधर ररिधुधता के धरर धीर' 'धरर से बहाँ तक उधके कधने का धररन है धिसध। नाम

धीर काम दोनों को मोभुप । कितना समीप छाया है ।

‘सैलान’ एक उर्दू रोलीबाज मगधसे मोफर का चरित्र है जिसकी प्राकृतिक उदारता उस स्त्री को मुग्ध कर बेठी है, जो उससे पृथा करती थी । ‘प्रतिमा का विवाह एक धन-मोभुप रमणी का चित्र है मगर धनी शायद भारत में प्रतिमाओं का जन्म नहीं हुआ है । वह भारतीय नाम की एक धंधक छोकरे हो सकते हैं जो बड़े पति के धन से जवान प्रेमी के साथ बिहार करके बुढ़ को उसकी बुढ़मस की सजा बेती है । सम्भव है, मयी रोसनी कुछ बिनो में यहाँ की रमणियों की मनोकृति में यह लक्ष्मी पदा कर के मेकनि यद्यपि हरु दोष में हमारा अनुभव बहुत ही कम है फिर भी हम इसी धम में पड़े रहना चाहते हैं कि यह सम्बुद्धतया सम्पन्निक मृष्टि है जीवन में इसका कोई धान्मुक नहीं ।

‘माटी’ का प्रमय यह है कि एक पुरुष बिहेरा में धरतिचिता में रग-बिरये स्वप्न देखता है और जब धन बड़कता हृदय लेकर कर धाजा है, तो देखता है उसकी स्त्री किसी दूसरे पुरुष के प्रेम में पापल है । स्त्री धपन धासिक से कहती है—‘तुमने मुझ क्यों जानने दिया कि तुम मुझसे प्रम करते हो मेरी धारवा में पैठ कर तुमने उम हिसक बाबिनी को क्यों जया दिया मेरे जीवन में चिनयारियाँ क्यों भर दी ?

धासिक साहब उसके प्रम का बल लिये बल जाने को लैया है । कर्मते है—‘मैं तुम्हारे स्वप्न लेकर ससार के किसी कोन में चला जाऊँगा और तुम्हारे जीवन में एक धरम पर धप्रिय स्वप्न केवल एक स्वप्न छोड़ जाऊँगा ।

स्त्री जबाब देती है—‘धीर मैं एक पुरुष के क्मे में निर्बीब सता क समान लिपटी रहूँ जिसे मैं प्रेम नहीं करती ? उसके लिए बच्च उत्पन्न कर ? उसे प्रम न कर समझूँ नहीं पर उसक जीवन में ईर्ष्या की धाय मया है और तईब धपने हृदय में एक दूसरे पुरुष का साहक प्रम लिये रहूँ ।

स्त्री का पति माठा है और यह कीगुक देखकर फिर धपनी मौकरी पर जमा जगा चाहता है । पत्नी परप में कुछ लरी-लरी बर्ने होती है । धासिक माहब पर इन बातों का कुछ ऐसा धसर होता है कि वह धपने प्रम से हस्तीया दे देते हैं और जिन पं पर पति जाना चाहता था उस पर बुर बल बलते है ।

‘रोमांस रोमांस’ का प्रमय भी बहुत कुछ माटी से मिलता-जुलता है । हाँ मिस्टर मिहू ने धपने शिम जाने मग में स्त्री के विषय में जो धमय धीर धमरये लहर कहे हैं उनका *Cynicism* मग में ग्लानि वेरा करता है और यह क्या इन रचना की एक नाटिका एक ‘माग्यहीन साम्यबारी के मिबा धीर प्रायः समी में एक ही विचार, कुछ बदये हुए रूपों में काम कर रहा है धर्वाणु—बैबाहिक जीवन का कला म्त्र । जितनी सिन्याँ धायी है मगी धपने शोहरों में बगावत किये बीठी है समी किमी दूमर धाम्मी से मौठ-मौठ करती है धीर लुब्धम-मुब्धता करनी है धीर लमा पुर्य ईर्ष्या से

जमाने हैं और कुदृते हैं। वैवाहिक जीवन की यह निस्तारता शायद लेखक में भास्कर बाइरुड से उधार ली है। अगर ऐसा है तो अभीमत है लेकिन अगर यह उनके मन की भावनाएँ हैं, तो हम यही कहेंगे कि उन्होंने उसका केवल सियाह रंग ही देखा है अगर वैवाहिक जीवन इतना दुःखमय होता तो भाव संसार में एक जोड़ा भी अगर न पाता। जीवन में सबका बिद्रोह ही बिद्रोह नहीं है कविता भी है मायुक्तता भी है, धामन्द भी है त्याग भी है। वही कवि-प्रतिभा जिये जीवन में निराशा के सिवा और कुछ नजर नहीं धाता शायद यहाँ भी प्रस्तुतित हो रही है और यह उसी के उच्चार है। या शायद ऐसे प्रयोग इसलिए किये गये हैं, कि साम्प्रत्य के विषय में जो भावनाएँ सफ़क ने अपने अन्दर भर ली हैं उनके इजहार के लिए दूसरे प्रसंगों में बुझाया न भी। पुणने जमाने में 'शुक बहसरी के हव को पुस्तकें बहुत मिली जाती थीं जिनमें स्त्री-मुदय के बेवछाई पर आघेप करती थी और पुरुष स्त्री की दख्खाड़ी पर। दोनों अपने पक्ष के समझन में नज़ीरें पेश करते थे और पुस्तक तैयार हो जाती थी। उन किस्तों के लेखकों का मशा क़वम मनोरंजन होता था। गया ड़ामा अब उससे बहुत ऊँचा उठ गया है। वह अब जीवन की जिंसावछी और चिन्गी के मसने हक करता है और मसने भी बहु सेता है, जो सामाजिक होते हैं वह नहीं जिनका केवल मुट्टी भर विष अपने घासमियों से तास्तुक है।

मुचनेश्वर प्रसाव जी में प्रतिभा है यहराई है, खद है, पते की बातें कहने की शक्ति है मन को हिंसा देने की बाक्कालुपी है। कारा वह इसका उपजोम 'एक साम्प्रहीन साम्प्रबारी' बंसी रचनाओं में करते। भास्कर बाइरुड के गुणों को लेकन क्या वह उसके कुपुणों का नहीं छोड सकते।

जून १९३५

वित्तमी—लेखक अवगतकर प्रसाव ।

'वित्तमी प्रसाव जी का दूसरा उपन्यास है और यद्यपि इसमें कफ़ाम की हिंमिक छटा नहीं है पर बुज्जिकोण की स्पष्टता और बिचारों की प्रौढता में उससे का हुमा है। 'वित्तमी नाम पढ़ कर ऐसा अनुमान होता है कि इसमें किसी बचन मिनी का चित्रण होगा अगर यह अनुमान गमत निकलता है और वित्तमी का विकास त्सा गुद्विणी और मर्यादाभा पर उत्सव करनेवाली बेनो के रूप में होता है। वह इतनी स्त्री है पर उसे अच्छी शिक्षा मिली है और कठिन परिस्थितियों में पढ़कर इसक्य करिष कुन्दन की भाँति और भी गिगर जाता है

पुत्रपोषित साहस से उसन इन चीखू कपों में ससार का सामना किया था। किसी से न मरुने की टेक अविचल कजव्यनिदर और अपने बस पर नह हीकर इतनी सारी गूहसूची उमने बना ली।

उसके मन में यही धाँकीया है कि उगका दंष्ट्र पति पीट कर घाबे और उसकी साबना का पुरस्कार दे। लेकिन जब यह कामना पूरी नहीं होती और तितली नाँव में संरेह का विषय बन जाती है, तब वह चिन्ता उठती है—

‘मैंने इतने धैर्य से इतलिन ससार का मध घात्याचार सहा कि एक दिन वह घाबने और म उनकी घाती उन्हें सौंप कर घपने बु लपुण बीबन से विभाम लुँगी।’”
 क्या एक दिन एक घड़ी एक चख मो मेरा मेरे मन का नहीं घाबेगा—जब मैं घपने बीबन-मरख के मुक-मुस में साध रहनबाज की प्रसिजा करनेघामे के मुँह से घपनी सझई मुन नूँ ।

उबर शला संघर महिना है जो इन्नीड में कँबर इन्द्रदेव सिंह की सगमनता से प्रमाकित होकर उनके मध भारत घाती है और यहाँ रिषामों की दुईरा देकर उनको सगठित करन और उनको घाविक ममम्याघों को हल करने का घानोमन करने सपती है। फिर विज्ञान रामनारायण के मुख से हिन्दू धम का उपदेश सुनकर वह हिन्दू धम की दीघा म लेती है और कँबर साहब से उम्का विवाह हो जाता है पर उसका र्बबाहिक बीबन सुपो नहीं है। स्मिध नाम का एक संघर उसके मन को बुरी तरह घाग्यामित कर देता है। उसी समय शैला और तितली में जो बार्ने होतो है उमसे उनके घाररा स्पट हो जाते हैं। तितली कझती है—

‘तुम धम के बाढनी घावरण से घपने को रँक कर हिन्दू स्त्री बन घपी हो मही किन्तु उसकी ममकति की मुल शिघा मूल रही हो। हिन्दू स्त्री का घडागुख ममरस उसकी साबना का प्राख है। इम मानसिक परिवतन को स्वीकार करो। देखो इन्द्रदेव बाबू कँसे देव प्रकृति के मनुष्य हैं। उन त्याम को तुम घपने प्रम से और नी उम्मल बना मकती हो।

जिस तरह शैला और तितली के मनीमार्गी में घमतर है उमी तरह कँबर इन्द्रदेव और पठित रामनाम के बीबन-घारशी में नी गहरा घमतर है। नीनों ही दश और ममात्र के तुम चिन्क है मरिड इन्द्रदेव गमात्र को पच्छिमी डंग पर ले जाना चाहता है इसके जिभाक रामनाम हिन्दू घारशी पर लडा रगता है और उम्ही क परिल्कार में जाति का घडा देघने का इञ्जुक है। इन्द्रदेव जाति की दुईरा को बर्ना करते हुए कहे हैं—

‘इसम ती घञ्डी है परिषम की घाविक भीतिक समता जिनमें ईश्वर न रहन पर भी मनुष्य को मध तरह के मुबिनाघों की योजना है।

इन्द्रदेव परिषम की भीतिक ममशा क पुजारी है। रामनाम भी ममता के मक्त है पर यह काम मारतीय घात्यचार द्वारा पूरा करने के इञ्जुक है। वह इन्द्रदेव के पबाब में बग्ने है—

'बनता को धर्म प्रेम की शिपा देकर उस पशु बनाने की चेष्टा धन्य करेगी । उसमें ईश्वर भाव का आत्मा का निर्वासन होया तो सब धर्म उस दया सहायुभूति धीर प्रेम के उद्गम से अपरिचित हो जायेंगे जिससे आपका व्यवहार टिकाऊ होगा । प्रकृति में निष्पमता तो स्पष्ट है । नियन्त्रक के द्वारा उसमें व्यावहारिक समता का विकास न होगा । भारतीय धर्मशास्त्र की माणसिक समता ही उसे स्वामी बना सकेगी ।

इन्द्रदेव का पारिवारिक जीवन आधापूरा है । जो घर के स्वामी बही है पर उस घर राज है उनकी बहम माधुरी का आ पति प्रेम से संबंध होकर मरु में ही रहती है धीर इस घर के संभालन में अपने जीवन को समर्पण कर रही है । उनकी माता श्याम-कुमारी देवी का समय बीमारी धीर पुत्र-प्राप्त धीर धर्मोत्तमों में कटता है । इन्द्रदेव एक इंग्लैंड से एक अंग्रेजी युवती के साथ मिलता है धीर दोनों धर्मपुत्रत्व में रहने लगते हैं तो माधुरी धीर श्यामकुमारी दोनों ही निश्चित हाथी है धीर-सौभाग्य को किसी तरह धूम को मक्खी की तरह निकाल बाहर करना चाहती है । रियासती हथकड़े शुक हो जाते हैं, यहाँ तक कि इन्द्रदेव घर से बिरक्त होकर शहर में चले जाते हैं धीर वहाँ बैरिस्ट्री करके अपना निर्वाह करने लगते हैं । अपनी सारी सम्पत्ति अपनी माँ के नाम हिया करके वह उस हियानामे की रजिस्त्री कर देते हैं । लेकिन बेहातों के सुधार का विचार उनके हृदय में अभी तक मौजूब है । वह सौभाग्य से कहते हैं—

'कुछ पढ़े-लिखे सम्पन्न धीर स्वल्प लोगो को नागरिकता की प्रसोभनो को छोड़कर देश के गाँवों में बिरक्त जाना चाहिए । उनमें सरल जीवन में—जो नागरिकता के समय से निपात हो रहा है—बिरक्त प्रकाश धीर धान्य का प्रचार करना चाहिए ।

मगर धान्य हिन्दू माता अपने पुत्र से सम्पत्ति दान लेकर क्या धर्मिकार का कुछ भागने में सतुष्ट हो सकती है ? वह अन्त में सब कुछ अपनी बहु शैला को सेंट करके सुखी होती है । इन्द्रदेव की बहम माधुरी भी अन्त में पति के व्यवहार से दुखी होकर शैला से स्नेह करन लगती है । इस समय मनोमार्थों का धर्म निष्ठा कोमल है—

'प्रेम मित्रता की मूखी मान्यता ! बार-बार अपने को ठग कर भी वह उठी के लिए भ्राम्यती है ।

दिल्ली का पति मन्वज बड़ा मनबला युवक है जो अन्वय देख कर शान्त नहीं बैठ सकता । उसकी मित्रता बहम राजराणी पर अब एक सुखकोर महन्त बलात्कार करने की चेष्टा करता है, ता मधुवन श्रेष्ठ का काबू में नहीं रह सकता । वह महन्त को मना बलात्कार मार डालता है धीर उसके मन्तुक में अपनी की बेसी सेकर भागता है धीर अन्तकता पहुँचता है । वहाँ कई बरना बर्रों में पड़न के बाद उसे दग साज की सजा दी

घाती है। जस म पक्ष-पक्षे उसके अर्धस मन में तरह-तरह के मन्हेह उठते है धीर घाने ऊपर मानि होन ममती है। बह सोचता है—

‘क्या तितली मुझसे स्नेह करेगी? मुझ अपराधी से उसका बही सम्बन्ध फिर स्थापित हो सकेगा? धीने उसका ही यदि स्मरण किया होता—जीवन के शक्य प्रश्न को उसी के प्रेम से केवल उसी के पवित्रता से भर लिया होता तो घाब मह दिन मुझे न देखना पड़ता। किन्तु, क्या बही तितली होगी? घाब भी वही ही पवित्र? इस मोक्ष मसार में जहाँ पग-पग पर प्रमोमन है, साई है, मानन्द को मुख को सासता है?

जस म छुटने के बाद बह ठाकरे खाता हरिहर खेच पहुँचता है धीर यहाँ अपने पुराने दुरमन बीबे बी धीर तहसीमदार की बातचीत से उसे तितली के विषय म संबेह होता है—उसका सडका कब हुआ? प्रतिशोध लेने के लिए उनका पग मॉकन तुका रहा या धीर बह बार बार उस शोध करना चाहता था।

बह भर घाता है। उसी समय तितली जीवन से निराश होकर क्या की गोच में मून पड़ती है। अंतिम समय उसे मधुवन म बरतन होते है—

उसम देखा सामने एक विर-परिचित मूर्ति है। जीवन-मुझ का थका हुआ सैनिक मधुवन विधाम-सिबिर के द्वार पर जडा था।

प्रसन्न बी कर्मि है धीर इस कथा म घनक स्वम ऐसे घाये है जहाँ उनकी मोमनी कवित्व म मूब गयी है। दो-एक उदाहरण नीचिए—

रसीमी जाँदनी की घात्र ता से मन्बर पवन अपनी महरोँ से राजकुमारी के शीर म रोमांच उत्पन्न करने लगा था।

अपनी मलमल गरिमा की छोडे हुए बह स्त्रियों की रानी-सी दिखलायी पड़ती थी।

‘वो बूँचों की ऊँचो जाटियाँ परिचम के बूँचमे धीर पाने घाराश की भूमिका पर एक उदात्त चित्र का वेश बना रही थी।

इम पुस्तक म दिग्गी के अन्धे उपन्यासों में एक की संख्या धीर बडा थी है। कमी जो एटन्टी है बह है इमम बिनोब धीर मजीबता की। बीबे बी शुक म ठी कुछ घास्तामनक से पर घाने चलकर बदमाश निकल गये। उपन्यास पढते हुए मन इस प्रवचन में नहीं पड़ने पाता कि यह कोई म्बाय जीवन वा अरिच है। उनकी धीपन्या गिबता मन म दूर नहीं होती। अरिच मजोब न होकर घाया म मानूम होते है। सूर्य पा तीव्र प्रकाश बही नहीं है, मडिम जाँदनी में सारे दुरय दिलायी देते हुए जान पड़ते है। घाल गुर एक पड़ेमो है। इम अरिचों की अन्ध-मी देगते है। उनका सम्पूख

कम हमारे सामने नहीं आता अगर शक यह उनका धबलुभापन ही है जो उन्हें हृदय के समीप पहुँचा देता है। क्या जितनी क्षिपाव में है, उतनी दिशाव में नहीं।

जुलाई १९३५

मुसहस हाजी (सर्दी एबीरान)

स्व मौसाना हाजी उर्दू साहित्य के प्रवक्तको में हैं। आपने ही उर्दू पद्य की मम्म रूंगार के शेष से मुक्त किया और नबीन शैली की बुनियाद डाली। गद्य-साहित्य में भी आपने आलोचना और आलोचनात्मक चरित्र को जन्म दिया। बिगड़ी उर्दू साहित्य-इति को जितना हाजी ने सुधार और किसी लेखक ने नहीं। आप सर समय के साथ मुस्लिम जागृति के अन्वयात्ता हैं। गद्य पाठ में आपकी सदासी अग्रणी बड़ी धूम-धाम से मनायी गयी थी। मौसाना हाजी के सबसे प्रसिद्ध और युगान्तरकारी काव्य मुसहस का यह एबीरान उसी अग्रणी की अन्वयात्ता में निकाला गया है। शुरू में डाक्टर आबिदुल्लाह अहमद की सिखी हुई विश्वविद्यालय मुम्बई है, फिर मौसाना अहमद आबिदुल्लाह अहमद की रीताना अहमद हक अहमद अहमद अहमद और अहमद अहमद अहमद अहमद के अलग-अलग सख्त हुए परिचय हैं। मुस काव्य के अन्त में अहमद भी बिये गये हैं। इस काव्य में मौसाना हाजी ने मुस्लिम जाति के उत्थान और फलन का बड़ा ही विशय और स्फूर्तिमय खल किया है। मौसाना का चित्र और उनकी सिपि के मयूने भी बिये गये हैं। गिबानी पायी और बिल्द आक्यन। नीमो में इतनी मुन्दर पुस्तक देखकर आश्चर्य होता है। अहमदों ने यह पुस्तक छापकर उर्दू साहित्य का उपकार किया है।

नवम्बर १९३५

कॉमेस का इतिहास—लेखक का भी पश्चिमिचारमय्या।

जिस पुस्तक की महीनों से धूम थी वह प्रकाशित हो गयी और उसका पहला अंश निक भी गया। अब दूसरा अंश छप रहा है। हमें यह जानकर आश्चर्य हुआ है वह हिन्दी अनुवाद केवल दो महीनों में छप-छपाकर तैयार हो गया। श्री हरिभाऊ पाण्ड्याय के सिवा कोई दूसरा आत्मी इतनी जल्द और इतने अल्पे ढंग से यह काम कर सका इसमें संदेह है। साठ ही पृष्ठ पर अत्यन्त अच्छे का अनुवाद करना ही बरसों का काम था वह भी अब बरसों बरस लटक एही चाटी का जोर मयले। और यही पाण्ड्याय भी ने केवल दो महीनों में साठ काम समाप्त कर टाला। जैसे किया यह तो ही बाले। शायद बीच में कुछ काम बरते रहे हों। अनुवाद सरल चलती हुई बोध भाषा में किया गया है और उसकी सफरता पर हम उपाध्याय जी और उनके ते-विने सहकारियों को बधाई देते हैं। इतनी बड़ी और महत्वपूर्ण पुस्तक की विस्तृत आलोचना तो फिर कभी की जायगी आज तो हम उसकी रूप रखा और विषय-विषय

का सरसरी बिक्र करके ही अपने को संतुष्ट कर लेंगे। पुस्तक छ भागों में विभक्त की गयी है। पहले भाग में १८८२ से १९१५ तक सरसरी निमाह वाली गयी है। काँग्रेस के जन्म के पहले देश की क्या अवस्था थी इस ह्यम ने कुछ तरह जनमत को संगठित किया इसका सचिप्य बखन दिया गया है। काँग्रेस के प्रमज और हिन्दुस्तानी इतिपिया को मज्जाबलि देकर यह भाग समाप्त कर दिया गया है। दूसरे भाग में १९१५ से १९१९ तक का इतिहास है। लोकमान्य तिलक के होम कम सींग धीमती एनीबेसेंट के धाम इतिहास होमकम सींग उनकी गजबखनी और मटियू-बेन्सफोड के मुबारों का बिक्र मा गया है। रोसट कमेटी को रिपोर्ट हिन्दू-मुसलिम एकता का शुभ नतन और बसियानबाना बान के हत्याकाण्ड का समावेश भी हो गया है।

तीसरे भाग में १९२० से १९२८ तक का बृत्तान्त है। असहयोग का जन्म गांधी जी का जेल-दंड हिन्दू-मुसलिम र्गो नेहरू रिपोर्ट और उनके बाद के सत्वाग्रह संघाम बारडोस्ती खाति सगी प्रसंग मा गये हैं जिनकी धार अभी लोग के दिनों में छाया है। चौथे पाँचवें और छठे भाग में १९२९ से १९३५ तक की सारी बटनाएँ मा गयी हैं जिनके दोहराने की जरूरत नहीं। अन्त में एक परिशिष्ट है, जिसमें पाँची इबिन समझौते साम्प्रदायिक समझौते और महात्मा जी के महाग्रह के समय के पत्र व्यवहार की नकलें हो गयी हैं। पुस्तक बेहद सस्ती है, सस्ता साहित्य-मंडल के लिए भी।

तीन नाटक—लेखक श्री छेठ योकिन्द्रराज जी।

इस पुस्तक में छेठ जी के तीन नाटक हैं—कुरुज ह्य और प्रकाश। कुरुज में दो भाग हैं—पूर्वाह्न और उत्तराह्न। पूर्वाह्न में श्री रामचन्द्र जी की जीवन-कथा है, उत्तराह्न में श्रीकृष्ण के मयुरा से प्रत्याग करन और परूर के धान का बृत्तान्त लिखा गया है। यह दोनों कथाएँ इतनी बार लिखी जा चुकी हैं और इतने निम्न-निम्न दृष्टिकोणों से लिखीं गी र्यों नाटक के रूप में धाकर भी बिरोप धारण्य नहीं रखतीं। श्री मैजिस्तीरररर जी मुन्द न उरी कथा का प्रसंग लेकर अपुन काव्य रच डाला। उनकी सक्रमता का कारण कुछ हो उनसे योत्रिबनी बखन-बीची और कबिले टनिड है और कुछ उमायल से बिसकुन धसग एक गयी कथा। छेठ जी कथानक में कोर धनुडारन न का सके।

ह्य ऐतिहासिक नाटक है। इसमें राजा ह्यबडन का चरित्र दर्शाया गया है। सम्राट ह्य भारत के उन सम्राटों में है जिसका बीरता और सच्चरित्रता दोनों ही दृष्टियाँ से इतिहास में सर्वोच्च स्थान है। सत्तर न उरा धारश प्रजा-मानव सहिसा वतपारी पस्ता धम-नरायल लिगाबा है, जो तबका इतिहास के अनुबून है। ह्य का

वरिष्ठ एक महान दुजेबी है, जो कियन महान सांस्कृतिक और राजनीतिक उद्देश्य का स्वप्न देखता हुआ राजनीति को सभ्यता बनाता है स्वयं उसका सांस्कृतिक बनता है, पर भारत को एक राष्ट्र एक अक्षय्यी राज्य के धर्ममत्त देखन की उसकी धर्मसाधना निष्कल होती है और उसका सारा जीवन राजाओं के विरोध के समन करने में बीत जाता है। अन्तिम दूरय जिसम भाव्य युद्ध में अपने पुत्र धारिपसेन के प्रास-वचन की अनुमति मानी है और धारिपसेन को माता व पुत्र के प्रासों की मित्रा बना ही सम्मन्वयी है।

प्रकटा सामाजिक नाटक है और वरमान राजनीतिक और सामाजिक जीवन का यथावत जाला। वही स्वामी मिनिस्टर है रये सिवार कावर्गिन के मेम्बर है जो देश वल्लि और बन-सेवा का स्वान धरकर अपना उम्मु सीबा करते है विलम्बि दुष्टि व स्वाध और अरोनिष्ठा क सिवा और किली बीज का महक नहीं जो प्राओं पहर अपना मतमव माटने के लिए हकके सोचा करते है। अकेला एक ज्ञापील मुकक प्रकटा हलके बीज में धाकर अपनी स्पष्टवायिता से इन परकला को मकड़ी के जाने की धांति धिर-मिध कर शानता है। उद्यम उद्य का इतना बल है कि सारे मत्तमबी मोमी पक्ति समान में हलचल पड़ जाती है, मिनिस्टर और वीटर और मेम्बर सब के सब बहल उठते है और प्रकटा के विरुद्ध परकला रने करते है पर ठीक उस वक्त जब प्रकटा की गिरफ्तारी के समान हो गये है मानूम होता है कि बड़ उली राजा अजबसिंह का पुत्र है, जिन्होंने अइबक में पढ़कर उसके विरुद्ध अपनी रिमासत में विरोध फैलाने की रिपोर्ट पर हस्ताक्षर कर दिया था। हमे तीनों नाटकों में यह सबसे ज्यादा पसन्द आया। ऊँचे मिथिल कपास का इतना सफल निरुद्ध देखकर मन मुन्ब हो जाता है। प्रसंग में अनेक सामाजिक समस्यारों पर बड़े ही मुनके हुए डंग से विचार किया गया है और उन समस्यारों का बड़ी हवाज बताया गया है, जो भारत की परिस्थिति और राष्ट्र के हितों के अनुकूल है। 'स्पर्डी' सठ बी की पहली रचना है जो हमारी नजर से गुजरी। उसके बाद इस सामाजिक नाटक में ह्यारी यह बाण्डा मजबूत कर दी कि सामाजिक नाटक ही आपका लक्ष है।

अर्द्धी हुमिया

माहूर की इस विख्यात बहू पत्रिका का यह गद्य-व्याक बड़ी शान से निकला है। इसमें प्रताप के आकार के बीजीबीत पुष्ट लेख और बजनों साये और रंजीन चित्र है। इसे देखकर यह अनुमान किया जा सकता है कि अर्द्ध माहिर्य कियने बेव से उत्पत्ति कर रहा है। इसम अम्बीत गद्य-लेख और बीबीन कविताएँ है। यद्य-सैलां में घाट कस्तानिबी है बीज कुामे यम धालोबनात्मक मित्रता है और तीन माहिरियक लेख हैं। कहानियों में दो 'हुँठ' से अनुवादित हैं यद्यपि नाम नहीं दिया गया है। हज़रत बकार सम्बालबी म

साहित्य मोठे सामोखे जीवन की सुन्दर प्रम-रूपा है, यद्यपि कथानक में कोई मनीनता नहीं। इमों में दो इम्प्रसासनास 'कमर' का 'सोसायटी के इन्वारेणर इन्सेन के Pillars of Society' की ऐली का मनोरंजक सामाजिक चित्रण है, जिससे हमारी बतमान सोसायटी की नैतिक और आर्थिक वसा पर बहुत अच्छा प्रकाश पड़ता है। धानो जनात्मक निबन्धों में हजरत केंडी का 'तारीस उर्दू का मुतामा और हजरत रातिव का 'उर्दू साहित्य पर सामिक का असर बड़े विचारपूख है। रातिव साहब ने त्रितीये योम्सा से धाने विषय का प्रतिपादन किया है उससे चिहित होता है कि उर्दू में धानोचना का आरंभ फिदना ठेका सठ गया है। मिर्जा अलीमबेय अगठार्ई का 'बीबी का लठ मियाँ के नाम' हास्परसपूख लेखों में सबसे अच्छा है। कबिताओं में हजरत हरीज आर्तवरी का 'रतन पीठ इन्जीठ र्मा का 'मूस धायी री नयी सवप्रिय रीमी की रचनाए है। बागी ससार' और 'शिकवा भी सुन्दर है। और भी कई कविताए बहुत अच्छी है। इस ग्रंथ का मूस्य सवा खपा है।

THE NEW OUTLOOK

यह ग्रंथकी का मासिक-पत्र अहमदाबाद से श्री गोविन्दलाल डी शाह की एडीटरी में निकलता है। सम्पादक-मंडल में मिस श्यामकुमारी मेहक मिर्जा अहमद मोह्युब और कई अन्य प्रतिष्ठित नाम हैं। जनवरी का यह ग्रंथ विद्योपांक के रूप में निकला है, जिसमें कई अच्छे-अच्छे विचारपूख लेखों का संकलन है। इस पत्र की विशेषता यह है कि इसमें अन्य प्रवेशों के लेख भी दिये जाते हैं और उमे सवप्रिय बनाने की चेष्टा की जाती है। अधिकतर उन्हीं समस्याओं पर लेख लिखे जाते हैं जिन पर आरकस मनाज में बहुत मिला-जड़ा जा रहा है।

फरवरी १९३६

हुलसी के चार दृख—नेजक भी सधगुफ्तरख अवस्पी।

सकत पुन्ठक के निखाने का सहरय उसके लेखक के शार्णों में हो इस प्रकार है —

'यह बात हिन्दी के सभी प्रमियों को सन्कती है कि हिन्दी के मजदूर कवि गोस्वामी तुमसीशान की की कृतिया की पूख और उचित समीक्षा सवा उनमे पठन पाठन को उचित व्यवस्था अमा नहीं हुई है। कबिता प्रमियों का ध्यान अभी तक 'रामचरित-मानस' तक ही सीमित रहा है। 'मानस' को सँकड़ों टीकारें निकली हैं और निकल रही है। उनकी समीक्षाएँ भी विज्ञानों मे की हैं। अम्याम्य भाषाओं में जो उमापण को समीक्षाएँ देवने में आती हैं, परन्तु यह सीमाव्य गोस्वामी की के अन्य ग्रंथों को प्राप्त नहीं हो सवा। 'विमयपत्रिका' की और कुछ भाव सोगों का ध्यान

गया है। उसकी एक-दो धामोचनाएँ और टीकाएँ ब्रह्मी लिखी हैं। 'कवितारसी' को भी एक-दो टीकाएँ ब्रह्मी लिखी हैं परन्तु उस पर कोई धामोचना-ग्रन्थ रचने में नहीं गया। कुछकर लेखों में तो कभी-कभी गोस्वामी सबधी समीक्षाएँ लिखी भी देती हैं परन्तु पुस्तक रूप में इस विधा में कोई प्रयास नहीं किया गया। मुझे इस प्रकार का अनुभव है कि हिन्दी की ब्रह्मी मासिक पत्रिकाओं के कुछ नये सम्पादक भी गोस्वामी तुमसीदास की तथा कवि-सम्राट् मूराराम जी की धामोचनाओं की उत्पत्ति विस्मयजनक समझते हैं।

'गोस्वामी तुमसीदास के सम्बन्ध में सबसे ब्रह्मा और सबसे मौखिक ग्रन्थ पंडित रामचन्द्र शुक्ल का ही है। उनकी ममीसा लिखी एक ग्रन्थ पर धारित न होकर सभी ग्रन्थों पर धारित है। फिर भी 'मासिक' पर ही उस धामोचना का बराबर अधिक है। विरचनिकाव्यों में और कालेजा में हिन्दी की उत्तम लिखा की व्यवस्था हो जाने के कारण गोस्वामी तुमसीदास के समस्त ग्रन्थों की पुख्क और विश्व धामोचनाएँ लिखानी पड़नी चाहिए भी परन्तु कारी क प्रोफेसरों को छोड़कर अन्य स्वामी के प्रोफेसरों का ध्यान भी इस धोर नहीं गया। कुछ लोगों में तो अपनी लेखनी का प्रयोग करने में निकट संकोच है।

'गोस्वामी तुमसीदास के सम्बन्ध में बापों की जानकारी अधिक बढ़े और उनकी कृतियों के पठन-पाठन में सहायता मिले इसी लाभ को ध्यान में रखकर प्रस्तुत पुस्तको को लिखा गया है। पशुमी पुस्तक में गोस्वामी तुमसीदास का एक उचित जीवन-वृत्त दिया गया है। साथ ही साथ कल्प-कला और गोस्वामी तुमसीदास को की निजी प्रणाली पर एक सच्चा प्रबन्ध भी दिया गया है। इसके अन्तर्गत गोस्वामी तुमसीदास की चार छोटी कृतियों पर समीक्षाएँ हैं। उन कृतियों के नाम हैं—'रामनना गृह्य' 'वर्ग रामानन्द' 'पारवी मंगल' तथा 'जानकी मंगल'। इन धामोचनाओं के प्रबंध में बहुत ही और जानन शोभ्य बर्ण सम्मिलित कर भी गयी है। दूसरी पुस्तक में उन्हीं बापों पुस्तको के उचित सम्बन्ध के लिए मूल पाठ के साथ-साथ सम्बन्ध तथा टिप्पणियाँ देकर पाठ समझाया गया है। स्वान-स्वल्प पर तुमना करने के लिए बाहर के पदों को उद्धृत किया गया है। धर्मकारों का भी कहीं-कहीं पर निरंतर कर दिया गया है।

प्रसन्नता की बात है कि लैटिन्क महोदय प्रस्तुत पुस्तक के सभी उद्देश्यों की पूर्ति संकल्पना के साथ कर सके हैं। लासकर हिन्दी के उन्हे साहित्य का मर्म करनेवाले विचारविमों से तो हमारा विशेष अनुरोध है कि वे इस पुस्तक का लुभ सम्पदन करें। जो या सबसाधारण के काम की बहू है ही। इसी प्रकार यदि अन्य विद्वान प्राचीन साहित्यों पर प्रकाश डालने का प्रयत्न करें तो हमारा पूख विश्वास है कि लक्ष्युक साहित्यिकों में प्राचीन साहित्यों के प्रति अनिश्चि बढ़े और उनकी बहुत कुछ अतिमता दूर हो पाय।

मार्च १९३६

द्वयाह कहानियों—सेलक की चतुरवस्त ।

मुंठी चतुरवस्त बच्चों की कहानियाँ जिसने में कुरान है । इस संग्रह में प्रायः प्रत्येक कहानी ही, बड़ी ही मनोरंजक है । बच्चों में 'धर्म' भावना बड़ी प्रबल होती है और साहित्यिकता से विशेष रुचि । इन सभी कहानियों में ये दोनों गुण मौजूद हैं । बीच-बीच में बच्चों का चरित्र-निर्माण करनेवासी बातें भी घाली गयी हैं मगर वह इस तरह प्राप्ती है कि कहानी का रंग बन गयी है । बालकों के लिए ये कहानियाँ मनोरंजक भी हैं और पाठ्यप्रद भी । भाषा बहुत ही साफ़ और मँजी हुई ।

समाज की बात—सेलक की धार्मिककुमार ।

धार्मिककुमार भी ने समाज का जो चित्र खींचने की चेष्टा की है, उसमें वह सफल नहीं हुए । न कोई उबीच चरित्र है, न रोचक कथा और न हृदय को स्पष्ट करने वाले भाव । कथा तो इतनी उमरग ययी है कि किसी को समझने के लिए प्रयास करना पड़ता है । इतने चरित्रों के जाने की कोई जरूरत न थी । ऐसा बात पड़ता है, सेलक ने बौद्ध-पतिवार्तों का कृतम एक उपन्यास के रूप में संग्रह कर दिया है । उपन्यास में हर एक चरित्र अपना एक व्यक्तित्व रखता है और उसी के विकास पर कथा चलती है । पाठक को उसके विकास में उत्कंठा होती है । वह देखता है, सेलक में धर्ममूर्तियों को किसी पहचान है, वह किन स्थलों पर अपने रचना-कौशल या भासिक धारोचनाओं या मनोवैज्ञानिक रहस्यों से उसे मुग्ध करता है । उपन्यास में अगर कोई घटना ही हो या उसे भी इस तरह रचना चाहिए कि उसका वैचित्र्य पाठक को खींचे । यह उपन्यास तो केवल वह धामनी देता है, जिस पर किसी उपन्यास की रूपना की जा सकती है ।

सोहाग बिन्धी—सेलक की मनोरंजक विवेदी ।

इस कुछ दिनों से एककी माटकों की घोर रुचि बड़ रही है । विवेदी का इस रंग की पूर्ति करनेवालों में प्रमुख स्थान है । हमने इन खर्हों पाठकों को बड़े ही रुच से पढ़ा और हमें जो सबसे अधिक रुचा वह सर्वम्य मनोरंजक है, जो आपने 'ग' रवीन्द्रनाथ ठाकुर की किसी रचना के आधार पर लिखा है । श्रेय पाँचों माटकों में बार दो एम है जिसमें कौरी मातृकता है और एक शर्मा की कुछ व्यंग्यात्मक है । जिसमें एक शिथिल मुबती के मनोभावों की धारोचना की गयी है । 'सोहाग की बिन्धी में काली बाबू की स्त्री धर्मसेपन से दुगी रहती है और अन्त मौसेरे देवर को देखकर उसी की मार में पुत-बुमकर मर जाती है । धर्मसेपन को हीया बनाकर जो स्त्री एक मुबक को बहनी बार देखकर और उसकी मजेनार बानें मुलकर मरने लगती है, उतना मर जाना ही घण्टा । कुछ माटक भी ह्या तरह की एक मुबती का चित्र है जो एक दुबक के प्रेम में चलती है और धार्मिक व्याकुल होकर एक बार देखने का जाती है । तीसरे

माटक में उर्मिला अपने एक पुराने प्रेमी को टूटकर एक जमींदार से ब्याह कर लेती है। प्रेमी साहब उसे विज्ञ में प्यार भी करते रहते हैं और उससे बसते भी रहते हैं। उसकी बीमारी की खबर पाकर भी वह अपने लिस को रोकते हैं और जब उसके घर पहुँचत है तो वह मर चुकती है। शर्मा जी' मज की बीज है, जिसमें एक युवती के मनोस्वभ की पहचान में पहुँचन का सफल प्रयास है। पाँचवाँ 'दूसरा उपाम ही क्या था' एक मुधम्मा-सा है, न यही पता चलता है कि स्त्री क्या चाहती है, न यही कि पुरुष क्या चाहता है। चरित्रों में पहले माटकमाला महाराज बड़ा मौलिक और सतुपय बन गया है। काठ हिन्दी भी ऐसे चरित्र के सूत्र में ब्याबा उबर होते। माटकों में वा किसी भी रचना में लेखक का साहचर्या स्पष्ट होता चाहिए। पाठक को धँसी गली में से जाकर छोड़ देना पाठकों को ज्ञम न डाल देना है।

मधुबासा—रचयिता की रचन।

मह कवि रचन के गीतों और कविताओं का दुखद संझ है जो छोट घाकार में बड़ी सज-सज से जपा है। रचन में अपना ब्यक्तिरथ है, अपनी संसी है, अपने भाव है और अपनी जिज्ञासकी है। मधु, मधुबासा सकी भावि मानगारें हिन्दी में प्रतीती है। यहाँ तो सोमरस और मय का प्राबाल्य वा मयर सोमरस का वैदिक काल में जाहे जो महत्व रहा हो और मंग गौना चरस भावि का सानु और रसिक-मरबली में जाहे मात्र भी कितना ही रिवाज हो मयर मरो की कल्पना हमारी कविता के क्षेत्र में नहीं बुलने पायी। हमारी मध्यकाल की कविता में बंसी और कुलावन की पुकार है और नयी कविता में बीछा और मासा और बुन-वीप की कल्पना का प्राबाल्य। वह सकार की भक्ति की घड़ निराकार की उपासना है और इसलिये आत्मानुमृतिपूख और प्रणतमुंसी है। रचन की की कविता में भी यही मानगारें है मयर कल्पना हिन्दी के लिए सबधा घझूटी है और यह जय उनको है कि उन्होंने अरसी का यह ठरैमस यहाँ ऐसा जपागा है कि उममे बेपानापन बिलकुल नहीं रहा। और चौक हिन्दी में भी बुलबुल और ऊपस और सकी और सावर के रसिक मीजब है और कवरत से मीजब है हिन्दी में यह बीज पाकर उगाने उसका ब्यावत किना। अरसी और उरू के कविनों ने ही सकी और सुराही को आध्यात्म की बीज बना डाला है। जनक लिए शराव बीजी आदेस है, या भक्ति या ज्ञान। उनका मसा वह बिज्जता है, जो भक्ति की पूर्यता है। पिजरे में उँसी हुई बुलबुल का बार में बमाने हुए बोंसमे की बार में सङपना मनुष्य के जीवन से इतना मिमता है कि हम उसके बुल म शरीक होने के लिए मजबूर है। शराव की कल्पना भी यहाँ इस दुःख भरे संसार से विरक्ति की बूचक है, यहाँ आत्मिक कट्टरता और संकीर्यता से मित्रोह का भी इशारा करती है। वैखण मधु भी क्या कहता है—

हमने छोड़ी कर की माता
 पोथी-पत्रा मू पर झासा
 भँवर-मसजि के बग्गी-गूह
 को तोड़ लिया कर में प्यासा ।
 धी बुनिया को धाबादी का
 संवेष्ट सुमाने हम धाये ।

हमें धारा है बचन बी की मधुबाला कहीं निरुशाबाध की राख न
 पिसाये ?

अप्रैल १९३६

कस्तक—रचयिता की हृदयनादमय पाठ्य 'हृदय' ।

यह हृदयेश बी की पुनी हुई कविताओं का सचित्र संग्रह है । उनमें माधुर्य है
 प्रसाद है, कससा है, तन्प है और कहीं-कहीं ज्ञान्ति भी है । जैसा हृदयेश बी ने अपनी
 भूमिका म लिखा है कविता पर या साहित्य के किसी दूसरे ढंग पर भी अपने समय
 की धारा पडे बिना नहीं रह सकती । हम बिन सामाजिक और राजनीतिक दशाओं में
 पडे हुए हैं उनमें कससा और कस्तक के मन्त्रों की प्रधानता ही हो सकती है, मगर हम
 सुकवि कर्णों से यह धारा भी रकते हैं कि वह केवल मसिया न गायें हालांकि जीवन में
 पसिमे का स्वाग भी है, बल्कि जीवन में स्फूर्ति का संचार भी करें । अथर कवि की
 रचना सुनकर 'बेवना बल दे या 'भाशाई' बाहल हो जायें तो फिर इन पाठकों से
 लड़ा किस बल से जाय । इस 'कस्तक' के प्रवाह में 'शिशु' की आमाशम ऋजक देलकर
 दिल को धारस मिलता है—

मधुर यौवन की लघु तस्वीर,
 गवस धाराओं के मधुपास ।
 भावनाओं के मृदु संचार,
 प्रम क कल्पित नव उच्छ्वास ।

पुरतक मे पाँच मनाहर रंजीत कवित्वपूख चित्र है, कई हाइड्रोन चित्र । पुस्तक
 की सट कैलाशपति बी सिद्धानिया को समर्पित की गयी है ।

पशुक्षिर्यो—लेखक बी पुष्पीनाथ शर्मा ।

यह शर्मा की बी बारह छोटी कहानियों का संग्रह है । सीधी-भादी मनारंजक
 कहानियाँ हैं, जिनमें प्रतिभा तो कम है पर कसम मँवा हुआ है । लेखक ने बिबिध
 रसाँ की बीजे लिखी है, पर जनता प्रयाग रख करखा है । 'भिन्नाटी का प्रम 'दुग
 की बन्दर 'रज्जो का सौश 'र्याग और ममता' धारि गन्तों में करखा के मिन-

मित्र कर्णों की भ्रमक मिलती है। 'गुपीरा का भ्रम' रहस्यपूर्ण है। हृत्प-रत्न की कोई कहानी नहीं। माधुम नहीं शर्मा जी ने इस प्रीति की कर्णों व्यवहारा की।

मगधवृगीता मञ्जुम या नसीमे इरफो—रविता भी विरोध प्रसाध मुनीवर।

मुनीवर साहब उरू के सिद्धहस्त कवि हैं। आपने धार्मिकीय उपायध और विमय-निका का भी पयबद्ध धनुवार किया है। आसोध्य पन्थ मगधवृगीता का उरू पयबद्ध धनुवार है। मगधवृगीता के कई मञ्जुम तर्जुमे निकल चुके हैं। धमी नवर साहब सीहामवी का धनुवार हाल में प्रकाशित हो चुका है, पर नीता हाल और धम्माल का धवार सावर है और उसे जितना ही मधो उतने ही रत्न निकलते हैं। इस धनुवार की कुबी यह है कि मुस भाषों की पूरी तरह रक्षा की पयी है। डा नगबालदाध की के शब्दों में आपने रसोको का मतलब कुबी से धरा किया है और उसके साथ ही शान्ती का धमूत भी उतम भर दिया है। धर्मन के मनोभावो का कितना ममस्पर्शी विनय है—

मैदान न हाल है मेरा रीर
उकड़े जाते हैं कुध वसुर रीर।
फोड़ा सा विगर में पक रखा है,
दिल बार लच्छ बटक रखा है।
यह इन्से धमीयो धकरना क्या
धपने जो हाँ उमका मारना क्या।
जँबता नहीं धन मिगाह न कुध
सम्मत नहीं इस मुगाह में कुध।
मतलब तीरो लकड़ न क्या
विम जायया उतहे बँध से क्या ?
राहत की नहीं मुझे लमधा
हूँ जाने शाही का मैं न बीमा।

'विशाल भारत' का राष्ट्रीय धंक

सहरोपी 'विशाल भारत' से बीशाह का धंक राष्ट्रीय धंक के रूप में निकाला है। कई साल द्विपी पबिकाधों के विरोधांक बूत-बाम से निकले थे। इधर कुछ रिपों से सिधिमता धा कयी है। जो विरोधांक निकलते भी हैं वह भी कम से कम धाध करके विरोधांक निकलने का रीरव माध लेने के लिए। 'विशाल भारत' का यह धंक भी धाकार-धकार और सामधी के एतवार से धाधारल धंको से कुछ ही बढकर है। फिर भी राष्ट्रीय धंक निकारकर उमने माधिक पबिकाधों की साध तो रल भी। सम्मान का

पद बाबू राजेन्द्रप्रसाद के 'कॉलेज के नियमों का परिवर्तन' को रखा गया है जो बहुत मुनासिब है। इस विषय पर राजेन्द्र बाबू से ज्यादा प्रभावित लेखक और कौन हो सकता था। दूसरा छोटा-सा लेख बाबू रामानन्द चट्टोपाध्याय के फिरी लेख का अनुवाद है। तीसरा लेख डा. रबीन्द्रनाथ के एक बड़ ही विचार और पाण्डित्य से भर हुए लेख का उल्था है जो बहुत विन हुए माइन रिश्चु में निकला था। 'हमारा सेनापति में बाबू शबमोहन वर्मा का छोटा-सा मगर प्रभावपूख विन लींचा है। 'राष्ट्रीय चेतना' और 'बम प्रचारक' भी अच्छा लेख है। 'कॉलेज के जन्मदाता ह्युम' 'हमारे राष्ट्रीय सिद्धक' और 'हमारे राष्ट्रीय कर्म' आदि लेख भी पढ़ने योग्य हैं। एक लेख में बाबू सम्पूर्णानन्द ने पाँचीबाद और सोशलिज्म की तुलना की है। प्रायः सभी लेखों का बयन सुनि और उपयोगिता की दृष्टि से किया गया है।

'प्रताप' का कॉलेज अंक

सहबोबी 'प्रताप' ने यह कॉलेज अंक निकाल कर अपनी सजगता और समीचता का परिचय दिया है। ऐसे अवसरों पर भी हमारे दैनिक और साप्ताहिक पत्र उगासीन एते हैं यह हमारी मुबारिकी के सिवाय और क्या है। प्रताप के इस अंक का पहला लेख 'राष्ट्रपति जवाहरलाल' है जिसमें पं. बालकृष्ण शर्मा ने पण्डित जवाहरलाल नेहरू का चरित्र विस्तार के साथ और प्रम और मजा से भर हुए रंग में लिखा है। और प. जवाहरलाल का चरित्र निम्नले पन्नेह बपों का सिहाबमोकन है मगर यह सिहाबमोकन ही नहीं अडाबलि है जिसमें बहुत कुछ आत्मकथात्मक और इनलिए बड़ा ही रोचक और प्रभावपूख है। 'हामी की फाँसी' स्व. गणेशशंकर विद्यार्थी की रची हुई एक हस्तरस की मजदार कहानी है जिससे पता चलता है कि विद्यार्थी भी इन रंग में झुलत थे। बाबू सम्पूर्णानन्द का 'कॉलेज और साम्राज्यशाही' भी हृष्यरस पासीबाद की का 'संयुक्त प्रान्त की किमान समस्या' आदि लेख भी पढ़ने योग्य हैं लेकिन इन अंक में श्री नबीन बी का 'बन-गमन' बिलकुल बनीका मामूम होता है। इमे तो किनी साहित्यिक साविक पत्रिका म छपना चाहिए था।

मुकपूष्ठ पर प. जवाहरलाल जी का रंभीन चित्र है। और राष्ट्र-नेताओं के चित्र भी हैं लेकिन दम-दाँध अच्छे काटून हो जाते तो रंग और बोधा हो जात।

'प्रभात' का बेकारी अंक

हमने कहीं पढ़ा था कि जब मे मरी का जोर हुआ है इमनेदर में पुस्तकों की बिचरी बड़ मयी है। इसका कारण शायद यही ही मजजा है कि व्यापारिया को हाप पर हाप धरे बैठने की प्रपेक्षा मनोरञ्जक पुस्तकों पढने का महगमा ज्यादा पमन्द है। वहाँ की मरी का बय यह है कि जब पहले का-सा धन्वाधुन मजत नहीं होता। उनके

विनायक हिन्दुस्तान की संघी का घब यह है कि यहाँ रोटियों का ठिकाना भी नहीं है। फिर किताबें कौन पढ़ें। लामी पेट तो भगवत् भजन भी नहीं होता साहित्योपासना या दूर की बात है। फिर भी बनिया के सहयोगी प्रभाव ने बेकारी घंके' निकाल कर साहस का नाम दिया है। पहला भव है 'बेकारी की विप्लव समस्या जिसमें बेकारी के कारखानों की मीमांसा की गयी है और अपना इसान्न बताया गया है। दूसरा भव भी शीतलासहस्र की का 'भारत में बेकारी है। आपका यह खयाल ठीक है कि 'जब तक धार्मिक शासन की धार्मिक नीति में कुछ स्थिरता न हो किसी धोर की किसी प्रकार की धार्मिक उत्पत्ति की सम्भावना नहीं है। श्री परशुराम का 'बकार साहित्यिक' की बाबा राववहाल का बेकारी की भगवतीचरण बर्मा का बेकारी घबका प्रक्रमणयता की इयत्तकर दुबे का सिचिठों की बेकारी पर एक दृष्टि' धारि सेठ भी विचार से लिखे गये हैं। श्री इन्दुप्रमोहन का सिचिठों की बेकारी और उसे दूर करने के उपाय' सारभाषित सेठ है जिसमें इस विषय पर हर एक पहलू से विचार किया गया है। इनके प्रतिरिक्त और भी अनेक लख कविताएँ और कहानियाँ हैं जिनसे यह घंके संग्रहणीय बन गया है।

मई १९३६

बाबिदखली शाह—नेरक भी शीतलासहस्र और भी शीतलसहाय।

लखनऊ के रोगीम नवान बाबिदखली शाह जैसा विनासी राजा बहुत कम हुआ होता। वे तो अन्नम राज्य के स्वामी लकिन धाने-बनाने और नाचने और विषम-भोग के सिवा उन्हें रियासत से कोई महत्त्व न था। उनके विनासमय जीवन की संकष्टों कबाएँ घात भी बच्चे-बच्चे की उबाण पर है। नृत्य और संगीत और अभिनय में उनका सानी न था कवि भी अन्धे से मयर हम कलाघातों को सारलोभति का साधन न बनाकर उन्होंने इन्हें काम-क्रीड़ा का साधन बनाया और उसमें ऐसे मित्त हुए कि राज्य की राया और धंधेबी सरकार क लैबी होकर कमरुता में मरे। इस पुस्तक में लखी रगौले बाबिदखली शाह के जीवन की कुछ मनोरंजक कबाएँ ली गयी हैं। उनसे मातुम हीठा है कि बाबरशाह के महल में एक ली पञ्चीस बगमें ली जिनमें साठ के ली नाम दिये गये हैं। इनमें तुर्की धर्मोनिमा प्रेम इन्की तक की युवतियाँ ली थी। ली लीनी-महुरी लपवटी हुई और बाबरशाह की उस पर निगाह पड़ी कि वह महल में बाबिदख कर ली गयी। बाबरशाह के मुसाहब अफिक्तर यलैये लखलिय और मीरासी ये ली प्रवा ली लोनों हाथों से मूठे ये। और बाबरशाह का अणन एंस से नाम था। सारे राज्य का लन निब-निबकर लखनऊ भाटा था और एधासी में लहता था। उसक साथ ही बाबरशाह माहव मिय्याबासी भी परमे धिरे के ल। 'परियों के सप्राट में मोंट' से उनके प्रेतमय का अन्ध्या परिचय

मिलता है। पुस्तक बड़ी रोचक है और सजीव भाषा में लिखी गयी है। ऊपर बाबिनप्रसो साहू का एक चित्र भी है।

भारत का कहानी-साहित्य—संग्रहकर्ता व सम्पादक डा० धनीराम जी।

भारतीय साहित्यों के संगठन और प्रचार का जो काम भारतीय साहित्य परिषद् ने उठाया है, उसका यह शुभ फल है कि भारत के प्रांतीय साहित्यों में लोगो की रुचि हो गयी है और परस्पर आदान-प्रदान की गति तेज हो गयी है। जो रचनाएँ अपने प्रांतीय भाषा में केवल प्रांत की चारदीवारी में बन्द रहतीं वह हिन्दी में आकर राष्ट्र की सम्पत्ति होतीं आ रही हैं। दक्षिण भाषाओं की कई कहानियाँ जो इस में निकलीं मुद्रण की उड़ू मराठी आदि में अनुबाधित हुईं। यह पुस्तक भी उसी साहित्यिक प्रेरणा का फल है। इसमें हिन्दी बंधना मराठी मुद्रण की उड़ू कनाडी तेलगु तामिल की इस कहानियाँ संगृहीत हैं। गल्प-लेखको को सुधी कइ रही है कि इसमें बहुत स नाम छूट गये हैं। इसका कारण यही हाया कि पुस्तक को इससे बधा करना संग्रहकर्ता को मंजूर न था। इन को ही पत्रों में इससे धाध्या मंग्र होना मुश्किल था। हाँ उड़ू कहानियों के विषय में हम कइ सकते हैं कि गुनाव उतना सुन्दर नहीं हुआ। फिर भी पुस्तक संग्रह करने योग्य है।

मठयाली मीरा—लेखक श्री तुलसीराम शर्मा 'विमल'।

इस पुस्तक में मीरा का जीवन चरित्र संभाषण के रूप में यानाँ क साथ मिला गया है। मानुष प्राणियों के लिए धाध्या भीठ है। श्री शान्तिबाई रानीबाना ने इनको एक हजार प्रतिभाँ साहित्यागुराणियाँ को मुद्रण देने की प्रसंसीय उरागता की है। मीरा का जो चरित्र किशोरियों के रूप में मौजूद है, उसी का धाध्या मिला गया है। काय विनेत की ने प्रकृति का आवरण हटा कर मध्याम पर कुछ प्रकाश डाला जाता। यह सब है कि मीरा का चरित्र रोमांस है इतना सुन्दर कि सभी उससे मुग्ध हो जाते हैं। किन्ती न मीरा को मध्याम रूप में मान की बोध्या नहीं की लेकिन कभी न कभी ही यह पान विषी का करना ही पडेया।

सदाचार, शिष्टाचार और स्वास्थ्य—रचयिता श्री भाणियाण जैन।

कौन नहीं चाहता कि उसके लड़कों का चरित्र और स्वास्थ्य बलवान हो। इन दादी-नी पुस्तक में चरित्र-शास्त्रमी विषयों पर ध्यान-धीने प्रथम मरत भाषा में लिखे गये हैं मरत पुस्तक जिस रीती में लिखी गयी है उसमें बहु भाषाओं के स्वाध्याय की भीड़ नहीं रही। ऐसे बूढ़ विषय उम्ह रचिकर नहीं हो गनते। हाँ मुद्रकों के लिए पुस्तक बड़ी उपयोगी है।

मीरा पदावली—सम्पादिना भीमती विष्णुकुमारी श्रीबास्वत 'मंजु' ।

हिन्दी के भक्त कवियों में पदों के लालित्य और तस्मीनता में मीरा का स्थान बहुत ऊँचा है । उनके रहस्यमय और रोमानी जीवन ने भी उनके पदों को और धाकपक बना दिया है । उन पदों का यह सटीक और प्रामाणिक सम्करण साहित्य-प्रेमियों के लिए घाबर की चीज है । मीरा के नियम में धब तक जो लोज हो चुकी है, सम्पादिका ने उनको पढ़ा है और बिबेक-बुद्धि से काप लेकर इतिहास का विवरणियों से पुस्क करने की चेष्टा की है । हम यह नहीं मान सकते कि मीरा जसी विचारशील स्त्री भक्ति में अपने को इतना भूम गयी होगी कि पति से उसे विरक्ति ही गयी होगी और बैमन्स्य इतना बढ़ा होगा कि पति ने उसे बहर का प्यासा पीने को भेजा होगा और वह पी गयी होगी । जीवन का सामन्स्य तो यह है कि मन की सभी कृतियाँ अपने-अपने स्थान पर रहें । किसी ईर्षी-बेवता की भक्ति हो जाने का यह भासव नहीं कि हम अपने पारि वारिक कठम्य भूम जायें । यह भक्ति नहीं पायनपन है सम्पादिका जी न सिखा है—

'जान पढ़ता है कि यह वंशकला साम्प्रदायिकता के रंग की बिरिये प्रधानता हेने के लिए गढ़ी गयी है । धबका ये सब बटनाएँ नंबर मोबरज (मीरा के पति) की मृत्यु के बाद मटित हुई हों सम्भव है मीरा के साथ भी पति के घनाव में उनके कुटुम्बियों ने मनमाना भत्याचार किया हो ।

पुस्तक में मीरानाई की बीवनी उनकी कविता और मापा और मीरा की कविता में व्यवहृत शर्गों की बिबेचना की गयी है । इस सपह म कुल वा मी एक पद है । फुनोट में शब्दाव दिये गये हैं । इस तरह यह पुस्तक साहित्य के विद्याधियों के लिए बहुत उपयोमी हो गयी है ।

प्रेम वीथिका—सम्पादक रायबहादुर लाला नीलाराम ।

यह बुन्देलखंडी भाषा का एक ठीन वी साभ का पुराना ग्रन्थ है । रचयिता है 'महर धनन्ध । नियम है इच्छनीमा । लाला लीलाराम जी ने इन पुरान ग्रन्थ का पाठ शूद करके प्रकाशित कराया है । इस उध में घापका यह साहित्यानुदाग बेनकर हम बचित रह जाते हैं । ग्रन्थ म बिबिय लन्दा का प्रयोग हुआ है और कविता म रम भी है और लोच भी ।

साम्प्रदाय का धिरुल

इस पुस्तक में श्री सम्पूर्णलन्ध भाषाव्य नरेन्द्रदेव जी वा श्रीप्रकाश बन्धु जय प्रकाशलारामध भाषि के साम्प्रदायी विचारों का संग्रह किया गया है । कुछ नियम यह है—'साम्प्रदायी समाज की कुछ बिरियेठार्द' 'स्वाधीनता संग्राम और समाजवादी क्रियम वा वास्तविक स्वरूप' 'क्या बड़ी-बड़ी मशीना की जकरत नहीं है' धारि । साम्प्रदा

भाष्यकार का मुख्य विषय है और हमें यह मालूम होने लगा है कि देश का उद्धार किसी न किसी रूप में समाजवाद के हाथों होगा। हाँ इतना कहना आवश्यक है, जैसा पंडित बवाहरनाथ जी ने बार-बार कहा है, कि हमारे सामने वर्तमान समस्या देश की स्वाधीनता है। जब तक साम्राज्यवाद का विध्वंस न होगा साम्यवाद की गाड़ी घाने न चलेगी। पुस्तक सामयिक है।

सहिरा —नेसाक की तेजनारायण काक।

श्री तेजनारायण जी हिन्दी के कुशल गद्य-काव्य लेखक हैं। गद्य-काव्य की विशेषता है उसकी कोमलता उसके भावों की गहराई और मनोरहस्यों के ध्वनि देने की शक्ति। आपके गद्य-काव्यों में ये सभी गुण मौजूद हैं। इस संघर्ष की भूमिका का राम प्रसार त्रिपाठी ने लिखा है और 'हिन्दी-साहित्य में गद्य-काव्य' के नाम से तेजनारायण जी ने हिन्दी गद्य-काव्यों का आलोचनात्मक इतिहास लिखा है, जिससे मालूम होता है कि हिन्दी में साहित्य का यह अंग कितना सम्पन्न है। हमें उससे यह भी पता चला कि श्री रामप्रसाद जी ने और स्वयं तेजनारायण जी ने अपने भावों को गद्य में लिखने के लिए जोर मारा मगर असफल रहे। इससे तो यही मालूम होता है कि जिनमें कवित्व शक्ति का अभाव है, वे लिखस होकर गद्य-गीत लिखकर चित्त हान्त कर बैठते हैं। हमारा क्यात है, यद्यपि हमें इस विषय में कुछ कहने का अधिकार नहीं कि गद्य-गीत स्वतन्त्र वस्तु है और कवि जो कुछ पद्यों में नहीं कह पाता वह गद्य-गीतों में कहता है, नहीं श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर जैसे महान कवि ने गद्य-गीत क्यों लिखे होते। दोनों में अन्तर है। कविता भावना प्रधान रचना है, गद्य-गीत अनुभूति-अवलम्ब। हम गद्य-गीत में केवल भावुकता पाकर अनुप्लव नहीं होते। स्वयं तेजनारायण जी की रचनाओं में अनुभूतियों की कमी नहीं है, हालाँकि अगर भावुकता की मात्रा कुछ कम और अनुभूतियों की मात्रा कुछ ज्यादा होती तो इनका मूल्य और बढ़ जाता।

जून १९३६

श्रद्धाजलिया

मुन्शी गोरखप्रसाद 'इबरत'

स्वर्गीय मुंशी गोरखप्रसाद 'इबरत' छिद्रहस्त कवि थे। यद्यपि उनका पेशा बकामत था और वह मोरलपुर नगर के आस नकीनों में थे लेकिन कानूनी व्यस्तताओं के बीच भी अपनी कविता के अभ्यास के लिए कुछ न कुछ समय निकाल लिया करते थे। क्वालि की सामग्री न थी इसलिए बराबर अपनी कविता के प्रकाशन से बचते रहे। उनकी कविता का रंग मोलाता भावार्थ और हास्य से मिलता हुआ है। शैली सहज और सुमधुर हुई भाव सरल और बनाबट से जाती। शुरू में उनकी कुछ कविताएँ 'तूति ए द्वि' और अन्त में प्रकाशित हुई थीं और बहुत पसन्द की गयी थीं लेकिन जबानी के साथ प्रारम्भ-प्रदलन की कामना भी जाती रही। जो कुछ मिलते थे वह सिद्ध अपने रिक्तबहुताव और मानसिक सुप्ति के लिए मिलते थे। किसी उस्ताद के हाथिर् न ब इसी बजह से कविता में कहीं-कहीं त्रुटियाँ दिखायी पड़ती हैं। उनके दीवान में कुछ मुसद्द एक मसनवी कुछ फुटकर नग्मे और गजलों हैं। उनके साहबबादे बानू रबुपति छद्माय भी ए जिनका एक लेख जानना में छप चुका है, एक बिम्बा रिक्त और रवि सम्पन्न नवयुवक है। वह अपने स्वर्गीय पिता की रचनाओं का सम्मान कर रहे हैं और जन्मी ही दीवान प्रकाशित होया। नीचे हम उनके दीवान से कुछ शेर नक़्त कर रहे हैं। उनसे विरबल के अभ्यास की प्रीकृता और काव्य-प्रतिभा का सुन्दर परिचय मिल जायेगा—

कहीं है जो बेहतर नमूने सूर से जो धालम यहाँ पाठकारा नहीं है

* * *

कहती है कहे पाक लुबा से मैं कम नहीं मजदूर हूँ मगर कि उसे इतिवार है

* * *

मैं बच हूँ न बार हूँ गुल हूँ न खार हूँ सूटे खिन्नी जिसे न कमी वह बहार हूँ

* * *

मैं बोरे पुनूँ मैं न हुया शरम से बाहर

घाय अपने मरेवाँ को फाड़ा भी दिया भी

* * *

क्या तुमको उबर तुमने तो बरबट भी न बदली

मैं रई से ती मर्तबा बैठा भी सटा भी

हैंगामए हसरत

हैं दूर बहुत घर से साथी हैं न हमरम है
 मातबर्बाकारी है कुछ खीफ है कुछ राम ह
 कुछ घर की मुहब्बत है कुछ याद है यारों की
 जाती हो गयी रिश्ता से नु पिछनी बहारों की
 कुछ यारों की सोहबत का मुल्क घाँसों में छाया ह
 कुछ जोरो मुहब्बत से बिल घपना भर घाया है
 वह बल्ल भी क्या सुग है सब बोस्त जब घायल में
 बाँसिदूको सजा बडे इक दूसर क बस म
 प्रखसाक बरतते हाँ घायल म वह मिल जुमकर
 और मुल्क उठाता हो हर एक का लिल जुमकर

* * *

लेकिन नहीं कफीयत यह घपने मुकद्दर मे
 चीका तो समाया है कुछ और भी इस घर म
 कुछ और ही मकसद है इस उम्र तबीई का
 हमबव जो हाथ घाये कुछ हाल कहीं जी का
 उम्मीद भ्रमक घपनी है दूर से बिल्लाती
 जब उसपे लपकता हूँ वह हाथ नहीं घाती
 गो पेसे नजर मरे दुनिया का भ्रमेसा है
 पर बल्ल मेरा मुकद्दो लिये जाता बरकेना है

* * *

हाँ बल्ल तमम्मुस से क्या जाए जमी पर है
 जयम है जमीरा है सहरा है समवर है
 पस्ती है बसंधी है है बस्ती थी बीरला
 दिलबन्ध मुमादत है है शौफते शाहना
 यह शहर बहाँ हरवम हैंगामए हस्ती है
 टकमालों में हलचल है पैलानों म मस्ती है
 बाजारों म रोमक है वीतर्फा दुकानों से
 इक मुल्क टपकता है सब ऊँचे मकानों से
 यह सबब जमी उगता जिसमें मुसो जाता है
 और जिसका हरम से भी कुछ हुस्र बोबामा है
 इटलाती हुई जिस पर है बारे सबा जाती

रासद है जहाँ धाकर भुल गय उदा आतो
 ऊपर से धरसता है रक्षता वा जहाँ पा गी
 शबनम सारे सभ्यता पर करती है दुस्वफसा गी
 ये गहर कि जितसे है उग रोवों को शान्ती
 ये भीम कि है जित पर पर गारते मुर्दाबी
 ने बहुर गी मिलता भुल जितरा जितारा है
 पानी ये रवी करती गोओं का शहारा है
 भनरिरता समी जितरा मचरों म समया है
 हर एक इशारा है यह मुझकी बतारा है
 ही छूने उतकता म सब मेमते गेरी है
 बाहोसों फिर म हूँ कभीयते मेरी है
 जो पावराए सातक्य सब छत मुझम्यम है
 अंत है शिकारों को भीर रीर जो गुलारा है
 पर भेरा कि हर मुगधिन वितारा उखाते का
 है वेगवा सुत होकर नंब भगो शिखारे का
 सब बीछए कर भगवा यह सोतके रूवा है
 ते तेकर नरा सोग उगम से परगवा है
 रतता है भगभो जो हर मज गरंगवा
 दित पर गहीं पढ़वा है भुल उतके भगर रावा
 बेराबिए सातिर से भदवा गिरणु है
 हर मूद से कमतर है पर रागमे खेहू है
 हराए भरि दित म है कन् कहके मही रोवा
 ही भुल छो है पात भगने पर भीर भी कुल होवा
 मैता ही गेरा दित भी पाबगर हवत का है
 दुनिया के कशाज्ज म दामम गेरा मतारा है
 दित भगवा उकगवा है हर ऐभी मगरत को
 दुनिया के करोड़ों से आहत ओ ग होती हो
 ओ सुते छरणी हो भगो दितो बीर की
 कभीमते सातिर हो ओ रोरी रबीरा की
 भुल सुल भिवा जितते ही दित के तरानों म
 हर मीनी राग जाती हर मज हो जाना मे
 दित मभमए दितकत मे मगरर रहे हरम
 दनिया की मगधीं से वि ग दूर रहे हरम

*

*

*

पर एक नुसी ऐसी नदर रूप जमीं पर है
 प्रबोध में हसरत के जिसका नहीं निस्तर है
 जो भोग कि रहते हैं जो सब मकामों में
 कहते हैं नुसी जगकी है मे भरे जामों में
 बहु क्रम का हयवम जो हयवदिया करता है
 कहता है इसी पर कुछ भासम यह गुब्रया है
 और उसे ही मरता जो ह्युभयतगी पर है
 कहता है निगाहों में उसकी बही संवर है
 लेकिन जो हकीकत में बिम उनका टटोर्न में
 एक धीस भयकने में कनई धमी लोर्न में
 महमों म बसायें ये हरचन्द किया बी का
 पर बहते सहर अब हा बहबाम सुने बी का
 सब भावरे मेठी के धायोक्त म पसते हैं
 एक बहते मुऐयन तक बुनिया में मचसते हैं
 एक तीर पे नजर का है बस्त करम सब पर
 मनु में धुपा सबकी किन्मत का नबिरता है
 हाको म शकल बाकी तबबीर का फिरता है
 जो भोग नहाते हैं महमत म परीना म
 पाते हैं जरा टंक कुरुकतबशा चीनों में
 जिस तर्ह मुसाफिर एक विम खस्ता बका-माँषा
 हसरतबवा भयमुर्दा और साफ बसर रँबा
 उम्मीदें लिये विम में उनहा बसा जाता हो
 गरिश के फमामे की जो खाक उड़ता हो
 और पुस्ताने मँजिम हो उसका बड़ी दूरी पर
 एक भीस पड़ी हो जिससे लुबुरी पर
 मैदान इसी हालत म हयवमे बीरीना
 छापी से जगा जिसकी ठंडा जो भरे सीगा
 पर पाके ही धरें में बहु बोना बुता होकर
 बाक्रम गले विम विमकर हसरतबवा रो रोकर
 आते रहे धाखिर जो धायी रहे मँजिम को
 लुहा एक बही करके धरमान भरे विम की
 बीमी ही नुसी मबकी एक बम म धलता है
 उम्मीद की आभा म शकलार का बाबा है

रह जाती प्रकृत हसरत है विस के बुझाने को
उम्मीद धामी धामी धीर है धामी जाने को

*

*

*

इक दम के लिए तनहा होने को धरा मुझको
इन्सान की हामल पर रोने को जग मुझको
ऐ बामे जमाना मे जो सबसे निरामा है
बहु कष्टमन्त्रो हसरत से रूँ तहोबाला है
इस उल्ल ठबीई की कमवस्त बड़ी थी वो
प्रीकृत बनी धारम की सकल बड़ी थी वो
हसरत मे जमाया जब इन्सान पे रंय धपना
- शतान मे फाड़ा जब यह सीनए सग धपना

*

*

*

नैरंगे जमाना की सब बुकसपुनी है
तसकीन न हो विस को जिस्मत की जुबुनी है
बुधमत है कहीं इतनी नेचर के लकीने म
धासुदमी जो भर दे हसरत भरे सीने म
एन तक कि यह बुनिया है अब तक कि यह इसरत है
इक लसबसी लिन मे है हौनामए हसरत ह ।

जमाना नवम्बर १६१६

स्वर्गीय पंडित मन्नन द्विवेदी

उर्दू को हसरत प्रकबर मरकूम की मीठ मे जो मुकसान पहुँचा है करिब-करीब
जना ही अबदस्त मुकसान हिन्दी साहित्य को पंडित मन्नन त्रिबेदी मजपुरी की प्रसा-
यक मरगु से पहुँचा है । प्रकबर की तरह मजपुरी भी भी जिन्या रिज हास्यप्रमी कवि
। धारके हास्य म एक छान साहित्यिक बपलता होती थी जो हिन्दी पाठका क रिमों
पर्यं तक विबंगत की स्मृति को छात्रा रकत्रगी । इन पंक्तिमों के सतक को धारका
रेष्य प्राप्त था । दो-एक बार उस धारकी रिस्मयी का निराना भी बनना पडा मगर
गकी चुटकियों में इय की गध भी न हाती थी । मुमाकान हाते ही बाउ हँसो में उड़
ती थी । धारकी उल्ल धभी दितीम-खलीम छान से क्या न थी । बहुत चुन्त धीर
मे बग्न क इल-कट्ट मंवे-उड ने धारपी थ । मरत एमी धण्डी कि पड़े-मिगे मार्गों
बहत कम को नमीब होती है मगर मीठ की धीनों म इमकी पहचान वहाँ ।

पञ्चपुरी की गोरखपुर जिले के रहनेवाले थे। इलाहाबाद यूनिवर्सिटी के प्रेसुप्ट होकर तड़सीनदारी के प्रोहरे पर नियुक्त थे। मगर इस प्रोहरे के ऊब पूरे कपड़े हुए थाप राष्ट्रीय धारोभनों में उसाह से योग देते थे। कुछ पर्थों को स्वाबो रूप से धापका सहयोग प्राप्त था। धापक 'गोसमानकारी समा' नाम की एक परिपद् बनायी थी। गोसमानार्थर उसके समापति थे। बहु बतमान परिस्थितियों धीर पटनाओं को ऐसे धापक धीर हास्यपुख बंग से निकलते थे कि पढ़ने से कमी थी न भरता था। धापकी एक-एक बल में नयापन होता था। कुछ धीरे-सादे सरीखदारों को पूर विरवास था कि गोसमानार्थर की जो बास्तव में कोई बोते-जागते व्यक्ति हैं। मरुसोस कि पञ्चपुरी की की शिखरी का बड़ा हिस्सा सरकारी काबजों की खाना-पूरी म लभ हुआ। बीबिका की चिता में धापको मौकरी के घेरे से बाहर न निकलने दिया।

धाप केवल कवि न थे बल्कि धार्मिकीय पद्यकार भी थे। भारती लैखन-भौसी बहुत सरल सुबरी मुझारेवार सोखी से मरी हुई, प्रवाह-पुख होती थी। कसम न खटा था। बमलट से धापको लफरत थी। तड़सीनदार होने के बाबनूर धाप बसहयोग में काम करते थे। कुर खहर इस्तेमान करते धीर धपने इलाके म भी लोगों से खहर इस्तेमान करने के लिए कहते थे। धार्मिक-सत्कार धापका विशेष पुख था इतना कि तनखाह कमी धाप के लिए काकी न होती थी। बहुधा सांस्कृतिक धीर राष्ट्रीय धारो लनों की सेवा करते रहते थे धीर इमेता मुमनाम। धापका हरथ धप मौकरी खीड़ने का था लेकिन इसके पहले ही धाप दुनिया से विचार गये। कुछ दब-वाहू दिन बुजार में पड़े रहे। धार्मिकीय बम तक धाप बोसों से धार्मिक्य नहीं करते रहे। मयद मौठ ने उम्को मुन सिया था कोई बधा कारण न हुई। परमात्मा से हमारी प्राचना है कि धापको शक्ति दे।

धमाना विसम्बर १६२१

देशबन्धु चितरंजन दास

देशबन्धु दास उन महान् पुरुषों म थे जो राष्ट्रीय के इतिहास में अपनी वागदार छोड़ जाते हैं, जो धार्मिकों के भाग्य-विधाता होते हैं। जिनके दिन पुरा हो चुके होते हैं, जिनमें धर धीर राम की भङक तक नहीं रह पयो होती ऐगों ही की बीन दया से उठकर वे ऐंठ शक्तिमान राष्ट्रीय की बुनियाद डालते हैं कि देवनेवाले बाँतों तने उँदनी बसते हैं। किसे उम्भोर थी कि कमी पजाब में धार्मिक धीर धध्यामी से टकर मेदेवासी कोई संस्था बनेयी? कौन कह मकता था कि युगलों का धर्लब राज्य एक पड़ाही मरठे के हाथों जड़ से ढग धापया? ऐगे कीरों के सिर पर भुङुट नहीं होता सिद्धि धार्मिक के

उसको राजा ने ही होते हैं। उन्हें यही पर बैठने की हुकूम नहीं होती पर जगता में
 हृदयों में उन्हें वह स्थान मिला जाता है जो राजा को भी ममस्तर नहीं हो सकता।
 देशबन्धु दास इसी छोटी के मनुष्यों में थे। वह बड़े विद्वान बड़े बस्ता बड़े राजनीतिज्ञ
 न रहे हों लेकिन उनमें वह प्रतिभा थी जिसने उन्हें विद्वानों में विद्वान बस्ताओं में
 बस्ता और राजनीतिज्ञों में राजनीतिज्ञ बना दिया। उनके मन में केवल एक धर्मिताया थी और वह
 पर अपना सबसब धन्य कर दिया। पर वह स्वतन्त्रता के मन्त्र थे और उन्हीं
 को स्वदेश को स्वतन्त्र बनाने की। पर वह स्वतन्त्रता देनी के उन मन्त्रों में न थे जो
 मन्दिर में गया छाड़-छाड़कर पाते हैं, अपने सिद्धों से मन्दिर की चौकट को रमक
 शकते हैं और उन्हीं अन्तिम और उपासना को धक्कर पवन पर मान और पद का जीना
 बना लेते हैं। उन्होंने अपनी सारी सम्पत्ति यहाँ तक कि अपने प्राण भी उन देवों के
 बरखों पर चढ़ा दिये। यही कारण था कि भारतवर्ष का बच्चा-बच्चा उन पर प्राण
 देता था। वह पाति के सन्ने सेवक थे और जानि भी उन पर सन्ने दिल से 'म' करती
 थी। उन्होंने बहुत बड़े बिलों से राजनीतिक शासक में पग रखा था लेकिन अपने धनवत्त
 अपने धन्य उत्साह, असीम उदारता और अनुपम त्याग के कारण इस बड़े ममय में
 उन्होंने भारतवर्ष में एक युगान्तर-सा उपस्थित कर दिया। भारत में प्रजा पक्ष को
 शान्त ही कमो कमलता मिलती है। प्रजा को इच्छाएँ और आशाएँ सौ कुछनी जाने ही
 के लिए होती हैं। किन्तु वह गौरव देशबन्धु ही को प्राप्त हुआ कि उन्होंने स्वराज्य दल
 को जिस उद्देश्य से स्थापित किया था वह पटा हो गया। उन्होंने ही शान्त का धन्य
 करने को ठानी थी। उनकी विजय से भारत को अपना अन्तिम लक्ष्य प्राप्त करने में
 कोई सहायता मिलेगी या नहीं इसके विषय में कुछ नहीं कहा जा सकता। किन्तु
 देशबन्धु ने यह सिद्ध कर दिया कि भारत का पश्चिमी राजनीति मनमन्ने बना है और
 उसे बढ़ा देने के लिए ही है।

ब्रिटेन के पिता बन्धु मुबनमोहन दास कलकत्ता हार्डकोट में बसायत करते
 थे। वह बहुत ही उदार हृदय पुरुष थे। जो कमाते थे उसने ज्यादा खर्च करते थे।
 गरीबों को वह दान देते थे। जो कमाते थे उसने ज्यादा खर्च करते थे।
 ब्रिटेन उन दिनों विभाजित में थे। वहाँ से वापस आकर उन्होंने स्थिति बहुत तराब
 देती। पिता की बचतों के कारण पहले उनमें से कोई भी नहीं सहाय देते
 को ईपार न हुआ। पर गौरीधाम बैरिस्टर को इसकी बहुत जरूरत होती है। धात्रि
 बनकर से निरुत्तर होकर ब्रिटेन को मुकदमा में बचायत करती पड़ी और यहाँ
 बोड़े ही दिनों में उन्होंने श्रीमती के बीच में अन्धता नाम पदा कर लिया। तब वह
 कलकत्ते फिर लौट आये और हार्डकोट में बसायत करने लगे। यद्यपि धामदनी धानी
 लक्ष के लिए काय्य न होती थी पर धामको कर्जा धान करनी की किन्तु हमेशा धानी
 प्यवी थी। बस्ताओं को बियायत मुजर चुकी थी। बान्धुन महानम भी उनका कुछ न

॥ देशबन्धु ब्रिटेन दास ॥

कर सकता था। पर चितरंजन धनीति की धाड़ में छिपनवासे धाड़मी न थे। मियाद मुजर जाने से कज नहीं मिट सकता। कज तो घटा करन ही से मिट सकता है। ज्यो ही हाथ फेला चितरंजन ने अपने पिता का देना पाई-पाई चुका दिया। महाजन मिराठ हो चुका था। उसका कथन है कि जब मेरे पास जक पहुँचा तो मे चकित हो गया। मीका पाकर भी जो सोच भय या कर्तव्य से विभ्रमित नहीं होये वे ही सच्चे धर्मात्मा हैं। इसी एक काम से चितरंजन की बिबेकसोमता का पता भय जाता है।

मि दास को जब अपने परो में ख्याति प्राप्त होने लगी। उनकी जिद्द सीसी और बहस को देखकर उस विद्या के विशारदों को अनुमान होने लगा कि किसी दिन यह युवक ख्याति के तिलक पर पहुँचवा। सन् ११८ क पूव एक मि दास को कोई ऐसा मार्के का मुकदमा न मिला था जिससे उनकी बुद्धि की कुसलता का परिचय मिलता। इतने में धमीपुर के बम का अभियोध भया। बाबू धरविन्द घोष और उनके कई सहकारियों पर मुकदमा भया। इस मुकदमे में सारे भारतवर्ष से हलचल पैदा कर दी। सारे देश की धाँसे उसकी धोर भयी हुई थी। सरकार की धोर से प्रसिद्ध बैरिस्टर मि नाटन पैरवी कर रहे थे। मि दास ने जी लोडकर इन मुकदम की पैरवी की। इन दिनों उन्हें कभी दा बजे सं पहले राठ को सोना नसीब न होता था। मि दास केवल धरविन्द बाबू के बकास ही न थे उनके भक्त भी थे। धाक्षिण धापकी मेरुमल ठिकाने लयी और धरविन्द बाबू को प्रधान अभियुक्त वे बरी कर दिये गये।

इस सफलता ने मि दास को बकीलो की प्रथम जेसी में ला बिठवा उनकी मज्जा प्रबल बकीलों में म हाम लगी। लने लने धापकी इतनी ख्याति हुई कि धापकी सामाना धामदनी तीन लाख तक पहुँच गयी। ब्यास में लाड सिनहा के सिवा धापके जोड़ का दूसरा कानूनवा न था। लाई सिनहा धमर बहस में ख्यावा कुशल थे तो जिद्द में मि धाम का कोई सानी न था। बिलेपता यह भी कि मुकदमा जितना ही कमजोर और साझीन होता था उतनी ही उनकी बुद्धि उत्तम लडती थी। बेजान मुकदमे उनके हाथ में धाकर पनप जाठ थे। राजनीतिक अभियोधो पर तो माना उनका इबारा ही था।

जिन दिनों बाबू धरविन्द घोष पर मुकदमा चल रहा था बान्धु बिपिन बन्धुपाल भी उस मुकदमे में गवाही देने के लिए तलब किये गये। बाबू साहब ने गवाही देने में इनकार किया। सबको बिरबाम हो गया कि धर इबरात पर धाळत धायी। कानून की धारा इस विषय में गाफ थी। धरा भी गन्वेह जा भ्रम न था। धचने का कोई उपाय न था। मि दास ने धाक्षिण यह व्यक्ति निकाली कि यह धारा धंघडी मीठि-बिधान पर धबमविठ है भारतवर्ष की नैतिक धोर सामाजिक धरल्ला इन धाठ के बिरुद्ध है। इन्मीठ की मीठि में जो बाठ उचित हो वह भारत में अनुचित हो लकती है और उस धारा का यही प्रयोग करमा सबबा म्याय-बिरुद्ध होवा। धागल इस युक्ति को एग प्रबल

प्रमाणों से सिद्ध किया कि बिपिन बाबू को केवल छह मास की मारी कैद की सजा मिली ।

यद्यपि अब तक मि दास राजनीति के क्षेत्र में अपने वे लेकिन राजनीतिक संशोधन में उनका काम किसी बड़े से बड़े नेता से कम न था । धापकी घमिलखि का परिचय उसी समय मिलने लगा था । धापकी बार-बार इच्छा होती थी कि बकानठ को ठिसोबसि देकर रख-बाज में भूषण पड़े किन्तु उन दिनों धरविष्ण घोष और बिपिन बाबू पास दोनों ही राष्ट्रीय गणना संभाषे हुए थे । इत्यसिध मि दास ने धपने की रोक ।

मि दास का सावजनिक जीवन १९१७ में शुरू हुआ जब इम्लीड की सिबरस सदनसभ ने बहुत दिनों के बाद धपनी हस्ती का सवृत चिया और घोषका करके यह स्वीकार किया कि भारतवर्ष का राजनीतिक लक्ष्य स्वराज्य है । वो सभस तक मि दास बंगाल के राजनीतिक जीवन में नये बिचारों का संचार करते रहे । धमोपुर के धमियोग के बाद बवाल में नरस बिचारवासों की विजय-सी हो गयी थी । राजनीतिज्ञों को इस घोषका में मुण हो गुला नबर धाते थे । वे बुझी से पूने में सभाते थे । उन दिनों नरस और गरस दसों में नय मुधारा पर जो बार-विवाद हुए, और धाम्मोसन ने धस में जो रूप बारल किया वह धमी कम की बात है । उसका उल्लेख करने की यहाँ जरूरत नहीं । केवल इतना कहना काफी है कि मि दास पर भी पंजाब के धरवाचारा का बही धसर हुआ जो धय्य किरणें हा सहुन्य प्रक्रियों पर । धाप भी धसहुयोग दस में शामिल हो गये । कौषस की धार से उन धरवाचारों की तहकीकत करने के लिए जो कनेय कावस को पश उनमें मि दास भी शामिल थे ।

इसमें सन्देह नहीं कि धयहधोय का माय कौर्ण से भरा हुआ था धार महात्मा गांधी के जेस जाने के बाद कोई एना न रह गया था जो उन धार को संभालता । धरमस्यता की कुछ एनी प्रतिक्रिया शुरू हुई कि धाम्मोसन बिमकुस बजान-ना हो गया । देहनों में जाते हुए लोगों के रोपें लड़ जाने लगे । उस धरमस्यता का दूर करने और जतीय उत्साह की किरी हर्ष पर लवाने के लिए मि दास का धरउमिन में जाकर बबनमेन्ट का विरोध करने की शुरु गयी । यही ऐसा माग था जिमका इमार नेताओं का कुछ अनुभव था । धय्य कोई माय उन्हें शुरु ही न मचता था । धागिर स्वराज पार्टी का धय्य हुआ और महात्मा गांधी के धूट कर धाते-धाते इम पार्टी में दस की बहुत कुछ सहानुभूति प्राप्त कर सी । मि दास यद्यपि पहली बार यह प्रस्ताव स्वीकार न कर सके पर उन्होंने हिम्मत न हारो और कौषस को उनका प्रस्ताव मानना ही पड़ा । यह सब से बड़ी विजय थी जो मि दास को धरन जीवन में प्राप्त हुई और इममें सन्देह नहीं कि जिम बशा में भारत देश उम्माह राग्य हा रहा था उनी में धापने

उत्साही पुश्चों को काम करन का एक रास्ता दिखा दिया । पर असहयोग आन्दोलन की उठी दिन पुर्णवृत्ति भी हो गयी । भारी पत्थर का सब ने चूम कर छोड़ दिया । काँग्रेस की मेम्बरी धीरे असहयोग दोनों में नैसर्गिक विरोध था । काँग्रेस में जाना सहयोग के मुँह में जाना का धीरे धाव ब रंकाए पूरी हो रही हैं जो उन दिनों कुछ भोषों के मन में उठी थीं । मि दास ने अपनी अग्रिम बकलुता में सहयोग का संकेत भी किया था धीरे पं मोतीलाल नेहरू ने सैण्डहस्त कमेटी में सम्मिलित होकर बतला दिया कि अब उन्हें बजारत स्वीकार करने में कोई आपत्ति न होगी । यह हमारी राजनीतिक पराधीनता धीरे असमयता का कदणानक वुरय है ।

मगर कुछ भी हो मि दास ने हमारे राजनीतिक जीवन का आश्रय बहुत देना कर दिया है । अब राजनीति केवल काँग्रेस या काँग्रेस के प्लेटफारम पर नहीं रही । यह अब आत्म बलिदान का वृत्तरा नाम है । अब वही प्राचीन हुमायु नेता बनने का दावा कर सक्ता है जो जाति के लिए त्याग कर चुका हो जिसने अपने को जाति के ह्राप में समर्पित कर लिया हो जिसका चरित्र उज्ज्वल हो जिसने अपने मन को जीत लिया हो धीरे जो कड़ी से कड़ी धाँच सह कर कर निकल आये । मि दास के स्वराज्य का आशय भी वह न था जिसकी आचारवृत्त कल्पना की जाती है वह परिष्करी नमूने का स्वराज न चाहते थे । वह तो यथाथ न बनियो का राज्य है, भारत के लिए वह ऐसा स्वराज्य चाहते थे जिसमें अरीबों के अधिकार प्रदान हो । देहता की उत्पत्ति धीरे स्वास्थ्य उनके स्वराज्य का सबसे उज्ज्वल भाग था । वह बड़े-बड़े शहरों की समृद्धि वृद्धि के पक्ष में न थे । इसे वह नवीन सम्पत्ता का कलक समझते थे । वह देहता में ऐसे केन्द्र स्थापन करना चाहते थे जो स्वावलम्बी हों जिसकी सारी जरूरतें वहीं पूरी हो पायें । इन्हीं केन्द्रों को वह अपने स्वराज्य का प्रवेश-द्वार समझते थे । सारांश यह कि वह भारतीय जनता को मरमले शिक्षित समाज के पंजे से छुड़ाना चाहते थे । वह इस देश को योरोप की नकल से बाहर रक कर राष्ट्रीयता की धीरे जीवना चाहते थे । उनका कथन था कि यदि देहता में सड़कें बन जाय सड़कें धीरे रोसनी का प्रबल हो जाय तो कोई कारण नहीं कि बहुत से वे व्यवसाय देहता में न किये जा सकें जो अब शहरों ही में किये जाते हैं । उन्हें भारतवर्ष से असीम प्रेम था । उनकी यह धमिलाया थी कि मैं इसी देश में फिर जन्म लूँ धीरे फिर इसकी सेवा में जीवन बिताऊँ । उनकी देश प्रकृति में अधिकार-ग्रह नहीं सिपा था । बैसासक्ति ने उनकी अन्तरात्मा में धर कर लिया था । धीरे उनकी प्रकृति भारत ही तक मर्यादित न थी । वह अतिवार्ह संयुक्त के भी अनुमोदक थे । यदि अफास मूरयु न उन्हें कुछ दिनों का अवकाश दिया होता तो वह उस बहुद् देश में भी अपनी कीर्ति का चिह्न अवरय छोड़ जाते ।

राजनीति हमेशा से एक बदनाम चीज है । यहाँ यह सब कुछ उचित धीरे अर्थ है, जिससे हमारा काम निकले । यहाँ धीरिय की परल परिस्थान से होती है । यदि

कुटिलता सफल हो तो खेप्ट है, उबारता असफल हो तो स्वाय्य है । भारतवर्ष में भी पहले इसी ढंग की राजनीति चलती थी । यहाँ सफ़ाई और ईमानदारी को जरूरत न थी । महात्मा गांधी पहले देश भक्त हैं जिन्होंने राजनीति के मामले से यह बलक का दाग मिटाने की ज़रूरत की और राजनीति को 'सत्यवादिता' का ममानायक बना दिया । मि दास की राजनीति भी निष्कर्षक थी । उन्होंने कमी कुटिल जालों से अपना काम नहीं चला किया कमी धर्मभी नहीं की । जब बार किया तो मसकार कर कमी बांध के नीचे तीर न मारा । उनकी बाढ़ी और व्यवहार में कोई भेद न होता था । उनके हृदय में युष्त बलों के लिए कोई प्रेरणा म्यान न था । वह उन राजनीतिज्ञों में न थे जो लक्ष्य प्राप्त ही को राजनीति का प्राण समझते हैं । जिनका माग जीवन मध्य पर परां डालने और चिह्नी-बुपड़ा बाँटें बनाने में कट जाता है जो मन में छोटे धिपलर की मूँह से मिस्री के उने बोल मकते हैं । यहाँ तो हृदय धाड़ने की भाँति निमल था । जो मन में था वही मूल पर, बाहे जिन्ही को बुरा मने या भसा । इसी स्वच्छता के कारण कई बार पब्लिसिटी को उन पर अनुचित मन्वह हुआ । यहाँ तक कि धात्रि वही सन्देश स्वराज्य-मल पर काम कानून के रूप में बल बन कर गिरा । धमी लक्ष सन्देश के बाँध फट नहीं हैं । मि दास शान्ति की मूर्ति थे । यह संदेश सबसे कठोर धाधान था जो उन पर किया जा सकता था । यह धाधात उनकी धात्मा पर था । इन सन्देश को मिदाण के लिए मि दास को बार-बार अपनी सफ़ाई देनी पड़ी और धाधिर उनकी कपीसुत्वासी बकनुता ने किसी धंश तक सन्देश को हटाया हासति उन धवमर पर भी उन्होंने साफ-साफ कह दिया कि पशु बल का प्रयोग परि प्रजा की धोर से निष है तो सरकार की धोर से वह धीर भी धाधितमलक है । कानून बही है जिस ममाज धपने मुल और कस्याख के लिए धावरयक समग्रता ही । जो कानून ममाज में धरान्ति धीर लखव पैसा करे, वह कानून नहीं । धारधय तो पही है कि एने धामनवारी पुष्प के धियम में एवा सन्देश क्यों कर हुआ । धमल में यह केवल एक बहाना का स्वराज्य का परास्त करण का उसकी शक्ति को हुरने का । मि दास जडवारी न थे । वह निष्कंध धीर हृदा की कल्पना भी न कर सकते थे । सेवा धीर मक्ति में ही उनकी धात्मा की शान्ति मिमठी थी । जहाँ स्वाय्य और समपक्ष के भाव राज्य बप्ये हों वहाँ हृदा धीर पश्यन के लिए स्वाय्य बही ? उन्हें तो प्रत्येक एतिहासिक घटना में ईरबरीय प्ररणा धिपी हुई मालूम होती थी । भारत ने इतिहास में भी वह ईरबरीय प्ररणा का स्वल्प देखते थे । धायों का धागमन धीर धनाय जातियों में उनका मनमोल बीट धम का प्रचार, वैदिक धम का पुनरुद्धार धनममानों का धाक्रमण धंधरा का प्रचार में सारी घटनाएँ एक उसी प्रेरणा की मृषणा की कियों थीं और वह सधर क था ? वह या भारतवर्ष को संयुक्त धीर संगठित करके राज्यों के बरबार में उचित रूप का बिडाना भारत के धाध्यात्मिक प्रकाश से संसार का धामोचित करना उन

की सृष्टि करना जिन्का अनुसरण करण स ससार में शांति और प्रेम का साधन हो सकता है। जिसके बिचार ऐसे उन्नत और परिष्कृत हों उस पर ऐसे साहसी चम्वेह करना बोर धन्याय है।

मि दास हिन्दू-मुसलमन एकता के परम मन्त्र थे। साथ ही वे मन्त्र में मन्त्रमा गोपी के सिवा एकता का महत्व निमी न इतना न समझा था जिन्का मि दास ने। इस विषय में प्रायः हिन्दू नेताओं का धारण यथायथ था। जब मि दास ने उन्मत्त न सुखलवानों में यह समझौता कर लिया जिसमें मुसलमानों की उनकी संख्या से अधिक स्वतन्त्र दिने नये तो हिन्दू समाज में बड़ी जनबन्दी मची। सोचा न मि दास पर शक्ति के धारण दिने। लेकिन मि दास यन्त उक्त उक्त समझौते पर डट रहे।

बहु एकता का महत्व समझते न और बोझो-सी हानि उठाकर भी उनकी बड़ी मजबूत करना चाहते थे।

मैं तो बंगाल की भूमि महान् धारणाओं को जन्म देने में बहुत उन्नत है लेकिन जो सांख्यिकि स्थिति मि दास ने प्राप्त की बहु कदाचित् पहले और किसी न न की थी। और यह केवल मात्र-मात्र बपों की कमानों थी। इसका कारण उनका बहु विषय और वेबालीमता थी आ दुमरा को धारण दास बना सती थी। बवाल में ता धार वेबता ही समझे जाते थे। धार में वे मारे मुख थे जो जन्ता वेबताम्रा में वेबता चाहती है। धार बहुत ही महत्त्व में पहले दिने न बीज-बन्धन। धारणीमता ता धारण दुर्मुख को मोना तक पहुँची हुई थी। धार धारने विद्यान्तों पर धारण बहु ही निम्नसाए, हूँन मुख और सरलरूप पुरण प। कौरस में एता धारण में छोटा काम भी न था जिससे धारण परिचय न ही। धार की चिन्ता उन्म कमी न सताती थी और जमा करना तो उन्होंने सीखा ही न था। धार बहु माहसी प। कठिनाइया में धारण की हिम्मत और भी धारण उठती थी। उन्म धार उन्म न कि धारण के धार में कोई निराशा न जाँटता था। उनके मुत्त दानों की सूची बहुत लम्बी है। उन पर जनता की निगाह कदाचित् कभी न पड़ेगी। धारण के जीवन में कई बार ऐसे मौक धारण है कि धारण धार उन्म धारण जो कुछ था बहु सब धारण धारण कर दिया। पर धारण धारण न देन न न देकर धारण जताते थे। जो कुछ देते थे बड़ी लुत्ती न देकर धारण भूने स भी समझी धारण न करते थे। धारण में बहु धारणण शक्ति थी जो धारण ही दुमरा पर धारण धारण जाँटती थी। धारण की मुक्ति मुक्ति रसिकता और विनीत-धारण धारण उन्म धारण धारण मची गेसे मुख थे जिन्से धारण दुमरों के दिने न धारण कर लते थे। धारण में धारण की-सी मन्त्रता थी दिनाध धारण टाट से धारण पृष्ठा जो। एक नैबक के शर्तों में—उन्म धारण की मुख इष्टि कवि की कल्पना राजनीतिज्ञ की कल्पिता धारण एक मिठरुन नता को मन्त्र और निश्चित शक्ति थी।

जब धारण जूह में ठारे हुए प सब एक यथाशय धारण का एक धारण धारण धारण

आपका दिखावा । आपने लपक कर कहा उनके हाथ से छीन लिया और इतना उधने
 कूरे मानों कोई पड़ी हुई लिपि हाथ धा गयी ।

सन् १९२२ में जब महात्मा गांधी पच्छिम बंगाल के सत्याग्रहियों के लिए बंदा
 मीथन कसकरत गये थे तब मिस्टर राम के पास बैंक में कुमसोमह ली गये थे । धारकी
 बकालत उस वकन बहुत बर्बादी न थी और आधिर दशा भी चिन्तामय हो गयी थी ।
 पर धारन बहु मय स्या महात्मा को को भेंट कर दिया । आपकी बायिक धामरनी लोन
 साय के समयग थी भेकिन आपन उसकी बर्णमात्र परबाह न को । यह परिवाग्नी
 थी जिनने आपको इतना प्रभावशाली बना दिया था । एक बार एक महाराज को जिनने
 उनकी बिरोप मित्रता न थी बिना मित्रा-पत्री क्रिये अन्टाइम इन्वार गये दे दिये । उन
 महाराज न बर्चित हाकर पुछा—आपको मुझ पर इतना विरबाम करो कर हुमा ? आपने
 कहा—विरबाम को बात ता अब होता है जब मैं किसी कुमरे को देता । मने ना गसा
 मामूम हो रहा है कि मैं अपने ही को दे रहा हूँ । अंग्रेजी के ठीक विज्ञान हात पर मी
 आपका जीवन भारतीय था । धार अपन कुटुम्ब के साथ मिलकर प्रम मे रहते थे । आप
 जो कुछ पना करते थे उसमें पर मय का हिम्सा था । यह नहीं कि अपन बाय-बर्बों
 के भरल-पोपल की धन न धार अपन सम्बन्धिया को मूस बायें । धारको मगीत और
 कविता में प्रम था । स्वय ना बना मनाहुर भाषण कविता करते थे । धारकी गचनाओं
 न 'मागर-मपीत बहुत सुन्दर है । समय बरान गरी उपदेश महा कवस यकिन है एक
 भक्ति-बिह्वल आत्मा के उद्गार है और एक माधुर्योत्तमक व पवित्र मनामात्र है । क्या
 उनसे ये शक्य हम मूस जानगे—मने अवन प्यारे देश को बचान न बहानी में
 बहाने न सम्पत्ति न विपत्ति में मरैब और मभी बराधों में प्यार किया है । नन अपने
 हृदय और अपनी आत्मा में उमका मूर्ति को अहित कर दिया है और अब अन्त समय
 निकट धार पर बहु चिह्न और भी उज्ज्वल और प्रकाशमय हा गया है ।

माधुरी जुलाई १९२५

मौलाना हसरत मोहानी

धार मुझे ज्ञानि की सम्पौर दयना हा जीनी जागनी बालना-बान्ती मन्वीर,
 अपना मारी विभूति मारा क्या क माय ता मौलाना हसरत मोहानी को दया । मुझे
 शक्य होगा कि ज्ञानि के रूप और लक्ष्य में कोई मादुर्य नहीं होता । मेजिन क्या था ?
 बिमकुम मापारण मजदूर जैसा रूप न किसी मीब में देय गजने हा । अहर पर तब
 और प्रनिभा और मद्यम का नाम मरी । गाथा को दया । हमने रसद गरीब मरल
 देहवानी मुग्न और निमयी होयी ? बन एमा मानूम होता है कि कोई मजदूर अपनी

अप करके लीटा है। हुसरत के बेहुर पर भी वही नम्रता है, वही पीनता है, पर उसके
 स्वर शक्ति का समग्र समग्र सहारे मार रहा है। ठिंगना कद स्मृतता की घोर मुकी
 है मुमठित देह, सजिना रंग बेहुर पर बेचक के वाप छसछठी घड़ी फलन घौर
 माइता से दोस्रो बुर स्वयं घौर निपह की मुति जिसे रईवार यशने घौर छहर से
 सामाजिक प्रेम है। धनोमक के टाउ-बाह रंज-डग का बाहु कभी सम पर नहीं बना।
 न निरुचय नहीं कर सकते पर हमने तो उन्हें हमेशा ध्यान के सिनाउर कमर फसे
 सवार पींचे पाया। मुसममानों म सापर हुसरत ही बह बुजुप है जिन्होंने धाय से
 कह बप पहले भाउत की पूरी साजारी की कल्पना की घौर धाम तक उसी पर कापय
 । पहले-पहल बह स्वर्गीय महारमा तिलक है धनुषायी हुए। नरम राजनीति म उनकी
 न लुचियल के लिए कोई सिबाज कोई वचि न थी। चोड़े ही दिना पं बह अपने मुक
 की चार कुचम घौर धाले बह गये घौर उस समय पूछ स्वराज का इच्छ बजाया बह
 प्रिस का सम से नर्म नेता भी पूछ स्वराज का नाम लेते कर्पिता था। उस बमाने मे
 उरत का कोई सापी न था लोग उन्हें कलकी समझते थे पर बह हो प्रपनी धुन क
 का वा। अपने मध्य से उसने कभो मुँह नहीं मोड़ा। नेहक रिपोट ने बहुत से मुसल-
 नों को कांघ्रेस से प्रलग कर दिया। पूरी साजारी का दीवाना हुसरत भी उस रिपोट
 । सुरमन हो गया। मौलाना के सिचारों म उस बन्ध हिन्दुओं से विरोध की भ्रमक
 ले लवी थी। उनके हिन्दू मित्रों की समझ म उनकी बह नीति न घाटी थी। मे सम
 में लवे इन पर भी नोकरछाही का बाहु बल गया पर सब निश्चित हुआ कि मौलाना
 ने माप से बरा भी बिचलित नहीं हुए थे। नेहक-रिपोट का भारत का डोपेन्सियन
 टिस। मौलाना खूब जानते हैं कि जब तक भारत की नयाम वंशको के हाथ म रहेगी
 घाटी हासन म्यबस्ता जितनी ही निर्बोग क्या न हो उसका संघासन इस प्रकार किया
 सकता है, मिस-मिस जासिदों घौर मजहनों को इन नीति सहाय्य वा सकता है कि
 करछाही का हमेशा बोलबाला रहे। इसलिए क्या ही कांघ्रेस ने पूछ स्वराज का
 पाल स्वीकार किया मौलाना हुसरत संघास म कूब पड़े। उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम सम
 ति की बरीबा नहीं की क्योंकि बह जानते हैं कि वर्तमान बचाधो म कोई समझौता
 ना घसमभव है। यह सभाम का समय है, समझौते का समय बल को घायेगा जब कि
 बय प्राप्त हो जायगी। बिचन ही बने हुए लोग जो कांघ्रेस का विरोध इसलिए करते
 कि बह तो डोमीनियन स्टेट्स को अपना इह बनावे हुए है घौर हम स्वापीनता के
 घासक है कांघ्रेस का कर्षो साध हैं बह लोग धाम समझौते का बहाना निकलकर बाति
 घासकों म बुल भोक्ता घौर अपनी शान बनाये रखना चाहते हैं पर कौम उन्हें पूब
 मरम रही है घौर अब उनक पत्र में घालेजानी नहीं।

मौलाना हुसरत का समस्त जीवन ही यत है। घाटी की तरह उन्होंने कानून
 बना बमाने की इच्छा नहीं की सरकारी नोकरी के लिए कभी परदार की बीजत

पर नाक नहीं रगड़ो। बिघी लेने के बाद ही उन्होंने 'उडू-मुधस्ता' नामक साहित्यिक पत्रिका प्रतीयुद्ध में निकाली थीर एक महत् तक उसे चलाते रहे। जब वह बेम चले गये तो पत्रिका बन्द हो गयी। कुछ दिनों से आपने मुस्तकिम नाम का दैनिक पत्र निकाला है और उसी को चला रहे हैं। 'उडू-मुधस्ता' के दो धाध्य वे—साहित्य और राज नीति। उनके साहित्यिक भाग में जितनी सुबुधि और मौलिकता होती थी उसके राज-नीतिक भाग में उतनी ही निर्माकता और उदारता। उडू-साहित्य के उत्थान में मौनाना ने बड़ा काम किया है वह चिरस्थायी रहेगा।

मौनाना हुसरत उडू के चास कवि है और उडू कवियों में उनका स्थान सबसे ऊँचा नहीं तो किसी से कम भी नहीं। बानुति के माव तो आपके कलाम में मिलने मिलने उडू के किसी कवि क कलाम में नहीं मिल सकते। उडू कविता के पुराने रग को निभाते हुए उन्होंने नयी उमरों और उद्गारों को उममें एसा मरा है कि उनका कलाम अपने रग में निराला है। प्रम क रूस्थ जितनी सुबी से आपने दिखाये हैं जितनी मार्मिकता से उसका चित्रण किया है, हम बाव च कह सकते हैं कि उडू के किसी कवि में भी नहीं किया और शब्द योजना तो आपका हिस्सा है। उसमें कोई आपका सानी नहीं। आपक शरों में झिठने ऐसे शेर हैं, जिनमें दोहरे बाध निकसते हैं। साधारण तीर पर बखिय तो वह मामूली सुंगार का शेर है, लेकिन बरा और से पड़िय तो आपको उसमें एक बसरा ही समी विलास्यो बगा—उसमें धाजारी के बीबान की तड़प है, नामा है, प्ररिपाद है। उडू क प्राचीन साहित्य की इतनी खोज भी किसी ने कम ही की होगी। बाव उडू के पुराने कवियों में जो उडू को जनता को इतनी ग्लिचस्ती है इसका सेहरा हुसरत ही के सिर है।

१९२१ क असहयोग आन्दोलन में कानपुर में स्वदेशी कपड़ों की एक दुकान 'सिताउठ स्टोर' के नाम से खुली थी। हुसरत उसके मन्जर वे। उसी दुकान से मिता हुमा स्वदेशी बरनों का भण्डार था। भण्डार में बिजली की रोशनी और एक से मगर सिताउठ स्टोर में इन उडू-मुधस्ता का गुजर न था। राज का यह सेबक ताड़ की एक पंक्तिपान लिये बैठ रहता और जब घर्मी बहुत सलसली ता उस झल लेता था। यह उनकी सारमी पमन्ध का मुदिकत पमन्ध प्रकृति की एक छोटी-सी मिताग है। घर्मी के चोचलों से उन्हें घुसा है। जिस जिल में धाजारी की जपन समायी हुई हो चने टोमटम से क्या मतलब। धाजारी पहल दिन से शुरू होती है और दिन को धाजारी घरी ग्याव गरी निघरू है। जो धपमी उबरलों का मुलाम नहीं वह हमेशा धाजार है। जो सोप दिवावे और टट के गमाम होकर धाजारी की रट भपाते हैं वे धाजारी की बचनान करते हैं।

एक बार कानपुर के डी ए बी कासेज में हम प्रस्ताव पर बरम हुई—स्वराज छोटी-छोटी किन्तों में मिदा बागा बाझिए। बिबट घरेजी में थी। रा नीबानचण प्रबान वे। हमरत भी मौमू वे। सारर धाजारी घंघरी घोलने का धर्याम नहीं है। बापन के

कितने ही धर्म्य लोहरों की भाँति अंग्रेजी में बाँट करला धाप अपने लिए शान की बात नहीं समझते । धाप मच पर गये और दो बार बाक्य बोसकर जमे धामे पर उन थोड़े से लहरों में धाप एक पूरा व्याख्यान दे धामे ।

किसी धरसे अंक में हम मौमाना हसरत की काव्य-कला की बर्चा करेंगे ।

मई १९३०

मुंशा बिशुननारायण भार्गव

मुंशी लखन किरोर के प्रतिष्ठित बरने का यह सुरब ठीक मध्याह्न के समय हुआ । स्वर्गीय मुंशी बिशुननारायण के बीबन का एक-एक कब रईस बा । बुबियाँ सब थीं ऐब एक भी नहीं । मुरीबत में पुठने बे । किसी याचक को निरस्त करना उन्हुनि सीबा ही न बा । किसी दोस्त का विल ठोड़ना उनकी शक्ति से बाहर बा । कमचारियों की सख्या ह्जारों तक पहुँचती थी मगर कमी किसी को तेज निपाह से न देला । मदन के मामले सामने धामे अयोम्यता और काम के बीमेषन की शिक्षायते रोज ही धाटी रहती थी स्पष्ट बरनीयती की बटनाएँ भी बार-बार सामने धापी पर हमेशा दरमुबर कर जाते बे । यह कूनी उनमे कमबोरी की हृष तक थी । हससे बहुत बार काठेबार को मुफसान पहुँचता बा और जिन लोगो के घर पर बिम्बेशारी थी उन्हें नीचा देखना पड़ता बा ।

द्विबनत की अवस्था धामी कुछ न थी । लखनऊ का यह बिद्या-प्रमी बरना धामानु हुआ है । स्वर्गीय मुंशी प्रयागनारायण साहब ने बयानिस साल की उम्र में इस संसार में प्रस्नान किया उनके पुपुत्र ने कुछ धीर बनी कर दी धामी बीतीसवीं ही साल बा ।

मझोला छब बबनी ह्दही धीर बीहरे बरन के मुबर धावनी बे । पन्दुनी रंय रीबशर मुँसे बड़ी-बड़ी धाँसों में सज्जनता धीर जमा की रूपक । रहन-सहन बिलकुल साधा बा । बाहर निकलते तो धाचकम धीर बुन्ध पाबापा बरन पर होता घर पर छस्ट रीप । बर पर कुर्ता धीर धोती पहनते बे । हुक्के धीर पान बा शौक बा ।

उनका दरबार हर धाम्नी के लिए मुसा रहता बा । न काइ मेजने की उकरत में इतना करान की पाबन्दी । बीबानकामे के सामने बरामधे में बैठ हुक्का पी रहे हैं । बीरत धीर कचारी याचक धीर मरजमन्ध सभी धाते हैं धीर धाम्नी धरगत बटनाकर जमे जाते हैं । सबम मकर्स प्रम धीर सज्जनता से पहा धाते हैं । स्वभाव में धमएह का नाम

नहीं दमन की मन्त्र नहीं मूठे शिष्टाचार की छाया नहीं। प्रथमोप वह जगह हमारा के लिए जाती हो गयी।

स्वभाव में दानशीलता मरी हुई थी। साधनों से कहीं ज्यादा दिल के धनी थे। शीघ्र को लटाने की चीज समझते थे। उनके लिए हमने बहुत बड़ी रियासत की जम्मत की। हम संघों में उनका दया का हाथ अपने चौहर न दिखा सकता था जैसे नपोविमल को बरतमानों की एक टोली का प्रथम बना दिया गया तो जैसे घरकी पोटे को घाते में बत कर दिया गया हो।

कर्मचारियों के साथ क हाथा को सम्बा होते देखते थे मगर शिष्टाचार का हक उबाल पर न मारते थे। स्वभाव बैरान्य की धार मचा हुआ था। साधु-सन्तों के कमलाकों पर उन्हें पुरु विरवास था। सुत्र साधु-मन्त्र न थे लेकिन स्वभाव में यह गुण प्रवरय था। जहाँ तक बलीस रूमे धीर नफे-नरमान से बधमर रूमे का सम्बन्ध है वह साधु-मन्त्रों न कहीं ज्यादा साधु-मन्त्र थे। दुनिया से दिल कभी नहीं लगाया। जब तक जिये बेलायत जिये। नुकसान हुआ तो परवाह नहीं प्राप्ता हुआ तो परबाह नहीं। प्राप्ता हुआ तो बरा मुस्कराये नुकसान हुआ तो बहकहा मार कर हंस। योग धीर जिसे करते हैं? याम योग्य बान धीर जटा न नहीं स्वभाव न हठा है।

साधु-मन्त्रों के कमलाकों का कहानियाँ बड बाब से मुनते थे। मु' भी बडे विरवास से बयान करते थे। कई योगिया स उन्हें बडी भडा थी। यहाँ तक कि कभी-कभी उनका इस बरम विरवास पर भारभय होता था। उनकी दृष्टि न धर्मीयक शक्ति की कोई सीमा न थी। एक सिद्ध पुरुष एक ही समय दुनिया के धन-धन्य हिम्मा में मौजूद हो सकते हैं—इस तरह की दन्त कथाएँ वह घटन मन्त्राई को तरह मानते धीर बयान करते थे। हमको मानन में किमी को शक हा सकता है यह कदान शान' उन्हें प्राप्ता ही न था। यह बैरान्य इमी साधु प्रवृत्ति का परिष्कार न था। शायद यही उनकी विन्धी का सबसे महत्त पहलु था। मर भी योग करते थे धीर इनम उन्हें ध्या धन्याम हो गया था।

शान्ति कन उम्र में ही हा गयी थी। उनकी मृत्यु क दो-छाई मान पश्य ही पत्नी का स्वगवान हो गया। जिन लजन धीर प्रम में उनकी चिरिन्मा न धन्त रहे वह एक करण बरम था। देवी जी स्वामिनी समझार धीर मानन को तत्र तत्र पत्रिकाबानी स्त्री थी। मन्त्री जी की स्वच्छन्दता उनके जीवनकाल में सीमाया की पात्र रहीं। उनकी मृत्यु हम बध के पुनमे क विण बूच का विधान थी। मन्त्रिम से मान भर पुत्र्य होया कि बीमारियो ने घा भरा। भीतर का दर बाहर निजन पड़ा। शान्तों धीर बटों पर विरवास न था होमियोपैथिक इलाज के कायत थे। सगनऊ में मुशी महारेव प्रसा' माहक एक गरीब-दोस्त रईम है। जलता की सबा क लिए ही जटान

होमियोपैथिक चिकित्सा का अध्ययन किया है और शहर के परीसों की बहुत रिनों से निःस्वार्थ सेवा कर रहे हैं। मुंशी जी उनके गुणों के कल्पित थे। उनका इलाज मुक किया। रोज न रोज सेहत खराब होती जाती थी। चेहरा पीला पड़ गया था। कई महीने के बाद सेहत हुई मगर शोक सौपायिक था। कुछ महीनों के बाद फिर बीमार हुए और अबकी बुनिया ही से जिंदा हो गये। तेईस दिसम्बर को मर्रास गये। इतने लम्बे सफर के कामिल हरगिज न थे मगर मिट्टी तो भारत में लिखी थी और पीरे बीच में पयी।

गुस्सा बहुत कम आता था। या यों कहिए कि जस बहुत कर सकते थे। गुस्से की इतहाई सुख भी नीची घाँवों और होंठों पर सामोशी की मुहर।

प्रारंभ से उन्हें पुराना बी जो इस प्रणाली के युग में असाधारण बात है। मेकी कर और हरिया य जाल के पाबन्द थे। कोई सोसाइटी कोई संसुमन या समा ऐसी न थी जिसे उनके हाथों नाम न पहुँचता हो। जो कुछ देते थे चुपचाप बैठ थे। मरने के बाद सब मानुस हो रहा है कि उनके बाल की परिधि कितनी विचाल थी। पत्रिका साइफ से उन्हें दिलचस्पी न थी मगर राष्ट्रीय धाम्बोलनों के ब्रह्मचर्य थे। मित्र-मंडली में अपने राजनीतिक विचारों को निर्भीकता से व्यक्त करते थे और राजनीति धाम्बोलनों की सहायता करने में अला-भीषा न करते थे। तकबीर ने उन्हें रियासत ही जो हुनदरिया अन्ता के साथ थी।

रईसों न हाकिमों का मुह बोहने और किलानों की भूख का मक धाम है। मक क्यो क्यो प्रतिपक्ष की हुसल जिसे नहीं। विचारों परीक्षा में प्रतिपक्ष बाहता है, हुकाम कारनुबारी न रईस सुहरत में। मुंशी जी की असाधारण प्रकृति के लिए सुहरत और विचाल ने कई धाम्बोलन न था यहाँ तक कि हुकाम से मुसाकस करना भी न पसन्द करते थे।

कुछ लोगों की स्वभावगत विशेषताएँ बहुत स्पष्ट और कुली हुई होती हैं क्यो निरी हुई इतनी निरी हुई कि उसे धर्मनाक कह सकते हैं कहीं बुसग इतनी बुसल कि बाली कही देखने को नहीं मिलती। मुंशी जी का स्वभाव समतल था और सैदान की तरह जिनमें कुनाफन है, हरियासी है, सरगता है, अंध-बाले का नाम नहीं। उन्नी दिवंगी में क्या बीस सबके बड़ी थी इकन कैला मुकिम है। यह किती तरह की उद्दाम प्रेरणाओं के व्यक्त न थे। यहाँ तक किताबी पढ़ता है, बीच का पस्ता ही समका रास्ता था। धर्मियों से भासते थे। बुनिया के मामलों में सोच-विचार करने की परबाह न थी। उनके दीवानखाने के नीचे ही बुक-रिपो है, यहाँ सैफरों मोप काम करते हैं मगर शायद दिवंगी न दो-एक बार से ब्याचा रिपो में कदम नहीं रखा। अन्ता-बोड़ा इलाका है मगर हायर ही किमी रिसे में निगरानी के ब्याम से मये हों। विचारों और कर्मों से मुकत जीवन व्यतीत करते थे। स्वाभियुक्त सगाहचारों का

भारत वेकर होता था। इसी बीरम्योचित निस्पृहता को उनकी सबसे बड़ी विशेषता कह लीजिए।

शिकार और भुड़वीड़ में बहुत लौक था। राम में दो-बार हिमान्तम की तरफ में शिकार लेमने बकर जाते थे। यहाँ तक कि बीमारी कुछ कम होते ही शिकार लेमने पये और वहीं बीमारी फिर बढ़ गयी। मिशान बभूक था। भुड़वीड़ में इससे भी ब्याप्य विमचस्पी थी। धब्बे-धब्बे असौरा भोडे जमा कर रखे थे। मदास की प्राणान्तक भाषा भी भुड़वीड़ ही के सिमसिसे में की थी। वहाँ उन बोटों ने घूम मचा दी थी मगर मृत्यु शय्या पर इन बीतों से क्या पुरी होती।

ससनक के वारिक थे। मापूसो रईस भी गर्मियों में पहाड़ों की घर करते हैं मूँशी की मई-जून की गर्मियाँ ससनक ही म गुबार होते थे पहाड़ की विमचस्पियों से उन्हें कोई वास्ता न था। उनका समतल स्वभाव हर तरह की परेशानी और दिवाने से बचपता था। दोसत की हबस न की यों एक बार सट्टे का भी लौक हुमा मगर दोसत उनके हाथों में घसनी का पानी थी। बरबार के हितैयियों की धारें बघाऊर को घायमी पहुँच जाता कुछ न कुछ लेकर ही लौटा था।

ब्यापार की मंत्री कुछ रिगों से प्रबन्धकों के लिए बिन्ता का कारख हो रही थी। प्रस्ताव हुमा कि कमचारियों के वेतन में कटौती कर दी जाय। इसका मफरा लीयार हुमा घायस में मुबाहसे हुए और प्रस्ताव ने घमसो वूरत अस्तित्वार की। मगर मूँशी जी ने बहुत घायस किये जाने पर भी उस पर इस्तसत न किये। बात वहीं खत्म हो गयी। उनका कम परवरित करने के लिए या लून करने के लिए नहीं।

दिबंयत की यावमार वो बेटे हैं। बड़े साहजबादे की उम्र सोलह साल की है, छोटे घनी चौबे-नाबबें साल में हैं। तीन बेटियाँ भी हैं। बड़ी बेटो की शादी हो चुकी है। नाँ के प्यार से पहले ही बंचित हो चुने व बाप का सत्या भी उठ गया।

मगर इनसे भी ज्यादा बदनाक हालत उनकी माँ की है जिनका साल उनकी मोर से हमेशा के लिए छील लिया गया। कुशमठीब है वह जो नेकनाम जोते हैं और नेकनाम मरते हैं। घाय सारा सहर दिबंयत के लिए मातम कर रहा है और दुनिया एक घायब होकर रह रही है—

परती माता वा एक सपूत उठ गया।

जमाना फरवरी १९३१

कर्मवीर विद्यार्थी जी

कानपुर के इस हत्याकाण्ड में राष्ट्र को सबसे बड़ा भयंकर जो क्षति पहुँची है वह विद्यार्थी जी की शहारत है। मुदा हुमा जन फिर धा बावगा उमड़े हुए पर फिर

॥ कर्मवीर विद्यार्थी जी ॥

४१७

ध्यान हो जायेगा माताओं के दोष में फिर अपने खोलेंगे पर वह कर्मवीर भारत के
 सदैव के लिए उठ गया । विद्यार्थी भी के जीवन की सरमता और पवित्रता सात्विक
 थी । हम यह तो नहीं कह सकते कि हमारी उनसे अनिष्टता थी पर सात में दो-तीन
 बार हमें उनके दृष्टानों का सीधाय्य प्रसरण हो जाता था और उनके दृष्टानों से आत्मा पर
 आशीर्वाद का-सा जो प्रसरण पड़ता था वह अकल्पनीय है । स्वार्थ-चिन्ता न कभी उनकी
 आत्मा को मलिन नहीं किया । उनका समस्त जीवन यज्ञमय था और अथापि ईश्वर की
 इच्छा थी कि उनकी मृत्यु उस यज्ञ की पूर्णतुष्टि हो । इस विरोध के एक या दो दिन
 पहले मदनलाल काँप्रेस कमेटी के दफ्तर में हम उनके दृष्टान हुए थे । उनके चेहरे से
 मौतने के दार में उनसे मिला न सका था । कितने उपार्क से गले मिले । विरोध महान
 आत्माओं का स्वामी कुछ है । उनकी सीधी-सी बात में भी विरोध की कुछ न
 कुछ मात्रा होती है । अपने जेब जीवन की एक बटमा हँस-हँस कर सुनाने लगे । बिक्टर
 ह्यूयो पर उनकी बड़ी प्रशंसा थी । 'मार्गनी वी' का अनुवाद वे पहले कर चुके थे । अथकी
 जेब में ह्यूयो के अगत प्रसिद्ध ग्रन्थ 'सेमिबरेबुल' का उन्होंने अनुवाद किया था । बोले
 'कोई पत्रक ही पृष्ठ होंगे । आपका प्रेस छापना चाहें तो मैं दे सकता हूँ ।

यह तो उनका विनीत मात्र था ।

कौन जानता कि यह उनके अन्तिम दृष्टान है । उस समय तो कपची जाने की
 बाध्यता हो रही थी ।

विद्यार्थी जी ने बेश म का सम्मान और यश प्राप्त किया वह उनकी सेवा का
 प्रसार था । वह बहुत बड़े विद्यालय न थे बड़ी-बड़ी उपाधियाँ न प्राप्त की थीं मगर हृदय
 में सेवा की ऐसी जगह थी जिसने उनकी सेवाओं को श्रेष्ठ उनकी माया का स्फूर्ति
 उनकी बाधों का प्रमाण और व्यक्तित्व को गौरव प्रदान कर दिया था । उनकी आत्मा
 निष्कण्ट और निर्भीक थी । राजनीतिक सम्स्याओं पर वह कितने साहस से अपनी
 सम्मति प्रकट करते थे उसने हमारे सम्पादकीय जीवन में अमर स्फूर्ति दी थी ।
 अत्याचार के विरुद्ध उनकी तलवार सदैव म्याल से बाहर रहती थी । 'प्रदाप' ने अपने
 बीच बप के जीवन में कितनी बाधाओं पर सफलता के साथ विजय पायी वह विद्यार्थी
 जी के सद्साहस न्याय-निष्ठ और कर्तव्य-मय का उज्ज्वल प्रमाण है ।

हिन्दू-मुसलिम एकता के बहु अग्रगण्य प्रकृत थे । विद्यार्थी जी उन राष्ट्र-सेवियों में
 से थे जिन्होंने साम्प्रदायिकता को कभी अपने पास नहीं धारण किया । यह उनके राष्ट्रीय
 जीवन का मूल सिद्धान्त था । हम यह अनुमान कर सकते हैं कि कानपुर में जब यह
 भाग भड़की तो उनकी आत्मा का कितना आघात पहुँचा । शहर में हाहाकार मचा
 हुआ था । शहर ने नेता कथम्य प्रकट हैं । अपने-अपने पदों में बैठे थे । हिन्दू और मुसल
 मान एक दूसरे पर अमानुषिक अत्याचार कर रहे थे पर यह कर्मवीर अपने प्राणों को
 हवेसी पर लिये वीरिय परिवारों की सुखसुविधा स्थानों पर पहुँचाता आहूतों की सेवा और

अनार्यों की सहायता करता फिरता था। हितचिन्तक गण मममयते व पर जिसका जीवन का मूल आधार इतनी निश्चयता से पर्यो उनके रीति का रहा हो उसे ऐसी चेतावनियों की क्या परवाह हो सकती थी। धर्म जैसी पवित्र वस्तु जो मलिन धारणाओं में जाकर इतना भयंकर रूप धारण कर लेती है। धर्म जिसका उद्देश्य है मनुष्य को सत्य की धोर से आना उसकी परमोक्त बुद्धि को शक्ति देना नहीं माननी कुवसताओं से क्लृप्त होकर धर्म हिंसक बलु के रूप में प्रकट हो रहा है। वह धर्मान्विता जो ऐसी पवित्र धारणाओं के रक्त से अपने हाथ रेंगती है उसकी किन् शक्तों में निम्न की आन। उन्हीं लोगों के हाथों यह धर्म हृषा जिनकी रता के लिए वह निकले हुए थे। धर्मान्विता तेरी बलिहारी है। तु शत्रु धोर मित्र का भी विवेक नहीं रखती।

धर्म इस कमवीर की मृत्यु ने हमारे राष्ट्रीय जीवन में ऐसा स्थान खाली कर दिया है, जिसकी पूर्ति होना कठिन है।

मार्च १९३१

पं० पद्मसिंह जी शर्मा का स्वर्गवास

कोल आनता का कि हिन्दी-साहित्य का यह सुष अपने साहित्यिक जीवन के मध्याह्न में ही बों अस्त हो जायगा। पृथ्वी शर्मा जी उन धुन के पूरे मनुष्या में थे जो कभी बड़े नहीं होते। जिनके विचार समय के साथ प्रीड़ उभरत धीरे उभरते जाते हैं। इतर मानने कई ऐसे मार्क के लेख जिसे जिनमें सिद्ध हुआ कि आपकी धरत का कुछ ही हो आपके कलम में अक्षरी के शब्द स भी बढ़ा हुआ शब्द है। 'विराजत भारत में हिन्दुस्तानी एकादमी द्वारा प्रकाशित मि अम्बुस्माह युग की आपने जो विद्वत्तारुण शोचता निम्नी थी उसने बड़े-बड़े दिग्गज अहम्मय प्रोफेसरों की आपका शोचता लबा दिया। आपकी अकाल मृत्यु से हिन्दी-साहित्य का एन स्तंभ उठ गया। धर्म हम शरों धोर निराह शीड़ते हैं और हमें कोई ऐसा धारमी नहीं दीगता जो मुनेत्रक होने के साथ ही इतना प्रकाण्ड विज्ञान भी हो। धर्म में मनीन धोर प्राचीन का अमृतपुत्र मेल हो गया था। क्या सस्तुत क्या हिन्दी क्या उरु क्या धरमी आप इन मनी साहित्यों के शोचता थे। अक्षर अक्षर क तो आप धारिक ही बहू का सचते हैं। मैं धारमी अक्षर से अक्षर की मीकडां मुक्तियां सुनीं हैं। आप उन पर मरत हा आते थे। द्विती में आप एव लाम रीलो के अग्रदाता हैं—जिसमें अक्षरमायन है शोनी है अक्षर है और उसके साथ ही मनीम भी। उमका पाठित्य उमक जानू थ है। वह उर पर अक्षर की अक्षि मकार होते हैं। उमकी सगाम डीलो नहीं करते उने बहने नहीं देते। मुक्तिया के आप अक्षर व। धीरे उममें ता अक्षर भी नहीं कि अक्षर-शक्ति के

धाप ममज्ञ थे। उनके सतसई-सहार पर कुछ महानुभावों की यह एतराज है कि उसकी
 बुद्धिमाँ बजरत्न से क्याया ठेक है—बुद्धिमाँ नहीं है, बल्कि बरसियों की चोटे है।
 कहीं-कहीं तो बममोज है लेकिन जब हम देखते हैं कि धामोष्य पुस्तक उस धारपी के
 कम्म से निकली थी जो विद्या-वारिधि का उपाधिधारी था तो हमें शर्मा जी को
 कटुता स्वामाधिक-सी भगमे भगतो है। शर्मा जी किसी नये लेखक में उन धसतियों को
 बकर जमा कर देते। जो पुराना सिनाड़ी जिन्हु का मन्ग न जानते हुए, सॉप के मुँह
 में जयपी बस उसक दुस्साहस को शर्मा जी बसा निर्भीक धामोषक कसे जमा कर
 देता। धौर सतसई-सहार की भूमिका तो हिन्दी-साहित्य का रत्न है। शर्मा जी जितने
 बडे साहित्य-सेवी थे उससे कहीं बडे मनुष्य थे। धापसे मिलकर कभी भी नहीं भरता
 था। नये लेखकों को धाप बह प्रोत्साहन देते थे जो माता धपने कटपटे वालक को बेटी
 है। मेरे ऊपर तो उसकी बसीम कृपा थी। सिवासदन उपभ्यास-क्षेत्र में मेरा पहला
 प्रयास था। शर्मा जी ने जिस तरह मिल खोजकर उसकी वाद दी बह में भूम नहीं
 सकता। उस समय उनकी कठोर धामोषना न मंग बंध कर दिया होता। उसके बाद
 जब-जब मुझे उनसे मिलने का सुझावसर मिला इस तरह टूटकर मसे जवाते थे कि जिस
 उनके इस सौजन्य पर पुनश्चित हो उठता था। सरस बीबन धौर ऊँचे विचार की ऐसी
 मिसाल मुरिकम से मिलेकी। हूँ विस्थाप्त है, कि हिन्दी-संसार इस महारबी की कोई
 ऐसी सावगार बनायेगा जिससे मामूम हो कि हिन्दीवाले बुद्धियों का सम्मान करना
 जानते हैं। बर्ना शर्मा जी के स्मारक तो उनकी बह रचनाएँ हैं जो बिरकाल तक उन्हें
 धमर रखेंगी।

मई १९३२

डाक्टर एनी बेसेंट की छियासिवी जयन्ती

डाक्टर एनी बेसेंट ने जन्म से धाहरित होकर भारत के लिए जो कुछ किया है,
 बह महत्त्वा पांकी के सिवा शायद ही किसी ने किया हो। भारत में होम रूल का बीज
 पहले-पहल उन्होंने बोया धौर उसके लिए धसाधारण स्वाध का परिचय दिया। उनके
 जीवन का सबसे बड़ा काम बिरब-बंधुत्व का बह भाव है, जिसको उन्होंने मया जीवन
 प्रदान किया है। उनके धसम्य परिधम की देनकर धण्डे-धण्डे दंग रह जाते हैं। कई-
 कई पत्रों का संपादन पुस्तकों की रचना देस-विदेस में प्रचारण धमल में सभी काम
 बह एक धाव करती थीं। योरोप में कई सामाजिक प्रश्नों क विषय में जो कुछ बातें
 हुई हैं उसमें धावर एनी बेसेंट का भाव जितनी से कम नहीं है। धाव संसार में उनका
 जितना सम्मान है उतना किसी भी बोधित व्यक्ति का नहीं है। हिन्हु-संस्कृति धौर

शास्त्रों की तो उनके हाथों जो प्रोत्साहन मिला है वह चिरस्थायी रहेगा। भारत के फिटने हो स्वार्थों में उनकी छियासिबों जयन्ती मनायो गयी। हम भी हम धरमर पर अपनी धटीबिसि उनकी सेवा में धर्पित करते हैं।

१२ अक्टूबर १९३२

रूस का भाग्य-विधाता

सोवियत की मृत्यु के परन्तु उसके विरुद्ध ही साक्षिण न विनम ट्राटस्की विनोबीठ कार्मेनीठ बुसारिन आदि जैसे प्रतिमातामी धौर सुयोग्य व्यक्ति न रूस की बागडोर अपने हाथों में लेने की चन्टा की पर एक एत अपरिचित व्यक्ति के कारण जिसका नाम उस समय तक सुनन न भी नहीं आया था उन सबको एक-एक करके निकाल बाहर किया और स्वयं इसका भाग्य-विधाता बन गया। इस व्यक्ति का नाम स्टेलिन है और इसके सम्बन्ध में विभिन्न देशों के पत्रों न तरह-तरह की बातें छपा करती हैं। कुछ दिन हुए उसके एक मृतपूज सेक्रेटरी ने पेरिस से निकलनेवासे एक बोसरोविक विरोध-पत्र में उसका बखानामक परिचय प्रकाशित कराया था। यद्यपि उसे पढ़न से तुरन्त ही प्रतीत हो जाता है कि यह लेख किन्ती व्यक्ति ऐसे का सिद्धा है किमने स्वयं की स्टेलिन के कारण बनना पहुँचा है। तो भी उससे स्टेलिन की एसी फिटनी ही विरोधताओं का पता मगता है, जो लेखक की बुद्धि न यद्यपि यथस्यता और अतिथित होने की सूचक है, पर भारतवासियों की बुद्धि न वे एक सच्चे तपस्वी के गुण समझी जाता है। लेखक ने स्टेलिन और उसके साक्षियों को अविचारता विषयों में धयोम्य बतलाया है। पर उसके प्रबन्ध से उसकी जो धनुषम उन्नति हो रही है उसे देखते हुए उन बातों न कुछ सच्चाई नहीं जान पड़ती। नीचे हम उन लेख का कुछ धंरा देते हैं जिसन पाठक स्वयं इस सम्बन्ध में निर्णय कर सकेंगे।

‘स्टेलिन ऐसा व्यक्ति है, जिसने समस्त मानवीय आकाङ्क्षा का हर दर्जे तक बटा दिया है। एकमात्र प्रधानता की धसीम प्यास ने उसका पीछा नहीं छोड़ा है। वह एक त्वापी की भाँति क्रमलिन के दो छोटे-छोटे कमरों में किमने बार के समय महान के नीकर रहा करत वे रहता है। यह प्रसिद्ध है कि वह शासन ही कभी किन्ती प्रकार का धामोत्र-धमोत्र करता है। कभी किसी प्रकार की फिज्जुस लक्षों नहीं करता कभी सरकारी रकम से एक पसा भी धपने लिए नहीं मता। उसके लिए सबों धी निम बहुमान का अस्तित्व ही नहीं है। अपनी स्त्री ने सिधाय वह ससाल की रिमा स्त्री की तरह धाँस नहीं उठाता।

‘जब कोई व्यक्ति प्रथम बार उससे मिलता है तो ऐसा प्रतीत होता है कि वह सीधा-साधा अपने ऊपर कम्ब्या रखनेवाला मिलभापी और बहुत बुरा व्यक्ति है। पर जब उसका विशेष परिचय प्राप्त होता है, तो पता लगता है कि वह विमकुल संस्कृति-विहीन व्यक्ति है। जैसे-जैसे उससे आपकी अनिच्छता बढ़ती जाती है आपका धारण्य बढ़ता जायगा। उसमें राजनीतिक समस्याओं का समझ मकने की बुद्धि नहीं है, उसे प्रबन्धन और धर्म-धर्म का कुछ भी ज्ञान नहीं। विदेशी भाषाओं से तो वह अनजान है ही बसी-साहित्य का भी उसे ज्ञान नहीं। वह हँसी-मजाक करना नहीं जानता। अपने पचीनस्व कमचारियों और कुटुम्बवालों के साथ वह बड़ी निरंकुशता और उच्छ्रिता का व्यवहार करता है। वह अपने भेष का बहुत धिपा कर रखता है और बड़ा जानाऊ तथा प्रतिहिता का भाव रखनेवाला मनुष्य है। वह अपनी गुप्त योजनाओं को किसी पर प्रकट नहीं करता। बरघसल वह बिना आवश्यकता के बोसता ही नहीं और प्रायः मौन रहा करता है।

३१ अक्टूबर १९३२

सर अलीइमाम की स्वर्ग-यात्रा

सर अलीइमाम के उठ जाने से बिहार का वह सपूत उठ गया जिस पर बिहार को ही नहीं भारत को सब का। संसार में जितनी विमूर्तियाँ हैं वह सभी उनके हिस्से में प्रचुर मात्रा में पड़ी हैं। एक जमाने में वह मुसलिम सींग में थे लेकिन इधर कई साल से वह पक्के राष्ट्रवादी हो गये थे और जलनक के मुसलिम सम्मेलन की सभारत की थी। आप गौतमजी में भी शरीक हुए थे पर अस्वस्थ रहने के कारण उसमें प्रमुख भाग न ले सके। विदम्बना यही है कि सभी आपके पिता भीलवी इमशदइमाम साहब जीवित हैं। इस प्रसंग पर, जबकि देश एकता के लिए माय बूँद रहा है सर अली इमाम की मौत देश के लिए बलघात से कम नहीं।

७ नवम्बर १९३२

मि० थामस बाटा

मि थामस बाटा संसार में भूते के सबसे बड़ व्यापारी थे। उन्होंने करोड़ों की सम्पत्ति छोड़ी है और अब उनकी जगह उनके माई मि थाम बाटा उस कारखाने के अध्यक्ष हुए हैं। थामस बाटा ने यह विशाल सम्पत्ति अपने ही उद्योग और परिश्रम से प्राप्त की थी और यद्यपि वह व्यक्तिवाद के समर्थक थे पर उनका व्यक्तिवाद समष्टि

को परों से मुक्त कर नहीं उसके सहयोग पर आधारित था। वह अपने कारखाने के मजदूरों को भी लड़ा में भाग लेकर उन्हें एक प्रकार से अपना साथीदार बना सेते थे। यही कारण है कि मजूर उनके कारखानों को अपना समझते थे और भी ठोकर काम करते थे। मि बाटा का जीवन आदर्श कहा जा सकता है। वह सुर मय मजूरों को भाँति कारखाने से बहुत थोड़ा पारिश्रमिक से लिया करते थे हास्यिक काम औरों से कई गुना ज्यादा करते थे। उनके घर का खर्च भी हजार पाँच सानाना से अधिक न था। अपनी निपटा स्त्री को भी उन्होंने केवल उतनी ही रकम उनके मे दी है जिससे उनकी पुत्र हो जाय। मजूरों के लिए सम्पत्ति बनाना उनके जीवन का उद्देश्य न था। इन रकमों से कई गुनी रकम उन्होंने मजूरों के लिए व्यापारशाळा और विनोदगृह बनाने के लिए छोड़ी है। कहते हैं कि जेकोस्तोवेकिया में जहाँ उनका हेड मास्टरिस था उनका मजूरों और जनता पर इतना धरर था कि म्युनिसिपलिटि के बयानिस मेम्बरों में एकतासिस केवल उनके भेजे हुए थे। धरर ऐसे पूर्वीपति हों तो कम्युनिस्म के लिए कहीं खान रह जाता है। यह तो पूर्वीपतियों की धन्वी स्वाधरता है जो कम्युनिस्म का पोषण करता है।

७ नवम्बर १९३०

श्रीयुत सहगल का पद-त्याग

हमें इस समाचार से बड़ा श्रेय हुआ कि प्यारू वप तक 'चाँद' द्वारा समाज की सेवा करने के बाद मि सहगल को चाँद से सम्बन्ध तोड़ना पड़ा। मि सहगल में इसे दोष समझिए या कुछ कि बदन की धररत नहीं है। अपने आत्म-सम्मान की रक्षा के लिए वह बड़ से बड़े मुक्तमान की भी परवाह नहीं करते। धरर वह अपनी आत्मा को कुछ मयकदार बना सकते तो उनके भाग में कोई बाधा न खड़ी होती। सक्रिय इन नीति को उन्होंने हमेशा हीय समझ और उसका प्रत्यक्षित आर्थ उन्हें इन रूप में करना पड़ रहा है। इन दस बरनों में मि सहगल ने दिखा दिया कि मन्वी लगन और एकता से काम किया जाय तो पत्रकार भी सफल हो सकते हैं। भारतवप म कदाचित् 'चाँद' ही ऐसा मासिक पत्र है, जिसकी आहूक संख्या सोलह हजार तक पहुँची। मि सहगल ने भारतीय महिलाओं की जागृति का लक्ष्य अपने नामने रखा था और उन्हें अपने उद्देश्य में जितनी सफलता मिली है उतनी बहुत कम किसी को मपीब होती है। उन्हें यह श्रेयकर जितना आनन्द हो रहा होगा कि बोर्डों और कॉमिषनों में महिलाओं का निर्वाचन होने मना विधानमयों में उनकी मक्या बढ़ती जाती है परन्तु धरर मासिकी मय से रहा है और भारतीय महिला-सम्भलन ने विवाह-विच्छेद और मदान-निषह का

को स्वीकार किया। दोनों ही पुस्तकें देवी जो की बिखरे मोती' और 'मनत्र जो की 'परम' इस सम्मान के योग्य थी। 'बिखर मोती' मारी-हुए का प्रतिबिम्ब है मारे-हुए की सारी क्षमितापाषाणों और जागृतियों का धारणा। 'परम' मस्त प्ररखा और दार्शनिक संकोच का संघष है, इतना हृदय को समीपनेमाना इतना स्वच्छन्द और निष्कपट जिस संबंधों में अकड़ी हुई धारणा की पुकार है।

बिधि की कितनी कर सीमा है कि इधर तो यह पुस्तकानुसार उधर उनका धाम भर वा हसता-मेमता बच्चा परसोक निवारण। अब बिम मुँह स कह कि निशों की दाबत करो। बिधि को धारण उस धारण का मन्त्र मना वा तो वह बिना धारण के मन से। बधाई तो दी है पर रोनी हुई धारणा स।

जनवरी १९३३

अभिनन्दन

मध्य क प्रति यज्ञ का प्रयत्न करना एक बहुत बड़ा सामाजिक कलम्य है। जो समाज जिसकी ही उत्पत्ता और मर्चाई के साथ इस कलम्य का पालन करना है वह उतना ही मजबूत और समझिशाकी बना रहता है। जहाँ इस माय का समाज है वही बिद्य विपद् और विनाश भी बचता है। जहाँ इनका प्रचार है वही स्वतः और मौज्य की सति हुमा करती है और संयम-मुखा की कृष्टि भी। प्रचार वही बँटता है जहाँ पुत्र होती है, बड़े लोगों की मक्या वहीं बजती है जहाँ बड़पन के सच्च पाशकी रहते हैं। इसीलिए बीरपूजा की प्रथा को हम मसार की समस्त सामाजिक प्रथाओं स बजकर मानते हैं। यही प्रथा हमारे अक्षतारवाय की निधि है। धम आहिरय गजमोति चाह दिजे से सीरिए, इनमें स प्रत्यक के काय अक्ष म इनो प्रथा के द्वारा प्ररखा शक्ति वा प्रादुर्भाव और प्रसार किया जाता है। बुद्ध ईसा और मुहम्मद की पुजा करके हम धरने धार को उपभूय करके हैं महात्मा गांधी लेनिन और मुसोलिनी का धारण करके हम स्वय समाज होय है, तुलसी रामोत्र शोकसपियर, रोमेरोलाँ और शाँ की मोक्ष-विधाओं को मला को स्वीकार करके हम अपने धार का बड़ा बनाते हैं। जो हमस बड़े हैं जिम्मेन हमको बनाया है उनके चरणों पर धड़कीलि चक्रार ही हम बहु बरधम प्राप्त कर मरने हैं जो हमारी जीवन-व्योति को मरक जगाय रहे। यद्यप्य धार परम पुत्रगीय धारण कर हमें धारणा हर्ष हो रहा है। यह उम्मान हमार अभिष्य की उज्ज्वलता का धोतर है। धार्शनिक हिन्दी की भी-कृष्टि करनेमाने इस वास्तवी धारण की यह धारणा इस बाग की मूकता है रही है कि हम हिन्दीबाय भी अक्ष धारण धार को परधान मरने को

॥ अभिनन्दन ॥

चमत्ता के निष्कट धा पहुँच है। हमने सब बातें हैं, पहले ही से जमी धा रखी है, धमाम
 केवल इसी बात का है कि हम अपने घर के लोगों का अच्छा धारण करना नहीं जानते
 या धान बुझकर नहीं करते। उदासीनता और उपेक्षा का यह रोग बड़ा ही विधातक
 है। यह न होता तो धमी तक हिन्दी में धन्तर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा के धनेक लेखक धीर कवि
 पैदा हो चुके होते। ध्यक्तित्व बनाया जाता है, स्वयं नहीं बनाता है। मोकलाका ही
 ध्यक्तित्व की महिमा प्रतिष्ठित करती है। हमारे धाचार्य द्विवेदी भी इसके प्रत्यक्ष प्रमाथ
 है। धपनी निस्वाध साहित्यिक साधना से उन्होंने जिस बातावरण की सृष्टि की उसके
 भीतर से इसी मोकलाका का प्रावुर्माण हुआ धीर यही धात्र के हमारे इतने बड़े धाङ्गाप
 का कारण धनी। इस प्रकार की धाकांक्षाओं का हमारे बीच बिलना ही धमिक प्रसार होना
 हम उतनी ही बल्की धपने धाप को समुदाय बना सकेंगे। धात्म-धरणाएँ का सबसे बड़कर
 धरम धीर सुन्दर उपाय है—धात्पापथ। धाम साध हिन्दी जबत धपने धाप को धाचार्य
 द्विवेदी की के बरछों पर धपित कर देने के लिए उन्मसित हा उठ है, यह उसके
 सीमान्त का सबसे बड़ा धिन्त है। हम हिन्दीवाने धात्र उनके बरछों पर पूजा-धुष्य की
 तरह पडे रचना चाहते हैं। हमारा धात्र का धिन केवल इसी काम में धाये यही हमारी
 कामना है। क्या ? केवल इसलिए कि धात्र हम को कुछ भी है उन्ही के बनाने हुए है।
 यदि पं महाधीर प्रसार भी द्विवेदी न होते तो धमी बेचारी हिन्दी कोसों पीछे होती—
 समुद्रति की इस सीमा तक धाने का उसे धबसर ही नहीं मिलता। उन्होंने हमारे
 लिए पथ भी बनाया धीर पथ प्रदर्शक का भी काम किया। हमारे ऊपर उनका भारी
 ऋण है धीर उनके बरछों पर झुक कर ही हम उसे स्वीकार कर सकते हैं—किसी धम्य
 प्रकार से नहीं।

इस पुनीत धवसर का धिन्न-धिन्न रूप से उपयोग किया जा रहा है। कासी
 नायरो प्रचारिणी सभा धाचार्य के कर कमलों पर 'धमिनन्धन धंय रख रही है प्रमान
 कुछ सीध द्विवेदी मेला का धायोजन कर रहे हैं। हमारे हृदय में भी बड़ा है पर
 । साधनहीन है। धतएव हमारे पास को कुछ भी है इसी को सब कुछ मानकर हम
 ने इस छोटे से मासिक पत्र 'हंस का 'धमिनन्धन' निकाल कर ही धपने धापको
 लुप्त कर लेना चाहते हैं।

पर इस 'धमिनन्धन' क सम्पादक न नाते हम क्या क्या समझ में नहीं
 ता। हमारा हृदय तो इतजता के धावों से इतना धरा हुआ है कि उसके भीतर
 धी-विधान के लिए कोई स्थान ही नहीं दिखायी देता। हम हिन्दीवालों पर धाचार्य
 इनेनी की के उपकारों का बोध सदा हुआ है—हम कुछ बोलें तो बोलें कैसे ? हमारे
 लिए उन्होंने बड़ तपस्या की है जो हिन्दी साहित्य की बुनिया में बेजोड़ ही नहीं
 धायगी। किसी ने हमारे लिए इतना नहीं किया जितना उन्होंने। न हिन्दी के धरम

सुन्दर रूप के विभायक बने हिन्दी साहित्य में विश्व साहित्य के उत्तमोत्तम उपकरणों का उन्होंने समावेश किया बर्जनों कवि सेनाक और सम्पादक बनाये। जिसमें कुछ प्रतिभा देखी उसी को अपना लिया और उसके द्वारा मातृभाषा की सच्ची सेवा करायी। हिन्दी के लिए उन्होंने अपना तन मन धन सब कुछ अर्पण कर दिया। हमारी उपस्थित न्य-काम्य उन्हीं के त्याग का परिणाम है।

डिबेरी जी का व्यक्तित्व बड़ा ही प्रभावशाली है। मुसमलहस पर दृष्टि डालते ही यह बात स्पष्ट मासूम हो जाती है कि उनमें रचनात्मक शक्ति कूट-कूट कर मरी हुई है, बस सञ्च युग प्रवर्तक है उनमें क्रान्ति से घाने की विमलसुख क्षमता है। उत्पन्न लमाट घनी मीहें, रोजवार मुँहें रसमयी मंभीर झालें और अलख-मभोर बाणों उनकी विशिष्टता आपित करती है और बेसने से ऐसा मासूम पठता है मानों किसी बेसे व्यक्ति क पान है जो हमारे लिए हमारे बीच भेजा गया है—जो सब तरह से हमारा ही है।

स्वभाव से अत्यन्त दुःख-प्रतिज्ञ और हृदय से परम कोमल ब हमारे अपने हैं इस बात को हिन्दी जगत उसी दिन मान गया था जब वे सरस्वती में थे। उन दिनों वे हम सब को पिता की तरह शासित किया करते थे और माता की तरह प्यार। वे हमें हमारी गलतियों पर फटकारते थे उन्हें प्रेमपूर्वक मुधार देते थे और हमारी सफलता पर हम प्रेम के मोहक भी निभाते थे। उन्होंने ठोक-ठोक कर हम सुचारु पुष्कार पुष्कार कर ठीक रास्ते पर चढाया और उत्साह द-बेकर धामे बढ़ाया। इन सबके चलते आज हम उनका जितना भी सत्कार करे बोड़ा है। यदि आज ब बंगाली होते तो बंगाल के विश्वविद्यालय उन्हीं की सिद् धारि सम्मानित पदवियों से विभूषित करके अपना गौरव समझते। पर, हमारे प्राप्त क और-धीर विश्वविद्यालय को तो बात ही क्या हमारा अपना हिन्दी विश्वविद्यालय जिसके प्राण स्वयं महामना मानवीय भी है—कभी इस प्रकार का गौरव अनुभव करेगा या नहीं कह नहीं सकते। इतना ही कहने की इच्छा होती है कि इसे ऐसा करना चाहिए।

'हुँस' का यह अभिनन्दनाक कैसा हो पाया है, इसका सम्बन्ध में हमें कुछ कहने का अधिकार नहीं इतना ही निवेदन कर दिया चाहते हैं कि यह भय में डिबेरी जी के प्रति हमारी आन्तरिक भद्रा का विनम्र निबन्ध मात्र है। और हमसे इतना भी नहीं बन पड़ता यदि हमारे कृपासू सेनाक और कवि हमारी सहायता न करते। अपनी साहित्यिक संस्कृति की रक्षा के लिए हम समय-समय पर इस प्रकार के अभिनन्दनात्मक साहित्य की महत्ता स्वीकार करते हुए आभाव दिवसों को भी शीर्षायु क लिए परमात्मा से प्रार्थना करते हैं और इस बात की कामना करते हैं डिबेरी जी की भगवो हुई यह बेनि विरकान तक फूलती-फसती रहे।

अप्रैल १९३३

‘द्विज’ जी को बधाई

‘द्विज’ जी न भ्रम की हिन्दू विरबिद्यालय से हिन्दी में बड़े बीरम के नाम एम ए की डिग्री ली। थाप प्रथम अर्धी में उत्तीर्ण हुए। अंग्रेजी में थाप पहले ही एम ए हो चुके थे। मातृकता के सागर में बुबकियाँ समानेवाला कवि और कल्पना के आकार में उड़नेवाला मल्पकार और अरिज-सेनक परीक्षा भवन में बैठकर ऐसी असाधारण सफलता प्राप्त कर ले यह साधारण बात नहीं है। परीक्षाएँ तो रट्टुओं के लिए हैं और इस क्षेत्र में हमने प्रतिभावालों का रट्टुओं से नीचा देखते पाया है। कवि को परीक्षा से क्या प्रयोजन। कल्पनावालों को भाषा-विज्ञान और भाषा के प्राचीन इतिहास से क्या प्रयोजन लेकिन ‘द्विज’ ने यह पाला जीतकर साबित कर दिया कि वह भ्रम भाव शाह-भाबी की दुकान खोलकर बैठ जायें तो वहाँ भी सफल हो सकते हैं। हम इन सफलता पर आपको हृदय से बधाई देते हैं।

मई १९३३

श्री राहुल सांकृत्यायन जी

राहुल जी काचित् वह पहले भारतीय बौद्ध सन्धारी हैं जिन्होंने तीन बप सिम्बत में रहकर पानी का ज्ञान प्राप्त किया और वहाँ से बौद्ध साहित्य की सपन्न दस हजार प्राचीन पुस्तकें लेकर भारत लीं। आपने वह सब पुस्तकें पटना म्युजियम को भेंट कर लीं। ऐसा साहस ऐसी प्रतिभा ऐसा अथ्यबसाय बहुत कम किसी ने पया होना। आबममड़ के एक ग्राम में एक साधारण बाह्यस्थ कुल में आपका जन्म हुआ। आपने हिन्दी मिडिल पास किया और कुछ दिन गौकरी की तसारा में रहे। इसी बीच में आपको बौद्ध धर्म में प्रम हो गया और आपने उसकी सीखा ले ली। आपकी बुद्धि इतनी प्रबल है कि बोधे ही दिनों में आपने सस्कृत पानी संघषी बंगला खँब आदि भाषाओं का ज्ञान प्राप्त कर लिया और पुरातत्व के प्रकाण्ड पबिद्ध हो गये। फिर तो स्वर्गीय श्री बर्मपाल जी से आपका परिचय हुआ गया और आपकी प्रतिभा और निदत्ता के कारण सभी आपका सम्मान करने लगे। बर्मपाल जी ही की प्ररक्षा से आपने सिम्बत की नीपण यात्रा की। सिम्बत में बाहुरवाला का मिठना बहिष्कार किया जाता है, वह सभी जानते हैं पर राहुल जी ने सिम्बती भाषा पर ऐसा अणिकार कर लिया कि आप सिम्बत के ही समझे जान लगे और फिर तो आपकी हरेक संबहस्यय हरेक बिहार में रसाई हो गयी। आपने वहाँ बौद्ध धर्म का लूब अथ्यबन किया और हजारों पुस्तकें सभइ लीं। वह भारत साहित्य आपने वहाँ आकर पटना म्युजियम को भेंट कर दिया जैसा हम

पहले कह चुके हैं। आपन इसके बाहर बसारा की यात्रा की। फिर बीड़ बर्म का प्रचार करने के लिए इंग्लैण्ड और योरोप के अन्य देशों की यात्रा की। 'बोडे रिज हुए आपने बुद्धबर्मा' नामक पुस्तक लिखी है जो भगवान बुद्ध का प्रामाणिक जीवन चरित्र है। हृष की बात है कि इस रूप मागरी प्रचारिणी समा काशी न आपको उस पुस्तक की रचना के लिए पारितोषिक देकर आपका सम्मान किया है। कई महीने हुए आपने मागसपुर से निकलनबासी हिन्दी पत्रिका 'भगा के पुरातत्वाक का सम्पादन किया था और उसमें आपक कई पारिब्रत्यपूर्ण लेख प्रकाशित हुए थे। आपके ही परिश्रम से पुरातत्वाक छटना सफल हुआ। अब धान सिम्बत की दूमरी यात्रा करने का विचार कर रहे हैं और आप उषर से महान् कारावर आदि स्त्रानों में बीड़ घम की ऐतिहासिक खोज करने जायेंगे। धान जैसे कील के बनिष्ठ संजम्भो सौम्य पुरुष हैं। बड़े ही निम्न-सार और विनोदशील। योरोप के किनो व्यक्ति ने यह तिष्ठत-यात्रा की शोनी तो सारी दुनिया में उसका प्रोपेगण्डा होता पर भारत में आर भी एसे धर्मवीर पड़े हुए हैं जो मार्ग बुद्धि से बन् काम करके भी उसका विज्ञापन नहीं करते। हमारी हार्दिक कामना है कि आपकी यह नयी यात्रा सफल हो और आप अपना यात्रा-बुखाल्य लिखकर हमारे पुस्तकों के मागन साहसिकता और सयन का ध्यान रखें।

मई १९३३

श्रद्धांजलि

आज हम हिन्दी-साहित्य के अमर तपस्वी पृथ्वी धाराय में महाशोरप्रसाद की दिवसेरी की सत्तरवीं बपगाठ के पुनीत अवसर पर अपनी श्रद्धांजलि अर्पण करते हैं। नवीन हिन्दी-साहित्य के निर्माताओं में उनकी कीर्ति हमेशा अमर रहनेगी और इस मान के पधिकों की जीवन और आशा प्रदान करती रहेगी।

दिवसेरी की का जीवन साहित्य और मापना और तप का जीवन है। साहित्य ही उनका सम्यक था। उनकी चिन्ता और कल्पना और आकांक्षा और विनोद सब का श्रोत एक था और वह साहित्य है। साहित्य उनके लिए कीर्ति का साधन न था और धन का तो ही क्या मकता था। पात्रित्य-प्रशसन भी उनकी मनीबलि न थी। उनके हृदय में इनकी जैसे उठनी हो गहरी थी जितनी हमारे जीवन में स्वाध और ममत्व की होती है। उनका स्वाध भी यही था और पत्रमाध भी यही था।

और जहाँ ध्यस्तित्व है वहाँ शोनी भी है। शोनी भीतर की धाम्मा का बाह्य रूप है। उस शोनी में कितना गर्मज है, कितना प्रसार है कितना आर है कितना मुन

अप्य है । उसमें रसिकों का बौकापन नहीं पंडितों का गाम्भीर्य नहीं शायियों की सुकृष्ण नहीं एक सीधे-साधे उचार व्यक्ति की सजीवता है ।

साहित्य की सफलता का किताब उँचा धारदा है । कहीं से कमा से धीरे उसे किस तरह धक्के से धक्के रूप में ससार की रें यही बुन है । जन-हित का कोई ध्येय इनसे नहीं छूटा । कहीं कोई उपयोगी बीज देखी जाहे वह पुरातन्य से सम्बन्ध रखती हो या दशन से या भाषा विज्ञान से या प्राकृतिक धर्मों से उसे पाठकों के लिए सरल बनाना इनका कर्तव्य था । वह जिस बीज को पककर स्वयं बालगन्धित होतै से उसका रस पाठकों को बखाला एक ताजिबी बाल थी । 'सरस्वती' की अग्रिम छटाकर द्विबेदी थी की सम्प्राप्तकीय टिप्पणियाँ देखिए विविध ज्ञान का भंडार है । ऐसा कोई विषय नहीं जिस पर द्विबेदी थी ने न लिखा हां बहुतेस बहुतेस तात्विक विवेचन और सामाज्य-के साधारण दत्त कथाएँ तक भाषको उनमें मिलेयी धीरे धाप उस व्यक्ति के ज्ञान-विस्तार पर बकित हो जायेवे ।

धीरे यह काम मिली बिधा धीरे धान के केन्द्र में बैठकर नहीं एक पाँव की एकान्त कुटिया में होना था । साहित्य की वह छटा उठी कुटिया से निकलकर हिन्दी संसार का आलोकित कर देती थी ।

भाषा हिन्दी में ऐसा कौन सिद्धान्त सम्पादक है जो अपने काम का पञ्चाप बुद्धि से करता हो जो हरेक लेख को आलोचना पढ़ता हो उसकी भाषा का परिष्कार करता हो एक बचुर कलाकार की भाँति पत्थर के एक टुकड़े की बोलती हुई मूर्ति बना देता हो । हमारी कई कहानियाँ 'सरस्वती' ने द्विबेदी का के सम्पादन काल में लिखी । जब वह छप जाती थी धीरे धीरे यस्त से मिलता था ही मान्य होता था उसका किताब क्मान्तर हुआ है । वेरी एक कहानी 'पंच-परमेश्वर' है । मैंने जिस समय उसे द्विबेदी थी की सेवा में भेजा उसका नाम 'अर्चो ने ईश्वर' था । छपने पर देखा तो 'पंच-परमेश्वर' हो गया था । जय से परिवर्तन से वह नाम कौसा बचक उदा ।

द्विबेदी की साहित्य के सम्बन्ध पाठकी है । वहाँ कुछ देखते से बड़ी उबारता से उसका धारण करते थे । उनके प्रोत्साहन ने ही हिन्दी को कई ऐसे कवि धीरे लेखक विवे बिम्होने हिन्दी का नाम रोशन किया । अन्य भाषाओं से भी कोई धक्की बीज देखकर वह मुग्न हो जाते हैं । सबू से समय सम्प्राय हीपर धक्की सैखक है । उन्होंने एक आत्मरमक बीज 'हृकारते चिम की कहानी' मिली थी । द्विबेदी थी ने 'सरस्वती' में उस लेख की सुकृष्ण से प्रस्ताव की धीरे उठी उदात्त किया ।

द्विबेदी की साहाय्य है, लेकिन बाल सेनेवाले साहाय्य नहीं बाल सेनेवाने बख्यल । साहित्य की सेवा में जो कुछ सता-पता पोषी-पुस्तक गवह किया था वह सब का सब लोक-सेवा की सेंट कर दिया । साहित्य के पुकारिया में यह भाव कहां ? अन्य पुकारियों की भाँति यह पुजायी भी चिम का तय होना है । यह सब है कि साहित्य का पुजायी

अन्य पुत्रारियों की मूर्ति मायशासी नहीं होता। धर्म चिन्ता में जिसे नीच न धापी हो उससे उधारता की धारा रक्तना वायुमोक्ष से छटपटाते हुए धारमी से माना सुनने की धासा रक्तना है। कमी भावा के बरतन भी हुए तो वह उससे इतने ओर से चिपटता है, कि प्राण निकल जाने पर ही उसके हाथ ढीसे हो सकते हैं। वह एक पसा भी वे तो उसे मात्र लयसे समझे। त्रिभेदी जो ने तो सब कुछ दे दिया। और उनके शिष्टाचार का क्या कहना। वह प्रकृति के नियमों की मूर्ति घटस है। धात्र पत्र लिखो तीसरे दिन किसी न किसी शक से बबाह धायेगा। ही सेटर-बनस में कोई तेजाब डाम दे तो घुघरी बाठ है। वह बन्सी से धाये मन से कोई काम नहीं करते। उनकी काया स्वत्व न हो पर मन स्वत्व है।

उन्होंने मौनिक रचनाएँ न की हों लेकिन मौनिक रचयिता पैदा कर दिये। उनका बीरब इसमें है कि उन्होंने अपनी बेलनी से हिन्दी की नीच डामी और उसमें ज्ञान का विस्तार किया और धात्र हिन्दी-संसार धात्रके उपकारों को धात्र करके धात्रके धारकों पर अज्ञानि बड़ा रहा है और ईश्वर से प्राचना करता है कि धमी बहुत दिनों तक धात्रकी देख-रेख उस पर रहे, कि धात्रने उसका मन में जो भक्ता बनाया था हिन्दी-अवन उस मन्त्रों के ठीक-ठीक अनुकूल बन रहा है या नहीं।

मई १९३३

राजा राममोहन राय

राजा राममोहन राय का स्वर्गवास हुए ही साल पूरे हो गये और देश में उनकी यादगार मगाने की धारियाँ हो रही हैं। हम भी उनकी स्मृति में अपनी धात्रा के पुत्र बकते हैं। राजा राममोहन राय भारत के ही नहीं संसार के महान् पुत्रों में हैं और अब सच्चा धात्रदेशिक इतिहास लिखा जायगा तो संसार के प्रबलकों में उनका नाम भी लिखा जायगा। भारत में धात्र जो धात्रिक सामाजिक धात्रनैतिक और साहित्यिक धात्रुति है, उसका सूत्रपात राजा राममोहन राय ने ही किया। हमारे राष्ट्रीय जीवन के हरेक धर्म पर उनके महान् धात्रुत्व की धात्र मयी हुई है। हम उन्हें मनीन भारत का जनता का कह सकते हैं। डाक्टर टिगोर के शब्दों में—'वह इस मनी के महान् धात्र निमिता से जिन्होंने उन धात्राधों का हमारे रास से हटा दिया जो हमारी प्रपति को रोके हुए थी और हमें संसार-ध्यापी सहयोग और मानवता के धम नबयुग में सम्मिश्रित कर दिया। ऐसे महान् धात्रुत्वों की मूर्ति धारनी धारता से हममें जीवन का धात्र करती है और हमारी यही धामना है कि उनका धात्र्य धात्रकाल तक हमारी धात्रों के धामने बना रहे।

सितम्बर १९३३

मिसेज ऐनी बेसेंट का स्वर्गवास

मिसेज ऐनी बेसेंट की मृत्यु का समाचार पढ़कर हमें दुःख नहीं हुआ क्योंकि वह उस मनस्वा को प्राप्त हो चुकी थी जब उन्हें विधाम की सख्त जरूरत थी। उनका प्रबन्धन उतना ही स्वाभाविक था जितना किसी बासक का विकास होता है। संसार में बहुत कम प्राणी हैं जिनके जीवन में कमयोग का ऐसा धारण मिलता हो। सत्य को ग्रहण करने में उन्होंने कईयों की कमी परचाह नहीं की। जब उन्हें ईसाई धर्म से असंतोष हुआ तो उन्होंने सत्य की लोभ में अपने पुराने नाते तोड़ दिये। धर्म में कर्म सिद्धांत से उनकी ईश्वर-तोही धारणा को शान्त किया और उनका सत्य जीवन इसी सिद्धांत के प्रचार में स्थित हुआ। उनका काम करने की अद्भुत शक्ति थी। वह अनेकौ जितना काम कर सकती थी वह सामान्य एक वर्जन मनुष्यों से भी न होता। एक साधनैतिक साम्प्रदायिक और मासिक पत्रों का विकासना धर्म और सत्य पर धर्मरान्तों की रचना करना अत्यन्त सत्य के प्रचार के लिए व्याख्यान देते रहना और विबोसोफिकल-सोसाइटी जैसी संस्था का संभालन करना और उसके साथ ही भारत के स्वाधीनता-संग्राम में भी प्रमुख भाग लेना उन्हीं तपस्वी धारणा का काम था। धर्म विज्ञान हिन्दू विरबिद्वान् है उन्का हिन्दू-कामेज के रूप में मिसेज बेसेंट ने ही बीजापेख किया था। उनके दो एक विद्वानों से हमें अत्यन्त आ पर उन्होंने किस बात को सत्य समझ लिया उसके प्रतिपादन में किसी विरोध की चिन्ता नहीं की और उनकी बस्तुत्व-शक्ति तो अद्वितीय थी। वह इस सताजगी की सबसे महत्सवी महिला थी और हमें निरबाध है कि उनकी विद्या बहुत जितना तक अत्यन्त ही पुरुषों की सार्विक उद्योग का धारण होती रही।

२५ सितम्बर १९३३

मृत्यु पर विजय

एक सच्चे ईश्वर-मक्त के लिए जिस सच्ची से सच्ची मीत की कल्पना की जा सकती है, वही मीत ही विद्वान् आई कर्म को मिली। मातृ-भूमि से हजारों कोस पर, जहाँ अपना कोई नहीं है वह कर्मों से बुर लभुभ धपनी पूरी शक्ति से बार करता हुआ पर नहीं लेना वही गर्जन वही अत्यन्त सत्य को मुक्तियों को लुप्त सनकता था। यह मीत नहीं है मीत पर विजय बड़ी शानदार, बड़ी ऐतिहासिक बड़ी सविश्रवणी और वह क्या शब्द से जो अंत समय उन सच्चे राजपूत के मुख से निकले—'मेरे देश बन्धुओं को और सभार भर के भारत के हितैषियों को मेरा धारणा' से। जीवन

सीमा समाप्त करने के पहले मैं भारत की आबादी के लिए प्रार्थना कर रहा हूँ। क्या यह मरनेवाले के शत्रु है? नहीं निरपरा नहीं करी पराजय का चिह्न नहीं। एक-एक राज्य में एक विजयी आत्मा की उमंग भरी हुई है। उमंगे धन्त समय तक सतकार हाथ से नहीं छोड़ी। उस वक्त भी क्रम पीछे न हटाना जब वह मंदान में धकेला था। कौन कहता है कि वह मर गया? उमंगे मीठ पर विजय पायी। उसके आशीर्वाद में विजय का र्जन है, धमरत्न का प्रचार है। ऐसे भीर नहीं मरते। मरते हैं हम और थाप स्वाभों के दास पेट के गुणाम हिम्मत के कण्ठे।

क्या उनका जीवन-मुद्यान्त कर्हें? क्या एसेम्बली की उनकी वह मरदाना आबाज प्राण के कानों में नहीं था रही है? क्या उनकी वह कल्पि आनको भुल गयी? क्या एसेम्बली की वह सघारत फूलों की शम्भा थी? सपत्नी शासन ने क्या-क्या हथकंडे नहीं कसे कौन-कौन-सी कूटनीति नहीं बनी लेकिन कभी धारने उनके माथे पर बस देना? वह राष्ट्र-सम्मान का रक्षक था। उसकी आँखों ने सामन सचरास्त्रिमाल सरकार की प्रजात न थी कि वह राष्ट्र सम्मान पर अपना आघात कर सके। क्या आपको वह धमर कुरती के मान और अधिकार को विस्तृत करने की निरंतर चपटा की है एक मयच्छि और सबल लोकशाही के विरुद्ध और मुझे विरवास है कि मैं बहुत कुछ सचक हुमा है। उनके जीवन का मुताआ कबल एक शब्द न बठा हूँ—बह शब्द है संघाम। उनका जीवन भावि से अन्त तक एक मम्मा संघाम था जो न बाध प्रायता था न बाध देता था। उन्होंने समझौता करना सीखा ही न था। धरने अन्ध-विश्व स्वत्वा के साथ संघा समझौता? धारत कुछ न मिले कम कुछ न मिले पर कभी वो निसगा। जब लेंगे एक वृष लेंगे। उमंगे रची भर कभी नहीं कर सकते यह उनका ध्येन था। समझौता वह कपटे है जिन्हें अपने पक्ष में धलत विरवास था। वह बाव क्या प्रसाई जा सीति स्वर करते हैं उन्हें अपने पक्ष में धलत विरवास था। वह बाव क्या प्रसाई जा मपत्ती है, जब धर सुरेन्द्रनाथ जी की प्ररखा से एसेम्बली ने मीठ छोड़ मुधारों पर सदनमें ही बर्बाई ही थी। उस वक्त धरने मि पटेल ने जिसने एक के अल्पमत से उच प्रस्ताव न विरोध किया था। उनके जीवन में यदि कोई माससा थी तो वह स्वराज्य था ही उनका शोक था वही उनका नशा था और यही उनका हा था। और वह मीठ के घाव जलनेवाले धारमी न था। जब १९३३ में काँग्रेस के सभी मेम्बरो ने एसेम्बली से विदा ली मि पटेल ने धारन पर पर स्थिर रहकर अपने विचार-स्वान्त्य का पवित्र रिया था। हाँ जब उन्होंने सरकार की नीयत और नीति रग सी और उपर से निराश ही गय तो सघारत को साउ मार दी और राष्ट्र के माप उमंगे मंघाम में शरीक हू गये। अधिपतों की-नी उनकी तैजस्वी प्रतिमा उनका धम्मुन तैज मस्तक उनकी बह अनुपमता धारो उनकी बह मनस्वी प्रतिमा और उनके बह धातुत बासन क्या कभी

विस्मृत हो सकते हैं। हाँ वह अपने शब्दों पर महामत्त का गिभाफ न बढ़ाते थे। वह महात्मा न थे। वह टेढ़े को टेढ़ा कह सकते थे। उनके पहलू में वर्ष बूबा हुआ फिर या जो घ्राह्य होने पर रोना या चिन्हाड़ मारकर, जो अप्रगमिष्ठ होने पर धारेश में आ जाता था। ठीक है, उनके शब्दों में चहर होता था। हम तो कहते हैं—उमर ज्वाला होती थी। और क्या चलते हुए हृदय से आप हीतल पान की धारा रकते हैं। चरा उस महान् आत्मा का उत्सव देखिय। वह उमर का बोध वह बीज स्वास्थ्य का नाटक रोग का प्रकोप और अमेरिका की वह कठिन यात्रा। हिमने की शक्ति नहीं है। यमराज का विनाश या चुना है पर स्वदेश मोह को हृदय से जगाने हुए है। धर मी यह माया उन्हें नहीं छोड़ती। कितना अक्षय धनुराग है। अंतिम कम्प जो उनके मुक्त से निकलता है, वह—स्वराज्य है। यही स्वराज्य उनके जीवन का स्वप्न था इसी के लिए जिसे इसी के लिए सड़े इसी पर धपना सब कुछ कुर्बान किया। यह बेटे बेटों का मोह नहीं है वह जन सम्पदा का मोह नहीं है जिसके बधन डीने पड़ जायें यह स्वदेश का प्रेम ॥ का आत्मा के धनु-भाग न व्याप्त हो पया है और अन्तर आत्मा अन्तर है तो वह प्रेम भी अन्तर रहेगा और शायद स्वर्न की सुख शान्ति में भी यह प्रेम यह माया उन्हें लड़पाटी रहेगी और उनके सूक्ष्म मंत्र अपने उस अमाये देश की धार लमे रहेंगे जिस पर उन्होंने अपना सर्वस्व नार दिया।

३० अक्टूबर १९३३

श्री रंगस्वामी आङ्गार की शोक जनक मृत्यु

तामिल के प्रमुख वैदिक पत्र 'स्वदेशमित्रम्' के महत्सवी संपादक श्री रंगस्वामी आङ्गार की मृत्यु से एक ऐसा व्यक्ति उठ गया जो राजनीतिक गुत्थियों को सुसम्झने में अद्वितीय था और जो कुछ सत्य समझता था उसे प्रकट करने में सच्चा या अविचार से शेरमात्र भी भयभीत न होता था। आप पहले मद्रास के प्रसिद्ध अंग्रेजी वैदिक पत्र 'हिन्दू' के संपादक रहे, फिर आपन अपना तामिल पत्र 'स्वदेशमित्रम्' निकाला और अपनी प्रतिभा और श्रेष्ठ से इस पद पर पहुँचा दिया कि वह बड़े से बड़े प्रभावशाली अंग्रेजी पत्रों से भी ज्यादा धार से पढ़ा जाता था। भाषा के पत्रों में कितना सम्मान 'स्वदेशमित्रम्' को मिला उतना शायद किसी अन्य भाषा के पत्र को नहीं प्राप्त हुआ। आप कुछ दिनों कांग्रेस के अन्तरल सेक्रेटरी रहे थे और स्वराज्य पार्टी के निर्वाहकर्तव्यों में आप भी थे। स्व पंडित मोतीलाल नेहरू और श्री धार दास आपको अपना दाहिना हाथ समझते थे। इसी यौनमेव समा में आप भी सम्मिलित हुए थे और उस वक्त आप का विचार यह था कि कांग्रेस को नदी व्यवस्था से दूर न रहना चाहिए, क्योंकि

इससे साम की बगल बहुत बढ़ी जाति होती । आपकी मृत्यु से राज को जो छति पहुँची है, उसका अनुमान जग शम्शों से हो सकता है, जो महात्मा गांधी न शोक प्रकट करते हुए मिले है ।

१२ फरवरी १९३४

राजा सर मोतीचन्द का स्वर्गवास

राजा सर मोतीचन्द के उठ जाने से काशी को जो छति पहुँची है, वह मुश्किल से पूरी होती । आप बड़े गनी परोपकारी और सहृदय व्यक्ति थे । आप की प्रभुत्वा धनी कुल घट्टावन साम की थी आपका स्वास्थ्य भी बुरा न था मगर पिछले साल आप पर सन्धे का जो आक्रमण हुआ था उसने अन्त में आपकी जान ही लेकर छोड़ी । कई मास पहले आप तीन सेशन तक एसेम्बली के मेम्बर रहे, और हिन्दू विरभन्निघासप तथा अन्य सांख्यिक कार्यों में आप को बड़ी दिलचस्पी थी । देश के औद्योगिक उद्वार के लिए आप बराबर प्रयत्न करते रहे और काशी का काम मिल आप ही को याशगार है ।

२६ मार्च १९३४

स्व० पण्डित बदरीनाथ भट्ट

पण्डित बदरीनाथ भट्ट धारा इस सभार न गयी है । बीमार तो वह थो-डाई साल से थे लेकिन जिस आदमी के पोर-पीर में जानबारी भरी हुई हो जो रोय-शमा पर पड़ा हुआ भी हँसता और हँसता रहा हो जिसके मनीष जाते ही मुरझाया हुआ मन सहस्रता उठना हो जो मातों धपन बाखी और स्नेह स जीवन बिलौरता रग हो वह मीठ के इतन समीप है यह हम न समझते थे । साल भर स अधिक हुआ हमने सदनरु में उनक बरान किये थे । धाराम कुर्शों पर लगे हुए थे । देह चीख हो गयी थी चहरे पर जरवी धापी हुई, धाँपा के नीच गहरे पड़े हुए, आठ सूचे हुए, लेकिन बीमारी धात्मा तक न पहुँच सकी थी । बातों में तब भी बहो शोधी बही जिग्शा-दिनी थी । धपनो बीमारी का बिकर करते रहे, मकर उधम अनाध्य रोगी की निराशा या कबूला न थी न वह मोह न था हसरत बन्कि एक जीवन से भरे हुए हृदय का खुदम और बिमोद था जो मानो मरु का नामने पड़ी देकर भी निःशक भाव स नह रहा था—जब मरु का तब मर जाऊँगा माने के पहले बही मर सकता । हाथ के मट्टा बहुधा बड़े यन्मीर और लगे होते है । भट्ट जी का मन भी हस्तमय था और तब भी । सतीषों और भट्टकुशों के ता

मानों वह अर्थात् वे धीरे मनुष्य की कमजोरियों की एक निगाह में पहचान सेते थे। अपने जीवन के दुःख प्रसंगों को भी जो विनोद के रंग में रंग सकता हो यह सिद्ध मनुष्य ही में ही। दूसरे अपनी विजय को जितने आनन्द से बयान कर सकते हैं, उतने ही आनन्द से वह अपनी पराजय की कर्षा करते थे। हास्य की उस ज्ञान में जो जीव जाती थी विनोद बन जाती थी। हिन्दी-प्रेमी सज्जनों के व्यवहार के उन्हें कई बार कड़े अनुभव हुए थे और 'हिन्दी प्रेमी सज्जन' उनके सटीकों में बार-बार नये-नये रूप में आते रहते थे। जैव यही है कि उनके पाठकों के सिवा उनकी हास्य रचना कहीं संभव नहीं हुई। उन्होंने कई पत्रों में नियमित रूप से साहित्यिक विनोद के स्तंभ की पूर्ति की। उसमें राजनैतिक व्यंग भी होता था कट्टर भी चुटकियाँ भी गुदमुशियाँ भी। अतएव उनमें से रत्नों को छाँट लिया जाय तो हास्य का बड़ा ही रोचक संग्रह तैयार हो जाय। 'सोसालकारिणी-समा' के रिपोर्ट और 'मिन्टर की डायरी' में आज भी मनोरंजन की बहुत सामग्री मिल सकती है।

मनुष्य की मिठाहारी से मिठक्यपी से संयमी से स्पष्टवादी से व्यवहार में करे से उनमें कहीं भी वह नफासत और गवाकृत न थी जो हम उदीयमान कवियों में देखते हैं वह सैनाजी-पल न था जो साहित्यिकों की विशेषता समझी जाती है। उन्होंने दुनिया देखी थी दुनिया की कठिनाइयों का सामना किया था और उन पर विजय पायी थी उन फूलों में न थे जो हवा के एक झंके से धुरन्ध्र जाते हैं, वह मनुष्य पहले से कवि ड्रामेटिस्ट और हास्यकार पीछे। उनकी नाकुकता कभी संयम से बाहर न जाती थी। वह उन लोगों में न थे जो इस बात पर गर्व करते हैं कि उनके पास कौड़ी कपड़ों की नहीं है जो मित्रों की मेहमानी पर जीवन बिताकर बेछिन्नी का बन भरते हैं। वह स्वयं अपना मोक्षन पकाते थे पसे की बगल बेला खर्च करते थे और हिंस्र घाऊ रहते थे। बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ भेरी पर किसी का एहसान नहीं लिया। उन्हें कोई व्यसन न था (साहित्यिक व्यक्तियों के लिए कोई न कोई व्यसन प्राप्त लेना आवश्यक धार्मिक में बाधित है) उनकी कल्पना सफ़ाई टेकती हुई न बसती थी उनमें जो प्रोजेक्ट वा और संयम वा उसी से रचना-शक्ति उत्पन्न होती थी उसी तरह जैसे बाहुबल से बया और क्षम उत्पन्न होती है।

मनुष्य की मौलिकता के पुजारी थे और जो कुछ सिखा मौलिक सिखा। बँदना अनुभवों से उन्मुक्त था। हिन्दी में जो निराशावाद का धीर है, इसकी जिम्मेदारी वह बैंगना साहित्य का भिर रखते थे। वह कुछ धीर भक्त थे। बैंगनी नाटककारों के बोररस प्रश्न का लुब मजाक उड़ाते थे। प्राचीन कवियों का मूल मृगार-बर्तन को भी वह हिन्दी-साहित्य का कर्तक समझते थे और यह उनके साहित्यिक परिहास का एक स्रोत था।

मनुष्य की न जीवन में एक ही काम रोमांटिक रंग से किया और यह अपना

बिबाह था। जिस बेबी से उनका प्रेम था उससे बँध-परम्परा को खरा भी परबाह न करके उन्हें चुपके से बिबाह कर लिया। मित्रों को खबर तक न थी। इसकी खबर उस बन्धुमिस्री जब घापका घर घाबाद हो चुका था इसलिए बोली छेक कर दावत लेने का घबसर भी मित्रों ने हाथ से जाता रखा। कई दिन बाद मित्रों के पास मिठाई पहुँची जिसने उनके प्राण पोंछे। हमारे पास वह मिठाई भी न पहुँची। एक दिन रास्ते में उनसे हमारी मुसल्लाह हुई। हँसकर बोले—‘गभी घापकी मिठाई रली हुई है घायमी घापका मकान तमारा करके जसा घाता है, नमी मकान सब कुछ बता देता हूँ पर उसे कुछ पता नहीं जसता। घब मे खुद ही लेकर घाऊँगा।

घाजिर हमने बेहयाई की घीर उनके घर जाकर मिठाई जामी।

बड़ी जिन्या जिस बसिष्ठ संयमी प्रतिभाशाली ब्यक्ति ऐन जबानी में प्रकास मूयु का प्राप्त बन गया जब साहित्य को उसकी प्रौढ़ प्रतिभा से बहुत कुछ घाशार्पे बन रही थी। घाज भी उनमे घण्डे कबि उनसे घण्डे नाटककार घीर उनसे घण्डे हास्य सेवक मौजूद है लेकिन ऐसी बिनोदशीलता ऐसी उबलती हुई प्रसन्नता ऐसी उघ्नसती हुई मुरामिबाजी हमें कहीं नजर नहीं घाठी। घट्ट भी इस मैदान में बकेसे वे। उनकी यार बहुत दिनों घायेगी घीर हृदय में उनका जो स्वान था वह बहुत दिना जानी रहेगा।

१४ मई १९३४

स्वर्गीय प० चन्द्रशेखर शास्त्री

घमी मत सप्ताह प्रयाग में पं चन्द्रशेखर शास्त्री का स्वर्गवास हो गया। शास्त्री भी संस्कृत के बिडान्ण होते हुए भी हिन्दी के बड़े हिमायती घीर सबक वे। बहुत बयों से घाप हिन्दी की सेवा करते घा रहे वे। कई बयों पूब घापने ससूत में ‘शाखा’ नामक उघ्नकोटि की पत्रिका निकाली थी पर वह बबिक बयें न बन सकी। साहित्य मे घापका बड़ा प्रनुराग था बन्कि यह कहना चाहिए कि साहित्य-सेवा करना घापका एक ब्यसन ही था। घम-बारह बयों पूर्व घापने ‘समाज’ नामक एक हिन्दी पत्र भी निकामा था पर हिन्दी का दुर्गाम्य कि वह भी न बन सका। पत्रा की सिधा के मम्पान-बिघाय से भी घापका सम्बन्ध रहा है। घापने घनेक घण्डों का निर्माण किया है। माहित्य सम्मेसन भी मेवा घाप बड़े नि-स्वार्थ यार से करते रहे हैं। घारका साध जीवन साहित्य को सेवा करते ही बीता। हर एक बहुत बड़ा घायोजन घापने किया था—मन्त्रि और मम्मूर्ख सटीक हिन्दी महाभारत प्रकाशन करने का। कुछ लख प्रकाशित हा भी चुके वे कि घाप बन बसे। हम शास्त्री जी के मुपुत्र भी प्रफुल्लबन्ध घोम्न घीर

उनके परिवार से समवेक्षणा प्रकट करते और धाता रखते हैं कि वे शास्त्री जी के रोप कार्य को उसी योग्यता और उत्साह से पूर्ण करने का प्रयत्न करें।

जुलाई १९३४

स्वर्गीया मैडम क्यूरी

गत सप्ताह संसार प्रसन्न रेडियम की आविष्कारी मैडम मेरी क्यूरी का स्वर्गवास हो गया। इसमें सन्देह नहीं कि जगत के विद्वानों वास्तविक वैज्ञानिकों के लिए यह समाचार महान् दुःखदायी होगा। आपका रेडियम का आविष्कार विश्व के इतिहास में एक महान् कार्य है। रेडियम से साधारणतः सब सभी सोप बोरे-बहुत परिचित हो गये हैं। यह संसार में सबसे मुख्यतः धातु है और बहुत ही कम साधारण में पायी जाती है। कहा जाता है कि वो सी टन से भी अधिक कच्ची धातु के शोधन करने पर केवल एक ग्राम रेडियम प्राप्त हो सकता है और इस एक ग्राम रेडियम का मुख्य दो भाग स्वयं होता है। इससे ज्ञात किया जा सकता है कि संसार में इससे मुख्यतः धातु और कोई नहीं है। सन् १८९६ में बेक्वेरेल ने पिन्याकम के रेडियो-रेक्टिव गुणों का ज्ञान प्राप्त किया। मैडम क्यूरी ने भी अपने पति के साथ इस तत्व पर अनुसंधान प्रारम्भ कर दिया। फ्रांसिस्को सरकार के डॉक्टर पिब्ले नामक पिन्याकम की एक टन कच्ची धातु, इन्हें अनुसंधान के लिए प्राप्त हुई। आपने अपने टूटे स्रोतों में अपना कार्यात्मक कर दिया। भाव यह टूटा स्रोत वैज्ञानिकों की दृष्टि में बड़ा महत्वपूर्ण है।

मैडम क्यूरी ने कई पुस्तकों भी लिखी हैं। सन् १९१३ में आपको भौतिक विज्ञान विषय का नोबल पुरस्कार मिला था। रायस सोसायटी ने पश्क से और पेरिस विश्व विद्यालय ने डॉक्टर की उपाधि से आपको सम्मानित किया था। सन् १९१६ में आपके पति मिस्टर क्यूरी की मृत्यु हुई और सन् १९३४ के इसी सप्ताह में मैडम क्यूरी भी स्वर्गवासिनी हो गयीं। यद्यपि आप इस समय संसार में नहीं हैं पर इसमें सन्देह नहीं कि आपका यह सब-सर्वदा धर्म रहेगा।

जुलाई १९३४

डाक्टर हीरालाल का स्वर्गवास

कठनी (सी पी) के डाक्टर हीरालाल जी पीपी के मुख्यतः मोठो की तरह साम्राज्यसे व्यक्ति थे। लगभग पचास वर्षों से आप हिन्दी-साहित्य की सेवा करते आ रहे थे। अंग्रेजी के आप पुराने प्रमुष्ट और संस्कृत पाली और प्राकृत के प्रकाण्ड विद्वान्

ये । माधारण-सी नौकरी में थाप डिप्टी कमिश्नर क पर तब पहुँच वे धीर हमी धरमर में धापने इतिहास धीर पुरातत्व-सम्बन्धी खोजों के द्वारा धाने को काफी विख्यात कर लिया था । यों कहना चाहिए, कि इतिहास-पुरातत्व क क्षेत्र में धाप भारत के एक दिने बने अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति-प्राप्त महान् व्यक्ति थे । काशी नागरी प्रचारिणी सभा तथा अनेक हिन्दी मत्स्यों से धापका सम्बन्ध था । काशी नागरी-प्रचारिणी सभा के ठो धाप बयों समाप्ति भी रहे थे । वो बयों पूब पटना म होनबासी धोरियण्टस कांफेस के धाप समाप्ति बनाने गये थे । धीर अगो-अगो धाप बिरब-पुरातत्व-परिषद् में भारत क प्रतिनिधि की हूँसियत से गेजे गये थे । धाप बड़े ही सरल धीर उधार थे । धमिमात्र धाप में बरा भी नहीं था । धापने धावम्ब हिन्दी-माहित्य की सेवा की पर खेर कि हिन्दु स्तानियों क धापक यथाव सम्मान न किया । नापपुर बिरबिद्यालय में ठो धब जाकर कहीं उन्हें डी सिद् को उपाधि से विमूषित करके शाउद धपने को धातेप म मुक्त किया था । पर डाक्टर साहब का व्यक्तित्व धीर काउ ही ऐसा खबरदस्त था कि बिना माँसे उन्हें देश धीर बिदेश से महान् परा मिल गया था । धापने मो पी के कई विमा के इतिहास-संबन्धी 'सागर सरोज' 'मोह धीपक' 'अबनपुर श्रोति धारि कई महत्त्वपूख पुस्तकें भी लिखी थीं । हिन्दी धीर देश का दुर्गाप है कि १९ अगस्त को धापका स्वगवास हो गया । हम धापके परिवार के साथ मन्चे हृदय से समबदना प्रकट करते हैं ।

सितम्बर १९३४

कालाकाकर नरेश का स्वर्गवास

साहित्य-क्षेत्र में ठो कालाकाकर का नाम पचासा बयों के पूब ही बमक उठा था पर इपर बहु राष्ट्रीय क्षेत्र में भी खगमगाने लगा था । कालाकाकर के बतमान नरेश की धबबत सिंह को न धपने को पूर्ण राष्ट्रवासी धीर काँधम-अक्त बनाकर मु पी के लामुकेदार धर्म में उच्च पर प्राप्त कर लिया था । कालाकाकर को महाम्मा की के पगानु द्वारा धाप ही में सबप्रथम पावन बनाया था । धानने धपने परिवार नर का ही रंग एकत्र धरन लिया था । धाप बड़े उल्पाही देशभक्त धीर निर्भीक व्यक्ति थे । साइमन-नमीशन का बाउकाण करण में धानने बड़ा योग्यर काम किया था धीर धनम्बक धारदो अनेक कष्ट उगान पड़े थे । खेर की बात है कि एमे धाररा देश भक्त नरेश का जो धान को एक स्वयंसेवक समझना था ता ७ सितम्बर के प्राउ काय स्वगवास हो गया । हम धापके परिवार के साथ समबेना प्रकट करते धीर ईररर में प्रापना करते हैं कि उनकी धारभा को शान्ति प्रदान करे ।

सितम्बर १९३४

श्रद्धाजलि

काशी के उस धवतारी महापुरुष 'भारतेन्दु' ने विक्रम संवत् १९७ में जन्म लिया और सम्बन् १९४१ के माघ मास की कृष्णा पट्टी की पुण्य-शोक का प्रयास किया था। बीतीस बय और कुछ महीनों के अल्प जीवन में उसने हिन्दी को जन्म देकर उसकी जो सेवा-सुधूपा की उसकी जो शरीर-संवर्द्धना की उसे वह तो नहीं देख सका पर मात्र पचास बयों के बाद हिन्दी का भक्त और सेवक उसे देख-देखकर निहाम हो रहे हैं। वास्तव में हिन्दी के विधि-विधान से 'भारतेन्दु' ने धवतार लिया था और धवतारी महापुरुषों की तरह ही अल्पकाल में वह बहुत कुछ करने निमीन हो गया। मात्र कौन है उनका समकक्ष ? कोई होगा इसकी किसे खबर। कुछ मित्रों ने अन्य भाषा-जगत में उनके समकालीन समक्ष साहित्य विधाताओं को शोक निकाला है, ठीक है, पर भसी भक्ति देखने और विचार करने पर 'भारतेन्दु' का प्रकर प्रकाश तो असम ही एक बिसिष्ट अकार्षीय कैलाश नखर धाता है। अन्य भाषा-साहित्य के विधाताओं ने अपने जीवन के पचास-साठ या सत्तर बयों के काल में जो कार्य किया उससे कहीं अधिक और विविध-विध हमारे 'भारतेन्दु' ने सत्रह-अठारह बयों में कर दिखाया। उसकी बतुर्मुख प्रतिभा अस्मयनशील व्यक्तियों के हृदय धान्त्व विमोर कर देती है।

'भारतेन्दु' वास्तव में एक महान् पुरुष था। उसके सच्चे हृदय में वहाँ राजा के प्रति प्रेम था वहाँ बुद्धता-अस्य अपने वैराग्यियों के प्रति भी सच्ची सहानुभूति और सच्चा श्रव था। महान् कवि होते हुए भी उसने गुणी कवियों को एक-एक शब्द के लिए एक-एक घण्टी तक नैट की। वह सच्चा मृगशीर्ष था। रस रंग में परिष्कारित रहते हुए, श्रव का विद्या बनाते हुए भी उसने गरीब भूखों को शरीर के बस्त्र तक उतारकर शान कर दिये। वह सच्चा बानी था। मात्र स साठ बयों पूरा ही उसने बेश का जन विवेक बातें देखकर हृदय का धीसु बहाये थे और कहा था— वे जन विवेक बलि जात यह प्रति क्वारी। वह सच्चा बेश भक्त था। समाज-हित-साधन में जाति-बिदाहरीवासों का और शासकों की वीम शोभकर गवर्नमेण्ट का कोप प्राजन होने की उसने अथ भी परवाह न की और कष्टों का बने साहस से सामना किया—ऐसा था वह भारतेन्दु।

परम प्रसन्नता की बात है कि मात्र पचास बयों के बाद हिन्दी के सेवकों ने उस महान् विभूति का अष्ट-शाताब्दी उत्सव मनाने का आयोजन किया है और सभी अपने-अपने हृदय की अठोऽङ्गि-अपवा कर रहे हैं। हम भी सब के साथ सारर अठोऽङ्गि अषष्ट करते हुए ईश्वर से प्रार्थी हैं कि एक बार फिर एक बार उमे इस लोक में भेजकर अपनी आत्मजा हिन्दी को तनिक देख लेने का अवसर दे कि पचास बयों में वह कैंती फली-फूमी और राजमाया का रूप धारण कर चुकी है।

जनवरी १९३५

स्वर्गीय सूर्यनाथ तकूरू

गत ११ दिसम्बर को १ बने दिन में सूर्यनाथ तकूरू का स्वर्गवास हो गया। किंतु मामूम था कि जबल निमोनिया के प्रहार से वह विषय बेहवासामा प्रतिमातामी बरक मेवस पञ्चीस वर्षों की धर्म्य धामु में ही यों धरकस्मात् कुचम दिया जायगा। जैसे बुनिया म नित्य ही बीबन धम सेते धीर मय हो जाते हैं पर जिसके द्वारा भविष्यत् म हिन्दी की धर्म्युत सेवा होम को धाशा थी उस युवक के निधन पर प्रमा किम हिन्दी प्रदी को दुःख न होमा। जिसने उसे पने लक्ष्मिगर बालों से मुकठ ठोर की तरह दर्दन उठाये दहाइते हुए देखा हो वह प्रमा बीबन भर उसे छेडे मूस सकता है। वह मस्ताला बीबटबाला युवक जब दरबाने पर पहुँचकर दहाइया था तब अलबेनिया करती हुई कम्पमाएँ उसके मुख की धोर देखित हो जाती थीं। वह बडा ही हँसोड युवक था। जब तक वह बैठता समा बँधा रहता था। वह दिन खोलकर निर्वन्ड होकर बायाँसाप करता था। उसके ध्यनित्त में जाडू था। उसे पङ्गे-सिलने का बडा शौक था। कोई भी धञ्ची लकी छिटाव निरुमती तो सबसे पहले लीदकर बही पढता। वह धञ्चा सेडक था धीर कवि भी। धञ्ची पत्रों म भी वह सेड लिखा करता था। एम ए करके एम एम बी की तँयाटी कर चुका था। इन्स्पेरसरमन लिखने की उसम साध प्रवधि थी। सामयिक प्रमगों पर वह बड़े धञ्चे ध्यय लिखा करता था बड़ी धञ्ची पुटस्निया लिखा करता था। धध्ययन करते हुए ज्ञानबद्विनी बातों का सग्रह करम म उसे बड़ी रित्तबस्ती थी। बडा धञ्चा सग्रह उसने कर रखा था। हमने जब 'हंस' का स्वदेशिक' निकामा तो उसने 'स्वदेश के सम्बन्ध म शीर्षकवाली समत' के नाम ध सत पृष्ठों की एसी सामग्री दो जो समित समय तक परिधम करने धीर धनेध धञ्चों क हबारों पृष्ठों का धध्ययन करने से ही प्राप्त हो सकती है। बातचीत करने म हुन्ती मजाक में बडा कुशल बडा हाजिर-अबाब। उसके ससम से बातावरख मस्त हा जाण था। एवं रित्तकृत युवक क निधन धं मन्मथ लिल को महुरा दुःख हुआ धीने मय हो गयो। बीबन में उनकी यात्र हमसा वाजी बनी रह्यो। एते समय उनके परिवारवातों के दुःख का बँध धन्वाब मयाया था सभता है। दिबर उन्हें यह दुःख सह लेने की धनित दे। हम उन स्वर्गीय क परिवार के निरुध धारिक समबेधमा प्रकट करते हैं।

जनवरी १६३५

स्वर्गीय मौलाना हाली की शताब्दी-अर्पती

स्वर्गीय मौलाना हाली (बनामा धमशाक हुसेन) उर्दू साहित्य के युग-प्रबर्धकों में हैं धीर मय मस्ताह उनके जन्मस्थान पानीपत में जनमी जनमी जिम ममापीठ से मयायी

॥ स्वर्गीय मौलाना हाली की शताब्दी-अर्पती ॥

गयी वह उनकी शान के सवचा योग्य थी। समापति के आसन को हिव हाइनेस नवाब साहब मोपाम ने सुरोमित किया था और भारत ने प्रत्येक प्रान्त से भक्तों ने प्राकृत अपनी यज्ञावलि उनकी स्मृति की भेंट की। उनमें नवाब भी थे रईस भी थे साहित्य के उपासक भी थे। अशोकदा और चसमागिया बिरबनिद्यालयों ने भी अपने प्रतिनिधि भेजे थे। निजाम हैदराबाद का प्रतिनिधि भी आया था। पानीपत में एक हामी मुसलिम हाईस्कूल है। एक कन्या पाठशाला जोसने का निरन्धय भी किया और नवाब साहब मोपाम ने बीस हजार रुपये प्रदान किये। अन्य सज्जनों ने भी दस हजार भन्दा दिया।

मीसाला हामी उर्दू साहित्य में लक्ष्मण के प्रवर्तक हैं। उर्दू शायरी को अक्षकारों और कविम भावों और बिरह के पंचकों से मुक्त करके उसमें आधुनिक पैदा करनेवासी मानाएँ भरीं। आपका 'मुसद्दस' उर्दू साहित्य का सबसे प्रसिद्ध काव्य-ग्रन्थ है जिसमें मीसाला हामी ने मुसलिम राष्ट्र के उत्थान और पतन का बुतान्त भोज और प्रसाद से भरी हुई शैली में बयान किया है। पहल आप गजबें कसूते थे पर उसे ब्यक्त समझकर छोड़ दिया। लक्ष साहित्य में भी आपका स्थान उतना ही ऊँचा है। आपने भर समय अहमद का बीबल-बरिब 'हवाते जाबेब' (अमर बीबल) के नाम से लिखकर उर्दू में विचारालोक बीबल-बरिबों की बुनियाद डाली। उर्दू साहित्य में आलोचना के जन्मदाता भी मीसाला हामी ही हैं। आपकी शही गम्भीर विचारपूख होती है और कठिन में कठिन विषय की भी आप ऐसी व्याख्या करते हैं कि वह सुयम हो जाता है। साहित्यिक नैतिक और शारीरिक विषयों पर आपने लिखने ही लिखने सिखे जो उर्दू साहित्य का धौरन बढ़ाते हैं। मीसाला हामी सर समय अहमद के बनिष्ठ मित्रों में थे और अमीरगद मुनिबमिटी की स्थापना में उनका पूर्ण सहयोग था। हम भी आपकी स्मृति में अपनी यज्ञावलि अर्पण करते हैं। कौम ऐसे ही कवियों और विचारकों से बनती है और हमें यह बँसकर पर्व होता है कि उर्दू के अन्त अपने महारथियों का सम्मान करने में किन्ती से पीछे नहीं है। खुशी की बात है, कि इस समारोह में हिन्दू साहित्यकार भी शरीक हुए थे। साहित्य एक ऐसा क्षेत्र है, जहाँ पंथिक भेद-भाव के लिए स्थान नहीं।

नवम्बर १९३४

मि० किर्पिंग का स्वर्गवास

इंग्लैंड के मशहूर साहित्यकार रुह्याड किर्पिंग का स्वर्गवास हो गया। आपका जन्म भारत में हुआ था। आपके पिता बम्बई के प्रांत स्कूल में अध्यापक थे। रुह्याड किर्पिंग ने यहीं शिक्षा पायी यहीं अंग्रेजी पत्रों में लिखना शुरू किया और स्वाति पा जाने के बाद विभापत चले गये। उनकी भाषा में प्रवाह का विचारों में

प्रायः ही धीरे उनकी सुन-सन्धि प्रपूज भी । उनकी रचनाओं में 'अथल बुक' किम' धीरे धीरे अज्ञानिया धरत है । धीरे धीरे के विषये धवाय धिन्न उन्हीने कीके धीरे में बहुत कम किधी के धीरे हूँगे । धाप साम्राज्यवा' के धन्य मन्त से धीरे धापके मन्त में पश्चिम धन्य तक पूर पर प्रमूल्य धमये रखने के लिए धामा वा पर इस मन्त को स्वीकार न करते हुए भी इसमें कोई संदेह नहीं है कि बहु ठीके धरजे के धनाधार से धीरे धागे अलकर धापके उन्हे धपने गमती नजर भी धाने सगे धे ।

फरवरी १९३६

सम्राट जार्ज प चम का स्वर्गारोहण

किसे इस धनिष्ट की संका भी कि सम्राट जार्ज पंचम का इतने धात्मिक रूप से स्वभाव हो धामगा । मृत्यु तो संसार का धर ब सत्य है । विषये धम लिया है, वा मरेना ही पर सम्राट का धन्य इतना निष्ठ है, इसकी तो कल्पना तक न की जा सकती थी । ईश शासन में धो बुध करता है, मंत्रिमंडल करता है, पर धन्यत रूप से राजा का धवाय पढ़ना धनिधाय है । यह कौन नहीं धामता कि हुली भारत पर उनकी विरोध धृष्टि रली थी । धापके लिए धापका सामाज्य केवल एक मानधिन्न न वा अन्ति सत्रीय वस्तु धा विषये धाप मत्तो-ध्रौति परिचित थे । धाप १९१९ में भारत धाये धीरे धरही से धाकर धाने इंग्लैण्ड में धो धापण विवा वा उसमें भारत के प्रति सहायधुति की प्रसा धी थी । इसी तरह दिल्ली दरबार के सुम धबधर पर भी धापने भारत के लिए धुनेध्दार्द प्रकट की थी । धापको धन-धन धबधर मिले धापने भारत के लिए मान्धना मरे उन्धाह बड़नेवाला सन्य धरहे । धान धापकी मृत्यु से भारत को धपने एक सच्च धिरीये के उ' धाने का शोक हो रहा है । धापका राज्यकाल धानी सुधीति के लिए बहुत दिनों तक धा' रहेगा ।

फरवरी १९३६

हज़रत राशिद खैरी का स्वर्गवास

हज़रत राशिद खैरी के स्वर्गवास में उर्दू-साहित्य में ऐसा स्वाध गामी हो गया जिमको पूरि मुश्किल से होषी । धान उन सेधकों में थे जो ममान में धम्याय नहीं देन सकते धीरे धयेता उसके धिनाक वेहा' करते रहते हैं । धानने धपनी सारी प्रविधय मुस्लिम महिनाधों धी बकामत की धेंट धर थी । धापकी सेधनी से करणा भी धारानी बहती थी । महिना-धीधन धीरे धनके धनोधाधों वा धापने गहरा धम्यधन किया धा

॥ हज़रत राशिद खैरी का स्वर्गवास ॥

घीर जब अपने पात्रों को कलश-रुपा कहते थे तो उस व्यापका का चित्र-सा खींच देते थे । आपने संकड़ों पुस्तकें लिखी हैं घीर जो अनप्रियता आपको प्राप्त हुई वह फिरसे ही किसी को मिली होगी । आपकी शैली सबका बनठी है । बहुतों ने उसकी नकल की पर कोई सफल न हुआ । उसमें आपका व्यक्तित्व आहूने की तरह झमकता है । किसी की प्यारी अमान लिखनेवाला आपको बाद जब घीर कोई नजर नहीं आता । ईश्वर आपको स्वर्ग प्रदान करे ।

मार्च १९३६

श्रीमती कमला नेहरू का स्वर्गवास

जिस वस्तु श्रीमती कमला नेहरू के स्वर्गवास की खबर अखबारों में निकली ता ऐसा कौन धायमी या जो अखबार को पटककर सिर पर हाथ रखकर कई मिनट तक मर्माहत की-सी बसा में जो न गया ही । यह केवल राष्ट्र की बीर सेविका की मृत्यु न थी अपनी ही बहन या माता की मृत्यु थी । उस सुख-खी देह में कितनी सामना शक्ति थी जिसने कभी त्याग की त्याग घीर छठरे को अंतरा न समझा और कठिन से कठिन बातनाएँ हँसकर भेरी । यह आपके उस प्रेम की विभूति थी जिसने घारे देश को अपने अन्तर समेट लिया था । त्याग घीर सहस्र प्रेम ही के मित्र रूप तो है । जिसमें प्रेम का बल नहीं वह राष्ट्र पर अपने को होम कैसे कर सकता है । जिस वस्तु आप यहाँ से योरोप नहीं तो हम आशा थी आप वहाँ से स्वस्थ होकर लौटेंगी । आत्मी हानत कुछ-कुछ संभलने की खबरें भी आयी थीं । पवित्र अवाहरमाल की जब बेडन-बाइलर से लम्बे आये तो हमने समझा अब कोई अंतरा नहीं रहा मगर हमारी आशाएँ झूठी निकलीं और आप राष्ट्र के सामने बीर मारी का अमर धार्मिक रखकर प्रस्थान कर गयीं । हमें पवित्र अवाहरमाल से इस मातम में किसी हमदर्दी है, जिनका उपस्वी कठोर क्लम्य का अम्यस्त जीवन भी इस सुनेपन को शायद ही मिटा सके ।

अप्रैल १९३६

श्री मैथिलीशरण स्वर्ण-जयन्ती

श्री मैथिलीशरण जी न हिन्दी-साहित्य की जो सेवा की है उतनी शायद किसी व्यक्ति ने नहीं की । हिन्दी के मबोन पद्य-साहित्य में से उनकी विभूतियों को निकाल इसलिए तो वह केवल फुटकर वचिताओं का संग्रह मात्र रह जाता है । महाकाव्यों का धारि से ही साहित्य में सर्वोच्च स्थान रहा है । संसार-साहित्य में धार भी जिन पद्यों

का सबसे ज्यादा भावर है वह महाकाव्य ही है। और गुप्त जी ने एक-दो नहीं करीब करीब एक दर्जन महाकाव्यों की रचना कर डाली है। किसी भी साहित्य में यह गौरव दो ही बार कवि-सम्राटों को मिला होगा। आपकी रचनाओं का रूप तो पुराने मास्टों के अनुकूल ही है मगर उनमें नये युग का स्पन्दन है और वायुति है। आपके रचे हुए चरित्र धातल होते हुए भी मानव है तुलसीदास के चरित्रों की भाँति देवता या राक्षस नहीं। रसों को व्यक्त करने में और उनके प्रवाह में पाठक को बहा ले जाने में गुप्त जी को कला है। आप इस समय पचासवें साल में हैं। आगामी आठवण शुक्ला याने २१ जुलाई १९३६ को आप पचास पूरे करके इत्यानवें वर्ष में पदापण करेंगे। श्री बालकृष्ण श्री शर्मा 'नवीन' ने नागपुर के कवि-सम्मेलन में अपना सद्गारठी भाषण देते हुए यह प्रस्ताव किया था कि हिन्दी-साहित्य-प्रेमियों को उस दिन गुप्त जी की स्वस्थ-जयन्ती का उत्सव मनाया जाए। हम इस प्रस्ताव का हृदय से समर्थन करते हैं। आपने उत्सव मनाने के दो रूप बताये हैं। एक तो यह कि उस तिथि को हिन्दी के प्रमुख साहित्य सेवी गुप्त जी के निवास-स्थान चिरगाँव में बसा होकर उन्हें बधाई दें। दूसरा यह कि सभी बड़े-बड़े शहरों में समारोह की आर्य और गुप्त जी की साहित्य-सेवाओं की चर्चा हो और उनके दीर्घ जीवन की कामना की जाय। एक तीसरा प्रस्ताव श्रीदत्त रामचन्द्र जी टकड़न सम्पादक 'हिन्दुस्तानी' इसाहाबाद का है कि इस जयन्ती के उत्सव में गुप्त जी को सम्पूर्ण रचनाओं का एक स्टैंडर्ड एडीशन निकाला जाय मगर अभी तो गुप्त जी पचासवें साल में ही हैं। अभी उन्हें कम से कम सत्तर तक जीना है यानी साहित्यिक जीवन भीना है, इसलिए यह एडीशन तो फिर भी धबूरा ही रहेगा। हाँ नवीन जी के दोनों प्रस्ताव व्यवहारिक हैं और धबसर के अनुकूल हैं मगर हम इतना निबन्धन कर देना चाहते हैं कि अगर कोई साहित्य-सेवी चिरगाँव न पहुँचकर केवल पत्र द्वारा बधाई भेंट कर दें तो उसे भी बहो मरा मिले जो वहाँ उपस्थित होनेवालों का मिसेया।

जून १९३६

डाक्टर राम० रा० अंसारी का स्वर्गवास

डा अंसारी के स्वर्गवास से राष्ट्र को जो क्षति पहुँची है उसकी पूति होनी मुश्किल है। आपका जीवन श्याम और अदम्य उत्साह का धारण था। हठारा होना आपने कभी जाना ही नहीं। आप जितने योग्य जैनरस थे उतन ही योग्य वैदिक भी थे। श्रीमती काम के सामने आपल न धन को परबा की न स्वास्थ्य की। अगर धारका स्वास्थ्य कुछ दिनों से खराब हो रहा था मगर यह धारका तो ही नहीं सजनी कि आपका अन्त इतना निरन्तर है। शाक।

जून १९३६

फुटकर चुटकुले

न्याय का प्रश्न

जूरी-ट्रायल

जून या फौजदारी के मुकदमों में जूरी की—पंच की—सलाह सेना एक प्राचीन प्रथा है पर धातुकाल भारत की अद्यतनों में इस प्रथा को जो रूप दिया गया है वह भारत के लिए नया है। जहाँ तक हमें मालूम है, यहाँ के न्यायालयों में जूरी का उठना भारत नहीं होता। उसके लिए कई ऐसी असुविधाएँ हैं, जिससे प्रतिदिन नगारिक इस पन् पर निमन्त्रित किये जाने से सहानुभावहीन कर काम नहीं करना चाहते। जूरी को जितना बचा मिसता है, वह उसकी हानि को देखते हुए इतना कम होता है, कि अचिरकाल भोग जूरी में बुलाये जाने के नाम से ही काँप उठते हैं। यही कारण है कि भारत में जूरी प्रथा विरोध सफल नहीं हो रही है।

फिर भी यह कहना कि यहाँ के जूरी नियम नहीं होते उनकी नीमत्त खरब होती है, उन पर विश्वास नहीं किया जा सकता ..इत्यादि यहाँ के बैठवासियों के अरिष्ट पर ही होय समाला है, और हमें बड़ा दुःख है कि पटना-हारिकोट के सम्मानित जजों ने केवल एक मुकदमे की गति देखकर इतनी कड़वी तथा विस्मेशर बात कह डाली। बिहार के एक गाँव में एक श्वाला घाम रास्ते से अपना बीस लिये जा रहा था। गाँव के कुछ बनीदार या पनी कारतकारों ने उसे सुना बीस ले जाने से मना किया क्योंकि इसमें फसल खर लिये जाने का भय था। श्वालने ने अपने अधिकार को छोड़ना अस्वीकार किया। बात बढ़ गयी और वह मार गया। मामला बीरज अब के इकलास पर आया। मौ से सप्त जूरियों ने अभियुक्तों को निरपराध पाया। और अब ने मामला पटना-हारिकोट में भेज दिया। वहाँ कई को फाँसी लगी या कालेपाली की सजा मिली।

मुकदमा बिहार का है, अतः पूरी रिपोर्ट हमारे पास नहीं है। पर, अज्ञातगी वारीकियों पर कुछ मित्रता भी व्यर्थ है। अभी हाल में इलाहाबाद-हारिकोट ने मिर्जापुर के दंडे के विषय में जो फैसला सुनाया है, उससे यह स्पष्ट ही जाता है कि अरा-सी मूल से कानून बड़ी हानि कर सकता है। अतएव बीरज अब की हो राम टीन है या पटना हारिकोट का निर्णय ठीक है यह कालूम नहीं जानें हमारे रूप में दोनों के लिए समान धार है। पर इस विषय में जूरी की राय को 'पंचपाठपूर्व' मान लेना उन्हें बेरिमान-सा समझ लेना तथा इस उबाहरण से यह सलाह दे बैठना कि भारत में जूरी प्रथा बलवत स्थापित हो रही है, बड़ी कड़वी बात है। शायद अकण्ठ से प्यारा

है और हमारी सम्मति में हाईकोर्ट के धारणीय जजों ने समूचे भारत के लिए एक भीषण मौखन मगाना है।

भारतीयों की अयोम्यता प्रमाणित करते रहना हर तरह से उसका समत उम्ते पर बसनेवाला नैतिक दृष्टि से भ्रष्ट सिद्ध करना यह 'स्टेड्समैन' ऐसे पत्रों के लिए बड़ा ही ठमिकर काम है और हम यह बेसहकर धारण्य नहीं हुआ कि अपने छ-फरबरी के अंक में 'स्टेड्समैन' ने इसी पर एक अग्रभेक तक लिखा है और लिखने के बोध में हाईकोर्ट द्वारा सिद्ध धरानियों को 'मुग्धा' लिखा है। 'मुग्धा' (रफ़ियस) का प्रयोग शायद हाईकोर्ट के निष्ठय की महत्ता दिखाने और जूरियों के चरित्र बस की हीमता दिखाने के लिए किया गया है। इन्हीं ऐसे धारण देशों में भी जूरी-द्वारा मुद्दमे कराने के विषय में विधाव उठ चुका है। हमें यह भी ज्ञात है कि वहाँ धनी तक भारत ऐसी बटगाएँ होती हैं। क्या 'स्टेड्समैन' वही बातें इन्हीं के लिए भी लिखने को तैयार है। भारत तो पविष्ठ मूक चरित्रहीन है ही पर यदि उससे कहीं भीषण धारण हम अपने शासकों की धारि पर करते तो यह हमारी नीचता या कानून के सिहाय के पास समझ जाता। पर हमें मालूम है कि यदि ब्रिटिश चरित्र के दूषण है तो मूषण भी। उसी तरह भारतीय चरित्र के भी—और दूषण की धरणा मूषण धरिक है।

१६ फरबरी १९३३

बनारस की अंधेरी कचहरियाँ

और जगहों का तो हमें अनुभव नहीं पर बनारस के धानरेटी मुंसिफ़ों के इजलास में जो मुकदमा एक बार गया बस समझ लीजिए कि चार-स महीने के लिए छुटी हो गयी। रोज़ रोगों क्रीकमाने इजलास के द्वार पर कृतियाँ बटकल हैं मुकदमा पैठ होता है और मुस्किम से धाव बटे की कार्याई के धाव दूसरे दिन के लिए मुस्तबी कर दिया जाता है। बस-बस पाँच-पाँच रुपये के मामलों की वैरवी में सिकड़ों का धार-न्याय हो जाता है। रोज़ रवाहों की सवाटी और बलपान का धर्म और बकील का मेहनताना चाहिए। शायद सरकार ने इन धानरेटी मुंसिफ़ों को इतीलिए बनाया है कि उनके इजलास में जो एक बार फँस जाय वह फिर जिन्गी धर के लिए काम पकड़ से और भूल कर भी कचहरी के हातों में न जाय। इन भली धारणियों को न जाने इतनी मोटी-सी बात क्यों नहीं समझती कि जमकी इस बीस से मुकदमेवासों को कितनी तकमीक कितनी परेशानी होती है। धपना सरा काटोबार छोड़कर कचहरी में पड़े रहना और एक-दो दिन नहीं महीनों इस तरह की सैतान भी नहीं गुनाता। हमें धार

है ज़रूरी है ऐसे मुद्दामें दस-दस मिनट में तय हो जाना करते थे। इन क्षेत्रों
 इनसाफों में बकीलों को तो जानी है। यहाँ दिन भर टके से भेंट न होती थी वहाँ प्रायः
 कोई मुकदमा महोत्तम मर भी जाता तो बन्धों काही रुकन हाथ था गयी। यह प्रायः
 मुंसिफ़ अपनी प्रयोग्यता के कारण खुद तो खोज-समझ सकते नहीं स्वार्थी बकीलों की
 मनमानी करते हैं। पहले तो प्रायः री मंजिल्टों का ही रोना था। अब उनके बड़े नार्ड
 प्रायः री मुंसिफ़ भी पैसा हुए, जो बहुत-सी बातों में उनसे भी बड़े हुए हैं। हमारे एक
 दोस्त करते हैं, कि एक मामूली मार-पीट का मुकदमा यहाँ की क्षेत्री इनसाफ में भी
 महीने बना धीर बतों फटीकों के एक-एक हजार बिगड़ गये तक सुनह हुई। इसी तरह
 के धीर भी बहुत से मुद्दामें सुनने में पाये हैं। एक साहब तो बार बने तक साथ
 समते हैं। उधर मीम के पैर के नीचे मुकदमेवाले धीर उनके बकील पड़े ऊँचा करते
 हैं। कहीं बार बने मुंसिफ़ साहब चाहिस्ता से इनसाफ पर बाते हैं धीर प्राय बंटा
 टिकर डिर प्रायः शासित हो जाते हैं। फटीकेन उवाह हों उनकी बना से धीर है भी
 टीक। उन्हें जब बतन नहीं मिसता तो क्यों उनवेही से काम करें। सरकार ने उन्हें
 बेचार करने के लिए नामजद कर दिया है। बेगार भरते हैं। बसुए में कमी-कमी
 के ब्याज-बिनाय के प्रविकारी इस क्षेत्र की धीर ब्याज देंगे? प्रायः री मुंसिफ़ बनना
 ही है, तो ऐतों को बनाइये जो कुछ दिमाग रखते हों। निरुद्धे मुंसिफ़ बनाकर बनता
 का पता क्यों पन्ने में डालते हो।

२ जून १९३३

न्याय में विलम्ब अन्याय है

बस्तिन गग ने साहीर हार्नोट में बीक बगो का पात्र लेते हुए कहा कि क्षेत्रों
 के पैसा कारों की एक रात यह थी कि हम न्याय में विलम्ब न करेंगे जो अन्याय के
 दुष्य है। प्राय ने कहा कि इन्साफ में तो प्रमो तक उस शर्त की पावनी होती बनी
 बनी है, संविधान भारत में उसे प्रशासन में मूल गयी है धीर प्राय एक तरह से प्रशासन में
 न्याय ही होता है, क्योंकि न्याय इतनी देर में होता है कि वह अन्याय के समान हो
 जाता है। प्रस्तर साठ-साठ साल में प्रपीलों का मन्वर प्राय है। बतों की संख्या तो
 बड़ापो नहीं का सत्रो। इसलिये मि रंग की राय है कि प्रशासन की घुटियाँ पटा देनी
 चाहिए, ताकि नाम बचाया में न रहे। प्राय के ब्याज में होती दशहूय बड़ा दिन
 ईस्ट, ईर धीर मुहरम यही घुटियाँ बापी है। प्रायने बहुत ही टीक बना कि जब
 कामिफ़ बनापारी साम में इतनी प्राची घुटियाँ भी नहीं बनाते तो क्या बकील धीर प्राय

॥ न्याय में विलम्ब अन्याय है ॥

उनसे क्या वास्तविक है जो आज में धर्म महीने बर्मास्य ही मनाया करें । बस्तिम संघ ने एक बड़े ही महत्व का प्रश्न उठाया है और यदि उनके उद्योग से अस्वास्थ्य की लाठीमें कम हो गयीं और न्याय की गति तेज हो गयी तो उनका नाम धर्म हो जायगा क्योंकि धर्म एक यहाँ ठिन्दा और अस्वास्थ्य यह लोगों विभाग केमस चीन की बंठी बचाने के लिए है । सम्झी-सम्झी लाठीनों में धर्मरेबुल जब साहबाग योरोप की तीर को निकलते हैं । मुष्ट में बेटन मिले तो काम क्यों किया जाय ?

१४ मई १९३४

अंग्रेजी न्याय-परम्परा

उर शाहीलाल ने लखौर की बीऊ बची का पत्र त्याग करते समय अंग्रेजी न्याय परम्परा पर बड़ा रोचक भाषण किया और अंग्रेजी अस्वास्थ्य की मिसालें पेश कीं । वहाँ न्याय-विभाग मबर्नमेंट से विलकुल अलग है । भारत में भी उही भाषण पर अस्वास्थ्य की स्थापना हुई है, लेकिन वहाँ वह भाषणी कहीं ? अथवा अस्वास्थ्य ने मबर्नमेंट की नीति के विरुद्ध कोई फैसला किया तो इसका फल उसे अस्व ही मिलेगा । उर शाहीलाल ने बच्चों के लिए वही सबसे अच्छा मार्ग बतलाया कि वे निजी हानि लाभ का विचार न करके सर्वत्र न्याय की रक्षा करें और मबर्नमेंट उसका जो इवड या पुरस्कार दे उसे पुष्पाप स्वीकार कर लें ।

लेकिन बच्चों के दिल में यह बात समायेगी इसमें सन्देह है ।

१४ मई १९३४

अदालतों में धोती

हमारी समझ में यह बात नहीं आती कि अस्वास्थ्य के धोती का क्यों बहिष्कार किया जाता है ? धोती टोपी तो और राष्ट्रीयता का चिह्न है, लेकिन धोती तो धनी पहनते हैं, यहाँ तक कि मुसलमान भी घर पर अक्सर यहमक ही बाँधते हैं लेकिन फिर भी अस्वास्थ्य में धोती पहनना अस्वास्थ्य का अपमान करना है । क्या धोती से देह नीचे का नाम गन्म रहता है ? धोती तो अक्सर एड़ी तक सटकती रहती है । और अथवा अँधी भी रहे, तो क्या वह अथ बाँधिये से भी अँधी होती है, जो लड़ाई के बाद से इतना प्रभावित हो गया है कि हुक्काम इस्लाम पर भी अँधे पहनते हैं । उस बाँधिये से तो धोती बाँध तक लुभी रहती है, धोती की तो अथवा कपडों के रूप में भी पहना जाय तो

बढ़ बुढ़े से षोड़ी ही ऊपर रहती है। फिर बोती पहनना क्यों जुम समझा जाता है ? कोई-कोई छात्र महापुर से बोती बैचने ही नाम से बाहर हो जाते हैं। बकील या डाक्टर या व्यापारी संघों को तो पोतियों से चिढ़ नहीं है, वहाँ लोग बेफुफ़ बोती पहने जाते हैं। बोती की मुमानियत केवल प्रयासों के लिए है। बम्बई और मद्रास में तो मस्तर हिन्दू ब्राह्मणों ही पहनते हैं। फिर क्या बोती इसी प्रान्त में धाकर बरमान की वस्तु हो जाती है ? क्या इससे भी यहाँ स्वाधीनता की गन्ध घाती है ?

३१ अक्टूबर १९३२

संयुक्त प्रांत में फलों की काश्त

बीस-पच्चीस साल पहले फल केवल मुँह का व्यापक बदलने के लिए खाये जाते थे। इनके पोषक गुणों से जनता में बड़ी अनभिज्ञता थी। तब में भी इनका व्यवहार दूध-छोए की बीजों के बाद केवल मन-बहसाव के लिए कर लिया जाता था। रईस लोग अपने बगीचों में फल पैदा करते थे पर केवल शौक के लिए। फलों का कोई व्यावसायिक महत्व न था इसीलिए कि जनता से इनकी माँग न थी। सलगऊ के छार बुने और ग्राम प्रयाग के समक्य काशी के लंबड़े अकर महापुर से पर इनका स्वाद रईस लोग ही उठाते थे। गाँवों में हर किसान के पास दस-बीस पेड़ ग्राम महुआ कटहल शारि होठ से और बहू हर छाव में दो-चार दिन इन बीजों का स्वाद से निभा करवा था। इनसे उनके जीवन की कोई आवश्यकता न पूरी होती थी। ऐसा बिरला ही कोई फल है, जिसमें सबगुण न बढाये जाते हों। समक्य और डेर से छाँटी फलों की ग्राम बरनी करता था कैसे बुहार पैदा करते थे शरीरों बलघम जाते थे। पर इस तरह फलों का मोहन-मूग्ध बहुत बढ़ गया है। इस प्रान्त में गानपुर से भाखो रुपये के संतरे, बिहार के ग्राम बम्बई और कमरवा के केले पेशावर के अनार, नारमीर के सेब पाकर खप जाते हैं। फिर भी अभी तक फलों की कारत की धार न सिंचित जनता का ध्यान है, न जमींदारों का। इस व्यवसाय के लिए बहुत बड़ी पूँजी की जरूरत नहीं। जिसके पास दो-चार एकड़ जमीन बोझा-बा समम और दो चार ही रुपये हैं, वह इसे बड़े से कर सकता है। इन बीजों के लिए बाजार खोजने कहीं जाना नहीं है। बाजार बना-बनाया है। मार्ग के धाने की डेर है। मन्दी-तेजी का समर भी इस पर बहुत कम पड़ता है। इस विषय का साहित्य भी कृषि-विज्ञाप से धाराणी से मिल सकता है। यदि कोई सम्झन इस विषय पर कुछ लिखना चाहे, तो हम धर्मधार के साथ उसे प्रकाशित करेंगे। हम प्रयत्न कर रहे हैं कि इस विषय पर 'जागरण' में एक संप्रदाया हम से

प्रकाशित करें। जो महानुभाव हमें इस विषय की उपयोगी पुस्तकों का नाम बताकर, या कुछ लिखकर सहायता देंगे हम उनके धन्यवर्ती होंगे।

७ नवम्बर १९३२

कारनिवर्तों में जुआ

कारनिवर्तों का मुख्य उद्देश्य जनता के लिए स्वस्थ मनोबिभोर की सामग्री पहुँचाना है, लेकिन हमें कुछ से कहना पड़ता है कि कासी में धातकन जो कारनिवर्त धाम है, वहाँ जुए के सिवा और कुछ नहीं होता। दो-चार ऐंग्लो इंडियन माईसाई सुवर्तियाँ सुबकों को धातकन करने के लिए बैठा बी जाती है और तरह-तरह के जुए खेलते जाते हैं। कहीं खूँड़ी है, कहीं धीर का निरागा है, कहीं कुत्त। इससे कितनी कुवर्षि फैलती है, और कुप्रवृत्तियों को कितनी उत्तपना मिलती है, इसका अनुमान करना कठिन है। मामूली जुआ खेलनेवालों पर पुनीस के जाने हुमा करते हैं हार्माकि ने गुप्त स्थान में गुप्त रूप से खेलते हैं, लेकिन यहाँ दिन बहाड़े जुधा होता है, पर कोई नहीं बोलता। इसमें क्या रहस्य है, यह समझ में नहीं आता। क्या अधिकारियों को इस जुए की खबर नहीं होती? हमने तो कई बार पुनीस के कमचारियों को जुआ खेलते देखा है। उन्म पदाधिकारी जी धक्कर कारनिवर्तों को धीर करने जाते हैं, पर किसी ने कुछ धातकन की हो ऐसा कभी सुनने में नहीं आया। हमारा अधिकारियों से अनुरोध है कि वह कारनिवर्तों पर कड़ी निगाह रखें जिससे इन्हें बहर कैसाने का धक्कर न मिले।

७ नवम्बर १९३२

जुए का युग २

यह तो नहीं कहा जा सकता कि पुराने जमाने में जुए का रिवाज न था क्योंकि गन्धर्वों ने कौरवों के साथ जुधा खेला था मत्त भी पक्के जुधाई से धीर पुराने गन्धर्वों में भी जुए का विक्रि आया है, पर यहाँ जुधा खेलना बुरा धक्कर समझ जाता था। देवासी के एक दिन प्रागे धीर पीछे भोगों पर जुए का मूठ खबार हो जाया करता था। लेकिन वर्तमान युग में तो जुधा बीबन के हर पहलु म इस तरह घुस गया है कि इसे जुए का मुय कर्हे तो अनुचित न होगा। बाजार में साबुन सेस थियरेट बंठ-मंजन कुत्त लटीकने बाइए, धातकन नाम के बदने में केवल धीर ही न मिलेगा इनाम का प्रलोभन भी मिलेगा। इसलिए धातकन न रहने पर भी इस जुए में धपनी तर्कदीर धातकन

लिए यह चीज करीब लेते हैं। बाटरी और बूझरीट को खोजिये वह तो पृथनी
 हो मनी सब तो साहित्य में भी जाए का बीग है। प्रायः पुस्तकें करीबिये पुस्तक के
 विरुद्ध प्रायः के इनाम भी मिलेगा। कारनिबलवाने इस तरह का प्रयोग देते ही
 सब स्वदेशी प्रशंसनियों में भी मनी टिकेट रखे जाते हैं और जिनके नाम से टिकेट
 होते हैं उन्हें इनाम मिलता है। समाचारवाने क्यों बुझने लगे उम्हें प्रतिबोधिता
 स्वर निवास लिया और मुना है इंग्लैंड के बाबू प्रकाश एक या दो लाख पौंड
 विचार इनाम दे रहे हैं। गुमान हिन्दुस्तान के लिए, तो कई चीज योरोप से आ जानी
 दिव्य, वह चीजें मूँद कर उसका स्वागत करने को तैयार है। आज एक अंग्रेजी पत्र में
 प्रमथानी स्मृतियों के नाम लगे हैं जिन्होंने कोपरन बंतर्यजन करीब था। इमतिव
 लूँ बेकरी घटा रही है, वे लपक कर कोपरन टूथ पेस्ट खरीद कर अपने भाग को
 रोका करें। बाहू दे परिचय की सम्मता देने मानवता के लिए तो कहीं बयह हो नहीं
 ही। चारों तरफ निकट व्यवसायिकता का राज है। मुतते हैं हमारे बड़े-बड़े नारबाही
 मन को घाज भारत के नेता कहता रहे हैं सटुबासी की बयोजल कोरुपति बन
 में। प्रायःकम तो बन पुकता है। प्रायः किसी तरह धन के प्रभु बन बाइए, रिबामा
 लभन कर, जाती मोट बनाकर, या मकली दस्तावेज बनाकर—इससे मतमन मही।
 प्रायःके पाठ बन होना चाहिए। प्रायःक चारों तरफ धावर होना सब प्रायःके मामने
 लने टेकें। जो समाज मुबार के बीजने हैं वे भी प्रायःके द्वार पर हाडिरी गवे
 योकि प्रायःके पाठ बन हैं। प्रायःको पाले कर सकते हैं। लूब बुधा खेनिए, लूब ठराब
 मिकिए, लूब बुहरी धीरलों को पुविए धीर अपनी शारी न कीविए धीर दिन में दो
 बार दमन डिम्ने डिमरेट के लूँक डालिए, सब प्रायःको धोषल करने के जेटकरीन हैं उनमें
 भी एक करे बहु करतिर।

२२ दिसम्बर १९३३

जुय का युग २

मोन को सब पर लग जाते हैं सब बहु बुधा हो जाता है। वीं कनी भी उनका
 और कम मही रहा। परम ने अपनी सारी ईविक धीर धाव्यात्मिक शक्ति समकर भी
 उसका धीर मही पद्य प्रायः। नीति के विचारकों ने सबैव इसके विरुद्ध विहाण किया
 मेडिन उसका धीर समय के नाम बड़ता ही जसा जाता है। धीर सब तो बहु हवाई
 भाव पर उड़ रहा है। विषय देविए उबर जाती वा धीर-धीरता है। ध्यानार में जुधा
 व्यवहार में जुधा मनुष्यों में जुधा मनोरंजन में जुधा गरज धाव वा संसार जुधावय
 ही पया है। धन में उसका प्रवेश बहुत पहले ही हुआ था। सब साहित्य पर भी उनका
 काम बड़ाया है। पहेलियों धीर शब्द पालों की बूम है। पत्रों धीर पुस्तकों पर मन्बर

जाने जाते हैं और जो चार चुन हुए नम्बरों पर इनाम रखा दिया जाता है। जिसके पास संसद नम्बर का पत्र पहुँच जाय वह एक निश्चित रकम पा जाता है। इस बंधारी और सद-बाजारों के खपाने में बस महो रोडगार बढ़ाने से बस रहा है। दरिद्रता के हारों सताये हुए साबुतों प्राथमी इस तिलके के सङ्घारे की प्रासा में अपने अराकियों के समान पैसों का ख न करते हैं और अपने निरूपत ठोक कर रह जाते हैं। इन पत्रों और पुस्तकों के प्रकाशकों को अपनी विप्री के लिए ऐसा प्रमोदन देते हुए बरा भी शम नहीं जाती क्योंकि ब्यापार, ब्यापार है और उसका काम है—जैसे भी हो जनता की बेज से अपने निकाल लेता। इन प्रकाशकों को मालूम है कि वे जो चीजें जनता को दे रहे हैं व सपर है और उनका साहित्यिक महत्व कुछ नहीं है। इसलिए वह जनता की मोह मत्तना को उल्लेखित करके अपना मतलब बाँटते हैं। बाहू रे योरोप। लेरी गुलामी हमें न जान पतन की किस गहराई तक से जायगी। और मजा यह है कि वे सज्जन अपने हककम्बों की सफाई भी देते हैं और बडे जोरों के साथ।

मार्च १९३५

नगरों में दुर्घटनाएँ

जों तो जहाँ आमक-रपत बहुत होती है, वहाँ हमेशा ही दुर्घटनाएँ होती हैं लेकिन अब से बड़े-बड़े नगरों में ट्राम और टैक्सियों की वृद्धि हुई है ऐसी दुर्घटनाएँ दिन-दिन बढ़ती जाती हैं। वहीं एक-दोमि मोटरों से ठकरा जाते हैं, कहीं कोई ट्राम गाड़ियों की लपेट में आ जाता है। यह भी नयी समस्या के हवारों प्रसादों में से एक है। मन्दन म्यूसाक प्राधि महान् नगरों का ठो कलना ही क्या दिल्ली-जैसे नगर में जिसकी प्राथमी तीन लाख से अधिक नहीं प्रति सप्ताह सात प्राथमी के हिसाब से इन दुष्प्रणी सवारियों की भेंट बढ़ जाते हैं। पैनल कमनवालों के लिए वहाँ सड़क के दोनों ओर पट्टी बनी हुई है और धमर लोग उन पट्टियों ही पर चलें तो ऐसी दुर्घटनाओं की संभावना कम हो जाय। दिल्ली के पुलिस-अधिकारी ने दिल्ली म्युनिसिपैलिटी से इस विषय में लिखा-पढ़ी करते हुए लिखा है कि पट्टियों पर जो ऑमबेवालों और डूकन वारों न क्रमा कर लिया है, इससे पब्लिकों के लिए इसके सिवा कोई उपाय ही नहीं रह जाता कि वे सड़कों पर न चलें अतएव म्युनिसिपैलिटी को चाहिए कि वह पट्टियों पर से डूकन उठवा में अपना पुलिस कांस्टेबल वा माम में जाड़ा होना बेकार हो जाता है। हमारी समझ में पुलिस-अधिकारी का प्रादेश सधवा ग्याम संयत वा और जनता की प्राध रचा में नगर के पिताधों को पुभीस से सहयोग करना चाहिए वा लेकिन म्युनिसि पैलिटी ने इस प्रावेश को शायद पुभीस की मुधाजलत बेजा समझा और उसे बिबाव का

विषय बना लिया। निस्सन्देह पट्टियों पर से दुकानें उठा देने में म्युनिसिपैलिटी की सामर्थ्य में कुछ कमी होगी और दुकानदार भी इसे शायद न पसन्द करेंगे। और इस लिए इन मेम्बरों को बोधारा उन व्यापारियों से बोट मिलना कठिन हो जायगा लेकिन वहाँ प्राकृतिक का प्रयत्न था जाता है, वहाँ रुपये का या स्वाम का स्वाम गीछ हो जाना चाहिए। म्युनिसिपैलिटी केवल इतना ही नहीं है कि अपनी विन्धवारियों को ॥ समझने वाले महानुभावों की भीरात बनी रहे। उसका प्रयास कठिन जगता की सेवा है और जो बोन इस विन्धवारी का नहीं समझते उन्हें म्युनिसिपैलिटी में जाने की जकरत नहीं।

१४ नवम्बर १९३०

सूख फल खाओ

विज्ञानज्ञ और अल्प परिचितों के बीच में इन दिनों 'फल खाओ' कादीनन चल रहा है। विज्ञान ने सिद्ध कर दिया है कि फलों में बितने पोषक पदार्थ और रोमनासक इतने हैं उतने भोजन को और किसी सामग्री में नहीं है। मन्वास्त्रि की वृत्ता में तो फल-हार आवश्यक हो ही जाता है, साधारण व्यवस्थाओं में भी हमारे स्वास्थ्य पर फलाहार का बहुत ही अच्छा असर होता है। हम ऐसे कई सबबों को जानते हैं जो फल पचान में असमर्थ हैं और कमजोर फलों के आहार पर रहकर कभी से कभी मानसिक और शारीरिक मेहनत कर सकते हैं। जो मकखान और मांस-मछली लागेवाले आश्रमिया में कहीं अधिक हो जाती है, जो वास्तव में रोष है। ऐसे आरपी कोई बड़ा परिश्रम नहीं कर सकते। फलाहार से देह में फुरती खुशी और मुस्ती बढ़ती है और विज्ञान वेत्तामा के मतानुसार फलाहार से मनुष्य दीर्घजीवी भी हो जाता है। मुश्किल नहीं है कि फलाहार फल से नहीं पड़ता है और साधारण आरपी उसका व्यवहार नहीं कर सकता अगर हमारे जमीनदार फलों की खेती पर ज्यादा ध्यान दें तो न देश के लाभ बड़ा उपकार करें। प्रताप के लिए बितनी मेहनत की जकरत होती है, उतनी फलों में नहीं होती और हम उपजाऊ जमीन में भी जहाँ प्रताप पैदा नहीं हो सकता फल पैदा हो सकते हैं।

१० दिसम्बर १९३०

पश्चिमी व्यायाम का पागलपन

भारत इतिहास में ब्रिजल कालों में सभापति मंत्र एम० बी० नायडू ने भारतीयों के सामने सेवा और रोष-निवारण का जो कार्यक्रम उपस्थित किया दरि शास्टर

समुदाय उस पर धमक करे तो देश में रोग का बढ़ता हुआ घातक बहुत कुछ खान्त हो जाय । मगर यहाँ ठा ऐसे डाक्टर हैं जो फीस पहले सेते हैं मरीज से बात पीछे करते हैं । उनके पढ़ीस में एक मरीज मरीज पढ़ा कराह रहा है उसकी उन्हें परबाह नहीं होती । डाक्टरों में जब तक त्याग की भावना न हो उनकी बात से गरीबों का क्या उपकार हो सकता है । मेजर गायडू ने बहुत धरय कहा कि भारत शहरों में नहीं गाँवों में है, जहाँ कोई डाक्टर नहीं पहुँचता । अघर हमारे मरात्मी डाक्टर देहातों की धोर भी कुछ हुना करने लगे तो क्या कहना । आपने व्यायाम की खर्चा करते हुए कहा—

‘पश्चिमी व्यायाम का लम्ब दिन-दिन बढ़ता जा रहा है । भारतीय व्यायाम से शीघ्र उबासीन होते जाते हैं, जो तारिखक दृष्टि से अघर व्याया नहीं तो उतने कम्याड कारी अघरय है, जितने पश्चिमी व्यायाम । मुझे बिरबास है कि अघर किसी मुबक को प्राचीन व्यायाम का अम्यास प्राचीन नियमों धीर आबेहों के अनुसार, करवा जाय तो उससे कम लाभ न होया जितना पश्चिमी व्यायाम से होता है । भारतीय प्रछामी यहाँ के प्राणियों के लिए अधिक अनुकूल है, इसके साथ ही किठना कम कर्ष । देशीय खेल कहीं भी खेले जा सकते हैं बिना किसी अडचन के धीर बहुत कम खर्च में । जिमनास्टिक के धीवार अघर यही क खेले हों तो भी छो खपये धीर दो छो खपये के बीच खर्च हो जायेंगे । क्रिकेट का एक बेट बीस खपये में घाता है धीर टेनिस का एक रैनेट तीस खपये में । फिर क्रिकेट हमकी फुटबाम धीर अघर खेल है जिनके लिए अख्खे मैदान अख्खे सामान धीर खड उरह के बूतों की जरूरत है । इनका मुकाबला हिन्दुस्तानी खेलों से कीजिए, जो अजकल के बालकों के लिए कहानी-मात्र रह गये हैं । यहाँ तक कि कुस्ती का रिबाज भी दिन-दिन कम होता जाता है धीर इसकी अगह खूबिबाजी का रिबाज बढ़ता जाता है । देशीय खेलों धीर कसरतों को लुप्त न होने देना चाहिए । हाँ जिनके पास साधन हैं वे पश्चिमी खेल भी खेल सकते हैं ।

हमारे स्कूल में कम-दुडी गुल्मी डंडा लखनी धारि खेलों का बड़ी आसानी ध चार किया जा सकता है, लेकिन किसी का अघर व्यायाम नहीं है । यहाँ तो स्कूलबामे डकों से तीन खपये सामाना अघर लेकर अरंभ-अरंभ कर डालते हैं बहुत किया तो अ-श्रीम लड़कों का अम्यास करने मैचों में खेज दिया । न इतने मैदान है न इतने सामान कि इरेक लड़के का खेल में शरीक किया जा सके । यह भी मानसिक बामता का एक रूप है । अपनी कोई चीज अख्खी नहीं । बाहर की धनी चीजें अख्खी । हाँ अज पश्चिमबाले भारतीय खेलों का व्यवहार करने लगे तो यहाँ के मोर्चों की धारें लुप्त ।

२ जनवरी १९३३

मोटर व्यवसाय

एक विशेष समिति ने इस बात की जांच की है कि सरकारी रेलवे-विभाग को आर्टिफिकल द्वारा कितनी हानि उठानी पड़ती है। इस समिति की रिपोर्ट के बाद अब सरकार ने बड़ी कौंसिल में यह प्रस्ताव पास करा लिया है कि रेलवे की ओर से मोटरों की दीर्घायी जांचें बिलसे उनका बाटा बरामद हो जाय। यद्यपि हमारी सम्मति में राज्य द्वारा बिलसे व्यवसाय अपने हाथ में लिये जा सकें अथवा है पर रेलवे-विभाग सरकारी विभाग पूरी तरह से नहीं है। दूसरे, रेलवे-विभाग में छोटे मीटरों को इतनी व्यादा मोटी उनकाई मिलती है कि उनको बाटा होना ही चाहिए और बड़ी बाटा गरीब बनता पर किराया बढ़ाकर पूरा किया जाता है। इसके अलावा सरकार द्वारा पामित रेलवे की 'किराया-महसूल-मास बेचने का माफ़ा' ऐसी नीति से बनाया गया है कि देश का मोटरी व्यापार ही बहुत कुछ उनके कारण चौपट है और अब उन्हें मोटर बनाने का अधिकार देने का मतलब है रेलवे कम्पनियों की विभागीय कटौत को और भी बढ़ा देना। अब वे मोटरों की लम्बन से मैगासेवी यहाँ के कुछ मोटर-व्यवसायी भूगा बरें विभागीय व्यापारी को माल बेचने का नया मीका मिलेगा।

२० फरवरी १९३३

देहरी और बड़ीनाथ का मंदिर

२७ मार्च को रामबहादुर बिक्रमाजीतसिंह के प्रश्न के उत्तर में सरकार ने एक जवाबी है जिससे यह प्रकट होता है कि इस समय देश की अधिकांस जिम्मेदार संस्थाएँ यह चाहती हैं कि बड़ीनाथ की का मन्दिर देहरी रियासत के हाथ में बना जायें। हमारे सहोदयी 'मारत' में इस विषय में कई सुन्दर लेख प्रकाशित हो चुके हैं। मुझ प्राचीन कौंसिल के भूतपूर्व उपर्युक्त भीयुष मुकुन्दीसाल ने अपने सूचनापूर्ण लेख में यह सिद्धाया है कि हिन्दुओं के इतने पवित्र तीर्थ को एक महँव के हाथ में रखने देना निरास्य अनुचित है। महात्मा के पवित्र ज्योतिशरथ रटौरी के लेख से यह प्रकट हुआ है कि देहरी राज्य ही क्यों से इस मन्दिर का पालन कर रहा है राज्य के अधिकार परम्परागत है तथा राज्य का मन्दिर के प्रबन्ध में अधिकार न होने पर भी जमी क प्र से मन्दिर का पोषण होगा है। इसीलिए श्रीमारत पत्र महात्मलाल काशी अम्बाला समाजनी समा अम्बाला बंगाल धर्म महामण्डल बाराकला देवप्रयाग के पंचपरदा बड़ीनाथ पंजाब प्राचीन महावीर वारा सम्मेलन सायसपुर सागातनधम समा बुखियावाँ रिस्ती समातन धम प्रतिनिधि समा अहमदाबाद इत्यादि संस्थानों ने एक स्वर से

॥ देहरी और बड़ीनाथ का मन्दिर ॥

इसका समर्थन किया है कि मन्दिर राज्य को मिल जाये। इसके विरोधियों की संख्या कम है और इतनी महत्वपूर्ण नहीं है। सरकार ने इस विषय को बुनाई की कौशल की बैठक के बाद ठप करने का निश्चय किया है।

हम यह नहीं चाहते कि हमारा कोई भी मन्दिर या संस्थाएँ बनता की रखा या देख-रेख से निरन्त हार्ने पर किसी एक महन्त या 'राजन' के हाथ में हिन्दूजगत् के सर्वोच्च तीर्थों में से एक स्थान रहने देना नितान्त अनुचित प्रतीत होता है। मन्दिर देहरी राज्य का है यह निश्चित-सा है। भवएव भाशा है, सरकार इस विषय की पूरी जाँच कटाकर उचित निणय करेयो। यह मन्दिर समूचे भारत के लिए महत्त्व का है।

३ अप्रैल १९३३

हमारी सस्थाओं में व्यक्तिगत द्वेष

भारत में ऐसी बिगनी ही कोई सस्था होगी जिसके प्रमुख संभालकों में द्वेष न हो। मतभेद होना कुछ बात नहीं लेकिन जब यह मतभेद द्वेष का रूप में बँटा है, तो अधिरत्य का उसे ध्यान नहीं रहता। तब वह व्यक्तिगत आक्षेप करने लगता है और अपने प्रतिद्वन्दी को बनता की निमाहों में गिराने या उसे उबाह कर हँने के लिए मूठे आक्षेप करने से भी वह नहीं झिन्झटा। धवर उसका प्रतिद्वन्दी उसे मिला कर बनता को उन्टे धुरे से मूँड़ता तो उसकी आत्मा को बरग भी चोट न लमयी। यह तो उसकी आन्तरिक इच्छा ही थी लेकिन प्रतिद्वन्दी उसको प्रलय हटा कर खुद बा रहा है, तो वह कैसे सब कर जाय। तब वह बर्मात्मा बन जाता है, बड़ा-सा टिलक लगाता है, सदाचार का स्वाम भरता है और पम्पिक को बोछा बेकर अपने दुरमन को मार भ्रमाने में सफल हो जाता है, लेकिन उक्ति हाथ में धाटे ही वह कुछ वही सब कुछ बन्कि उससे भी कुछ अधिक करने लगता है, जो उसके लघु ने किया था। इसलिए जब किसी बोट वा सभा या सीप में हम किसी महानुभाव को वर्तमान कार्यकर्त्तियों के बिच्छ बहर जमते देखें तो हमें उनसे सतर्क रहना चाहिए।

३ अप्रैल १९३३

माउंट एवरेस्ट की चढ़ाई

महीर्नों की टीपारी के बाव आधिर धंवेनी हवालाओं ने एवरेस्ट की चोटी के बर्तन कर ही मिय। मण्डली तीन बहाओं में बिठी और पीसीस हवाए फीट की ऊँचाई पर बड़कर उसने एवरेस्ट की चोटी के बककर लगाये। वही कितनी टपड़ भी इसका अनुमान

इसी से किया जा सकता है, कि सूर्य बिन्दु से ज़मीन दरजे नीचे तापमान था। मगर हवाई अड्डा पर बैठकर एअरस्ट की बहाई का क्या महत्व। आप वहाँ उतर तो सके नहीं केवल बर्फ से ढँका एक मैदान देखा होगा। यह तो वही बात हुई कि कुस्ती का फैसला गोमियों से हो जाय। यह तो कोई कुस्ती न हुई। कुस्ती में हम दौड़-बैच देसना चाहते हैं पहलवानों का बम देसना चाहते हैं उनको चुस्ती और पुर्ती देसना चाहते हैं। यह क्या कि फिट से एक गोली बसा भी और मामला खतम। इस तरह तो सीकिया पहलवान भी खतमें हिन्द की जमीन पर मुसा सकता है। जब बड़नेबातों की मयदसी रास्ते की कठिनाइयों पर दिव्य पाती एअरस्ट पर पहुँचती तब हम उसकी तारिक करते। लेकिन योरोप से मुबारकबाद के तार बनाना या रहे हैं और सुशियाँ मनायी जा रही हैं। हम तो यही कहें कि अभी तक बसनामिरि बैसा हो बनेय हैं और मरन उठाने इन दुष्क मनुष्यों के दुस्साहस पर हँस रहा है।

१० अप्रैल १९३३

श्री प्राणनाथ विद्यालंकार की अद्भुत खोज

श्री प्राणनाथ भी उन मनुष्यों में हैं जो कठिनाइयों और बाधाओं से भयभीत नहीं होते। आपने महोपासकों और हुरप्या में पाये गये शिष्यासेवकों और सिपियों से यह बात सिद्ध की है कि भावों ने मिक की चिन्-लिपि से अपनी बखमासा नहीं निकाली बँसा साधारणतः ज्ञान है, और बँसा परिचय क बिशान् कहते हैं। आज के पाँच-छ हजार बय पहले शैब उपासना प्रधान थी और महोपासकों में जो लिपि प्राप्त हुई है, वह उसी उपासना की क्रियाओं और भावों से लिखी है और यही लिपि परिचय में पायी जानेवाली प्राचीन लिपि से बहुत कुछ मिलती-जुलती है साहस्र और ब्रिट भादि द्वीपों में उसी तरह के लोग पाये गये हैं। इससे प्राणनाथ भी इस मतीजे पर पहुँचे हैं कि परिचयी लिपि भी उसी शैब उपासनावाले चिन्तों से निकली है, और आज के पाँच छ हजार बयों पूज उन परिचयी स्थानों में भी शैब उपासना ही प्रधान थी। उस समय अद्र उपासना भी होती थी और सिब सिनाई साहस्र भादि नाम इस बात क प्रमाण है कि 'सिब' या अद्रोपासना से उनका मनिष्ठ संबंध है। हमें चिन्ता है, जब यह धारा पूरी हो जायगी तो उससे इतिहास के एक महत्वपूर्ण विषय में बहुत कुछ परिशोध करना पड़ना।

अप्रैल १९३३

गंगा सम्मेलन

हृदयार ऐसे पवित्र तीर्थ में नामियों का परणामों का—सबका एकत्रित मन गंगा भी में गिरता है। पुण्य-सलमा को इस प्रकार पूषित होने से बचाने के लिए बहुत दिनों से चेष्टा की जा रही है। श्री बिजयराजभाचार्यर ने इसकी एक बड़ी सुन्दर योजना बनायी है, जिस पर विचार करने के लिए हृदयार में गंगा-सम्मेलन हो रहा है, जिसमें सरकारी प्रतिनिधि भी सम्मिलित होंगे।

हृदयार के बाव काशी ही ऐसा सर्वोच्च पवित्र नगर है, जहाँ नगर-नर का मन गंगा भी में गिरता है। यहाँ की बोड ने कई बार चेष्टा कर गंगा भी को दुख करना बाहा पर सरकार ने कोई सहामता न दी। हम हिन्दुओं के तीर्थ को भ्रष्ट करने में उसका भी दोष है। क्या वह काशी की घोर भी ध्यान देने की कृपा करेगी ?

१७ अप्रैल १९३३

भारत के कोढ़ी

दिन प्रति दिन बिबियों में कोढ़ का रोग बढता जा रहा है और उचित नियन्त्रण से यह भीषण संक्रामक रोग फैलन नहीं पा रहा है। पर, अमाने भारत में यह बीमारी बड़ी तेजी से बढ रही है। कोढ़ी होकर शरीर का गन-गसकर फिर जाना बड़ी याचना और पीड़ा के साथ बर्पा जाड़ा भूप का कष्ट सहना—यह सब एक भयानक कहानी है जिसे निखाने से रोमांच हो जायेगा। हृय का विषय है कि इस दिशा में भी कुछ काम शुरू हो गया है। अभी १३ अप्रैल को कलकत्ते में ब्रिटिश साम्राज्य कोढ़-निवारक-संघ की भारतीय कौंसिल की बैठक हुई थी। राष्ट्र-परिषद् के कोढ़-कमीशन की धाबा के अनुसार यह समिति भी भारत में निस्तूत काम प्रारम्भ करने की योजना बना रही है। समिति प्रान्तीय शाखाएँ स्थापित करना चाहती है जिससे सभी माग्य साबबलिक संस्थाओं के प्रतिनिधि होंगे। काङ्गियों के लिए स्वान-स्वाल पर बस्यताम खुलेंगे। कोङ्गियों की दशा की जाँच के लिए कमीशन निमुक्त होगा। कोङ्गियों के बच्चों की देख-रेख का भी प्रबन्ध होगा।

धारा है, यह सब काम जगता के सहयोग से होगा और जगता भी उबारता पूबक सहामता करेगी। इससे बढकर और कोई उबार कार्य नहीं हो सकता।

काशी में पोस्टमैनों की कांफ्रेंस

काशी में पोस्टमैनों की सभा हो गयी। उसमें जो प्रस्ताव स्वीकृत किये उनमें सरकार से अनुदोब किया गया है कि इस विभाग में चासीस रुपयेसे कम वेतन पानेवालों के

बेतन में किफ़ायती कटीती न की जाय और पोस्टमैनों की संख्या कम न की जाय । सरकार के बिलन भी विभाग हैं उनमें खजाना का उपचार सबसे अधिक इसी विभाग से होता है पर वहाँ पुनिस विभाग में कम बेतन पानेवालों के साथ सरकार ने उदारता का व्यवहार किया है, पास्टमैनों के साथ किसी तरह की रियायत नहीं की गयी । उनकी जगहें बराबर तोड़ी जा रही हैं जिससे बचे हुए आरामियों पर काम का भार पहले से कहीं अधिक हो गया है । काम बढ़ जाने पर भी उनका बिलन काटा जा रहा है । सरकार का कहना है कि इस विभाग में आमदनी कम हो गयी है इसलिए आरामियों का बिलन घटाकर और उनकी जगहें तोड़कर यह कमी पूरी की जायगी । लेकिन हम इस विभाग को कमजोरना विभाग नहीं समझते न यह उचित है कि उसे भी सरकारी व्यवसाय का एक धर्म समझ लिया जाय । इस विभाग को प्रवर्धित का ही धर्म समझना चाहिए, उसी तरह जैसे चिकित्सा या शिक्षा-विभाग हैं । उसमें हतनी कमी कर देना कि बिलन को कट्ट होने से कितनी तरह न्याय नहीं कहा जा सकता । समा ने डाक का दर बढ़ाने का भी अनुरोध किया । हमारा भी विचार है कि यदि वह मनीमार्डर, रजिस्ट्री आदि का दर पुनश्च कर दिया जाय तो आमदनी बढ़ सकती है । आवश्यक तो वह सिखना बड़ी खर्चीली क्रिया है और कितने ही लोगों ने तो पत्रों की संख्या बढ़ते-बढ़ते शून्य तक पहुँचा ही है । जब यह नीति सफल नहीं हो सकी तो सरकार क्यों उसमें परिवर्तन नहीं करती इसका कारण कौन जान सकता है ।

२४ अप्रैल १९३३

बी० एन० डब्ल्यू० रेलवे

हमारे पास कई संवादाशयों का पत्र आये हैं जिनसे शान्त होता है कि कुछ प्रान्त के भरपन्त उबर आम न बीड़नेवासी इस रेलवे-कम्पनी की टुनें बहुत गन्नी रहती है । गर्मी के दिनों में दिम्बों में मकली का मिन-मिनाना शोषालय का गन्ना रहना किनी डम्बे में कूड़े का ढेर लगा है तो कितनी में कर्णों के धिलकों का यह सब साधारण बातें हैं । यद्यपि इसमें हम भारतीयों का भी बहुत कुछ शोष है । हम जिस स्थान पर बैठते हैं उसी को मन्ना करने में अपनी सत्राई समझते हैं पर स्वास्थ्य के विचार से रेलवे कम्पनी को इन बातों का विचार ध्यान रखना चाहिए । इस कम्पनी के स्टेशन भी ई० आई० धार के समान साफ़ नहीं रहते । कम्पनी को काफी घाय है और उसे चाहिए कि वह अपने यहाँ एक विशेष स्वास्थ्य-विभाग लीमे । उसे सैनिटरी इन्सपेक्टर 'रख कर' माशियों की इस सिजायत को दूर कर देना चाहिए ।

१ मई १९३३

विदेशी कपड़े पर काँग्रेस की मुहर

तीन साल पहले काँग्रेस ने बजाजों के विभायती कपड़े की गाँठों पर मुहर लगायी थी। तब छा महीने की बात थी। पर वह मुहर आज तक नहीं खुली क्योंकि अभी तक स्वच्छता उठनी ही शुरू है बितना आज के तीन साल पहले था। तो फिर क्या इन गाँठों की मुहर कभी खुलेगी नहीं? गाँठें यों ही बंधी-बंधी सड़ जायेंगी! मठीवा क्या हो रहा है? बजाज बंधी हुई गाँठें मुसममान ठूकापवारों के हाथ धोने पीने बेचकर अपना नाम बना रहे हैं। यह तो नहीं बेला जाता कि मास बँधा-बँधा सड़ जाय। फिर जब कपड़े का व्यापारी बेचता है कि निष्कट अभिष्य में भी गाँठों के खुलने की धांसा नहीं तो वह झूठी हो जाता है। जब बोरी-झिपे-भाज की खपत ही रही है, तो हमारी समझ में नहीं आता गाँठें क्या नहीं खोल बी जातीं। ऐसे कितने ही काँग्रेसमैन हैं, जो इस नीति को अपनी समझते हैं और गाँठों की मुहर-बन्धी से कोई फायदा नहीं समझते लेकिन द्विविधित काम रचने के भय से कुछ नहीं कह सकते। हमें धारा है, काँग्रेस के नेता इस समस्या पर विचार करें और जिस बन्धन से अब हाथ के सिवा किसी काम की धांसा नहीं उसे उठा लेने में सच्चा-साहस से काम लेंगे।

१ मई १९३३

साबुन की देस-रेस

आजकल सेकड़ों तरह के साबुन बाजार में आ गये हैं। जगता के पास सुगन्ध के सिवा साबुन के सुख-दोष जानने का कोई सामन नहीं है। खराब साबुन से बहुत से रोग पैदा हो सकते हैं। इसलिए हमें यह जानकर हय हुआ कि सरकार साबुन की जाँच करने के लिए यीज ही कोई कयम उठानना ही है।

ऋण के लिए कैद की सजा

कानून में जहाँ और सेकड़ों धनोति मरी हुई है वहाँ एक यह भी है कि आज कोई महाजन किसी धसामी को कर्ब की इत्तत में बस भेज सकता है। कुछ स्कानटें पैदा की गयी हैं ककर पर धमी यह धारा भीमूव है। सरकार ने इस प्ररन पर विचार करने के लिए एक कमेटी कायम की थी जिसने अपनी रिपोर्ट पेश कर दी है। बेचना बाहिए इसका क्या फैसला होना है।

१ मई १९३३

फलों की खेती कैसे बढ़ायी जाय

हृय की बात है कि गौकरसाही का ध्यान फलों की खेती की ओर गया है और सखनऊ में राधा साहव अहौरीराबाय क समापतिरव में एक बोड की स्थापना हुई है जो फल पदा करनेवालों को सहाइ और सहायता देगा । उअर बम्बई से धामा का बाहर आना शुरु हुआ है । बम्बई के गबनर न खुद अहाइ पर आकर फलो का पैकिंग देखा और बड़ी विसवस्पी दिखायी । अगर हमें भय है, कही यह उद्योग भी टॉप-टॉप फिम होकर न रह जाय ।

१ मइ १९३३

विज्ञापन-कला

भारत में अपनी पत्रकार-कला का विकास ही साधारण हुआ है, ता विज्ञापन-कला क विषय म क्या कहा जाय ? हमार समाचार-पत्रों म अधिकतम विज्ञापन बड मइ इन के कुचिपूख तथा नीरस होते है । यदि विज्ञापन की चीज नहीं बिकती तो वह समाचार पत्र की खोप देता है । अपना खोप उसे क्या मानुम ? हृय है कि इन बातों की ओर हमारे देहवासियों का भी ध्यान आट्ट हो रहा है । सखनऊ में आट्टरोड पर एक उन्साही सज्जन ने 'एलेक्ट्रिक एडवर्टाइजिंग एजेंसी' नाम से एक कम्पनी खोसी है, जा कमल इमरों का विज्ञापन ही बनायेगी । इस संस्था के बनाय कुछ विज्ञापन हमन समाचारपत्रों में छपे देखे है, इसके सवालक मि सठ का एक भेख ईतिक 'बनमान म भी पद्य का । इन बातों से यह सिद्ध हाता है कि उन्हें अपनी कला का वास्तविक ज्ञान है । आशा है यह संस्था उत्पति करेगी और विज्ञापक लोग इस संस्था से मान उठावें ।

१४ मइ १९३३

बेकारी का स्वास्थ्य पर प्रभाव

योरोप और अमरिका में बेकारी की संख्या निरिचठ की जा सनो है । बजार की दुआरे के लिए राठ की ओर से कृति मिलती है त्रिगस कम स कम मोशन मिल जाता है । फिर भी वहीं इन बेकारी का स्वास्थ्य पर बुरा अमर पड़ रहा है । अमरिका म चितने ही परिवार बेबल घानू तावर दिन बाट रहे है । एक जग म मूय म दुबल बावकों की संस्था बनर साठ प्रति मीबड़ हो गयी है । एक इमरे मद्रग म सी म

गिन्याब्व छात्रों का बजान घोंसल से कम था । फलस्वरूप जय राय का जोर बढ़ रहा है । राष्ट्र-संघ न इस समस्या पर विचार प्रकट करते हुए मिखा है कि राष्ट्रों ने क्लिफायट की धुन में प्रगर बेकारों को कृति में कमी को या स्वास्थ्य-विभाग में कौट-कौट की गमी तो इसका बड़ा मर्यकर परिणाम होगा । इस बेकारी का शरीर पर ही बुरा असर नहीं पड़ रहा है । ब्रिटिश बामन और अमेरिकन आतियों में इसका मनोबैज्ञानिक असर और भी बुरा पदा है । आवश्यकताओं के पूरे न होने से जो ग्लानि उत्पन्न होती है, वह राजनितिक परिस्थिति का दूषित कर रही है और ऐसी सत्कारों बढ़ती जाती है, जिनका उद्देश्य अन्ति है । योरोप न जब यह हास है तो भारत का अनुमान कीबिए, जहाँ ची में पचास आरामी प्रबन्ध ही बेकार है और उन्हें बलि के नाम पर मुट्टी-भर बना भी ममस्तर नहीं ।

१४ मई १९३३

मीषण दुर्घटना

मौही के समीप है आई घार साइन पर मंगरवार को जो मीषण दुर्घटना हुई है उसका हास पढ़कर ऐसा कोन है जिसके रोंगटे न खड हो जायें और वह काँप न उठे । एक सारी जिसम तीसस आरामी के पचास मेस से टकरा गयी । गाड़ी का रूही की सेकन माड़ पर का फाटक जुमा हुआ था । सारीबाले न घामे-पीछे कुछ न देखा जैसे इनको भाइल है, खेबाबुंड माड़ी छाड़ देते हैं । सारी साइन पर ही भी कि मेस का गया । फिर उस टकरा के तो केबल कल्पना की जा सकती है । अट्टाण्ड आरामी तो वहीं बुरी तरह पिस गये । जो बचे हैं उनकी दशा भी मायुस है । कई जसों तो रेल न इकिन स चिमटी हुई दूर तक बसो गयी जब गाड़ी रुकी तो नीचे गिरी । सारी ता बुर-बुर हो गयी । आरमियो के छाटे-जूते आदि सी-सी गब पर जा गिरे । पूरी बाटात भी । पुमटी बामा पकड़ा गया है । उसे जो सजा चाहो दो वे अमूक्य जानें तो अब नहीं मिलन की । भारत जिस गौन में था रूही की बड़ी उसके स्वायत की तैयारियाँ होती होंगी । पुमटी बाले का अपराध तो है ही सेकन सारी का ड्राइवर जो बालें बन्द करके माड़ी बमला था और बिठ रफले वे तीसस आरामी । मायुस होता है सारी का भावा भाव साइन पार कर चुका है तब टकरा गयी है क्योंकि ड्राइवर अभी जिन्या है ।

१२ जून १९३३

पन्द्रह दिना में मक्की की फसल

जर्मनी के एक वैज्ञानिक ने एक ऐसा जमस्कारिक मात्र खोज निकाला है, जिससे मक्का और अन्य बीजों को साधारणतया तीन-चार महीनों में तैयार होती है कम से कम पन्द्रह दिनों में तैयार की जा सकतो है और अनाज खारा मोटा व्याप्त पापक व्याप्त स्थापित होता है। सुना जाता है कि उसने बहुत से वैज्ञानिकों के सामने अपना आविष्कार सिद्ध भी कर दिया है। यह नहीं माधुम हुआ है कि कब न पहले से कितनी कृषि होयी। इस आविष्कार का सारा मकसद उसके सस्तेपन में है। अगर इस कृषि पर यह पूरा उत्तर जाय तब तो मजार में भोजन की समस्या ही न रहेगी। गरीब भारत भी लोगों को बूत बटकर भोजन करेगा। भयवान करे यह वैज्ञानिक बस्त्र में जन्म अपने प्रयोग का प्रचार करे।

२८ जून १९३३

अंग्रेजी समाचारपत्रों का प्रचार

इंग्लैण्ड के दैनिकों में डेली मेल का प्रचार सबसे अधिक है अर्थात् सारे सभ्य समाज और टाइम्स का सबसे कम अर्थात् सबा समाज। मासिक म 'न्यूज पाठ भी बरफ का प्रचार मात्रे सितोस समाज है और सडे रफरी का सबसे कम अर्थात् एक समाज।

८ जून १९३३

खारेस्ट की विजय

खारेस्ट एबरेस्ट का विजय करनेवालों को मुँह की लानी पनी और वह धाम भी अनेक पड़ा है। हवाई जहाजों पर उनके शिखर पर बरफ समाता तो गोमी से कुरती लड़ना है। सारी बुनियाद हम मंडली की धार धारि समाये हुए थी जो उन पर बर रहे थे। उसे नीचा बैठना पड़ा। कुछ तो धर्या पहल्यं शुरू हो गयी कुछ धारमिया के बीमार हो जाने के कारण हम बीरों को नीचे धाना पड़ा। मन्भव है धमन बप यर मोय फिर धारों। योरोपियन जातियों की धरी धमन्य माहमिषता है जिसने उन्हें संसार का म्भायी बना दिया है।

३ जुलाई १९३३

बात का बतगढ़

पिछमें दिना एसा हुआ कि हाईस्कूल सर्टिफिकेट के मतीज 'सीडर' से पहल 'पायोनियर' म छप गये । 'पायोनियर' वालों ने चाहे जो बाल बली हो सीडर स वाली मार ले गय । बही मतीजा सीडर में एक दिन पीछे निजसा । हा सकता है इयम पछ पाठ हुआ हा । हम मान लेते है कि कुछ पछपाठ हुआ मकिन इस बर-सी बात का इतना दुमार बीचना धीर कार्जन्तिस के लपने-वैश का ल्बन के तु-तु म-म म मट्ट करना कौन-सी राष्ट्र की सेवा है यह हमारी समझ म नही आया । वंसतो क सग बाड़ी बहुत रिघायत कौन नही करता । यह एक मानवीय दुबलता है जिसस वडे से बडा धान्नी भी लागी नही । वह धाठा करना कि सिद्धा-विमाम क सारे धान्नी बेबता है अपने खलन विमाम का परिचय देना है । एक बात हो यमी जलने किस्ता खलन हुआ । धब बार-बार उसी रीङ क बरखे को जलाय वाला धीर जही धपन मलमब की बात का जाय इसके लिए जमीन-धायमान के कुलसे मिजाना धीर कार्जन्तिस म हम स्वाय के लिए चिन्त-यो मजाना एक ठेके दरज क जिम्मदार धान्नी को लाना नही देता । इस तरह का बाल-बिबाद तो नीक दरजे के धान्मियों से हुआ करता है । कार्जन्तिस के लिए इस समय भी इस ल्बन के प्रनोत्तन से ज्यादा महत्ब के काम वडे हुए है । यही बात है जिन्होंने कार्जन्तिसों को डिबेटिस ल्बन बना रखा है ।

१० जुलाई १९३३

रिखत की गर्मबाजारी

सुधार हुए कौन्तिस वने बोडे बहुत प्रपिचार भी मिस ठेके पदा पर भारत वालों की संख्या भी बडी बेतन भी बड पर भारत की कचहरियो धरालता से रिखत ज्यों की लों बाटी है बकि धीर भी बड यमी है । कोई किताना ही सच्चा धीर बेदुमाह क्यों न हो धरालत में रिखत गिये बपर उमकी कोई मुजबायी नही हा सकती । वह बात नही है, कि हुकूम इस रहस्य को न जानले हों । उनसे से किउन ही तो स्वय नीचे पनों से उदलि करते-करते उन पत्र एक पहुँचे है लेकिन या ही से कुछ कर नही सकते वा मुसाहड धीर मरीघत के कारण कुछ बड नही सखते धीर वा उनके महलबनर इस मूट म किसी न किसी कर म उनका हिस्सा भी रख बते है । इसी कारण बहुत से धने सोम मुकसान उठाकर धीर धग्याय सहकर भी धरालत नही पात । लोचते है किताना धपमान धीर मुकसान हुआ उससे कही प्रपिन कचहरी से सहना पड़वा इसनिए क्यों न चुन होकर बैठ रजो । धिया धीर म्युनिगिपम बोडों में ता बडे लर धीर मजरा

से कहना पड़ता है यथा धीर भी लड़ाया हा गया है । जब विना का हाकिम नैवरसेम होता था तब तो बहलकारों को शायद कुछ भय होता रहा हा था जब मन्त्रों के राज म तो कोई उनका बाध भी बाँका नहीं कर सकता । दिन ग्हाडे मूत्र शोणो है सुते घबाने होती है, पर कोई पुछनेबाधा नहीं । गगेब मुक्तमेवाले बहाँ घपनी विपत्ति बंधन जाते है सुभार करने नहीं जाते कि रिशबत भाँगनबागों से मझाई कर । उनकी कृतिया बहलकारों के पाँव के बीच बनी रहती है धीर विना धममा की पुत्रा विष्य नही निकल सकती । जिसे दो बार बार कचहरी जाने की जरूरत पडी कम मधम सो कि उनका नैतिक पतन हो गया । धीर ब धममे बलमग बध्दी पडे-सिच्चे भोग होने है निचमे ही सो वेमुपट होते है पर कपया की भंकार के सामन मारी जिघा धीर भग्ना परी रह जाती है धीर सोत निरयता से धपन गगेब भाडया का मून कसम क विग नैवार हो जाते है ।

३१ जुलाई १९३३

हमारी सचेली आदतें

विज्ञान-भारत क प्रपत्त के संक म बाक्य पी सी गय ने प्राज्ञकम के धारों की धर्मी धारतों पर एक विचार पूछ मेग सिक्का है धीर बतसाया है कि इन तरह की शौकीनी उनके भविष्य को कितना बिम्बायम बना रहो है । प्राज्ञकम विनी विद्यालय में भी एक छात्र का भासिक ज्यम वैतामीम रुपये से कम नहीं है । भाहोर् धीर बम्बई में तो सी रुपये के मयमम पड़ जाता है । कई साल पहले जब प्तिरमिटी से निकलते ही धम्मी जगह विम जाने की धारा होती थी धारा की व हन-पग्गी विनी हूब तक बम्ब पी मैकिन धर अब कि प्रथम खेड़ी के धारा व विग पा धर दै रहने के सिवा निरुट भविष्य म धीर कोई धारा नहीं है । धारा की उपमना किनी हापत में भी उम्य नहीं है । यह माय है कि जिनके पाम माधन है वसे धधिबार है कि जिनका बाई लच करे धीर जिन तरह बाड़े रहे ककिन धपन उमम कुछ गगनमूति हा धीर यह दैने कि बहु धपनी विज्ञान-भक्ति से माधनरीन धारा म विनी विद्या विनता धधरोप धीर कितनी ईर्ष्या धीर बमन धेदा कर रहा है ता शावर बह हपने म तीव्र दिन मिलेमा हेपने पर ज्वाश धाधह म करे । धीर क्या उम मग्गध धाध करो जो रुपये मिलते है बहु उमके माता-पिता के पात भी उगनी भी धामानी मे बने धाये x विनी धामानी मे बह लच करता है । ऐसे भाग्यवामा की मग्ग कल्प ही घोड़ी है जिनके धधिबारों को उगना धर्मीभारत बुग म मयता हो । धधिबार मग्ग म एमा ही की है विनी मग्गता धपना स्वात्म्य गाहर धागे काडकर स्वायमय जीवन विताकर

मिसती है। हमारा मनबन्धा यूनिवर्सिटी स्ट्रैट जब एक खपये की सीट पर सिनेमा हॉल में जा बैठता है, या घोबस्टीन का एक डब्बा और टूपपेस्ट की एक सीरीस खरीद कर घर आता है और बाजार की सीट में खपये कीग धाने केबल रेलों में बैठकर चाट जाने में उड़ा देता है, तो उसे कभी खयाल आता है कि इन बो-लीग खपयों के लिए उसके घर बासों को अपनी कितनी अकरतों इबानी पड़ी होगी। अगर ऐसा खयाल नहीं आता तो इसके सिवा क्या कहा जाय कि वह धात्मसंबो और स्वार्थी है।

सेक्रेट धात्मसंबा भाड़े कितना धान क घरवालों को न घरारे और न अपने जाइसे बेटे के लिए हरक तरह का कष्ट कुर्सी से उठाने के लिए तैयार हों और एसा कौन बाप है, जो अपनी सतान के लिए शक्ति से अधिक खयाल करने में धामन्ध न पाता है। पर यह धात्म खार्जों के लिए स्वयं उसस कहीं बिनाहाक है। उसके सामाजिक पहलू को भा धाकियं हालांकि फूट की ओपड़ी के पास पुलभ्यियां छोड़ना बड़ा मयकर बिनो है और बोडे से भाय्यबागा की शौकीनी बहुत से भाय्यहीनों के लिए बाउक हो सकती है। पर इस जाने बीबिए यह सोचिए कि इन धाधतों का स्वयं अपने भविष्य पर क्या असर पड़ेगा? मां बाप तो हमशा सँभालने के लिए बठे न रहेंगे। गतीबा यही होगा कि या तो धाप घर की बची-बचायी सम्पत्ति का सफाया करेंग या सौदिग्ध साधनों से काम लेंगे। कड़ी लौकर हो मये तो रिशबतें शुक होंगी या गबन की नीबठ पढ़ेंगे। ध्यापार किया तो बोड़ दिनों में धुंजी ही मफा बन बाययी और अघर बेकार खूना पड़ा तो धात्म हुरपा के सिवा और कोई धबबन्ध ही नहीं रहे बायया। जीवन का स्टैड्ड ऊँचा रखने का धन यह नहीं है कि अपने सामर्थ्य से बाहर खच किया जाय। फिर, स्टैड्ड ऊँचा रखने का धन है कि बोडे से धाधभियों पर धाधिपत्य हो और वे उन्हें सुटकर अपना घर मरते हों। फौस इन्डीड अमेरिका का एशिया और अफ्रीका दो महा-दीप ऐसे मिस मय जिसस दो सधियों तक उगहोने बोवन का स्टैड्ड खूब ऊँचा किया पर मन्वी क पहला ही हमले में धमी के हाक ठिकाने धा गये और जिस दिन वे बोनों महादीप सचेत हो जायेंगे इन महान् राष्ट्यों के बसब का अन्त हो बायया। तब बड़ी खेती और बड़ी छोटे-छोटे करसाने रहे बाय्येन जा अपनी अकरत की बीबें बनायेंगे। संसार का ध्यापार हाक स निकल जायगा। धमी स यह समस्ता धनके सामने लड़ी हो मबी है, और शस्त्र-सम्मेलन और धध-सम्मेलन धाधि उसी समस्ता के मतोने है। हमारा तो खयाल है कि अपनी अकरतों का हम जिसता ही बढ़ाते हैं, उतना ही प्रकृत जीवन से दूर होते हैं और उतना ही ममय की प्रगति के प्रतिफल जाते हैं। संसार बड़ी तेजी से समष्टिबा की धार जा रहा है जिसमें ऊँच-नीच शिथिल और अशिथिल का भेद न रहेगा। धात्र शिथिल और सस्कृत समाज न अपने को जिस किम में बन्द कर रखा है, उसको बीबारें टूट जायेंगी धीन भाड़े कान्ति से हा या शान्ति से मानव समता का धाना धाधर रहेगा। उस अन्त बड़ी जानियां बरी समान और अन्तित ओचित रहने

जो उन नयी परिस्थितियों का स्वागत करेंगे। विशेष मुविद्याया विशेष साधना में पस हुए प्राणी उस संग्राम में मित जायेंगे। हमारे छात्रा और विद्यालयों के सामने यह प्रश्न लड़ा बुर कर देखा रहा है। पर वे धीरे-धीरे करने उनके अस्तित्व का भूषण जाने की प्रयत्न कर रहे हैं। फीमें बढ़ती जाती है छात्राचार्यों के लक्ष बढ़ते जाते हैं और व्यक्तियों की धारणाएँ घटती जाती हैं। यह प्रवृत्ति किताब दिनों थल सकेगा। धारक नहीं तो कम मुनिव्यक्तियों के सामने यह मसला आयेगा और भूमि सब शिक्षा का अधिक महत्त्व बहुत कम हो गया है। केवल उसका सांस्कृतिक मूल्य ही बाकी रह गया है। इसीलिए प्रवृत्ति ही ऐसे विद्यालय उत्पन्न हो जायेंगे जो समय के अधिक अनुभूत होंगे और तब वर्तमान विद्यालयों को भी विवश होकर समय के सामने घुटने टेकना पड़गा। दूरदर्शिता कह रही है कि मनी से बत जान में कुशल है।

अगस्त १९३३

भीषण नाव दुघटना

काशी में गत सप्ताह में आ भीषण नाव दुघटना हुई और जिनमें बाईस आरमों असमन हो गये उस पर पब्लिक का धीरे हमारे व्यवस्थापकों को इस दृष्टि में विचार करने की आवश्यक है कि ऐसी दुघटनाएँ किन कारणों से होती हैं और उनको रोक कैसे की जा सकती है। बहाली लोग अल्प से अल्प शहर की मड़िया में पहुँचकर अपना लोहा बचने की चुन में इस बात का विचार नहीं करते कि मत्स्य पर बायो आरमिया की मुनास्ता है या नहीं। मत्स्य भी पसे के लोभ से उन्हें रोचक की चेष्टा नहीं कर सकता। नतीजा यही होता है कि एनी कारणों आस प्ति होती रहती है। सरकार द्वारा यदि हरेक नाव पर बैठने वाले आरमियों की संख्या नियत कर दी जाय तो शायद मत्स्य उसमें व्यापार सवारियों को न बटाने और सवारियों भी समझ जायें की इससे व्यापार सवारियों के जीवन से उत्तरा है। यदि हरेक नाव पर तुम्बियों का प्रबन्ध किया जा सके जिसका सामित्य नाव के ठहराने पर रकना आस ता शायद अनता का कस्यास हो सक। हमें धारणा है कि जिन के अधिकांश बग इन विषय पर विचार करके कोई एनी व्यवस्था करेंगे जिनमें इतनी जानों की हानि न हो। बनारस पर शायद बाईस घड़ घापा हुआ है। अभी सारोबायो कारण का शोध भूमन में पायी जो कि यह दुर्घटना घोट लगी।

१३ अगस्त १९३३

नया रेलवे बोर्ड

सरकार ने भारत के लिए जो नया रेलवे बोर्ड निर्माण किया है, उसके लिए हम भारतीयवासियों को सरकार को कोटि-कोटि धन्यवाद देना चाहिए। यही बोर्ड मिर से टमा। नहीं माछों मीस की रेलें माछों याङ्गिर्माँ माछों कर्मचारी करोड़ों का हिसाब करता है यह सब संभल कौन पामता। यह नया रेलवे बोर्ड जैसे चाहता अपना काम करेगा। यही किममें हतनी धक्का ही है कि रेल याङ्गियों का प्रबन्ध कर दे यह काम तो धंभल ही कर सकता है पुरा धक्का न हो घायल सही तिहाई सही पर कुछ न कुछ धंभली जून उसल धक्का होना चाहिए। धीर जहाँ धंभलों का मुआमला है वहाँ किसी तरह का बनाव किसी तरह की निगरानी किसी तरह की कैद उनका अपमान है। उनसे कोई उमती हो ही नहीं सकती। इस रेलवे बोर्ड के निर्माण में मेजिस्ट्रेटिय एमेम्बला को किसी तरह का बनाव न रहेगा। बोर्ड को अधिकार होगा कि जिसे चाहे रखे जिसे चाहे निकाले जितना किराया चाहे बढावे मुसाफिरों को चाहे जितना कच्चा हो एमेम्बला को बोलने का डक न होया। बाड जिम्मेदार घादीमियों का होगा। वे धंभलो नीति के पकने नमर्षक होंगे। धीर यह कौन नहीं जानता कि धंभली नीति संसार में सबसे भयानक है।

१२ अगस्त १९३३

मध्य प्रान्त में आबकारी से आमदनी

कमी बरिद्धता से भी कुछ उपकार हो जाता है—धीर इस उपकार का सबसे ताजा सबूत मध्य प्रान्त के आबकारी विभाग की नयी रिपोर्ट देखने से मिल जाता है। १९२५ में इस मुहूर्तमें से सरकार की जितनी आमदनी हुई थी उसने एक करोड़ रुपये कम यानी पाँच हजार माल की उतामिस लाड रुपये की आमदनी इस साल हुई—यह भी उस बरा में जब सरकार ने एक नये दोष में भी ठरें की जिद्धि की इजाजत दे दी थी। अबश्य इसका कारण बरिद्धता है, पर यह सन्ताप की बात होगी यदि जिन रिखाँ न इस व्यसन को घाँ विधा है वे इसे फिर से न अपनाव।

आबकारी के मामले में इस साल सबसे अधिक मुकदम चलाये गये—यानी घाँ हजार घाँ भी सिपानवे। घाँसा है मध्य प्रान्त की सरकार इमी बरिद्धता से काम करी।

२० अगस्त १९३३

काशी में विजली

युक्त प्रांतीय कौन्सिल के सप्रेम तथा म्युनिसिपल हायम म एच रत्नबामे राजनीतिकों का विश्वास है कि न जाने क्या हमारे प्रांत की सरकार के लिए माटिन कम्पनी को माफ़ी है। यह विशेष प्रम या कृपा दिपाये गयी छिपती। प्रबट ही हो जाती है। काशी को भी इसका बोझ बहुत धनुमव है। हम उस गिमा का स्मरण है अब स्वराज्य बोझ काशी म बिजली की रोशनी जालु करना चाहता था। काशी विरध विधायक का प्रस्ताव था कि सरकार को बिजली सप्लाई करन का काम उम विवा प्राप्त। माटिन कम्पनी यह अधिकार अपने लिये चाहती थी पर स्वराज्य बोझ का यह विचार था कि काशी विरधविधायक काशी के लिए एक पीरव की कम्पनी है। यदि काशी से उतकी सहारता हो सके वा यतीव उत्तम हा। साथ ही बोझ का यह भी धनुमान था कि यदि काशी म बिजली की रोशनी देने का काम काशी विरधविधायक के हाथ म हाया तो बोर्ड भी अपने लिये अधिक से अधिक मुविधा प्राप्त कर सकयी तथा नगर को भी मस्ये में बिजली का प्रशास निव जामेया। मस्ये-मस्ये का विचार केबल धमीरा की दृष्टि मे ही बरी सकके हित म होता है। काशी म बिजली लग जान म केबल धमीर ही गयी यतीव भी काफी फायदा उठा रहे है।

यस्तु स्वराज्य बोझ की अप्या बकार गयी। बोझ की समेध्या म सरकार ने लसे बाबाओं की पत्र लगा की कि मजबूरन माटिन कम्पनी को ठीका देना पडा। उमी टिके क परिखाम-स्वरूप काशी में 'इलेक्ट्रिक सप्लाई कम्पनी की स्थापना हुई है जिनमे मब पूषिय ठो मूट मचा रभी है। इस नगर मे यह कम्पनी कितना कमा रही है यह नीचे की तालिका से ज्ञात हो जायगा—

घण्ट बप की समाप्ति पर	कितने स्थान पर बिजली लगी	यूनिट बिधा	धामनी
११ डिसेम्बर, १९११	१५४४	११ ६० ११५	० १६ ७६४ ४
३ जून १९१२	१८१५	२० ७३ १७१	० २७ १११ ६
३१ डिसेम्बर १९१२	० ६५	२२ १२ ८०२	२ ४६ २ ६०

इसम मे धरुवालीस इन्डार जार भी मलाबन रजय पीनेडीन धान 'डिप्रिमिनेशन फ्लड में निर्माण क समय को पूर्वी लगाबी बयी थी उमका मू प्राथमिक रूप कोर बलानी मरु तीम इन्डार रजये ध्यप किया। धाम तथा पम्हू इन्डार एक ही पकाम रजय माफ तान धाल जमा। अरु पर मुड पीर जमा मरु मजहू इन्डार था भी ध्यारक रजये मया दो पाव बिजली देन करन मे इकावन इन्डार हो गी तैसि रजय साध तरह धाना मरम्मत बनेट मे उधोम इन्डार पाव भी धरुमठ रजय भी धाने किरामे में तीम इन्डार दो दो साध रजये मरा बाखू धाले मुन रजय हुआ। यह हिमाक ३१ डिसेम्बर, १९११ तक था है। इसके धमाया इन घण्ट बापिक के लिए चौतीम इन्डार तक भी तैतोत रजये

साझे नौ धाने बेसैस हूँ अतिरिक्त फीस महत्तर रुपया तथा पिछले बच का बेसैस
 साठ हजार ए। सी टोगरुपये सबा बच धाने मात्र हूँ। यानी कुल मिलाकर दो लाख
 छियासिह हजार चौहत्तर रुपये साझे चौदह धाना !!! पाठक इस हिमाज की समीक्षा
 करें ता उन्हें पता चलेंगा कि मार्टिन कम्पनी कारी से कितनी जबरदस्त धामकी
 कर रही है। और इस धामदानी का कारण क्या है। 'पामोनियर में पचीस नवम्बर
 १९३२ को प्रकाशित एक लेख के अनुसार इस कम्पनी का बिजली पैदा करने में छी
 यूनिट चार पाई मात्र का व्यय होता है पर म्युनिसिपल संस्थाओं को साझे नौ पाई
 प्रति यूनिट दी जाती है। निजी उपभोगियों को घाट धाना प्रति यूनिट के हिस्सा
 से दिया जाता है यानी म्युनिसिपल संस्थाओं से प्रति यूनिट साझे पाँच पाई तथा निजी
 तौर पर सेनबालों से साठ धाना घाट पाई मुनाफे में प्राप्त होता है। क्यती ऐसे नगर
 से इतनी रकम बसुल बच तक को जा सकती है, यह कहना कठिन है। यह बिजली के
 प्रेमियों की ही दुर्बलता है कि एक कम्पनी नगर भर को इस तरह कंगाल बना रही है।

हमारा यह कबन अतिशयोक्ति नहीं है। विस्मी म चार धाना प्रति यूनिट (चारह
 प्रतिशत की छूट के साथ भी) देना पड़ता है। कलकत्ता में डार्ई धाना दर है। सप्लान्ड
 म पाँच पाई इलाहाबाद में दो पाई धामर में साझे पाँच पाई बरेली में नौ पाई, कानपुर
 म पौने दो पाई मसूरी म एक पाई जमीनाम म कम्पन धाधा पाई बिजली का उत्पादन
 व्यय है। कारी का चार पाई है। इस हिस्सा से देखने पर भी कारी का सर्वा कहीं
 अधिक बडा हुमा मामूम होता है।

यह पदो दर की बात। कारी इस विषय म किसी भी जनी विदेशी देस से धाने
 है। इण्डियन जामनी प्रांस रिबटकरलेड इटली अमेरिका और जपान म नौ पाई की दर
 से ही बिजली प्राप्त हो जाती है।

हम ही नहीं कहते कि हमारे नगर म बिजली का रेट बहुत अधिक है। कानपुर
 को बिजली देनेवाले मेसज बंग सघरलेड एरर कम्पनी ने मुक्त प्राप्त क बायिन्वमबडन
 के एक प्रमुख सवस्य का एक पत्र म लिखा है, कि कारी का 'रेट' अत्यधिक है। इसी
 प्रश्न पर विचार करन के लिए विगत सन्धार को कारी के प्रमुख बिजली उपभोगियों
 की एक सभा हुई थी। सम्भवत यह निश्चय किया जा रहा है कि यदि कम्पनी सीधे
 से न माने तो पहली नवम्बर से बिजली लेना ही बन्द कर दिया जाय। इस प्रकार
 उत्पादक यदि सामूहिक रूप से हो सके तो मार्टिन कम्पनी को नीचा दिखाना सरल है
 पर इससे कानूनी अड़चने भी होगी। कुछ मोम साल भर का कलिकट कर चुके है।
 कुछ अवश्य ही सरकारी विद्गु होने। कुछ उपभोग सरकारी अर्थात्ता में होता होया
 और सबसे बड़ी बात यह है कि अब म्युनिसिपलिटि सरकार की है। उसका एकीकृतिक
 अरर एक 'सहमीसधार' है। प्रधान सघर अतिरिक्त मैजिस्ट्रेट है। अतएव हमसे कैंसे
 धारा की जाय कि जमता के मोकप्रिय बनने की चेष्टा करेंगे। हमसे कैंसे धारा की
 या सकती है कि हमारे मात्र कम्पे म कथा मिलाकर अपने देस को एक कम्पनी की मुट
 से बना लेंगे।

किर मा हमें नापरिलों को प्रयत्न करना चाहिए । हम विषय में धारोमन करने के लिए एक समिति कायम हो गयी है । इसके अध्यक्ष हैं श्री सरनसकर भायु एम्बोरेट । उपमन्त्री हैं बनारस इंस्टीट्यूट के श्री सिंहसाह बी ए । बिजली हम सम्पत्ता का एक आवश्यक अंग है और इसका उपयोग होगा अवरयम्भावी है । बिजला के पक्ष में हमों में बड़ी सहायता मिलती है । बनारस कम्पनी को काशी से अधिक से अधिक कार खाना प्रति सूक्ति सेना चाहिए । इसमें प्रकाश तथा पंखे के लिए पञ्जीय प्रतिशत मुन्दा का देना चाहिए । मोटर तथा 'गर्म करने के लिए एक खाना प्रति यन्त्र बना काफी होगा ।

पार्टिन कम्पनी को किटना नाम है वह प्रत्यक्ष है । अवरय हमके बचन अंधज मामिकों को ऊंचे पर्वों पर प्राय सभी अंधज या बिजली अच्यमन को मोगी मनदवाहें मिलती है तथा भारतीयों का उत्तना ही आम होता है बिलना बिलायती कपडा बचन पर भारत के सोट हुकामदारों को होता होगा । बारी में कम्पनी व प्रबन्ध में हमारा कोई हाथ नहीं है । इसादृश्वार में बिजली कम्पनी में अनुनिमित्त बोर्ड के ने मन्म्य मामिक किसे बलै है पर यहाँ बातें जो हो हम कुछ पता भी नहीं चलता । ऐसी दशा में हमको इस बात का सोमहों खाना हक है कि या तो अरन नगर के लिए रं म्बय नय क्क मा कम्पनी से जाता छोड़ दें ।

४ मितम्बर १९३३

तम्बाकू पीने पर सजा

प्रभाव के जिना मेजिस्ट्रेट ने एक कटमान बिकाला है कि कनस्टन में जो बान्धो तम्बाकू पीना बाधा प्रायका उनको नडा दी जायगी । शाब कादर बगानु गुन विपार या विपरेट से सीक नहीं करती । हम तमानु के प्रमी नहीं है और बाजवन इस बुटी धारण से जितनी हानियाँ पैदा हो रही है उनसे भी बलवर नहीं भंविन हम जुम को हम खरा देने के साथक नहीं समझने । जब एर धारवी जेब के धारै धान तुब करके ईसी की एक बिबिया धरीला है तो क्या उनको काफी नडा नहीं मिल जागी ? मगर यह हुकम मौजूदा बिभाषीय के बाव भी रह सकेगा इनम मन्देह है । बहुत मजबू है कि उनके उत्तपबिकारी साहब सिधारों के ऐसे बिद्रोहा न हू । पर १९३१ पूर्ण उधाने की तहजीब ही हमने साहब महापुरां से ही भीतो है और धाम हुदारे बिलन हा कैनुनेबल पोसत पाँचम को के एक ही मिन रोगा की उत्पत्त है । यह तो कोरें इमान नहीं कि धारा मेंह सम धाम पर अरगता पीना जुम कर्ग दिया जाय । हम धारा है तमानु के प्रमी इन्शुरास मेकर मि बिहाप की मश म जाँगे और उनमें करुण—

छटती नहीं है मुँह से वह जारिर लगी है ।

६८ मितम्बर १९३३

कल्पना की उड़ान

समाचार-पत्रों को इससे ज्यादा मजा धीर किमी बात में नहीं पाता कि उन्हें कोई सजगनी देवा करनेवाले प्रसंग को मोटे-मोटे पत्रों में छापने का प्रयत्न मिले। इन दिनों प. जवाहरलाल जी और महात्मा जी म जो बातचीत हुई धीर उन दोनों महानुमाओं म अपने-अपने जो बयान प्रकाशित किये उसमें हमारे किये सहायिका को दोनों नेताओं में मतभेद का भूत नजर आया। फिर क्या था कल्पना ने अपना काम शुरू कर दिया। किसी सजगन ने सिखा इन दोनों नेताओं म बहुत पुराना मतभेद है, पर जवाहरलाल जी महात्मा जी का प्रवचन से विरोध नहीं करना चाहते थे। यह वह अपना अलग धम बनायेंगे जो बिजकुल धार्मिक प्रस्ताव पर निर्धारित होया। किसी ने इससे भी भाग बचकर प. जवाहरलाल जी को उपदेश दे डाला। धीर शायद वे अपने दिल में कुरा हो रहे हाने कि दोनों महानुमाओं में जरा कम काम तो समाचारों में बरा लेवी पैदा हो जाय। धीर प. जवाहरलाल जी बार-बार कहते हैं कि महात्मा जी स उनका कोई मतभेद नहीं है धीर वह अपने को महात्मा जी का एक सैनिक मान समझते हैं। अज्ञा है पंडित जी के पिछले बयान स इन प्रकार की कल्पनाओं का अन्त हो जायगा।

२५ सितम्बर १९३३

काशी में कमिश्नरों की जोड़ी

सह्यायी 'आज' को यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि काशी में एक छोड़ दो-दो कमिश्नर कैसे और क्यों आ गये? आपको यह पूछने का क्या हक है? आप तीन में है कि तरह म। सरकार मज शक्तिमान है वह चाहे तो इसी काशी में एक दरजन कमिश्नर रखकर बिजना से। धान बोही देखकर ही चकरा गये। फिर आप ने देखा नहीं एक आसिस कमिश्नर है दूसरा 'एडिसनल कमिश्नर'। एडिसनल को आप कुछ समझते ही नहीं। धान कमिस्ट कमिश्नर और डिप्टी कमिश्नर और भक्ति-मोक्ष के कमिश्नरों को हलकर ही एक 'एडिसनल' में चबरा गय। 'कट' कसकों धीर अपरासियों के लिए है।

१६ अक्टूबर १९३३

गाजीपुर का दगल

पूरब के लोग अपने का पश्चिमवालों से कुछ भाषा समझते हैं। जो बंगाली दो चार भाष समुक्त प्राप्त म रह लेता है वह कम से कम पशुवस में अपने को 'बेल

बासों से थोड़ा समझल जगता है। कहीं पंजाब में रूढ़न का संस्कार मिले या तो बरमा ही क्या। उसकी भाषा कम जाती है। पश्चिमवानों पुरखवालों को भाउयोग दोग न जान किन-किन उपाधियों से विभूषित किया करते हैं। शायद कुछ विग्न-गिया में पढ़नेवालों की ज्ञानी पश्चिम विज्ञान में ही की जा सकती है, बाहे रस-वाच मांग का ही धन्य बसो न हो। पंजाब में पढ़नेवालों का इन प्रान्त के पढ़नेवालों पर कुछ ऐसा गैर छा गया है कि सहसा कोई पत्रिकाओं में सज्जन का साहस नहीं करता। लखन गाड़ीपुर में धर्मो हान में जो दंगल हुआ है उसमें अधिकतर कृत्रिमता पुरखवाला न मारी दोग पाटीर धर्मोत्तर धारि स्वार्थों के पढ़नेवाला को भीतर देखना पड़ा। शक्ति विभी की मीरान नहीं। जहाँ साधना हावी नहीं कल्पित होयो। राटो दास दोग भाउ-दास का कोई मकल नहीं। बापान के सोय भाउ जाने हैं लेकिन संसार के विभी ज्ञानि व बीरान में कम नहीं है। हमारे पुरख भी दास-भाउ गल हैं। उस तरह में धीर हाथा ही क्या है पर तब धीर साहस में किमी जान या पठन में पीछे नहीं होने। तब ही दो-बाग उगमा में पत्र के सोय बायो मार में जायें तो पश्चिम की पाठ दूट जाय।

३० अक्टूबर १९३३

दस साल की कैद

मच्छर घन मौकों को पचपन माने में निकल जाती है मगर हाँकाट के कम भाठ तल तक घनामल की कुरसी को मुशामित कर मकने है। मर मर बसो ? क्या मामली हपुटी मजिस्टेट या कपक पचपन ही में होश-हवास को बँटा है और जब ताम टिही पुण्य घासीबाँर में साठ गाण तक होश-हवास कायम रखते हैं या हाँकोट के जनों के लिए होश-हवास की जहरत नहीं समझी जाती घाँग व केचन कुरमा भाउत के लिए रस जाते हैं ? मर प्रयाग विश्वविद्यालय में जो यह उम्माव किया है कि साठ साल से ऊपर कोई छात्रो भाउम कामलर न रहे। मगर साठ साल तक छात्रो हाँद कोट का कम रहे नचता है तो निस्संदिह पछतर सात की उम्र मर काम कामवरी कर सचता है।

२७ नवम्बर १९३३

प्रयाग में मादकता की वृद्धि

प्रयाग की जिना-मशा-जर्मनी में जिन में उन्नीस साल बसुपा का दूधारे बाण मर ही है। मगर मगर-मरा-जर्मनी से मरा-विभाग का यह मुशामल न देना क्या।

उसने शहर में तुरंत चार दूकानें खोल दीं। बेहाल को उन्नीस दूकानों में जो कुछ कमी हुई उसकी पूर्ति शहर की चार दूकानों से हो जायगी। अगर इस तरह यह कमी न पूरी हो तो कमेटी का चाहिए कि उसके लिए नये-नये आयोजन करे। जैसे सिगरेटबालों डिब्बियों में टिकट रख देते हैं उसी तरह अफीम और चरस की दुकानों में या शराब की बोतलों में टिकट रख दिये जायें। इनमें के नालख से हजारों टीटोटमर कंटी ठोड़ कर कमबलिये में न पहुँच जायें तो हमारा जिम्मा। दूसरी तरफ़ यह है कि हरेक कमबलिये में न नशीबाओं का रेकार्ड रचना जाय। जो सबसे बड़ा विषयक है उसे किसी तरह का सरकारी खिताब या सम्मान का कोई बुराद बिन्दु प्रदान कर दिया जाय। फिर देखिए इस विभाग से कितनी घामशनी बढ़ती है।

४ दिसम्बर १९३३

आतिशबाजियों का घातक परिणाम

शबरात गुजरे पाँच दिन हो गये पर अभी तक पटाबले छूट रहे हैं और कमी-कमी हवाइयाँ और घघुबने भी मजबूर आ जाती हैं। होमी में भी हफ्तों तक लोवों पर आतिशबाजियों का नशा सवार रहता है। हर साल कई लाख रुपये बालू में उड़ जाते हैं। खामे तक ही बात रहती तो मनीमत भी कितनी हो की जान भी जाती है। मुनी समाचार-पत्रों में कई जिनो से आतिशबाजी के घातक परिणाम की खबरें आती हैं। और कई दिनों इस तरह की खबर आती रहेंगी। अगर समाज के नेताओं ने इस बुधित प्रथा को रोकने का प्रयत्न नहीं किया। कई साल हुए हिस्नी में मुसलिम नेताओं ने आतिशबाजियों के बिल्कुल बड़ा धान्दोलन किया था उसका नतीजा यह हुआ कि दो तीन साल तक हममें कुछ कमी हुई लेकिन अब फिर वही हाल है। बुधियाने में तो एक पूरा परिवार ही सतम हो गया।

११ दिसम्बर १९३३

बेकारी के करिश्मे

सब है कि इलाहाबाद में अबकी मा'न वस्तुओं की दुकानों के ठोके के उम्मेदवारों में कई प्रनुएट और कई एम ए पास लोग भी हैं। इन्हीं दुकानों पर जोड़े दिन पहले कविसे न रिक्टिंग की थी और कितने ही युवक उस जुम में जेल भेज गये थे। उन दुकानों की बोली बोलनेवाले न मिलते थे। और घाम शिचिद युवक उन दुकानों के ठोके के लिए कमबलिये कर रहे हैं। इसमें खेद या धारण्य की क्या बात है। शिचिद

युवक आचकारों के अकर्म नहीं हैं जिनका कर्तव्य ही यह है कि नरो की बिड़ी बढ़ायें । सिद्धि युवक राष्ट्रीय आरोग्य को कुचलने में क्या सरकार के साथ न ये ? अगर सिद्धि वय में बिदेक आय उठे तो संसार स्वयं हा आय । क्या तो यह हाव है कि सिद्धि समाज राष्ट्र को Exploit करने में मस्त है । दूसरा बात यह है कि राष्ट्र में Exploit किये जाने की सामर्थ्य ही न रहे ।

२५ दिसम्बर १९३३

सामाजिक नियंत्रण की जरूरत है या नहीं

इस दो-तीन महीने से सहायगी 'मीडर में एक बंगमगौरवक विचार चल रहा है । ज्ञान्य अकर्म के महीने में समाचार छात्र या कि इसीर राज ने एक ऐसा कानन जारी किया है कि बरातों और उत्सवों में पचाप छ ग्याश मोहमानों को बुनाता एएडमीय ममम्ह बाय इस पर काशी के बिज्ञान ग्या बाबू भीप्रकाश जी ने 'मीडर में एक पत्र लिखकर इन कानून का बिरोध किया । उनके ख्याल में सामाजिक जीवन में इस तरह का नियंत्रण अनावश्यक और अज्ञान है । बरातों का जीवन में धान्य मनात के इतन कम अक्षर मिलते हैं कि शाशो ग्याह में या यह बाधा हाव या पयो तो जीवन बिजकुम ही शुष्क और निरानन्द हो जायगा । इस पर काशी के ही एक उनीयमान सेजक श्री मरमीकान्त भा ने इसीरी कानून का समर्थन करते हुए लिखा कि मरीशों का उनही ही अकर्मशाशा के बचाना राज का धर्म है और इसीर में यह कानून जारी करके अपनी प्रजा का बड़ा उपकार किया है । बाबू भीप्रकाश जी ने फिर अपना प्रत्यन्तर दिया है और उनमें अपना पूरा कथन का समर्थन करते हुए लिखा है कि मरीशों को उन बन्धन तो किम्वयत न ख्याल नहीं आता जब वह अपनी दाशनों और पानियों में इज्रातें गन्ध करके करवदार हा जाने हैं तो मरीशों का के माव क्या यह कानन करता आय ।

प्रश्न यह है कि सामाजिक नियंत्रण की आवश्यकता है या नहीं ? बर तो समाज जानते हैं कि अज्ञान शासन बड़ी है बिचमें राज का प र न क र से क र बन्द रहे । अज्ञान मरीशों ही को नकन करतो है । अमर भनवान साग इन तरह का अकर्म न करें या मरीशों को भी अज्ञान बर फूँकर तमाता देखने को हवन न हो । हम तो इसी सिद्धान्त पर अविश्वस तिहा का भा बिदाव करते हैं । अज्ञान इनके कि अज्ञान पर यह का प्रतिबन्ध समाकर उन्हें किम्वयत का सबक दिया जाय यह कहीं अज्ञान है कि ज्ञान के अनुयायन किम्वयत का आदेश सामने रखें । जब तक मरी साय अकर्म के मोह में पड़े रहें अज्ञान पर का का अन्धन समाकर उन्हें दूरशों नहीं बनाया जा सकता ।

२६ दिसम्बर १९३३

पेरिस में भीषण दुर्घटना

सबसे है कि फ्रांस की राजधानी पेरिस में एक बहुत बड़ी रेलबंद दुर्घटना हो गयी। एक मारी साठ मीन की बाल से घा रही थी कि एक स्टेशन पर वह एक बड़ी मुसाफिर गाड़ी से टकरा गयी। दोनों गाड़ियाँ भरी हुई थी। बड़े बिन का उत्सव मनाने के लिए लोग अपने-आपके घर आ रहे थे। बड़ा जबरदस्त टक्कर था। एक ही बस्ती से ऊपर तो नहीं मर गये और तीन तो से ऊपर जख्मी हुए। ऐसा मामूली होता है, फ्रांस में रेलों का प्रबन्ध कुछ बड़बड़ है। अभी तो एक टक्कर में इतनी जानों की खति हुई। क्या ही धक्का हो कि भारत का रेलबंद बोड अपने हाथ में वहाँ का प्रबन्ध ले-ले और उन्हें सिखा दे कि या टाठिक कटोम किया जा सकता है। यहाँ गाड़ियाँ लड़ती हैं वहीं लेकिन कुछ इस खूबी से लड़ता है कि दो बार घामियों को मामूली खरोचें लगाकर रह जाते हैं मरे भी तो दो-बार मर गये। यह नहीं कि एक टक्कर में पाँच ही से ज्यादा जान बर्से। इस मामले से असम्भव भारत योरोप को धमी कुछ लिन सिखा सकता है।

१ जनवरी १९३४

एम० सी० सी० की धूम

घाब घारे देश में एम सी सी की धूम है। जिनादियों का नागरिक स्वागत किया जा रहा है, ऐइस स्थि जा रहे हैं और कहा जा रहा है कि भारत के स्वराज्य का प्रश्न क्रिकेट के मैदान में हल होगा। जिस उत्साह से हमारे राजे और महाराजे और मिनों के स्वामी और बड़े-बड़े लोग इस शोपिंग में चिमटे हुए हैं उससे इस विषय में खबर भी संदेह नहीं रह गया कि बस घाबकी मीच जीते और स्वराज्य मिला। हाकी में हिन्दुस्तानियों ने सारी बुनियाद को पीटा स्वराज्य को एक मंजिल पूरी हुई। पोर्सों में जीत कर हम बुरा मंजिल पर जा पहुँचे। टीराकी में घोषित धाकर टीसरी मंजिल मार ली। फुटबाल में पहले से हमारा सिकका झूटा हुआ है। घाब सम-चार धाया है कि टेनिस में घास्ट्र मियाबालों को हमने नीचा दिखा दिया। बीबी मंजिल भी पूरी हो गयी बस क्रिकेट में जीतने की बेर है। जीते और पूछ स्वराज्य मिला। और जीत तो होती बंबई ही में लेकिन उस इलेविन में शरीक होने के लिए कैबल घिसाई होना कान्सी नहीं। घाब घाबो सिमाई है तो क्या बैठ रहिए। यहाँ जिस पर घाब कारियों की कृपा है, वह इलेविन में मिया जाता है। गुना है बाइसराय साहब को क्रिकेट से बड़ा प्रेम है। जगानी में घाबो क्रिकेटर थे। घाब घाल तो नहीं सकते मगर घाबों से बेस तो गवसे है। और जिस बीब में हुमुर बाइसराय की दिव्यम्पी हो उस

में हमारे राजों महाराजों नवाबों और धनवानों को मसा हो जाय तो कोई भारभर्य नहीं। हुजूर बाइसराम धगर प्रिस दलीप सिंह से गुस होते तो शायद वह भी भारत के साथ बुनाये जाते लेकिन नहीं उन्हें क्रिकेट से क्या मतलब। यहाँ तो पक्का सिमाही वह है, जिसे अधिकारी लोग नामबद करें। भारत की ओर से बाइसराम बधाई देते हैं, भारत का प्रतिनिधित्व अधिकारियों ही के हाथ में है। फिर क्रिकेट के क्षेत्र में क्यों न निर्वाचन अधिकार उनके हाथ में रहे। इस बूम-बाम और टीम-टाम का यही रहस्य है। रैस में क्लिसन दे बिये एक्सप्रस बाइयाँ दीड रही है, तमासाई लोग बमियाँ तिये कलकता मतो जा रहे है।

धीर हजर गुल मन्वाया जा रहा है कि मन्वी है धीर मुस्ती है। मन्वी धीर मुस्ती है मन्डूरी घटाने के लिए, मीकरोँ का बेतन काटने के लिए, ऐसे सुघामिसों म हमेया पेवी रखी है।

१ जनवरी १९३४

एम० सी० सी० की जय

कहते हैं कि कॅच-कान्ति के पहले जमता तो भूखों मखी थी धीर उनके शानक धीर जमींदार धीर महाजन माटक धीर मूल्य में रत रहते थे वही बुरय धात्र हम भारत में रैस रहे हैं। देखतों में हाहाकार मचा हुआ है। शहरों में गुलबदरें उड रहे हैं। वहीं एम सी सी० की बूम है, वही हवाई जहाजों के मेले की। बडी बेरहीं से रुपये उड रहे हैं। काशी के हम क्रिकेट-मैच में कम से कम पाँच हजार धावमी तमासा देव रहे थे। कम से कम पन्नीस हजार रुपये केजल टिकटों से बमूम हुए धीर लिया फिसने उही बाबुधों धीर धमीरों ने जिनसे शायद किसी राष्ट्रीय काम के लिए कौडी न मिल सके। पूब तमारो देखे जावे सूब भजे उडाये जाव। यह बुनिया है, कीन किसी के हुए ने बुन्दी होता है। यह सिरफिरी का काम है। संघार जनका है, जा मीन कलठे है। शहर कि मन्देसों से मरनेवासे धमागे काबी को मरना ही चाहिए। क्या धमोरों का चोचता है, उसकी हमें बस्यत नहीं। म्याम के धाने में देर है, तक तक बिन किये जावे। मुना हम मैच में बिजयनमरम् टोम जीत गयी। बस धात्र स्वराज्य मितन में देटी नहीं है।

१५ जनवरी १९३४

सी० पी० सरकार की सतर्कता

मी पी के होम मीम्बर एक हिमुस्ताफी सज्जन हैं। महारामा की धमी जय उस प्रांत में बीरा कर रहे थे तो धायने एन मरफुलर निकाला या कि सरकारी मोरतों

॥ सी० पी० सरकार की सतर्कता ॥

५२१

को इस प्रावधान में माय न सेना चाहिए। विनियम ठीक। संश्लेषक बीमारियों में बाहरवालों को छूट सम कामे का व्यापक भय रहता है।

२६ जनवरी १९३४

बैंकर्सों की फरियाद

धीरे कोई माने या न माने बैंकधारकों ने तो गवर्नर को डिप्टेटर मान ही लिया। हुयकों के उद्धार का जो विम कौंसिल में मंजूर हुआ है, वह बैंकधारकों को कई कारणों से रक्कित नहीं है। हम भी विम को निर्घोष नहीं समझते। जसमें किसानों के साथ जितनी रियायत होनी चाहिए वही उतसे बहुत व्यापक कर दी गयी है। यों कही कि उतसे विशेषकर जमींदारों का ही फायदा होया लेकिन बैंकर्सों को क्वार्टिसल के मेम्बरों से फरियाद करना चाहिए वा। वा सम्भव है, सम्होंने फरियाद की हो धीरे मेम्बरों पर कुछ असर न हुआ हो लेकिन जब मेम्बरों पर कोई असर नहीं हुआ तो गवर्नर पर कोई असर होने की बहुत ही कम संभावना है। धीरे असर असर हो भी जाय तो हम पचायत के फंसले की प्रपील ऐसे हथलास में करने के विनाशक हैं जो तिरकुटा है। बैंकधारकों ने समझ होया जब एक की सुसामय करने से काम निकल सकता है, तो बहुयों की सुसामय क्यों की जाय लेकिन यह नीति जनतंत्र के अनुकूल नहीं है। जनता के हित के लिए असर प्रमीय को कुछ कष्ट धीरे हाजि भी हो तो वह सहनी चाहिए। जनतंत्र का यह सिद्धान्त है।

२६ मार्च १९३४

डाक्टर भी संरक्षण चाहते हैं

जर्मनी से निकले हुए यहूदी डाक्टर भारत भा रहे हैं। अभी तक तो भारत के मरीज इलाज कराने के लिए जर्मनी जाया करते थे। अब जर्मन डाक्टर लुब यहाँ भा रहे हैं। इससे हमें खुश होना चाहिए वा मगर हमारे डाक्टरों को संकल्प हो रहा है कि कहीं ये डाक्टर यहूदीधर्मों का राजगार न धीन लें। हाहा समझते हैं मरीज किसी डाक्टर के पास इसलिये नहीं जाता कि वह हिन्दुस्तानी है वा हिन्दू वा किसी धर्म जाति का। वह सिफ उस डाक्टर के पास जाता है, जिस पर उसे बिरबास हो जो उसे प्रच्छा कर सके। असर हमारे डाक्टर चाहते हैं कि जगका मुख्य बना रहे, तो उन्हें अपने बियय वा पुत्र ज्ञान प्राप्त करना चाहिए धीरे अपनी फीस भी ऐसी रखनी चाहिए, जो मामूली धारमी की पहुँच के बाहर न हो। कलकत्ते में प्रच्छे डाक्टर के एक विविट की फीस

बर्तीस रुपये से कम नहीं है अगर जमन डाक्टरों के घाने से यह सुट कम हो बात तो हम उनका स्वागत करेंगे। सरचाण की यह हवा देखें हम कहीं-कहीं से जाती है।

२६ मार्च १९३४

कोर्ट-शिप

प्रपाम में बसवान महिला महाउमा की सयानेबी जी ने समाज की ईवाहिक कुटीरियों को दूर करने के लिए कोर्ट-शिप की बात कही। लेकिन कोर्ट-शिप स्वयं तो एक बर्तीसी बस्तु है। कारों की छीर घोर रस्दों की बाबतों घोर घावे बिन नये-नये उप हार, यह क्या मई-बाप के लिए कुछ हल्के टैक्स होंगे। और बखी-भूली कोर्ट-शिप मरभूमि में पड़े हुए बीर की भाँति शामद ही अंकुरित हो कमना-भुलना तो दूर की बात है।

१६ अप्रैल १९३४

डाकों की धूम

डाकों की लागत बढ़ती जाती है। धर तो बालित-बवास की पूरी सरसन फीजें डाके मारने लगीं। गाँववाले बन्दूक की भावाब धुलते ही दम साध लेते हैं। डाकुओं का माँब पर पूरा राज्य हो जाता है। उनकी इच्छा है जो चीज चाहें ले जायें जो चीज चाहें छोड़ दें किसी मजाल है कि चूँकर सके। अगर गाँववासों को पड़ोस का हक धन करने की मूक ययो तो दस-माँब नहीं शहीद हो गये। डाकू मजे से बिन तरह पाते बजाते घावे से उसी तरह हँसते-खेसते बने गये। तीसरे बिन पुनिस लहकीजात करने पहुँची और यह मनी हुई बात है कि डाकू घास-पास के गाँवों के लोप ही रहे होंगे संभव है दो-बार दस बाँब के घारमी भी उनमें मिले रहे होंगे। यह चीन नहीं जानता कि गाँववासों के सहपोष के बहेर डाके नहीं पड़ सकते। इसलिए दो-बार गाँब के मसे घारमी दस-माँब पड़ोस के गाँवों के मोसबर घारमी ही डाके में शरीक हुए। सबूत की क्या कमी। इन धमाकों में धरर शरीगा भी को प्रसन्न कर दिया तो बाल बध गयो नहीं बल्कि बीसनी पड़ी। रोज नहीं तमासा होता है मरर बिछी का परबाह नहीं। सरवार को पुनिस का नाम है सरवार से शत्रुओं को पकड़ना और मिटाना। प्रजा की रचा सरकार की पुनिस क्यों बरे? प्रजा को रचा प्रजा की पुनिस करेगी जो अनन्त मबिद्व में बसगी। प्रजा का बम है सरकार को टैक्स धीर कर बरर करना। सरवार का बम है कर लेना बानी रचा करना। प्रजा के प्रति सरवार बाधीर क्या बम हो लकता है। सरयो घारमी यों ही सरर-तोड़ धीर जियर-मरोड़ बुवार से मरते हैं दो-बार धी

भारती डाक्टरों के हाथों शहीद हो जायें तो क्या गम । प्रवा के हाथ में हस्त भला कैसे बिया जा सकता है । क्या मेकियावेसी का ऐसा आवेक नहीं है ।

३० अप्रैल १९३४

अंग्रेजी औषधियों का बल-पूर्वक प्रचार

कानपुर के हाकिम जिन्ना साहब ने बोर्ड को इसलिए करारी फटकार बरसानी है कि बोर्ड ने अपने रोग निवारक बरत को औषधालय मध्य और होमियोपैथिक दवाखाने खोलने में चर्च किया है और इसके बरत-स्वरूप यह इस फरव को प्रवा से बहुत करना नहीं चाहते । साहब एम्पैथिक औषधियों के खासतौर पर प्रेमी मानुम होते हैं । हम भी मानते हैं कि बहुत-सी बीमारियों में एम्पैथिक दवाएँ ही ही तरह निराने पर जा बैठती हैं, मगर यह किसी तरह नहीं मान सकते कि आयुर्वेदिक युवाती या होमियोपैथिक की दवाएँ बिलकुल बेकार हैं । प्राय भी कितने मरीज एम्पैथिक दवाओं से अपनी बेह को बिपास्त करने के बाद निराश होकर आयुर्वेद या सिव की तरफ घाते हैं और अन्धे हो जाते हैं । ऐसे संशय भी मौजूद हैं जो आयुर्वेदिक और सिव की दवाओं पर पूरा विश्वास रखते हैं और अक्सर डाक्टर भी आयुर्वेदिक औषधियों का व्यवहार करते हैं और होमियोपैथिक तो मानो किसी देवता का प्राणीभाव है, जिसकी राई मर मोनियों में यह टाहीर है जो एम्पैथिक की बोलियों में भी नहीं । और अस्तोपन के सिद्धांत से तो यह भारत जैसे दरिद्र देश के लिए खासतौर पर अनुकूल है । हमें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि प्राय भी ऐसे लोग क्या संशय पड़े हुए हैं जो इतना नहीं समझते की भारतवासियों के लिए भारत में पैदा होनेवाली औषधियाँ कितनी फलप्रसन्न हो सकती हैं, उसी विदेशी एम्पैथिक दवाएँ नहीं हो सकतीं और कितने ही निपट्रवन लोग तो एम्पैथिक से इसलिए घृणा करते हैं कि उसमें खराब ही नहीं मान और सुधर तक की चर्चों भी मिली होती है । माना कि रोगी को इस तरह के विचार करना अनुचित नहीं लेकिन यह नहीं का ईसाफ है कि यह हाकिम जिन्ना ही क्यों न हों अन्धता को एक आस तरह की दवाओं का सेवन करने के लिए भयभूर करे । क्या औषधियों के बारे में भी हमें आजादी नहीं ?

७ मई १९३४

पत्रों में अधूरी खबरें

दैनिक मसबतों में कभी-कभी ऐसी खबरें छपती हैं कि जनता में उससे बड़ी समत-
 प्थमी पैदा हो जाती है और ऐसा मामूली होता है खबरें देनेवाले एजेंट किसी कारण
 से बालबुद्ध कर धपूरी खबरें भेजते हैं। मसलतू चम्पारन में धमी यह खबर छपी कि
 मुसलमानों ने हिन्दुओं की बो सी पचास गायें छीन लीं जिन्हें उनके स्वामी बचप्राहों को
 धोर लिये जा रहे थे और जब उन्होंने अपनी गायें माँगी तो उन्हें माघ-पीटा। इस पर
 बोग हमार हिन्दू बया हो गये उधर पाँच हजार मुसलमान भी बया हुए। पुलिस को
 पठा गया। उसने धाकर हिन्दुओं पर गोमियाँ बलासी और बहुताँ का पकड़ लिया।
 खबर छाड़ कइ रही है कि मुसलमानों की ब्यान्टी है और कोई कितना ही उधार हिन्दू
 क्यों न हो वह यह कमी पसंद न करेया कि मुसलमान या कोई और उन गायों को
 छीन ले। यह तो बाला है, उहवानी है और जब बेचारे हिन्दू इस बात पर बिमड़ कर
 एक होये हैं, तो उनके साथ कितना बड़ा धत्याचार किया जाता है। ऐसी खबरों से
 ब्याम-ब्याह साम्प्रदायिक भावनाएँ प्रबल होती हैं और हिन्दू समझने लगता है कि जब
 हमारे ही ऊपर बाटों तरफ से बार पड़ता है, तो फिर हमें भी लड़ मरना चाहिए। मगर
 बास्तब में बात कुछ और थी। मुसलमानों की गायें भी बर रही थीं और जब यह रेबड़
 उस गाँव में पहुँचा तो दोनों भुइए एक में मिल गये। हिन्दुओं ने अपने रेबड़ को धमम
 करना चाहा पर संभव है उसम दो एग गाव मुसलमानों की भी रह गयी हों। इस पर
 दोनों में झगड़ा हो गया। मुसलमानों ने रेबड़ को रोक दिया और कहा—जब तक
 हमारा वसकिया न हो जायया हम गायों को न बाने देंगे। इस पर बात बड़ गयो।
 इतना स्पष्ट कइ देन से खबर में वह मुसलिम ब्यावरी का पहलू सामब हो जाता है और
 मामूली मनेशियों का झमड़ा रह जाता है, जैसा धाये दिन देहालों में होता रहता है।

१४ मई १९३४

बातचीत करने की कला

बातचीत करना उतना आसान नहीं है, जितना हम समझने हैं। यों मामूली
 मबान ब्याब तो सभी कर लेते हैं अपना कुछ सजी रो लेते हैं, उसी तरह, जैसे सभी
 बीड़ा-बहुत नाकर अपना मन प्रमथ कर लेते हैं लेकिन जिस तरह बाने की कला कुछ
 और है और उसे सीनने की जरूरत है, उसी तरह बातचीत करने की भी एक कला है
 जो कुछ लोगों में तो ईरबदरत होती है और कुछ लोगों को धम्यास से घातो है और जो
 धात्र धरात कारणों से मुठ होती जा रही है। धात्र बो-धार हजार मुठिधिय धारधियों
 में एक ही दो एगे निकलेंगे जो अपने समाज से किसी समाज या मंडली वा मनोरंजन
 कर सकते हों अपनी लियारत वा सिक्का बया सकते हों या अपने पक्ष वा समजन कर

सिद्धि मार्गों में जो बचापन और उदासीनता था मयो है, उसका कारण शायद
 धारकम की सिद्धा प्रणाली है। पहले साहित्य ही मुख्य पाठ्य विषय था। हम बड़े-बड़े
 कवियों की सूक्तियाँ याद कर लिया करते थे। सुभाषितों का एक खजाना हमारे दिमाग
 में जमा हो जाता था और कंठस्थ होने के कारण बचसुर पढ़ने पर हम संभाषण में
 उनका व्यवहार करते थे। धर्म बाल्यावस्था में जो किस्से कहानियाँ या ग्रन्थ पाठ पढ़ाये
 जाते हैं उनमें सुभाषितों का नाम जो नहीं होता। और जब ऊँची कक्षाओं में क्लासिक पढ़ने
 का समय आता है, तो उसके लिए पाठ्य क्रम में इतना कम समय होता है कि केवल
 उसका धर्म समझ लेना ही काफी समझ आता है। रटत की किसे फुरसत है। धर्म
 संभाषण के लिए अच्छी स्मरण शक्ति का होना आवश्यक है, और यह शक्ति धारकम
 उपाय की दृष्टि से देखी जाती है। बड़े-बड़े विद्वानों से कहिए कि लेक्सिकन की बो-बार
 सूक्तियाँ सुनाइए, तो वे केवल मुसकुराकर रह जायेंगे। ग्रीक को कुछ याद हो तब तो
 सुनाये। एक कारण यह भी है कि हमने बनता में मिलना-जुलना तक कर दिया है,
 बड़ी भावनाएँ अपने मौलिक और प्राकृतिक रूप में निवास करती हैं। जब तक धारक
 हृदय-बीच ही ठहर और कविता या बोधे, ही बो ही बुटकुमें बो-बार ही सुभाषित और
 सूक्तियाँ याद न हों धार मनोरंजक संभाषण नहीं कर सकते। किसी की स्वीच सुनने
 जाय, धर्म वह केवल किमासपत्रे बंधार रहा है, या बड़ी धोबस्त्रिनी भाषा न परि
 स्वितियों पर धरना मत प्रकट कर रहा है, तो धार बहुत बस्त ऊँच जायेंगे लेकिन
 धर्म वह बीच-बीच में अपने कर्मों को विनोद-भरे बुटकुमें और सतीकों से धर्मकृत
 करवा जाता है, तो धार धर्म तक मुक्त बैठे रहेंगे। एक सतीके से धार संभाषण में
 जान-सी पड़ जाती है। सैकड़ों रसोमें एक तरह और एक बुटत सुभाषित एक तरह।
 वह प्रतिद्वन्द्वी को निरुत्तर कर देता है, उसके बचाव में उसकी बचान नहीं दुमती। धर्म
 का पक्ष चिठना ही प्रबल हो पर सुभाषितों में कुछ ऐसा जाहू होता है कि मानो वह
 एक लूँठ से बनीसा को उड़ा देता है। मीनागा मुहम्मद मसी मरहूम जिन त्तिों धर्मजी
 'कामरौद' नाम का साप्ताहिक-पत्र लिखा करते थे तो उनके सेलों का हरेक पत्रपाठ
 गानिब के शेरों से धर्मकृत होता था और उसके राजनीति के रसे विषय में भी रम धा
 जाता था। उनके इस तरह के लेख लाजबाव होते थे और बड़ी रचि से पड़ जाने प।
 मीनागा मुहम्मदमसी को गानिब का पूरा हीबान' कण्ड था और शेरों को वह कुछ
 इन तरह चिपका दिया करते थे कि मामूम होता था गानिब ने वह शेर इमी धर्मर
 के लिए कहा हो। स्व धर्मर की व्यगाकियाँ भी संशिकन है इतनी सजोब और
 पुनपुनी कि धार हम धर्मजी बातचीत में भीके पर उनका व्यवहार कर मरें तो मुने
 बानों को उड़ा दें। कबीर और तुलसी रहीम गिरधर धारि की रचनाएँ सुभाषितों
 से मटी पड़ी है मकर धर्मजी स्कुनों में हिमी साहित्य एक गौण विषय है, और जिन
 लोगों ने इन महाकवियों को केवल स्कुनों में पड़ा है, वे शायद ही उनके सूक्तियाँ को

याद रख सकते हों। सतीशों की कोई धन्वी पुस्तक हिन्दी में हमारी ग़रब से नहीं गुज़री। बीरबस प्रक़्खर और क़ुसरो के नाम से जो सतीश प्रचलित है उनमें अधिकांश गन्दे और कुशबि-मूख है। अगर कोई सज्जन सतीशों को संग्रह कर सकें तो साहित्य का उपकार करें। समाज में बाढी-कुसम ध्वनित का कितना सम्मान और प्रभाव होता है, यह जिसने की बख़रत नहीं। ऐसा धारमी किसी मंडली में पहुँच जाता है, तो तुरन्त सब का ध्यान अपनी ओर खींच लेता है और मंडली पर मानों उसका आधिपत्य हो जाता है। हाँ मीनन देखकर ही ख़वान खोलना चाहिए और ज़री विषय में बीसनने का साहस करना चाहिए जिसका हमें कुछ अनुभव या ज्ञान है। मीन की बड़ी प्रशंसा की गयी है लेकिन इसका यह प्रब नहीं कि हम मीनका धाने पर भी मुँह बन्द किये बैठे रहें। हाँ अगर हमारे पास कहने की क़ुब नहीं है, तो मीन ख़ला ही उचित है। मीन से कम से कम हमारी मूर्खता का परवा तो बका रहता है। हम तो कहते हैं हमारे बोधेपन के लिए बड़ी हब तक हमारी अयोग्यता ही जिम्मेवार है। अगर हमारे स्टीक में लोकोक्तियों और सतीशों का प्रभाव न हो तो हम बोधे बैठे ही नहीं रह सकते। जिसे नाचना छाता है वह प्रबसर पढ़ने पर बिना नाचे रह ही नहीं सकता। अगर उसे नाचने का प्रबसर न मिले तो वह मन में बहुत दुखी होबा और भाव भवियों से अपना असन्तोष प्रक़्ट करेगा। जो प्रबसे बकता है, वे किसी सम्मेलन में चुप बैठ ही नहीं सकते। उनकी बीम ख़ुबमाने समती है। और वे बार-बार स्मिप सिब-सिबकर समापति से बोचने की अनुमति लेकर ही रहते हैं। जिन शरोबों को बीसनने की शक्ति या प्रम्यास नहीं है, वे तो बार बार कहने पर भी मंच पर नहीं छाते मनाते रहते हैं कि यह बसा मेरे सिर न भा जाय।

सगमय एक महीना हुआ हमारी मुसाकाठ एक ऐसे सज्जन से हुई जिनकी बाबासता देखकर हम बंग रह गये। सतीशों और सुभाषितों का एक छोटा बा जो उबसता चसा छाता बा। ऐसा कोई विषय न बा जिस पर उनकी अपनी एक स्वतन्त्र राय न ही और जिसका समर्जन बह कायल कर लेनेवाले डंब से न कर सकें। कई बार यह बालते हुए भी कि उनकी क़बल प्रममूलक है, उनकी बाबासता से साबबाब हो बने। अपने पक्ष में एक मामिक सतीशका कहकर बह कह-कहा मारते वे और इसके साथ मैदान मार लेते वे। बह जानते वे इस कैसले के सिभाफ़ में कुछ नहीं कह सकता। उन्होंने कितने सतीशके कहे, इस बक़्त सब ता याद नहीं छाते लेकिन बो-बार याद है उन्हें मैं पाठकों के समोरजन के लिए यहाँ बेता हूँ और उनसे अनुरोध करता हूँ कि बह अपने विभाग को ऐसे सतीशों से कितना ससन्न कर सकें कर बें। इससे वे अपने ही दुःखों पर नहीं दूसरे के दुःखों पर भी प्रहार कर सकेंगे और अपने भ्रामुधों का बापरा र्दना सकेंगे—

(१) बख़ी घकीका में एक बार एक सरकारी क़मचारी जन-गख़ना के विप सिसे में एक भोपड़ी के सामने पहुँचा जहाँ कई बन्ने खोल रहे थे। उसने प्राबाब की

तो उसके जबाब में एक -हबस्तिन बाहर निकल आयी। कागजों की खानापूरी करने के लिए कमचारी ने पूछा—तुम्हारा शौहर क्या काम करता है ?

हबस्तिन ने जबाब दिया—बहु क्या करेगा। उसे मरे तो बीस साल हो चुके हैं।

‘तो यह बच्चे किसके हैं ?

मेरे हैं।

‘लेकिन तुम तो कहती हो कि तुम्हारे शौहर को मरे बीस साल हो गये ?

‘हाँ वह मर गया है लेकिन मैं तो अभी जियेवा हूँ।

(२) एक तेजी ने अपने बीस के गले में बटी बाँध रखी थी। एक सज्जन ने पूछा—क्यों सड़ भी बीस की मकल में बटी क्यों बाँध रखी है ?

तेजी ने जबाब दिया—इसलिए कि बीस जसता रहता है, तो मस्टी बजती रहती है। मैं कोई बूझा काम भी करता रहता हूँ तो मुझे मामूम रहता है कि बल बल रहा है, सड़ा नहीं हो गया।

‘लेकिन अगर बीस लड़ा होकर फिर हिमाता रहे ?

महालय मेरा बीस इतना समझदार नहीं है।

(३) एक हिजाबवाँ ने बरिया को यहूदाई का अनुपात निकाल कर बरबातों से कहा—पत्नी बोझा है, कोई डर नहीं हम इसे पार कर लेंगे लेकिन जब मरने से सब सोच मध्य बाट में पहुँचते ही उसकी आँखों के सामने डूब गये तो वह फिर कितारे पर पहुँचे और फिर अनुपात निकाला। वही जबाब निकालता जो पहले था तो बोले—अभी क्यों का क्यों कुर्बा हुआ क्यों ?

(४) एक अश्लिमची पिनक में राह में पड़ा हुआ था। एक फणकड़ ने उसक सिर को पकड़ी उठार ली और उसकी जगह बोझी-सी रई रख ली। अश्लिमची जब पिनक से आता तो पकड़ी समझने के लिए सिर की तरफ हाथ बढ़ाया। पकड़ी की जगह रई उसके हाथ आयी तो बोला—कम्बकत धुनकी गयी काठी गयी बुनी गयी पकड़ी बनी। इतना सब कुछ हो चुकने के बाद फिर रई की रई।

(५) एक बार मि हबट स्वेसर कहीं सिर करने जा रहे थे। घाप हंगतेड के बहुत बड़े फिलासॉफर हो गुजरे हैं। रास्ते में घाप को एक सौ साल के बुढ़िया मजदूर पकड़ी। हबट स्वेसर को मजाक की मूर्खी बोले—वीडम बुनिया में तुम्हारा कोई प्रमी भी है ? बुढ़िया ने घूँटे ही जबाब दिया—बटा मरे प्रमी तो सब स्वयं सिपारे, बस एर तुम जीते बचे हो। फिलासॉफर साहब ऐसे भेजे कि भागते ही बना।

(६) गुरमी के प्रसिद्ध प्रधान मन्त्री असमत पाठा जब सोबाण की वाँडेंल में सेवती की सन्धि को बदलवाने के लिए आये तो घाप का सामना भाड करन से हुआ।

लाइ कर्जन की धकड़ तो मशहूर है। आपने इस बमबू में कि वह दुनिया के सबसे शक्ति-सम्पन्न साम्राज्य के प्रतिनिधि हैं, तुर्की-प्रतिनिधियों पर रोब बमाने के लिए राष्ट्र-बासी तुर्कों पर झूठ हमसे किये। लाइ कर्जन का यह डग देखकर असमठ पाशा ने ऐसा मुँह बना लिया मानो लाइ कर्जन बोल ही नहीं रहे हैं। जब लाइ कर्जन बेड़-दो बंटे तक बीनों मार कर बैठ गये तो गाबी अघमठ पाशा चौक कर उठ खड़े हुए और कान पर हाथ रखकर बोले—क्या आप तुर्की के विषय में कुछ कह रहे हैं। मैंने तो कुछ सुना ही नहीं। दूसरे बिचारों में डूबा हुआ था। लाइ कर्जन पर मर्दों पानी पड़ गया।

दिसम्बर १९३४

वशाकरण का नया रूप

हमारे रतिशास्त्र में बशीकरण का एक विरोध महत्त्व है। ऐसी हरेक पुस्तक में आपको बशीकरण की विधि और मन्त्र और उसकी क्रियाएँ सब बड़ी तल्लीन के साथ मिलेंगी। अन्त का उन पर विश्वास भी है और हजारों प्रेमी-जन एकान्त में बैठकर इन क्रियाओं को सिद्ध किया करते हैं। योरोप में भी अब बशीकरण का प्रचार होने लगा है, लेकिन नवी पद्धति के अनुसार हरेक काम बहो व्यवस्थित संवर्धित और व्यापारिक रीति से किया जाता है। बशीकरण भी इसका अपवाद न था। एक महात्म ने इसका एक स्कूल भी खोल लिया और अच्छी प्रीस लेकर सिध्यों को उसके सबकु भी देने लगे। हाँ सबक पत्रों द्वारा दिये जाते थे। प्रचार इतना बढ़ा कि बहुत अल्प सिध्यों की संख्या बाख् हवार से ऊपर पहुँच गयी। शिक्षक महोदय केवल बानन पाठों में सिध्यों में ऐसी योग्यता पैदा कर देने का जिम्मा लेते थे कि उसके प्रमी या प्रमिका उससे मिलने के लिए धन्युर हो उठें। बिबर वह ठाक थे उस पर उसका आशु बम जाय। इस विज्ञप्ति का वह मतीबा हुआ कि सारी दुनिया से पक्क-व्यवहार होने गया और एक हवार से प्रमिक लाभ यह कमा सीखने लगे। अब यह प्रम था पया तो उसकी पाबमाइत भी होगी ही चाहिए। युवक और युवतियाँ शिक्षार की खोज में घूमने लयीं। धान्निर प्रेम लुप्त गया और शिक्षक महोदय गिरफ्तार हुए और उनके ऊपर मुक्यमा चलाना गया। प्रमियोग यह था कि यह लोय युवकों को दुश्चरित्रता का पाठ पढ़ाते हैं जिससे बरों की बरबादी के सिवा और कोई नतीजा नहीं। यह बिद्यालय पेरिस में था अगर इसका प्रचार बीस मिल-मिल मापाघाँ में होता था। मजा यह है कि बहुधा यह बशीकरण विधि केवल मनोरंजन के लिए सीखी जाती थी।

अतीत भारत के उपासकों को योरोप की इस तककामी पर शायद इस पुरानी कमा को फिर बनाने की धुन सवार हो क्योंकि योरोप ममा-बुरा तो कुछ करे, हम उनके पीछे चलने की तैयार हैं।

फरवरी १९३५

‘हस’-कथा

कुछ अपने विषय में

'हूँ' का एक रूप समाप्त हो गया। हम इसके बावजूद बंध निकाम सके इसकी बग़ाई हमें दूसरे हैं या न दें हम स्वयं अपने धाप की बिये लेते हैं। जिन उद्देश्यों के साथ वह क्षेत्र में उतरा या उर्खे हमने कहीं तक पूरा किया इसका निखय पाठक करें। हम तो यही कह सकते हैं कि हमने अपनी धीर से कोई भीतापन नहीं किया। हम धार्मिक हानि भी हुई रात्रैतिक संक भी भोगना पड़ा पर हमने हिम्मत न हारी। हम अपनी बुद्धियों को जानते हैं धीर यथासक्ति उनके दूर करने की चेष्टा कर रहे हैं। कुछ संज्ञकों की सलाह है कि 'हूँ' में धारि से अंत तक कहानियों के सिवा धीर कुछ न हो। यह प्रथमरूप से कहानियों की परिचा न रहकर पुण्य रूप से हो जाय। कुछ संज्ञक मुक्ता-बंधुया धीर इसकी टिप्पणियों को कायम रखना चाहते हैं धीर परिचा का एकही नहीं बनाना चाहते। हम सुद यभी तक कुछ निरूपण नहीं कर सके। हम अपने प्रेमी पाठकों से अनुरोध करते हैं कि वह इस विषय में अपनी सम्पत्ति प्रशास करके हमारे पक्ष को निरिषत कर दें। हमें इसका खेर भी है कि हम मौखिक कहानियों की संख्या धीर धार्मिक न बढ़ा सके। हम अपने जीवनान दोस्तों से धार्या करते हैं कि वह अपने नये रक्त धीर उत्साह से साहित्य के इस धंग की पुति करेंगे। हम हर एक नये संस्कार को प्रोत्साहित करने को उत्तर हैं। हाँ यह धररय चाहते हैं कि जो संज्ञक इस मैदान में धार्ये वह एक धार्य लेकर धार्ये धीर साहित्य रचना को बन्धों का लेन न समझें। परिचयबामों के प्रभाव में आकर हम सोम भी श्रुंवार-प्रधान कहानियाँ लिखने ही में बना या विकास समझते हैं। कुछ जोम जीवन के गमन चिन्नों को सीखना ही साहित्य का ध्येय समझ बैठे हैं किन्तु मानव जीवन में ऐसे अनेक त्राव हैं जिनका पाठक पर हमसे बड़ी संख्या धरर पड़ सकता है। मोटी बात इसकी ही है कि जो कुछ लिखा जाय धार्या से धीर धार्या के निरु लिखा जाय।

पाठकों से किन्ही प्रकार की सहायता माँगना हम अपना धर्पिचार नहीं समझते। हम जब साहित्य-क्षेत्र में धार्ये से तो पाठकों से पुण्यकर न धार्ये से। हमें साहित्य में पूर मिरान पुण्य करवा या उसे पूर करने का प्रयत्न कर रहे हैं। पाठकों को धर्पि हमारे उद्देश्यों से महन्तुमुति है तो वह स्वयं हमारी सहायता करेंगे। धरर नहीं तो हमारा बहना ध्यन है। हमन धरण सामन जो धार्या रखना है, वह हमारा उत्साह बढ़ाते ररन

के लिए काफ़ी है। हम बाटे-गुटे के काममें नहीं जिसे स्त्रिबर ने किछ योम्य बनाया हो उस कठम्य को पामन करना उसका बम है और बम ब्यबसाम की बस्तु नहीं।

जून १९३१

भारतीय साहित्य का संगठन

हाम में यी कन्हैमात्मान बी मुंशी ने इस प्रसन पर अंग्रेजी पत्रों में एक बिचार पूय लेख लिखा है जिसमें आपने यह दिखाने की बेष्टा की है कि अन्तर्प्रान्तीय साहित्यों का राष्ट्रीय संगठन किस प्रकार और किस रूप में किया जाना चाहिए। हम उसका स्वतन्त्र अनुवाद देते हैं—

‘इसर कुछ समय से उन सभी प्रान्तों में साहित्यिक जागृति उत्पन्न हो रही है जिनके पास अपनी-अपनी विशेष भाषाएँ हैं। इसका गतीबा यह हुआ है कि हर एक प्रान्त में छोटी-छोटी साहित्यिक संस्थाएँ पया हो गयी हैं और वे सब प्रान्तीय साहित्य परिषदों का संघ बन गयी हैं, किन्तु साधारणतः ये संस्थाएँ अपने अक्षय-अक्षय चालते पर बस रही हैं। उनमें कोई पारिस्परिक आदान-प्रदान नहीं होता। यहाँ तक कि इंडीय की साहित्यिक और सांस्कृतिक कृतियों के विषय में हमारा बिचना ज्ञान है, उसना अपने पड़ोसी प्रान्तों के साहित्य के विषय में नहीं है। उस प्रान्त के बाहर ऐसे कम लोग हैं, जिन्हें उदीयमान सेलकों की संझी और कमा या उसकी साहित्यिक आराधों का कुछ ज्ञान हो। जिन प्रान्तों में हिन्दी नहीं बोली जाती वहाँ कुछ लोग तुलसी या सूरदास के नाम से भने ही परिचित हों लेकिन वे साहित्यिक उद्योग से अपरिचित हैं, जो धाब हिन्दी में हो रहा है। बँपसा साहित्य का हमें जो कुछ परिचय है, वह केवल डाक्टर रवीन्द्रनाथ टैगोर की रचनाओं का है। गुजराती साहित्य के विषय में हम जो कुछ जानते हैं वह महारमा जी की आत्म-कथा के प्रसंगी अनुवाद हाउ है। मबीन गुजरात ने किछ रोमाण्टिसिज्म (आनन्द मन्सी) साहित्य का विकास किया है, वह अन्य प्रान्तवासियों के लिए एक मुहुरजन्द सिखाव है। कनटिक तामिननाड आग्न केरम आदि प्रान्तों में किछ नये साहित्य का निर्माण हो रहा है, उसका गोदावरी के उत्तर के निवासियों को कुछ भी ज्ञान नहीं है।

‘लेकिन वर्तमान साहित्य पर राष्ट्र भावना का आधिपत्य है और भावे भी रहेगा। सभी प्रान्तीय कृतियाँ एक विशाल राष्ट्रीय एकता की ओर उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही हैं और अगर भारत को अपनी राष्ट्रीयता सम्पूर्ण रीति से प्राप्त करना है, तो एक राष्ट्रीय साहित्यिक संघ भारत के लिए आवश्यक है, जिसमें हर एक प्रान्त अपना सहयोग प्रदान करे, लेकिन ऐसा संघ केवल हिन्दी के माध्यम द्वारा ही संभव है, जिसमें सभी भाषों के साहित्यकार संमिलित रूप से हार्दिक सहयोग दें। ऐसा होने पर ही हम प्रान्तीय साहित्य

परिषदों के संघ की स्थापना कर सकेंगे भी वास्तव में अखिल भारतीय साहित्य परिषद् होनी। सन् १९२५ से अब कि मैं गुजराती साहित्य परिषद् में सक्रिय भाग लेने गया था यह विचार मेरे मन में पुष्ट होता गया है।

‘गद धर्मस में महात्मा गांधी की अध्यक्षता में जो हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन हुआ उसमें यह योजना स्वीकार कर ली गयी। अन्ध साहित्यिक अभिजातों के साथ इस विषय पर मेरी जो बातचीत हुई, उसमें मुझे मामूली हुआ कि बहुतायत के मन में इसी तरह के विचार उठ रहे हैं और अब इस दिशा में प्रयत्न करने का समय था पहुँचा है। स्वयं महात्मा जी ने भी हिंदी माध्यम द्वारा निम्न-निम्न प्रांतीय भाषाओं के प्रतिनिधियों को एकत्र करने की धारणा को काय-रूप में लाने में एक प्रवर्तक बनना स्वीकार किया। साधारणरूप से वह प्रतीत हुआ कि यदि इस तरह की कोई धारणा सफल हो नाय तो फिर किसी न किसी रूप में एक अन्तर्प्रमितीय साहित्यिक संस्था या ही जायगी। इस सम्मेलन ने यह प्रस्ताव स्वीकार किया—

देश के निम्न-निम्न प्रांतों के साहित्य-सेवियों में पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करने और हिन्दी भाषा के सत्प्रवृत्ति के कार्य में उन लोगों का सहयोग प्राप्त करने के विचार से यह सम्मेलन निम्नलिखित राज्यों की एक समिति कायम करता है और भारवकता होने पर उन्हें अधिक आवश्यक बना लेने का अधिकार भी देता है—

१—धीपुत कर्नूलमागत भाखिकनास मुगली।

२—श्री हरिहर शर्मा।

३—श्री० विरभर शर्मा।

‘उक्त समिति नये सदस्यों का चुनाव करेगी और धारमिक कार्य हो जाने के बाद अपना काम शुरू कर देगी।

‘सबसे पहले प्रांतीय साहित्यों में समीपता लाने के लिए यह सोचा गया कि या तो हिन्दी के किसी वर्तमान मासिक पत्र का उपयोग किया जाय या एक नया पत्र निकाला जाय जिसमें प्रत्येक प्रांतीय साहित्य के लिए कुछ स्थान सुरक्षित रहे। प्रांतीय विद्वान उनके लिए लेख लिखें जो हिन्दी में क्पांतरित होकर प्रकाशित किये जायें। इस प्रकार इस पत्र में प्रति मास ये विषय रह्ये—

१—निम्न-निम्न प्रांत की साहित्यिक तथा सांस्कृतिक घटनाओं पर संक्षिप्त टिप्पणियाँ।

२—प्रांतीय साहित्यों के विकास का संक्षिप्त इतिहास जिसमें प्राचुरिक साहित्यों की उन्नति तथा उनमें पैदा होनेवाले राष्ट्रीय भावों की ओर विशेष ध्यान।

३—विभिन्न प्रांतीय भाषाओं में निर्माण होनेवाले मासिकीत।

४—प्रांतीय साहित्य में निधी जानेवाली उच्च अथवा नीच लघु कथाएँ

(कहानियाँ)।

३—उपन्यास (कथा) ।

५—प्रांतीय लोक-साहित्य का परिचय ।

७—एकता की माटक ।

८—प्रांतीय लोक-साहित्य के प्रमुख कवियों एवं सुमेसकों के विस्तृत शब्द-विषय तथा उनकी कथाकृतियों की साहित्यिक आलोचनाएँ ।

९—विभिन्न भाषाओं के प्रमुख साहित्यिकों के विहंगम शब्द-विषय ।

१०—विभिन्न प्रांतों की साहित्यिक एवं सांस्कृतिक तुलना ।

११—भिन्न-भिन्न भाषाओं में प्रकाशित होनेवाली पुस्तकों की साहित्यिक समालोचना ।

१२—विभिन्न प्रांतीय भाषाओं के पद्यों में प्रकाशित होनेवाले सामयिक साहित्य के अन्तर्गत तथा उनके हिन्दी अनुबाद ।

१३—विदेशी साहित्य सम्बन्धी संक्षिप्त टिप्पणियाँ ।

१४—प्रांतीय भाषाओं में प्रकाशित आदर्श उपन्यासों का मर्मनुबाद ।

१५—राष्ट्र-निधि सम्बन्धी कथा ।

संक्षेपतः यह मासिक पत्र आगमन महसूस होनेवाली एक अविनाशनीय भारतीय साहित्यिक मुक्तपत्र की आवश्यकता की पूर्ति करेगा । इस कार्य को सफल बनाने के लिए विभिन्न प्रांतों के मुख्य साहित्य-सेवियों साहित्य परिषदों तथा अन्य साहित्यिक समितियों और आसकर राज्याधी समाचारपत्रों के सहयोग की नितांत आवश्यकता है । इस आवाहन को सफल बनाने के लिए पहले कुछ कमीन तैयार करने की जरूरत है और हर एक प्रांत में कुछ ऐसे साहित्य-सेवियों की जरूरत है, जिन्हें इस उद्यम में दृढ़ उत्साह हो और इस पत्र के द्वारा मैं देख सकूँ कि उन साहित्य परिषदों साहित्यिक संस्थाओं तथा उन साहित्य-सेवियों से सहयोग के लिए आग्रह और अनुमति कर पाऊँ जो इस कार्य से प्रेम रखते हों ।

‘मुक्तकाल में आम संस्कृति की लगी हुई लगन ने प्रांतीय सीमाओं को मिटाकर भाषा और निधि का भेद छोड़ें हुए भी साहित्यिक और सांस्कृतिक एकता प्रस्थापित करने की भरसक कोशिश की थी । वर्तमान संस्कृति से साधना की जो सरलताएँ मिलती हैं और राष्ट्रीय भावना राजनैतिक जीवन में जो प्राण संचार कर रही हैं, उसका परिष्कार ही सांस्कृतिक एकता प्रस्थापित करने में अवरुध होगा और बस-बीस वर्ष की अल्प अवधि में ही हम सोच देखेंगे कि अद्विशांतिनी राजभाषा का उदय और प्रांतीय साहित्यों का पारम्परिक अस्तित्व हो चुका है, जिसमें हर एक प्रांत ने अपने सर्वोत्कृष्ट सृजन की भेंट दी है ।

जुलाइ १९३५

‘हंस नये रूप मे

राष्ट्रभाषा की वर्तमान भागति के बाद अगरे राष्ट्र-साहित्य के समन्वय के मद्देनार कुछ सिद्धे तो यह उक्त भागति का अयमान होगा । जिन उपकरणों से राष्ट्र बनता है, उनमें भाषा और साहित्य का स्थाप कितना ठँबा है यह हम सभी जानते हैं । हिन्दी को उसकी व्यापकता और सरलता के कारण राष्ट्र ने अपनी भाषा स्वीकार कर लिया और अट्टारह वर्षों से सम्पूर्ण देश में उसके प्रचार का आयोजन सफलता के साथ हो रहा है और अब समय आ गया है कि हम अपना क्रम भाये बढाये और राष्ट्रभाषा के प्रचार में जो सुविधा तयार कर दी है, उसमें भारतीय राष्ट्र-साहित्य का भाग लगायें । यह मानना सिद्धने ही सज्जनों के मन में कई साल से उठ रही थी पर उसे कार्य रूप में लाने से लिए जिस पक्ष प्रदत्तकी अकरत थी वह न मिला । इस अय इन्दीर हिन्दी साहित्य सम्मेलन में—जिसके समापति महारमा थाभी से—इस आशय का प्रस्ताव मजूर हुया और जिन पब्लिश हासों से अट्टारह अय पहले राष्ट्रभाषा प्रचार का आयोजन हुया वा जन्ही हासों से भारत के प्रांतीय साहित्यों के समन्वय का आयोजन भी हुया । बीजन और संस्कृति के अय्य सभी विभागों में अलिप्त भारतीय संस्थाएँ मौजूद हैं लेकिन आयासों के अंदे के कारण अमी तक अलिप्त भारत की कोई साहित्यिक संस्था नहीं है । भाग-अंधे की दुगम आई को पार करने के बाग हमारा रास्ता साफ हो गया है और यह अयसर आ गया है कि हम साहित्यिक समन्वय का काम शक कर व ।

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए पहली आवश्यकता एक एस मासिक पत्र की है जिसमें सभी प्रांतीय महारबियों के लेख प्रकाशित हो और आयासों में अर भागल-प्रधान होने लये जिससे राष्ट्र-साहित्य का प्रोत्साहन और प्रगति मिले । इसी तरह साहित्य में वह उन्नीय मनोबुत्ति उत्पन्न होगी जिससे आये अलकर राष्ट्रीय साहित्य परिपद् का विकास होना

अतएव हमने निश्चय किया है कि आगामी अक्टूबर से हिन्दी के सुप्रसिद्ध मासिक पत्र ‘हंस’ को इस अये रूप में प्रकाशित किया जाय । ‘हंस’ अब एक निमित्त अयनी द्वारा प्रबंधित रूप में निकलेगा जो इसी उद्देश्य से बनायी गयी है । उममें प्रति मास ती लच्छे होये और उक्तका आर्थिक मूल्य पाँच रुपये होमा । प्रांतीय विद्वानों और सुनेगनों से लेख प्राप्त करना अन्हें हिन्दी रूप में आगा साहित्य के प्रत्यर अंग की पूर्ति का प्रयत्न करना मेहनत का काम भी है और लख का भी । दग-आरु प्रांतीय साहित्यों के लेखों का अनुवाद करने के लिए हम योय्य अनुवाहकों का प्रपण करना पडा है और कई सज्जनों में तो त्याग भाव से हमारी सहायता करने का अचन रिना है । प्रत्येक प्रांत में राष्ट्र-साहित्य के प्रेमियों में इस उद्योग का जिन उगाह से अगात रिया है वह अकार लिए अट्टर आशाजनक है । हमें विश्वास है कि राष्ट्र के सुतारा

घौर पाठक दोनों ही अपने सहयोग सह हम प्राप्त हो सकेंगे। तभी वह उपासीनता और प्रसन्न हो होगी जो एक प्राप्त को दूसरे प्राप्त के साहित्य से है। हमें हय है कि हमें सम्पादन काम में गुजरात के प्रमुख साहित्यकार श्रीमत् कर्णामाताल मुंशी का सहयोग प्राप्त हो गया है, जो इस विचार के अन्वयात् कर्ण आ सकता है।

काम कितना महत्वपूर्ण है, यह सिद्ध करने की जरूरत नहीं। हम तो उस भविष्य की अन्वयना करते हैं जब भारत के सुविधागत सेक्टरों की रचनाएँ भारत के एक कोने से दूसरे कोने तक आने से पड़ी आवेगी और सम्पूर्ण देश उन पर गव करेगा। तभी हमारे साहित्य को संसार के साहित्य-समाज में और अन्तर का स्थान मिलेगा और संसार के सांस्कृतिक विकास में उसका भी भाग होगा।

जिस पत्रिका के निर्माण में प्रमुख भारत की साहित्यिक प्रतिभा योग देवी वह किस कोटि की होगी इसका अनुमान किया जा सकता है।

हम यहाँ उस लक्ष्य का निवारण कर देना उचित समझते हैं जो दुर्भाग्य से कुछ संशयों के मन में उत्पन्न हुई है। यों तो चारों तरफ हमारी योजना का स्वागत ही हुआ है पर कुछ ऐसे महानुभाव भी हैं जिनका कथन है कि जब हम अंग्रेजी भाषा का माध्यम से अपना काम चला सकते हैं तो हमें राष्ट्रभाषा नीवर्ण की क्या जरूरत है। उनका कथन है कि राष्ट्र-साहित्य का स्वीकार केवल हिन्दी को अन्य प्रांतीय भाषाओं पर अपना प्राधिपत्य बनाने के लिए करना किया गया है। हम बड़ी मन्नता से निवेदन करना चाहते हैं कि हमारा प्राधिपत्य प्रांतीय भाषाओं को अति पहुँचाना नहीं बल्कि उनके सहयोग से राष्ट्र-साहित्य का निर्माण करना है। जिस हाल पर बैठे हों उनी की जड़ में कुल्हाड़ी मारकर हम अपनी भूलता ही का परिचय दे सकते हैं। हाँ यह हम अक्षर्य स्वीकार करते हैं कि हम राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति के लिए राष्ट्रभाषा का ज्ञान आवश्यक समझते हैं अन्वयात् यह राष्ट्रभाषा ही फैली होगी किन्तु हमने तो भाषाओं को अति पहुँचाने की कोई सम्भावना नहीं। उनका जो श्रेय है वह तो बना ही रहेगा हाँ उनके प्रतिभाशाली सेक्टरों के लिए यश प्राप्ति का श्रेय और विलुप्त हो जायगा। अन्वय इस उस भाषा को अति पहुँचती है तो उसे लाभ कैसे पहुँचेगा इसका अनुमान हम नहीं कर सकते। उही अंग्रेजी के पक्षपातियों की बात उनसे हम इसके सिवा और क्या कह सकते हैं कि जब तक राष्ट्र के अर्थों रूपसे अर्थ करके हय भी में एक प्रांतीय की भी अंग्रेजी पढ़ने और समझने के योग्य नहीं बना सके और सम्पूर्ण राष्ट्र को अंग्रेजी पढ़ाने के लिए कितने धन की जरूरत है, वह इस कथन से ही सामर्थ्य क बाहर है।

जुलाई १९३४

परिचित हो जायेंगे। प्रांतीय साहित्यों में जो कुछ अष्ट घोर सुन्दर है, वह भाषा को 'हंस' द्वारा प्राप्त हो जायगा। उसके साथ ही यह पूर्ववत् हिन्दी-साहित्य की धनुषी रचनाएँ भी भाषा को अँट करता रहेगा। क्या यह खेप की बात नहीं है कि अभी तक हम प्रांतीय साहित्यों की प्रगति और उनकी मूल धारणाओं से बेखबर हैं? पुराने बँदासी साहित्य से हम बहुत कुछ परिचित हैं। लेकिन उसकी साम्प्रतिक गति का हमें कुछ पता नहीं है। दक्षिण भारत के साहित्य से तो हम सर्वथा अज्ञान हैं। जब भारत एक राष्ट्र है, हिन्दी राष्ट्र-निधि है, तो भागीय साहित्य में जो कुछ भी निकले वह राष्ट्र-साहित्य है। तभी हमारे साहित्यिक वृत्तिकोष्ठ का विकास होगा तभी हम साहित्य को राष्ट्रीय भाषाबंध से भाषेंगे तभी हमारे साहित्यिक आधार ठबे होंगे। भाषा 'हंस' के प्राहक बने रहकर राष्ट्र-साहित्य के प्रति अपने कर्तव्य की इतिभो न समझे। यथासाम्य 'हंस' के प्रचार का सहयोग भी करें और इस सांस्कृतिक यज्ञ में सहयोग देने का यश ले। जब धर्म भाषा भाषी सम्मन राष्ट्रभाषा के प्रति इतना उत्साह दिखा रहे हैं और 'हंस' के प्रकाशन के लिए धन का आत्योन्नत कर रहे हैं और धर्म भाषाओं के यशस्वी संचक 'हंस' के साथ संचारतापूर्वक सहयोग कर रहे हैं, तो क्या हमारे पाठक या इतने विनों 'हंस' के प्राहक रहकर अपने साहित्य-धर्म का परिचय देते रहे हैं अब अपने राष्ट्र-साहित्य-धर्म से हम प्रोत्साहन न लेने? हमारे जिन माननीय सहयोगियों ने इस विचार के प्रचार में हमारे सहामता की हैं, उनके हम हृदय से धनुषद्वेष है।

अगस्त मितम्बर १९३५

भारतीय साहित्य के संगठन की एक आलोचना

'हंस' के पाठकों को ज्ञात होना कि यह माघ धीमुठ कन्हैमासास मुक्ती ने 'भारतीय साहित्य का संगठन' नामक एक पम्पलेट प्रकाशित किया था जिसमें उन्होंने हिन्दी में एक ऐसे पत्र की आवश्यकता बतसाबी थी और उसके लिए एक स्कीम भी पैदा की थी जिसमें प्रांतीय साहित्यों के विषय में हिन्दी में प्रांतीय विद्वानों के लेख प्रकाशित किये जायें और हिन्दी के माध्यम से एक ऐसा शोध वेद्यार किया जाय जिसके द्वारा मित्र-मित्र प्राप्त तथा हिन्दी के पाठकों को धर्म प्राप्तों के साहित्य में परिचय हो जाय और राष्ट्र के मित्र साहित्यों में जो खेपेठ इतिथी निकलें वह केवल उन प्राप्त के धन्दर न रहकर सम्पूर्ण राष्ट्र तक पहुँच सकें। हमारे मित्र धीमुठ बन्दगुण की विद्याभकार ने अन्त के विज्ञान भारत में एक विचारपूर्वक लेख लिखकर यह शंकाएँ प्रकट की हैं—

१—जिन साहित्यिकों की रचनाएँ उन पत्र में अर्पणी उन्हें भी ठीक ठीक से

आप्त नहीं होगा कि उसकी रचना का हिन्दी में अनुचित होकर बना कर बन गया है। अतएव परोपकार को भाषना से किना क मिहात्र में धाकर धरवा धोर कितो प्ररणा से धन्य प्राप्ती के साहित्यिक उन पत्र के लिए सेह जाहे भले भेज व तयात्र उह उस पत्र से कोई बिना शिलषस्तो नहीं रह सक्ती। परिछाम यह होया कि मर पत्र बहुत रोध दूरर नरे का धोर कुछ समय क बार तीमरे दरे का बन जायगा।

२—हिन्दी समय को उस पत्र से धन्य प्राप्तीय भाषाया की रचनाया का मकेएह ईह सास्वान् धवरम मिल जायगा परन्तु उनके द्वारा धन्य प्राप्ता की जनता को मपूछ राए क साहित्यिकों का परिषय किस प्रकार मिल सकेगा ?

—इस विषय का जकेया एक पत्र बना कर मगा यह ता प्रचार का-या काय है धोर हम इच्छि से ता यह धरवा रहेगा कि हिन्दी क सम्पुष्ट पत्रा तथा पत्रिकाया म हिन्दी ही क्यों सम्पूष भारतवष की सभी पत्र-पत्रिकायो म यह भाषना भग्न का प्रयत्न किया जाय कि वे धन्य प्राप्ता का रचनाया मे भी धन्य प्राप्ता का परिषय करान का अधिकतम प्रयत्न करे।

४—धन्य म धान्य राष्ट्रीय साहित्य परिषद् को उन्नत बनानी है धोर इस पर बार दिया है कि पहल यह परिषद् बनाया जाय धोर एसा न उनी परिषद् को धोर स पूष साहित्यिक बनकर निकल।

हमें चन्द्रगुप्त जी की यह धानाचना पकर मुगा हुई। उनम मापम हाता है कि विचारवान लोग इस प्रश्न पर विचार कर रहे हैं, या धाने बन्द करके निमो बात को स्वीकार कर लेन से या साक उपासीन हो जाने से कहीं धरवा है। हम मारे चन्द्रगुप्त जी की संकाधों का महत्व समझने हुए भी यह निवेदन करते हैं—

१—हम जिन साहित्यिकों के सेव प्ररक्षित करते यह सीधे उही से 'हम के लिए प्राप्त किये जायेंगे धोर यह प्रयत्न करते कि वे गुरु धन्य सेखों के अनुवाद करा के या स्वयं हिन्दी में लिखकर (अगर उन्होंने हिन्दी का ज्ञान प्राप्त कर लिया है) भेजें। अगर यह दोनों बातें न हुईं तब हम उनसे सेखों के अनुवाद करावेंगे। हम यह प्रयत्न करते कि उनके द्वारा सेव ही हम जिन धोर हमारे लिए धान्य धोर पर लिये य हा। को धन्य नहीं है कि कब वे अपनी भाषा व पत्रों की सेव देते हैं तो 'हम' को न दें जा उनके मग की सम्पूष भारत म परेषान का इरासा रखता है। हमारा तो क्यान है कि कयता मराठी धान्य मराठी भाषाया के सुवेयक मा इमे कभी मारण न करे कि उनके सेव एम पत्र में धरे जो सभी भाषाया की जनता के पाम परेषने का धान्य धाने मामने राता है धोर उनको बुरा करने के लिए प्रयत्नशास है। हिन्दी मराठी ही का सीधिए। मारे चन्द्रगुप्त जी की धन्य यह विरवान हा जाय कि धन्य पत्रिका में धन्य सेव भेजन से बह सम्पूष भारत के राभागा प्रथियों के हाथों में परेष जायगा तो हम निरयाम हैं यह उमी पत्र में लिखते। ऐसी नशा में हमें ता मारे कारन नहीं

मान्य होता कि हंस को अष्ट सामग्री में मिश्रित और वह तीसरे बरतने का पत्र होकर रह जाय ।

२—हिन्दी जगत् को अब अंग्रेजी फ्रेंच या योरोप की अन्य भाषाओं की सेक्रेटरी हूँ नहीं अब फ्रेंच और फिग्य हूँ सामग्री बाह्य हो सकती है तो हमारा क्या है कि अन्य भारतीय भाषाओं की सेक्रेटरी हूँ सामग्री भी बाह्य हो सकती है । लेकिन अब हम वह सामग्री स्वयं लेकर स लेगे और यह बाह्य कर लेगे कि वह 'हंस' के लिए ही मिली गयी हो ता वह सामग्री सेक्रेटरी हूँ न होकर फस्ट हूँ ही होगी । और एक प्रान्त के निवासियों के लिए दूसरे प्रान्त के साहित्य का परिचय पाने की अथवा इच्छा होगी ता 'स' उनकी सेवा के लिए तैयार ही है । अगो अथवा एक गुजराती पाठक वेदगू साहित्य के विषय में कुछ जानना चाहे, तो इसका उसके पास कोई साधन नहीं है । 'हंस' के प्रकाशित हो जाने पर उसकी यह इच्छा बड़ी आसानी से पूरी हो जायगी । इस तरह 'हंस' के द्वारा सभी प्रान्तों के साहित्य-प्रमियों को अन्य प्रान्तीय साहित्या से परिचय मिलना बहुत आसान हो जायगा ।

३—हमारे भाई सम्पूर्ण भारत के पत्र-पत्रिकाओं में जिस प्रकार की भावना भरने का प्रयत्न करना चाहते हैं 'हंस' वही प्रयत्न है । सभी पत्र गल्प छापते हैं इसलिये कोई पत्र कुछ गर्वों ही का न हा यह तो उनका अभिप्राय नहीं हो सकता । राजनैतिक लेख सभी पत्रिकाओं में अन्य विषयों के साथ बिये जाते हैं लेकिन ऐसे पत्र नी तो हैं जो राजनैतिक और केवल राजनैतिक लक्ष्य ही छापते हैं । इन उद्देश्य का एक पत्र जारी करके हम सभी प्रान्तीय साहित्यों का एक-दूसरे के समीप कर देना चाहते हैं और हमारे मुख्य विचार में राष्ट्र-साहित्य को यही बुनियाद हो सकती है ।

अन्त में हम यही निश्चय करना चाहते हैं कि राष्ट्र-साहित्य-परिषद् स्थापित करने का विचार भी हमारे मन में है और यह पत्र उसी परिषद् के लिए अतीव तैयार करेगा । पहले हमारी साहित्यिक अभिरक्षा में राष्ट्रीयता का विकास तो हो फिर परिषद् बनते कितनी देर लगती है । हंस की महाहकारी समिति में सभी प्रान्तीय भाषाओं के प्रतिनिधि रखे गये हैं और हमें आशा है शीघ्र ही वह कार्य बन जायगा । हम अन्तमुष्ट थी की और समस्त साहित्य प्रमियों का विरभाव रिमाते हैं कि हमें राष्ट्र साहित्यिक पत्र होना जैसा उमम रहनेवाला स्थानों की मूर्खी से भाग्य बाहिर है । उनका प्रयाग काय है—साहित्य-सेवा । और प्रचार भी साहित्य-सेवा का एक अंग है इनमें कौन इन्कार करेगा । हम भाई अन्तमुष्ट में प्रार्थना करते कि इन शुभकार्य में सहयोग दें । उद्देश्य हमारा और उनका एक है जबकि साधनों में अन्तर है और सभी वर्ये काय पहल सुल-स्वप्न से शक होते हैं । अथवा सुल-स्वप्न बगनेवाला न होते तो संगार मन्मूषि होकर रह जाय ।

अगस्त सितम्बर १९३५

श्री मुंशी गुलाबराय राम० रा० का पत्र

हम का वह काय चिन्ता महत्त्वपूर्ण है। इस संबंध में हमारे पास कई पत्र आये हैं। पर अभी तक मुंशी गुलाबराय का पत्र विशेष महत्त्व रखता है। इसलिए कि उसमें केवल इस धारणा का प्रस्ताव ही नहीं है बल्कि भाषा का प्रयोग के विषय में कुछ सम्झौत भी प्रस्ताव की है जो हर प्रकार से अनुमोदनीय है और हमें आगे चलकर विशेष रूप से सहायता देनी। ध्यान सिद्ध है—

यह कार्य बड़ा महत्त्व का है और विचार-रूप में तो बहुत दिना से चला आता है किन्तु अभी तक इस सम्बन्ध में कोई कार्य नहीं हुआ था। अब बड़े रूप की बात है कि उसके कार्य करने में परिश्रम श्रम में परमा कदम रखा गया है। इसका अर्थ विशेषकर श्री कर्मदासजी की मुंशी ही को है। बड़े जिन लोगों ने इन योजना में सहयोग दिया है वे सभी धन्यवाद के पात्र हैं।

'यदि हम इस बात का और अधिक मना चाहते हैं कि हम या कुछ मौखिक कार्य करें और संसार के ज्ञान-संचार में कुछ बड़क कर दूसरे देशों का कुछ सुकाव ता परम्पर सहकारिता के बिना काम नहीं चल सकता। भारत में न पारिभाषिक शब्द प्राप्त एक से है किन्तु भारतभय में एक प्राप्त में भी पारिभाषिक शब्द एक नहीं है। प्रायः केवल अपनी उड़ बाबल की शिक्षाओं का प्रयोग करता है। इतिहास का पुति के लिए यह ज्ञान परमावरण है कि हमने प्राप्त के इतिहासों में अपने-अपने प्राप्त के इतिहास के विषय में क्या सोच को है क्योंकि इतिहास की बहुत कुछ नामों का अर्थ और जनश्रुतियों में रखा करती है। इस कार्य का सुचारु रूप में चलाने के लिए कुछ प्रारम्भिक कार्य करने की आवश्यकता है। उन कार्य के सम्बन्ध में प्राप्त लोपा में भी बहुत कुछ मोचा हाया देने को दो-एक बातें सीधी हैं वे आपसे विवेक करता है—

१—प्राचीन साहित्यों की एक विषयवार अनुसंधान का प्रारम्भ करना। जिनमें से बहुतनाया जान कि एक-एक विषय पर किन्-किन् प्राप्त में कौन-कौन सी किताबें लिखी गयी हैं।

२—विभिन्न प्रांतों के लेखकों को सूची। जिनमें यह रहे कि कौन-कौन लेखक किन्-किन् विषय में लिखे गये हैं।

३—उपरोक्त प्राप्त में परिष्कृत का कार्य है एक-एक विषय पर किन्-किन् लिखी विधि का व्यवहार ही भारत का प्राचीन ही रहे। यदि उन प्राप्त की लिखी पत्र या पत्रिका में कोई महत्त्वपूर्ण लेख हो ता उनकी सूचना और उनका भीड़ा मार रखा करे। विभिन्न-विभिन्न प्रांत के पत्र-पत्रिकाओं के बरतार परिषद का भी उद्योग रहे।

४—हिन्दी साहित्य सम्मेलन के साथ ही अपना कार्य दिनों धन्य पर चलकर प्राचीन-साहित्य-परिषद् द्वारा करे।

५—अन्तर-राष्ट्रीय खेलकों के परस्पर पत्र-व्यवहार का सुयोग्य करणमा पाव ।

६—पारिभाषिक शब्दों के एकिकरण के लिए एक समिती बने जिसमें मिश्र-मिश्र प्रायों के और मिश्र-मिश्र विषयों के विशेषज्ञ रहे ।

७—मिश्र मिश्र साहित्य सम्मेलनों में अल्प प्राय क मोम भी धामनिष्ठ किये जाया करें और उनसे सामान्य उन सम्मेलनों में भी एक या दो व्याख्यान हिन्दी में हुआ करें । धाशा है कि अपनी योजना बनाने समय आप लोग इन बातों का भी ध्यान रखेंगे ।

अगस्त-मिहम्बर १९३५

प्रोफेसर सिलवन लेवी का स्वगवास

फ्रांस के सुविख्यात धाषाय प्रो सिलवन लेवी के स्वगवास से धाय संस्कृति और वशान के ऐसे ममज्ञ का स्थान सुना हा गया जो बस पूरा न हो सकेगा । धाय पुरातत्व के प्रकृत्य परिष्ठत से और संस्कृत के भी पूरे विद्वान् थे । इसका धाय ही धाय बड़े ही उदार, ब्यासु और मरम प्रकृति क मनुष्य थे जो विद्वान् में बहुत कम पायी जाती है । पेरिस में भारतीय विद्यार्थियों को धाय हर तरह की सहायता देते रहते थे । धाय कुछ दिनों के लिए बोलपुर के शांतिनिकेतन में भी आकर रहे थे । धायने फ्रांस भाषा में भारतीय संस्कृति वशान और पुरातत्व पर कई प्रमायिक अय लिखे हैं । धायके बहु भाषा विद् होने का यह हास का कि वसार की शायद ही ऐसी सुसंस्कृत भाषा हो जिसका धायको ज्ञान न हो । धायका मनु स्वभाव और युवकों के प्रति सरल स्नेह देखकर प्राचीन काल के धायार्यों की याद ताजी हो जाती थी । कितने ही धायों की बहु धन से भी सहायता करते थे । मुसीबत और अन्म के मताय हुए प्रायिया के लिए धायको सहायता नदीन कुपाशीम रहती थी ।

अनवरी १९३६

